1. आयुर्वेदीय औषधि निर्माण का क्रमिक विकास 1-38
रसशास्त्र की परिभाषा 1
रसशास्त्र का विकास क्रम 2
भैषज्य कल्पना की परिभाषा 8
भैषज्य कल्पना का विकास 10
रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना का महत्व तथा क्षेत्र 18
रसशाला 18
रसमण्डप 21
भेषजगार 22
रस रसायन सिद्धान्त 23
धातु आधारित औषधि निर्मित करने वाले भारतीयों का संक्षिप्त परिचय 24
आयुर्वेदिक औषधि निर्माण में आधुनिक विकास 33
2. परिभाषा 39-87
परिभाषा का महत्व 39
शब्द निष्पत्ति (औषध, भेषज, कल्पना, कषाय, पंचकषाय योनि, संस्कार) 39
द्रव्य/वर्ग परिभाषा (रस, महारस, उपरस धातुवर्ग, उपधातु, रत्न, उपरत्न, सुधा, सिकता, लवण वर्ग, विष, उपविष, कज्जली, मित्रपंचक, द्रावक गण) 41
संदिग्ध, अनुपलब्ध, कृत्रिम एवं प्रतिनिधि 49
प्रक्रिया परिभाषा 50
शोधन 50
मारण 53
अमृतीकरण 55
लोहितीकरण 55
सत्वपातन 55
शुद्धावर्त 56
वीजावर्त 56
द्रुति 56
पारद संस्कार 56
जारणा 66
मूर्च्छना 68
पारद बन्ध 71
प्रमाणीकरण परिभाषा 73
ग्राह्य/अग्राह्य 73
सिद्धि लक्षण 73
भस्म परीक्षा 73
पूरक परिभाषा (रुद्र भाग, धनवन्तरि भाग) 76
मान परिभाषा (परिभाषा, शास्त्रोक्तमान, AFI के अनुसार मान तुलना, आधुनिक मान) काल मान 76
3. आधारभूत सिद्धान्त 88-110
द्रव्य संग्रह काल, सामान्य नियम 88
अंग के अनुसार द्रव्य संग्रह काल 88
प्राणिज द्रव्य संग्रह 89
संग्रह योग्य/अयोग्य भूमि 90
द्रव्य संग्रह अवस्था 91
द्विगुणमान गणना 92
आर्द्र तथा शुष्क द्रव्य मान 92
द्रव्य संग्रह विधि तथा संरक्षण 93
रस, गुण, वीर्य, विपाक प्रभाव 94
अनुक्त विशेषोक्त ग्रहण 94
औषध नामकरण 95
औषध सेवन काल 96
सवीर्यता अवधि 99
औषध मात्रा 103

Scanned with OKEN Scanner

अनुपान तथा सहपान 107
यौगिक द्रव्य सिद्धान्त 109
4. यन्त्रोपकरणानि-I 111-138
दोला यन्त्र 111
बालुका यन्त्र 112
पुट यन्त्र 113
खल्व यन्त्र 113
पातन यन्त्र 115
दर्विका यन्त्र 117
उलूखल यन्त्र 118
पाताल यन्त्र 118
कूपी यन्त्र 119
अर्कपातन यन्त्र 120
पिठर यन्त्र 120
शराव यन्त्र 121
पलिका यन्त्र 121
स्थाली यन्त्र 121
स्वेदनी यन्त्र 122
विद्याधर यन्त्र 122
Grinder 123
Disintegrator 124
Pulverizer 125
Powder mixer 126
Mechanical sifter 126
Ball Mill 127
Granulator 127
Dryer 128
Tablet compressing machine 129
Pills making machine 130
Coating pan 131
Polishing pan 131
End Runner Machine 131
Edge Runner Machine 132
Capsule Filling Machine 132
Ointment Mixer 133
Tube Filling Machine 133
Sieves & Meshes 134
Liquid Filling Machine 134
Distillation Plant 135
Strip Packing Machine 136
Pouching Filling Machine 136
Pyrometer 137
5. यन्त्रोपकरणानि-II 139-158
चन्द्रपुट 141
सूर्यपुट 141
महापुट 141
गजपुट 141
वराहपुट 142
कुक्कुट पुट 143
कपोत पुट 144
लावक पुट 144
भूधर पुट 145
गोमय पुट 145
बालुका पुट 145
कुम्भ/भाण्डपुट 146
मूषा 148
सामान्य मूषा 149
Crucibles-Silica 149
मुद्रा 149
सन्धिबन्धन 150
कोष्ठी 151
चुल्लिका 151
अंगार कोष्ठी 151
गार कोष्ठी 152
Gas Stove 153
Hot Plate 153
Heating Mantle 154
Induction Stove 154

Scanned with OKEN Scanner

Hot Air Oven 155
Muffle furnace-Horizontal and Vertical 156
अग्नि प्रदान के साधन (Heating Material) 156

6. कल्पना निर्माण-I 159-191
(मौलिक (Primary) तथा व्युत्पन्न (Seondary) कल्पना)

पंचविध कषाय कल्पना 160
स्वरस 161
कल्क 165
क्वाथ 166
हिम 170
फाण्ट 172
चूर्ण कल्पना 175
प्रमथ्या कल्पना 179
पानीय कल्पना 181
उष्णोदक 181
क्षीरपाक कल्पना 181
लाक्षा रस 183
मांस रस 184
मन्थ कल्पना 185
उदक कल्पना 187
पानक कल्पना 187
अर्क 189

7. कल्पना निर्माण-II 192-234

अवलेह कल्पना 192
वासावलेह 194
कूष्माण्ड अवलेह 195
Research Update 196
Market Survey 195
स्नेह कल्पना 197
फलघृत 206
क्षीरबला तैल 207
आवर्तना सिद्धान्त 208
Research Update 208
Market Survey 209
संधान कल्पना 210
द्राक्षारिष्ट 217
उशीरासव 218
Research Update 219
Market Survey 220
पथ्य कल्पना 220
परिभाषा एवं महत्व 220-221
मण्ड 222
पेया 222
यवागू 223
विलेपी 224
अन्न/ओदन कल्पना 225
कृशरा 225
यूष 226
तक्र 228
खड 229
काम्बलिक 230
राग षाडव 231
Research Update 232
Market Survey of Dietary Supplements 234

8. रसद्रव्य परिचय-I 235-344

पारद 235
अभ्रक 252
माक्षिक 257
शिलाजतु 261
गन्धक 265
गैरिक 269
कांक्षी 271
हरताल 274
मनःशिला 277
कम्पिल्लक 280

Scanned with OKEN Scanner

नवसादर 281
हिंगुल 282
स्वर्ण 285
रजत 291
ताम्र 295
लोह 299
मण्डूर 308
वंग 311
नाग 314
यशद 318
मुक्ता 321
प्रवाल 324
वज्र 327
कपर्द 331
शुक्ति 333
शंख 335
गोदन्ती 337
समुद्रफेन 339
कुक्कुटाण्ड त्वक् 341
टंकण क्षार 342

9. रसद्रव्य परिचय-II 345-358

सस्यक 345
कासीस 348
गौरीपाषाण 351
तृणकान्त 353
अकीक 354
सुधा 354
खटिका 355
अजास्थि 356
जहरमोहरा 356
दुग्धपाषाण 357

10. रसद्रव्य परिचय-III 359-402

वैक्रान्त 359
विमल 362
चपल 365
रसक 366
अंजन 370
कंकुष्ठ 374
अग्निजार 376
गिरिसिन्दूर 377
मृद्दारशृंग 379
कांस्य 380
पित्तल 383
वर्तलोह 385
माणिक्य 386
तार्क्ष्य 388
पुष्पराग 390
नीलम 392
गोमेद 394
वैडूर्य 396
मृगशृंग 398
सिकता 399
व्योमाश्म 399
कौशेयाश्म 400
बदराश्म 401

11. कल्पना निर्माण-III 403-412

शार्कर कल्पना 403
गुडपाक 404
लवण कल्पना 406
क्षार कल्पना 408
अयस्कृति कल्पना 410
लेप कल्पना 411

12. चतुर्विध रसायन 413-429

खरलीय रसायन 413

Scanned with OKEN Scanner

श्वास कुठार रस 413
वातवध्वंस रस 414
पर्पटी रसायन 415
लोह पर्पटी 419
सुधा पर्पटी 419
कूपी पक्व रसायन 420
रससिन्दूर 424
रस कर्पूर 426
पोट्टली रसायन 426
ताम्रगर्भ पोट्टली 428
लोह गर्भ पोट्टली 428

13. Current and Emerging Trend in Ayurvedic Pharmaceuticals 430-458
Introduction to Cosmetics formulation 430
Regulatory Provisions 437
Plant layout and other factory requirements 441
Process used in manufacture of Cosmetics 447
Commonly used Cosmetics Raw material 447
Controll of Microbial contamination in Cosmetics 448
Quality control of Cosmetics 448
Skin Sensitization Sensitivity Testing 449
In Vitro tests for Skin Irritation 450
Quality control of Raw material and finished products 450
Stability of Cosmetics 451
Classification of Dosage form 452
Need of Dosage form 458

14. Drug and Cosmetics Act 1940 and Rules 1945 459-486
Regulatory Aspects of Ayurvedic Drugs 459
New Act Related to Drug & Devices 476
Good Manufacturing Practices (GMP) of ASU Drugs-Schedule T 477
Food Safety and Standard Authority of India (FSSAI) 483
FDA Approval Drugs 485

15. वटी कल्पना 487-501
गुग्गुलु कल्पना 489
Tablet 490
Pills 496
Capsule 496
वर्ति कल्पना 497
Suppositories 499
मसी कल्पना 501

16. प्रायोगिक परिशिष्ट
सत्व 502
अमृता सत्व 520
अपामार्ग क्षार 503
क्षार सूत्र 503
उपनाह 504
अत्स्यादि उपनाह 504
सिक्थ तैल 505
मलहर 506
शतधौत एवं सहस्त्रधौत घृत 506
जात्यादि घृत 507
त्रिफलाघृत 507
क्षीरषटपल घृत 508
कासीसादि तैल 508
पंचगुण तैलम् 509
अर्क तैल 510
कुटज सूर्यपाकी तैल 510
भल्लातक तैल पातन 511
जयपाल तैल पातन 511
विश्वामित्र कपाल स्नेह 511
च्यवनप्राश 511

Scanned with OKEN Scanner

निम्बु शार्कर 515
दार्वी रसक्रिया 515
हरिद्रा खण्ड 516
नारिकेल खण्ड 517
कुमार्यसव 517
कुटजारिष्ट 519
अशोकारिष्ट 519
तक्रारिष्ट 521
काञ्जी 521
मधुशुक्त 522
गुग्गुल शोधन 522
हींग शोधन 523
मुग्ध रस 523
गन्धक द्रुति 524
आनन्द भैरव रस 524
त्रिभुवन कीर्ति रस 525
रसपर्पटी 525
रसगर्भ पोट्टली 526
लघुसूतशेखर रस 527
नवायास लौह 527
सप्तामृत लौह 528
अग्नितुण्डी वटी 528
चित्रकादि वटी 529
लवंगादि वटी 529
त्रिफला गुग्गुलु 530
कैशोर गुग्गुलु 530
फलवर्ति गुग्गुलु 532
चन्द्रोदय वर्ति 532
अर्कलवण 532
त्रिफला मसी 533
मयूर पिच्छ मसी 533
दशनसंस्कार चूर्ण (मंजन) 533
सर्जरस मलहर 534
गन्धक मलहर 535
दशांग लेप 535
अमृता घृत 536
कुटज घन 536
गुडुची घन 536
लोहासव 537
द्राक्षासव 537
अर्जुनारिष्ट 538
Quality Control Parameters (Included in Practical Outcome) 539
Bulk Density 539
Loss on Drying 540
Determination of Total Ash 540
Determination of pH values 541
Determination of Water Soluble Extractive 541
Weight Uniformity 541
Hardness 541
Friability 541
Specific Gravity 542
Determination of Alcohol Contant 542
Determination of Total Solids 542
Determination of Saponification Value 543
Determination of Iodine Value 543
Determination of Acid Value 545
NABL Guidelines 545
Namburi Phased Spot Test 546

Scanned with OKEN Scanner

533
533
534
535
535
536
536
536
537
537
538
led
539
539
540
540
541
541
541
541
541
542
542
542
543
543
545
545
46

अध्याय 1

आयुर्वेदिक औषधि निर्माण का क्रमिक विकास

रसशास्त्र की परिभाषा तथा क्रमिक विकास

रसशास्त्र की विषयक वस्तु

रसशास्त्र एक ऐसी विधा है जिसमें रस (पारद या Mercury) की या रस से सम्बन्ध रखने वाले विभिन्न प्रकार के द्रव्यों यथा महारस, उपरस, साधारण रस, धातु, रत्न तथा विष द्रव्य एवं इनसे सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के उपक्रमों यथा शोधन, संस्कार, मारण आदि तथा इन प्रक्रियाओं में सहायक विभिन्न प्रकार के यन्त्रों, मूषा (Crucible) तथा पुट आदि के साथ ही रस द्रव्यों के चिकित्सकीय एंवं रसायन गुण हेतु प्रयोग का वर्णन इस शास्त्र में उपलब्ध होता है । रस ग्रन्थों के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि रसशास्त्र की विषयवस्तु को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. पारदीय प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में संस्कार, शोधन, यन्त्र आदि का वर्णन ।
2. चिकित्सा तथा रसायन प्रयोग हेतु विभिन्न प्रकार के रस योगों का वर्णन ।

रसरत्न समुच्चय में रसशास्त्र की विषय का निम्न वर्णन किया गया है–

रसोपरसलोहानि यन्त्रादिकरणानि च । शुद्ध्यर्थमपि लोहानां तन्त्रादि करणानि च ।
शुद्धिः सत्वं द्रुतिर्भस्मकरणं च प्रवक्ष्यते ॥ (र.र.स. 1/9-10)

इसमें रस, उपरस और धातु इत्यादि पदार्थों, यन्त्रादि साधनों का, लोहों की शुद्धि हेतु आवश्यक विभिन्न क्रियाओं तथा प्रयोगों, सत्व पातन, द्रुति तथा भस्मीकरण का वर्णन किया जायेगा ।

रसशास्त्र की परिभाषा

रसशास्त्र को निम्न रूप में परिभाषित किया जा सकता है—

लोहंमृत कन्द विषं सूतं चेति निगद्यते । (र.र.स. 28/2)

रस शब्द से लोह, कन्द विष तथा पारद का ग्रहण होता है ।

लोह शब्द से धातुयें यथा स्वर्ण, रजत, ताम्र, लोह, नाग, वंग, पित्तल, कांस्य तथा वर्तलोह, कन्द विष से वत्सनाभ तथा सूत शब्द से पारद का ग्रहण किया जाता है । जिस शास्त्र में पारद के साथ-साथ महारस, उपरस, धातुएँ, रत्नों तथा विषों के शोधन, मारण, सत्व पातन द्रुति आदि विधियों तथा इन प्रक्रियाओं में प्रयुक्त यन्त्र, मूषा, पुट तथा इन द्रव्यों के चिकित्सकीय उपयोग आदि का वर्णन प्राप्त होता है उसे रसशास्त्र कहा जाता है।

विमर्श–पारद को अपने अन्दर सभी को आत्मसात् करने की भी शक्ति होती है । इसलिए आचार्यों ने पारद को अजर अमर करने वाला कहा है ।

Scanned with OKEN Scanner

एकऽसौ रसराजः शरीरमराजरं कुरुते। (र.ह.त. 1/13)

रसहृदय तन्त्र के अनुसार एक अकेला रसराज (पारद) ही शरीर को अजर तथा अमर कर सकता है।

पारद देह तथा लोह में समान रूप से कार्य करता है। देह में पारद का प्रयोग करने से पूर्व इसकी परीक्षा लोह पर करनी चाहिए। यथा—

यथा लोहे तथा देहे कर्त्तव्यः सूतकः सदा। समानं कुरुते देवि! प्रविशन् देहलोहयोः॥
पूर्वं लोहे परीक्षेते ततो देहे प्रयोजयेत्। (रसार्णव 17/164-65)

रसशास्त्र के आचार्यों ने पारद के प्रयोग से शरीर को रोग तथा जरा से मुक्त कर उसे स्थिर करने की बात कहीं है। लेकिन सामान्य पारद ऐसा करने में समर्थ नहीं होता है। उसके लिए इसमें संस्कार, जो कि विभिन्न औषधियों से किये जाते हैं, करना आवश्यक है। इसे पारद के संस्कार कहते हैं तथा इन्हीं संस्कारों का रस ग्रन्थों में विशेष वर्णन प्राप्त होता है। इन संस्कारों की संख्या अट्ठारह मानी गयी है। 18वाँ संस्कार ही भक्षण संस्कार है जिसमें पारद का सेवन कराया जाता है। सोलह संस्कार करने के उपरान्त पारद का लोह पर प्रयोग किया जाता है जिसे वेध संस्कार के नाम से जाना जाता है। यदि यह पारद हल्की धातु जैसे वंग, नाग आदि को स्वर्ण, रजत में परिवर्तन करने में समर्थ हो जाती है तब इसे शरीर में प्रयोग किया जाता है। हल्की धातु नाग, वंग आदि को पारद के स्वर्ण, रजत में परिवर्तन करने को धातुवाद कहा है तथा शरीर में प्रयोग कर उसे स्थिर बनाने को देहवाद कहा जाता है। इस प्रकार देहवाद करने के समय धातुवाद स्वतः ही हो जाता है।

रसशास्त्र के विकास क्रम को निम्न काल खण्ड के अन्तर्गत वर्णित किया जा सकता है—*

1. प्रागैतहासिक काल- (Prehistoric period 4000 B.C. से 1500 B.C.)
2. वैदिककाल एवं आयुर्वेदिक संहिता काल- (1200 B.C. से 800 A.D.)
3. माध्यमिक काल (Transitional period 800 A.D. से 1100 A.D)
4. तन्त्र काल (Tantric period 800 A.D. से 1300 A.D)
5. इटेरोकेमिकल काल (Iatro chemical period 1300 A.D. से 1550 A.D)

1. प्रागैतहासिक काल (4000 B.C. से 1500 A.D)

इसको भी अध्ययन की दृष्टि से दो काल में विभाजित करते हैं-

(a) हड़प्पा से पूर्व का काल- 4000 से 2000 B.C.

(b) मोहनजोदारो तथा हडप्पा काल- 2500 से 1800 B.C.। इसे ही सिन्धु घाटी की सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

पूर्व हड़प्पाकाल

इसे कांस्य युग के पूर्व का भी काल कहा जाता है। इसके अन्तर्गत क्वेटा, अमरी-नल, कुल्ली तथा जोहब सभ्यता के नाम से भी जाना जाता है। इस काल में निम्न रासायनिक प्रक्रियायें की जाती थी-

* History of Hindu Chemistry- Sir P. C. Ray

1. बर्तनों को दो या अधिक रंग से रंगते थे।
2. कापर अयस्क से ताम्र को निकालना जानते थे।
3. ताम्र से विभिन्न प्रकार वस्तुएं बनाई जाती थी।
4. Agate, lapis lazuli से बने मनके (beads) का प्रयोग करते थे जिससे यह पता चलता है कि इसका ज्ञान उस समय था।

सिन्धु घाटी की सभ्यता— इसे कांस्य युग भी कहा जाता है। शस्त्र, घरेलु उपयोगी वस्तुएं आदि इस काल में ताम्र तथा कांस्य से निर्मित कर प्रयुक्त किये जाते थे। इस काल के मनुष्यों को रसशास्त्रीय निम्नद्रव्यों का ज्ञान था-

1. ताम्र तथा कांस्य धातु का (कच्चा ताम्र Crude copper, सुसंस्कृत Refined, मिश्र Alloy with Tin तथा Arsenic)
2. स्वर्ण, रजत का आभूषण रूप से प्रयोग
3. चूना, स्फटिक, हाथीदाँत, जेडाइट Agate, Lapis Lazuli, Tunquoise आदि का प्रयोग मनका, माला का दाना तथा झुमका आदि में किया जाता था।
4. मूषा Clay crucible का प्रयोग ताम्र को गलाने में किया जाता था।

2. वैदिक तथा आयुर्वेदिक (संहिता) काल

वेदों में धातुओं के उपयोग के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। ऋग्वेद में स्वर्ण, रजत, ताम्र तथा कांस्य का उल्लेख मिलता है। स्वर्ण का उपयोग आभूषण आदि तथा कांस्य का प्रयोग औजार तथा बर्तन निर्माण में मिलता है। लोहे का वर्णन ऋग्वेद में नहीं मिलता है। लेकिन कुछ विद्वानों ने अयस शब्द से लोहे का ग्रहण किया है। ज्यादातर विद्वान अयस् शब्द से धातु का ग्रहण करते हैं। अयस शब्द बाद में ब्राह्मण तथा उपनिषद काल में रक्त अयस तथा कृष्ण अयस के साथ प्रयुक्त हुआ है। रक्त अयस से ताम्र धातु तथा कृष्ण अयस से लोहा का ग्रहण किया जाता है।

यजुर्वेद में धातुओं का निम्न वर्णन प्राप्त होता है, यथा-

अश्माच मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिकताश्च मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यं च मे ऽयश्च मे श्यामं च मे लोहं च मे सीसं च मे त्रपु च मे यज्ञेन कल्पताम्। (यजु. 18/13)

धातुओं में हिरण्य (सोना) अयस (लोहा अथवा कांस्य), श्याम (ताम्र) लोह, सीसा तथा त्रपु (वंग) का उल्लेख है।

शतपथ ब्राह्मण में स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह तथा सीसा इन पांच धातुओं का उल्लेख पाया जाता है। इन धातुओं के विभिन्न उपयोग का उल्लेख भी इसमें प्राप्त होता है। स्वर्ण का उपयोग तार, शकल (टुकड़ा) तथा निष्क (सिक्का) के रूप में किया जाता था।

चरक संहिता— चरक संहिता में विभिन्न प्रकार के द्रव्यों यथा धातु (स्वर्ण, रजत,ताम्र आदि), रत्न (प्रवाल, वैडूर्य आदि) हरताल, मनःशिला आदि का उपयोग चिकित्सा के रूप में तथा अन्य प्रयोग जैसे धातुओं से बस्ति नेत्र का निर्माण, बहुतायत से किया गया है। उल्लेखनीय है कि उपरोक्त द्रव्यों का प्रयोग विभिन्न पारदीय प्रक्रियाओं में तथा चिकित्सा के रूप में रसशास्त्र में किया गया है। इस प्रकरण में दो बातें महत्वपूर्ण हैं—

Scanned with OKEN Scanner

1. विभिन्न वर्ग के द्रव्यों का प्रयोग ।
2. द्रव्यों का प्रयोग स्वरूप [Dosage form)

चरक संहिता में धातुओं, लवण, मणि आदि को पार्थिव द्रव्य के अन्तर्गत वर्णित किया गया है–

सुवर्णं समलाः पञ्चलोहाः ससिकताः सुधा । मनःशिलाले मणयो लवणं गैरिकाञ्जने ॥

(च.सू. 1/70)

स्वर्ण, पंचलोह (ताम्र, रजत, त्रपु, सीसा, कृष्ण लोह) मल शब्द से शिलाजीत का भी ग्रहण किया गया है (चक्रपाणि अनुसार), सिकता, सुधा, मनःशिला, आल (हरताल), मणि, गैरिक, अंजन (सौवीराञ्जन) तथा लवण ।

चरक संहिता में वर्णित विभिन्न रसशास्त्रीय द्रव्यों को निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है–

महारस	उपरस	साधारण रस	धातु	रत्न	लवण/क्षार	अन्य
माक्षीक	लेलीतक	कपर्द	कनक	प्रवाल	सैन्धव	शंख
(ताप्य)	(गन्धक)	कम्पिल्लक	काललोह	मरकत	सौवर्चल	शंखनाभि
शिलाजतु	गैरिक		कांस्य	वज्र	सामुद्र	शुक्ति
अमृतासंग	कासीस		ताम्र	वैडूर्य	औदभिद	सुधा
	कांक्षी		तीक्ष्णायस	मुक्ता	विड	सिकता
	हरताल		रजत	माणिक्य	स्वर्जिका	सूर्यकान्त
	मनःशिला		रीति		यवक्षार	स्फटिक
	अंजन		त्रपु			भल्लातक
						विष
						मण्डूर

चरक संहिता में उपरोक्त द्रव्यों (रसशास्त्रीय द्रव्यों) को प्रयोग करने से पूर्व कुछ विशिष्ट प्रक्रियायें की जाती थी जिनका वर्णन निम्न हैं–

1. लौहादि रसायन प्रकरण में प्रयुक्त लोहा को निम्न Pharmaceutical process करने का निर्देश है । तत् पश्चात् इसे अन्तः प्रयोग करने का उल्लेख हैं–

त्रिफलाया रसे मूत्रे गवां क्षारे च लावणे । क्रमेण चेङ्गुदीक्षारे किंशुकक्षार एव च ॥
तीक्ष्णायसस्य पत्राणि वह्निवर्णानि वापयेत् । चतुरङ्गुलदीर्घाणि तिलोत्सेधतनूनि च ॥
ज्ञात्वा तान्यञ्जनाभानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । (च.चि. 1/3/15-17)

तीक्ष्ण लोहे के पत्र को जो चार अंगुल लम्बे तथा चौड़े जिनकी मोटाई तिल के समान हो उन्हें गर्म कर (लाल वर्ण होने तक) फिर उसे निम्न द्रवों में बुझाते हैं–

1. त्रिफला क्वाथ
2. गोमूत्र

3. क्षारेलवण (ज्योतिष्मती क्षार)
4. इंगुदी क्षार (इंगुदी क्षारोदक)
5. किंशुक क्षार (किंशुक क्षारोदक)

उपरोक्त द्रवों में बुझाने के परिणाम स्वरूप प्राप्त अंजन समान सूक्ष्मचूर्ण को प्रयोग करते हैं ।

पाण्डु प्रकरण में वर्णित मण्डूर, माक्षिक तथा इन्द्रोक्त रसायन प्रकरण में वर्णित हेम, ताम्र, प्रवाल, मुक्ता, स्फटिक आदि के चूर्ण को ही प्रयोग करने का उल्लेख मिलता है ।

2. शिलाजीत को प्रयोग करने से पूर्व वातघ्न, पित्तघ्न या कफघ्न औषधियों के क्वाथ से एक सप्ताह भावना देने का उल्लेख है । जिससे इसका वीर्य उत्कर्ष होता है ।

वातपित्तकफघ्नैश्च निर्यूहैस्तत् सुभावितम् । वीर्योत्कर्षं परं याति सर्वैरेकैकशोऽपि वा ॥
प्रक्षिप्तोद्धृतमप्येनत् पुनस्तत् प्रक्षिपेद्रसे । कोष्णे सप्ताहमेतेन विधिना तस्य भावना ॥

(च.चि. 1/3/50-51)

शिलाजतु सेवन काल में कुलत्थ का प्रयोग निषेध किया है, यथा–

शिलाजतुप्रयोगेषु विदाहीनि गुरूणि च । वर्जयेत् सर्वकालं तु कुलत्थान् परिवर्जयेत् ॥

(च.चि. 1/3/62)

आचार्य चरक ने शिलाजीत को निम्न द्रव्य द्रव्यों में घोलकर पश्चात् प्रयोग करने का उल्लेख किया है–

पयांसि तक्राणि रसाः सयूषास्तोयं समूत्रा विविधाः कषायाः ।
आलोडनार्थं गिरिजस्य शस्तास्ते ते प्रयोज्याः प्रसमीक्ष्य कार्यम् ॥

(च.चि. 1/3/64)

सम्यक विचार कर दूध, तक्र, मांसरस, यूष, मूत्र तथा विभिन्न प्रकार के क्वाथ में घोलकर प्रयोग करना चाहिए ।

सुश्रुत संहिता

सुश्रत संहिता में विभिन्न स्थलों पर खनिज द्रव्यों तथा धातुओं (Minerals and metals) का उल्लेख तथा चिकित्सकीय प्रयोग किया गया है । सूत्रस्थान के 38वें अध्याय में ऊष्कादि गण तथा त्रप्वादि गण में इनका उल्लेख है, यथा–

ऊषकसैन्धवशिलाजतुकासीसद्वयहिङ्गूनि तुत्थकञ्चेति ॥ (सु.सू. 38/37)

त्रपुसीसताम्ररजतकृष्णालोहसुवर्णानि लोहमलश्चेति ॥ (सु.सू. 38/62)

ऊषकादि गण में ऊषक, सैन्धव लवण, शिलाजतु, कासीस के दो भेद, हिंगू तथा तुत्थ का एवं त्रप्वादि गण में त्रपु (वंग), सीसा, ताम्र, रजत, कृष्ण लोह, स्वर्ण तथा लोह मल (मण्डूर) को शामिल किया है । इसके अतिरिक्त प्रियङ्गवादि गण में रसाञ्जन तथा स्रोतोऽञ्जन का उल्लेख है ।

सुश्रुत संहिता में निम्न खनिज, धातुयें तथा विष द्रव्यों का उल्लेख प्राप्त होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

महारस	उपरस	साधारण रस	धातु	रत्न	लवण/क्षार	अन्य
माक्षीक शिलाजतु तुत्थ	गन्धक गैरिक कासीस कांक्षी हरताल मनःशिला रसाञ्जन	कम्पिल्लक संखिया	स्वर्ण रजत. ताम्र कृष्णलोह त्रपु सीसा कांस्य	पद्मराग मरकत नील वैडूर्य मुक्ता प्रवाल हेम	गुञ्जा अभ्रसार फेनाश्म वत्सनाभ कालकूट हालाहल	मण्डूर समुद्रफेन मुक्ताशुक्ति स्फटिक शंख कुक्कुटाण्ड- कपालनि

सुश्रुत संहिता में लोह धातु को प्रयोग करने से पूर्व उसे एक विशेष प्रक्रिया के द्वारा शरीर में उपयोग हेतु निर्मित करने का उल्लेख है जिसे अयस्कृति के नाम से व्यवहृत किया जाता है । अयस्कृति का वर्णन निम्न है–

तीक्ष्णलोहपत्राणि तनूनि लवणवर्गप्रदिग्धानि गोमयाग्निप्रतप्तानि त्रिफलाशालसारादिकषायेण निर्वापयेत् षोडशवारान्, ततः खदिराङ्गारतप्तान्युपशान्तितापानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेध्दनतान्तवपरिस्राविताानि, ततो यथाबलं मात्रां सर्पिर्मधुभ्यां संसृज्योपयुञ्जीत, जीर्णे यथाव्याध्य-नम्लमलवणमाहारं कुर्वीत, एवं तुलामुपयुज्य कुष्ठमेहमेदःश्वयथुपाण्डुरोगोन्मादापस्मारानपहत्य वर्षशतं जीवति, तुलायां तुलायां वर्षशतमुत्कर्षः, एतेन सर्वलौहेष्वयस्कृतयो व्याख्याताः ॥ (सु.चि. 10/11)

इस प्रक्रिया को निम्न रूप में समझा जा सकता है–

पतले तीक्ष्ण लोह पत्र पर → लवण वर्ग के कल्क का लेप → उपले की अग्नि पर ↓ प्रतप्त करते हैं

प्राप्त चूर्ण को अन्तः प्रयोग करते हैं ← शीतल होने पर घने वस्त्र से छान लेते हैं ← खदिर के लकड़ी के कोयले की अग्नि पर तपाते हैं । ← यह प्रक्रिया 16 वार करते हैं ← बुझाते हैं ← त्रिफला एवं शालसारादि क्वाथ में

उपरोक्त वर्णित प्रक्रिया अनुसार सभी लोहों का अयस्कृति बनाते हैं ।

श्लक्ष्णानि तीक्ष्णलोहस्य तत्र पत्राणि बुद्धिमान् । खदिराङ्गारतप्तानि बहुशः सन्निपातयेत् ॥
सुपिधानं तु तं कृत्वा यवपल्ले निधापयेत् । मासांस्त्रींश्चतुरो वाऽपि यावदालोहसंक्षयात् ॥
ततो जातरसं तं तु प्रातः प्रातर्यथाबलम् । निषेवेत यथा योगमाहारं चास्य कल्पयेत् ॥
(सु.चि. 12/15-17)

प्रमेह चिकित्सा में वर्णित लोहारिष्ट में प्रयुक्त लोह को पहले लोहपत्र को खदिर लकड़ी के अंगार पर उसे बहुत बार तपाकर तत्पश्चात आसव बनाने हेतु इसे यव पल्लव में तीन चार माह तक या जब तक लोहा क्षय न हो तब तक रखते हैं पुनः उसे प्रयोग करते हैं ।

सुश्रुत संहिता में विभिन्न स्थनों पर धातुओं को चूर्ण रूप में भी प्रयुक्त करने का उल्लेख है, यथा–

हेम चूर्णानि कैडर्यः श्वेता दूर्वा घृतं मधु । कृष्णायश्चूर्णस्य .....॥
(सु.चि. 12/11)

सुश्रुत संहिता में पारद का उल्लेख निम्न रूप में मिलता है–

हेमाङ्गत्वक् पाण्डुपत्रं वटस्य कालीयं स्यात् पद्मकं पद्ममध्यम् ।
रक्तं श्वेतं चन्दनं पारदं च काकोल्यादिः क्षीरपिष्टश्च वर्गः ॥ (सु.चि. (25/39)

गन्धक को महावज्रक तैल के घटक द्रव्य के रूप में प्रयक्त किया गया है । (सु.चि. 9/60) इसके अतिरिक्त उत्तर तन्त्र में मूषा का प्रयोग औषधि निर्माण हेतु किया गया है ।

एकादशैतान भागस्तु योजयेत् कुशलो भिषक् । मूषाक्षिप्त तदाध्मातमावृत जातवेदसि ॥
(सु.उ. 18/86)

अष्टांग संग्रह एवं अष्टांग हृदय

चरक एवं सुश्रुत संहिता के सदृश्य ही इन दोनों ग्रन्थों में भी धातुओं, रत्नों तथा अन्य खनिज द्रव्यों का उपयोग देखने को मिलता है । परन्तु पारद या गन्धक का बहुतायत से प्रयोग देखने को नहीं मिलता है । कुछ स्थलों पर पारद, रसोत्तम और रस शब्द का उल्लेख मिलता है जिसे पारद से ग्रहण किया जाता है । कालीयक शब्द से गन्धक का ग्रहण किया गया है । इसके अतिरिक्त गन्धोपल, गन्ध तथा गन्धपाषाण शब्द से गन्धक को लिया जाता है ।

- **गन्धोपलः सर्जरसो विडङ्ग–** (अ.हृ.चि. 19/67)
- **त्रिंशद् भागा भुजंगस्य गन्धपाषाण पञ्चकम्–** अ.हृ.उ. 13/51
- **कालीयकलताभ्रास्थिहेमकालारसोत्तमैः–** अ.हृ.उ. 25/61
- **पत्रं पाण्डुवटस्य चन्दनयुगं कालीयकं पारदम्–** अ.हृ.उ. 32/31

वाग्भट्ट द्वारा प्रयुक्त धातु तथा अन्य खनिज द्रव्य

महारस	उपरस	साधारण रस	धातु	रत्न	विष/उपविष	अन्य
माक्षिक शिलाजीत तुत्थ	गन्धक गैरिक मनःशिला हरताल स्रोताञ्जन सौवीराञ्जन रसाञ्जन कासीस	कम्पिल्लक	स्वर्ण रजत ताम्र कांस्य त्रपु सीसा कृष्ण लोह तीक्ष्ण लोह	पद्मराग वैडूर्य मुक्ता विद्रुम वज्र महानील	भल्लातक अर्क लांगली	स्फटिक शंख समुद्रफेन मुक्ता गोदन्ती शुक्ति

Scanned with OKEN Scanner

विमर्श– उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि 5वीं या 6वीं सदी तक पारद, जो रसशास्त्र का आधार द्रव्य है इसका प्रयोग इन आयुर्वेदिक ग्रन्थों में, जिस प्रकार से रस ग्रन्थों में प्रयुक्त हुआ है, वैसा उपयोग देखने को नहीं मिलता है। अन्य द्रव्यों जैसे धातुयें या महारस, उपरस, रत्न आदि वर्गों के अन्तर्गत आये द्रव्यों का प्रयोग केवल चूर्ण रूप में देखने को मिलता है। इनके चूर्ण (अयस्कृति) निर्माण की प्रक्रिया भी अल्प रूप में वर्णित है तथा ये भस्म से भिन्न प्रक्रिया है। बाद के काल के ग्रन्थ जैसे चक्रदत्त में रस पर्पटी निर्माण का उल्लेख मिलता है जो कि रसशास्त्र के अन्तर्गत मुख्यरूप से वर्णित है तथा शार्ङ्गधर संहिता (13वीं सदी का ग्रन्थ) में रसयोग नाम से मध्यम खण्ड में वर्णित अध्याय है इसमें विभिन्न रसशास्त्रीय प्रक्रियायें, यथा शोधन, मारण तथा पुट आदि का वर्णन है। यह इंगित करती है कि इनके काल में या इससे पूर्व रसशास्त्र का विकास अपने उत्कर्षता को प्राप्त कर चुका था।

3. माध्यमिक काल (Transitional period)––इस काल के अन्तर्गत रसशास्त्र का विकास वृन्द तथा चक्रदत्त में उपलब्ध साहित्य के द्वारा ज्ञात होता है। वृन्द में वाह्य प्रयोग हेतु वर्णित योग में पारद का उल्लेख है। पर्पटी ताम्र पारद गन्धक तथा ताम्र के योग से निर्मित करने का उल्लेख है। चक्रदत्त में रस पर्पटी के अन्तः प्रयोग का उल्लेख मिलता है। ताम्र योग तथा लोहे के मारण विधि का उल्लेख इस ग्रन्थ में प्राप्त होता है। योगराज में रौप्य मल (Calyx of Silver) का उल्लेख है।

4. तन्त्र काल (Tantric period)—इस काल के दौरान रसशास्त्र के विकास का वर्णन आचार्य नागार्जुन द्वारा वर्णित रस रत्नाकर, कच्छपुट तथा अन्य ग्रन्थों रसार्णव, रस हृदय तन्त्र, रसेन्द्र चूड़ामणि, रस प्रकाश सुधाकर आदि ग्रन्थों के माध्यम से मिलता है। इस समय रस शास्त्र अपने विकास के चरम अवस्था को प्राप्त कर चुका था।

5. इटेरोकेमिकल काल (Itaro chemical period)—इस काल में रसशास्त्र का विकास रसरत्न समुच्चय, नित्यनाथ रचित रसरत्नाकर, रसेन्द्र चिन्तामणि, रससार, शार्ङ्गधर संहिता, रसेन्द्रसार संग्रह, रस कौमुदी तथा भावप्रकाश जैसे ग्रन्थों से ज्ञात होता है।

18वी तथा 19वी सदी के ग्रन्थ जैसे आयुर्वेद प्रकाश, रस तरंगिणी तथा आधुनिक काल के ग्रन्थों यथा रसामृत, पारद विज्ञानीयम एवं आयुर्वेदिक फार्माकोपिया आफ इंडिया का भी रसशास्त्र के विकास में अति महत्वपूर्ण योगदान है।

भैषज्य कल्पना की परिभाषा तथा क्रमिक विकास

भैषज्य कल्पना का अर्थ

भैषज्य कल्पना शब्द भैषज्य + कल्पना इन दो शब्दों से मिलकर बना है।

भैषज्य की परिभाषा

1. भिषक जिते हितत्वात च भैषज्यं परिचक्षते। (का.खि.)
2. भिषजा संस्तुतं द्रव्यं भैषज्यम्। (आढमल्ल शार्ङ्गधर 1/1 पर)

इस प्रकार भैषज्य शब्द का अर्थ है जो चिकित्सा के कार्य में हितकारी हो या वैद्य के द्वारा चिकित्सा हेतु संस्तुत द्रव्य की संज्ञा भैषज्य की होती है।

कल्पना का अर्थ

1. कल्पनम–(क्लृप् + ल्युट) रूप देना, बनाना। (हिन्दी संस्कृत शब्द कोष, वा. शि. आप्टे)
2. कल्पनं उपयोगार्थं प्रकल्पनं संस्करणमिति। (आ. चक्रपाणि)

औषधि को उपयोगी रूप देना ही कल्पना कहलाती है।

इस प्रकार भिषक के द्वारा संस्तुत द्रव्य को उपयोगी रूप में परिवर्तित करने को भैषज्य कल्पना कहा जाता है।

काश्यप संहिता के खिलस्थान में वर्णित भैषज्योपक्रमणीय अध्याय में औषधि का अधिष्ठान, औषधि का ज्ञान, भेषज, भैषज्य, अगद, कषाय, औषधि के गुण भेद, काल, औषधि सेवन विधि, निषिद्ध काल, औषधि जीर्ण लक्षण तथा अजीर्ण लक्षण, वयानुसार मात्रा का वर्णन किया है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भैषज्य कल्पना के अन्तर्गत भैषज्य के विभिन्न कल्पनाओं के निर्माण के साथ-साथ उसके सेवन विधि काल, मात्रा आदि का विस्तृत रूप से अध्ययन किया जाता है। भैषज्य कल्पना में दो प्रकार की कल्पनाओं का समावेश किया जाता है–

1. औषाधीय कल्पना
2. आहार कल्पना

औषाधीय कल्पना को 2 भागों में बाँटा जा सकता है,

1. मौलिक कल्पना–जैसे स्वरस कल्क क्वाथ हिम फाण्ट।
2. व्युत्पन्न कल्पना–ऐसी कल्पनायें जिनके निर्माण हेतु मौलिक कल्पना की आवश्यकता होती है। जैसे, स्नेह, अवलेह, संधान आदि।

इसे निम्न रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है—

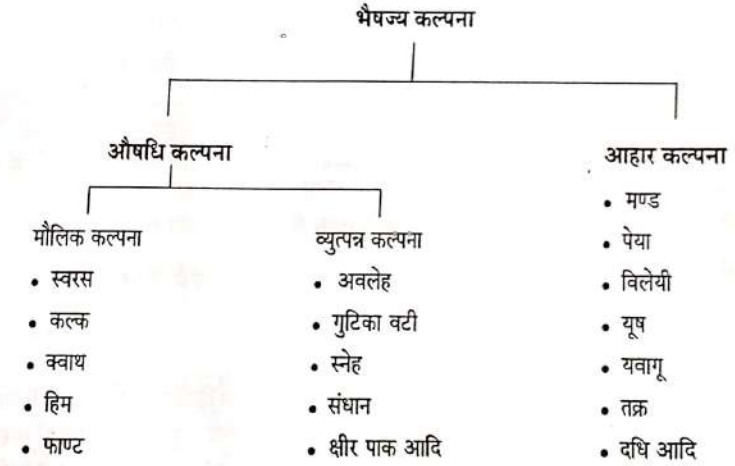

Scanned with OKEN Scanner

भैषज्य कल्पना का विकास

भैषज्य कल्पना के विकास को कालानुसार निम्न रूप में विभाजित किया जा सकता है–

1. वैदिक कालीन भैषज्य कल्पना
2. संहिता कालीन भैषज्य कल्पना
3. मध्ययुगीन भैषज्य कल्पना
4. आधुनिक युग में भैषज्य कल्पना

1. वैदिक काल में भैषज्य कल्पना

वैदिक साहित्य में औषध तथा आहार द्रव्यों का बहुलता से उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के अनुसार औषोधियों की उत्पत्ति देवताओं से मानी गयी है। यथा–

या औषधिः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रि युगं पुरा। मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

(ऋग्वेद 10/97)

वेद में भिषक एवं भेषज शब्द का भी वर्णन मिलता है। यथा–

विप्रः स उच्यतें भिषक रक्षोहाऽमीवचातनः॥ (ऋग्वेद 10/97)

तथा

अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषाक्ति विश्वं यत्तुरम्। (ऋग्वेद 8/79/2)

और,

युवं हस्थो भिषजा भेषजेभिः। (ऋग्वेद 1/157/6)

तथा,

आपः शिवाः शिवातमा.....तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्।

वेदों के अध्ययन से पता चलता है कि इसमें विभिन्न प्रकार की औषधियों जैसे–करञ्ज, पिप्पल, अर्क, अश्वत्थ, खदिर, आँवला, तिल, दूर्वा, अपामार्ग, अर्जुन, गोधूम, मसूर तथा सोम आदि का वर्णन प्राप्त होता है। अथर्ववेद में औषधियों के चार विभाग किये गये है-

1. आथर्वणी
2. आङ्गिरसी
3. दैवी
4. मनुष्यजा

इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उपरोक्त औषधियों का प्रयोग किसी न किसी कल्पना के रूप में किया रहा होगा। अथर्ववेद के वैदिक ग्रन्थों में आठ नाम आते है। उनमें भेषज वेद तथा यातुवेद यह दो नाम ही स्पष्ट है कि अथर्ववेद में आयुर्वेद का विषय प्रचुर रूप में विद्यमान है। अथर्ववेद के उपलब्ध शौनकीया शाखा से मन्त्रों द्धरण किया गया है।

रोग शान्ति के लिए वेद में प्राकृतिक, खनिज, समुद्रज, प्राणिज तथा उद्भिज द्रव्यों का प्रयोग औषध रूप में मिलता है। प्राकृतिकों में सूर्य, चन्द्र (अथर्व. 6/83/1), अग्नि (अथर्व. 10/4/2), मरूत (ऋग्वेद 2/33/13), खनिज द्रव्यों में अजंन (अथर्व. 4/9/9), समुद्रज में शंख (अथर्व. 4/10/4), प्राणिज में मृगशृगं (अथर्व. 3/7/1) तथा उद्भिजों में अनेक वीरूधों का वर्णन आता है।

प्राकृतिक, प्राणिज, खनिज तथा समुद्रज द्रव्यों का वर्णन बहुत संक्षेप से आता है। उद्भिज औषधियों का वर्णन विस्तृत रूप में मिलता है। यद्यपि औषधियों का एक विश्लेषण अपक्रीता (अथर्व 8/7/11) भी दिया गया है लेकिन कई औषधियाँ पैसे से बिकती थी तथा कई द्रव्य विनिमय से प्राप्त होते थे। वेदों में एक रोग की शान्ति के लिए एक समय में एक ही औषधि प्रयोग का वर्णन विस्तार से मिलता है जिसमें सोम,सहस्रपर्णी,अपामार्ग, पिप्पली, अजशृंगी, पृश्निपर्णी आदि प्रमुख है।

वेदों में यद्यपि कल्पनाओं के नाम का स्पष्ट उल्लेख नहीं हैं फिर भी अञ्जन कल्पना का नाम से वर्णन उपलब्ध है। अञ्जन सेवन के प्रकार में आंख में लगाना, मणिधारण, स्नान तथा पीना कहा गया है, यथा–

आक्ष्वैकं मणिमेकं कृणुष्व स्नाह्येकेना पिबैकमेषाम्। (अथर्व 19/45/5)

लेकिन इसकी निर्माण विधि का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है।

इसी प्रकार कुछ अन्य कल्पनायें जैसे स्वरस, कल्क, क्वाथ, स्नेह आदि कल्पनाओं के नामों का उल्लेख नहीं है। लेकिन जिस प्रकार से या जिस विधि से इनका निर्माण किया गया है उससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह कल्पनायें वैदिक काल में प्रचलित थी। इसी प्रकार आहार कल्पनाओं के अन्तर्गत आने वाली कल्पनायें जैसे धाना, करम्भ, सक्तु, पय, दधि आदि का स्पष्ट रूप से उल्लेख प्राप्त होता है। यथा-

धानाः करम्भः सक्तवः परिवापः पयो दधि। सोमस्य रूप हविष आमिक्षा वाजिनं मधु॥

(यजु. 19/21)

धाना (भूजा हुआ अन्न),करम्भ (मण्ड), सक्तु, परिवाप (भूना हुआ चावल या भूजा), दूध, दहि, आमिक्षा (फटा हुआ दूध), वाजिन (दहि का पानी या मस्तु) तथा मधु का प्रयोग यज्ञ के दौरान होता था।

ऋग्वेद में सोमरस निर्माण की प्रक्रिया तथा इसमें प्रयुक्त यन्त्र/उपकरण का वर्णन प्राप्त होता है, जो निम्न है–(म. 1/अ.6/सू. 28)

यत्र ग्रावा पृथुबुघ्न ऊर्ध्वो भवति सोतवे उलूखल सुतानामवेद्धिन्द्र जल्गुलः॥1॥

हे इन्द्र! जहां कूटने के लिए दृढ़ पत्थर का मसूल उठाया जाता है वहां निष्पन्न किये गये सोमों को बारम्बार सेवन करो।

यत्र द्वाविव जघनाधिषवष्या कृता उलूखल सुनानामवेद्विन्द्र जल्गुलः॥2॥

हे इन्द्र! जहां दो जंघाओं के समान सोम को कूटने वाले दो फलक रखें हैं उनके तैयार किये गये सोमरस का पान करो।

ता नो अद्य वनस्पती ऋष्वावृण्वेभिः सोतृभिः। इन्द्राय मधुमत्सुतम्॥

Scanned with OKEN Scanner

हे ऊखल-मूसल रूप वनस्पते! तुम सोम सिद्ध करने वालों के लिए मधुर सोमों का इन्द्र के निमित्त निष्पीडन करो।

उच्छिष्टं चम्वोर्भरं सोमं पवित्र आ सृज। निधेहि गोरधि त्वचि ॥9।26।

ऊखल और मूसल द्वारा कूटे गये सोम को पात्र से निकालकर पवित्र कुश पर रखो, अवशिष्ट को चर्म पात्र में रखो।

इस प्रक्रिया में वर्णित यन्त्र/उपकरण/पात्र के नाम एवं उनके उपयोग निम्न है-

	यन्त्र/उपकरण/पात्र	उपयोग
01	फलक	चौड़ा प्रस्तर सोम को रखने हेतु
02	अभिश्रवण	कूटने के लिए रखने हेतु (compaired as mortor)
03	ग्रावा	कूटने हेतु (compaired as pestle)
04	आधवनीय (पात्र)	कल्क रूप में प्राप्त सोम को रखने हेतु
05	दशापवित्र (वस्त्र)	छानने हेतु प्रयुक्त
06	चामस (पात्र)	सोमरस एकत्र करने हेतु

उपरोक्त निर्माण विधि के अवलोकन से पता चलता है कि यह स्पष्ट रूप से स्वरस निर्माण विधि है।

इसी प्रकार डण्डे, तीर या चोट से बने घाव में सिलाची का प्रयोग कल्क कल्पना का रूप माना जा सकता है।

आवय नामक पौधे से करम्भ बनाने की विधि को क्वाथ कल्पना के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है।

शतपथ ब्राह्मण में "शृत" शब्द का उल्लेख प्राप्त होता है। (श. ब्रा. 2/3/1/14)

वैदिक कालीन औषध एवं आहार कल्पनाओं का संहिता ग्रन्थों में वर्णित कल्पनाओं से सामञ्जस्य

औषधि कल्पना

वैदिक कालीन	संहिता ग्रन्थों में
1. सोम रस	स्वरस कल्पना
2. सिलाची प्रयोग	कल्क कल्पना
3. आवय स्वरस पाक	क्वाथ कल्पना
4. विष का जल के साथ प्रयोग	हिम/फाण्ट कल्पना
5. पीवस पाक	स्नेह कल्पना
6. अरिष्ट/आसव	संधान कल्पना
7. मद्य/सुरा	संधान कल्पना

आहार कल्पना

1. दधि	दधि कल्पना
2. तक्र	तक्र कल्पना

3. घृत	घृत
4. मैत्रावारूणी	पयस्या
5. वाजिन	मस्तु
6. आमिक्षा	कूर्चिका
7. घृत, सर्पि, आज्य	घृत
8. धाना	भूर्जित अन्न
9. करम्भ	अन्नमण्ड
10. तोक्म	अंकुरित व्रीहि

इस प्रकार उपरोक्त वर्णन से यह ज्ञात होता है कि वैदिक काल में औषधि एवं अन्न का उपयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता था। जिसको भैषज्य कल्पना विज्ञान में एक विशेष नाम से जाना जाता है।

रामायण में वर्णित लक्ष्मण शक्ति प्रकरण में सुषेन वैद्य तथा संजीवनी बूटी का मूर्च्छा में सफल प्रयोग उस काल की भैषज्य कल्पना के विकसित स्वरूप का द्योतक है। इसी प्रकार अन्य ग्रन्थों जैसे विनय पिटक में भगवान बुद्ध ने विस्तारपूर्वक औषधियों के निर्माण, सेवन तथा वितरण की व्यवस्था का उल्लेख किया है। इसमें घृत, मधु, चर्बी, कषाय, फल-पत्र, गोंद, लवण, चूर्ण, मांस, रक्त, धूम्रपान, नस्य और मद्य आदि पदार्थों की औषधि उपयोगी व्यवस्था उपलब्ध होती है। (विनय पिटक "भैषज्य स्कन्ध" 6-महावग्ग 6-215)

कौटिल्य अर्थशास्त्र—इसके अनुसार औषधि द्रव्य का संग्रह कुष्याध्यक्ष, द्रव्य पाल एवं वन पाल करते थे। पण्याध्यक्ष औषधियों को कारखाने में तैयार कराते थे तथा इन्हें बड़े-बड़े भण्डार में सुरक्षित रखते थे। (2/16 तथा 2/5)

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार औषधिशाला का निर्माण उत्तर पश्चिम दिशा में कराना चाहिए। यथा—

उत्तर पश्चिमे भागे पण्य भैषज्य गृहम् (कौ.अ. 2/3)

कौटिल्य अर्थशास्त्र 4/1 के अनुसार औषधियों के उत्पादन के लिए राज्य की तरफ से कुछ भूमि अलग छोड़ देने का उल्लेख किया है। इसी प्रकार गुणवत्ता हीन औषधियों के बेचने पर आर्थिक दण्ड का भी प्रावधान था।

जैसे-धान्य स्नेह क्षार लवण गन्ध भैषज्य द्रव्याणां समवर्णोपधाने द्वादश पणो दण्डः। (4/2) अर्थात धान्य, स्नेह, क्षार, लवण, गन्ध तथा भेषज द्रव्यों के समान दूसरा द्रव्य बेचने पर 12 पण का दण्ड लगाया जाता था।

2. बृहत् त्रयी में भैषज्य कल्पना का स्वरूप

चरक संहिता

श्रीमद अग्निवेश द्वारा रचित तथा आचार्य चरक द्वारा प्रति संस्कृत चरक संहिता आठ स्थान जैसे सूत्रस्थान, निदान स्थान, विमान स्थान, शारीर स्थान, इन्द्रिय स्थान, चिकित्सा स्थान, कल्प स्थान एवं सिद्धि स्थान में परिपूर्ण है। चरक संहिता का विस्तृत अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि भैषज्य कल्पना सम्पूर्ण चरक संहिता में अध्यायों में वर्णित प्रसंग के अनुरूप उपलब्ध प्राप्त होती है। चरक संहिता के सूत्रस्थान में तृतीय अध्याय में लेप कल्पना का वर्णन उपलब्ध

Scanned with OKEN Scanner

है। जबकि सूत्रस्थान के चतुर्थ अध्याय में पंच कषाय योनियों तथा पंच कषाय कल्पना का वर्णन प्राप्त होता है। यथा—

पञ्च कषाययोनय इति मधुरकषायोऽम्लकषायः कटु कषाय तिक्तकषायः कषाय कषायश्चेति तन्त्रे संज्ञा। (च.सू. 4/6)

पञ्चविधं कषाय कल्पनामिति तद्यथा–स्वरसः, कल्कः, शृतः, शीतः, फाण्टः कषाय इति। तेषां यथापूर्वं बलाधिक्यम्, अतः कषाय कल्पना व्याध्यातुर बलापेक्षिणी, न त्वेषं खलु सर्वाणि सर्वत्रोपयोगिनी भवति। (च.सू. 4/7)

कषाय योनियाँ पाँच होती है जैसे मधुर कषाय, अम्ल कषाय, कटु कषाय, तिक्त कषाय तथा कषाय कषाय। इसमें लवण को कषाय योनि के अन्तर्गत समावेश नहीं किया गया है। इसी प्रकार कषाय कल्पनायें भी पाँच मानी गई है जैसे स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम तथा फाण्ट। ये यथापूर्व अर्थात फाण्ट की अपेक्षा हिम, हिम की अपेक्षा शृत, शृत की अपेक्षा कल्क तथा कल्क की अपेक्षा स्वरस अधिक बलवान होती है। इसलिए ये पंच कषाय कल्पनायें व्याधि तथा आतुर बल के अनुसार प्रयोग की जाती है। तथा एक ही कल्पना सभी में उपयोगी नहीं होती है। सूत्रस्थान के 27वें अध्याय अन्नपान विधि में विभिन्न प्रकार के आहार कल्पनाओं जैसे–मण्ड, पेया, पूपलिका, मधुक्रोड, वेशवार, विमर्दक, मोरट, शष्कुली आदि के गुणों का वर्णन किया है जो कि उस काल में प्रचलित कल्पनायें थे।

सूत्रस्थान के 25वें अध्याय में आसव की नव योनियाँ तथा इससे 84 प्रकार के आसव का वर्णन तथा आसव की परिभाषा का उल्लेख मिलता है। विमान स्थान के 7वें अध्याय में स्वरस निर्माण विधि (7/21), भल्लातक तैल पातन विधि (7/23), स्नेह पाक विधि तथा सिद्धि लक्षण (7/26), क्वाथ निर्माण विधि (7/17), का वर्णन अच्छी प्रकार से प्राप्त होता है। कल्प स्थान में भैषज्य कल्पना के अन्य विषयों जैसे औषधि ग्रहण योग्य भूमि, औषधि ग्रहण काल, संरक्षण विधि, अवलेह सिद्धि लक्षण (कल्प स्थान) स्नेह सिद्धि लक्षण (कल्प स्थान), मान परिभाषा तथा अनुक्त मान का वर्णन उस काल में भैषज्य कल्पना की विकसित स्थिति का द्योतक है। चरक संहिता के कल्प स्थान में विभिन्न औषध कल्पों के कुल 600 योगों का वर्णन किया गया है।

सुश्रुत संहिता

महर्षि सुश्रुत द्वारा रचित यह संहिता यद्यपि प्रधान रूप से शल्य चिकित्सा से सम्बन्धित ग्रंथ है फिर भी इस संहिता में भैषज्य कल्पना की दृष्टि से कई महत्वपूर्ण तथ्यों का उल्लेख प्राप्त होता है। महर्षि सुश्रुत ने छह मौलिक कल्पनाओं का उल्लेख किया है। यथा–

क्षीरं रसः कल्कमथो कषायः शृतश्च शीतश्च तथैव फाण्टम् ।
कल्पाः षडेते खलु भेषजानां यथोत्तरं ते लघवः प्रदिष्टाः ॥ (सु.सू. 44/91)

अर्थात क्षीर (latex), रस, कल्क, कषाय, शीत तथा फाण्ट ये छहः कल्पनायें भेषज की होती है तथा उत्तरोत्तर लघु होती है। इसके अतिरिक्त क्षार कल्पना के निर्माण की विस्तृत विधि सूत्रस्थान 12वाँ अध्याय में उपलब्ध होता है। अयस्कृति का विस्तृत उल्लेख इसी संहिता में प्राप्त होता है। कृतान्न वर्ग (सू.अ. 46) के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के आहार कल्पनाओं के गुणों का वर्णन किया गया है।

अष्टांग संग्रह एवं अष्टांग हृदय

इस ग्रन्थ का अवलोकन करने पर भैषज्य कल्पना से सम्बन्धित निम्न विषयों का वर्णन प्राप्त होता है जो कि तत्कालीन भैषज्य कल्पना की स्थिति का द्योतक है। कषाय कल्पनाओं में स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम तथा फाण्ट माना है।

विविधौषध विज्ञानीय अध्याय में औषध का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया गया है। द्रव्यों का वर्गीकरण आचार्य वाग्भट्ट ने तीन अध्यायों में किया है। इसमें महाकषायों की संख्या 45 तथा गणों की संख्या 25 कही गयी है। वाग्भट्ट ने आचार्य सुश्रुत के गणों को विविध गण संग्रह में किया है।

आचार्य ने रस देश का वर्णन किया है, जो निम्न है–

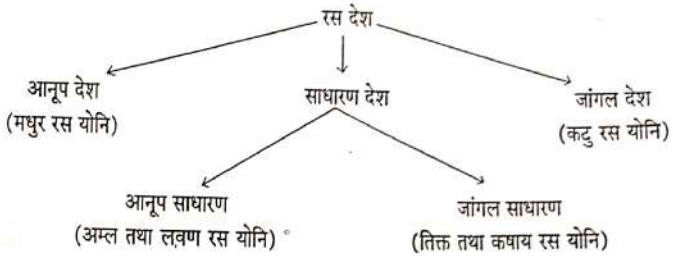

आचार्य वाग्भट्ट ने अन्नपान विधि को दो अध्याय में वर्णित किया है।

1. द्रव द्रव्य विज्ञानीय 2. अन्न स्वरूप विज्ञानीय

द्रव द्रव्य विज्ञानीय अध्याय में जल वर्ग, क्षीर, इक्षु, मधु, तैल, मद्य तथा मूत्र वर्ग का वर्णन किया है तथा अन्न स्वरूप विज्ञानीय अध्याय में शूक धान्य, शिम्बी धान्य, कृतान्न, मांस, शाक, फल तथा मात्रादि का वर्णन है। इक्षु वर्ग काश, शर, दर्भ के पत्र से उत्पन्न शर्करा का वर्णन किया गया है। मद्य वर्ग में धातकी पुष्प से अभिषुत द्राक्षासव का वर्णन है। कृतान्न वर्ग में दकलावणिक (मांस रस विशेष), धारिका, इण्डरिका कल्पनायें आचार्य वाग्भट्ट की मौलिक कल्पना मानी जाती है।

धातकी का प्रयोग आसव/अरिष्ट निर्माण में सर्वप्रथम आचार्य वाग्भट्ट ने शुरू किया।

धातकी गुड़तोयानि कारणं मद्यशुक्तयो (अ.स.सू. 7/243)

आचार्य ने स्वभाव, संयोग आदि सात आहार कल्पना विशेष का वर्णन किया है। आहार तथा औषध के पाचन काल क्रमशः 4 याम तथा 2 याम माना है।

धान्य वर्ग में मण्ड, पेया, विलेपी, ओदन, कृशरा, यूष, खल, काम्बलिक, शुष्क शाक, विरूढ़क, शण्डाकी, वटक, पर्पट, लाजा, धाना, सक्तु, पिरायाक, शष्कुली, मोदक, अपूप, धारिका, इण्डारिका, पूर्णकोश, उत्कारिका, पायस, संयाव आदि कल्पनाओं का वर्णन प्राप्त होता है। औषध कल्पनाओं में पंच कषाय कल्पनाओं के अतिरिक्त आसव, अरिष्ट, स्नेह, अवलेह, क्षार, लवण, शतधौत घृत, सहस्रधौत घृत, बस्ति, नस्य, आश्चयोतन, विडालक, धूमपान, गण्डूष आदि का वर्णन प्राप्त होता है।

Scanned with OKEN Scanner

काश्यपसंहिता

यद्यपि इस संहिता का मुख्य विषय वस्तु बच्चों से सम्बन्धित है फिर इस संहिता में भैषज्य कल्पना से सम्बन्धित कुछ विशेष बातों का वर्णन किया गया है। इसमें भेषज, भैषज्य, औषधि, अगद की परिभाषा का स्पष्ट उल्लेख किया गया है। औषधि तथा भेषज में अन्तर इसी संहिता में उपलब्ध है। यथा—

ओषधं द्रव्य संयोगं ब्रुवते दीपनादिकम्। हुत व्रत तपोदानं शान्तिकर्म च भेषजम्॥

(का.इ. 6/5)

आचार्य काश्यप ने मौलिक कल्पनाओं को सात माना है, यथा—

चूर्ण शीत कषायश्च स्वरसोऽभिषवस्तथा। फाण्टः कल्कस्तथा क्वाथो यथावत निवोध मे॥

(का.खि. 3/34)

चूर्ण, शीत कषाय, स्वरस, अभिषव, फाण्ट, कल्क तथा क्वाथ ये सात है। कल्प स्थान में धूप कल्प, शतपुष्पा शतावरी कल्प, लशुन कल्प आदि का वर्णन किया है। भैषज्योपकरणीय अध्याय में औषधि जीर्ण लक्षण, औषधि अजीर्ण लक्षण, औषधि मात्रा आदि का वर्णन किया है। यूष निर्देशीय अध्याय में यूष का विस्तृत वर्णन, यवागू आदि का वर्णन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त लेहन का भी विशेष वर्णन प्राप्त होता है।

3. मध्यकालीन भैषज्य कल्पना

इस युग में ग्रदनिग्रह, चक्रदत्त, शार्ङ्गधर संहिता आदि का ग्रहण किया जाता है। जिसका वर्णन निम्न है–

गदनिग्रह

यह आचार्य सोढ़ल द्वारा विरचित है। इसके अध्याय का वर्णन कल्पनाओं के आधार पर है। यथा घृताधिकार, तैलाधिकार आदि। जिससे यह पता चलता है कि इन्होंने कल्पनाओं को अधिक महत्व दिया है।

चक्रदत्त

यह आचार्य चक्रपाणि द्वारा विरचित है। इसमें भैषज्य कल्पना के विभिन्न सिद्धान्तों तथा मान प्रकरण से सम्बन्धित कुछ विशेष प्रकरण का वर्णन है। इसमें स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम तथा फाण्ट के अतिरिक्त आसव, अरिष्ट, तैल, घृत, अवलेह आदि का वर्णन है। आहार कल्पनाओं में यूष, यवागू, राग, षाडव, तक्र, मण्ड, पेया, विलेपी आदि का वर्णन प्राप्त होता है। क्षार सूत्र निर्माण विधि भी इस ग्रन्थ में उपलब्ध हैं। चक्रदत्त में सर्वप्रथम ग्रहणी रोग में रसपर्पटी का प्रयोग किया है। गन्ध द्रव्यों के शोधन का वर्णन भी इस ग्रन्थ की विशेषता है।

शार्ङ्गधर संहिता

यह ग्रन्थ भैषज्य कल्पना का आधारभूत ग्रन्थ है। इसे 13वीं शती में आचार्य शार्ङ्गधर मिश्र ने लिखा है। यह ग्रन्थ भैषज्य कल्पना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह तीन खण्ड में परिपूर्ण है यथा—

1. पूर्व खण्ड
2. मध्यम खण्ड

3. उत्तर खण्ड

पूर्व खण्ड में सात अध्याय (परिभाषा, भैषज्याख्यानक, नाडी परीक्षा, दीपन पाचन, कलादि व्याख्या, आहारगति आदि तथा रोग गणना), मध्यम खण्ड में बारह अध्याय (स्वरस, क्वाथ, फाण्ट, हिम, कल्क, चूर्ण, गुटिका, अवलेह, स्नेह, संधान, धातु शुद्धि तथा रस प्रकरण) एवं उत्तर खण्ड में तेरह अध्याय (स्नेहपान, स्वेदविधि, वमन, विरेचन, स्नेह बस्ति, निरूह बस्ति, उत्तर बस्ति, नस्य, धूमपान, गण्डूष, लेप, शोणित विस्रुति तथा नेत्रकर्म) है। पूर्व खण्ड में भैषज्य कल्पना के आधारभूत सिद्धान्त, मान प्रकरण, अनुक्त मान, भैषज्य काल आदि का वर्णन है। विभिन्न औषधि कल्पनाओं की सवीर्यता अवधि का वर्णन किया गया है जो कि इस संहिता की विशेषता है।

मध्यम खण्ड में कल्पनाओं का विवरण प्राप्त है। मध्यम खण्ड के अध्याय कल्पनाओं के नाम पर है। प्रत्येक अध्याय में कल्पना की परिभाषा, निर्माण विधि, पर्याय, मात्रा तथा योगों का रोगाधिकार सहित वर्णन बहुत ही सुन्दर विधि से किया गया है।

उत्तर खण्ड में स्नेहन, स्वेदन, बस्ति कल्पना, धूमपान, नस्य, लेप तथा नेत्र कल्पना के भेद तथा उनकी प्रयोग विधि, योग एवं उनके प्रयोग का वर्णन किया गया है।

4. आधुनिक काल

इस काल के आयुर्वेदिक ग्रन्थ में भैषज्य रत्नावली का विशेष स्थान है।

भैषज्य रत्नावली

इस ग्रन्थ के कर्ता श्री गोविनदनाथ सेन जी है। इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम स्नेह मूर्च्छना का वर्णन किया गया है जो कि भैषज्य कल्पना के विकास का द्योतक है। विभिन्न औषधियों के प्रतिनिध द्रव्यों का भी उल्लेख किया गया है। इसके अध्याय रोगों के नाम पर है यथा ज्वर चिकित्सा प्रकरण आदि। प्रत्येक अध्याय में उस रोग विशेष में प्रयुक्त औषध कल्पनाओं का वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ औषधि निर्माण के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रन्थों में से एक है। इसमें लगभग सौ कल्पनाओं का वर्णन प्राप्त होता है।

आधुनिक काल या स्वतन्त्रता के पश्चात भैषज्य कल्पना का विकास

स्वतन्त्रता के पश्चात या ऐसा कहा जा सकता है कि सन 1964 में आयुर्वेदिक औषधियों को The Drugs and Cosmetics Act 1940 के अन्तर्गत लाने के पश्चात् आयुर्वेदिक औषधियों की quality, purity तथा अन्य parameters जैसे shelf life, safety, labelling, packaging आदि पर विशेष रूप से फोकस किया गया तथा इन parameters के लिए आवश्यक कदम भारत सरकार द्वारा लिये गये। जिनमें Ayurvedic Pharmacopoeia Committee का गठन एक महत्वपूर्ण क्रम है। इस कमेटी के द्वारा विभिन्न योगों के संग्रह के रूप में Ayurvedic Formulary of India तथा एकल औषधि के quality, purity तथा strength को निश्चित करने की दिशा में Ayurvedic Pharmacopoeia of India के विभिन्न volume का प्रकाशन किया गया। इन औषधियों की गुणवत्ता परीक्षण के लिए Pharmacopoeial Laboratory for Indian Medicine (PLIM) की स्थापना गाजियावाद में किया गया। इसी प्रकार आयुर्वेदिक ज्ञान को सुरक्षित रखने के लिए Traditional Knowledge Digital Liberary (TKDL) तथा Medicinal Plants के प्रसार हेतु National Medicinal Plant Board (NMPB) का गठन

Scanned with OKEN Scanner

किया गया। उपरोक्त सभी आयुर्वेद के उत्थान तथा प्रचार प्रसार एवं जनता में जागरूकता तथा स्वीकारता हेतु कार्य कर रहे हैं।

रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना का महत्व तथा क्षेत्र (Scope)

रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के द्रव्यों (Herb metals, minerals आदि) को उनके औषधिय रूप परिवर्तित कर उनका प्रयोग एकल रूप से (Single) या योग (Formulation) के रूप में प्रयोग किया जाता है। जिसके हेतु विभिन्न प्रकार की प्रक्रियायें संस्कार, शोधन, मारण आदि तथा विभिन्न प्रकार के यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इन सभी का वर्णन रसशास्त्र तथा भैषज्य कल्पना में उपलब्ध पाया जाता है। भस्मों के अपक्व अविधि सेवनजन्य दोष उनकी शान्ति उपाय का भी वर्णन रस ग्रन्थों में किया गया है। अतः विभिन्न प्रकार के द्रव्यों का औषधि रूप में परिवर्तन, उनके प्रयोग विधि, मात्रा, अनुपान आदि के सम्यक् ज्ञान हेतु रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना का सम्यक् ज्ञान अत्यन्त आवश्यक जो कि इस विषय के महत्व को दर्शाता है।

क्षेत्र (Scope)– रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना विज्ञान का प्रत्यक्ष सम्बन्ध औषधि निर्माण एवं प्रयोग से है अतः इसके निम्न क्षेत्र माने जा सकते है—

1. औषधि निर्माण (In the Pharmacy)
2. गुणवत्ता नियन्त्र (Quality control)
3. मानकीकरण (Drug standardization)
4. चिकित्सकीय प्रयोग (Clinical trial)
5. नई कल्पनाओं का विकास (Development of new drug dosages form and their application)

रसशाला तथा रस मण्डप

जिस स्थान पर रस का संस्कार, रसौषधि निर्माण सम्बन्धी कार्य किये जाय उसे रसशाला कहते हैं। रसशाला का वर्णन रसरत्नसमुच्चय में सातवें अध्याय में किया गया है। रसार्णव, रसतरंगिणीकार आदि ने भी रसशाला का वर्णन किया है। प्राचीन समय में रसशाला का बहुत ही सुन्दर ढंग से वर्णन किया गया है। रसशाला का स्थान, उसमें उपयोगी यन्त्र उपकरण, कार्यकरने वाले अधिकारी/कर्मचारी आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। रसशाला का वर्णन निम्न शीर्षक (Headings) के अन्तर्गत किया जा सकता है–

1. रसशाल का स्थान
2. रसशाला में कार्यरत अधिकारी (रसशास्त्र) तथा कर्मचारी (मृत्यु आदि)
3. रसशाला में कार्यस्थल या दिशा अनुसार कर्म विभाजन।
4. रसशाला में प्रयुक्त यन्त्र/उपकरण।

1. रसशाला निर्माण स्थल

रसशालां प्रकुर्वीत सर्वबाधाविवर्जिते । सर्वौषधिमये देशे रम्ये कूपसमन्विते ॥

यक्षस्त्र्यक्षसहस्राक्षदिग्विभागे सुशोभने । नानोपकरणोपेतां प्राकारेण सुशोभिताम् ॥

(र.र.स. 7/1-2)

रसशाला का निर्माण ऐसे स्थल पर करना चाहिए जहाँ पर–

1. किसी प्रकार की बाधा न हो। एवं वह स्थान आतङ्क रहित हो।
2. जिस स्थल पर सब प्रकार की औषधियाँ उपलब्ध हों।
3. जहाँ पर पानी (कूप) की उपलब्धता हो।
4. यक्ष (उत्तर), त्र्यक्ष (ईशान), सहस्राक्ष (पूर्व) दिशा में निर्मित करना चाहिए। (शहर या ग्राम के)
5. प्राकार (चहरदीवार या Boundary) से युक्त होना चाहिए।
6. विभिन्न प्रकार के यन्त्र जो रस कार्य में उपोयग हो उनसे युक्त होना चाहिए।
7. इसमें सम्यक रूप से वातायन (झरोखा) होना चाहिए जिससे प्रकाश हवा का प्रवेश होता रहे। तथा अनेक चित्रों से युक्त होना चाहिए।

2. रसशाला में कार्यरत वैद्य एवं कर्मचारी

रससञ्चिन्तका वैद्या निघण्टुज्ञाश्च वार्तिकाः । सर्वदेशजभाषाज्ञाः सङ्ग्राह्यास्तेऽपि साधकैः ॥

(र.र.स. 7/24)

1. रसवैद्य
2. निघण्टुज्ञ जिसे औषधियों का अच्छा ज्ञान हो।
3. सर्वदेशजभाषाज्ञ– जो रसशाला के आसपास स्थित क्षेत्र या अन्य क्षेत्र की भाषओं का ज्ञाता है।

विमर्श– रस वैद्य रस कार्य को सम्पन्न कराता है। जिसमें विभिन्न प्रकार की औषधियों का प्रयोग होता है। सही प्रकार की औषधि प्रयोग हो सके लिए निघण्टुज्ञ तथा भाषा सम्बन्धी समस्या के निवारणार्थ सर्वदेशजभाषाज्ञ की नियुक्ति करने का उल्लेख किया गया है।

3. रसशाला में दिशा अनुसार कार्य विभाजन/कार्य स्थल

रसशाला में विभिन्न कार्य को करने के लिए उन्हें दिशा अनुसार व्यवस्थित किया गया है जिससे कार्य सुचारु रूप से किया जा सके। ये विभाजन निम्न है–

शालायाः पूर्वदिग्भागे स्थापयेद्रसभैरवम् । वह्निकर्माणि चाग्नेये याम्ये पाषाणकर्म च ॥
नैर्ऋत्ये शस्त्रकर्माणि वारुणे क्षालनादिकम् । शोषणं वायुकोणे च वेधकर्मोत्तरे तथा ॥
स्थापनं सिद्धवस्तूनां प्रकुर्यादीशकोणके । पदार्थसङ्ग्रहः कार्यो रससाधनहेतुकः ॥

(र.र.स. 7/3-5)

उपरोक्त को निम्न रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है–

पूर्व दिशा में– रस भैरव की स्थापना

आग्नेय दिशा में– अग्नि कर्म

Scanned with OKEN Scanner

दक्षिण दिशा में– पाषाण कर्म (कूटने, पीसने का कार्य)

नैर्ऋत्य दिशा में– शस्त्र कर्म

पश्चिम दिशा में– क्षालन (धोने का कार्य)

वायव्य दिशा में– शोषण कर्म (सुखाने का कार्य)

उत्तर दिशा में– वेध कार्य

ईशान दिशा में– सिद्ध औषधि तथा रसायन में उपयोगी पदार्थ संग्रह

4. रसशाला में संग्रहणीय/उपकरण– रसशाला में निम्न उपकरणों का संग्रह करना चाहिए

1. कोष्ठी-सत्वपातन कोष्ठी, सुराकोष्ठी, भूमिकोष्ठी, चलकोष्ठी ।
2. अनेक प्रकार की जल द्रोणी
3. भस्त्रिका (Blower) तथा नलिका ।
4. स्वर्ण, लोह आदि धातुओं से निर्मित कुण्डिया (पतीली) ।
5. कण्डली, पेषणी तथा द्रोणाकार एवं वर्तुल खल्व यन्त्र, तप्त खल्व यन्त्र ।
6. चालनी (Sieve)
7. मूषा तथा इसके उपादान द्रव्य
8. त्रिविध भेषज संग्रह (धातु, मूलिका एवं जान्तव द्रव)
9. कोयले, उपले, शीशियाँ, प्याले, छोटी सीप तथा शंख, क्षुरप्र (खुरपी) तथा अन्य जो भी आवश्यक उपकरण है उनका संग्रह करना चाहिए ।

उपरोक्त वर्णन रसरत्न समुच्चय 7/6-13 पर आधारित है ।

रसशाला में नियुक्ति कर्मचारी– रसशाला में विभिन्न श्रेणी के परिचारकों की आवश्यकता विभिन्न प्रकार के कर्मों के सम्पादन हेतु होत है । इसका वर्णन निम्न हैं–

1. परिचारक– सोद्यमाः शुचयः बलिष्ठा परिचारकाः ।(र.र.स. 7/26)

परिचारक मेहनती, स्वच्छ, शूर तथा बलवान होने चाहिए ।

2. निधि साधक– भूत पिशाच आदि को दूर करने के मन्त्रों को जानने वाले पुरुष को सिद्ध औषधि की सुरक्षा में रखना चाहिए ।

भूतनिग्रहमन्त्रज्ञास्ते योज्या निधिसाधने ।(र.र.स. 7/30)

3. बलिसाधक–

बलिष्ठाः सत्यवन्तश्च रक्ताक्षाः कृष्णविग्रहाः । भूतत्रासन विद्याश्च ते योज्या बलिसाधने ॥

(र.र.स. 7/31)

बलिष्ठ, सत्य बोलने वाला, रक्त नेत्र का तथा कृष्ण शरीर पुरुष को इस हेतु रखते हैं ।

4. रसायन कर्म हेतु–

निर्लोभाः सत्यवक्तारो देव ब्राह्मण पूजकाः । यमिनः पथ्यभोक्ताश्चे योजनीया रसायने ॥

(र.र.स. 7/32)

निर्लोभी, सत्यवान, देव तथा ब्राह्मण की पूजा करनेवाला तथा पथ्य आहार करने वाले को रसायन कर्म हेतु नियुक्त करना चाहिए ।

5. धातुवाद हेतु–

धनवन्तो वदान्याश्च सर्वोवस्कर संयुताः । गुरुवाक्यरता नित्यं धातुवादेषुते शुभाः ॥

(र.र.स. 7/33)

जो धनी हो, उदारचित्त, सम्पत्र तथा गुरु का कहा मानने वाला हो उसे इस कार्य हेतु रखना चाहिए ।

6. भेषज आहरण हेतु–

तत्तदौषधनामज्ञाः शुचयो वञ्चनोज्झिता । नानाविषयभाषाज्ञास्ते मता भेषजाहृतौ ॥

(र.र.स. 7/34)

जो प्रत्येक औषधियों को जानता है शुद्ध आचार विचार वाला हो विभिन्न भाषाओं को जानता है, ऐसे व्यक्ति को औषधि को आहरण हेतु रखना चाहिए ।

रसमण्डप

रसशाला के समीप ही रसमण्डप का निर्माण करना चाहिए । रस मण्डप में ही रस लिङ्ग की स्थापना करके उसकी पूजा तथा शिव जी एवं पार्वती जी की पूजा अघोर मन्त्र तथा रसांकुशी विद्या द्वारा करते हैं । इस रस मण्डप में ही विभिन्न प्रकार के रस सिद्धि हेतु द्रव्यों का संग्रह करते हैं ।

तत्समीपे समे दीप्ते कर्तव्यं रसमण्डपम् । अतिगुप्तं सुविस्तीर्णं कपाटार्गलशोभितम् ॥
ध्वजच्छत्रवितानाढ्यं पुष्पमालाविलम्बितम् । भेरीकाहलघण्टादि शृङ्गीनादविनादितम् ॥

(र.र.स. 6/14-15)

उस रसशाला के समीप समतल और प्रकाशवाले स्थान पर रसमण्डप का निर्माण करते हैं । रस मण्डप को गुप्त (सुरक्षित), अत्यन्त विस्तार वाला तथा दरवाजे एवं अरगला युक्त ध्वज, छत्र, घण्टे, नाद आदि से युक्त होना चाहिए । इस रस मण्डप के समीप समतल जमीन पर मजबूत तथा बीच में वेदिका को बनाना चाहिए ।

भूः समा तत्र कर्तव्या सुदृढा दर्पणोपमा । तन्मध्ये वेदिका रम्या कर्तव्या लक्षणान्विता ॥

(र.र.स. 6/16)

रसलिङ्ग निर्माण तथा स्थापना

निष्कत्रयं हेमपत्रं रसेन्द्रं नवनिष्ककम् । अम्लेन मर्दयेद्यामं तेन लिङ्गन्तु कारयेत् ॥
दोलायन्त्रे सारनाले जम्बीरस्थं दिनं पचेत् । तल्लिङ्गं पूजयेत्तत्र सुशुभैरुपचारकैः ॥

(र.र.स. 6/17-18)

स्वर्णपत्र 3 निष्क तथा पारद 9 निष्क लेकर उसे एक याम अम्ल द्रव की सहायता से मर्दन करते हैं । तत् पश्चात् एक दिन दोलायन्त्र में स्वेदन कर उस रसलिङ्ग की पूजा करते हैं । रसलिङ्ग के अतिरिक्त भगवान शिव तथा माँ पार्वती की भी मूर्ति स्थापित कर उनकी पूजा करते हैं । रसमण्डप में कालिनी स्त्री तथा शिष्य भी मौजूद रहते हैं ।

Scanned with OKEN Scanner

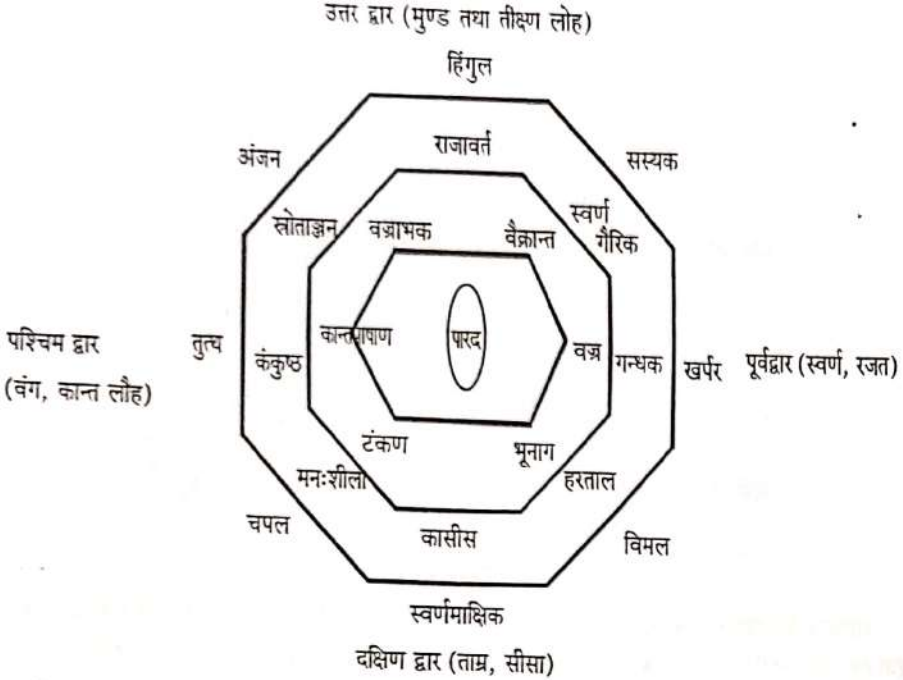

रसमण्डप में उपयोगी उपकरण– रसमण्डप में निम्न उपयोगी द्रव्यों का संग्रह करना चाहिए ।

1. उपकरण– कोष्ठी, मूषा, बङ्कनाल, धौकनी, दण्डिका, शिला, खल्व यन्त्र समस्त प्रकार के तुलायें, मिट्टी, लकड़ी, ताम्र के बने पात्र, अनेक प्रकार के यन्त्र ।
2. विविध द्रव्य– विड, काञ्जी, क्षार, पंच मृत्तिका, लवण, कोयला, अरण्य, विभिन्न वर्गों की औषधियाँ, रञ्जक वर्ग की औषधि, स्नेह वर्ग की औषधियों आदि का संग्रह करना चाहिए ।

उपरोक्त नानाविध पदार्थों की स्थापना वेदी के द्वारों के बाहर की ओर करके इनकी पूजा "मूलमन्त्र" के उच्चारण करके रखते हैं । इसी मूलमन्त्र के द्वारा द्वार के बाहर भैरव की स्थापना करके उसकी पूजा करते हैं । उसके बाद समस्त रससिद्धों के नाम स्मरण करते हैं ।

भेषजागार

औषधियाँ सूखी (Raw drug) तथा निर्मित दोनों प्रकार की होती है। इन औषधियों को एकत्र कर या निर्मित कर उन्हे अच्छी प्रकार संरक्षित कर जिस स्थान पर रखा जाता है उसे भेषजागार कहते हैं। इस भेषजागार का निर्माण इस प्रकार करना चाहिए कि जिससे इन पर ऋतुओं, हवा, नमी (Moisture) आदि का दुःप्रभाव न पड़े। आचार्य सुश्रुत ने भेषजागार तथा औषधियों को रखने हेतु साधनों का निम्नरूप में वर्णन किया है—

प्लोतमृद्भाण्डफलकशंकुविन्यस्त भेषजम् । प्रशस्तायां दिशि शुचौ भेषजागारमिष्यते ॥
(सु.सू. 36/17)

अर्थात प्लोत (cloth) मृदभाण्ड (earthen pot) फलक (wooden material) शंकु (खूँटी) पर औषधियों को रखना चाहिए तथा प्रशस्त दिशा में भेषजागार (pharmacy) का निर्माण करना चाहिए।

औषधियों को रखने के लिए कच्ची औषधि भण्डार तथा निर्मित औषधि भण्डार बनाना चाहिए। कच्ची औषधि भण्डार में निम्नलिखित भाग होने चाहिए–

1. जाङ्गम द्रव्य संग्रह (Store for drug of animal origin)
2. वानस्पतिक द्रव्य संग्रह (Store for drug of herbal origin)
3. पार्थिव द्रव्य संग्रह (Store for drug of metal and mineral origin)

इसके अतिरिक्त Preservative, permitted colors आदि को रखने के लिए एक अलग स्टोर तथा packaging materials को रखने की अलग से व्यवस्था करनी चाहिए जिससे किसी प्रकार का आपस में मिश्रण न हो सके।

निर्मित औषधि भण्डार (Finished drug store) में औषधियों को कल्पना (dosage form for e.g. वटी, आसव/अरिष्ट, अवलेह आदि) के अनुसार रख सकते हैं। आसानी के लिए औषधि जिस भी पात्र में रखी जाय उस पर उसका नाम लिख देना चाहिए। कच्ची औषधि संग्रह से पूर्व उसको भलीभाँति साफ कर पुनः सुखाकर तब रखना चाहिए तथा तीन चार माह पश्चात उसको निकाल कर पुनः धूप में सुखाकर रखना चाहिए। औषधि भण्डार में नई औषधि आने से पूर्व ही पुरानी औषधि को प्रयोग कर लेना चाहिए तथा यह जरूर सुनिश्चित करना चाहिए कि जो औषधि पहले आयी हो उसका उपयोग पहले हो तत पश्चात जो औषधि बाद में आयी हो उसका प्रयोग हो। जिस द्रव्य में moisture लगने का भय हो जैसे–चीनी, लवण आदि उनको good quality plastic में रखना उचित होता है।

रस रसायन सिद्धान्त

रस– रसशास्त्र में रस शब्द से पारद का ही नहीं बल्कि विभिन्न रसशास्त्रीय द्रव्यों का ग्रहण किया जाता है । रसरत्न समुच्चय में रस से निम्न का ग्रहण करने का उल्लेख किया है–

रसस्य भेदाः– लोहं मृतं कन्दविषं सूतं चेति निगद्यते । (र.र.स. 28/2)

रसशब्द से लोह (स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि धातुयें) कन्द विष यथा वत्सनाभ आदि तथा पारद इनका ग्रहण होता है ।

इस प्रकार उपरोक्त द्रव्यों को एकल रूप में जैसे स्वर्णभस्म, रजत भस्म, रससिन्दूर (पारदभस्म) प्रयोग या इनके विभिन्न योग जैसे आरोग्यवर्द्धनी वटी (रस), आनन्द भैरवरस को सामान्य रूप से रस की संज्ञा दी जाती है । इसके अतिरिक्त रस का प्रयोग किसी विशेष उद्देश्य से न कर बल्कि रोग विशेष की स्थिति में किया जाता है ।

रसायन– रसायन को निम्न रूप में परिभाषित किया गया है–

रसायनं च तत्ज्ञेयं यद् जराव्याधि नाशनम् । (शा.प्र. 4/13)

रसायन उसे कहते हैं जो जराव्याधि को नाश करता है । उपरोक्त वर्णित रस ही रसायन का कार्य करते है जब इनको किसी अन्य द्रव्यों के संयोग से या विविध संस्कार द्वारा Potentiate कर दिया जाता है तो रस ही रसायन का कार्य करने लगते हैं । गन्धक जारण करने के उपरान्त आयुर्वेद प्रकाश में उल्लेख है कि पारद को मारण विधि से मारित करते

Scanned with OKEN Scanner

हैं तथा पथ्य योग से सेवन करने पर समगुण, द्विगुण आदि गन्धक जारित पारद कहे गये फल रोगघ्न आदि होता है। यथा—

ततो मारणविधिना हत्वा मात्रयाऽशितः पथ्ययोगेन समे गन्धे तु रोगघ्न इत्यादि प्रोक्तफलकारी रसो भवति ॥ (आ.प्र. 1/28)

रसायन गुण हेतु निम्न रूप में प्रयोग करना चाहिए—

अथ यदि रसायनगुणेच्छा चेद्गन्धजारणोत्तरं हेमाभ्रसत्त्वादि यथाविभवं गन्धक जारणोत्थिते रसे प्रोक्तविधिना संसाध्य जारयित्वा मारणविधिना हत्वा मात्राया क्षेत्रीकरणपूर्वकं पथ्य योगेने मण्डलावधि षण्मासं वर्षैकं द्विवर्ष त्रिवर्ष वा संसेव्यः। तदा तदुक्तफलमाप्नोति । (आ.प्र. 1/129)

यदि रसायन गुण की इच्छा हो तो गन्धक जारण के पश्चात् उसी पारद में जारण विधि से अभ्रक सत्व आदि बीज का जारण कर पुनः मारण विधि से भली भाँति पारद को मारकर क्षेत्रीकरण पूर्वक मात्रा तथा पथ्य से 40 दिन, 6 मास, 1 वर्ष, 2 वर्ष या 3 वर्ष सेवन करने से जरा व्याधि का नाश करता है।

अथ केवलं रोग हननेच्छा चेत्स्वेदनादि दीपनान्तैः संस्कारै रसं संशोध्य प्रोक्तविधिना गन्धकेन संमूर्च्छय मात्राया पथ्ययोगेने संसेव्यो यावदारोग्यमिति ।

रसयान गुण हेतु या रसायन कर्म से पूर्व क्षेत्रीकरण तथा शरीर शोधन का विधान है क्योंकि बिना क्षेत्रीकरण के रसायन गुण की प्राप्ति नहीं हो सकती है। यथा–

कर्तव्यं क्षेत्रीकरणं सर्वस्मिश्च रसायने। ना क्षेत्रकरणाद्देवि किंचित्कुर्याद्रसायनम् ॥
(आयुर्वेद प्रकाश 1/484)

सम्पूर्ण रसायन कर्म में शरीर शुद्धि अत्यन्त आवश्यक है। बिना शरीर शुद्धि के रसायन का सेवन करना निरर्थक होता है।

स्निग्धं स्विन्न विरक्तं च नीरूजं सिद्धभेषजैः। एतत्क्षेत्रं समासेन रसवीजार्पण क्षमम् ॥
(आ.प्र. 1/489)

अच्छी प्रकार से स्नेहन, स्वेदन और विरेचन कर्म हो जाने पर सिद्धौषधियों द्वारा निरोग मनुष्य का शरीर संक्षेपतः शुद्ध कहलाता है। यहीं रसवीज अर्पण करने के योग्य होता है। क्षेत्रीकरण का सामान्य अर्थ यह है कि शरीर को उस योग्य बनाना जिससे यदि रसायन प्रयोग किया तो वह उसको शरीर में Absorption तथा Assimilation कर सके।

धातु आधारित औषधि निर्मित करने वाले भारतीयों का संक्षिप्त परिचय

1. नागार्जुन— भारतीय साहित्य में आचार्य नागार्जुन का उल्लेख दर्शन, अल्केमी, औषधि तथा तन्त्र विद्या के क्षेत्र में योगदान हेतु मिलता है। आचार्य का उल्लेख तिब्बती तथा चाइनीज साहित्य में भी मिलता है। संस्कृत साहित्य जैसे हर्षचरित, राजतंरगिणी, लंकावर्त, आर्यमंजु श्रीमूलकल्प आदि ग्रन्थों में आचार्य श्री वर्णन प्राप्त होता है। आचार्य नागार्जुन के अतिरिक्त सिद्ध नागार्जुन तथा अन्य नागार्जुन का भी उल्लेख मिलता है।

काल— रत्नावली तथा सुहृरलेखा, जिसके कर्ता नागार्जुन है, के अनुसार उनके संरक्षक राजा सातवाहन थे जिनका

काल दूसरी शती का अन्त माना जाता है। अन्य उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर दूसरी से तीसरी शताब्दी के बीच माना जाता है।

नालन्दा और नागार्जुन— तिब्बती साहित्य के अनुसार नालन्दा का सम्बद्ध सिद्ध नागार्जुन से तथा उस समय नालन्दा के मुख्य मठाचार्य आचार्य सरभ से है तथा इनका काल 8वी सदा माना जाता है।

अन्य उपलब्ध ग्रन्थों तथा प्रमाणों के आधार पर यह भी निष्कर्ष नकलता है कि आचार्य नागार्जुन श्री शैल पर्वत पर रहते थे।

सिद्धि— तिब्बती साहित्य के अनुसार आचार्य नागार्जुन ने नालन्दा में विभिन्न ग्रन्थों का अध्ययन कर ज्ञान प्राप्त किया तथा बाद में श्री प्राणधर की उपाधि से विभूषित हुए। नागार्जुन ने तान्त्रिक विद्या देवी तारा से प्राप्त किया। राजगढ़ से उन्होंने मन्त्र सिद्धि किया। आचार्य नागार्जुन को महामायूरी विद्या कुरू कुल्ला विद्या तथा कीमियागिरि (Alchemy) की सिद्धि प्राप्त थी। उन्होंने अल्केमी विद्या की मदद से नालन्दा मठ के लोगों को बारह साल तक अकाल से रक्षा दिया।
(Nguyen Thien Hau, The legend of Nagarjuna JETIR, July 2020, Vol. 7 1571-1574)

रसेन्द्र मंगल

Content – प्रथम अध्याय में वर्णित श्लोक के आधार पर यह ग्रन्थ आठ अध्यायं में पूर्ण है किन्तु इस समय इसके चार अध्याय ही प्राप्य है।

रसोपरसलोहानां रसादौ साधनं ततः। वक्ष्यादौ मारणं वक्ष्ये द्रावणं सर्वधातुषु ॥
तृतीये रसबन्धं च चतुर्थे गुटिकाविधिः। वातादि सर्वरोगेषु चिकित्सा पंचधामता ॥
चित्र च गन्धयुक्तत्यादिरंजनं षण्ठके स्मृतम्। सप्तमं विषनेत्रं च त्वष्टमं गणसंख्यकम् ॥
अष्टाध्याय इति प्रोक्तं शास्त्रेऽस्मिन् रसमङ्गले। तत्रादौ मङ्गलं कृत्वा मङ्गलं मङ्गलायते ॥
(र.म. 1/3-6)

प्रथम अध्याय– रस उपरस लोह की मारण विधि, पारद संस्कार आदि वर्णन।

द्वितीय अध्याय– वज्र, वैकान्त, सर्वधातु सत्वपातन, द्रावण विधि।

तृतीय अध्याय– जारणचारण विड तथा रसबन्ध, विभिन्न रसयोग।

चतुर्थ अध्याय– गुटिका विधि, पारद बन्ध एवं विभिन्न योग।

विमर्श– नागार्जुन नाम के अन्य आचार्य को बौद्धधर्म के महायान शाखा का प्रवर्तक अनुयायी माना जाता है। सम्भवतः यही "कच्छपुट" के रचयिता भी है एवं प्रज्ञापारमित सिद्धान्त के मानने वाले की है। कच्छपुट रत्नघोष तथा वट याक्षिणी के संवाद के रूप में वर्णित है जो कि नागार्जुन की उपस्थिति में हैं। इसी ग्रन्थ में नागार्जुन तथा शालवाहन का भी संवाद है। ये सारा संवाद श्री शैल पर्वत (हैदराबाद के पास) पर सम्पूर्ण हुआ है। एक अन्य नागार्जुन को सुश्रुत संहिता का प्रतिसंस्कर्ता माना जाता है।

2. श्रीमद्गोविन्द भगवत पादाचार्य

आप किरात देश के हैह्य कुल में जन्मे चनद्रवंशी राज श्री मदनरथ, जो कि स्वयं एक सिद्ध रसाचार्य थे इनसे प्राप्त

Scanned with OKEN Scanner

कर रसहृदय तन्त्र नामक ग्रन्थ की रचना क्रिया तन्त्र के नाम से सर्वप्रथम इसी ग्रन्थ का उल्लेख मिलता है। मुख्यरूप से धातुवाद पर आधारित ग्रन्थ है । इनका काल 8वीं सदी माना जाता है लेकिन कुछ विद्वान 11वीं सदी मानते हैं।

तस्मात्किरातनृपतेर्बहुमानमवाप्य रसकर्मनिरतः । रसहृदयाख्यं तन्त्रं विरचितवान् भिक्षुगोविन्दः ॥
(र.ह.त. 19/80)

काल– इस ग्रन्थ के काल में मतभिन्नता है । इस ग्रन्थ का काल 8वीं सदी माना जाता है । लेकिन कुछ विद्वान इसका काल 11वीं सदी मानते हैं ।

रसहृदय तन्त्र– इस तन्त्र में 19 अवबोध है किन्तु आचार्य पी.सी.रे. 21 अवबोध मानते हैं । अध्याय के नाम को अवबोध से कहा गया है । इस ग्रन्थ में पारद संस्कार का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है विभिन्न अध्यायों की विषय वस्तु निम्न है ।

प्रथम अवबोध	– पारद प्रशंसा	द्वितीय अवबोध	– पारद अष्ट संस्कार वर्णन
तृतीय अवबोध	– गगन ग्रास	चतुर्थ अवबोध	– अभ्रक सत्व चारणा
पंचम अवबोध	– गर्भ एवं वाह्य द्रुति	षष्ठ अवबोध	– बीजादि प्रमाण जारणायुक्ति
सप्तम अवबोध	– विडविधान	अष्टम अवबोध	– रसरुद्धाग
नवम अवबोध	– बीज विधान	दशम अवबोध	– सत्वनिर्गयमभिधा
एकादश अवबोध	– बीज निर्वाहण	द्वादश अवबोध	– द्वन्द्वमेलन
त्रयोदश अवबोध	– संकरबीजाधिकार	चतुर्दश अवबोध	– संकरबीज जारण
पञ्चदश अवबोध	– द्रुति प्रकरण	षोडश अवबोध	– सारण
सप्तदश अवबोध	– क्रामणम्	अष्टादश अवबोध	– वेधविधान
एकोनविंशति अवबोध	– भक्षण विधान		

3. भैखानन्द योगी

यह भी रसशास्त्र का अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ है । इनका विवरण प्राप्त नहीं होती है। लेकिन इन्हें शैव सम्प्रदाय का माना जाता है। विद्वानों के अनुसार इनका काल 10वी सदी तथा सर पी. सी. राय इनका काल 600 से 1100 ई मानते हैं। इन्होंने रसार्णव नामक ग्रन्थ की रचना की है जो कि धातुवाद का एक मुख्य ग्रन्थ है।

रसार्णव– इस ग्रन्थ में अध्यायों को पटल से कहा गया है । इस प्रकार इसमें कुल अट्ठारह पटल (अध्याय) है जो निम्नरूप में वर्णित है–

प्रथम पटल	–	जीवन मुक्ति, पारद महात्मय
द्वितीय पटल	–	गुरू, शिष्य आदि वर्णन
तृतीय पटल	–	रसकर्म मन्त्रन्यासक प्रश्न
चतुर्थ पटल	–	यन्त्र, मूषा, कोष्ठी वर्णन
पंचम पटल	–	विविध रसों कर्म उपयोगी औषधि
षष्ठ पटल	–	महारस संस्कार
सप्तम् पटल	–	महारस, उपरस

अष्टम् पटल	–	राग संख्या एवं बीज निरुपण
नवम् पटल	–	विड निर्माण
दशम पटल	–	रस विषयक प्रश्न
एकादश पटल	–	पारद चारण, जारण बन्ध आदि का वर्णन
द्वादश पटल	–	मूर्च्छन तथा दिव्यौषधि वर्णन
त्रयोदश पटल	–	बद्ध जारण
चतुर्दश पटल	–	वज्रबन्धन
पंचदश पटल	–	बीज रंजन तथा बन्ध
षोडश पटल	–	बद्धपारद द्रावण
सप्तदश पटल	–	सारण एवं क्रामण
अष्टादश पटल	–	देहवेध वर्णन

विभिन्न धातुओं की आग में रखने पर उत्पन्न ज्वाला का वर्णन इस ग्रन्थ में प्राप्त होता है ।

4. गुरु गोरक्षनाथ

गुरू गोरक्षनाथ जो कि नाथ सम्प्रदाय के 84 सिद्धों में गिने जाते हैं । कुछ विद्वानों के अनुसार इसका काल 12 वीं सदी माना जाता है । इनके द्वारा गोरक्ष संहिता की रचना की गई है जिसका विवरण निम्न है।

विषय वस्तु– यह ग्रन्थ दो भागों में पूर्ण हैं– 1. कादि प्रकरण 2. भूति प्रकरण

इस संहिता के भी अध्याय पटल के रूप में वर्णित हैं । कादि प्रकरण में वर्णित 27 पटलों (अध्यायों) में मन्त्र, तन्त्र से सम्बन्धित प्रकरण का वर्णन किया गया है । यह प्रकरण देवी तथा भैरव संवाद के रूप में हैं । भूति प्रकरण नव पटल में वर्णित (उपलब्ध) है । जो कि शक्ति तथा श्री कण्ठ के संवाद के रूप में हैं । इसमें रस रसायन तथा पारद संस्कार सम्बन्धी अन्य प्रक्रियाओं का वर्णन है । जो निम्न है–

प्रथम पटल	– रसकल्पफल वर्णन	द्वितीय पटल	– द्रव्य संग्रहण
तृतीय पटल	– धातु शुद्धि	चतुर्थ पटल	– जीवोत्सर्ग विधान
पंचम पटल	– बीज सम्बन्ध	षष्ठ पटल	– रसोपरस कर्म
सप्तम पटल	– दिव्यौषधिलक्षण कर्म	अष्टम पटल	– अयस्कान्ति आदि वर्णन
नवम् पटल	– रसायन विधि, रसाजीर्ण लक्षण, रस सिद्धि प्रकार		

5. आचार्य सोमदेव

आप भैरवपुर के अधिपति तथा महावीर के वंशज थे। परवर्ती रसशास्त्र के आचार्यों ने इनका उद्धरण किया है। आपने रसेन्द्र चूड़ामणि नामक ग्रन्थ की रचना की है।

यह ग्रन्थ आचार्य सोमदेव द्वारा विरचित है । रसरत्न समुच्चयकार ने परिभाषा प्रकरण आदि में इनके नाम का उद्धरण किया है । इस ग्रन्थ के द्वितीय अध्याय के वर्णन में यह ज्ञात होता है कि आचार्य सोमदेव भैरवपुर के अधिपति तथा महावीर के वंशज थे ।

रसेन्द्र चूड़ामणि– यह ग्रन्थ 16 अध्याय में पूर्ण है । इन अध्यायों में रसशाला तथा इसमें संग्रहणीय वस्तुयें,

Scanned with OKEN Scanner

यन्त्र, मूषा, पुट, परिभाषा, पारद के अट्ठारह संस्कार, महारस, उपरस, रत्न, धातु तथा इनके गुणों का वर्णन किया गया है। 15वें अध्याय में नन्दी, गोविन्दाचार्य, भास्कर, धातुकी आदि आचार्यों को भी उद्धृत किया है।

नन्दीनागार्जुनश्चैव ब्रह्मज्योतिर्मुनीश्वरः। वेत्ति श्री सोमदेवश्च नाऽपरः पृथ्वीतले॥ (15/54)

6. यशोधर भट्ट

आप सौराष्ट्र के रहने वाले थे तथा गौड ब्राह्मण श्री पद्मनाभ के पुत्र थे। इनका काल 13वीं सदी माना जाता है। आपके द्वारा रचित रस प्रकाश सुधाकर ग्रन्थ में विभिन्न प्रकार की रसौषधियों का चिकित्सार्थ प्रयोग किया गया है।

रस प्रकाश सुधाकर– इसमें 13 अध्याय है। जिसमें पारद के 18 संस्कार रस भस्म, रसबन्ध, धातु, महारस, उपरस, रत्न, यन्त्र, मूषा, पुट आदि का वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ में अकरकरा, अहिफेन आदि द्रव्यों का भी प्रयोग किया गया है।

7. रस वाग्भट्ट

आप सिंह गुप्त के पुत्र थे। आपने विभिन्न रोगों की चिकित्सा में रसौषधियों का प्रयोग किया है। इनके द्वारा रचित रसरत्न समुच्चय नामक ग्रन्थ अत्यन्त लोकप्रिय है तथा इसी का प्रायः उद्धरण किया जाता है।

रसरत्न समुच्चय–इस ग्रन्थ का काल 13वीं सदी है। यह ग्रन्थ दो खण्ड तथा 30 अध्याय में पूर्ण है–

1. प्रथम भाग– 1-11 अध्याय 2. द्वितीय भाग– 12-30 अध्याय

प्रथम भाग का वर्णन निम्न है–

प्रथम अध्याय	– हिमालय वर्णन, रसवर्णन	द्वितीय अध्याय	– महारस वर्णन
तृतीय अध्याय	– उपरस, साधारण रस	चतुर्थ अध्याय	– रत्न वर्णन
पंचम अध्याय	– धातु वर्णन	षष्ठ अध्याय	– रसशाला आदि
सप्तम अध्याय	– रसशाला निर्माण	अष्टम अध्याय	– परिभाषा
नवम अध्याय	– यन्त्र	दशम अध्याय	– मूषा, पुट, औषधि वर्ग
एकादश अध्याय	– मान परिभाषा, पारद संस्कार एवं रसबन्ध		

उत्तरखण्ड के 12-30 अध्याय में विभिन्न रोगों की चिकित्सा, रसायन वाजीकरण, विषकल्प, लोह कल्प तथा रसकल्प का वर्णन है।

8. नित्यनाथ

इनका काल 13वी सदी तथा कुछ विद्वान 15वी सदी मानते हैं। इन्होंने रसरत्नाकर नामक ग्रन्थ लिखी जो कि रस शास्त्रीय ग्रन्थों में एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

रसरत्नाकर– यह ग्रन्थ 5 खण्ड में पूर्ण है–

1. रसखण्ड 2. रसेन्द्र खण्ड 3. वादिखण्ड 4. रसायन खण्ड 5. मन्त्र खण्ड

यथा, पंचखण्डमिदं शास्त्रं साधकानां हितं प्रियम्। रसखण्डे तु वैद्यानां व्याधितानां रसेन्द्रके॥
वादिनां वाद खण्डे च वृद्धानां च रसायने। मन्त्रिणां मंत्रखण्डे च रससिद्धि प्रजायते॥

इसके अध्याय का नाम उपदेश है।

9. मन्थान भैरव

इन्होंने आनन्द कन्द नामक ग्रन्थ की रचना की है तथा इनका काल 16वीं सदी के आसपास माना जाता है। इस ग्रन्थ में धातुवाद तथा रसौषधियाँ दोनों का वर्णन पाया जाता है।

आनन्दकन्द– इस ग्रन्थ के अध्याय को उल्लासनाम से वर्णित किया है। यह ग्रन्थ दो भागों में परिपूर्ण है–

1. अमृतीकरण विश्रान्ति– 26 उल्लास हैं।

2. क्रियाकरण विश्रान्ति– 10 उल्लास हैं।

यह ग्रन्थ भैरव तथा भैरवी के संवाद रूप में वर्णित है। जिससे इसके निर्माता को भैरव या मन्थान भैरव माना जाता है। अमृतीकरण विश्रान्ति के 12वें उल्लास में श्री शैलपर्वत (हैदराबाद के पास) का विशेष वर्णन है तथा इस स्थान को सिद्धियों का स्थान कहा गया है जिससे यह प्रतीत होता है कि इसे वही कहीं रची गयी होगी। अमृतीकरण विश्रान्ति में रसोत्पत्ति, पारद संस्कार, रसायन, रत्न, गन्धक, योग रसायन, सदाचार तथा ऋतुचर्या का एवं क्रियाकरण विश्रान्ति में उपरस, स्वर्ण, रजत, ताम्र नागवंग एवं 64 दिव्यौषधि एवं 84 महौषधि वर्णन है।

10. आचार्य विन्दु

इनका काल 13वी सदी माना जाता है। आप महाराष्ट्र के निवासी थे। आपने रस पद्धति नामक ग्रन्थ की रचना की है। यह ग्रन्थ "शार्दूल विक्रीडित" द्वारा एक ही छन्द में पूर्ण है। इसमें कुल 231 श्लोक है जिसमें पारद संस्कार, महारस उपरस तथा रत्न आदि का वर्णन किया गया है।

11. आचार्य शार्ङ्गधर

आप श्री दामोदर जी के पुत्र थे तथा हमीरपुर (कुरुक्षेत्र प्रान्त के उत्तर में) के रहने वाले थे। आपका काल 13वीं सदी माना जाता है। आपके द्वारा रचित शार्ङ्गधर संहिता के माध्यम खण्ड के रस योग नामक अध्याय में विभिन्न प्रकार के रसयोगों का वर्णन प्राप्त होता है।

शार्ङ्गधर संहिता—आचार्य शार्ङ्गधर द्वारा लिखित यह प्रधान रूप से भैषज्य कल्पना का ग्रन्थ है। मध्यम खण्ड के ग्यारहवें तथा बारहवें अध्याय में रसशास्त्र के द्रव्यों तथा विभिन्न योगों का वर्ण किया गया है। इस ग्रन्थ का काल 13वीं सदी माना जाता है। ग्यारहवें अध्याय का नाम धातु शुद्धि है जिसमें सात धातु (स्वर्ग, रजत, पित्तल, ताम्र, नाग, वङ्ग एवं तीक्ष्ण लौह) का शोधन, मारण तथा उपधातु **(माक्षिकं तुत्थकाभ्रे च नीलाञ्जनशिलालकाः। रसकश्चेति विज्ञेया एते सप्तोपधातवः॥)** अर्थात् माक्षिक, तुत्थ, अभ्रक, नीलाञ्जन, मनःशिला, हरताल तथा रसक ये सात उपधातु हैं।) का शोधन, मारण तथा सत्वपातन रत्नों का शोधन तथा मारण, शिलाजीत का शोधन तथा मण्डूर का शोधन वर्णित है। बारहवें अध्याय में पारद प्रशंसा, पर्याय तथा ग्रहों के अनुसार 9 धातुयें, रसशोधन, गन्धक शोधन, दरद शोधन, दरद से पारद निष्कासन, मुख करण, गन्धक जारण, पारद मारण एवं विभिन्न रसयोगों का वर्णन किया गया है।

Scanned with OKEN Scanner

12. अनन्तदेव सूरि

आचार्य श्री के जन्म स्थान, समय (सम्भवतः 15वीं शती), कुल, पिता आदि का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। इनके द्वारा रचित रसचिन्तामणि नामक ग्रन्थ में अनेक रस योगों का वर्णन प्राप्त होता है।

रसचिन्तामणि– यह ग्रन्थ ग्यारह स्तबक (अध्याय को स्तबक कहा है) में पूर्ण है । जो निम्न है–

प्रथम स्तबक	–	रसभस्म रसगुटिका, रसग्रास विधि वर्णन
द्वितीय स्तबक	–	विभिन्न रस योग वर्णन
तृतीय स्तबक	–	विभिन्न कुष्ठनाशक योग वर्णन
चतुर्थ स्तबक	–	विभिन्न रसयोग वर्णन
पंचम स्तबक	–	पारद संस्कार, हरताल, लोह आदि सत्व एवं भस्म विधि
षष्ठ स्तबक	–	स्वर्ण एवं रजत निर्माण प्रक्रिया वर्णन
सप्तम स्तबक	–	विभिन्न रस योग
अष्टम स्तबक	–	विभिन्न रस योग
नवम् स्तबक	–	विभिन्न रस योग
दशम स्तबक	–	विभिन्न रस योग
एकादश स्तबक	–	विभिन्न रस योग

13. ढुण्ढुकनाथ

आप कालनाथ के शिष्य थे। इनका काल 15वीं शताब्दी का प्रारम्भ माना जाता है। आपके द्वारा रचित रसेन्द्र चिन्तामणि ग्रन्थ में पारद संस्कार के साथ ही विभिन्न रस योगों का वर्णन हैं।

रसेन्द्र चिन्तामणि– यह ग्रन्थ 9 अध्याय में पूर्ण है । प्रथम अध्याय में रस प्रशंसा, द्वितीय में मूर्च्छा एवं जारणा, तृतीय में पारद संस्कार, चतुर्थ अध्याय में अभ्रक शोधन, मारण, सत्व, द्रुति, पंचम अध्याय में गन्धक शोधन, तैल, षष्ठ अध्याय में धातुओं का सप्तम में विषों का, रत्नों का, अष्टम में विभिन्न योग एवं नवम अध्याय में विभिन्न योगों का वर्णन है ।

14. शालिनाथ

श्री वैद्यनाथ तनयः सुनयः सुशीलः श्री शालिनाथ इति विश्रुत नामधयेम्।
तेनावलोक्य विधिवद् विविध प्रबन्धानारम्यते सुकृतिनां रसमञ्जरीयम्॥

आप श्री वैद्यनाथ जी के पुत्र थे तथा इनका काल 15वी सदी माना जाता है। आपके द्वारा रचित रसमञ्जरी नामक ग्रन्थ में अनेक रसायन तथा रस योगों का वर्णन है।

रसमञ्जरी– यह ग्रन्थ 10 अध्याय में परिपूर्ण है । जिसमें पारद शोधन मारण, जारण, मूर्च्छन, उपरस वर्णन, विष के लक्षण भेद, धातु शोधन मारण, रसौषधियों के योग, रसायन, नेत्ररोगों की चिकित्सा शुक्रस्तम्भक योग तथा अरिष्ट विज्ञान का वर्णन है ।

15. गोपालकृष्ण भट्ट

आपका काल 16वीं सदी माना जाता है। आपके द्वारा रचित ग्रन्थ में पारद संस्कार के साथ रसायन तथा वाजीकरण योगों का वर्णन है।

रसेन्द्रसार संग्रह– यह ग्रन्थ पाँच अध्याय में पूर्ण है । प्रथम अध्याय में पारद उसके अष्ट संस्कार, रस भस्म, विविध वर्ग, उपरस, धातु तथा विविध द्रव्यों का शोधन द्वितीय अध्याय में विभिन्न रोगों की चिकित्सा तृतीय अध्याय में बाल रोग चिकित्सा, चतुर्थ अध्याय में विष रोग चिकित्सा तथा पंचम अध्याय में रसायन एवं वाजीकरण का वर्णन है ।

16. आचार्य माधव उपाध्याय

आप सौराष्ट्र निवासी सारस्वत ब्राह्मण तथा एक श्रेष्ठ रसाचार्य थे। आपका काल 16वीं शताब्दी माना जाता है। आपके द्वारा रचित ग्रन्थ आयुर्वेद प्रकाश एक लोकप्रिय ग्रन्थ है। जिससे पारद संस्कार के साथ प्रथम अध्याय में कई रस योगों का वर्णन किया गया है। ग्रन्थकार के अनुसार जो कार्य गुरुजनों द्वारा सीख कर उनके समक्ष क्रिया रूप में सफल सिद्ध हुए है केवल उन्हीं का वर्णन किया जायेगा । यथा–

अश्रौषं बहुविदुषां मुखदपश्यं शास्त्रेषु स्थितं न तल्लिखामि।
यत्कर्म व्यरचयमग्रतो गुरूणां प्रौढानां तदिह वदामि बीतशङ्कः॥

आयुर्वेद प्रकाश– यह ग्रन्थ 6 अध्यायों में परिपूर्ण है । प्रथम अध्याय में पारद प्रकरण (विभिन्न ग्रन्थों के मतानुसार) का विस्तृत वर्णन, द्वितीय अध्याय में उपरस, तृतीय अध्याय में धातु, चतुर्थ अध्याय में स्वर्णमाक्षिक, विमल, तुत्थ, पित्तल, चपल आदि का पंचम अध्याय में रत्नों का तथा छठे अध्याय में विषों का वर्णन किया गया है ।

17. सदानन्द शर्मा

आपका काल 20वीं सदीं का आरम्भ माना जाता है। आप धिल्डियाल ब्राह्मण थे। आपके द्वारा रचित ग्रन्थ तरङ्गणि में रसपुष्प, रसकर्पूर आदि रस योग औषधियाँ के साथ ही विभिन्न प्रकार के मलहरों का वर्णन किया गया है। जिसमें गन्धक, मलहर, सिन्दूराद्य मलहर, टंकणामृत मलहर आदि है।

रस तरङ्गिणी– यह ग्रन्थ 24 तरङ्ग (अध्याय) में परिपूर्ण है । जो कि निम्न है–

प्रथम तरङ्ग	–	रसशाला, रसाचार्यो के नाम गुरु एवं शिष्य आदि वर्णन
द्वितीय तरङ्ग	–	परिभाषा प्रकरण
तृतीय तरङ्ग	–	मूषा एवं पुट
चतुर्थ तरङ्ग	–	यन्त्र
पंचम तरङ्ग	–	पारद, शोधन, अष्ट संस्कार क्षेत्रीकरण आदि
षष्ठम् तरङ्ग	–	मूर्च्छना, रसपुष्प, कज्जली, पर्पटी रस सिन्दूर मकरध्वज आदि
सप्तम् तरङ्ग	–	पारद, मारण क्षेत्रीकरण आदि
अष्टम् तरङ्ग	–	गन्धक
नवम तरङ्ग	–	हिंगुल
दशम तरङ्ग	–	अभ्रक

Scanned with OKEN Scanner

एकादश तरङ्ग	–	हरताल, मनःशिला, शंखविष, फिटकरी गोदन्ती चूना, खाड़िया मिट्टी आदि
द्वादश तरङ्ग	–	शंख शुक्ति, वराटिका, शृंग समुद्रफेन आदि
त्रयोदश तरङ्ग	–	यवक्षार, सज्जी क्षार, टंकण
चतुर्दश	–	नवसादर, सोरक, लवण आदि
पञ्चदश	–	स्वर्ण धातु
षोडश	–	रजत
सप्तदश	–	ताम्र, भूनाग
अष्टदश	–	वङ्ग, स्वर्ण वङ्ग
एकोनविंश	–	सीसा, यशद
विंश	–	लोह तथा इसके भेदों का वर्णन
एकविंश	–	स्वर्ण एवं रजत माक्षिक, तुत्थ सिन्दूर, मृददाहशृंग, खर्पर आदि
द्वाविंश	–	पित्तल, कांस्य, शिलाजीत, गेरिक आदि ।
त्रयोविंश	–	रत्न वर्णन
चतुर्विंश	–	विष एवं उपविष वर्णन

इन ग्रन्थ में विभिन्न आधुनिक प्रकार के द्राव जैसे गन्धक द्राव (H_2SO_4), शंखद्राव, सोरकद्राव (HNO_3), लवण द्राव, निम्बुक अम्ल, तथा विभिन्न प्रकार के द्रव यथा नवसादर वाष्प द्रव, सोरकाम्लीय रजत द्रव, सजलारनालीयक सीसा द्रव, गन्धकाम्लय यशद द्रव आदि, विभिन्न प्रकार के मलहर, परिस्रुत जल का उल्लेख किया गया है ।

18. रसोपनिषद

रस (पारद) से सम्बन्धित यह एक दुर्लभ ग्रन्थ है । इसके लेखक का नाम तथा काल का पता नहीं चलता है । यह परमेश्वर तथा पार्वती के संवाद रूप में वर्णित है । उपलब्ध रसोपनिषद में 18 अध्याय है । अध्याय के अन्त में "इति महोदधौ रसोपनिषदि" लिखा मिलता है जिससे इसे उपनिषद कहा गया है । 18 अध्याय निम्न है— 1. करण बन्ध, 2. रसवृद्धि करण, 3. स्पर्शवृद्धि करण, 4. बीज विधान, 5. वेधपट्ट, 6. लोहकरण, 7. रञ्जनकल्क विधि, 8. गोलक विधान, 9. औषधिबन्ध, 10. नागसंक्रमण, 11. तारोत्कर्षविधान, 12. शुल्वारकालिका छेद, 13. वङ्गस्तम्भशोधन, 14. शोधन विधि, 15. अभ्रकद्रावण, 16. द्रावण, 17. गुह्यबन्ध, 18. रसकरणबन्धसन्यास विधान

19. पण्डित भूदेव मुखर्जी

आपके द्वारा रचित ग्रन्थ रसजलनिधि के विभिन्न Volume में रस द्रव्यों के साथ-साथ चिकित्सा का वर्णन किया गया है।

रसजलनिधि—इस ग्रन्थ की रचना पण्डित भूदेव मुखर्जी ने 1926 ई. से 1938 ई. के मध्य किया है । यह ग्रन्थ पाँच volume में प्रकाशित है जिसका विवरण निम्न है–

Volume I	–	इसमें सात अध्याय है जिसमें रसशाला, तन्त्र आदि का वर्णन है ।
Volume II	–	इसमें चार अध्याय है जिनमें अभ्रक, गंधक, स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि वर्णित हैं ।
Volume III	–	11 अध्याय जिसमें लोह, पीतल आदि वर्णित है ।
Volume IV	–	6 अध्याय आहार, औषधि प्रयोग विधि आदि वर्णन है ।
Volume V	–	विभिन्न रोगों जैसे रक्तपित, राजयक्ष्मा, तमकश्वास आदि वर्णित है ।

इस ग्रन्थ में अपक्व धातु आदि सेवन जन्य दोष का प्रतिकार तथा उपविषों द्वारा उत्पन्न विकार शान्ति उपाय का वर्णन है ।

20. आचार्य यादव जी त्रिकम जी

आप सौराष्ट्र के रहने वाले थे। आपके द्वारा रचित रसामृत ग्रन्थ में रस द्रव्यों का वर्णन आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार किया गया है।

रसामृत—आचार्य यादव जी त्रिकम जी द्वारा रचित इस ग्रन्थ में नव अध्याय तथा नव परिशिष्ट हैं। अध्यायों के नाम रस विज्ञानीयम, गन्धक विज्ञानीयम, लोह विज्ञानीयम, मल्ल विज्ञानीयम, सुधा विज्ञानीयम, सिकता विज्ञानीयम्, लवणक्षार विज्ञानीयम, रत्न विज्ञानीयम तथा रसयोग विज्ञानीयम है । जिसमें रसशास्त्र के विभिन्न द्रव्यों का वर्णन किया गया है ।

आयुर्वेदिक औषधियों के क्षेत्र में आधुनिक विकास (Recent Development in Ayurvedic Pharmaceuticals)

स्वतन्त्रता के पश्चात या ऐसा कहा जा सकता है कि सन 1964 में आयुर्वेदिक औषधियों को The Drugs and Cosmetics Act 1940 के अन्तर्गत लाने के पश्चात् आयुर्वेदिक औषधियों की quality, purity तथा अन्य parameters जैसे shelf life, safety, labelling, packaging आदि पर विशेष रूप से फोकस किया गया तथा इन parameters के लिए आवश्यक कदम भारत सरकार द्वारा लिये गये। जिनमें Ayurvedic Pharmacopoeia Committee का गठन एक महत्वपूर्ण क्रम है। इस कमेटी के द्वारा विभिन्न योगों के संग्रह के रूप में Ayurvedic Formulary of India तथा एकल औषधि के quality, purity तथा strength को निश्चित करने की दिशा में Ayurvedic Pharmacopoeia of India के विभिन्न volume का प्रकाशन किया गया। इन औषधियों की गुणवत्ता परीक्षण के लिए Pharmacopoeial Laboratory for Indian Medicine (PLIM) की स्थापना गाजियावाद में किया गया। इसी प्रकार आयुर्वेदिक ज्ञान को सुरक्षित रखने के लिए Traditional Knowledge Digital Liberary (TKDL) तथा Medicinal Plants के प्रसार हेतु National Medicinal Plant Board (NMPB) का गठन किया गया। उपरोक्त सभी आयुर्वेद के उत्थान तथा प्रचार प्रसार एवं जनता में जागरूकता तथा स्वीकारता हेतु कार्य कर रहे हैं।

Ayurvedic Pharmacopoeia Committee (APC)

आयुर्वेद में मुख्यतः दो प्रकार के औषधिय योगों का वर्णन प्राप्त होता है। एक ऐसे योग जिनमें काष्ठ औषधियाँ (herbal ingridients) होती है तथा दूसरी ऐसे योग जो रस औषधियों (herbomineral) से निर्मित होती है। प्राचीन समय में वैद्य औषधियों को स्वयं की देखरेख में निर्मित कर उसे रोगी को उपलब्ध कराता था, जिसके कारण औषधियों की quality, identity तथा purity अच्छी होती थी। लेकिन आज के वैश्विक तथा वाणिज्यिक युग में इन औषधियों की identity, quality तथा purity एक बड़ा issue है। इन्हीं बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने Drugs and Cosmetics Act, 1940 जो कि प्रारम्भ में केवल Allopathic Drugs तक ही सीमित था, में 1964 में आयुर्वेदिक औषधियों को इस एक्ट के अन्तर्गत आना सुनिश्चित किया। प्रारम्भ में यह निम्न बिन्दुओं पर केन्द्रित था—

Scanned with OKEN Scanner

1. औषधि निर्माण hygenic condition में योग्य व्यक्ति के दिशा निर्देश में बनी हो।
2. Raw material जो निर्माण में प्रयुक्त हो रही है वे genuine हो तथा अच्छी प्रकार से पहचान कर प्रयुक्त की गयी हो।
3. औषधि के container पर उसके घटक द्रव्यों को प्रदर्शित किया गया हो।

औषधियों के quality, identity तथा purity को test करने के लिए Drug Standardization Research Testing and Control Laboratories स्थापित करने की आवश्यकता पड़ी। भारत सरकार द्वारा नियुक्त विभिन्न प्रकार की कमेटियों ने आयुर्वेदिक औषधियों की स्थिति (status) तथा प्रचलन (practice) का मूल्यांकन करने के लिए Ayurvedic Pharmacopoeia के निर्माण पर बल दिया। केन्द्रीय आयुर्वेदिक एवं सिद्धा अनुसंधान परिषद (CCRAS) के संस्तुति पर भारत सरकार ने Letter No. 14-8/62-ISM दिनांक 26 सितम्बर 1962 के आधार पर प्रथम आयुर्वेदिक फार्माकोपियाँ कमेटी का गठन किया जिसका कार्यकाल तीन साल के लिए था। इस कमेटी के चेयरमैन कर्नल आर.एन. चोपड़ा थे तथा इसके सदस्यों में वैद्य डी.ए. कुलकर्णी, वैद्य वी.वी. गोखले, वैद्य श्री वापालाल समेत कुल 21 सदस्य थे तथा इसके मेम्बर सेक्रेटरी डा. सी. द्वारकानाथ थे। इस कमेटी के द्वारा निम्न निर्णय लिए गये—

1. एक official formulary का 2 भागों में गठन करना जिसमें
a) Single drug का वर्णन करना जिससे इनकी identity तथा therapeutic value निर्धारण में कोई संदेह न हो।
b) ऐसे योग (formulation) जो कि सम्पूर्ण भारत देश में मुख्य रूप से प्रयोग किये जाते हो उनका संग्रह कर, सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध कराना।
2. Drug और medicine का standard उपलब्ध कराना।
3. Identity, quality और purity test उपलब्ध कराना।
4. जहाँ तक सम्भव हो uniformity, physical तथा active constituents को निश्चित करना।
5. अन्य जानकारियाँ जैसे विशेषता (characteristic), निर्माण विधि (manufacturing process), अनुपान (vehicle) तथा toxicity को उपलब्ध कराना।

यह कमेटी 1972 में पुर्नगठित की गई जिसके चेयरमैन प्रो. ए.एन. नामजोशी थे। इस कमेटी के मेम्बर सेक्रेटरी डा. पी.एन.वी. कुरूप तथा उसमें कुल उन्नीस सदस्य थे। इस कमेटी ने निश्चय किया कि विभिन्न श्रेणी, जैसे तैल, आसव, अवलेह आदि के औषध योगों के कुल 444 योगों का एक formulary गठित (complie) किया जायेगा। Ayurvedic Pharmacopoeia Committee का समय-समय पर पुनर्गठन किया गया है। Ayurvedic Formulary of India के प्रथम भाग का प्रकाशन 1978 में किया गया तथा साथ ही साथ समय-समय पर Ayurvedic Pharmacopoeia of India (API) के विभिन्न volume तथा AFI के द्वितीय भाग का प्रकाशन किया गया है, जिसका वर्णन आगे किया गया है।

Pharmacopoeia Commission for Indian Medicine and Homoeopathy (PCIM&H)

यह आयुष मन्त्रालय, भारत सरकार के अन्तर्गत आने वाली एक स्वतन्त्र संस्था है। इसका उद्देश्य आयुर्वेदिक, सिद्धा, यूनानी तथा होम्योपैथिक सिस्टम के अन्तर्गत आने वाले औषधि/योगों के pharmacopoeial standard को

विकसित करना है। यह संस्था Ayurvedic Pharmacopoeial Committee, Siddha, Unani तथा Homoeopathic Pharmacopoeia Committee के बीच umbrella organizationn की तरह कार्य करना है। Pharmacopoeial Laboratory for Indian Medicine (PLIM) तथा Homoeopathic Pharmacopoeia Laboratory (HPL) इसके सहायक संस्था है। इस आयोग को 2010 में गठित किया गया जो कि शुरूआत में PCIM के नाम से जाना जाता था। बाद में इसमें होम्योपैथी को भी सम्मिलित कर दिया गया तब से इसे ICIM&H के नाम से जाना जाता है।

इसके मुख्य उद्देश्यों में ASU तथा Homoeopathic Pharmacopaeia का प्रकाशन तथा Revision करना, आयुर्वेदिक, सिद्धा, यूनानी तथा होम्योपैथिक औषधियों के प्रति जागरूकता पैदा करना, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के साथ जानकारियों का आदान प्रदान करना, कच्ची औषधियों तथा योगों के Quality Specification, Drugs and Cosmetics Act, 1940 के Chapter IV A के प्रावधानों पर अमल करना है।

Ayurvedic Pharmacopoeia of India (A.P.I.)

आयुर्वेदिक फार्माकोपिया आफ इंडिया एक legal document है, जिसमें Drugs and Cosmetics Act 1940 में, आयुर्वेदिक औषधियों से सम्बन्धित, वर्णित प्रावधानों को पूर्ण करने हेतु Ayurvedic drugs and substances के quality standards का वर्णन है। यह दो भाग (part) में प्रकाशित है। इसके Part I, जिसमें विभिन्न volume है, में single drug के monograph तथा Part II में drug formulaion के monograph का वर्णन है। Part I में वर्णित single drug के प्रत्येक monograph में plant origin के एकल औषधि (single drug) के प्रयोज्य अंगों (used part) के pharmacognostical, chemical तथा Ayurvedic standard का विस्तृत वर्णन है। इन वर्णन में macroscopic, microscopic characters के साथ-साथ उनके chemical standard of identity, foreign matter की परिमित मात्रा (permissible limit), purity तथा strength विकसित किये गये हैं, जो कि Ayurvedic Pharmacopoeia Committee द्वारा संस्तुत है। इसमें total ash value, acid insoluble ash, alcohol soluble extractive तथा thin layer chromatographic (TLC) description का भी वर्णन किया गया है।

Part I के निम्न volume अब तक प्रकाशित है–

क्रम सं.	Volume	वर्णन (Description)
01	I	60 single drug का monograph वर्णित है।
02	II	78 single drug monograph वर्णित है।
03	III	100 single drug monograph वर्णित है।
04	IV	68 single drug monograph वर्णित है।
05	V	92 single drug monograph वर्णित है।
06	VI	101 single drug monograph वर्णित है।
07	VII	21 mineral and metals से सम्बन्धित monograph वर्णित है।
08	VIII	60 monograph है। जिसमें drug, drug powder, hydro alcoholic extract तथा water extract का वर्णन है। जैसे आमलकी,

Scanned with OKEN Scanner

		आमलकीचूर्ण, आमलकी hydroalcoholic extract तथा आमलकी water extract। इसी प्रकार अन्य औषधियों का वर्णन है।
09	IX	15 monograph का वर्णन है। जिसमें single, hydroalcoholic तथा water extract का वर्णन है। इस प्रकार कुल 45 वर्णन है।

Ayurvedic Pharmacopoeia of India Part II

API Part II में drug formulation के monograph का वर्णन है। प्रत्येक monograph में formulation की परिभाषा, घटक द्रव्य (द्रव्यों के आयुर्वेदिक तथा equivalent botanical नाम), प्रयोज्य अंग तथा इनकी मात्रा का वर्णन है। Formulation की निर्माण विधि तथा product का description, identification के लिए घटक द्रव्यों (ingredients) का macroscopy, thin layer chromatographic (TLC) तथा chemical tests का वर्णन है। Physico chemical parameters में loss on drying, total ash value, acid insoluble ash, alcohol soluble extractives, water soluble extractive तथा pH आदि का वर्णन है। इसके अतिरिक्त formulation का उपयोग (indication), therapeutic use तथा मात्रा (dose) के साथ अनुपान का भी वर्णन प्रत्येक monograph में उपलब्ध है।

Part II के निम्न volume अब तक प्रकाशित किये जा चुके है–

1. Volume I–50 monograph
2. Volume II–51 monograph
3. Volume III–51 monograph

Ayurvedic Formulary of India–इस पुस्तक का प्रकाशन 1978 में Department of ISM & H, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा किया गया। इसे NISCAIR, CSIR द्वारा मुद्रित किया गया है। अब तक इसके तीन part प्रकाशित है। इन तीनों में संकलित योगों की संख्या निम्न है–

1. Part I–444 योगों का वर्णन कल्पना अनुसार है।
2. Part II–191 योग
3. Part III–350 योग

Formulary के मुख्य रूप से तीन विभाग है, जो कि निम्न है–

1. Formulary compound formulation
2. Formulary single drug
3. Appendices

Formulary Compound Formulation–इसमें विभिन्न योगों का संग्रह Sections (कल्पना अनुसार) के अन्तर्गत वर्णित है। प्रत्येक section में वर्णित कल्पना विशेष की परिभाषा, निर्माण विधि, सिद्धि लक्षण, सावधानियाँ, संरक्षण विधि, योग का सन्दर्भ, मात्रा, उपयोग, योग में वर्णित घटक द्रव्यों का प्रयोज्य अंग तथा उसका मान M.K.S. पद्धति में दिया गया है।

Formulary Single Drugs–इसमें विभिन्न योगों में प्रयुक्त जान्तम (Animal origin), वानस्पतिक (plant origin) तथा पार्थिव द्रव्य (mineral origin) की विषय सूची दी गई है। इसके साथ ही उसके वैज्ञानिक नाम भी दिये गये हैं।

Appendics–यह निम्न भाग में विभाजित हैं–

1. परिभाषा–यह प्रकरण सामान्य परिभाषा, कल्पना परिभाषा, पुट एवं यन्त्र परिभाषा में विभाजित है। सामान्य परिभाषा में भावना, कज्जली, अनुपान, ढालन, धूपन, निर्मलीकरण, प्रक्षेप आदि पारिभाषिक शब्दों का वर्णन सन्दर्भ ग्रन्थ सहित किया गया है। कल्पना परिभाषा में कल्क, क्वाथ, चूर्ण, पुटपाक, स्वरस, फाण्ट, हिम, तथा पुट परिभाषा में विभिन्न पुटों का वर्णन है। यन्त्र परिभाषा में विभिन्न प्रकार के यन्त्रों जैसे अर्क यन्त्र, खल्व यन्त्र, डमरू यन्त्र, विद्याधर यन्त्र, तिर्यक्पातन यन्त्र, वालुका यन्त्र आदि यन्त्रों का विवरण है।
2. शोधन–इस प्रकरण में विभिन्न प्रकार के द्रव्यों के शोधन तथा पारद के अष्ट संस्कार का वर्णन है।
3. Therapeutic indices– यह formula wise तथा disease wise दो index में विभाजित है। Formula wise में A.F.I. में वर्णित विभिन्न योगों का अकारादि क्रम में वर्णन तथा उसका रोगाधिकार का विवेचन है। इसी प्रकार disease wise index में रोगों के अकारादि क्रम में वर्णन तथा उसके चिकित्सा में उपयोगी formula का वर्णन है।
4. इसमें रोगों का अकारादि क्रम में वर्णन के साथ ही उसके technical terms तथा English word का वर्णन है।
5. मान–इसमें आयुर्वेद में वर्णित विभिन्न मान का उसके समतुल्य आधुनिक मान (metric system) का वर्णन है।
6. Bibliography–A.F.I. के प्रकाशन में सहायक ग्रन्थों की सूची का वर्णन है।

National Medicinal Plant Board (NMPB)

https://www.nmpb.nic.in

औषधिय पादप (Medicinal plant) को आगे बढ़ाने हेतु भारत सरकार ने 24 नवम्बर 2000 को NMPB का गठन किया। इस समय यह संस्था आयुष मंत्रालय के अन्तर्गत कार्य कर रहा है। इस बोर्ड का प्राथमिक उद्देश्य विभिन्न मंत्रालयों, विभागों तथा संगठनों के बीच समरसता के लिए उपयुक्त कार्य प्रणाली को विकसित करना है। तथा इसके साथ केन्द्र, प्रदेश तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर Medicinal plant के संरक्षण, खेती, व्यापार तथा निर्यात हेतु आवश्यक policy तथा programme को लागू करना है।

NMPB के उद्देश्य

1. To meet increasing demand for medicinal plants NMPB focusses on in-situ and ex-situ conservation and augumenting local medicinal plants and aromatic species of medicinal significance.
2. To support programmes for quality assurance and standardization through development of Good Agricultural and Collection Practices (GACPs).
3. Development of monographs laying down standards of quality, safety and efficacy.

Scanned with OKEN Scanner

Traditional Knowledge Digital Library (TKDL)

web site–www.tkdl.res.in

TKDL विशेष रूप से भारतीय औषधि पद्धति में प्रयुक्त की जाने वाली औषधिय पौधों तथा योग का संग्रह कोष है। यह 2001 में CSIR तथा आयुष मंत्रालय के सहयोग से बनाया गया है। इस लाइब्रेरी का उद्देश्य प्राचीन तथा परम्परागत भारतीय ज्ञान को सुरक्षित रखना है। इस लाइब्रेरी में शास्त्रोक्त तथा समाज में प्रचलित ज्ञान को International Patent Classification System के अनुसार electronically वर्गीकृत करना है जिससे biopiracy तथा unethical patents को रोका जा सके। सन् 2010 तक आयुर्वेद, यूनानी, सिद्धा तथा योग से सम्बन्धित 148 किताबों को पाँच भाषाओं–अंग्रेजी, जर्मनी, फ्रेंच, स्पेनिश तथा जापानी में अनुवाद किया जा चुका है। इसका उद्देश्य आयुर्वेद में वर्णित औषधि योग के संस्कृत श्लोकों को Traditional Knowledge Resource Classification के आधार पर transcribe करना है जिससे कि यह patent examiner समझ सके।

The Drugs and Cosmetics Act, 1940- भारत के संसद द्वारा पारित एक कानून है जो कि भारत में औषधियों के आयात, निर्माण तथा वितरण (import, manufacture and distribution) को नियन्त्रित करता है। यह कानून 1930 में गठित चोपड़ा कमेटी, जिसके अध्यक्ष कर्नल आर.एन. चोपड़ा थे, की अध्यक्षता में इस कमेटी द्वारा किये गये सिफारिशों पर बनाई गयी थी। तब से इसमें आजतक समय-समय पर कई सुधार (amendments) किये गये हैं। प्रारम्भ में यह केवल Allopathic medicine पर ही प्रभावी होता था। लेकिन बाद 1964 में इसे आयुर्वेदिक औषधियों पर भी प्रभावी कर दिया गया।

औषधि निर्माण क्षेत्र में विकास

विभिन्न प्रकार के यन्त्र जैसे Pulverizer, Rotary tablet machine, Capusule filling machine, विभिन्न प्रकार के Extraction machine, Stream jackets आदि का प्रयोग आधुनिक समय में आयुर्वेदिक औषधियाँ के निर्माण में किया जा रहा है । तथा औषधियों के गुणवत्ता नियन्त्रण हेतु प्रयुक्त यन्त्र जैसे– pH meter, Tablet disintegration machine, Tablet dissolution machine, Polarimeter viscometer, Alcohol determination apparatus, T.L.C. आदि chromatographic instruments, भस्मों की गुणवत्ता परीक्षण हेतु XRD, SEM, ICP, EDX आदि Analytical tools का प्रयोग किया जा रहा है।

नई कल्पना का विकास (Development of New Dosage forms)

आधुनिक समय में परम्परागत आयुर्वेदिक कल्पनाओं (Dosage form) के अतिरिक्त नई कल्पनाओं के रूप में भी आयुर्वेदिक औषधियों का प्रचलन बढ़ रहा है । ये नई कल्पनाओं (New dosage form) निम्न हैं–

1. Oral dosage form– Granules, Tablets, Capsules, Suspension Syrup आदि ।
2. Topical dosage form– Gel, creams, Tooth paste, Face Pack आदि ।
3. Other– Suppositories

विमर्श– Liposomes, Phytosomes, Implants, Microsphere, Ethosomes, Polymeric micelle formation आदि नई कल्पनाओं का प्रचलन धीरे-धीरे आयुर्वेद में बढ़ रहा है।

●

अध्याय 2

परिभाषा

1. परिभाषा का महत्व

परिभाषा– यह भैषज्यं कल्पना का सर्वमान्य आधारभूत सिद्धान्त है। शास्त्र में अव्यक्त, अनुक्त, लेशोक्त तथा संदिग्ध प्रकरण का स्पष्ट रूप से ज्ञान कराने में परिभाषा सहायक होती है। यथा–

अव्यक्तानुक्तलेशोक्त सन्दिग्धार्थ प्रकाशकः । परिभाषा प्रकथ्यन्ते दीपीभूताः सुनिश्चितः ॥

(वैद्यक परिभाषा प्रदीप)

(अव्यक्त = अस्पष्ट, अप्रकट या अप्रत्यक्ष। अनुक्त = बिना कहा हुआ या बिना बताया हुआ। लेशोक्त = थोड़ा सा अंश कहा गया हो। संदिग्ध = जब दो के बीच संशय हो)

परिभाषा ज्ञान का महत्व इससे भी पता चलता है कि आचार्य शार्ङ्गधर ने प्रथम अध्याय परिभाषा का ही कहा है जिसमें मान परिभाषा, अनुक्त विशेषोक्त ग्रहण, तथा द्रव्य ग्रहण में किसी प्रकार के द्रव्य का कौन सा अंग ग्रहण करना है आदि का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार रसरत्न समुच्चय आदि रसशास्त्र के ग्रन्थों में "परिभाषा" प्रकरण का एक अध्याय ही वर्णित किया गया है।

2. शब्द व्युत्पति

औषध = ओष+धा+कि, स्त्रियां ङीष (हिन्दी संस्कृत शब्द कोष, वा. शि. आप्टे)

ओसो नाम रसः सोऽस्यां धीयते यत्तदोषधिः । ओसादारोग्यमाधत्ते तस्मादोषधिरोषधः ॥

(का.खि. 3/27)

ओस रस को कहते हैं, यह जिसमें धारण किया जाता हे वह ओषधि है। रस के द्वारा आरोग्य का आधान होता है इसलिए रस को धारण करने वाला ओषधि कहलाता है।

भेषज– भेषं रोगभयं जयति + ड

भिषक् विज्ञाननेयत्वाद्भेषजं भिषजो विदुः । (का.खि. 3/28)

भिषक के ज्ञान या जानने की विषय होने के कारण इसकी संज्ञा भेषज होती है।

ओषधं द्रव्य संयोगं ब्रुवते दीपनादिकम् । हुत व्रत तपोदानं शान्तिकर्म च भेषजम् ॥

(का.ई. 5/4)

दीपन आदि द्रव्यों के संयोग से जो चिकित्सा की जाती है उसे औषध कहते हैं। हवन, व्रत, तप, दान तथा शान्ति कर्म आदि को भेषज कहते हैं।

कल्पना

1. कल्पनम–(क्लृप् + ल्युट) रूप देना, बनाना। (हिन्दी संस्कृत शब्द कोष, वा. शि. आप्टे)

Scanned with OKEN Scanner

2. कल्पनं उपयोगार्थं प्रकल्पनं संस्करणमिति । (आ. चक्रपाणि)

औषधि को उपयोगी रूप देना ही कल्पना कहलाती है।

कषाय

कषति कण्ठम् – कष + आय (हिन्दी संस्कृत शब्द कोष, वा. शि. आप्टे)

कषायो रसभेदे स्यादङ्गरागे विलेपने। निर्यासे च कषायोऽथ सुरभौ लोहितेऽन्यवत्॥

(विश्वकोष)

कषाय शब्द से रस का प्रकार, अंगराग, लेप, निर्यास, सुगन्ध तथा लाल रंग का ग्रहण होता है।

आचार्य काश्यप ने कषाय शब्द को परिभाषित करते हुए कहा है कि–

कण्ठस्य कषणात् प्रायो रोगाणां वाऽपि कर्षणात्। कषाय शब्दः प्राधान्यात् सर्वयोगेषु कल्पयते॥

(का.खि. 3/29)

कण्ठ में लगने के कारण अथवा कण्ठ में अवरोध उत्पन्न करने के कारण तथा रोगों का कर्षण करने के कारण सभी योगों में प्रधान रूप से कषाय शब्द का प्रयोग किया जाता है।

पंच कषाय योनि

आचार्य चरक ने कषाय योनियों की संख्या पाँच बताई है । यथा—

पञ्च कषाय योनय इति मधुर कषायः, अम्ल कषायः, कटु कषायः तिक्त कषायः कषाय कषायश्चेति तन्त्रे संज्ञा। (च.सू. 4/6)

तथा आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार—

कषाययोनयः पञ्च रसा लवण वर्जिताः। (अ.हृ.क. 6/8)

इस प्रकार कषाय योनियाँ पाँच मानी गयी हैं, जो निम्न है—

1. मधुर कषाय, 2. अम्ल कषाय, 3. कटु कषाय, 4. तिक्त कषाय, 5. कषाय कषाय ।

संस्कार– (सम + कृ + घञ्) संस्कृत करना (हिन्दी संस्कृत शब्द कोष, वा. शि. आप्टे)

"संस्कारो हि नाम गुणान्तराधानमुच्यते" अर्थात संस्कार, किसी में गुणों का अन्तधान करने को कहते हैं। यह संस्कार निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

ते गुणास्तोयाग्नि सन्निकर्ष शौच मन्थन देशकाल वासन भावनादिभिः कालप्रकर्ष भाजनादिभिश्चाधीयन्ते॥

(च.वि. 1/2)

अर्थात संस्कार तोयऽग्नि सन्निकर्ष, शौच, मन्थन, देश, काल, वासन, भावना, कालप्रकर्ष, भाजन, पेषण, अभियन्त्रण आदि प्रक्रियाओं के द्वारा सम्पन्न किये जा सकते हैं। इसको उदाहरण से ऐसे समझा जा सकता है–

- तोयाऽग्नि सन्निकर्ष तथा शौच के द्वारा तण्डुल के गुरू गुण को खत्म कर उसमें लघु गुण का आदान किया जाता है।
- मन्थन के द्वारा दधि, जो कि शोथ कारक होता है, को शोथघ्न बनाया जाता है।

- इसी प्रकार देश (स्थान) ग्राह्य रसायन द्वितीय (च.नि.) को भस्म राशि में रखने का निर्देश है)।
- वासन के द्वारा किसी कल्पना विशेष में सुगन्ध पैदा करना (स्नेह कल्पना में पुष्प कल्क द्वारा पाक)।
- भावना के द्वारा वीर्य उत्कर्ष (आमलकी रसायन–आमलकी चूर्ण में आमलकी स्वरस की भावना)।
- कालप्रकर्ष (घृत, तैल तथा अवलेह को एक दिन से ज्यादा दिन में पाक करने निर्देश) तथा आसव/अरिष्ट को एक पक्ष (बनने के बाद) पश्चात प्रयोग करने का निर्देश है।

3. द्रव्य/वर्ग परिभाषा

रस– शास्त्रीय नाम- पारद, रस, रसेन्द्र

English–Mercury

Chemical composition/ formula - Hg

महारस

अभ्रवैक्रान्तमाक्षीक विमलाद्रिज सस्यकम्। चपलो रसकश्चेति ज्ञात्वाऽष्टौ संग्रहेद्रताम्॥

(र.र.स. 2/11)

अभ्रक, वैक्रान्त, माक्षिक, विमल, शिलाजतु, सस्यक, चपल तथा रसक ये आठ महारस है।

क्रम. सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition/formula
1.	अभ्रक	अभ्रक, गगन ख आदि	Biotite Mica	$K[MgFe^{2+}]_3 [AlFe^{3+}] Si_3O_{10} [OHF]_2$
2.	वैक्रान्त	वैक्रान्त, कुबज्र क्षुद्र कुलिश आदि	Tourmaline	[C Ca, Na]x [$MgAl_6$]x{$B_3Al_2Si_6$x[O,OH]30}]
3.	माक्षिक	माक्षीक, ताप्य आदि	Pyrite	$CuFeS_2$
4.	विमल	विमल	Iron Pyrite	Fe_2S_3
5.	अद्रिज	शिलाजतु शैलाधातुज आदि	Mineral pitch Black Bituman	गोमूत्रगन्धि -It contaihns mainly Fulvic acid. कर्पूरगन्धि - KNO_3
6.	सस्यक	सस्यक	Blue vitrol	$CuSO_4.7H_2O$
7.	चपल	चपल	Bismuth ore	Bismuth ore
8.	रसक	खर्पर, गोभद्र रीतिकृत आदि	Zinc ore	ZnS, $ZnCO_3$/ZnO

Scanned with OKEN Scanner

उपरस

गन्धाभ्रगैरिकासीसकांक्षीतालशिलाञ्जनम् । कंडुष्ठ चेत्युत्परसाश्चाष्टौ पारदकर्मणि ॥ (र.र.स. 3/1)

गन्धक, गैरिक, कासीस, कांक्षी, हरताल, मनःशिला, अञ्जन तथा कंकुष्ठ ये आठ उपरस है। इनका उपयोग पारद कर्म में होता है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	गन्धक	गन्धक	Sulphur	S
2.	गैरिक	गैरिक	Ochre	Fe_2O_3
3.	कासीस	कासीस	Green Citrol	$FeSO_4.7H_2O$
4.	स्फटिका	स्फटिका	Alum	$K_2SO_4.Al_2(SO_4)_3 24H_2O$
5.	हरताल	हरताल	Orpiment	As_2S_3
6.	मनःशिला	मनःशिला	Realgar	As_2S_2
7.	अञ्जन	अञ्जन	Collyrium	सौवीराञ्जन– PbS पुष्पाञ्जन–ZnO सोतीराञ्जन– Sb_2S_3, नीलाञ्जन–Compound of Pb and S, रसाञ्जन–Extract of Berbaris aristata
8.	कंकुष्ठ	कंकुष्ठ	Ruhbarb	Resin of Garcinia Morella

साधारण रस

कम्पिल्लश्चपरो गौरीपाषाण नवसारकः । कपर्दो बह्निजारश्च गिरिसिन्दूर हिङ्गुलौ ॥

मृद्वारशृङ्गमित्यष्टौ साधरणरसाः स्मृताः ॥ (र.र.स. 3/120-29)

कम्पिल्लक, गौरीपाषाण, नवसादर, कपर्द, अग्निजार, गिरिसिन्दूर, हिङ्गुल तथा मृद्वारशृंग ये आठ साधारण रस है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	कम्पिल्लक	कम्पिल्लक	Kamala tree	Rottlerin, Kamalins I & II etc.
2.	गौरीपाषाण	गौरीपाषाण, सोमल	White Arsenic	AS_2O_3
3.	नवसारक	नवसारक	Ammonium chloride	NH_4Cl
4.	कपर्द	कपर्द, वराटिका	Cowry	$CaCO_3$
5.	अग्निजार	अग्निजार	Ambargris	–
6.	गिरिसिन्दूर	सिन्दूर, गिरिसिन्दूर	Red oxide of mercury	NH_4Cl
7.	हिंगुल	हिंगुल	Cinnabar	HgS
8.	मृद्वारशृंग	मृद्वारशृंग	Litharge	PbO

धातु वर्ग

शुद्ध लोहं कनकं रजतं भानुलोहाश्मसारम् । पूतिलोहं द्वितयमुदितं नागवङ्गाभिधानम् ॥
मिश्रलोहं त्रितयमुदितं पित्तल कांस्यवर्तम् ॥ (र.र.स. 5/1)

स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह, शुद्ध लौह, नाग, वंग, पूतिलौह तथा पितल, कांस्य एवं वर्त लौह मिश्र लौह है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	स्वर्ण	स्वर्ण	Gold	Au
2.	रजत	रजत	Silver	Ag
3.	ताम्र	ताम्र	Copper	Cu
4.	लौह	लौह	Iron	Fe
5.	वङ्ग	वङ्ग	Tin	Sn
6.	नाग	नाग	Lead	Pb
7.	पित्तल	पित्तल	Brass	Cu+Zn 2:1
8.	कांस्य	कांस्य	Bronze	Cu+Sn 4:1
9.	वर्तलौह	वर्तलौह	–	Cu, Sn, Zn, Fe, Pb
10.	यशद	यशद	Zinc	Zn

उपधातु

ताप्यं च विमला तुत्थं कांस्यं पित्तलकं तथा । सिन्दूरं शैल निर्यासः स्मृता सप्तोपधातवः ॥
(आ.प्र. 3/4)

ताप्य,विमल, तुत्थ, कास्य, पितल, सिन्दूर, शिलाजतु ये सात उपधातु है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	ताप्य	स्वर्णमाक्षिक	Pyrite	$CuFeS_2$
2.	विमल	विमल	Iron pyrite	Fe_2S_3
3.	तुत्थ	तुत्थ	Blue vitrol	$CuSO_4.7H_2O$
4.	कांस्य	कांस्य	Bronze	Cu+Sn
5.	पित्तल	पित्तल	Brass	Cu+Zn
6.	सिन्दूर	सिन्दूर	Red oxide of mercury	HgO
7.	शैल निर्यास	शिलाजतु	Mineral pitch	Fulvic acid etc.

Scanned with OKEN Scanner

रत्न

धनार्थिनोजनाः सर्वे रमन्तेऽस्मिन्नतीव यत्। अतो रत्नमिति प्रोक्तं शब्द शास्त्रविशारदैः॥

(आ.प्र. 5/2)

धन के चाहने वाले लोग इन द्रव्यों के प्रति अधिक आसक्त रहते हैं। अतः शब्द शास्त्र के लोग इन्हें रत्न शब्द से बोधित करते हैं।

माणिक्य मुक्ताफल विद्रुमाणि तार्क्ष्यञ्च पुष्यं भिदुरञ्च नीलम्।
गोमेदकञ्चाथ विदूरकञ्च, क्रमेण रत्नानि नवग्रहाणाम॥ (र.र.स. 4/5)

माणिक्य, मोती, प्रवाल, पन्ना, पुष्पराग, हीरा, नीलम, गोमेद तथा वैडूर्य ये नव रत्न है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	माणिक्य	माणिक्य	Ruby	Al_2O_3
2.	मोती	मुक्ताफल	Pearl	$CaCO_3$
3.	प्रवाल	विद्रुम	Coral	$CaCO_3$
4.	पन्ना	तार्क्ष्य	Emerald	$Be_3Al_2(SiO_3)_6$
5.	पुष्पराग	पुष्पराग	Topaz	$Al_2SiO_4(F.OH)_2$
6.	हीरा	भिदुर	Diamond	C
7.	नीलम	नीलम	Sapphire	Al_2O_3
8.	गोमेद	गोमेद	Zircon	$Fe_3Al_2(SiO_4)_3$
9.	वैडूर्य	वैडूर्य	Cat's Eye	$BeOAl_2O_3$

उपरत्न

वैक्रान्त सूर्यकान्तश्च चन्द्रकातो नृपोपलः। पेरोजकञ्च स्फटिकं क्षुऽरत्नोगणोद्यम्॥

(र.त. 23/154)

वैक्रान्त, सूर्यकान्त, चन्द्रकान्त, पैरोजक तथा स्फटिक ये 6 उपरत्न है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	सूर्यकान्त	सूर्यकान्त	Sunstone	[Na, Ca] {Al(Si,Al) Si_2O_8}
2.	चन्द्रकान्त	चन्द्रकान्त	Moon stone	$KAlSi_3O_8$ / $NaAlSi_2O_8$
3.	राजावर्त	राजावर्त	Lapis laxzuli	$Na_4(NaS_3Al)\,Al_2(SiO_2)_3$
4.	पेरोजक	पेरोजक	Turquise	$CuAl_6(PO_4)_4(OH)_8.4H_2O$
5.	स्फटिक	स्फटिक	Quartz	SiO_2
6.	तृणकान्त	तृणकान्त	Amber	$C_{40}H_{64}O_4$

सुधा वर्ग

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	सुधा	सुधा	Lime stone	$CaCO_3$
2.	खटिका (खडिया)	खटिका लेखन मृत्तिका	Chalk/pipe clay	$CaCO_3$
3.	गोदन्ती	गोदन्ती	Gypsum (Selenite)	$CaSO_4.2H_2O$
4.	शुक्ति	शुक्ति	Oyster	$CaCO_3$
5.	शंख	शंख	Conch shell	$CaCO_3$
6.	मृगशृंग	मृगशृंग मृग विषाणक	Stag Horn	$CaPO_4$
7.	समुद्रफेन	समुद्रफेन	Cuttle Fish Bone	$CaCO_3$
8.	कुक्कुटाण्ड त्वक्	कुक्कुटाण्ड त्वक्	Hen's egg Shell	$CaCO_3$

लवण वर्ग

सैन्धवाञ्चाथ सामुद्रं विडं सौवर्चलं तथा। रोमकञ्चेति विज्ञेय वुधैर्लवणपञ्चकम्॥

सैन्धव, सामुद्र, विड, सौवर्चल तथा रोमक ये पांच लवण है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition /Formula
1.	सैन्धव लवण	सैन्धव लवण	Rock salt	NaCl-97.68% w/w NaHCO3-0.07%
2.	सामुद्र लवण	सामुद्र लवण	Sea salt	NaCl-91.39% w/w Na_2S-0.121% w/w
3.	विड लवण	विड लवण		NaCl-91.77% w/w Total Sulphide Na, S-0.121%w/w
4.	सौवर्चल लवण	सौवर्चल लवण	Black salt	NaCl-97.82% w/w Na_2S-0.918% w/w
5.	रोमक लवण	रोमक लवण	Sambhar salt	NaCl-97.11% w/w Na_2S-0.060% w/w

Sujit Kumar Dalai, R.C.Reddy, L.K. Dwivedi. Identification of Lavanas w.s.r to Pancha lavana - A Bird's Eye view. Sachitra Ayurveda. Ja. 2005. pp. 537-541

Scanned with OKEN Scanner

विष

हालाहलः कालकूटः शृङ्गकाह्व प्रदीपनः। सौराष्ट्रिको ब्रह्मपुत्रो हारिद्रः सत्तुकस्तथा॥
वत्सनाभ इति ज्ञेया विष भेदा अमीनव। रसे रसायनादौ च वत्सनाभः प्रशस्यते॥
(र.त. 24/7-8)

हालाहल, कालकूट, शृङ्गीक, प्रदीपन, सौराष्ट्रिक, ब्रह्मपुत्र, हारिद्र, सत्तुक तथा वत्सनाभ ये नव विष है। रस तथा रसायन हेतु वत्सनाभ श्रेष्ठ होता है।

वत्सनाभ

शास्त्रीय नाम– वत्सनाभ

English–Aconite

Phyto Chemical composition-Aconitene etc.

उपविष

विष तिन्दुक बीजं च त्वहिफेञ्च रेचनम्। धत्तूरबीजं विजया गुञ्जा भल्लातकाह्वयः॥
अर्कक्षीर स्नुहीक्षीरं लाङ्गली करवीरकम्। समाख्यातो गणोऽयं तु बुधैरूपविषभिधः॥
(र.त. 24/163-64)

कुचला बीज, अहिफेन, जयपाल, धतूरा बीज, भंगा, गुञ्जा, भल्लातक, अर्कक्षीर, स्नुही क्षीर, लांगली तथा करवीर ये 11 उपविष हैं।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Phytochemicals
1.	कुचला	विषतिन्दुक	Poison nut tree	Brucine, Strychnine etc.
2.	जयपाल	रेचन	Croton	β-Sitosterol etc.
3.	धतूरा	धतूरा	Thorn apple	Daturadiol etc.
4.	भंगा	विजया	Indian Hemp	Cannabiol etc.
5.	भल्लातक	भल्लातक	Marking Nut Tree	Anacardica acid etc.
6.	गुञ्जा	गुञ्जा	Jequirity	Abrine, Aloridin etc.
7.	अर्कक्षीर	अर्कक्षीर	Madar	Calactin, Calotropin etc.
8.	स्नुहीक्षीर	स्नुहीक्षीर	Milk Hedge	Euphol, Nerifoliol etc.
9.	लांगली	लांगली	Glory Lily	Colchicine, Puteolin
10.	करवीर	करवीर	Oleander	Karabin, Neriodorein etc.
11.	अहिफेन	अहिफेन	Opium	Morphine, Codein etc.

कज्जली

अर्द्धसमानद्विगुणमिताद्या गन्धकचूर्णात् पारदकस्य।
मर्दनजन्या मृसणकाया कज्जलरूपा कज्जलिका सा॥ (र.त. 6/107)

शुद्ध पारद से अर्धभाग, समभाग, द्विगुणभाग आदि (3,4,5 या 6 गुना) शुद्ध गन्धक चूर्ण लेकर खल्व यन्त्र में मर्दन करके इसे चिकना तथा काला रूप बना लेना कज्जली कही जाती है।

कज्जली प्रयोग विधान– कज्जली का प्रयोग 2 प्रकार से किया जा सकता है–

1. सीधे योग में यथा आरोग्यवर्द्धनी वटी आदि।
2. अन्य कल्पना जैसे पर्पटी, कूपीपक्व निर्माण में– इनके निर्माण में पहले कज्जली निर्मित करते हैं पश्चात् अग्नि पाक से पर्पटी या कूपी पक्व निर्मित करते हैं।

योगेषु यत्र निर्दिष्टौ समौ गन्धक पारदौ। तन्मानां कज्जली यत्र योजयेद्भिषजां वरः॥
उक्ते पारदमात्रं तु प्रयोगेषु सुनिश्चितम्। योजयेद्रससन्दूरं रसतन्त्र विशारदः॥
गन्धः स्यादधिकः सूताद्यावान् योगेषु मानतः। गन्धं तावन्तमेवेह विधानज्ञो विनिक्षिपेत्॥
रसोऽधिको भवेद्यत्र गन्धकस्य प्रमाणतः। आदावेव विदध्यात्तु तन्मानात्तत्र कज्जलीम्॥
(र.त. 6/108-111)

कज्जली प्रयोग हेतु निम्न बातें महत्वपूर्ण हैं–

1. जिस योग में पारद एवं गन्धक समभाग लिखा हो वहाँ पर समगुण कज्जली प्रयोग करना चाहिए।
2. जहाँ पर केवल पारद लिखा हो वहाँ पर पारद की मात्रा के बराबर रस सिन्दूर प्रयोग करना चहिए।
3. जिस योग में पारद की अपेक्षा जितना अधिक गन्धक लिखा हो वहाँ कज्जली के अतिरिक्त अधिक गन्धक डालकर कंज्जली निर्मित कर प्रयोग करना चाहिए।
4. जिन योगों में गन्धक की अपेक्षा पारद की मात्रा अधिक हो वहाँ पहले कुल मात्रानुसार कज्जली निर्मित कर प्रयुक्त करना चाहिए।

वक्तव्य– कज्जली, पर्पटी तथा रस सिन्दूर तीनों ही पारद एवं गन्धक के योग से निर्मित होते हैं। कज्जली तथा रस पर्पटी Black Sulphide of Mercury (HgS) होते हैं। कज्जली कमरे के तापमान जबकि रस पर्पटी 115-120^{0}C पर निर्मित होती है। रस सिन्दूर Red Sulphide of Mercury (HgS) होता है जो कि उच्च तापमान पर निर्मित होता है।

मित्रपंचक

आज्यं गुञ्जाथ सौभाग्यं क्षौद्रं च पुरसंज्ञकम्। एतत्तु मिलितं विज्ञैर्मित्रपञ्चकमुच्यते॥
(र.त. 2/37)

घृत, गुञ्जा, टंकण, शहद तथा गुग्गुलु को मिलित रूप में मित्रपंचक कहते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition/Formula
1.	घृत	गोघृत	Ghee	Fatty acid (Saturated)
2.	गुञ्जा	गुञ्जा	Jequirity	Abrine, Abridin आदि
3.	टंकण	टंकण	Borax	$NO_2B_4O_7.10H_2O$
4.	क्षौद्र	शहद, मधु	Honey	Mix of fructose-glucose, along with proteins vitamins and mineral.
5.	गुग्गुलु	गुग्गुलु	Indian Bedellium	Contain diterpenoids, triterpinoids etc.

उपयोग–

विविधानां तु लोहनां द्रावणाय विशेषतः । रसतन्त्रविशेषज्ञैर्युज्यते मित्रपञ्चकम् ॥

(र.त. 2/38)

विभिन्न प्रकार के लोह (धातुओं) को द्रवित करने हेतु मित्रपंचक का प्रयोग होता है ।

द्रावक गण

गुञ्जा मधु गुडः सर्पिः सौभाग्यं गुग्गुलुस्तथा । पूर्वाचार्यैः कीर्तितोऽयं धातूनां द्रावको गणः ॥

(र.त. 2/35)

1. गुञ्जा, 2. मधु, 3. गुड़, 4. सर्पि (घृत), 5. टंकण एवं 6. गुग्गुलु को प्राचीन आचार्यों ने द्रावक गण माना है ।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition/Formula
1.	गुड़	गुड़	Jaggery	Sucrose
2.	घृत	गोघृत	Ghee	Fatty acid (Saturahmid)
3.	गुञ्जा	गुञ्जा	Jequirity	Abrine, Abridin आदि
4.	टंकण	टंकण	Borax	$NO_2B_4O_7.10H_2O$
5.	क्षौद्र	शहद, मधु	Honey	Mix of fruchase-glucose, along with proteins vit. and mineral.
6.	गुग्गुलु	गुग्गुलु	Indian Bedellium	Contain diterpenoids, triterpinoids etc.

उपयोग– द्रुर्दावाखिल लोहादेर्द्रवणाय गणो मतः ॥ (र.र.स. 10/95)

कठिनता से द्रवित (Melt) होने वाले धातुओं को शीघ्र ही द्रवीभूत करने के लिए इस वर्ग का उपयोग किया जाता है ।

संदिग्ध द्रव्य

वैक्रान्त, चपल, रसाञ्जन, पुष्पाञ्जन, बह्निजार, गिरि सिन्दूर तथा कंकुष्ठ को पाठ्यक्रम में संदिग्ध द्रव्य कहा गया है। इन द्रव्यों के वर्णित लक्षण के आधार पर तुलना करने से ये एक अधिक द्रव्यों में पाये जाने से इन्हे संदिग्ध कहा जाता है। इनका वर्णन निम्न है—

1. वैक्रान्त - इनकी तुलना Tourmaline, Fluarspar (CaF_2) Felspar [K_2O, $Al_2O_3.6SiO_2$] तथा स्फटिक (Rock crystal) से की जाती है।

2. चपल - वङ्गावतद्रवते वह्नौ चपलस्तेन कीर्तित तथा चपल के वर्णित अन्य लक्षणों के आधार पर इसे Bismuth या इसके ore तथा Selinium से लिया जाता है।

3. रसाञ्जन–वर्णित पर्याय के आधार पर इसे Yellow oxide of Mercury माना जाता है। आजकल रसाञ्जन को Extract of Berbaris aristata से ग्रहण किया जा रहा है।

4. बह्निजार– रसग्रन्थों में इसे अग्निनक्र नामक समुद्री जीव का जरायु कहा गया है। इसे Sperm whale fish के intestinal secrection से भी लिया जाता है।

5. पुष्पाञ्जन– इसके पर्याय तथा अन्य लक्षणो के आधार पर पुष्प से प्राप्त अञ्जन, विशेष प्रकार के पुष्प से प्राप्त काश्मीरी मधु, पुष्प कासीस से बनाया हुआ अंजन, रीति (पित्तल) किट्ट से प्राप्त तथा अग्नि पर फूली हुई फिटकरी से लिया है।

6. गिरिसिन्दूर–इससे पारद आक्साइड (Montroydite - Red coloured oxide of mercury) तथा नेत्र गुण के कारण mercury के yellow or red oxide से ग्रहण किया जाता है।

7. कंकुष्ठ—रस ग्रन्थों में इसकी उत्पत्ति हिमालय पहाड़ के समीप छोटे पर्वतों पर मानी गयी है। अन्य वर्णन के अनुसार यह नवजात हाथी के बच्चे का मल या घोड़े के बच्चे की नाल होती है तथा यह तीव्र विरेचक होता है। आजकल इसे Gambose tree से प्राप्त Resin माना जाता है।

अनुपलब्ध द्रव्य

1.	रसक	रसक	Zinc ore	ZnO, ZnS, $ZnCO_3$
2.	सौवीराञ्जन	सौवीराञ्जन		Sb_2S_3/PbS [as per API]

कृत्रिम द्रव्य–इन द्रव्यों की प्राप्ति आजकल कारखाने से होती है। इसलिए इन्हे इस श्रेणी में रखा गया है।

क्र.सं.	नाम	शास्त्रीय नाम	English Name	Chemical composition/Formula
1.	सस्यक	सस्यक	Bluve vitrol	$CuSO_4.7H_2O$
2.	गन्धक	गन्धक	Sulphur	S
3.	कासीस	कासीस	Green vitrol	$FeSO_4.7H_2O$
4.	रसाञ्जन	रसाञ्जन	–	Extract from Berberis aristata
5.	हिंगुल	हिंगुल	Cinnabar	HgS

Scanned with OKEN Scanner

प्रतिनिधि द्रव्य

वज्राभावे वैक्रान्त– वज्र के अभाव में वैक्रान्त का प्रयोग करना चाहिए ।

स्वर्णाभावे सुवर्ण माक्षिक– स्वर्ण के अभाव में स्वर्ण माक्षिक का प्रयोग करना चाहिए ।

वज्र का रत्न वर्ग, वैक्रान्त, महारस वर्ग, स्वर्ण धातु वर्ग तथा स्वर्ण माक्षिक महारस वर्ग में वर्णित है।

4. प्रक्रिया परिभाषा

शोधन

उद्दिष्टैरौषधैः सद्धि क्रियते पेषणादिकम् । मलविच्छित्तये यत्तु शोधनं तदिहोच्यते ॥
(र.त. 2/52)

किसी द्रव्य के मल को दूर करने के हेतु उसके लिए कही गयी औषधियों के साथ पेषण (पीसना), स्वेदन, प्रक्षालन आदि प्रक्रिया को करना ही शोधन कहलाता है ।

विमर्श– रसशास्त्र की शोधन प्रक्रिया से यद्यपि सामान्य रूप से मल दूर करने का ही ग्रहण किया जाता है । परन्तु शोधन निम्न उद्देश्यों से भी किया जाता है–

1. मल दूर करने हेतु– उदाहरण पारद का शोधन, गन्धक आदि का शोधन ।
2. भस्म निर्माण हेतु करने हेतु– जैसे धातुओं का सामान्य शोधन में धातु छोटे टुकड़ों में विभक्त हो जाता है जिससे मारण प्रक्रिया में आसानी होती हैं ।
3. विषों की उग्रता कम करने हेतु– विष द्रव्यों की उग्रता कम करने हेतु उनका शोधन किया जाता है तथा इन्हें चिकित्सार्थ प्रयुक्त किया जाता है ।

शोधन के भेद

रसशास्त्रीय ग्रन्थों में शोधन के दो प्रकारों का उल्लेख मिलता है–

1. सामान्य शोधन, 2. विशेष शोधन

सामान्य शोधन वह शोधन विधि है जो एक वर्ग के द्रव्यों के लिए प्रयोग किया जाता है । जिसका उदाहरण निम्न है–

1. सूर्यावर्तककदली वन्ध्या कोशातकी च सुरदाली । शिग्रुश्च वज्रकन्दो नीरङ्गणा काकमाची च ॥
आसामेकरसेन तु लवणक्षाराम्लभाविता बहुशः । शुद्धयन्ति रसोपरसा ध्माता मुञ्चन्ति सत्त्वानि॥
(र.र.स. 3/118-19)

सूर्यावर्तक, केला, वंध्या कर्कोटकी, देवदाली, शिग्रु, वज्रकन्द (जंगली सूरजकन्द), जलपिप्पली, मकोय, इनमें से किसी एक के स्वरस की भावना लवण, क्षार और अम्ल इन द्रव्यों से रस और उपरस को अनेक वार देने से रस और उपरसों का शोधन हो जाता है तथा इनके सत्व निकल जाते हैं ।

2. साधारणरसाः सर्वे मातुलुङ्गार्द्रकाम्बुना । त्रिरात्रं भाविताः शुष्का भवेयुर्दोषवर्जिता ॥
(र.र.स. 3/147)

सभी साधारण रसों को मातुलुंग और आर्द्रक इन दोनों स्वरस की तीन दिन तक भावना देकर सुखा लेने से यह शुद्ध हो जाते हैं ।

3. तैले तक्रे गवां मूत्रे ह्यारनाले कुलत्थजे । क्रमान्निषेचयेत्तप्तं द्रावे द्रावे तु सप्तधा ॥
स्वर्णादि लोह पत्राणां शुद्धिरेषा प्रशस्यते ॥ (र.र.स. 5/13)

स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि धातुओं के पतले पत्र बनाकर उन्हें अग्नि तप्त कर तिल तैल, गोमूत्र, तक्र, आरनाल तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में सात बार बुझाने से उस धातु की शुद्धि हो जाती है ।

विशेष शोधन– स्वर्णादि धातुओं को सामान्य शोधन के पश्चात उनका विशेष शोधन किया जाता है। जैसे–

कर्षप्रमाणं तु सुवर्णपत्रं शरावरुद्धं पटुधातुयुक्तम् ।
अङ्गारसंस्थं प्रहरार्धमानं ध्मातेन तत्स्यान्ननुपूर्णवर्णम् ॥ (र.र.स. 5/12)

स्वर्ण के विशेष शोधन हेतु स्वर्ण पत्र पर सैन्धव लवण का लेप कर इसे आधा पल तक अङ्गार पर धमन करने से स्वर्ण अपने पूर्ण वर्ण का हो जाता है।

शोधन की विभिन्न विधियाँ तथा उनके उदाहरण

क्रम संख्या	शोधन विधि	उदाहरण
1.	आवाप	वंग जारण
2.	निर्वाप	धातुओं का सामान्य शोधन
3.	ढालन	गंधक का शोधन
4.	भावना	कासीस, गैरिक आदि का शोधन
5.	भर्जन	गैरिक शोधन
6.	आतपशोषण	वत्सनाभ शोधन
7.	स्वेदन	रत्न आदि का शोधन
8.	मर्दन	पारद का शोधन
9.	गालन	गुग्गुलु शोधन, खटिका शोधन
10.	पातन	पारद शोधन
11.	प्रक्षालन	पारद शोधन में प्रयुक्त
12.	निर्जलीकरण	टंकण, स्फटिका शोधन

Scanned with OKEN Scanner

स्वेदन

क्षाराम्लैरोषधैर्वर्गैऽपि दोलायन्त्रे स्थितस्य हि। पचनं स्वेदनाख्यं स्यान्मल शैथिल्यकारकम्॥

(र.र.स. 8/59)

किसी पदार्थ (पारद आदि) को दोलायन्त्र में स्थित कर (रखकर) उसे क्षार अम्ल या अन्य औषधि द्रव में पकाने को स्वेदन कहते हैं। यह द्रव्यगत मल शैथिल्य करने वाला होता है।

उदाहरण— प्रवाल का जयन्ती स्वरस में स्वेदन।

मर्दन

पेषणं मर्दनाख्य स्याद्बहिर्मल विनाशनम्॥ (र.र.स. 8/60)

औषधियों के साथ द्रव्य संयोग (काञ्जी आदि) के द्वारा पेषण करने की प्रक्रिया को मर्दन कहा जाता है। यह वाह्य मल को नाश करने वाला होता है।

ढालन

संद्रावितस्य द्रव्यस्य द्रवे निक्षेपणन्तु यत्। ढालनं तत्समुद्दिष्टं रस कर्म विशारदैः॥ (र.त. 2/36)

किसी द्रव्य को द्रवित कर (Melt) किसी द्रव (Liquid) में डालने की प्रक्रिया को रसशास्त्रज्ञ ढालन कहते हैं। रसरत्नसमुच्चय के अनुसार–

द्रुत द्रव्यस्य निक्षेपो द्रवे तद् ढालनं मतम्। (र.र.स. 8/40)

उदाहरण— गंधक शोधन

निर्वाप

तप्तस्याप्सु विनिक्षेपो निर्वापः स्नपनं च तत्॥ (र.र.स. 8/54)

किसी द्रव्य को अग्नि में तप्त (Red hot) कर किसी द्रव में बुझाने की प्रक्रिया को निर्वाप कहते हैं। निर्वाप का पर्याय स्नपन है।

उदाहरण– धातुओं का सामान्य शोधन

निर्जलीकरण

अग्नि पर स्फटिक, टंकण आदि को रखकर उसमें उपस्थित जल को वाष्पीकृत करने की प्रक्रिया को निर्जलीकरण कहते हैं।

निमज्जन

किसी द्रव में द्रव्य को डुबा कर रखने को प्रक्रिया को निमज्जन कहा जाता है।

जैसे— वत्सनाभ शोधन में वत्सनाभ के छोटे-छोटे टुकड़े (चने के आकार के) को गोमूत्र में निमज्जन कर धूप में 3 दिन तक रखते हैं।

भावना

यच्चूर्णितस्य धात्वादेर्द्रवैः सम्पेष्य शोषणम्। भावनं तन्मतं विज्ञैर्भावना च निगद्यते॥

(र.त. 2/49)

किसी धातु आदि के चूर्ण या अन्य द्रव्य जैसे शुद्ध अभ्रक, गैरिक आदि के चूर्ण को किसी द्रव जैसे दुग्ध, स्वरस, क्वाथ आदि डालकर उसे द्रव सूखने तक मर्दन करने की प्रक्रिया को भावना कहते हैं।

सम्यक् भावना लक्षण— पेष्यमाणञ्च यद् द्रव्यं चिपिटीभूय चूर्णताम्। याति मार्दवयुक्ततत् सुभावितमुदाहृतम्॥

जिस द्रव्य को भावित किया जा रहा हो, भावना पूर्ण होने पर उस भावित द्रव्य की गोली बन जाय, अंगुलियों से दबाने पर चिपटा हो जाय तथा स्पर्श में मृदु हो उसे सुभावित कहते हैं।

दुर्भावना के लक्षण— यत् पिष्टं सहसादीर्णं खर स्पर्शन्त्र कोमलम्। तदुर्भावितमित्युक्तं भावनावेदिभिर्जनैं॥

यदि भावित द्रव्य की गोली अच्छी प्रकार से न बने, दबाने पर किनारे विदीर्ण हो जाय तथा स्पर्श में खर हो तो दुर्भावित होता है।

भावना में द्रव परिणाम

किसी चूर्ण रूप औषधि में यदि भावना देनी हो तो उसमें इतनी मात्रा में द्रव डालते हैं जिससे वह गीला (कीचड़) की तरह हो जाय। यदि किसी औषधि को भावना हेतु क्वाथ का प्रयोग करना हो तो क्वाथ निर्माण हेतु क्वाथ्य द्रव्य की मात्रा से आठ गुना जल डालकर उसे पाक करते हैं जब आठवां (1/8) भाग शेष रहे तो उसे छान लेते हैं तथा इसे भावना हेतु प्रयोग करते हैं। क्वाथ्य द्रव्य की मात्रा भावना हेतु प्रयुक्त औषधि की मात्रा के बराबर लेते हैं।

द्रवेण यावतां द्रव्यं चूर्णितं त्वार्द्रतां व्रजेत्। तावानेव द्रवो देयो भिषग्भिर्भावनाविधौ॥
भाव्यद्रव्यमितः क्वाथ्यो जलमष्टगुणं ततः। वस्वंशशोषितः क्वाथो देयः क्वाथेन भावने॥

(र.त. 2/50-51)

भर्जन

किसी स्नेह की सहायता में द्रव्य को अग्नि पर पकाने की प्रक्रिया को भर्जन (Frying) कहा जाता है।

जैसे— गैरिक को घृत भर्जन के माध्यम से शोधन करना।

मारण

विविधक्रमयोगेन गन्धकाद्यौषधैः सह। रसादीनाञ्च धातूनां रोगापनयनक्षमम्॥
गन्धकादि युतं वापि यदम्बर सुधान्वितम्। भस्मत्वापादनं यत्तु मारणं तदिहोच्यते॥

(र.त. 7/1-2)

विभिन्न प्रकार के क्रम (Steps) के द्वारा रस आदि (अभ्रक, वैक्रान्त, रत्न, धातुयें आदि द्रव्य) को गन्धक या अन्य औषधियों के संयोग से उसमें (रसादि द्रव्यों में) रोगों को दूर करने की शक्ति उत्पन्न करना या गन्धक आदि के संयोग से या अम्बर सुधा (आक्सीजन) के संयोग से भस्म के रूप में करना, मारण कहलाता है।

विमर्श– उपरोक्त वर्णन में मारण के विविध क्रम (Various steps) को निम्न का ग्रहण किया जा सकता है–

Scanned with OKEN Scanner

5. स्वांगशीत (Self cooling) 6. चक्रिका को चूर्ण (Powder) करना ।

चूर्ण को पुनः भावना देकर उपरोक्त प्रक्रिया को पुनः करते हैं जब तक कि उस द्रव्य की उत्तम भस्म का निर्माण न हो जाय ।

मारण का महत्व

1. धातु तथा खनिज द्रव्य उपयोगी औषधि के रूप में (भस्म) परिवर्तित हो जाते है।
2. भस्म रूप में परिवर्तित होने के पश्चात् ये absorbale तथा assimiable हो जाते हैं।
3. द्रव्य के गुरु, कठिन तथा रूक्ष गुण लघु, मृदु तथा श्लक्ष्ण हो जाते हैं।
4. द्रव्य की प्रयुक्त मात्रा (dose) कम हो जाती है। तथा शीघ्र कार्य करने वाली हो जाती है।

अग्निपाक

हांडी आदि में द्रव्य को रखकर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर अग्नि प्रदान करने की क्रिया को अग्निपाक कहा जाता है। अग्निपाक विधि से ताम्रभस्म (र.र.स. 5/56-58 तथा 5/59-64) लोह भस्म र.र.स. 5/108) आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।

पुटपाक

शराव सम्पुट के माध्यम से पाक की प्रक्रिया को पुटपाक कहा जाता है। भस्म निर्माण सामान्य रूप से इसी विधि से किया जाता है।

कूपी पाक

कूपी में द्रव्य (पारद आदि) को रखकर पाक करने की कूपी पाक कहा जाता है। इसके द्वारा कूपी पक्व रसायन जैसे— रस सिन्दूर आदि का निर्माण किया जाता है।

भानुपाक

वराक्वाथ युतं लौहं भानौः प्रखर भानुभिः । शुष्यन् विपच्यते यस्माद भानुपाकस्ततः स्मृतम् ॥
(र.त. 20/21)

पात्र में लोहे को त्रिफला क्वाथ से रखकर तेज धूप में रख देते हैं। सूर्य के ताप से त्रिफला क्वाथ को सुखाने की प्रक्रिया को भानुपाक कहा जाता है।

स्वांगशीत

बह्निस्थमेव शीतं यत्तदुक्तं स्वाङ्गशीतलम् ॥ *(र.र.स. 8/58)*

अग्नि में पाक हो जाने के पश्चात् उसके अपने आप ही ठंडा होने देने की क्रिया को स्वांगशीत कहा जाता है।

अमृतीकरण

लोहादीनां मृतानां वै शिष्टदोषापनुत्तये । क्रियते यस्तु संस्कार अमृतीकरणं मतम् ॥

किसी धातु आदि जैसे अभ्रक एवं ताम्र को भस्म करने के उपरान्त उसमें शेष रह गये दोषों को दूर करने हेतु जो संस्कार किये जाते हैं उसे अमृतीकरण कहते हैं ।

उदाहरण– मृताभ्रसंमितं गव्यमाज्यं दत्वाभ्रक पचेत । अमृतीकृतमेवन्तु घनं कार्येषु योजयेत् ॥
(र.त. 10/71)

अभ्रक भस्म और गोघृत दोनों को समान मात्रा में लेकर घृत के शेष न रह जाने तक पकाने से अभ्रक भस्म का अमृतीकरण संस्कार हो जाता है । इस कार्य हेतु लोहे की कड़ाही प्रयोग में लाते हैं ।

आयुर्वेद प्रकाश के अनुसार–

अथैवं मृतस्याभ्रकस्यामृतीकरणाख्यः संस्कार उक्तः ।
अरूण भस्मनस्तु पुनस्मृतीकरणेन गुणवृद्धिर्वर्णहानिश्च भवित ॥ (आ.प्र. 2/135)

अभ्रक भस्म का अमृतीकरण संस्कार कहते हैं किन्तु लाल भस्म में अमृतीकरण से गुणवृद्धि और वर्णहानि होती है ।

लोहितीकरण

गाङ्गेरूकी भद्रमुस्ता वटक्षीरन्तथैव च । वटमूलजलं वापि हरिद्राया द्रवस्तथा ॥
समङ्गाक्वथितञ्चैव घनमेभिः सुपेषयेत् । पुटद्वयं त्रयं वापि वितरेद्भिषजां वरः ॥
निश्चान्द्रिकञ्च मृदुलं रक्तोत्पलसमप्रभम् । गगनस्य भवेद्भस्म ततः कार्येषु योजयेत् ॥
(र.त. 10/65-67)

अभ्रक मारक औषधियों के साथ मर्दन कर तथा पुट देकर यदि अभ्रक की भस्म लाल वर्ण (इष्टिका समान) की न हो तो उसे गंगेरन, नागरमोथा आदि औषधियों से भावित कर पुट देते हैं । इससे अभ्रक की लाल रंग की भस्म प्राप्त होती है या बन जाती है । इसे ही लोहितीकरण कहा जाता है ।

सत्वपातन

क्षाराम्लद्रावकैर्युक्तं ध्मातमाकरकोष्ठके । यस्ततो निर्गतः सारः सत्त्वमित्यभिधीयते ॥
(र.र.स. 8/34)

क्षारवर्ग, अम्ल वर्ग तथा द्रावण वर्ग की औषधियों के साथ किसी धातु के खनिज को अथवा अभ्रक, माक्षिक आदि द्रव्य को सत्वपातन कोष्ठी में तीव्र धमन करने से मूल द्रव्य का जो सार भाग प्राप्त होता है उसे सत्व कहते हैं तथा इस प्रक्रिया को सत्वपातन कहते हैं ।

उदाहरण– तुत्थ ($CuSO_4$) का सत्वपातन करने से ताम्र धातु प्राप्त होती है । सत्व निकालने की प्रक्रियां आधुनिक Metal extraction process से साम्यता रखती है ।

Scanned with OKEN Scanner

(र.र.स. 8/57)

जब अग्नि अच्छी प्रकार से प्रज्वलित होकर श्वेत वर्ण के प्रकाश के साथ चमकने लगती है तब उसको शुद्धावर्त कहते है यह समय सत्व के निकलने का होता है।

बीजावर्त

द्राव्यद्रव्यनिभा ज्वाला दृश्यते धमने यदा। द्रावस्योन्मुखता सेयं बीजावर्तः स उच्यते॥

(र.र.स. 8/57)

द्रवित किये जाने वाले द्रव्य के समान ज्वाला दिखने वाला काल उस द्रव्य के द्रवीभवन को बताता है तथा इस काल को बीजावर्त कहते हैं।

द्रुति

औषधाध्मानयोगेन लोहधात्वादिकं तथा । सन्तिष्ठते द्रवाकारं सा द्रुतिः परिकीर्तिता॥

(र.र.स. 8/81)

विशिष्ट औषधियों तथा तीव्र धमन से लोह आदि धातु को द्रव रूप में करने को द्रुति कहा जाता है। यहाँ पर यह बात दृष्टव्य है कि यह द्रुति रूप धातु सामान्य तापक्रम या अवस्था में द्रवित रूप Liquid state में ही रहती है।

द्रुति के लक्षण– पात्र (जिस पात्र में रखी हो) के साथ न लगना, द्रव रूप में (Liquid state) रहना, चमकदार होना, मूल पदार्थ से कम वजन (हल्का) होना तथा पारद से संयोग न हो ये द्रुति के पाँच लक्षण बताये गये हैं। यथा–

निर्लेपत्वं द्रुतत्वं च तेजस्त्वं लघुता तथा । असंयोगश्च सूतेन पञ्चधा द्रुतिलक्षणम्॥

(र.र.स. 8/82)

पारद संस्कार

परिभाषा– संस्कारो हि नाम गुणान्तराधानमुच्यते (च.वि. 1/21/2)

द्रव्य में गुणों का अन्तरधान करने की प्रक्रिया को संस्कार कहते हैं। ये संस्कार विभिन्न विधियों द्वारा किये जाते हैं।

महत्व– प्राकृतिक रूप से प्राप्त पारद में तीन प्रकार के दोष यथा नैसर्गिक योगिक तथा औषाधिक होते हैं। पारद में इनकी उपस्थिति से निर्मित औषधि शरीर में विभिन्न प्रकार के दोष अथवा मृत्यु उत्पन्न करती है। संस्कार के द्वारा इन दोषों को दूर कर पारद को अमृत तुल्य बनाया जाता है। पारद के 18, 19 या 8 संस्कार कहे गये हैं।

अष्टादशैव संस्काराः ऊनविंशतिकाः क्वचित्। सम्प्रोक्ता रसराजस्य वसुसङ्ख्या क्वचिन्मताः॥

(आ.प्र. 1/32)

पारद के अट्ठारह संस्कार

स्यात्स्वेदनं तदनु मर्दन मूर्च्छने च स्यादुत्थितिः पतनरोधनियामनानि।

संदीपनं पत्रसमुद्गमाप्ति उत्थापनं कक्ष्य उत्पतिश्च दीप्तिः॥
बाह्यद्रुतिः गगनग्रासनाम स्यादष्टादशत्वम् पारदकर्म एतत्।
सक्रामणं वेधविधिः शरीरयोगस्तथाऽष्टादशधाऽत्र कर्म॥

(आ.प्र. 1/33-34)

1. स्वेदन	2. मर्दन	3. मूर्च्छन
4. उत्थापन	5. पातन	6. रोधन
7. नियामन	8. दीपन	9. गगन भक्षण मान
10. चारण	11. गर्भद्रुति	12. वाह्य द्रुति
13. जारणा	14. रंजन (राग)	15. सारण
16. क्रामण	17. वेध	18. शरीर योग (भक्षण)

उन्नीस संस्कार

अथोनविंशतिकर्माणि यथा– स्वेदनमर्दनमूर्च्छनोत्थापनपातन बोधननियमनसन्दीपनानुवासन गगनादिग्रासप्रमाणचारणा गर्भद्रुतिबाह्यद्रुति योग जारण रञ्जन सारण क्रामण वेधन भक्षणाख्या ऊनविंशति संस्काराः सूतसिद्धिदा भवन्ति। (आ.प्र. 1/36)

पारद के 19 संस्कार निम्न है जिसके करने से पारद सिद्धि देने वाला हो जाता है–

1. स्वेदन	2. मर्दन	3. मूर्च्छन	4. उत्थापन
5. पातन	6. बोधन या रोधन	7. नियमन	8. दीपन
9. अनुवासन	10. गगन ग्रास मान	11. चारण	12. गर्भद्रुति
13. वाह्य द्रुति	14. जारण	15. रंजन	16. सारण
17. क्रामण	18. वेध	19. भक्षण	

पारद अष्ट संस्कार

स्वेदो मर्दन मूर्च्छनोत्थिति ततः पातोऽपि भेदान्वितो। रोधः संयमनं प्रदीपनमिति स्पष्टाष्टधा संस्कृतिः॥

(रस पद्धति)

1. स्वेदन, 2. मर्दन, 3. मूर्च्छन, 4. उत्थापन, 5. पातन (ऊर्ध्वपातन, अधः पातन एवं तिर्यक पातन), 6. रोधन (बोधन), 7. नियमन, 8. दीपन।

अष्टसंस्कार का वर्गीकरण– अष्ट संस्कारों को 2 भागों में बाँटा जा सकता है–

1. एक से पांच तक के संस्कार शोधन प्रधान है जिससे पारद के विभिन्न दोष दूर होते हैं।
2. छः से आठ तक के संस्कारों द्वारा गुणान्तराधान या वीर्योत्कर्ष होता है।

अष्टसंस्कार में प्रधानतया तीन क्रिया होती है– 1. स्वेदन 2. मर्दन 3. पातन

संस्कार हेतु पारद मान– शास्त्रो में संस्कार हेतु लिये जाने वाले पारद का मान निम्न बताया है–

द्वे सहस्रे पलानां तु सहस्रं शतमेव वा । अष्टाविंशत्पलान्येव दश पञ्चैकमेव वा॥
पलार्धेनैव कर्त्तव्यः संस्कारः सूतकस्य च । सुदिने शुभनक्षत्रे रसशोधनमारभेत्॥

(र.र.स. 11/24-25)

Scanned with OKEN Scanner

संस्कारार्थ काञ्जी निर्माण– पारद के विशेष संस्कारों हेतु काञ्जी की आवश्यकता होती है, जिसकी निर्माण विधि का वर्णन आयुर्वेद प्रकाश में निम्न दिया है–

नानाधान्यैर्यथा प्राप्तैस्तुषवर्जैं र्जलान्वितैः। मृद्भाण्डं पूरितं रक्षेद्यावदम्लत्वामाप्नुयात्॥
तन्मध्ये घनवाऽमुण्डीविष्णुक्रान्तापुनर्नवाः। मीनाक्षी चैव सर्पाक्षी सहदेवी शतावरी॥
त्रिफला गिरिकर्णी च हंसपादी च चित्रकः। समूलकाण्डं पिष्टा तु यथा लाभं विनिक्षिपेत्॥
पूर्वाम्लभाण्डेमध्ये तु धान्याम्लकामिदं भवेत्। स्वेदनादिषु सर्वत्र रसराजस्य योजयेत्॥
अत्यम्लमारनालं वा तदभावे प्रयोजयेत॥ (आ.प्र. 1/37-40)

तुष रहित धान्य जितने प्रकार के मिल सकें उनको एकत्र कर एक जलपूर्ण मिट्टी के पात्र में डाल कर ढक कर रख दें। जब उसमें अम्लत्व आ जाय या घड़े का पानी अम्ल हो जाय तो उसमें नागरमोथा, ब्राह्मी, गोरखमुण्डी, विष्णुक्रान्ता, पुनर्नवा, मीनाक्षी, सर्पाक्षी, सहदेवी, शतावरी, त्रिफला, अपराजिता, हंसपदी तथा चित्रक जितने द्रव्य मिल सकें (आधेसे अधिक होना ही चाहिए) उनके पंचांग को कूट कर उपरोक्त पात्र में डाल कर रख देते हैं। इनके तैयार द्रव धान्याम्ल कहलाता है। इसका उपयोग पारद के स्वेदन आदि संस्कारों में प्रयुक्त करना चाहिए। इसके अभाव में अति अम्ल आरनाल प्रयोग करना चाहिए।

1. स्वेदन

क्षाराम्लैरौषधैर्वाऽपि दोलायन्त्रे स्थितस्य हि। पचनं स्वेदनाख्यं स्यान्मलशौथिल्यकारकम्॥
(र.र.स. 8/59)

पारद को क्षार, अम्ल, औषधियाँ यथा राई, सैन्धव आदि के साथ दोला यन्त्र में पकाने की क्रिया को स्वेदन कहा जाता है। स्वेदन से पारद को मल (दोष) शिथिल हो जाता है।

विधि–

त्र्यूषणं लवणासुर्यौ चित्रकार्द्रकमूलकम्। क्षिप्त्वा सूतो मुहुः स्वेद्यः काञ्जिकेन दिनत्रयम्॥
(र.र.स. 11/26)

त्रिकटु (शुण्ठी, मरिच, पिप्पली छोटी), सैन्धव लवण, राई, चित्रकमूल, आर्द्रक तथा मूली को पारद से प्रत्येक द्रव्य 1/16 मात्रा में ग्रहण कर उसे काञ्जी की सहायता से पीसकर कल्क बना लेते हैं। तत्पश्चात् इस कल्क में रखकर दोलायन्त्र के माध्यम से तीन दिन तक स्वेदन करते हैं।

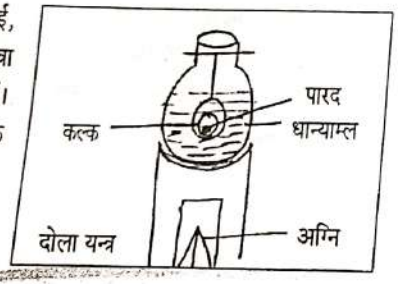

विशेष– ... स्वेदन हेतु ... पोटली ... पुनः ... रख सकते हैं पुनः इसकी सूती कपड़े की मदद से पोटली निर्मित की जा सकती है। धान्याम्ल कम होने पर ऊपर से पुनः और डाल देना चाहिए। स्वेदन पश्चात् पोटली को सावधानी पूर्वक खोलकर पारद का कल्क सहित किसी पात्र में (लौह खल्व में) रखकर गर्म पानी से धोकर प्राप्त करते हैं। शास्त्रों में कल्क की मोटाई एक अंगुल कही गयी है।

2. मर्दन

उदितैरोषधैः सार्धं सर्वाम्लैः काञ्जिकैरपि। पेषणं मर्दनाख्यं स्याद्विहिर्मलविनाशनम्॥
(र.र.स. 8/60)

मर्दन हेतु निर्दिष्ट औषधियों के साथ काञ्जी आदि अम्ल द्रवों के साथ मर्दन या पेषण करने को मर्दन कहा जाता है। मर्दन की प्रक्रिया या संस्कार से पारद के वाह्य मल का नाश या दूर होता है।

मर्दन संस्कार तप्त खल्व यन्त्र में करने का निर्देश दिया गया है।

विधि–

गृहधूमेष्टिकाचूर्णं तथा दधि गुडान्वितम्। लवणासुरिसंयुक्तं क्षिप्त्वा सूतं विमर्दयेत्॥
षोडशांशन्तु तद्द्रव्यं सूतमानान्नियोजयेत्। सूतं क्षिप्त्वा समं तेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत्॥
(र.र.स. 11/27-28)

गृह धूम, ईंट का चूर्ण, दही तथा गुड़, सैन्धव लवण, एवं राई ये प्रत्येक द्रव्य पारद से षोडशांश (1/16) भाग पृथक, पृथक लेकर थोड़ी सी काञ्जी डालकर मर्दन करते है। ऐसा तीन दिन तक करने से पारद का मर्दन संस्कार हो जाता है। पुनः इसे गर्म काञ्जी से धो लेते हैं।

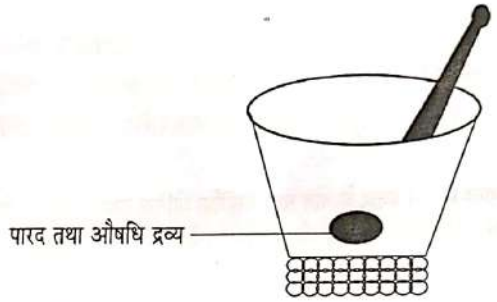

तप्त खल्व यन्त्र (मर्दन संस्कार)

जीर्णाभ्रकं तथा बीजं जीर्णसूतं तथैव च। नैर्मल्यार्थं हि सूतस्य खल्ले धृत्वा विमर्द्दयेत्॥
गृह्णाति निर्मलो रागान् ग्रासे ग्रासे विमर्दितः। मर्दनाख्यं हि यत्कर्म तत् सूतगुणकृद्भवेत्॥
(र.र.स. 11/29-30)

Scanned with OKEN Scanner

उपरोक्त पारद को लेकर उसमें पारद से 1/16 भाग जीर्णाभ्रक, उतना ही शुद्ध स्वर्ण या रजत को पारद में बारी-बारी से डालकर मर्दन करते हैं । ऐसा करने से पारद में अच्छी प्रकार से राग (रंग) उत्पन्न हो जाता है । इस मर्दन कर्म से पारद गुणवान हो जाता है ।

विमर्श– श्लोक संख्या 11/29-30 द्वारा राग ग्रहणार्थ पारद मर्दन की विशेष विधि बताई गयी है जो कि प्रायशः धातुवाद उपयोगी है और इसलिए जीर्णाभ्रक, जीर्ण पारद तथा सुवर्णादि बीज जारित पारद के ग्रास से उपर्युक्त पारद को मर्दन करने का उल्लेख किया गया है ।

3. मूर्च्छन

मर्दनाऽऽदिष्टभैषज्यैर्नष्टपिष्टत्व कारकम् । तन्मूर्च्छनं हि वह्न्यादिभूजकञ्चुकनाशनम् ॥

(र.र.स. 8/61)

इस संस्कार हेतु वर्णित औषधियों के साथ पारद को मर्दन करते हैं । जब पारद नष्ट पिष्ट (अर्थात् अत्यन्त सक्ष्म) हो जाय तो इसे मूर्च्छन संस्कार कहा जाता है । मूर्च्छन संस्कार से पारद के वह्न्यादि भू सम्पर्कजन्य कंचुक दोष नष्ट हो जाते हैं ।

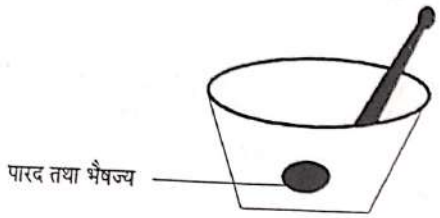

मूर्च्छन संस्कार

नष्ट पिष्ट लक्षण

स्वरूपस्य विनाशेन पिष्टत्वाद्बन्धनं हि यत् ।विद्वद्भिर्निर्जितः सूतो नष्टपिष्टिः स उच्यते ॥

(र.र.स. 8/63)

उपर्युक्त औषधियों के साथ पारद को मर्दन कर उसके मूल स्वरूप अर्थात् चांचल्य आदि दर करने को नष्ट पिष्टि कहा जाता है ।

विधि–

गृहकन्या मलं हन्यात् त्रिफला बह्निनाशिनी । चित्रमूलं विषं हन्ति तस्मादेभिः प्रयत्नतः ॥
मिश्रितं सूतकं द्रव्यैः सप्तवाराणि मूर्च्छयेत् । इत्थं सम्मूर्च्छितः सूतो दोषशून्यः प्रजायते ॥

(र.र.स. 11/31-32)

घृतकुमारी मलदोष को, त्रिफला अग्नि दोष तथा चित्रकमूल से विष दोष का नाश होता है। अतः उपरोक्त द्रव्यों से पारद को मिश्रित कर प्रयत्न पूर्वक मर्दन करना चाहिए । अर्थात् इन तीनों औषधियों के साथ पारद को तप्त खल्व यन्त्र में नष्ट पिष्ट होने तक मर्दन करना चाहिए पुनः उष्ण काञ्ज से प्रक्षालन करना चाहिए । ऐसा सातबार करने से पारद दोषों से मुक्त हो जाता है ।

विमर्श– प्रथम परिभाषा प्रकरण में मूर्च्छन संस्कार से वह्न्यादि भूज कंचुक दोष का नाश तथा यहाँ पर पारद में स्थित विष, वह्नि तथा मल दोषों के दूर होने का उल्लेख किया गया है । यहाँ पर प्रत्येक द्रव्य को पारद का 1/16 भाग लेना चाहिए । विद्वानों के अनुसार सात बार मूर्च्छन की प्रक्रिया धातुवाद के लिए है रसवाद के लिए नहीं । आयुर्वेद प्रकाश की टीका में इस संस्कार हेतु किन्नर यन्त्र का उपयोग का वर्णन किया गया है । तथा इस ग्रन्थ में मूर्च्छन संस्कार द्वारा सप्त कंचुक दोष के नाश होने का उल्लेख किया गया है।

4. उत्थापन

स्वेदातपादियोगेन स्वरूपापादनं हि यत् । तदुत्थापनमित्युक्तं मूर्च्छाव्यापत्तिनाशनम् ॥

(र.र.स. 8/62)

काञ्जी आदि के द्वारा स्वेदन या धूप के संयोग से पारद को पुनः अपने स्वरूप (नष्ट पिष्ट स्वरूप से) में लाने वाले संस्कार को उत्थापन संस्कार कहा जाता है । उत्थापन संस्कार पारद के मूर्च्छादोष को दूर करता है ।

अस्माद्विरेकात्संशुद्धो रसः पात्यस्ततः परम् । उद्धतः काञ्जिकक्वाथात्पूतिदोषनिवृत्तये ॥

(र.र.स. 11/33)

मूर्च्छित पारद को नष्ट पिष्ट अवस्था में यन्त्र (डमरू यन्त्र) द्वारा ऊर्ध्वपतित करके पुनः पारद को प्राप्त कर उसे उष्ण काञ्जी से प्रक्षालन कर लेते है । इससे नाग दोष दूर हो जाता है । आयुर्वेद प्रकाश में उष्ण जल प्रक्षालन या पातन यन्त्र से भी इस संस्कार को करने का निर्देश है–

जलैः सोष्णारनालैर्वा क्षालनादुत्थितो भवेत् । अथवा पातनायन्त्रे पातनादुत्थितो भवेत् ॥

(आ.प्र. 1/67)

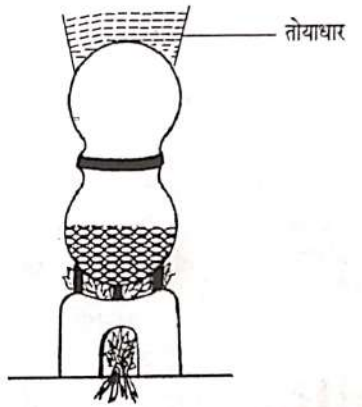

पातना यन्त्र (उत्थापन संस्कार)

Scanned with OKEN Scanner

5. पातन

उक्तौषधैर्मर्दितपारदस्य यन्त्रस्थितस्योर्ध्वमधश्च तिर्यक्।
निर्यातनं पातनसंज्ञयुक्तं वङ्गाहिसम्पर्कजकञ्चुकघ्नम्॥ (र.र.स. 8/64)

पातन प्रक्रिया हेतु निर्देशित औषधियों के साथ पारद को मर्दन कर उसे तत् यन्त्रों की सहायता से पतित करने के (ऊर्ध्व, अधः या तिर्यक्) कर्म को पातन कहा जाता है। इस संस्कार से वङ्ग आदि सम्पर्क जन्य कञ्चुक दोष नष्ट हो जाते हैं। पातन संस्कार के तीन भेद कहे गये हैं–

1. ऊर्ध्वपातन, 2. अधःपातन, 3. तिर्यक् पातन।

1. ऊर्ध्वपातन

ताम्रेण पिष्टिकां कृत्वा पातयेदूर्ध्वभाजने। वङ्गनागौ परित्यज्य शुद्धो भवति सूतकः॥
शुल्वेन पातयेत्पिष्टिं त्रिधोर्ध्वं सप्तधा त्वधः॥ (र.र.स. 11/34-35)

पारद को ताम्र के साथ पिष्टी बनाकर उस पिष्टी को ऊर्ध्व पातन यन्त्र की सहायता से उड़ाकर पारद को प्राप्त कर लेते हैं। इस ऊर्ध्व पातन से पारद, नाग तथा वङ्ग दोष से दूर हो जाता है। इस प्रकार की पिष्टी से ऊर्ध्व पातन तीन बार तथा अधःपातन सात बार करना चाहिए।

विमर्श– ग्रन्थों में विभिन्न प्रकार की प्रक्रिया के दौरान पारद की अन्य धातुओं जैसे– स्वर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वङ्ग आदि के साथ पिष्टी बनाने का उल्लेख होता है। यह पिष्टी Amalgam होती है जिसे धातुओं यथा स्वर्ण आदि को पहले पिघलाकर पुनः पारद मिलाकर मर्दन करने के उपरान्त निर्मित हो जाती है। उपरोक्त वर्णन में पारद तथा ताम्र की मात्रा तथा अग्नि समय आदि का वर्णन नहीं है। आयुर्वेद प्रकाश में पारद तथा ताम्र 3:1 मात्रा में लेकर पिष्टी निर्माण का उल्लेख है। अग्नि चार प्रहर अर्थात् 12 घंटे तक देने का उल्लेख है। यन्त्र, जैसे अर्ध्वपातन यन्त्र, डमरू यन्त्र से करने का वर्णन किया गया है।

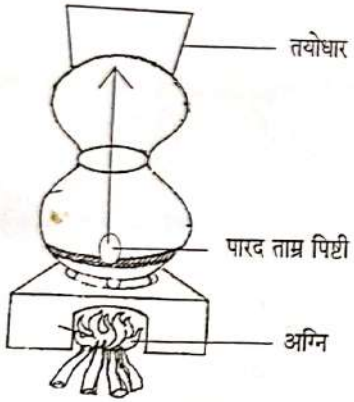

ऊर्ध्वपातन

2. अधःपातन–

त्रिफलाशिग्रुशिखिभिर्लवणासुरिसंयुतैः। नष्टपिष्टं रसं कृत्वा लेपयेच्चोर्ध्वभाजने॥
ततो दीप्तैरधःपातमुत्पलैस्तत्र कारयेत्॥ (र.र.स. 11/36)

त्रिफला (हरीतकी, विभीतकी तथा आमलकी), सहिज, शिखि (चित्रक), सन्धव लवण तथा [illegible]
पृथक पारद से 1/16 भाग लेकर उस नष्ट पिष्ट कर ऊर्ध्वपात्र से लेप कर देते हैं। तत्पश्चात् इसके ऊपर कण्डे जला देते हैं। इससे पारद का अधःपातन हो जाता है।

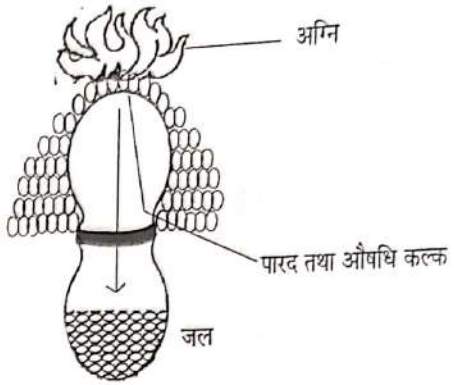

विमर्श– जिस पात्र में पारद प्राप्त होगा उसमें कुछ मतानुसार पानी भर देना चाहिए या पात्र के चारों तरफ बाहर पानी डालकर उसे कीचड़नुमा कर देना चाहिए। ग्रन्थों में अग्नि हेतु कुक्कुट पुट का उल्लेख किया गया है। या पारद प्रमाण अनुसार अग्नि का प्रयोग या कम से कम 20 उपलों का प्रयोग करना चाहिए। मर्दन हेतु एक दिन के समय का वर्णन प्राप्त होता है। अधःपातन हेतु अधः पातन यन्त्र, दीपिका यन्त्र का उल्लेख है।

3. तिर्यक पातनम्

तिर्यक्पातनविधिना निपातितः सूतराजस्तु। श्लक्ष्णीकृतमभ्रदलं रसेन्द्रयुक्तं तथाऽऽरनालेन॥
खल्वे दत्त्वा मृदितं यावत्तन्नष्टपिष्टतामेति। कुर्यात्तिर्यक्पातनपातितसूतं क्रमेण दृढवह्निम्॥
संस्वेद्यः पात्योऽसौ न पतति यावद् दृढश्चाग्नौ। तदाऽसौ शुद्ध्यते सूतः कर्मकारी भवेद्ध्रुवम्॥
(र.र.स. 11/41-43)

पारद से 1/4 भाग धान्याभ्रक लेकर आरनाल की सहायता से मर्दन कर उसे नष्ट पिष्ट कर लेते हैं। तत्पश्चात् इसे तिर्यक पातन विधि (यन्त्र) द्वारा क्रमशः मृदु, मध्य तथा तीव्र आग्नि देकर इसे उड़ा देते हैं। प्राप्त पारद का पुनः स्वेदन करते है तथा फिर तिर्यक् पातन करते हैं। इस दोनों प्रक्रिया को तब तक करते हैं जब तक कि पारद तीव्र अग्नि पर न उड़े अर्थात् स्थिर हो जाय। उपरोक्त विधि द्वारा पारद शुद्ध होकर अत्यन्त उपयोगी हो जाता है।

तिर्यक संस्कार

विमर्श– स्वेदन हेतु यहाँ पर त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, घृतकुमारी, लसुन कल्क तथा तुषाम्बु का प्रयोग किया जाता है। उपरोक्त संस्कारों अर्थात् मर्दन मूर्च्छन तथा पातन से पारद में शान्ति आ जाती है। यथा–

Scanned with OKEN Scanner

मर्दनैर्मूच्छर्नैः पातैर्मन्दः शान्तो भवेद्रसः ॥ (र.र.स. 11/44)

6. रोधन (बोधन)

जलसैन्धवयुक्तस्य रसस्य दिवसत्रयम् । स्थितिरास्थापनी कुम्भैयाऽसौ रोधनमुच्यते ॥
(र.र.स. 8/65)

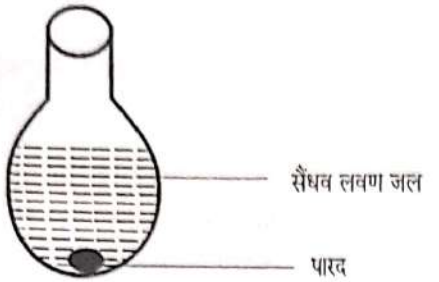

बोधन संस्कार

मिट्टी के घड़े में सैन्धव लवण एवं जल को रखकर पुनः इसमें पारद डालकर 3 दिन तक रखने की प्रक्रिया को रोधन कहा जाता है । इस संस्कार से पारद पुनः वीर्यवान या अपने पूर्व की स्थिति में स्थापित हो जाता है (आ जाता है) ।

आयुर्वेद प्रकाश अनुसार

एवं कदर्थितः सूतः षण्ढत्वमधिगच्छति । मुक्तये क्रियते तस्य बोधनं कथ्यते हि तत् ॥
(आ.प्र. 1/86)

पूर्व के संस्कारों (स्वेदन, मर्दन, पातनदि से) से पारद नपुंसक हो जाता है उस दोष को दूर करने हेतु बोधन संस्कार करना आवश्यक होता है ।

विधि–

विश्वामित्रकपाले वा काचकूप्यामथापि वा । सृष्टयम्बुजं विनिक्षिप्य तत्र तन्मज्जनावधि ॥
पूरयोत्त्रिदनं भूम्यां राजहस्त प्रमाणतः । अनेन सूतराजोऽयं षण्डभावं विमुञ्चति ॥
(आ.प्र. 1/88-89)

नारियल के खपरे या काच कूपी में सृष्टि अम्बुज भरकर उसमें भलीभाँति प्रकार से पारद को डुबोकर पुनः उस पात्र को राजहस्त प्रमाण के गड्ढे में रखकर तीन दिन छोड़ देते हैं । इससे पारद षण्डत्व से मुक्त हो जाता है ।

विमर्श– सृष्ट अम्बुज के विषय में मतान्तर है । आचार्य माधव श्री ने इसे स्त्री रज (आर्तव) कहा है । कुछ लोग मूत्र, शुक्र तथा आर्तव का ग्रहण करते हैं । कुछ अन्य आचार्य इसे सैन्धव जल मानते हैं । कुछ अन्य इसे गाय, बकरी या भेड़, मनुष्य तथा स्त्री के मूत्र, शुक्र तथा शोणित लेते हैं । कुछ आचार्य 7 दिन या 21 दिन तक रखने का निर्देश करते हैं ।

7. नियमन (नियामन)

रोधनाल्लब्धवीर्यस्य चपलत्वनिवृत्तये । क्रियते पारदे स्वेदः प्रोक्तं नियमनं हि तत् ॥
(र.र.स. 8/66)

रोधन संस्कार पश्चात् पारद के वीर्योत्कर्ष हो जाने के कारण पारद पुनः चपल हो जाता है । पारद के इस चंचलत्व को नियन्त्रित करने के हेतु से पारद को स्वेदित किया जाता है । इसे ही नियमन संस्कार कहते हैं ।

नियम संस्कार

विधि–

नियम्योऽसौ ततः सम्यक् चपलत्वनिवृत्तये ।
कर्कोटीफणिनेत्राभ्यां वृश्चिकाम्बुजमार्कवैः ॥
समं कृत्वाऽऽरनालेन स्वेदयेच्च दिनत्रयम् ॥
(र.र.स. 11/46)

कर्कोटी (ककोड़ा), सर्पाक्षी, वृश्चिक, सैन्धव लवण, भृंगराज (पारद से षोडशांश मात्रा में लेकर) को आरनाल की मदद से कल्क बनाकर इस कल्क में पारद को रखकर स्वेदन करने से पारद का नियमन संस्कार हो जाता है ।

8. दीपन

धातुपाषाणमूलार्द्यैः संयुक्तो घटमध्यगः । ग्रासार्थे त्रिदिनं स्वेदो दीपनं तन्मतं बुधैः ॥
(र.र.स. 8/67)

धातु जैसे ताम्र आदि, खनिज पाषाण (टंकण आदि) मूल (शिग्रु आदि) को मिश्रित कर घड़े में रखकर काञ्जी की मदद से पारद तो तीन दिन तक स्वेदन करने से दीपन संस्कार होता है । दीपन संस्कार से पारद ग्रासार्थी अर्थात् ग्रास को जीर्ण (जारण) करने योग्य हो जाता है ।

विधि–

त्रिक्षारसिन्धुखगभूशिखिशिग्रुराजीतीक्ष्णाम्लवेतसमुखैर्लवणोषणाम्लैः ।
नेपालताम्रदलशोषितमारनाले साम्लासवाम्लपुटितं रसदीपनं तत् ॥
(र.र.स. 11/48-49)

नेपाली ताम्र (ताम्र का एक भेद) पर यवक्षार, सज्जीक्षार तथा टंकण, सैन्धव लवण, केंचुए, चित्रक, सहिजन, राई छोटी पिप्पली तथा अम्लवेत आदि लवण तथा अम्ल पदार्थों का कल्क आरनाल की मदद से बनाकर लेपकर उसे सुखा लेते हैं । तत्पश्चात् इन पत्रों को काञ्जी वाली हांडी में रखकर ढक देते हैं जिससे यह अत्यन्त खट्टी हो जाती है । फिर इसमें पारद को रखने से (स्वेदन करने से) दीपन संस्कार होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

पारद अष्ट संस्कार

संस्कार	पारद पर प्रभाव	कर्म	यन्त्र	प्रयुक्त औषधि	समय
1. स्वेदन	मल शैथिल्य कर	स्वेदन	दोलायन्त्र	त्रिकटु, सैन्धव लवण, राई	3 दिन
2. मर्दन	कफिमल नाशक	मर्दन	तालखल्व यन्त्र	गृहधूम, ईटचूर्ण, दही, गुड़ लवण, राई	3 दिन
3. मूर्च्छन	वैस्त्रसिक दोषनाशक (त्रिदोष, कृमि तथा मल)	मर्दन	खल्व यन्त्र	घृतकुमारी, त्रिफला, चित्रकमूल	नष्ट पिष्ट होने तक
4. उत्थापन	मूर्तिदोषनाशक	प्रक्षालन एंव पातन	ऊर्ध्व पातन यन्त्र डमरू यन्त्र	काञ्जी	ऊर्ध्व पातित होने तक
5. पातन 1. ऊर्ध्वपातन 2. अधःपातन 3. तिर्यक पातन	वर्ग नागदोष रहित सम्पर्क जन्य काञ्जुक दोष रहित	ऊर्ध्वपातन अधः पातन तिर्यक् पातन	ऊर्ध्वपातन यन्त्र अधः पातन यन्त्र तिर्यक् पातन यन्त्र	ताम्र पिष्टी त्रिफला, शिग्रु, चित्रक, लवण राई धान्याभ्रक, आरनाल	
6. रोधन	षडत्वनाशक	द्रव में स्थापन	कपाल/काँच कूपी विश्वामित्र	सृष्टआम्बुज	3 दिन
7. नियमन	चपल निवृति	स्वेदन	दोला यन्त्र	कर्कोटी, फणिनेत्र, वृश्चिक अम्बुज, भृंगराज, आरनाल	3 दिन
8. दीपन	प्रासार्थी	स्वेदन	दोला यन्त्र	त्रिक्षार, सैन्धव, केचुआ, चित्रक सहिजन, राई, पिप्पली, अम्लवेत नेपाली ताम्र, आरनाल	3 दिन

जारणा

जारणा पारद का 13वाँ संस्कार है । पारद के अष्ट संस्कार करने के पश्चात् निम्न संस्कार क्रम से किये जाते हैं–

1. गगन ग्रास मान– पारद को खिलाने हेतु/जीर्ण करने हेतु अभ्रक आदि ग्रास की मात्रा को निश्चित करना ।
2. संचारणा– ग्रास को पारद में डालना ही संचारणा/चारण कहा जाता है ।
3. गर्भद्रुति– पारद में ग्रास को डालकर द्रवित करना ।
4. बाह्य द्रुति– बाहर से ग्रास को द्रवित करना उसे पारद में डालना ।
5. जारणा– ग्रास को जीर्ण करना ही जारण/जारणा कहा जाता है ।

इस प्रकार ग्रास मान को निर्धारित कर पुनः उसे द्रवित कर पारद में जीर्ण कराना ही जारणा कही जाती है ।

परिभाषा

द्रुतग्रास परिणामो विडयन्त्रादियोगतः । जारणात्युच्यते तस्य प्रकाराः सन्ति कोटिशः ॥

(र.र.स. 8/79)

विड तथा यन्त्र (कच्छप यन्त्र, जारणा यन्त्र आदि) की मदद से द्रुत ग्रास, चाहे वह बाह्य द्रुति या गर्भ द्रुति के माध्यम से हो, को पारद में पाचन करना (परिणाम) ही जारणा कहलाता है ।

जारणा लक्षण

जारणा हि नाम पातन गालन व्यतिरेकेण ग्रस्त घन हेमादिरसस्य पूर्वावस्थाप्रतिपन्नत्वम् ॥

(आ.प्र. 1/107)

पातन तथा गालन के व्यतिरेक (आगे बढ़ जाना) अर्थात् यदि पातन तथा गालन प्रक्रिया प्रयोग की जाय तब भी पारद में ग्रसित अभ्रक हेम (स्वर्ण आदि) बीज पारद से पृथक न हो तथा पारद अपने पूर्वावस्था अर्थात् जितनी मात्रा (भार) में लिया गया हो उतनी ही मात्रा में रहे तब ऐसी स्थिति का जारणा कहा जाता है ।

जारणा क्रम

रसचिन्तामणि में जारणा क्रम निम्न वर्णित किया गया है–

गन्धकं जारयेत्पूर्व यन्त्रे कच्छप संज्ञके । पश्चाद्वै जारयेद् व्योम हेम प्रभृति यद्भवेत ॥
पश्चान्नागादयः सर्वे जार्यन्ते रत्नसंकराः । क्रमोऽयं विद्यते सर्वजारणासु न संशयः ॥
बिना गन्धेन ये मर्त्याः कुरूते धातुजारणाः । न सुधा जायते सूते जरयन्ति न धातवः ॥
तस्माद्गन्धः पुरा जार्यः सूतवह्निविवृद्धये ॥ (र.चि. 5/70-72)

सर्वप्रथम कच्छप यन्त्र की मदद से पारद में गन्धक का जारण करना चाहिए । इसके पश्चात् अभ्रक, स्वर्णमाक्षिक सत्व, इसके पश्चात् हेम इसके अनन्तर नाग तथा रत्नों का जारण करना चाहिए। यही जारण क्रम है । गन्धक जारणा के बिना पारद में क्षुधा अर्थात् पचाने की शक्ति नहीं उत्पन्न होती है और ऐसी स्थिति अर्थात् गन्धक जारण से पूर्व धातु आदि का जारणा करने से जारणा नहीं हो पाती है । इसलिए पारद की अग्नि वृद्धि हेतु सर्वप्रथम गन्धक का जारण करना चाहिए ।

जारणा के भेद

ग्रासस्य चारणं गर्भे द्रावणं जारणं तथा । इति त्रिरूपा निर्दिष्टा जारणा वरवार्तिकैः ॥
ग्रासः पिण्डः परिणामस्तित्रश्चाख्याः पराः पुनः । समुखा निर्मुखा चेति जारणा द्विविधा पुनः ॥

(र.र.स. 8/69-71)

ग्रास को पारद में डालना, फिर उसे द्रवीभूत करना एवं उसे पारद से पूर्णरूप से विलीन करना ये तीन क्रम (रूप) रसाचार्यों ने जारणा हेतु कहा है । इन्हे क्रमशः ग्रास, पिण्ड तथा परिणाम भी कहा जाता है ।

ग्रास चारण → गर्भ द्रावण → जारण

↓ ↓ ↓

ग्रास पिण्ड परिणाम

समुख जारणा तथा निर्मुख जारणा, जारणा के 2 भेद है ।

Scanned with OKEN Scanner

जारणा के विभिन्न भेद निम्न प्रदर्शित है–

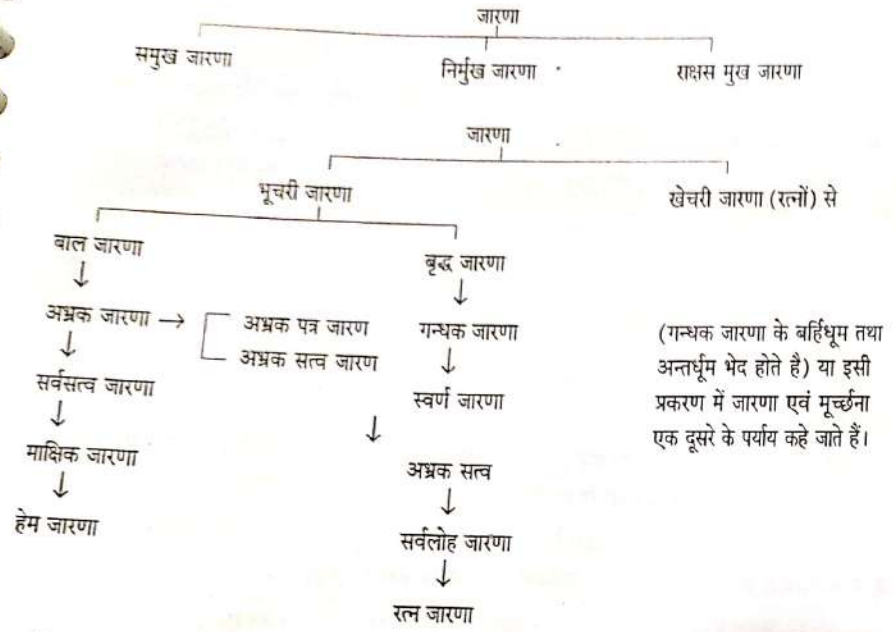

(गन्धक जारणा के बर्हिधूम तथा अन्तर्धूम भेद होते है) या इसी प्रकरण में जारणा एवं मूर्च्छना एक दूसरे के पर्याय कहे जाते हैं।

मूर्च्छना

मूर्च्छना का वर्णन निम्न शीर्षक के अन्तर्गत किया जा रहा है–

1. परिभाषा, 2. लक्षण,
3. भेद

1. मूर्च्छना परिभाषा–

अव्यभिचरितव्याधिधतकत्वं मूर्च्छना। (आ.प्र. 1/137)

तत्तद्विधिप्रभेदेन रसस्याव्यभिचारतः। व्याधिघातकता या स्यात् सा मता मूर्च्छना बुधैः॥

(र.त. 6/1)

गन्धक के संयोग से या बिना गन्धक के योग से ही पारद में निश्चित व्याधि नाशक शक्ति उत्पन्न करने को मूर्च्छना कहा जाता है।

वक्तव्य– पारद की विभिन्न प्रकार की अवस्थायें विभिन्न प्रकार के फल को प्रदान करती है जो निम्न है–

1. मृत पारद– अमर करता है।

2. बद्ध पारद– खेचरीगति देता है।

3. मूर्च्छित पारद– रोग नाश करता है।

पारद के पूर्व रूप (द्रव रूप) से रूपान्तर (रस सिन्दूर आदि कठिन रूप ठोस रूप) होने को कुछ लोग मूर्च्छना से ग्रहण करने का निर्देश करते हैं।

2. मूर्च्छित लक्षण–

कज्जलाभो यदा सूतो विहाय घनचापलम्। मूर्च्छितस्तु तदा ज्ञेयो नानावर्णोऽपि च क्वचित्॥

(आ.प्र. 1/385)

पारद अपने घन एवं चपलता को छोड़कर काजल समान हो जाय तो उसे मूर्च्छित कहा जाता है। कहीं-कहीं पर काजल वर्ण से भिन्न वर्ण का भी हो सकता है। मूर्च्छना भस्म से भिन्न होते हुए भी रस भक्षण योग्य कर्म करती है। इसका फल यह है कि यह (मूर्च्छना) निश्चित व्याधिनाशक होती है। यद्यपि मूर्च्छना तथा जारणा को आचार्य माधव ने पर्याय रूप कहा है। फिर भी दोनों में निम्न अन्तर दिया गया है–

पूर्वावस्थाप्रतिपन्नात्वं जारण तथा मूर्च्छनायन्तु न पूर्वावस्थाप्रतिपन्नतेति। (र.त. टीका 6/1)

अर्थात् जारणा में पारद की पूर्वावस्था प्रतिपन्न (उपलब्ध) रहती है जबकि मूर्च्छना में पारद की पूर्वावस्था उपलब्ध नहीं रहती है।

3. मूर्च्छना भेद–

निर्गन्धा च सगन्धा च मूर्च्छना द्विविधा मता। निर्गन्धा गन्धरहिता सगन्धा गन्धसंयुता॥
निर्गन्धा रसपुष्पदौ मूर्च्छना परिकीर्तिता। सगन्धा तु विशेषेण रससिन्दूरकादिषु॥

(र.त. 6/2-3)

मूर्च्छना गन्धक सहित या सगन्ध तथा गन्धक रहित या निर्गन्ध भेद से 2 प्रकार की होती है। निर्गन्ध मूर्च्छना का उदाहरण रस पुष्प तथा सगन्ध मूर्च्छना का उदाहरण रससिन्दूर है।

सगन्ध मूर्च्छना तीन प्रकार की होती है–

1. बर्हिधूम– यथा रस सिन्दूर
2. अन्तर्धूम– यथा रस सिन्दूर
3. निर्धूम– यथा कज्जली

बर्हिधूम तथा अन्तर्धूम परिभाषा

जीर्णगन्धे तु यत्कूपीवक्त्ररोधनपूर्वकम्। पाचनं मूर्च्छना सा तु बहिर्धूमाभिधा मता॥

(र.त. 6/6)

गन्धक के जीर्ण हो जाने पर कूपी के मुख में डाट लगाकर निर्मित किये गये रससिन्दूर आदि को बर्हिधूम मूर्च्छना कहते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

निरूह्यारम्भतः कूपी मुखं यद्गन्धजारणम् । मूर्च्छना सा भिषग्वर्यैरन्तर्धूमाभिधा मता ॥

(र.त. 6/5)

कूपी के मुख को प्रारम्भ से ही बन्द कर जो गन्धक जारण पश्चात् रस सिन्दूर का निर्माण किया जाता है उसे अन्तर्धूम मूर्च्छना कहते हैं। आयुर्वेद प्रकाश में मूर्च्छना के पाँच भेदों का भी वर्णन किया गया है।

यद्या त्रिविधाऽपि केवलं गन्धपिष्टिगन्धबद्धगन्धजीर्ण रसगन्ध कज्जली धातु पिष्टिभेदेन पञ्चधा। धातु पिष्टिश्च कनक रजत शुल्व घनसत्त्व कालायस प्रभेदैः पञ्चधा ॥ (आ.प्र. 1/137)

मूर्च्छना के पाँच भेद हैं–

1. गन्धपिष्टि
2. गन्ध बद्ध– रस पर्पटी
3. गन्ध जीर्ण– पूर्ण चन्द्रोदय
4. रसगन्ध कज्जली
5. धातुपिष्टि– स्वर्ण, रजत, ताम्र, अभ्रक सत्व एवं काल लोह

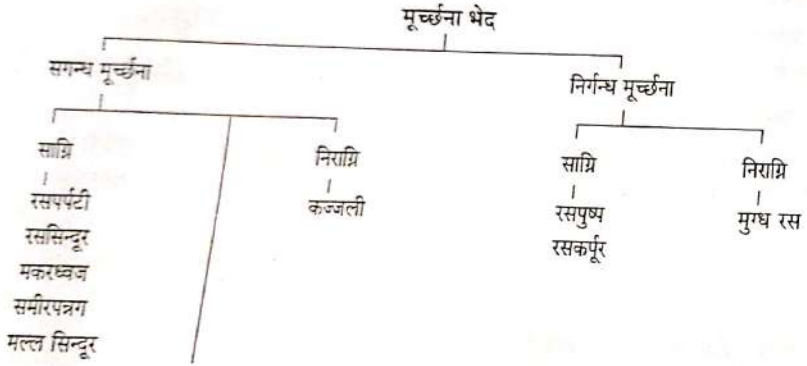

1. बर्हिधूम, 2. अन्तर्धूम, 3. निर्धूम

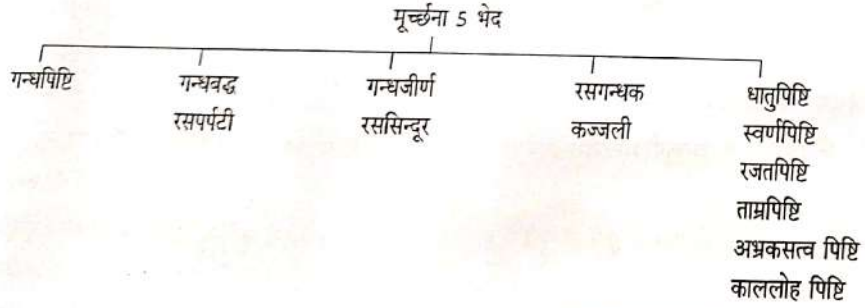

रस मूर्च्छित औषधियों के प्रकार

पर्पटी	कूपीपक्व	खरलीय	पोट्टली
रसपर्पटी	रससिन्दूर	त्रिभुवन कीर्ति	रसगर्भ
आदि	आदि	कज्जली आदि	हेमगर्भ पोट्टली आदि

मूर्च्छन एवं मूर्च्छना में अन्तर

मूर्च्छन	मूर्च्छना
1. यह पारद का तीसरा संस्कार है। जिससे पारद के नैसर्गिक दोष नष्ट होते हैं।	यह पारद की एक विशेष प्रक्रिया है जिसके द्वारा पारद में निश्चित व्याधिनाशक शक्ति उत्पन्न होती है।
2. इसमें पारद नष्ट पिष्ट हो जाता है।	इसमें पारद कज्जल आभा वाला हो जाता है।
3. इसका कोई भेद नहीं होता है।	सगन्ध, निर्गन्ध आदि भेद होते हैं।

पारद बन्ध

पञ्चविंशतिसङ्ख्याकान् रसबन्धान् प्रचक्ष्महे । येन येन हि चाञ्चल्यं दुर्ग्रहत्वं च नश्यति ॥
रसराजस्य सम्प्रोक्तो बन्धनार्थो हि वार्तिकैः ॥ (र.र.स. 11/59-60)

पारद के 25 प्रकार के बन्धों को कहते हैं। जिस-जिस विधि से पारद के चंचलत्व तथा दुर्ग्रहत्व का नाश होता है या किया जाता है, उस प्रक्रिया को रस शास्त्रियों ने बन्धन से कहा है।

रसबन्ध नाम

हठारोटौ तथाऽऽभासः क्रियाहीनश्च पिष्टिका । क्षारः खोटश्च पोटश्च कल्कबन्धश्च कज्जलिः ॥
सजीवश्चैव निर्जीवो निर्बीजश्च सबीजकः । शृङ्खलाद्रुतिबन्धौ च बालकश्च कुमारकः ॥
तरुणश्च तथा वृद्धो मूर्तिबद्धस्तथाऽपरः । जलबन्धोऽग्निबन्धश्च सुसंस्कृतकृताभिधः ।
महाबन्धाभिधश्चेति पञ्चविंशतिरीरिताः ॥ (र.र.स. 11/61-63)

पारद के 25 बन्ध निम्न है–

1. हठ	7. खोट	13. सबीज	19. तरूण
2. आरोट	8. पोट	14. निर्बीज	20. वृद्ध
3. आभास	9. कल्क	15. शृंखला	21. मूर्ति
4. क्रियाहीन	10. कज्जली	16. द्रुति	22. जल
5. पिष्टिका	11. सजीव	17. बालक	23. अग्नि
6. क्षार	12. निर्जीव	18. कुमार	24. सुसंस्कृत
			25. महाबन्ध

Scanned with OKEN Scanner

पारद बन्ध, बन्ध विधि तथा प्रभाव

क्रम सं.	बन्ध	विधि	प्रभाव
1.	हठ	बिना पारद शोधन के	सेवन से व्याधि
2.	आरोट	सम्यक् शोधन उपरान्त	शीघ्र व्याधि नाशक
3.	आभास	धातु+मूल संयोग से	गुणवैकृते
4.	क्रियाहीन	अशुद्ध लोह से	अपथ्य सेवन से व्याधि
5.	पिष्टिका	गन्धक से	दीपन पाचन
6.	क्षार	शंख शुक्ति आदि क्षारीय द्रव्य से	दीप्ति पुष्टि शूलनाशक
7.	खोट		सर्वरोगनाशक
8.	पोट	गन्धक संयोग से	बालआदि के सर्वरोग में
9.	कल्क	स्वेदन आदि संस्कार उपरान्त कल्क सदृश	योगोक्त फलदायक
10.	कज्जली	गन्धक योग से	योग अनुसार फलदायक
11.	सजीव	भस्मीकृत	जराव्याधि नाशक
12.	निर्जीव	अभ्रक या गन्धक जीर्ण	रोगनाशक
13.	निर्बीज	1/4 स्वर्णजारण से+गन्धक योग	सकलरोग नाशक
14.	सबीज	अभ्रकसत्व, स्वर्ण रजत, ताम्र, कान्तलौह +6 गुना गन्धक	विपुल प्रभाव
15.	शृंखला	वज्रादिरत्नों से	विचित्र प्रभाव
16.	द्रुति	वाह्यद्रुति करके	असाध्यरोग नाशक
17.	बालक	समभाग अभ्रक जीर्ण से	रसायन
18.	कुमार	द्विगुण अभ्रजीर्ण	संघातधाती एवं रसायन
19.	तरूण	4 गुना अभ्रक जीर्ण	रसायन
20.	वृद्ध	6 गुना अभ्रक जीर्ण	देह एवं लोहवाद
21.	मूर्ति	दिव्यौषधियों से	सर्वयोग में
22.	जल	शिलातोय आदि	जरा एवं मृत्युनाशक
23.	अग्नि	पारद से ही	खेचरत्व देने वाला
24.	सुसंस्कृत	विषणुक्रान्ता आदि औषधियों से	रसायन
25.	महाबन्ध	स्वर्ण, रजत आदि	विभिन्न गुणयुक्त, रसायन

5. प्रमाणीकरण परिभाषा

ग्राह्य अग्राहयत्व

ग्राह्य लक्षण से तात्पर्य ऐसे गुणों से है जो कि द्रव्य को औषधीय कार्य के निमित्त प्रयोग किये जाने हेतु आवश्यक होता है । यदि ऐसे लक्षण द्रव्य में उपस्थित है तो उसे औषधि निर्माण/संस्कार हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है । प्रायः करके सभी रसशास्त्रीय द्रव्यों के ग्राह्य लक्षण (Acceptable quality) का वर्णन रसशास्त्रीय ग्रन्थों में किया गया है । पारद के ग्राह्य लक्षण का वर्णन निम्न है–

अन्तः सुनीलो वहिरूज्ज्वलो यो मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः । योज्योऽथ.....॥ (आ.प्र. 1/139)

ऐसा पारद जिसके अन्दर नीलवर्ण की आभा तथा परिच्छाया स्पष्ट रूप से दिखाई दे जिससे पारद में एक तरह से प्रतिबिम्ब ग्राहिता शक्ति दिखाई दे तथा बाहर से उज्जवल, निर्मल एवं श्वेत तथा दोपहर के सूर्य के समान तेजस्वी पारद को शोधन आदि रस कार्य हेतु प्रयोग करना चाहिए ।

अग्राह्य लक्षण

इन लक्षणों वाले द्रव्य को औषधि कार्य हेतु नहीं लिया जाता है। उदाहरणार्थ- पारद के अग्राह्य लक्षण निम्न है।

धूम्रःपरिपाण्डुरश्च चित्रों न योज्यो रसकर्म सिद्धयै ॥ (आ.प्र. 1/139)

धूम (कृष्ण लोहित वर्ण), पीत संवलित शुक्ल वर्ण तथा चित्र (कर्बुर) वर्ण का पारद रसकर्म हेतु नहीं प्रयोग करना चाहिए ।

सिद्धि लक्षण

किसी भी कल्पना के सिद्धि लक्षण उस कल्पना के पूर्ण होने के लक्षण होते हैं अर्थात् वह कल्पना प्रयुक्त औषधियों के रस, गन्ध तथा वर्ण से युक्त अन्य हो गई है तथा इसे अब चिकित्सार्थ प्रयुक्त किया जा सकता है।

उदाहरणार्थ अवलेह के सिद्धि लक्षण तन्तुमत, अप्सुमज्जन, स्थिरत्वं, पीड़िते मुद्रा तथा गन्ध वर्ण एवं रस की उत्पत्ति का होना है।

भस्म परीक्षा

रसशास्त्र में भस्म ठीक प्रकार से बन गई है उसकी परीक्षा हेतु विभिन्न मानको का वर्णन किया गया है जो कि निम्न है—

वारितर

मृतं तरति यत्तोये लोहं वारितरं हि तत् ॥ (र.र.स. 8/26)

धातु की भस्म जो जल में तैर सकती है उसको वारितर भस्म कहते हैं ।

रेखापूर्णता

अङ्गुष्ठतर्जनीस्पृष्टं यत्तद्रेखान्तरे विशेत् । मृतलोहं तदुद्दिष्टं रेखापूर्णाभिधानतः ॥
(र.र.स. 8/27)

Scanned with OKEN Scanner

अंगूठे तथा तर्जनी अंगुली के बीच भस्म को रखकर उसे दोनों अंगुलियों से रगड़ने कर साफ करने के पश्चात् यदि भस्म अंगुलियों के रेखाओं के बीच लगी रहती है तो उसे रेखापूर्ण भस्म कहते हैं ।

विमर्श– रेखापूर्णता से भस्म के Particle size का पता चलता है । इतना या इससे कम size की भस्म को उत्तम माना जाता है ।

ऊनम (उत्तम)

हंसवत्तीर्यते वारिण्ययुक्तमं परिकीर्तितम ॥ (र.र.स. 8/29)

अपुनर्भव भस्म को जल के ऊपर डालकर पुनः उसमें धान्य को रखने से यदि वह धान्य हंस के समान तैरता है तो ऐसी भस्म को ऊनम (उत्तम) भस्म कहते हैं ।

श्लक्षण

इसका अर्थ अत्यन्त चिकना होता है । यह परीक्षा सभी भस्मों की होती है ।

सूक्ष्म एवं अंजन सन्निभ

निश्चन्द्रकं सुसूक्ष्मं च लोचनाञ्जनसंनिभम् । तदा तु मृतभित्युक्तमभ्रकं नान्यथा मृतम् ॥
(आ.प्र. 2/104)

सूक्ष्म (अत्यन्त महीन) तथा आँख में प्रयुक्त अञ्जन के समान चिकनी भस्म को लोचनाञ्जनसंनिभ कहा जाता है। यह अभ्रक भस्म की विशेष परीक्षा है।

दन्ताग्रेन कचकत भवति—

कचकचिति न दान्ताग्रे कुर्वान्ति समानि केतकी रजसा । योज्यानि हि प्रयोगो रसोपरसलोह चूर्णानि ॥
(आ.प्र. 285)

रस, उपरस लोह आदि की भस्म जो दाँत से दबाने पर कच कच न करे तथा केतकी रज सदृश हो वह भस्म उत्तम होती है ।

धातु भस्म का वर्ण

स्वर्ण चम्पक वर्णाभं कृष्णात्वं तारताम्रयोः । कांस्यं धूसरवर्ण स्यान्नागः पारावतप्रभः ॥
वङ्ग शुभ्रत्वमायाति तीक्ष्णं जम्बूक फलोपमम् । अभ्रकं चेष्टिकाभं स्याद्धातूनां वर्णनिर्णयः ॥
(यो.र.)

1. स्वर्ण – चम्पक वर्ण
2. रजत तथा ताम्र – कृष्ण वर्ण
3. कांस्य – धूसर वर्ण (धूल के रंग का, धुमैला । सफेद मटमैला वर्ण)
4. नाग – पारावत जैसा [गृहदेव कुलालय के वर्ण (घरेलू कबूतर)]
5. वंग – श्वेत वर्ण

6. तीक्ष्ण लौह – जम्बू वर्ण (जामुन सादृश)
7. अभ्रक – इष्टिका (ईट) सदृश लाल वर्ण

अवामि

भस्म खाने पर वमन का न होना । यह सभी भस्मों की परीक्षा है ।

अपुनर्भव

गुडगुञ्जासुखस्पर्शमध्वाज्यैः सह योजितम् । नायाति प्रकृतिं ध्मानादपुनर्भवमुच्यते ॥
(र.र.स. 8/28)

भस्म को गुड़, गुञ्जा, टंकण, शहद तथा घृत के साथ धमन देने पर यदि वह भस्म अपने मूल रूप में न आये तो वह भस्म अपुनर्भव गुणयुक्त मानी जाती है ।

निरुत्थ

रौप्येण सह संयुक्तं ध्मातं रौप्येण चेल्लगेत् । तदा निरुत्थमित्युक्तं लोहं तदपुनर्भवम् ॥
(र.र.स. 8/30)

चाँदी के साथ किसी धातु की भस्म को मिलाकर धमन करने से यदि उस भस्म का कुछ भी अंश चांदी के साथ मिलता नहीं है तब ऐसे भस्म को निरूत्थ भस्म कहते हैं । ऐसी ही भस्म अपुनर्भव भी होता है ।

गतरसत्व

गतरसत्व का अर्थ भस्म का किसी भी रस से रहित होना है अर्थात् भस्म को किसी भी रस से युक्त नहीं होना चाहिए।

निश्चन्द्रत्व

अर्थात् चमक रहित होना चाहिये । अर्थात् धूप ने या प्रकाश में देखने से उसमें चन्द्रिका नहीं दिखनी चाहिए।

निरम्लत्व

यह कासीस भस्म की विशेष परीक्षा है । ये अम्लता रहित होनी चाहिए।

निर्धूमत्व

तालं मृतं तदा ज्ञेयं बह्निस्थ धूम्र वर्जितम् । (आ.प्र. 2/180)

यह हरताल भस्म की परीक्षा है। हरताल भस्म को यदि अग्नि पर रखने से धूम्र न निकले तो इसकी भस्म बन गई है ऐसा जानना चाहिए।

जिहवाग्रे आद्यमानत्व– जिहवाग्रे पर भस्म को रखने पर कोई स्वाद नहीं आना चाहिए ।

दधि/निम्बू परीक्षा

ताम्र भस्म खट्टी दधि में रखने से यदि दधि का वर्ण नीला हो जाय तो ताम्र भस्म नहीं बनी है । ऐसा समझना चाहिए यदि दधि का वर्ण नीला न हो तो भस्म अच्छी बनी है ।

Scanned with OKEN Scanner

6. पूरक परिभाषा

रूद्रभाग

भैषज्य क्रीणित द्रव्य भागोऽप्येकादशो हि यः। वणिभ्यो गृह्यते वैद्ये रूद्रभागः स उच्यते ॥

(र.र.स. 8/3)

व्यापारी से जो औषधियों वैद्य या उसके रोगियों द्वारा खरीदी जाती है उस औषधि के मूल्य का 11वाँ भाग व्यापारी से लेकर उसे वैद्य को प्रदान की जाती है उसे रूद्र भाग कहते हैं। जो रुद्र भाग से अधिक लेता है उसे विश्वासघाती वैद्य कहते हैं।

धन्वन्तरि भाग

अर्धं सिद्धरसस्य तैलघृतयोर्लेहस्य भागोऽष्टमः संसिद्धाखिललोहचूर्णवटकादीनां तथा सप्तमः। यो दीयेत भिषग्वराय गदिभिर्निदिश्य धन्वन्तरिं सर्वाऽऽरोग्यसुखाप्तये निगदितो भागः स धन्वन्तरेः॥

(र.र.स. 8/2)

रोगी के पैसे से औषधियों को निर्मित कर उसका कुछ भाग आरोग्य तथा सुख की प्राप्ति हेतु स्वेच्छा से जो वैद्य को दिया जाता है, उसे धन्वन्तरि भाग कहा जाता है। विभिन्न प्रकार की औषधियों की दी जाने वाली मात्रा निम्न है–

औषधि प्रकार	दिये जाने वाली मात्रा
1. सिद्ध रसौषधि	$^1/_2$ भाग
2. घृत तथा तैल	$^1/_2$ भाग
3. अवलेह	$^1/_8$ भाग
4. सभी धातु भस्म	$^1/_7$ भाग
5. चूर्ण तथा वटी	$^1/_7$ भाग
6. आसव एवं अरिष्ट	$^1/_4$ भाग (र.त. अनुसार)

7. मान परिभाषा

मान शब्द की निरूक्ति

मीयतेऽनेनेति मानम् (अमरकोश)

जिसके द्वारा तौला या मापा जाय, उसे मान कहते हैं। किसी द्रव्य की भार (Weight), आयतन (Volume) या लम्बाई (length) को ज्ञात करने की प्रक्रिया को मापना (measurement) कहते हैं। तथा इसको व्यक्त करने के लिए कुछ निश्चित यूनिट का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक समय में M.K.S. या C.G.S. या F.P.S. पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसमें लम्बाई को मीटर, सेमी या फुट में, वजन को किलोग्राम, ग्राम या पाउण्ड में तथा समय को घंटा, मिनट या सेकेण्ड में व्यक्त किया जाता है। ऐसे ही आयुर्वेद शास्त्र या प्राचीन भारतीय समाज में लम्बाई को व्यक्त करने के लिए अंगुल, वितस्ति या हस्त प्रमाण का प्रयोग किया जाता था। समय को व्यक्त करने के मात्रा, काष्ठा, कला, मुहुर्त आदि शब्द का उपयोग किया गया है। इसी प्रकार द्रव्यों के भार को व्यक्त करने के लिए पल, कुड़व, प्रस्थ आदि यूनिट का प्रयोग किया गया है। अष्टाध्यायी में परिमाण, तोल या घनाकार वस्तुओं के लिए और प्रमाण लम्बाई के लिये आया है। पतञ्जलि के अनुसार तोल के उन्मान, आयाम या लम्बाई के लिए प्रमाण, घनाकृति के परिमाण का प्रयोग किया गया है।

मान का महत्व

आचार्य शार्ङ्गधर ने मान का महत्व इस प्रकार बताया है–

न मानेन बिना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित्। अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥

(शा.प्र. 1/14)

अर्थात् बिना मान के ज्ञान से द्रव्यों की योजना नहीं की जा सकती अतः प्रयोग कार्य (औषधि निर्माण तथा रोगी में प्रयोग हेतु) के लिए मान का वर्णन करता हूँ। (प्रयोग कार्यार्थं प्रयोगाणां योगानां कार्यार्थं–आढमल्ल)

मान के प्रकार

मान के तीन प्रकार माने गये हैं।

पाय्यं हस्तादिभिर्मानं द्रुवय कुड़वादिभिः। पौतवं तुलया तस्य सूत्र स्याद्भाग सूत्रकम् ॥

(वैजन्ती कोशः सामान्य काण्ड)

- **पाय्यमान**–हाथ के द्वारा मापे जाना वाला (लम्बाई का मान)
- **द्रुवयमान**–कुड़व पात्र के द्वारा मापा जाने वाला (द्रव के लिए)
- **पौतवमान**–तुला के द्वारा मापा जाने वाला (वैंजन/भार के लिए)

पौतवमान के ही दो भेद माने गये हैं। (1) मागधमान (2) कलिंग मान [(प्राचीन भारत के मगध क्षेत्र (आधुनिक विहार प्रांत) में प्रचलित होने के कारण मागध मान तथा कलिंग क्षेत्र (आधुनिक उड़ीसा प्रांत) में प्रचलित होने के कारण कलिंग मान] यथा–

मानं च द्विविधं प्राहुः कालिङ्ग मागधं तथा। कालिङ्गान्मागधं श्रेष्ठमेवं मानविदो विदुः ॥

(च.क. 12/105)

इसमें मागध मान को कलिङ्ग मान से श्रेष्ठ माना गया है।

आचार्य चरक के द्वारा वर्णित पौतवमान भी कहा जाता है।

आचार्य चरक के अनुसार पौतवमान

षड् ध्वंश्यस्तु मरीचिः स्यात षण्मरीच्यस्तु सर्षपः। अष्टौ ते सर्षपा रक्तास्तण्डुलश्चापि तद्द्वयम् ॥
धान्यमाषो भवेदेको धान्यमाषद्वयं यवः। अण्डिका ते तु चत्वारस्ताश्चतस्रस्तु माषकः ॥
हेमश्च धान्यकश्चोक्तो भवेच्छाणस्तु ते त्रयः। शाणौ द्वौ द्रङ्क्षण विद्यात् कोल बदरमेव च ॥
विद्याद् द्वौ द्रङ्क्षणौ कर्ष सुवर्ण चाक्षमेव च। विडालपदकं चैव पिचुं पाणितलं तथा ॥

Scanned with OKEN Scanner

तिन्दुक च विजानीयात् कवलग्रहमेव च। द्वे सुवर्णे पलार्ध स्याच्छुक्तिरष्टमिका तथा ॥
द्वे पलार्धे पलं मुष्टिः प्रकुञ्चोऽथ चतुर्थिका। बिल्वं षोडशिका चाम्रं द्वे पले प्रसृतं विदुः ॥
अष्टमानं तु विज्ञेयं कुडवौ द्वौ तु मानिका। पलं चतुर्गुण विद्यादञ्जलिं कुडवं तथा ॥
चत्वारः कुडवाः प्रस्थश्चतुः प्रस्थमथाढकम्। पात्रं तदेव विज्ञेयं कंसः प्रस्थाष्टकं तथा ॥
कंसश्चतुर्गुणो द्रोणश्चार्मणं नल्वणं च तत्। स एव कलशः ख्यातो घटमुन्मानमेव च ॥
द्रोणस्तु द्विगुणः शूर्पो विज्ञेयः कुम्भ एव च। गोणी शूर्पद्वयं विद्यात् खारी भारं तथैव च ॥
द्वात्रिंशतं विजानीयात वाहं शूर्पणि बुद्धिमान्। तुला पलशतं विद्यात् परिमाण विशारदः ॥
शुष्क द्रव्येष्विदं मानमेवमादि प्रकीर्तितम्। (च.क. 12/87-97)

6 ध्वंशी	=	1 मरीचि
6 मरीचि	=	1 सर्षप
8 सर्षप	=	1 रक्त तण्डुल
2 रक्त तण्डुल	=	1 धान्यमाष
2 धान्यमाष	=	1 यव
4 यव	=	1 अण्डिका
4 अण्डिका	=	1 माषक, हेम, धान्यक
3 माषक	=	1 शाण
2 शाण	=	1 द्रंक्षण (कोल, वदर)
2 द्रंक्षण	=	1 कर्ष, सुवर्ण, अक्ष, विडालपदक, पिचु, पाणितल, तिन्दुक, कवलग्रह
2 स्वर्ण	=	1 पलार्द्ध (शुक्ति तथा अष्टमिका इसके पर्याय है)
2 पलार्द्ध	=	1 पल (मुष्टि, प्रकुञ्च, चतुर्थिका, बिल्व, षोडशिका, आम्र)
2 पल	=	1 प्रसृत (अष्टमान पर्याय है)
2 कुड़व	=	1 मानिका
4 पल	=	1 अञ्जलि, कुड़व
4 कुड़व	=	1 प्रस्थ
4 प्रस्थ	=	1 आढ़क (पात्र)
8 प्रस्थ	=	1 कंस
4 कंस	=	1 द्रोण (आर्मण, नल्वणं, कलश, घट उन्मान)
2 द्रोण	=	1 शूर्प, (कुम्भ पर्याय)
2 शूर्प	=	1 गोणी (खारी, भार पर्याय)
32 शूर्प	=	1 वाह
100 पल	=	1 तुला

हारीत के अनुसार मान

आत्रेय उवाच ॥ सर्षपस्य चतुर्थांशोऽणुः ॥ चतुः सर्षपैर्माषः ॥ चतुर्माषैर्वल्लः ॥ चतुर्वल्लैः सुवर्णः कर्षः ॥ चतुष्कर्षैः पलम् ॥ चतुष्पलैः कुडवः ॥ चतुष्कुडवैः प्रस्थः ॥ चतुष्प्रस्थैराढकः ॥ चतुर्भिराढकैर्द्रोणः ॥1॥ शुष्काणामौषधानाञ्च मानञ्च द्विगुणं भवेत् ॥ आर्द्राणामथ सर्वेषां विज्ञातव्यस्तुलाविधिः ॥2॥

सरसों के चौथे भाग को अणु कहते हैं। चार सरसों का एक माष, 4 माष का एक वल्ल, चार वल्ल का एक सुवर्ण इसे कर्ष भी कहते हैं। चार कर्ष का एक पल, 4 पल का एक कुड़व, 4 कुड़व का एक प्रस्थ, 4 प्रस्थ का एक आढक तथा 4 आढक का एक द्रोण होता है। यह शुष्क औषधियों का मान है। आर्द्र औषधियों का मान इससे दो गुना होता है।

शार्ङ्गधर के अनुसार मान (मागधमान)

जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः ॥16॥
तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स कथ्यते। जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विलोक्यते ॥17॥

(आढमल्ल टीका–वंशरंध्रं प्रविष्टं यद्रजस्तद्वंशी तस्यांत्रिंशता परमाणुना या संख्या सा वंशीत्यर्थः।)

षडवंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका।
तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधै ॥18॥
यवऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम्।
षड्भिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधान्यकौ ॥19॥

(आढमल्ल टीका–सर्षपग्रहेणनात्र गौर सर्षपो ज्ञेय, यवोऽन्नविशेषः)

माषैश्चतुर्भिः शाण स्याद्धरणः स निगद्यते। टङ्कः स एव कथितस्तद्वयं कोल उच्यते ॥20॥
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रंक्षणः स निगद्यते। कोलं द्वयं च कर्षः स्यात्स प्रोक्तः पाणिमानिका ॥21॥
अक्षं पिचुः पाणितल किंचित्पाणिश्च तिन्दुकम्। विडालपदकं चैव तथा षोडशिका मता ॥22॥
कर मध्यो हंसपदं सुवर्ण कवलग्रहः। उदुम्बरं च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते ॥23॥

(आढमल्ल टीका–अक्ष इति विभीतकफलं तच्च कर्षमानसंज्ञम्। विडालपदकं अंगुलित्रय ग्राह्यं चूर्ण द्रव्यं तत् कर्षसंज्ञमित्यर्थः। षोडशिका षोडशमाषकपरिमितेत्यर्थः।)

स्यात्कर्षाभ्यामर्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा। शुक्तिभ्यां च पलं ज्ञेयं मुष्टिराम्रं चतुर्थिका ॥24॥
प्रकुञ्चः षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते।

(आढमल्ल टीका–अष्टशाणसंज्ञमान विशेष अष्टमिका, मुष्टिर्नखान्तमुष्टिः, चतुर्थिकेति चतुःकर्ष इति भावः, षोडशी षोडशशाणमितः।)

पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते ॥25॥
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवोऽर्धं शरावकः। अष्टमानं च स ज्ञेयः कुडवाभ्यां च मानिका ॥26॥
शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः।

Scanned with OKEN Scanner

(आढमल्ल टीका-पञ्चपलैकः प्रसृतिर्द्वाभ्यां प्रसृतिभ्यामञ्जलिरञ्जलिकरतलं प्रसृतिः मैत्र द्वात्रिंशत शाणामिता, अञ्जलिस्तु कर द्वय मिलित सम्पुटाकारः।)

शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थश्चतुःप्रस्थैस्तथाढकम् ॥27॥
भाजनं कंसपात्रं च चतुःषष्टिपल च तत्। चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोर्मणः ॥28॥
उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोण पर्याय संज्ञका। द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकाः ॥29॥
शूर्पाभ्यां च भवेत् द्रोणी वाही गोणी च सा स्मृता। द्रोणी चतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः ॥30॥
चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा। पलानां द्विसहस्रं च भार एकः प्रकीर्तितः ॥31॥
तुला पल शतं ज्ञेया सर्वत्रैवैष निश्चयः। (शा.प्र. 1 मानपरि)

आचार्य शार्ङ्गधर ने अपने मान का प्रारम्भ परमाणु से किया है। 30 परमाणुओं का एक त्रसरेणु होता है। त्रसरेणु का पर्याय वंशी होता है।

परमाणु की परिभाषा

खिड़की से आनेवाली सूर्य की किरणों में धूल के जो कण दिखाई देते हैं उसका तीसवाँ भाग परमाणु कहलाता है।

30 परमाणु	=	1 वंशी
6 वंशी	=	1 मरीची
6 मरीची	=	1 राजिका
3 राजिका	=	1 सर्षप
8 सर्षप	=	1 यव
4 यव	=	1 गुञ्जा
6 गुञ्जा	=	1 माषक (पर्याय-हेमधान्यक)
4 माषक	=	1 शाण (पर्याय-धरण, टङ्क)
2 शाण	=	1 कोल (पर्याय-क्षुद्रक, वटक, द्रंक्षण)
2 कोल	=	1 कर्ष (पर्याय-पाणिमानिका, अक्ष, पिचु, पाणितल, पाणितिन्दुक, विडालपदक, षोडशिका, करमध्य हंसपद, सुवर्ण, कवलग्रह, उदुम्बर)
2 कर्ष	=	1 अर्द्धपल (पर्याय-शुक्ति, अष्टमिका)
2 शुक्ति	=	1 पल (पर्याय-मुष्टि, आम्र, चतुर्थिका, प्रकुञ्च, षोडशी, बिल्व)
2 पल	=	1 प्रसृति (प्रसृत)
2 प्रसृत	=	1 अञ्जलि (पर्याय-कुडव, अर्द्धशराव, अष्टमान)
2 कुडव	=	1 मानिका (पर्याय-शराव, अष्टपल)
2 शराव	=	1 प्रस्थ
4 प्रस्थ	=	1 आढक (पर्याय-भाजन, कंसपात्र, चतुःषष्टिपल)
4 आढक	=	1 द्रोण (पर्याय-कुम्भ, चतुःषष्टि शराव)
2 द्रोण	=	1 शूर्प (पर्याय-कुम्भ, चतुःषष्टि शराव)
2 शूर्प	=	1 द्रोणी (पर्याय-वाही, गोणी)
4 द्रोणी	=	1 खारी (4096 पल)
2000 पल	=	1 भार
100 पल	=	1 तुला

आचार्य शार्ङ्गधर का चतुर्गुण सूत्र

माषटङ्काक्षबिल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम्। राशिर्गोणी खारिकेति यथोत्तर चतुर्गुणा ॥
(शा.प्र. 1/32)

अर्थात् माष, टंक, अक्ष, बिल्व, कुडव, प्रस्थ, आढक, राशि, गोणी तथा खारी ये उत्तरोत्तर एक दूसरे से 4 गुना होते जाते हैं। जैसे 4 माष का एक टंक, 4 टंक का एक अक्ष (कर्ष), 4 अक्ष का एक बिल्व (पल=2×2), 4 बिल्व का एक कुडव (कुडव या अञ्जलि=2×2), 4 कुडव का एक प्रस्थ (2×2), 4 प्रस्थ का एक आढक, 4 आढक की एक राशि, 4 राशि की एक गोणी (2×2) 4 गोणी (द्रोणी) की एक खारी होती है।

विशेष–जहाँ पर 2×2 है वहाँ पर आचार्य ने एक मान छोड़कर कहा है इसलिए यह 4 गुना हो जाता है) जैसे माष के बाद टंक को कहाँ है और यह चार गुना है लेकिन अक्ष के बाद चतुर्गुण सूत्र में विल्व कहा गया है और मुख्य प्रकरण में अक्ष के बाद अर्द्धपल तथा अर्द्धपल के बाद विल्व कहा गया गया है इसलिए इसे 2×2 लिखा गया है।

आचार्य सुश्रुत के अनुसार मान

यथा– "**पलकुडवादीनामतो मानं तु व्याख्यास्यामः–**

तत्र द्वादश धान्यमाषा मध्यमाः सुवर्णमाषकः, ते षोडश सुवर्णम्; अथवा मध्यम निष्पावा एकोनविंशतिर्धरणं, तान्यर्धतृतीयानि कर्षः, ततश्चोर्ध्व चतुर्गुणमभिवर्धयन्तः पल कुडव प्रस्थाढक द्रोणा इत्यभिनिष्पद्ययन्ते, तुला पुनः पल शतं, तापुनर्विंशतिर्भारः शुष्काणामिदं मानम्। आर्द्र द्रवाणां च द्विगुणामिति।
(सु.चि. 31/7)

मध्यम प्रमाण के 12 धान्यमाष = 1 सुवर्ण माषक
(मध्यमा मध्यम प्रमाणाः तेन नातिस्थूला नातितनवश्च ग्राह्याः–डल्हण)
16 सुवर्ण माषक = 1 सुवर्ण कर्ष
मध्यम प्रमाण 19 निष्पाव = 1 धरण
$1^1/_2$ धरण = 1 कर्ष (अर्द्ध तृतीय येषां तान्यर्धतृतीयानि सार्धद्वयमित्यर्थः–डल्हण)
इसके पश्चात पल, कुडव, प्रस्थ, आढक, द्रोण उत्तरोत्तर एक दूसरे से चार गुना होते जाते हैं।
100 पल = 1 तुला
20 तुला = 1 भार

Scanned with OKEN Scanner

ये मान शुष्क द्रव्यों के लिए है। आर्द्र द्रव्य तथा द्रव द्रव्यों का मान इससे दो गुना होता है।

आचार्य शार्ङ्गधर अनुसार कलिङ्ग मान परिभाषा

स्थितिर्नास्त्येव मात्राद्याः कालमग्निं वयो बलम् ॥37॥
प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रां प्रकल्पयेत्।

औषधि की मात्रा काल, अग्नि, वय, बल, प्रकृति, दोष तथा देश को देखकर निश्चित करनी चाहिए।

यतो मन्दाग्नयो ह्रस्वा हीनसत्त्वा नराः कलौ ॥38॥
अतस्तु मात्रा तद्योग्या प्रोच्यते सुज्ञसम्मता ॥ (शा.प्र. 1)

कल युग में मनुष्य मदाग्नि, छोटे शरीर वाले, हीन सत्व वाले होते हैं। अतः अब इनके योग्य मात्रा अर्थात् इनके लिए जो मात्रा विद्वानों के अनुसार है, उसका वर्णन किया जाता है।

यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः ॥39॥

यवद्वयेन गुञ्जा स्यात्रिगुञ्जो वल्ल उच्यते। माषोगुञ्जाभिष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत् क्वचित् ॥40॥
स्याच्चतुर्माषकैः शाणः स निष्कष्टङ्क एव च। गद्याणो माषकैः षड्भिः कर्षः स्याद्दशमाषिकः ॥41॥
चतुष्कर्षैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः। चतुष्पलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः ॥42॥

12 गौर सर्षप = 1 यव
2 यव = 1 गुञ्जा
3 गुञ्जा = 1 वल्ल
8 गुञ्जा = 1 माष (कहीं कहीं 7 गुञ्जा = 1 माष)
4 माष = 1 शाण (पर्याय-निष्क, टंक)
6 माष = 1 गद्याण
10 माष = 1 कर्ष
4 कर्ष = 1 पल
4 पल = 1 कुडव

इसके आगे के मान पूर्ववत अर्थात मागध मान जैसा ग्रहण करना चाहिये।

कुडव पात्र का विधान

मृद्वक्षवेणुलोहादेर्भाण्डं यच्चतुरङ्गुलम्। विस्तीर्णं च तथोच्चं च तन्मानं कुडवं वदेत्॥

(शा.प्र. 1/35)

मिट्टी, वांस, लोह (स्वर्ण, रजत, ताम्र, आर, घोष आदि अष्टलोह) आदि से निर्मित चार अंगुल आयाम, परिमाण तथा ऊँचाई वाले पात्र को कुडव पात्र कहा जाता है। (अङ्गुलशब्देनात्राङ्गुष्ठनखतल भागं गृह्यन्ति-आढमल्ल)

द्रुवय मान

द्रव पदार्थों के मान को द्रुवयमान कहा जाता है। इसकी मात्रायें बिन्दु, शाण, शुक्ति तथा पाणिशुक्ति हैं। इसका वर्णन निम्न है-

बिन्दु-

प्रदेशिन्यङ्गुली पर्वद्वयान्मग्नसमुद्धृतात्। यावत्पतत्यसौ बिन्दुर्दशाष्टौ षट् क्रमेण ते॥

(अ.ह.सू. 20/9)

प्रदेशिनी (तर्जनी) अंगुली के प्रथम दो पर्वों को द्रव में डुबाकर उठाने पर जितनी मात्रा पहली बार में गिरती है उसकी संज्ञा एक बिन्दु है।

बिन्दुभिश्चाष्टभिः शाणः प्रोक्तश्चैव भिषक्तमैः। द्वात्रिंशबिन्दुभिश्चात्र शुक्तिश्चैव निगद्यते॥
द्वे शुक्ति पाणि शुक्तिश्च नस्यकर्मणि पूजिता। (टोडरानन्द)

8 बिन्दु = 1 शाण
32 बिन्दु = 1 शुक्ति
64 बिन्दु = 1 पाणि शुक्ति

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

तस्य प्रमाणमष्टौ बिन्दवः, प्रदेशिनीपर्वद्वयानिःसृता प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्तिः, तृतीया पाणिशुक्ति.....।

(सु.चि. 40/28)

इस आचार्य डल्हण की टीका इस प्रकार है-

अङ्गुष्ठ समीपवर्तिन्यङ्गुलिः प्रदेशिनी, तत्पर्वद्वयच्युता बिन्दवः। प्रथमा मात्रा हीनेत्यर्थः। मध्यम मात्रा शुक्तिर्द्वात्रिंशद्बिन्दवः। उत्तमा पाणिशुक्तिश्चतुःषष्टिबिन्दवः।

प्रदेशिनी अंगुली के दो पर्व से गिरने वाली मात्रा बिन्दु,

32 बिन्दु = 1 शुक्ति
64 बिन्दु = 1 पाणिशुक्ति

ये मात्राये बल के अनुसार प्रयुक्त की जाती हैं।

प्रतिमर्शस्य मात्रा तु द्विद्विबिन्दुमिता मता। (शा.उ. 8/38)

गूढार्थ दीपिका टीका के अनुसार-बिन्दुमात्रामाह-एवं विधैर्बिन्दुसंज्ञैरष्टभिः शाण उच्यते। (1 बिन्दु = 8 शाण)। आधुनिक समय में लीटर, डेसीलीटर, सेण्टी, मिलीलीटर, डेकालीटर, हेक्टोलीटर तथा किलोलीटर प्रयुक्त होते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

पाय्यमान

लम्बाई को नापने में प्रयुक्त मान को पाय्यमान कहा जाता है। रसशास्त्र के अन्तर्गत वर्णित पुट प्रकरण में लम्बाई को व्यक्त करने वाले शब्दों जैसे व्याम, राजहस्त, हस्त, अरत्नि, वितस्ति, अंगुल का प्रयोग किया गया है जो कि स्पष्ट रूप से लम्बाई, चौड़ाई या गहराई नापने में प्रयुक्त किये गये हैं।

अंगुल–कौटिल्य के अनुसार "अष्टौ यव मध्या अङ्गुलम्" अर्थात् आठ यव को मध्य में पिराने से जो लम्बाई होती है, उसे एक अंगुल कहते हैं।

व्याम–व्यामो नाम विस्तारित बाहुयुगस्य पुंसः दक्षिणहस्तमध्यमाङ्गुल्यग्रभागाद् वाम हस्त मध्यमाङ्गुल्यग्रभाग पर्यन्त दीर्घता। (र.त. टीका 3/38-39)

चतुरशीत्यङ्गुलो व्यामः इति कौटिल्य

अर्थात दाहिना हाथ तथा बायाँ हाथ दोनों को फैलाकर एक हाथ की मध्यमा अंगुली के अग्र भाग से दूसरे हाथ के मध्यमा अंगुली के अग्र भाग तक की लम्बाई "व्याम" होती है। चौरासी अंगुल एक व्याम होता है।

अरत्नि–अरत्निः विस्तृतकर्निष्ठको मुष्टि (र.त. टीका 3/41) अर्थात् कनिष्ठा अंगुली को फैलाकर मुट्ठी बाधने पर कूर्पर से कनिष्ठा तक लम्बाई 1 अरत्नि होती है।

वितस्तिः–द्वादशाङ्गुला अर्थात 1 वितस्ति 12 अंगुल का होता है। इसी प्रकार एक अरत्नि 22 अंगुल, एक हस्त 24 अंगुल का माना गया है।

आधुनिक समय में लम्बाई को मापने हेतु मीटर, डेसीमीटर, सेण्टीमीटर, मिलीमीटर, डेकामीटर, हेक्टोमीटर तथा किलोमीटर प्रयुक्त किया जाता है।

Ayurvedic Formulary of India में वर्णित आयुर्वेदिक मान तथा उसके समकालीन आधुनिक मान

I. Weight and Measures

Classical Unit			Metric Equivalent
1 रत्ती/गुञ्जा			125 mg.
8 रत्ती	=	1 माशा	1 g.
12 माशा	=	1 कर्ष (तोला)	12 g.
2 कर्ष	=	1 शुक्ति	24 g.
2 शुक्ति	=	1 पल	48 g.
2 पल	=	1 प्रसृत	96 g.
2 प्रसृति	=	1 कुडव	192 g.
2 कुडव	=	1 मानिक	384 g.

2 मानिक	=	1 प्रस्थ	768 g
4 प्रस्थ	=	1 आढक	3 kg. 73 g.
4 आढक	=	1 द्रोण	12.228 kg.
2 द्रोण	=	1 शूर्प	24.576 kg.
2 शूर्प	=	1 द्रोणी (वाह)	49.152 kg.
4 द्रोणी	=	1 खारी	196.608 kg.
100 पल	=	1 तुला	4.800 kg.
20 तुला	=	1 भार	96 kg.

[In the case of liquids, the metric equivalents would be the corresponding litre and millilitre]

II. Linear Measurements

	Classical Unit	Inches	Metric Equivalents
01	यवोदर	$^1/_8$ or $^3/_4$ inch	0.24 cm.
02	अंगुल	$^3/_4$ inch	1.95 cm.
03	वितस्ति	9 inch	22.86 cm.
04	अरत्नि	$10^1/_2$ inch	41.91 cm.
05	हस्त	18 inch	45.72 cm.
06	राजहस्त	22 inch	55.88 cm.
07	व्याम	72 inch	182.88 cm.

III. Measurements of Time (काल मान)

Unit		Equivalent in hrs., minutes and seconds		
2 क्षण	=	1 लव		
2 लव	=	1 निमेष		
3 निमेष	=	1 काष्ठा	=	4.66 sec.
1 घड़ी			=	24 min.
30 काष्ठा	=	1 कला	=	2 min. and 20 sec.
20 कला + 3 काष्ठा	=	1 मुहुर्त	=	48 min.
30 मुहुर्त	=	1 अहोरात्र	=	24 घण्टा
15 अहोरात्र	=	1 पक्ष	=	15 दिन
2 पक्ष	=	1 मास	=	30 दिन

Scanned with OKEN Scanner

2 अयन	=	1 ऋतु	=	60 दिन
3 ऋतु	=	1 अयन	=	6 माह
2 अयन	=	1 सम्वत्सर	=	12 माह/1 साल
5 सम्वत्सर	=	1 युग	=	5 साल
1 अहोरात्र (देव)			=	1 साल
1 अहोरात्र (पितृ)			=	1 माह

आधुनिक पद्धति अनुसार मान

Metric system of weight

10 miligrams	=	1 centigram
10 centigrams	=	1 decigram
10 decigrams	=	1 gram
10 grams	=	1 decagram
10 decagrams	=	1 hectogram = 100 grams
10 hectograms	=	1 kilogram = 1 kg.
1000 kg.	=	1 metric ton

Metric system of liquid weight

1 deciliter	=	$^1/_{10}$ liter
1 centiliter	=	$^1/_{100}$ liter
1 mililiter	=	$^1/_{1000}$ liter
1 decaliter	=	10 liter
1 hectoliter	=	100 liter
1 kiloliter	=	1000 liter

Metric system of length

1 meter	=	39.37 inch
1 decimeter	=	$^1/_{10}$ meter
1 centimeter	=	$^1/_{100}$ meter
1 milimeter	=	$^1/_{1000}$ meter
1 decameter	=	10 meter
1 hectometer	=	100 meter
1 kilometer	=	1000 meter

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्न में एक कषाय योनि नहीं है—
   a. लवण कषाय b. अम्ल कषाय c. तिक्त कषाय d. कषाय कषाय
2. पाशिक का रासायनिक सूत्र है—
   a. $CuSO_4.7H_2O$ b. Fe_2S_3 **c. $CuFeS_2$** d. Fe_2O_3
3. निम्न में एक में कैल्शियम नहीं पाया जाता है—
   a. गोदन्ती **b. स्फटिका** c. शुक्ति d. प्रवाल
4. किसी धातु को तप्त कर उसे द्रव में बुझाने की प्रक्रिया कही जाती है—
   a. आवाप b. ढालन **c. निर्वाप** d. निमज्जन
5. निम्न में एक पारद का संस्कार नहीं है—
   a. जारणा b. मर्दन c. पातन d. रोधन
6. निर्गन्ध निराग्नि मूर्च्छना कौन सी है—
   a. कज्जली **b. मुग्ध रस** c. रस पर्पटी d. रस पुष्प
7. पारद बन्ध की संख्या है—
   a. 8 b. 18 c. 19 **d. 25**
8. अभ्रक भस्म का वर्ण होता है—
   a. जम्बू वर्ण b. चम्पक c. कृष्ण वर्ण **d. इष्टिका सदृश**
9. 1 रत्ती की मात्रा किसके बराबर होती है—
   a. 125 मिग्रा. b. 250 मिग्रा. c. 1 ग्राम d. 10 ग्राम
10. 1 अंगुल होता है—
    a. 1.95 cm b. 2.95 cm c. 1 cm d. 2 cm

Scanned with OKEN Scanner

अध्याय

3

आधार भूत सिद्धान्त

द्रव्य संग्रह तथा संरक्षण

द्रव्य संग्रह काल-सामान्य नियम

आयुर्वेद शास्त्र में औषधियों को ग्रहण करने से पूर्व मंगलाचरण, अश्विनी कुमार (औषधियों के देवता) की पूजा तथा उस दिन व्रत धारण करना आदि का विधान किया गया है। (च.क. 1/10)

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार शरद ऋतु में सभी कार्य के उपयोग हेतु रस से युक्त औषधि का ग्रहण करना चाहिए तथा वमन एवं विरेचन कर्म के उपयोगी औषधियों का संग्रह वसन्त ऋतु के अन्त में करना चाहिए। यथा-

शरद्यखिलकार्यार्थं ग्राह्यं सरसमौषधम्। विरेकवमनार्थञ्च वसन्तान्ते समाहरेत्॥

(शा.प्र. 1/59)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार सौम्य गुण वाली औषधियों का संग्रह सौम्य ऋतु अर्थात विसर्गकाल तथा आग्नेय गुण वाली औषधियों का संग्रह आग्नेय ऋतु अर्थात आदान काल में ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार ग्रहीत औषधियाँ कटु-रूक्ष-उष्ण आदि गुण से सम्पन्न होती है। (सु.सू. 36/5)

अंग विशेष के अनुसार विशेष औषधि संग्रहकाल

इसका वर्णन आचार्य चरक ने निम्न किया है यथा-

तेषां शाखापलाशमचिरप्ररूढं-वर्षा बसन्तयोर्ग्राह्यं, गीष्मे मूलानि, शिशिरे वा शीर्णप्ररूढपर्णानां, शरदि त्वक्कन्दक्षीराणि, हेमन्ते साराणि, यथर्तुपुष्पफलमिति। (च.क. 1/10)

तथा राजनिघण्टु के अनुसार-

कन्दं हिमर्तौ, शिशिरे च मूलं, पुष्पं वसन्ते, फलदं वदन्ति।
प्रवाल-पत्राणि निदाघकाले स्युः पञ्च जातानि शरत्प्रयोगे॥

(राजनिघण्टु 2)

इसे निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है।

क्रम संख्या	प्रयोज्य अंग	चरक अनुसार संग्रह काल	राज निघण्टु अनुसार संग्रह काल
01	शाखा	वर्षा एवं वसन्त	
02	पत्र	वर्षा एवं वसन्त	ग्रीष्म

03	मूल	ग्रीष्म एवं शिशिर	शिशिर
04	त्वक्	शरद	-
05	कन्द	शरद	हेमन्त
06	क्षीर	शरद	-
07	सार	हेमन्त	-
08	पुष्प	यथा ऋतु	वसन्त
09	फल	यथा ऋतु	-
10	पंचाग	-	शिशिर

द्रव्य संग्रह हेतु दिन का काल

गृह्णीयात्तानि सुमनाः शुचिः प्रातः सुवासरे॥
आदित्यसंमुखो मौनी नमस्कृत्य शिवं हृदि। साधारण धरा द्रव्यं गृह्णीयादुत्तराश्रितम्॥

(शा.प्र. 1/56-57)

अर्थात् अच्छे मन से, पवित्र होकर प्रातःकाल में जब सूर्य सम्मुख हो, बिना कुछ बोलते हुए हृदय में भगवान शंकर को नमस्कार कर साधारण भूमि (अर्थात जाङ्गल एवं आनूप देश के लक्षणों से युक्त) से उत्तर दिशा की औषधि को ग्रहण करना चाहिए।

प्राणिज द्रव्य संग्रह

जङ्गमानां वयःस्थानां रक्तरोमनखादिकम्। क्षीर मूत्र पुरीषाणि जीर्णाहारेषु सहरेत्॥

(सु.सू. 37/17)

रक्त, रोम, नख आदि युवावस्था वाले पशु का ग्रहण करना चाहिए। क्षीर, मूत्र तथा पुरीष का ग्रहण आहार के पचने के पश्चात् लेना चाहिए।

मांस ग्रहण

स्त्रियश्चतुष्पदे ग्राह्याः पुमांसो विहगे तथा। जाङ्गतानां वयःस्थानां चर्मरोमनव्यादिकम्॥
हित्वा ग्राह्यं पूतमांसं सास्थिकं खण्डशः कृतम्। हित्वा स्त्री पुरुषं चापि क्लीवं तत्रापि दापयेत्॥

(भै.र. 1/109-110)

मांस लेना है तो चतुष्पाद में स्त्री तथा पक्षियों में पुरुष का लेना चाहिए। जाङ्गल देशीय पशुओं का त्वक्, रोम, नखादि से रहित मांस लेकर उसके अस्थि के सहित छोटे-छोटे टुकड़े करने के पश्चात् इससे घृत तथा तैल पाक करे। घृत तथा तैल पाक हेतु बकरे का मांस लेना चाहिए इसमें भी स्त्री तथा पुरुष बकरे को छोड़कर नपुंसक बकरे का मांस लेना चाहिए।

मांस ग्रहण योग्य पशु

वलिनं च वयःस्थं च सुकीर्णं च सुदेहिनम्। न वृद्धंच न बालं च अवीर्यस्त्राव शोणितम्॥

(भै.र. 1/111)

Scanned with OKEN Scanner

जो पशु बलवान, युवा तथा नीरोगवान हो, अच्छे शरीर वाला हो, वृद्ध तथा बाल न हो जिनका रक्त न निकाला गया हो ऐसे पशु का मांस ग्रहण करना चाहिए।

मूत्र ग्रहण

स्त्रीणां मूत्रं गवां ग्राह्यं न तु पुंसां विधीयते। पित्तात्मिकाः स्त्रियो यस्मात् सौम्यास्ते पुरुषामताः॥

(भै.र. 1/112)

गोमूत्र से गाय का ही मूत्र लेना चाहिए न कि पुरुष (बैल) का क्योंकि स्त्रियां पित्तप्रधान तथा पुरुष सौम्य होते हैं। अतः तीक्ष्ण होने से गाय का ही मूत्र लेना चाहिए।

औषधि संग्रह भूमि (महाभूत अनुसार)

आचार्य सुश्रुत ने भूमि को पंचमहाभूतों के अनुसार पाँच प्रकार का माना है। जिसको औषधि ग्रहण करने से पूर्व परीक्षा करनी चाहिए। **पार्थिव** भूमि पथरीली, कठिन, भारी, श्यामवर्ण की, **जलीय** भूमि श्वेत वर्ण की, चिकनी, शीतल, जिसमें मृदु धान्य पैदा हो, **आग्नेय** भूमि पाण्डु वर्ण की, अनेक वर्ण के पत्थरों से युक्त, जहाँ पर कहीं-कहीं छोटे वृक्ष लगे हैं। ऐसे गुणों से युक्त होती है। **वायव्य** भूमि रूक्ष, भस्म या धूसर वर्ण की, कोटर युक्त अल्प रस वाले वृक्ष उगते हैं। **आकाशीय** भूमि मृदु, गड्ढो से युक्त तथा श्याम वर्ण की मिट्टी से युक्त होती है।

औषधि संग्रह योग्य/अयोग्य भूमि

"तत्र देशे साधारणे जाङ्गले वा यथाकालं शिशिरातपपवन सलिल सेवते समे शुचौ प्रदक्षिणोदके श्मशान-चैत्य-देवयजनागार-सथा-श्वभ्राराम-वल्मीकोषरविरहिते कुशरोहिषास्तीर्णे स्निग्ध कृष्ण मधुर मृत्तिके सुवर्ण वर्ण मधुरमृतिके वा मृदावफाल कृष्टेऽनुपहतेऽन्यैर्बलवत्तरैर्द्रुमैरौषधानि जातानि प्रशस्यन्ते।"

(च.क. 1/9)

अष्टांग हृदय के अनुसार–

धन्वे साधारणे देशे समे सन्मृत्तिके शुचौ। श्मशान चैत्यायतनश्वभ्रवल्मीकवर्जिते॥1॥
मृदौ प्रदक्षिण जले कुश रोहिष संस्तृते। अफालकृष्टेऽनाक्रान्ते पादपैर्बलवत्तरैः॥2॥
शस्यते भेषजं जातं युक्तं वर्णरसादिभिः। जन्त्वदग्धं दवादग्धमविदग्धं च वैकृतैः॥3॥
भूतैश्छायातपाभ्यांधैर्य थाकालं च सेवितम्। अवगाढमहामूलमुदीचीं दिशमाश्रितम्॥4॥

(अ.हृ.क. 6)

जाङ्गल या साधारण देश में जहाँ पर समय के अनुसार शीत, धूप, वायु तथा जल अर्थात् ऋतुकाल के अनुसार शीत, गर्मी, वर्षा हो, वहाँ की भूमि समतल हो, पवित्र तथा दक्षिण भाग में जलाशय अर्थात् पानी की उपलब्धता हो, कुश तथा रोहिष से युक्त, जहाँ की मिट्टी स्निग्ध, मधुर, कष्ण या सुवर्ण (पीला) वर्ण की, जहाँ पर हल न चलाया गया हो, जहाँ कोई अन्य बलवान अर्थात् बड़ा वृक्ष न लगा हो ऐसी भूमि में उत्पन्न औषधियों को प्रशस्त माना गया है। ऐसी भूमि से औषधि का संग्रह करना चाहिए।

संग्रह अयोग्य भूमि— श्मशान, चैत्य, देवागार, यजनागार सभाग्रह, कोटर रहित तथा दीमक मिट्टी वाली भूमि से औषधि ग्रहण नहीं करना चाहिए।

द्रव्य संग्रह अवस्था

द्रव्यों को किस रूप में ग्रहण करना चाहिए इस सम्बन्ध में आचार्य सुश्रुत का मत है कि–

सर्वाण्येव चाभिनवान्यन्यत्र मधुघृत गुड पिप्पली विडङ्गेभ्यः। (सु.सू. 37/8)

अर्थात् सर्वप्रकार के औषध द्रव्य नये ही ग्रहण करना चाहिए किन्तु मधु, घृत, गुड़, पिप्पली तथा विडङ्ग को छोड़कर।

विडङ्गं पिप्पली क्षौद्रं सर्पिश्चाप्यनवं हितम्। दोषमन्यत्त्वभिनवं गृह्णीयाद्दोषवर्जितम्॥

(सु.सू. 37/9)

विडङ्ग पिप्पली, शहद और घृत ये पुराने हितकारी होते हैं किन्तु अन्य द्रव्यों को दोषों से रहित तथा नवीन ही ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकरण में शार्ङ्गधर ने धान्य को भी पुराना ग्रहण करने का निर्देश किया है। आचार्य सुश्रुत ने ग्राह्य अग्राह्य के सम्बन्ध में सूत्रस्थान 46वाँ अध्याय में वर्णन किया है। जो कि निम्न है–

अनार्तवं व्याधिहतमपर्यागतमेव च। अभूमिजं नवञ्चापि न धान्यं गुणवत् स्मृतम्॥

(सु.सू. 46/50)

अग्राह्यधान्य–बिना मौसम में पैदा हुआ किसी रोग से हतवीर्य, दूषित भूमि में तथा नया धान्य गुणकारी नहीं होता है अर्थात ये ग्राह्य नहीं होते हैं।

फल

व्याधितं कृमिजुष्टं च पाकातीतमकालजम्। वर्जनीयं फलं सर्वमपर्यागतमेव च॥

(सु.सू. 46/210)

रोग युक्त, कृमि द्वारा खाया गया, पाकातीत अर्थात पकने के बहुत समय बाद तथा बिना मौसम का फल सर्व प्रकार से वर्जनीय होता है।

फलेषु परिपक्वं यद् गुणवत्तदुदाहृतम्। बिल्वादन्यत्र विज्ञेयमामं तद्धि गुणोत्तरम॥

(सु.सू. 46/209)

बिल्व फल को छोड़कर अन्य फल पके हुए गुणवत होते हैं, जबकि बिल्व फल कच्चा ही गुण युक्त होता हैं

शाक

कर्कशं परिजीर्ण च कृमिजुष्टमदेशजम्। वर्जयेत् पत्रशाकं तद् यदकाल विरोहि च॥

(सु.सू. 46/298)

कन्द

बालं ह्यनार्तवं जीर्ण व्याधितं कृमिभक्षितम्। कन्दं विवर्जयेत् सर्व यो वा सम्यङ्ग न रोहति॥

(सु.सू. 46/313)

जो शाक कर्कश, जीर्ण, कृमियों द्वारा खाई गयी तथा दूषित भूमि में उत्पन्न हो एवं बिना समय के पैदा हो उसे ग्रहण

Scanned with OKEN Scanner

नही करना चाहिए। इसी प्रकार जो कन्द समय से भिन्न हो, बाल हो, पुरानी हो, व्याधित हो, कृमियो द्वारा नष्ट किया हो जिससे पुनः उत्पत्ति न हो अर्थात उसके द्वारा नये कन्द की उत्पत्ति न हो सके ऐसे कन्द को ग्रहण नहीं करना चाहिए। कन्द से विदारीकन्द, शतावरी, सिघांडा, इन्दीवर, सूरणकन्द सदृश द्रव्यों का ग्रहण होता है।

इसके अतिरिक्त युवावस्था वाले जङ्गम पशु पक्षियों का रक्त, रोम और नख आदि का ग्रहण करना चाहिए तथा आहार के जीर्ण होने पश्चात दुग्ध, मूत्र तथा मल को औषधार्थ ग्रहण करना चाहिए। यथा–

जङ्गमानां वयःस्थानां रक्तरोमनखादिकम्। क्षीर मूत्र पुरीषाणि जीर्णाहारेषु सहरेत्॥

(सु.सू. 37/17)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार सामान्य रूप से जो द्रव्य विकृत गन्ध से युक्त न हों तथा जिसके मधुरादि रसों में भी कोई विकार न हुआ हो ऐसे द्रव्य चाहे नया हो या फिर पुराना हो उनको ग्राह्य या ग्रहण किया जा सकता है। यथा–

विगन्धेनापरामृष्टमविपन्नं रसादिभिः। नवं द्रव्यं पुराणं वा ग्राह्यमेव विर्निदिशेत्॥

(सु.सू. 37/16)

द्विगुण मान गणना

आयुर्वेदिक संहिता ग्रन्थों में जो मान परिभाषा कही गयी है वह सामान्य रूप से शुष्क द्रव्यों के सन्दर्भ है जो कि विभिन्न प्रकार के योगों में कहे गये हैं। आर्द्र द्रव्य तथा द्रव द्रव्य की मात्रा योग में कही गयी मात्रा से द्विगुना ग्रहण करना चाहिए।

शुष्क द्रव्येष्विदं मानमेवादि प्रकीर्तितम्। द्विगुणं तत् द्रवेष्विष्ट तथा सद्योद्धृतेषु च॥

(च.क. 12/98)

अर्थात् यह मान शुष्क द्रव्यों के लिए बताया गया है। द्रव तथा आर्द्र द्रव्य दोगुनी मात्रा में ग्रहण करना चाहिए।

आर्द्र तथा शुष्क द्रव्यमान

गुञ्जादिमानमरभ्य यावत्स्यात्कुडवस्थितिः। द्रवार्द्र शुष्क द्रव्याणां तावन्मानं समं मतम्॥

(शा.प्र. 1/33)

अर्थात् गुञ्जा से लेकर कुडव तक के मान को द्रव, आर्द्र तथा शुष्क द्रव्यों को कही हुयी मात्रा के अनुसार ग्रहण करना चाहिए।

प्रस्थादिमानमारभ्य द्विगुणं तद्द्रवार्द्रयोः॥34॥
मानं तथा तुलायाश्च द्विगुणं च क्वचित्स्मृतम्। (शा.प्र. 1)

प्रस्थ से लेकर तुला तक के मान को दोगुनी मात्रा में ग्रहण करना चाहिए। तुला से आगे तक के मान को कभी भी दोगुनी मात्रा में नहीं लेना चाहिए। इसकी टीका में आचार्य आढमल्ल ने कहा है कि शुष्क द्रव्य गुरू तथा तीक्ष्ण होने के कारण इनका मान आर्द्र की अपेक्षा आधे लिए जाते हैं। जैसे— शुष्क द्रव्यस्य या मात्रा त्वार्द्रस्य द्विगुणा हि सा। शुष्कस्य गुरूतीक्ष्णत्वात्तस्मादर्धं प्रयोजयेत्। इसी को भेषज्यरत्नावलीकार ने भी उल्लेख किया है।

अपवाद

उपरोक्त नियम के कुछ अपवाद भी शास्त्रों में वर्णित है। कुछ द्रव्य हमेशा आर्द्र ही प्रयोग किये जाते हैं तथा दोगुनी मात्रा में ग्रहण नहीं किये जाते हैं।

गुडुची कुटजो वासा कूष्माण्डं च शतावरी। अश्वगन्धा सहचरी शतपुष्पा प्रसारिणी॥
प्रयोक्तव्या सदैवार्द्रा द्विगुणा नैव योजयेत्। (शा.प्र. 1/45)

अर्थात् गुडुची, कुटज, वासा, कूष्माण्ड, शतावरी, अश्वगन्धा, सहचर, शतपुष्पा, प्रसारिणी इन्हें सदैव आर्द्र तथा दोगुनी मात्रा में ग्रहण नहीं करना चाहिए। भैषज्य रत्नावली के अनुसार वासा, निम्ब, पटोल, केतकी, वला, कूष्माण्ड, इन्दीवरी, पुनर्नवा, कुटज, अश्वगन्धा, प्रसारिणी, गुडुची, मांस, नागवला, सहचर, गुग्गुलु, हिंगु, आर्द्रक, इक्षुगण तथा उनके विकार हमेशा ताजा किन्तु दोगुनी मात्रा में ग्रहण नहीं करना चाहिए।

द्रव्य संग्रहविधि तथा द्रव्य संरक्षण

गृहीत्वा चानुरूपगुणवद्भजनस्थान्यगारेषु प्रागुदग्द्वारेषु निवातप्रवातैक देशेषु नित्यपुष्पोपहारबलिकर्मवत्सु, अग्नि सलिलोपस्वेदधूमरजोमूषकचतुष्पदामनभिगमनीयानि स्ववच्छन्नानि शिक्येष्वासज्य स्थापयेत्।

(च.क. 1/11)

अर्थात् ग्रहण या संग्रह की गई औषधि को उसके अनुरूप गुण वाले पात्र में पूर्व या उत्तर दिशा वाले आगार (औषधिशाला या स्थान) में जहाँ पर तीव्र हवा न आ सके बल्कि हवा का संचार होता हो, जहाँ पर नित्य पुष्प, उपहार, वलिकर्म आदि हो (अर्थात् उसकी देखरेख रोज की जाय) जिस स्थान में अग्नि, जल का उपस्वेद न हो (अर्थात् moisture न या dampness न हो) चूहे और चतुष्पाद जैसे बिल्ली आदि का सम्पर्क न हो ऐसे घर में औषधियो को वस्त्र से ढककर सिकहर पर रखना चाहिए।

विशेष–अनुरूप गुण पात्र का अर्थ यह है कि जिस गुण की औषधि हो अगर उसी गुण का पात्र होगा तो उसकी औषधि से किसी प्रकार की क्रिया (reaction) नहीं होगी और वह सुरक्षित रखी रहेगी। इस प्रकार यह औषधि संरक्षण का बहुत ही सुन्दर concept है जिसे आजकल औषधि संरक्षण में यह स्पष्ट निर्देश होता है कि औषधि जिसमें भी संरक्षित की जाय वह सम्पूर्ण रूप से innert होना चाहिए।

WHO Guidelines for Collection of Medicinal Plants

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने medicinal plants को संग्रह करने के लिए जरूरी दिशा निर्देश बताये हैं जिसको WHO guidelines on Good Agricultural and Collection Practices (GACP) for medicinal plants के नाम से जाना जाता है। इसके कुछ अंश निम्न हैं–

As per WHO guidelines these are described under good collection practices for medicinal plants. Before collection it is important to take permission to collect (in some countries), technical planning and selection of medicinal plants for collection. Collection practices should ensure the long term survival of wild population and their associated habitats. Medicinal plant materials should be collected during the appropriate season or time period to ensure the best possible quality of both source materials and finished

Scanned with OKEN Scanner

products. It is well known that the quantitative concentration of biologically active constituents varies with the stage of plant growth and development. The best time for collection should be determined according to the quality and quantity of biologically active constituents rather than the total vegetative yield of the targeted medicinal plant parts. Medicinal plants should not be collected in or near where high levels of pesticides or other possible contaminants are used or found such as road side, drainage ditches, mine tailings, garbage dumps and industrial facilities which may produce toxic emissions. In the course of collection efforts should be made to remove parts of plant that are not required and foreign matter, in particular toxic weeds. Decomposed medicinal plant materials should be discarded. In general the collected raw material plant material should not come into direct contact with soil. If under ground part such as roots are used, any adhering soil should be removed from the plants as soon as they are collected. Collecting implements, such as machetes, shears, saws and mechanical tools should be kept clean and maintained in proper condition. Then parts that come into direct contact with the collected medicinal plant should be free from excess oil and other contamination.

रस गुण वीर्य विपाक तथा प्रभाव

द्रव्ये रसो गुणो वीर्यं विपाकः शक्तिरेव च। पदार्थ पञ्च तिष्ठन्ति स्वं स्वं कुर्वन्ति कर्म च॥

द्रव्यों के रस पंचमहाभौतिक सिद्धान्त से निर्मित होते हैं। आचार्य भावमिश्र के अनुसार द्रव्यों में स्थित गुणों का निर्माण इन्हीं महाभूतों के आधार पर होता है अर्थात् इन्हीं के साहचर्य से रसों का निर्माण होता है। इन्हीं द्रव्यों से कल्पना का निर्माण किया जाता है।

अनुक्त/विशेषोक्त ग्रहण

आचार्य शार्ङ्गधर ने इसका विस्तृत वर्णन इस प्रकार किया है। यथा–

कालेऽनुक्ते प्रभातं स्यादङ्गेऽनुक्ते जटा भवेत्। भागेऽनुक्ते तु साम्यं स्यात्पात्रेऽनुक्ते च मृण्मयम्॥
द्रवेऽनुक्ते जलं ग्राह्यं तैलेऽनुक्ते तिलोद्भवम्॥ (शा.प्र. 1/47-48)

यदि काल न कहा गया हो तो प्रभात काल, किसी औषधि का प्रयोज्य अंग न कहा गया हो तो मूल, यदि किसी औषध योग में घटक द्रव्यों का मान न दिया गया हो तो सभी बराबर भाग में, पात्र न बताया गया हो तो मिट्टी का पात्र, द्रव का वर्णन न हो तो जल और यदि तैल का वर्णन न हो तो तिल तैल का ग्रहण करना चाहिए।

विशेषोक्त ग्रहण

चूर्णस्नेहासवा लेहाः प्रायशश्चन्दनान्विताः। कषायलेपयोः प्रायो युज्यते रक्तचन्दनम्॥
(शा.प्र. 1/50)

चूर्ण, स्नेह, आसव तथा लेह कल्पनाओं में श्वेत चन्दन का प्रयोग प्रायः करना चाहिए। कषाय (कषायं स्वरसादिपञ्चकं तेन स्वरस क्वाथ फाण्ट हिम कल्कादयः–आढमल्ल) तथा लेप में रक्तचन्दन का प्रयोग प्रायः करना चाहिए।

अतिस्थूलजटा याः स्युस्तासां ग्राह्यस्त्वचो बुधैः। गृह्णीयात्सूक्ष्ममूलानि सकलान्यपि बुद्धिमान॥
न्यग्रोधादिस्त्वचो ग्राह्याः सारः स्याद्बीजकादितः। तालीसादेश्च पुष्पाणि फलं स्याद् त्रिफलादितः॥
धातक्यादेश्च पुष्पाणि स्नुहीदेः क्षीरमाहरेत्। (शा.प्र. 1/60-61)

जिस औषधि का मूल अति स्थूल हो उसका त्वचा (वल्कल), यथा वट, निम्ब, जिसका सूक्ष्म मूल हो उसे सम्पूर्ण यथा गोक्षुर, (सकलानि इति मूल पत्र पुष्प शाखान्विता–आढमल्ल) न्यग्रोध आदि की त्वचा, बीजक आदि का सार भाग, तालीस, कुमारी, नागवल्ली आदि के पत्र, त्रिफला का फल, धातकी, प्रियंगु का पुष्प तथा स्नुही का क्षीर ग्रहण करना चाहिए।

औषध नामकरण

आचार्य चरक ने औषध योगों के नामकरण में निम्न सिद्धान्त का उल्लेख किया है।

यद्धि येन प्रधानेन द्रव्यं समुपसृज्यते। तत्संज्ञकः स संयोगो भवतीति विनिश्चितम्॥39॥
फलादीनां प्रधानानां गुणभूताः सुरादयः। ते हि तान्यनुवर्तन्ते मनुजेन्द्रमिवेतरे॥40॥
(च.क. 12)

अर्थात् जो कोई भी द्रव्य प्रधान द्रव्य के साथ मिलाया जाता है, उनके संयोग से बनने वाला योग उसी प्रधान द्रव्य के नाम से कहा जाता है; यह एक निश्चित मत है। मदनफल आदि द्रव्यों के साथ सुरा आदि अप्रधान एवं सहायक के रूप में कार्य करते हैं: जैसे राजा के साथ रहने वाले सभी भृत्य राजा की इच्छा का ही अनुगमन करते हैं।

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार–

यदौषधं तु प्रथमं यस्य योगस्य कथ्यते। तन्नाम्नैव स योगो हि कथ्यतेऽत्र विनिश्चयः॥
(शा.पू. 1/36)

अर्थात इस संहिता में (शार्ङ्गधर संहिता में) योग में जो पहली औषध कही जायेगी (अर्थात औषध योगों के प्रकरण में जो पहली औषध होगी) उसी के नाम औषध योग को जाना जायेगा।

उपरोक्त सिद्धान्त के अतिरिक्त औषध योगों के नामकरण निम्न बिन्दुओं पर भी किये गये हैं–

1. रोगघ्नता के आधार पर–जैसे कुष्ठारि रस, ज्वरमुरारि रस।
2. औषधि के आकृति के आधार पर–जैसे पर्पटी।
3. औषधि के रंग के आधार पर–जैसे रस सिन्दूर (सिन्दूर वर्ण का) रस माणिक्य (माणिक्य वर्ण का), स्वर्ण वंग (स्वर्ण के समान पीले वर्ण का)।
4. देवताओं के अस्त्र-शस्त्र के नाम पर जैसे सुदर्शन चूर्ण।
5. औषध योग के प्रथम घटक के नाम पर जैसे चित्रकादि वटी।
6. औषध के घटक द्रव्य के मान के आधार पर जैसे कंस हरीतकी।
7. औषध सेवन कर्ता के नाम के आधार पर जैसे च्यवनप्राश (च्यवन ऋषि द्वारा सर्वप्रथम सेवन करने के कारण)।
8. औषधि के प्रभाव एवं गुण के आधार पर जैसे वृहद्गङ्गाधरचूर्ण यथा

Scanned with OKEN Scanner

सर्वांति मार ग्रहणी शूलमं शांति वेगतः। वृद्धगङ्गाधरं चूर्णं सरिद्वेगस्य रोधकम्॥

(शा.प. 6/51)

अर्थात यह वृहत गंगाधर चूर्ण नदी के प्रवाह को रोकने का प्रभाव रखता है उसी प्रकार सभी अतिसार एवं ग्रहणी को वेग से रोकता है।

9. देवता के नाम पर जैसे नारायण चूर्ण
10. औषधि निर्माता के नाम पर जैसे श्री वाहुशाल गुड (आचार्य वाहुशाल द्वारा निर्मित होने के कारण (शा.म. 7/11)
11. औषधि के विशेष प्रभाव के कारण जैसे सञ्जीवनी वटी यथा—

वटी संजीवनी नाम्ना संजीवयति मानवम्॥ (शा.म. 7/21)

मनुष्य को जिन्दा कर देने से इसका नाम संजीवनी वटी है।

(सञ्जीवनी कथिता यतोऽस्याः प्रभावान्मानवो यदा मुमूर्षस्तदा जीवतीति। विचारणात्र न कार्या, अविचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीनां प्रभावः –आढमल्ल टीका)

12. औषध योग के प्रमुख द्रव्य के आधार पर जैसे योगराज गुग्गुलु, त्रिफला गुग्गुलु
13. कुछ औषध योग के नाम नक्षत्र पर है जैसे पुष्यानुगचूर्ण (पुष्य नक्षत्र के नाम पर)
14. निश्चित समय में रोगों पर अपना प्रभाव दिखाने के कारण जैसे–अष्टयामिका वटी

औषध सेवन काल

आचार्य चरक के अनुसार औषध सेवन काल 10 होते हैं। ये निम्न हैं–

भैषज्यकालो भुक्तादौ मध्ये पश्चान्मुहुर्मुहुः। सामुदगं भक्तसंयुक्तं ग्रासग्रासान्तरे दश॥

(च.चि. 30/298)

अर्थात् भैषज्य काल (1) प्रातः निरन्न (2) प्रातः भोजन पूर्व (3) भोजन के मध्य में (4) प्रातः भोजन पश्चात (5) सायं भोजन पश्चात (6) मुहुर्मुहु (बारबार) (7) सामुदग (भोजन के आदि तथा अन्त में) (8) सभक्त (9) ग्रास (10) ग्रासान्तर होते हैं। इन भैषज्य कालो का निम्न स्थिति में प्रयोग किया जाता है–

अपाने विगुणे पूर्वं समाने मध्यभोजनम्। व्याने तु प्रातरशितमुदाने भोजनोत्तरम्॥
वायौ प्राणे प्रदुष्टे तु ग्रासग्रासान्तरिष्यते। श्वासकासपिपासु त्ववचार्यं मुहुर्मुहुः॥
सामुदगं हिक्किने देयं लघुनाऽन्नेन संयुतम्। सम्भुक्तं त्वौषधं भोज्यैर्विचित्रैररूचौ हितम्॥

(च.चि. 30/299-301)

क्रम संख्या	औषध काल	प्रयोग
01	भोजन पूर्व	अपान वायु की विकृति
02	मध्य भोजन	समान वायु की विकृति में
03	प्रातः भोजन पूर्व	व्यान वायु विकृति में
04	प्रातः भोजन पश्चात	उदान वायु विकृति में
05	सायं भोजन पश्चात	
06	ग्रास	प्राण वायु की विकृति में
07	ग्रासान्तर	प्राण वायु की विकृति में
08	मुहुर्मुहुः	श्वास, कास तथा पिपासा में
09	सामुदग	हिक्का में (लघु अन्न के साथ)
10	सभक्त (भक्त संयुक्त)	अरूचि में

आचार्य सुश्रुत के अनुसार 10 भेषज काल–आचार्य सुश्रुत के अनुसार दस भेषज काल निम्न है–

1. **अभक्त–तत्राभक्तं तु यत् केवलमेवौषधमुपयुज्यते। वीर्याधिकं भवति भेषजमन्नहीनं हन्यात्तथाऽऽमयमसंशयमाशु चैव।** (सु.उ. 64/66)

प्रातःकाल खाली पेट औषध खिलाने को अभक्त औषध काल कहते हैं। अन्नहीन भेषज अधिक वीर्यवाली होती है अर्थात कार्य करने वाली होती है तथा रोग को शीघ्रता से नाश करती है।

2. **प्राग्भक्त–प्राग्भक्तं नाम–यत् प्राग्भक्तयोपयुज्यते। शीघ्रं विपाकमुपयाति बलं न हिंस्यादन्नावृतं न च मुहर्वदनान्निरेति।** (सु.उ. 64/68-69)

भोजन खाने से पूर्व औषधि प्रयोग करने को प्राग्भक्त औषध सेवन काल कहते हैं। अर्थात औषधि को खिलाकर तब भोजन को खिलाने का निर्देश होता है। ऐसी प्रयुक्त औषधि शीघ्र विपाक को प्राप्त होती है, बल को कम नहीं करती है। अन्न के साथ मिलने से वमन होकर (मुख से) बाहर नहीं आती है।

3. **अधोभक्त–अधोभक्तं नाम–यद्भुक्त्वा पीयते।** (सु.उ. 64/70)

जो औषधि खाने के बाद तुरन्त दी जाय वह काल अधोभक्त कहलाता है।

4. **मध्येभक्त–मध्ये भक्तं नाम–यन्मध्ये भक्तस्य पीयते।** (सु.उ. 64/72)

जो औषधि भोजन के मध्य में (अर्थात आधा भोजन करके) में प्रयुक्त की जाय वह मध्यभुक्त काल होता है।

5. **अन्तराभक्त–अन्तराभक्तं नाम–यदन्तरा पीयते पूर्वापरयोर्भक्तयोः।** (सु.उ. 64/73)

जो औषधि प्रातःकाल तथा सायंकाल भोजन के बीच में दी जाय उसे अन्तराभक्त काल कहते हैं।

6. **सभक्त–सभक्तं नाम–औषधेषु साध्यते यद्भक्तम्।** (सु.उ. 64/74)

जो औषधि भोजन के साथ-साथ (मिलाकर) दी जाय वह सभक्त के नाम से जाना जाता है।

7. **सामुद्ग–सामुद्गं नाम–यद्भक्तस्यादावन्ते च पीयते।** (सु.उ. 64/76)

इस काल में औषधि भोजन के आदि तथा अन्त में प्रयोग की जाती है।

8. **मुहुर्मुहुः–मुहुर्मुहुःर्नाम सभक्तमभक्तं वा यदौषधं मुहुर्मुहुःरूपयुज्यते।** (सु.उ. 64/78)

अन्न के साथ या बिना अन्न के जो औषधि बार-बार दी जाय उसे मुहुर्मुहु औषध काल कहते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

9. **सग्रास–ग्रासं तु यत्पिण्डव्यामिश्रम्।** (सु.उ. 64/80)

जो प्रत्येक/या कुछ ग्रास में मिलाकर दी जाय उसे सग्रास कहते हैं।

10. **ग्रासान्तर–ग्रासान्तरं तु यद्ग्रासान्तरेषु।** (सु.उ. 64/81)

जो औषधि दो ग्रास के बीच में दी जाय उसे ग्रासान्तर औषधि काल कहते हैं।

क्रम सं.	औषध काल	आचार्य सुश्रुत अनुसार प्रयोग	आचार्य वृद्ध वाग्भट्ट अनुसार प्रयोग
01	अभक्त	अधिकगुणकारी	कफोद्रेक
02	प्राग्भक्त	वृद्ध, शिशु, भीरू में	अपानवात विकृति, कायबलाधान
03	अधोभक्त	ऊर्ध्व काय गत रोग में	व्यान वात–प्रातः भोजनवाद उदानवात विकृति–सायं भोजन वाद
04	मध्ये भक्त	मध्योदर रोग	
05	अन्तराभक्त	हृदमनोबलकर, दीपन	व्यान वात विकृति
06	सभक्त	शिशु वृद्ध तथा औषध द्वेषी में	बाल, कुमार तथा औषधि द्वेषी में
07	सामुद्ग	दोषों के ऊर्ध्व तथा अधो भाग में होने पर	कम्प, आक्षेप तथा दोषों के ऊर्ध्व एवं अधः होने पर
08	मुहुर्मुहुः	श्वास, हिक्का, वमन	श्वास, कास, तृष्णा
09	ग्रास	वाजीकरण, दीपन	अग्निदीपन, वाजीकरण
10	ग्रासान्तर	श्वास, वमनीय धूम	प्राणवायु विकृति, हृद्रोग
11	निशि	–	ऊर्ध्व जत्रुगत रोग

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार औषध सेवन काल पाँच माने गये हैं जो कि निम्न है–

01. कुछ सूर्योदय होने पर–पित्तकफोद्रेक तथा विरेचन एवं वमन में

02. दिवस भोजन– भोजनाग्रे–अपान वायु विकृति में
भोजन मिश्र–अरूचि में
भोजन मध्य–समान वात विकृति तथा मन्दाग्नि में
भोजनान्ते–व्यान कोप
भोजन पूर्व एवं अन्त में–हिक्का, आक्षेप तथा कम्प में

03. सायन्त भोजन–ग्रास ग्रासान्तर–उदान कोप तथा स्वरभङ्ग में
भोजन अन्त–प्राण वायु दुष्टि

04. मुहुर्मुहुः–तृष्णा, छर्दि, हिक्का, श्वास अन्न के साथ

05. निशि–ऊर्ध्वजत्रुविकार तथा लेखन एवं वृंहण हेतु और पाचन तथा शमन हेतु बिना अन्न के।

सवीर्यता अवधि

आयुर्वेद शास्त्र में द्रव्यों की कार्मुकता वीर्य से ही मानी गयी है अर्थात् द्रव्य अपना कार्य वीर्य के द्वारा करता है। यथा–

शीतोष्णमिति वीर्य तु क्रियते येन या क्रिया। नावीर्य कुरूते किंचित सर्वा वीर्यकृता क्रिया॥

(च.सू. 26/65)

अर्थात शीत तथा उष्ण दो प्रकार के वीर्य होते हैं। क्रिया जिसके द्वारा निष्पन्न होती है, उसे वीर्य कहा जाता है, कोई भी द्रव्य बिना वीर्य के कुछ भी कर्म नहीं करता है, सारी क्रियायें वीर्य से ही निष्पन्न होती है।

इस प्रकार यदि सवीर्यता अवधि को परिभाषित किया जाय तो ऐसी समयावधि जिसमें कोई द्रव्य या कल्पना (dosage form) वीर्यवान रहती है अर्थात कार्य करने में सम्पन्न रहती है उस समयावधि को सवीर्यता अवधि कहा जाता है। इसे हम shelf life या stability period भी कह सकते हैं।

Shelf life–In modern time the term "shelf life" is used to indicate the time period during which an Active Pharmaceutical Ingredient (API) or Finished Pharmaceutical Product (FPP) is expected to remain with in the approved stability specification, provided that it is stored under the conditions defined on the container level.[1]

बृहत् त्रयी ग्रन्थों में कल्पनाओं का विशेष समयावधि का वर्णन तो उपलब्ध नहीं होता है लेकिन सूत्र रूप में आ. सुश्रुत ने कहा है–

विगन्धेनापरामृष्टमविपन्नं रसादिभिः। नवं द्रव्यं पुराणं वा ग्राह्यमेव विनिर्दिशेत्॥

(सु.सू. 36/15)

अर्थात् साधारण रूप से वह चाहे नया द्रव्य हो या पुराना द्रव्य हो यदि वह अपनी गन्ध, रस, वर्ण आदि में विकृत न हुआ हो तो उसे ग्रहण किया जा सकता है।

इस प्रकार इस सूत्र से यह कहा गया है कि नया द्रव्य का यदि रस, गुण, गन्ध आदि नष्ट हो गया है तो उसको ग्रहण नहीं करना चाहिए तथा यदि कोई पुराना द्रव्य यदि रस गन्ध आदि से युक्त हो तो उसे ग्रहण कर सकते हैं। इस प्रकार इसे सवीर्यता अवधि का प्रारम्भिक स्वरूप माना जा सकता है। कल्पनाओं के अनुसार सवीर्यता अवधि का वर्णन शार्ङ्गधर संहिता तथा योगरत्नाकर में उपलब्ध होता है।

योग रत्नाकर के अनुसार–

क्वाथस्य कल्कस्य रसस्य यामं मास त्रयं चाञ्जन चूर्ण वीर्यम्।
षण्मासवीर्य गुडलेहयोश्च संवत्सरं तैलकृतस्य वीर्यम्॥

(यो.र. ज्वर चिकि. औषध ग्रहण विचार 4)

अर्थात स्वरस, क्वाथ एवं कल्क 1 याम (3 घंटे), अंजन तथा चूर्ण तीन माह, गुड़ तथा अवलेह छः मास तथा तैल 1 साल तक वीर्यवान होते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार–औषधि कल्पनाओं की सवीर्यता अवधि आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार निम्न है–

गुणहीनं भवेद्वर्षादूर्ध्वं तद्रूपमौषधम् । मासद्वयान्धा चूर्णं हीनवीर्यत्वमाप्नुयात् ॥5 1॥
हीनत्वं गुटिकालेहौ लभेते वत्सरात्परम् । हीनाः स्युर्घृततैलाद्याश्चतुर्मासाधिकान्तधा ॥5 2॥
ओषध्यो लघुपाकाः स्युर्निवीर्या वत्सरात्परम् । पुराणाः स्युर्गुणैर्युक्ता आसवा धातवो रसाः ॥5 3॥
(शा.प्र. 1)

तद्रूपमौषधम् अर्थात अपने उसी रूप में रखी गयी (आडमल्ल के अनुसार जिस औषधि का चूर्ण आदि कल्पना न की गई हो) या कच्ची औषधि जो संग्रह करके रखी गयी है वह एक साल में गुणहीन हो जाती है। चूर्ण दो माह में हीन वीर्य हो जाते हैं। गुटिका अवलेह एक साल में हीन वीर्य हो जाते हैं। घृत तथा तैल सोलह महीने में हीन वीर्य हो जाते है। लघुपाकी औषधियाँ जैसे–यव, गोधूम आदि एक साल के पश्चात निर्वीर्य हो जाते हैं। आसव, धातु (भस्म) तथा रस औषधियाँ (रस भस्में) पुरानी होने पर भी गुणवान होती है।

विशेष–उपर्युक्त श्लोक की आडमल्ल टीका का उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक है जिससे इसकी वृहत व्याख्या हो सकेगी। वर्षादूर्ध्व अर्थात एक वर्ष या संवत्सर पश्चात गुणहीन हो जाते हैं अर्थात स्वकार्यकर, अपना कार्य नहीं कर पाते हैं। तद्रूपमौषधम् अर्थात अपने उसी स्वरूप में हो उसका चूर्ण आदि कल्पना न की गयी हो। चूर्ण तालीसाद्यादिकं, चूर्ण जैसे तलीशादि चूर्ण आदि दो मास पश्चात हीन वीर्य हो जाते हैं। वीर्यहानि का अर्थ है कि सर्व प्रकार के वीर्य से रहित नहीं हो जाते हैं। इसके तर्क में आचार्य ने लवण भास्कर चूर्ण का उल्लेख किया है जिसका शास्त्र सम्मत सेवन काल "बहु कालोपयोगिकम्" शब्द से बताया गया है अर्थात दो मास चूर्ण का सवीर्यतावधि का एक सामान्य सिद्धान्त है परन्तु इससे कम या ज्यादा भी हो सकता है। इसी प्रकार गुटिका, अवलेह आदि एक साल पश्चात अपने सभी गुणों का त्याग नहीं करते हैं परन्तु कुछ गुण से रहित हो जाते हैं। इसी प्रकार घृत तथा तैल एक संवत्सर पश्चात अपने सभी गुणों को नहीं त्याग करते हैं बल्कि कुछ गुण रहित हो जाते हैं। "चतुर्मासाधिकास्तथेति" इसकी दो व्याख्या किया गया है। प्रथम चार मास अधिक अर्थात एक संवत्सर तथा चार मास इस प्रकार कुल सोलह मास तथा दूसरी व्याख्या अनुसार चतुर्मास अर्थात वारिश के चार महीन बीत जाने के उपरान्त घृत तथा तैल अपने कुछ गुणों से रहित हो जाते हैं। घृत तथा तैल के सम्बन्ध में एक और मत पाया जाता है यथा–

घृतमब्दात् परं किञ्चित हीनवीर्यत्वमाप्नुयात् । तैलं पक्वमपक्वं वा चिरस्थायि गुणाधिकम् ॥

लघुपाकी औषधियाँ जैसे यव गोधूम आदि एक वर्ष पश्चात निर्वीर्य हो जाती हैं। पुराणाश्चिरकालस्थिता अर्थात बहुसंवत्सरोषिता, बहु अर्थात तीन साल से पुराना हो जाने पर विशिष्ट गुण युक्त हो जाते हैं।

(इस सम्बन्ध में यह सावधानी रखनी चाहिए कि ये आसव, धातु तथा रस भलीभाँति प्रकार से संरक्षित किये गये हो अन्यथा ये खराब हो सकते हैं।)

विभिन्न आयुर्वेद ग्रन्थों में वर्णित सवीर्यता अवधि को निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है–

क्रम सं.	कल्पना	विभिन्न कल्पनाओं की सवीर्यता अवधि	
		शार्ङ्गधर अनुसार	योगरत्नाकर अनुसार
01	स्वरस	–	03 घंटे
02	कल्क	–	03 घंटे
03	क्वाथ	–	03 घंटे
04	अंजन	–	तीन माह 03 माह
05	चूर्ण	02 माह	03 माह
06	वटी	1 वर्ष	–
07	गुड/अवलेह	12 माह	06 माह
08	घृत/तैल	16 माह	12 माह (तैल)
09	आसव अरिष्ट	दीर्घ काल	–
10	धातु	दीर्घ काल	–
11	रस	दीर्घ काल	–

आधुनिक समय में Ministry of Ayurveda, Yoga and Naturopathy, Unani, Siddha and Hamoeopathy (AYUSH), Government of India के द्वारा आयुर्वेदिक, सिद्धा तथा यूनानी औषधियों के सवीर्यता अवधि के सम्बन्ध में दिनांक 12 August, 2016 को एक Gazette Notificaion जारी किया गया है। जिसमें The Drugs and Cosmetics Rules, 1945 में संशोधन करते हुए Rule 161-B shelf life or date of expiry of medicines का समावेश किया गया है *G.S.R. No.789(E) जो कि आयुर्वेदिक सिद्धा तथा यूनानी औषधियों के सवीर्यता अवधि को बताता है। यह नियम इस प्रकार है–

"161-B, shelf life or date of expiry of medicines– The date of expiry of Ayurvedic, Siddha or Unani medicines shall be conspicuously displayed on the label of container or package of Ayurvedic, Siddha or Unani medicines, as the case may be, and after the said date of expiry, no medicine shall be marketed, sold, distributed or consumable.

Provided that this rule shall apply to Ayurvedic, Siddha and Unani medicines seeking licence or renewal of licence for manufacturing after the date of notification of the rules.

Provided also that this rule shall not be applicable to the Ayurvedic, Siddha or Uniani medicines manufactured and marketed prior to the date of this notification.

The shelf life or date of expiry of an Ayurveda, Siddha or Unani medicine defined under clause (a) of section 3 of the Act shall, unless otherwise determined on the basis of scientific data, be as follows:–

Scanned with OKEN Scanner

S. No. (1)	Dosage form (2)	Shelf life or date of expiry with effect from the date of manufacture
	Anjana	
(i)	(a) Anjana made from Kasthaushadhi	1 year
	(b) Anjana made from Kasthaushadhi along with Rasa/Uprasa/Bhasma	2 years
	(c) Anjana made only from rasa/Uprasa/Bhasma	3 years
(ii)	Arka	1 year
(iii)	Asava Arista	10 years
(iv)	Avaleha, Khanda, Paka, Guda	3 years
(v)	Churna, Kwatha Churna, Lepa Churna, Danta Manjan (Churna)	2 years
(vi)	Dhoopan	2 years
(vii)	Dravaka, Lavana, Kshara	5 years
(viii)	Ghrita	2 years
(ix)	Guggulu	5 years
(x)	Gutika/Vati	
	(I) Gutika or Vati containing Kasthaushadhi along with Rasa/Uprasa/Bhasma/Guggulu (including Lepa Gutika and Ghan Vati)	5 years
	(II) Gutika or Vati containing only Kasthaushadhi (including Lepa Gutika and Ghan Vati)	3 years
	(III) Gutika/Vati containing only Rasa/Uprasa/ Bhasma except Naga, Vanga and Tamra Bhasma	10 years
(xi)	Karna/Nasabindu	2 years
(xii)	Kupipakva Rasayana	10 years
(xiii)	Malhar	3 years
(xiv)	Mandur-Lauha	10 years
(xv)	Naga Bhasma, Vanga Bhasma and Tamra Bhasma	5 years
(xvi)	Netrabindu	1 year

(xvii)	Parpati	10 years
(xviii)	Pisthi and Bhasma except Naga. Vanga and Tamra	10 years
(xix)	Pravahi Kwatha	3 years
(xx)	Rasayoga	
	(I) Rasayoga containing only Rasa/Uprasa/Bhasma except Naga	10 years
	(II) Rasayoga containing Rasa/Uparasa/Bhasma along with Kasthaushadhi/Guggulu	5 years
(xxi)	Sattva (derived from medicinal plant)	2 years
(xxii)	Sharkar/Panak/Sharbat	3 years
(xxiii)	Shveta Parpati	2 years
(xxiv)	Taila	3 years
(xxv)	Varti	2 years

औषधि मात्रा

आयुर्वेदीय संहिता ग्रन्थों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि औषध मात्रा सामान्य रूप में रोगी के अग्नि बल पर निर्भर करती है इसलिए आचार्य चरक ने कल्पनाओं की कोई निश्चित मात्रा का वर्णन न करते हुए अधिकांश योगों की मात्रा अग्नि बल के अनुसार देने का निर्देश किया है। आचार्य सुश्रुत ने कुछ कल्पनाओं जैसे चूर्ण, कल्क तथा क्वाथ की मध्यम व्याधि बल होने पर ही इनकी निश्चित मात्रा विडालपदक, अक्ष तथा अञ्जलि मात्रा क्रमशः देने का उल्लेख किया है। इसी प्रकार आचार्य काश्यप ने बालकों की मात्रा को निश्चित किया है तथा आचार्य शार्ङ्गधर ने एवं योगरत्नाकर ने भी बच्चों की निश्चित मात्रा देने का उल्लेख किया है।

विशेष–इस वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य चरक ने काल के पश्चात औषधि मात्रा निर्धारित करने में समस्या आ रही होगी जिस कारण परवर्ती आचार्यों ने कल्पना अनुसार एक निश्चित मात्रा का उल्लेख किया हो।

आचार्य चरक का मत–

नाल्पं हन्त्यौषधं व्याधिं यथाऽऽपोऽल्पा महानलम्। दोषवच्चातिमात्रं स्यात्सस्यात्युदकं यथा॥
सम्प्रधार्य बलं तस्मादामयस्यौषधस्य च। नैवातिबहु नात्यल्पं भैषज्यमवचारयेत्॥

(च.चि. 30/313.14)

जिस प्रकार थोड़ा सा पानी छिड़कर विशाल आग को नहीं बुझाया जा सकता है, उसी प्रकार थोड़ी मात्रा में दी गयी औषध रोग को दूर नहीं कर सकती। इसी प्रकार जैसे पानी की अधिकता कृषि को नष्ट कर देती है वैसे ही अधिक मात्रा में दी गयी औषध उपद्रव करती है। इसलिए रोग और औषध के बल को अच्छी प्रकार से समझकर औषध की न बहुत अधिक मात्रा न बहुत कम मात्रा (अपितु उचित मात्रा) का प्रयोग करना चाहिए। इसी को आचार्य ने विमान स्थान में भी स्पष्ट किया है। यथा–

Scanned with OKEN Scanner

दोष प्रमाणानुरूपो हि भैषज्यप्रमाणविकल्पो बल प्रमाणविशेषापेक्षो भवति । (च. वि. 8/94)

अर्थात दोष के प्रमाण के अनुरूप औषध का प्रमाण दिया जाता है। इसी को आचार्य ने पंच कषाय कल्पना के सन्दर्भ में भी कहा है। यथा–

तेषां यथापूर्व बलाधिक्यम्, अतः कषायकल्पना व्याध्यातुरबलापेक्षिणी, न त्वेवं खलु सर्वाणि सर्वत्रोपयोगीनि भवन्ति ॥ (च.सू. 4/711)

अर्थात ये कषाय कल्पनायें यथापूर्व अधिक बलवान होते हैं। इसलिए इनका प्रयोग व्याधि तथा आतुर के बल पर निर्भर करता है तथा सभी कषाय कल्पनायें सभी रोगों में उपयोगी नहीं होते हैं।

यहाँ पर चरक संहिता में वर्णित कुछ प्रमुख योग एवं उनकी मात्रा का उल्लेख किया जा रहा है–

क्रम सं.	योग का नाम	मात्रा	सन्दर्भ
01	प्रथम ब्राह्य रसायन	यो नोपरून्धयादाहार (जितने मात्रा से भोजन की इच्छा खत्म न हो)	च.चि. 1/153
02	द्वितीय ब्राह्य रसायन	अग्नि बलमभिसमीक्ष्य (अग्निबलानुसार)	च.चि. 1/1/58
03	च्यवनप्राश	योपरून्धात्र भोजनम् (जितने मात्रा से भोजन की इच्छा खत्म न हो)	च.चि. 1/1/72
04	आमलक रसायन	अग्निबलमभिसमीक्ष्य (अग्निबलानुसार)	च.चि. 1/2/7
05	भल्लातक क्षीर	10 से 30 (बढ़ाते एवं घटाते क्रम से)	च.चि. 1/2/13
06	पिप्पली रसायन	5, 7, 8 या 10 (वर्द्धमान रूप में)	च.चि. 1/3/39
07	शिलाजीत रसायन	1 पल, $^1/_2$ पल या 1 कर्ष	च.चि. 1/3/55
08	इन्द्रोक्त रसायन	अग्नि समां (अग्नि अनुसार)	च.चि. 1/4/21
09	वृहणी गुटिका	यथाग्नि प्रयोजयेत	च.चि. 2/1/32
10.	वृष्य योग	अग्नि समां	च.चि. 2/4/27
11.	वृष्य गुटिका	गुटिकाः कारयेद्वैद्यो यथा स्थूलमुदुम्बरम्	च.चि. 2/4/32
12.	नीलिन्याद्यं घृतम्	पल मात्रा	च.चि. 5/107
13.	महातिक्त घृत	यथा बलं	च.चि. 7/150
14.	एलादि गुटिका	अक्ष मात्रा	च.चि. 11/22

15.	पुनर्नवाद्यरिष्ट	व्याधि बल अनुसार	च.चि. 12/36
16.	क्षारगुडिका	कोल मात्रा	च.चि. 12/45
17.	चित्रक घृत	अग्नि बल अनुसार	च.चि. 12/59
18.	कंस हरीतकी	1 अभया तथा 1 शुक्ति मात्रा में अवलेह	च.चि. 11/51
19.	अभयारिष्ट	यथा बलम् (बल अनुसार)	च.चि. 14/141
20.	द्वितीय फलारिष्ट	यथा बलम् (बल अनुसार)	च.चि. 14/155
21.	कुटजादि रस क्रिया	यथाग्नि बलम्	च.चि. 14/190
22.	पञ्चम क्षार	पाणितल मात्रा	च.चि. 15/191
23.	मण्डूर वटक	यथा अग्नि	च.चि. 16/74
24.	योगराज	यथा अग्नि	च.चि. 16/83
25.	धात्र्यवलेह	पाणितल	च.चि. 16/101
26.	मण्डूर वटक	यथा अग्नि	च.चि. 16/104
27.	मुक्ताद्य चूर्ण	पाणितल मात्रा	च.चि. 17/27
28.	तेजोवत्यादि घृतम्	चतुर्थिका मात्रा	च.चि. 18/58
29.	अगस्त्य हरीतकी	2 अभया	च.चि. 18/60
30.	दन्ती हरीतकी	1 पल लेह तथा 1 हरीतकी	

आचार्य सुश्रुत के अनुसार मात्रा–आचार्य सुश्रुत के अनुसार मध्य वय एवं मध्यम व्याधि बल में निम्न मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। यथा–

व्याध्यादिषु तु मध्येषु क्वाथस्याञ्जलिरिष्यते । विडालपदकं चूर्णे देयः कल्कोऽक्ष संमितः ॥
(सु.सू. 39/14)

व्याधि, अग्नि तथा रोगी के बल के मध्यम होने पर क्वाथ 1 अंजलि (4 पल), चूर्ण 1 विडालपदक (1 तोला) तथा कल्क 1 अक्ष (1 तोला) का प्रमाण का होना चाहिए।

विभिन्न आचार्यों के अनुसार औषधि मात्रा को निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है।

Scanned with OKEN Scanner

विभिन्न आचार्यों के अनुसार कल्पनाओं की मात्रा

क्रम सं.	कल्पना	मात्रा सुश्रुत संहिता (मध्यम मात्रा)	अष्टांग संग्रह	अष्टांग हृदय (मध्यम मात्रा)	शार्ङ्गधर संहिता	भाव प्रकाश
01	स्वरस		4 पल	4 पल	$^1/_2$ पल (आधा पल) अग्नि सिद्ध–1 पल निशोषित–1 पल	$^1/_2$ से 1 पल
02	पुटपाक स्वरस				1 पल	
03	कल्क	1 अक्ष	1 कर्ष	1 कर्ष	1 कर्ष	1 कर्ष
04	क्वाथ	1 अंजलि			2 पल	1 पल 3 कर्ष $^1/_2$ पल
05	हिम				2 पल	2 पल
06	फाण्ट				2 पल	2 पल
07	मन्थ				2 पल	2 पल
08	चूर्ण	1 विडालपदक	1 कर्ष	1 कर्ष	1 कर्ष	1 कर्ष
09	वटी				1 कर्ष	1 कर्ष
10	अवलेह				1 पल	1 पल
11	स्नेह				1 पल	1 पल
12	आसव/ अरिष्ट				1 पल	

आचार्य काश्यप के अनुसार मात्रा–आचार्य काश्यप की काश्यप संहिता जो कि मुख्य रूप से बच्चों की चिकित्सा आदि से सम्बन्धित है, उस संहिता में बच्चों को प्रयोग की जाने वाली औषधियों की मात्रा का उल्लेख किया है। इस संहिता में वयानुसार औषधि मात्रा का वर्णन किया गया है। इसमें वय को सर्वप्रथम तीन भागों यथा गर्भ, बाल तथा कुमार में विभाजित किया है। पुनः यौवन, मध्यम तथा वृद्ध भेद भी बताया गया है। एक वर्ष की अवस्था तक जब तक बालक दूध पीता है उसे क्षीरप कहा जाता है। यह बाल अवस्था होती है। एक वर्ष से 16 वर्ष तक अन्नाद या कुमारावस्था तथा 16 वर्ष से 34 वर्ष तक युवावस्था कही गयी है। 34 से 70 वर्ष तक मध्यमावस्था तथा 70 वर्ष से आयु पर्यन्त (मृत्यु पर्यन्त) को वृद्धा अवस्था कहा गया है।

विभिन्न आचार्यों द्वारा वर्णित बच्चों की औषधि मात्रा

क्रम सं.	वय	औषधि मात्रा आचार्य काश्यप	आचार्य शार्ङ्गधर	आचार्य विश्वामित्र
01	0-6 दिन	छोटे बेर की गुठली बराबर		1 विडंग फल समान (जातमात्र/नवजात)
02	6-10 दिन	छोटे बेर की गुठली से कुछ अधिक		
03	10-20 दिन	कोलार्ध		
04	20-30 दिन	1 कोल		
05	1 मास	1 कोल से कुछ अधिक	1 रत्ती=125 mg	1 विडंगफल समान
06	2 मास	1 कोल से कुछ अधिक	2 रत्ती	2 विडंगफल
07	3 मास	2 कोल	3 रत्ती	3 विडंगफल
08	4 मास	शुष्क आमलकी के समान	4 रत्ती	4 विडंगफल
09	5 मास	आर्द्र आमलकी के समान	5 रत्ती	5 विडंगफल
10	6 मास	आर्द्र आमलकी के समान	6 रत्ती	6 विडंगफल
11	7 मास	आर्द्र आमलकी से कुछ अधिक	7 रत्ती	7 विडंगफल
12	8 मास	आर्द्र आमलकी से कुछ अधिक	8 रत्ती	8 विडंगफल
13	9 मास		9 रत्ती	9 विडंगफल
14	10 मास		10 रत्ती	10 विडंगफल
15	11 मास		11 रत्ती	11 विडंगफल
16	12 मास		12 रत्ती=1.5gm	12 विडंगफल
17	क्षीर अन्नाद	अग्नि अनुसार	-	कोल मात्रा
18	अन्नाद	मुष्टि, पल, प्रसृत या अंजलि प्रमाण	-	उदुम्बर मात्रा

आचार्य शार्ङ्गधर ने 1 वर्ष पश्चात प्रतिवर्ष 1 माष की वृद्धि करते हुए औषधि देने को कहा है। तथा 16 वर्ष तक की जो मात्रा है अर्थात् 16 माष उतनी ही मात्रा 70 वर्ष तक के आयु वाले व्यक्ति की होती है। तत् पश्चात घटाते हुए देना है। यह मात्रा कल्क चूर्ण आदि की है कषाय की मात्रा इससे 4 गुना होती है।

Scanned with OKEN Scanner

(यहाँ पर 1 माष = 6 गुञ्जा होता है अर्थात 750 मिली ग्राम

1 वर्ष	1.5 ग्रा	05 वर्ष	4.5 ग्रा	09 वर्ष	7.5 ग्रा	13 वर्ष	10.5 ग्रा
2 वर्ष	2.250 ग्रा	06 वर्ष	5.250 ग्रा	10 वर्ष	8.250 ग्रा	14 वर्ष	11.250 ग्रा
3 वर्ष	3.0 ग्रा	07 वर्ष	6.0 ग्रा	11 वर्ष	9.0 ग्रा	15 वर्ष	12.0 ग्रा
4 वर्ष	3.750 ग्रा	08 वर्ष	6.750 ग्रा	12 वर्ष	9.750 ग्रा	16-70 वर्ष	12.750 ग्रा

आचार्य सुश्रुत के अनुसार एक मास से ऊपर तथा क्षीराद शिशु के लिए अंगुली पर्व द्वय मात्रा, क्षीर अन्नाद में कोलास्थि समान मात्रा तथा अन्नाद में कोल समान मात्रा प्रयोग करनी चाहिए।

हारीत के अनुसार वमन विरेचन में कर्ष प्रमाण, संतर्पण औषधि पल प्रमाण, चूर्ण कर्ष प्रमाण में, क्षार औषधि आधा पल मात्रा में, हरीतकी कर्ष प्रमाण, लहसुन का कल्क तथा गुग्गुलु पल प्रमाण में, सूरणकन्द कल्क प्रमाण तथा लोह आदि का चूर्ण कर्ष प्रमाण में देना चाहिए। (हारीत संहिता चतुर्थ स्थान प्रथम अध्याय)

अनुपान/सहपान

अन्नादनु पश्चात् पीयत इत्यनुपानम्–डल्हण

अर्थात् अन्न खाने के पश्चात जो पीया जाय उसे अनुपान कहते हैं। शार्ङ्गधर संहिता मध्यम खण्ड के अध्याय 6 श्लोक संख्या 4-5 की टीका में आढमल्ल ने कहा है–

अनुपश्चात् पानम्। औषधभक्षणोपरि यत्पीतं तदनुपानमित्यर्थः।

अर्थात् औषध खाने के पश्चात जो पीया जाय उसे अनुपान कहते हैं।

उपरोक्त दोनों टीकाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अन्न या औषध खाने के पश्चात जिस (द्रव) का पान किया जाय उसे अनुपान कहते हैं।

रसतरङ्गिणी के अनुसार अनुपान की परिभाषा

तत्तद्रोगघ्नभैषज्यं भेषजस्यानुपीयते। यच्च साहाय्यकारि स्यादनुपानं तदुच्यते॥

(रस तर. 6/200)

सहपान—घृत, शहद, आदि द्रव्य को जब औषधि में मिलाकर सेवन किया जाता है तो इसे सहपान कहा जाता है।

उचित रूप में अनुपान सेवन से लाभ

आचार्य चरक के अनुसार उचित रूप में अनुपान सेवन शीघ्र तृप्ति करने वाला तथा आयु एवं बलवृद्धि करने वाला एवं आहार को सुखपूर्वक पचाने वाला होता है। यथा–

अनुपानं हितं युक्तं तर्पयत्याशु मानवम्। सुखं पचति चाहारायायुषे च बलाय च॥

(च.सू. 27/326)

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार औषध सेवन के पश्चात अनुपान लेने पर जैसे तैल के ऊपर जल की बिन्दु डालने

से वह क्षण मात्र में सम्पूर्ण जल के ऊपर फैल जाती है उसी प्रकार सम्यक् अनुपान औषधि को बलपूर्वक शरीर के सभी अङ्गों में फैला देता है अर्थात् पहुँच जाता है। यथा–

यथा तैलं जले क्षिप्तं क्षणेनैव प्रसर्पति। अनुपानबलादङ्गे तथा सर्पति भेषजम्॥

(शा.म. 6/5)

उत्तम अनुपान

आचार्य चरक के अनुसार प्रयोग किया जाने वाला अनुपान निम्न गुण वाला होना चाहिए–

यदाहारगुणैः पानं विपरीतं तदिष्यते। अन्नानुपानं धातूनां दृष्टं यत्र विरोधि च॥

(च.सू. 27/319)

अर्थात् जो पेय पदार्थ आहार के विपरीत गुण वाला होता है वह अन्न द्रव्यों का उचित अनुपान होता है। पर वह अनुपान धातुओं का विरोधी नहीं होना चाहिए।

अनुपान के गुण

आचार्य सुश्रुत ने अनुपान के निम्न गुण बताये हैं–

रोचनं बृंहणं वृष्यं दोषसङ्घात भेदनम्। तर्पणं मार्दवकरं श्रमक्लमहरं सखम्॥
दीपनं दोषशमनं पिपासाच्छेदनं परम्। बल्यं वर्णकरं सम्यगनुपानं सदोच्यते॥

(सु.सू. 46/442-43)

उचित प्रकार के प्रयुक्त किया गया अनुपान रोचक, बृंहण करने वाला, वृष्य, दोष संघात का भेदन करने वाला, तृप्तिकारक, मृदु करने वाला, श्रम तथा क्लम को दूर करने वाला, दीपन, दोषों का शमन करने वाला, पिपासा का नाशक तथा बल एवं वर्ण को बढ़ाने वाला होता है।

यौगिक द्रव्य सिद्धान्त

विरूद्धवीर्यमत्येषां प्रधानानामबाधकम्। अधिकं तुल्यवीर्ये हि क्रियासामर्थ्यमिष्यते॥

(च.क. 12/45)

किसी भी योग में विरूद्ध वीर्य वाले द्रव्यों का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन यह द्रव्य योग के प्रधान द्रव्य का विरोधी नहीं होना चाहिए। यदि प्रधान द्रव्य के समान वीर्य वाले द्रव्य को मिलाकर योग बनाया गया है तो वह प्रधान द्रव्य की क्रिया को बढ़ा देता है। इसी प्रकार विरूद्ध वीर्य द्रव्यों का प्रयोग योग में वांक्षित वर्ण, रस, स्पर्श एवं गन्ध की उत्पत्ति के लिए किया जाता है। तथा

भूयश्चैषां बलाधानं कार्यं स्वरस भावनैः। सुभावितं ह्यल्पमपि द्रव्यं स्याद्बहुकर्मकृत्॥
स्वरसैतुल्यवीर्यैर्वा तस्माद्द्रव्याणि भावयेत्॥ (च.क. 12/40)

औषधि को बलाधान के लिए उसके समान वीर्य वाले औषधि के स्वरस की भावना देनी चाहिए। क्योंकि सुन्दर रूप से किसी भी द्रव्य में दी गई भावना उस द्रव्य की शक्ति को बढ़ाता है और सुभावित द्रव्य अल्प मात्रा में ही बहु कर्म करने वाला हो जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

अल्पस्यापि महार्थत्वं प्रभूतस्याल्पकर्मताम् । कुर्यात संयोग विश्लेष काल संस्कार युक्तिभिः ॥
(च.क. 12/44)

द्रव्यों का अन्य द्रव्यों के संयोग से, अलगाव (sepration), विशेष काल में प्रयोग से या काल प्रभाव (जैसे घृत तैल को एक दिन से ज्यादा दिन में सिद्ध करने से विशेष गुण का संचय होना कहा गया है) तथा संस्कार से अल्प द्रव्य भी महान कार्य करने वाला तथा महान द्रव्य अल्प कार्य करने वाला हो जाता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. किस ऋतु में सभी कार्य के उपयोग हेतु औषधि का ग्रहण किया जा सकता है—
   a. वसन्त b. वर्षा c. हेमन्त **d. शरद**
2. आचार्य चरक ने कितने औषधकाल माने है—
   a. 11 b. 05 **c. 10** d. 09
3. चूर्ण की सवीर्यता अवधि आयुर्वेदिक मतानुसार है—
   a. 3 माह b. 4 माह c. 5 माह **d. 2 माह**
4. ड्रग एवं कास्मेटिक रूल के अनुसार घृत की सवीर्यता अवधि है—
   a. 2 साल b. 4 साल c. 3 साल d. कोई नहीं

यन्त्रोपकरणानि - I

अध्याय 4

यन्त्र परिभाषा

स्वेदादिकर्म निर्मातुं वार्तिकेन्द्रैः प्रयत्नतः । यन्त्र्यते पारदो यस्मात्तस्माद्यन्त्रमिति स्मृतम् ॥
(र.र.स. 9/2)

स्वेदन आदि कार्य को करने के लिये रससिद्ध पारद का नियन्त्रण जिस साधन से करते हैं उसे यन्त्र कहते हैं ।

दोला यन्त्र

द्रवद्रव्येण भाण्डस्य पूरितार्धोदकस्य च । मुखस्योभयतो द्वारद्वयं कृत्वा प्रयत्नतः ॥
तयोस्तु निक्षिपेद्दण्डं तन्मध्ये रसपोटलीम् । बद्ध्वा तु स्वेदयेदेतद्दोलायन्त्रमिति स्मृतम् ॥
(र.र.स. 9/3-4)

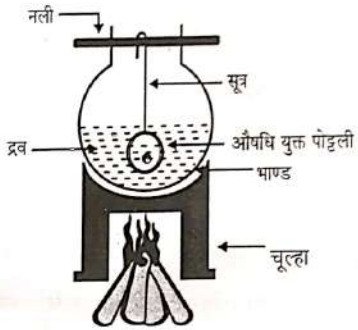

दोला यन्त्र

सिद्धान्त—द्रव एवं अग्नि सन्निकर्ष

एक भाण्ड लेकर उसके गले में दो छिद्र आमने सामने इस प्रकार बनाते हैं कि इसमें एक नली प्रविष्ट हो सके । अब इस भाण्ड के आधे भाग में द्रव द्रव्य (स्वेदन हेतु यथा स्वरस, क्वाथ आदि) भर देते है । ततपश्चात् जिस द्रव्य का स्वेदन करना हो उसको एक पोटली में रखकर सूत्र की सहायता से बाधकर इसे द्रव में लटका देते है । तत्पश्चात् इसे मन्दाग्नि प्रदान करते हैं । यही दोला यन्त्र है । इसमें इस बात का विशेष ध्यान रखते हैं कि पोटली भाण्ड के तल को न स्पर्श करे और नहीं द्रव के वाहर रहे बल्कि द्रव में अच्छी प्रकार से डूबी रहे ।

उपयोग— विभिन्न प्रकार के द्रव्यों के स्वेदन हेतु प्रयोग करते हैं । इस यन्त्र का प्रयोग शोधन आदि कर्म में विशेष रूप से होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

बालुका यन्त्र

सरसां गूढवक्त्रां मृद्वस्त्राङ्गुलघनावृताम् । शोषितां काचकलशीं त्रिषु भागेषु पूरयेत् ॥
भाण्डे वितस्तिगम्भीरे बालुकासु प्रतिष्ठिताम् । तद्भाण्डं पूरयेत्त्रिभिरन्याभिरवगुण्ठयेत् ॥
भाण्डवक्त्रं मणिकया सन्धिं लिम्पेन्मृदा पचेत् । चुल्ल्यां तृणस्य चादाहान्मणिकापृष्ठवर्तिनः ।
एतद्धि बालुकायन्त्रं तद्यन्त्रं लवणाश्रयम् ॥ पंचाढबालुकापूर्णभाण्डे निक्षिप्य यत्नतः ।
पच्यते रसगोलाद्यं बालुकायन्त्रमीरितम् ॥ (र.र.स. 9/36-39)

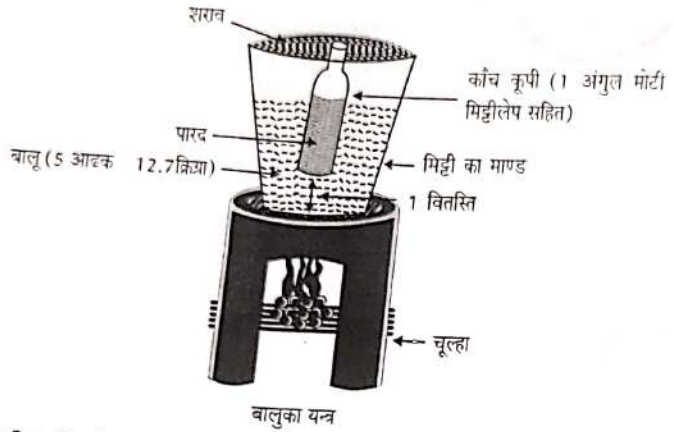

बालुका यन्त्र

सिद्धान्त—अग्नि सन्निकर्ष तथा पातन

इस यन्त्र को निम्न रूप में वर्णित किया जा सकता है ।

1. एक काँच कूपी लेगें जिस पर 1 अंगुल मोटी कपड़ मिट्टी करते हैं ।
2. इस कूपी का तीन भाग पारद युक्त द्रव्य (कज्जली आदि) से भर देते हैं ।
3. एक वितस्ति मिट्टी का बड़ा भाण्ड लेते है जिसमें कि यह कूपी आ सके तथा कूपी के नीचे मोटी बालू का स्तर होगा ।
4. अब इस भाण्ड में कूपी को रखकर उसे पाँच आढ़क मात्रा में बालू लेकर इस प्रकार भरते हैं कि कूची का तीन भाग ढक जाय तथा नांद का चौथाई भाग खाली रहे ।
5. भाण्ड के मुख को एक बड़ी शराव से ढककर सन्धिबन्धन करते हैं ।
6. इसे मृदु, मध्य तथा तीव्र अग्नि के क्रम में आँच तब तक देते हैं जब तक कि शराव के ऊपर सूखा तृण रखने पर यह जलने न लगे ।

उपयोग– कूपी पक्व (रस सिन्दूर, मल्ल सिन्दूर, मकर ध्वज आदि) निर्माण हेतु । उपरोक्त वर्णित यन्त्र में यदि बालुका के स्थान पर लवण लेते हैं तो इसे लवण यन्त्र कहते हैं ।

वक्तव्य–आजकल बालुका यन्त्र के साथ-साथ कूपी पक्व का निर्माण Vertical EMF द्वारा किया जाता है।

पुट यन्त्र

शरावसम्पुटान्तःस्थं करीषेष्वाग्निमानवित् । पचेच्चुल्यां द्वियामं वा रसं तत्पुटयन्त्रकम् ॥
(र.र.स. 9/45)

सिद्धान्त—अग्नि सन्निकर्ष

औषधि मिश्रित रस, उपरस या धातु आदि को शराव सम्पुट में बन्दकर उसे करीष की उचित अग्नि मान में दो याम तक चूल्हे पर पकाते हैं । इसे पुट यन्त्र कहा जाता है।

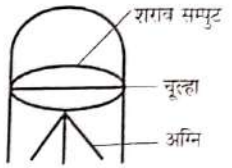

खल्व यन्त्र

खल्व यन्त्र त्रिधा प्रोक्तं रसादि सुखमर्दने । (र.र.स. 9/81)

रस, महारस आदि द्रव्यों के सुखपूर्वक मर्दन हेतु तीन प्रकार के खल्व यन्त्र बताये गये है । खल्व यन्त्र को सामान्य भाषा में खरल कहा जाता है । इसके तीन प्रकार निम्न है—

1. अर्द्धचन्द्राकार खल्ल 2. वर्तुल खल्ल 3. तप्त खल्ल

सिद्धान्त—मर्दन/भावना

रसतरंगिणी में वर्तुल तथा द्रोणी रूप खल्व का वर्णन किया गया है ।

1. अर्द्धचन्द्राकार खल्ल यन्त्र

उत्सेधे स दशाङ्गुलः खलुं कलातुल्याङ्गुलायामवान् । विस्तारेण दशाङ्गुलो मुनिमितैनिम्नस्तथैवाङ्गुलैः॥
पाल्यां द्व्यङ्गुलविस्तरश्च मसृणोऽतीवार्द्धचन्द्रोपमो । घर्षो द्वादशकाङ्गुलश्च तदयं खल्लो मतः सिद्धये ॥
(र.र.स. 9/83)

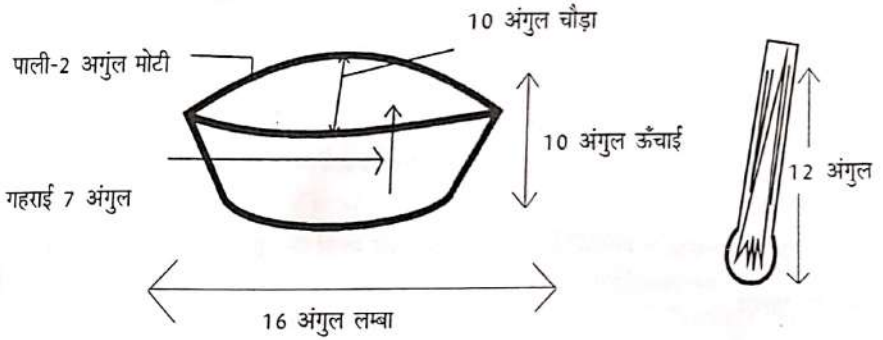

अर्द्धचन्द्राकार खल्ल की Dimentions निम्न होंगे

ऊँचाई– 10 अंगुल गहराई– 7 अंगुल

Scanned with OKEN Scanner

लम्बाई- 16 अंगुल पाली- 2 अंगुल मोटी

चौड़ाई- 10 अंगुल मूसल- 12 अंगुल लम्बा तथा 12 अंगुल परिधि वाला

उपादान द्रव्य- पत्थर का

उपयोग- **अस्मिन्यञ्जपलः सूतो मर्दनीयो विशुद्धये ।** (र.र.स. 9/84)

उपरोक्त वर्णित खल्व में 5 पल (240 ग्रा.) पारद का मर्दन करते हैं ।

आचार्य के अनुसार उपयोग की दृष्टि से इसमें परिवर्तन किया जा सकता है । यथा-

तत्तदौचित्ययोगेन खल्लेष्वन्येषु योजयेत् । (र.र.स. 9/84)

2. वर्तुल खल्ल यन्त्र

द्वादशाङ्गुलविस्तारः खल्लोऽतिमसृणोपलः । चतुरङ्गुलनिम्नश्च मध्येऽतिमसृणीकृतः ॥
मर्दकश्चिपिटोऽधस्तात्सुग्राहश्च शिखोपरि । अयं तु वर्तुलः खल्लो मर्दनेऽतिसुखप्रदः ॥

(र.र.स. 9/85-86)

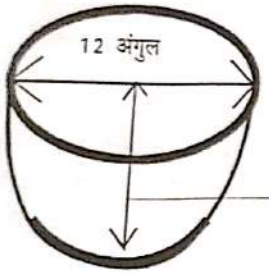

वर्तुल खल्ल

पेषणी

इस खल्व की चौड़ाई (व्यास) 12 अंगुल तथा गहराई 4 अंगुल होती है ।इस खल्व यन्त्र का तल भाग अत्यन्त चिकना तथा हाथ में आसानी से पकड़ में आने वाली मर्दक (पेषणी) का निर्माण करना चाहिए । ऐसा खरल में मर्दन में आसानी होती है ।

उपादान द्रव्य- पत्थर

3. तप्तखल्ल

लौहो नवाङ्गुलः खल्लो निम्नत्वे च षडङ्गुलः । मर्दकोऽष्टाङ्गुलश्चैव तप्तखल्लाभिधोऽप्ययम् ॥

(र.र.स. 9/87)

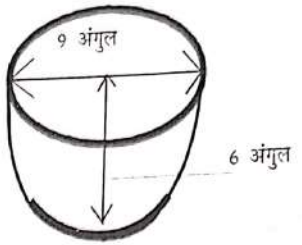

मर्दक

इस खल्व की निम्न विशेषतायें होंगी-

इसकी चौड़ाई (व्यास) 9 अंगुल का होगा तथा गहराई 6 अंगुल एवं इसका मर्दक 8 अंगुल लम्बा होगा । ग्रन्थान्तर (रस कामधेनु) में इसका आकार वर्तुल कहा गया है ।

उपादान द्रव्य- यह खल्ल लोहे से निर्मित होगा ।

उपयोग विधि-

कृत्वा खल्लाकृतिं चुल्लीमङ्गारैः परिपूरिताम् । तस्यां निवेश्य तं खल्लं पार्श्वे भस्त्रिकया धमेत् ॥
तदन्तर्मर्दिता पिष्टिः क्षारैरम्लैश्च संयुता । प्रद्रवत्यतिवेगेन स्वेदिता नात्र संशयः ॥

(र.र.स. 9/88-89)

खल्ल के आकार का चूल्हा बनाकर उसे अङ्गार से भरकर उसके ऊपर खल्व रखते हैं तथा भस्त्रिका (धौकनी) से धमन करते है । जिससे यह खल्व तप्त होता है । यही खल्व यन्त्र है । इसके द्वारा जल्दी ही स्वेदन हो जाता है ।

विमर्श- खल्व के उपादन द्रव्यों में पत्थर तथा लोह या कान्तलोह, मिट्टी, लोहपाषाण, अयसकान्त तथा स्फटिक से निर्मित करने का उल्लेख रस ग्रन्थों में प्राप्त होता है । रसरत्नसमुच्चय में नीले रंग की शिला का उल्लेख इस हेतु किया गया है । यथा—

मृन्मये लोह पाषाणे ह्यस्कान्तमयेऽथवा । क्वचिन्तु पाषाणे स्फटिके वाऽथ मुक्ताशैलमयेऽथवा ॥

(रसा. 4/49)

पातन यन्त्र

सिद्धान्त—पातन

ऊर्ध्वपातन यन्त्र

अष्टाङ्गुलपरीणाहमानाहेन दशाङ्गुलम् । चतुरङ्गुलकोत्सेधं तोयाधारं गलादधः ॥
अधोभाण्डमुखं तस्य भाण्डस्योपरि वर्तिनः । षोडशाङ्गुलविस्तीर्णपृष्ठस्यास्ये प्रवेशयेत् ॥
पार्श्वयोर्महिषीक्षीरचूर्णमण्डूरफाणितैः । लिप्त्वा विशोषयेत्सन्धिं जलाधारे जलं क्षिपेत् ॥
चुल्यामारोपयेदेतत्पातनायन्त्रमुच्यते ॥ (र.र.स. 9/6-8)

Scanned with OKEN Scanner

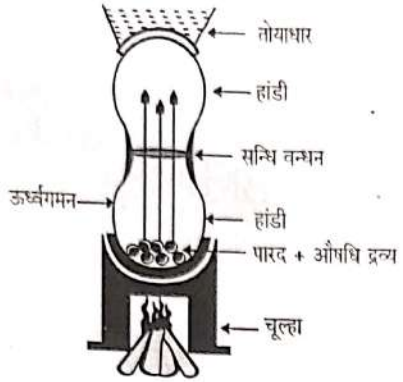

ऊर्ध्वपातन यन्त्र

ऊर्ध्वपातन यन्त्र में एक हांडी मुख को दूसर हांडी के मुँख में अन्दर प्रविष्ट कर दोनों के मुख को भैंस के दूध, मण्डूर चूर्ण तथा फाणित (राव) से पेस्ट बनाकर उसे सन्धि बन्धन कर देते हैं । नीचे वाली हांडी का मुख ऊपर वाली हांडी के मुख में अन्दर की ओर होना चाहिए । ऊपर की हाँडी के तल (पेंदा) पर एक तोया धार बनाते हैं । तथा नीचे वाली हांडी को चूल्हे पर रखकर अग्नि प्रदान करते हैं ।

तोयाधार– यह पानी भरने के लिए होता है जिससे यहाँ ठंडक रहती है । इस तोयाधार की चौड़ाई 10 अंगुल, लम्बाई 10 अंगुल तथा ऊँचाई 4 अंगुल होती है । तथा जिस हांडी पर इसका निर्माण करते हैं उसका तल 16 अंगुल विस्तीर्ण होना चाहिए ।

उपयोग– पारद का ऊर्ध्व पातन करने हेतु ।

अधःपातन यन्त्र

अथोर्ध्वभाजने लिप्तस्थापितस्य जले सुधीः । दीप्तैर्वनोपलैः कुर्यादधःपातं प्रयत्नतः ॥

(र.र.स. 9/9)

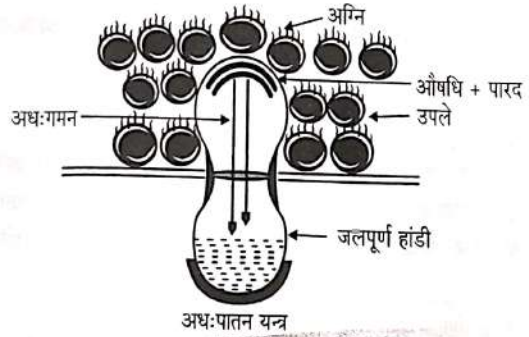

अधःपातन यन्त्र

जिस द्रव्य का अधःपातन करना तो उसे औषधियों के साथ कल्क बनाकर ऊपर की हाण्डी के भीतर लेप कर देते हैं तथा नीचे की हांडी में जल भरकर जमीन में गड्ढा खोदकर स्थापित कर देते हैं । ऊपर की हांडी को आवश्यकतानुसार उपलों से ढककर उसे अग्नि प्रदान करते है । इससे अधः पातित द्रव्य पानी वाले हांडी में प्राप्त होता है ।

उपयोग– पारद के अधःपातन हेतु ।

तिर्यक पातन यन्त्र

क्षिपेद्रसं घटे दीर्घनताधोनालसंयुते । तन्नालं निक्षिपेदन्यघटकुक्ष्यन्तरे खलु ॥
तत्र रुद्ध्वा मृदा सम्यग्वदने घटयोरथ । अधस्ताद्रसकुम्भस्य ज्वालयेत्तीव्रपावकम् ॥
इतरस्मिन्घटे तोयं प्रक्षिपेत्स्वादु शीतलम् । तिर्यक्पातनमेतद्धि वार्तिकैरभिधीयते ॥

(र.र.स. 9/47-49)

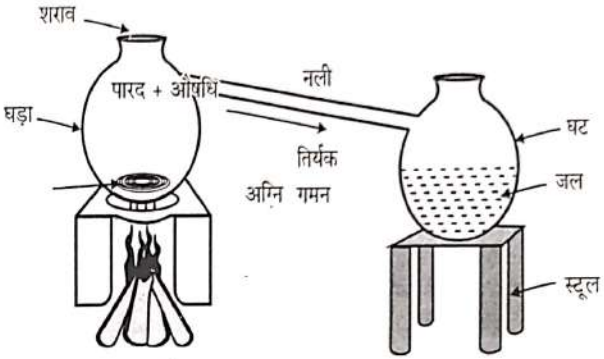

तिर्यक पातन यन्त्र

एक बड़े घड़े में उसके गले के पास एक छिद्रकर उसमें बाँस की या काँच की नली लगाकर उसे अच्छी प्रकार से लेप लगाकर स्थिर कर देते हैं । इस नली का दूसरा सिरा एक दूसरी हाँड़ी के पेट में छिद्र कर लेप लगाकर स्थिर कर देते हैं । पहली हाड़ी में पारद तथा औषधि द्रव्य को रखकर शराव सम्पुट कर इसको वन्द कर देते हैं । तथा इस घड़े को चूल्हे पर चढ़ाकर अग्नि प्रदान करते हैं । दूसरे घड़े में पानी भरा होने के कारण पारद नली के माध्यम से इसमें एकत्र होता रहता है । यही तिर्यक यन्त्र है ।

विमर्श– ऊर्ध्वपातन, अधःपातन तथा तिर्यक पातन यन्त्र की विशेषता है कि इसमें एक स्थान पर Heating होता है जिससे पारद Evaporate होता है तथा दूसरे स्थान पर Cooling होता है जहाँ पर Condensation होता है । ऊर्ध्व पातन में पारद की ऊर्ध्व गति, अधः पातन में अधः गति तथा तिर्यक पातन में तिर्यकगति विशेष होती है ।

दर्विका यन्त्र

चषकं दर्विकाकल्पं दीर्घहस्तक संयुतम् । दर्विकायन्त्रमेतद्धि गन्धशोधनसाधकम् ॥

(र.त. 4/39)

Scanned with OKEN Scanner

एक ऐसी कटोरी जिसका आकार कलछी जैसा हो इसमें एक हस्त लम्बा छड़ी लगा देते हैं। इसे दर्विका यन्त्र कहते हैं। यह गन्धक शोधन हेतु प्रयुक्त होता है।

उलूखल यन्त्र

सिद्धान्त—कुट्टन

इसे सामान्य भाषा में इमामदस्ता कहते हैं। इसका वर्णन निम्न है–

दशांगुलन्तु विस्तारे तूत्सेधे षोडशांगुलम् । त्रयोदशांगुलं चैव निम्नत्वेन च संदृढम् ॥
अयसा निर्मितञ्चैव मध्येऽतिमसृणीकृतम् । विंशत्यंगुलदीर्घश्च लोहदण्डः सुशोभनः ॥
उलूखलाभिधं यन्त्रं बुधैरेतत्प्रकीर्तितम् । ताप्यादीनां कुट्टनार्थं यन्त्रमेतत्प्रकीर्तितम् ॥
(र.त. 4/58-60)

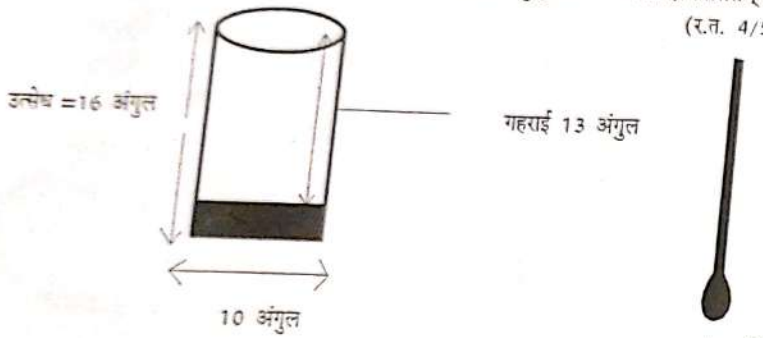

उलूखल यन्त्र

उलूखल यन्त्र की उत्सेध (ऊँचाई) 16 अंगुल

चौडाई 10 अंगुल

गहराई 13 अंगुल होती है।

लोहदण्ड (मूसल)– *20 अंगुल लम्बा होना चाहिए।*

उपादान द्रव्य– *लोह से निर्मित करते हैं।*

उपयोग– *स्वर्णमाक्षिक आदि को कूटने के कार्य में आता है।*

पाताल यन्त्र

सिद्धान्त—अग्निसन्निकर्ष तथा पातन

भूमौ हस्तमितं निम्नं विदध्याद् गर्त्तमुत्तमम् । तस्मिन् पातं निधायाथ तद्रूपं पात्रमन्यकम् ॥
आददीत ततस्तस्मिन्नौषधाग्नि निधापयेत् । आस्यमस्य शरावेण छिद्रगर्भेण रोधयेत् ॥
पात्रमेतत्तु गर्तस्थे पात्रे यत्नेन विन्यसेत् । विदध्यादनयोर्यत्नात् सुदृढ़ सन्धिबन्धनम् ॥

मृदा सम्पूर्य गर्तन्तु बह्निं दद्यात् प्रयोगवित् । स्वांगशीतं ततो ज्ञात्वा रस तत्र विचक्षणः॥
उपस्थिन्तु वै पात्रं शनैः समवतारयेत् । अधःपात्र गतं तैलं गृह्णीयात्तु विधानतः ॥
एतद् बुधैः समाख्यातं यन्त्रं पातालसंज्ञाकम् । आहर्तु गन्धकादीनां तैलमेतत्प्रयुज्यते ॥
(र.त. 4/47-52)

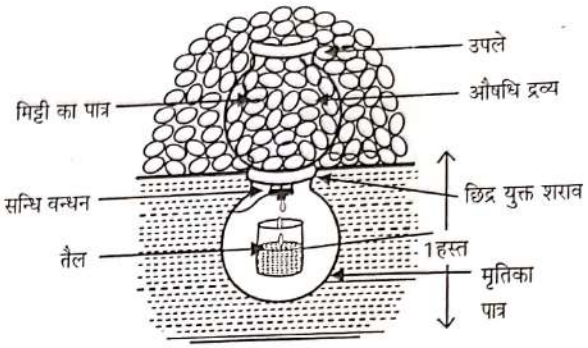

पाताल यन्त्र

जमीन में एक हाथ गहरा गड्ढा अच्छी प्रकार से खोदते हैं। अब इस गड्ढे एक पात्र रख देते हैं। तत्पश्चात् एक ऐसी ही पात्र जो दूसरे पात्र के मुख पर ठीक से बैठ सके उसमें जिस औषधि का तैल प्राप्त करना हो उसे भरकर तत्पश्चात् इसे एक छोटे छिद्र वाले शराव से बन्द कर तत्पश्चात् दोनों मिट्टी के पात्रों को मुख की अच्छी प्रकार सन्धि बन्धन कर देते हैं। अब जो पात्र ऊपर की तरफ है (औषधि युक्त पात्र) उसके ऊपर कण्डे रखकर जला देते है। इस प्रक्रिया से तैल पातित होकर दूसरे पात्र में एकत्र हो जाता है। स्वांगशीत होने पर इसे निकाल कर तैल प्राप्त कर लेते हैं। यही पाताल यन्त्र है।

उपयोग– यह यन्त्र गन्धक आदि द्रव्यों के तेल निकालने के काम आता है। इससे भल्लातक, विश्वामित्र कपाल आदि का भी स्नेह प्राप्त कर सकते हैं।

विमर्श– इसमें प्रयुक्त उपलों की संख्या प्रयुक्त द्रव्य के अनुसार करना चाहिए। आग ज्यादा होने पर तैल के जलने की सम्भावना रहती है।

कूपी यन्त्र

काचताम्रयुता कूपी दृढ़ा रम्याकृतिस्तथा । प्रलिप्य तूलमृत्स्नाभ्यां लेप्या शोष्या पुनःपुनः ॥
इत्थं तु संस्कृता कूपी तत्र सूतं प्रवेशयेत् । तन्मुखं मुद्रितं कृत्वा यन्त्रे सिकताभिधे पचेत् ॥
थवा पाटवे यन्त्रे यन्त्रे वाप्युभयात्मके । कूपीयन्त्रं समुद्दिष्टं तदशोकगुणावहम् ॥
(पारदसंहिता)

काँच, मिट्टी, स्वर्ण, लोह या चांदी की कूपी जिस पर खटिका तथा लवण युक्त कपड़ा मिट्टी द्वारा आच्छादित किया

Scanned with OKEN Scanner

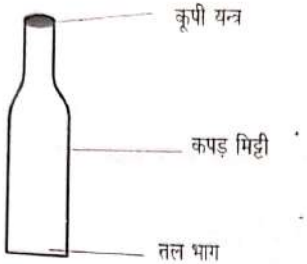

कूपी यन्त्र

गया हो। इसे कपड़ा मिट्टी युक्त कूपी द्वारा व्यवहृत किया जाता है। इसका प्रयोग कूपी पक्व रसायन निर्माण हेतु किया जाता है।

अर्कपातन यन्त्र

आयुर्वेदिक फार्मुलरी आफ इंडिया में इसे Distillation apparatus कहा गया है। इससे निम्न तीन मुख्य भाग होते हैं—

1. Distillation flask– इससे पानी को औषधि द्रव्यों के साथ रखकर अग्नि प्रदान की जाती है।
2. Condenson– जिसके द्वारा Vapour को संघनित (Condense) की जाती है।
3. Collection vessel इस पात्र में औषधि द्रव एकत्र होता है।

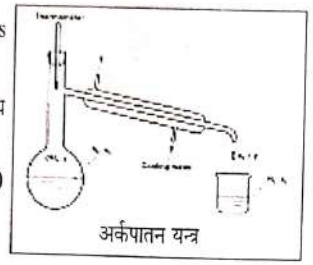

अर्कपातन यन्त्र

सिद्धान्त—Distillation

पिठर यन्त्र

इस यन्त्र की संरचना में एक पात्र होता है जिसके मुख पर एक भारी पत्थर/अन्य संरचना रखी होती है तथा इसके बीच में छिद्र होता है जिसके द्वारा द्रवित वंग/नाग को चूर्णोदक में गिराया जाता है। क्योंकि वंग को चूर्णोदक में डालने से यह आवाज के साथ उछलता है अतः पात्र के मुख पर भारी पत्थर या अन्य वस्तु का होना आवश्यक है।

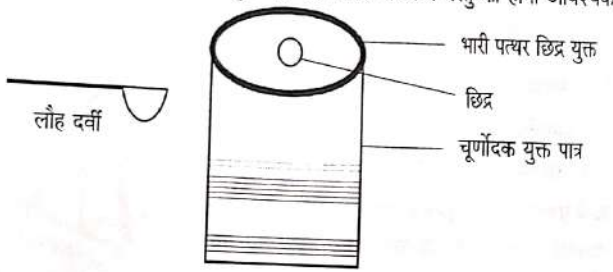

पिठर यन्त्र

चूर्णोदक– 2 रत्ती चूने को पाँच तोले जल में घोलने से चूर्णोदक का निर्माण होता है।

शराव यन्त्र

मिट्टी से बने कटोरी के आकार की संरचना वाले पात्र को शराव कहा जाता है। इसका प्रयोग पुट आदि हेतु किया जाता है।

शराव यन्त्र

पालिका यन्त्र

चषकं वर्तुलं लोह विनताग्रोर्ध्वदण्डकम् । एतद्धि पालिकायन्त्रं बलिजारणहेतवे ॥

(र.र.स. 9/50)

पालिका यन्त्र

लोहे की एक गोल कटोरी लेकर उसे एक लोह दण्ड से जोड़ देते हैं। इस दण्ड का ऊपरी अग्रभाग कुछ मुड़ा हुआ होना चाहिए। यही पालिका यन्त्र है।

उपयोग– इस यन्त्र का उपयोग गन्धक जारण हेतु करते हैं।

स्थाली यन्त्र

सिद्धान्त– पाचन

स्थाल्यां ताम्रादि निक्षिप्य मल्लेनाऽऽस्यं निरुद्धम च। पच्यते स्थालिकाधस्तात्स्थाली यन्त्रमिदं स्मृतम् ॥

(र.र.स. 9/67)

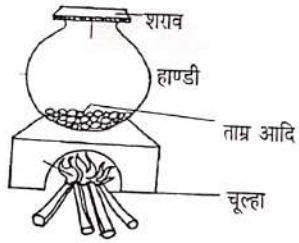

स्थाली यन्त्र

Scanned with OKEN Scanner

लवणादि को औषधि द्रव्यों के साथ एक हाण्डी में रखकर उसके मुख को एक शराव से ढककर सन्धिबन्धन कर देते हैं। तत्पश्चात् इसे अग्नि प्रदान करते हैं। यही स्थाली यन्त्र है।

उपयोग– ताम्र, शंख, कर्पद आदि के पाक हेतु।

स्वेदनी यन्त्र

सिद्धान्त– स्वेदन

स्थूल स्थाल्यां जलं क्षिप्त्वा वासो बद्ध्वा मुखे दृढम्। तत्र स्वेद्यं विनिक्षिप्य तन्मुखं प्रपिधाय च॥
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं यन्त्रं तत्कन्दुकाभिधम्। स्वेदनीयन्त्रमित्यन्ये प्राहुश्चेदं मनीषिणः॥
(र.र.स. 9/75-76)

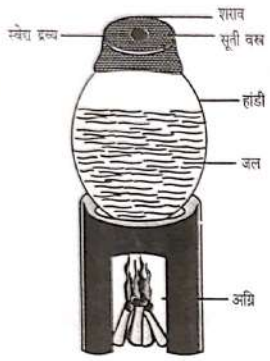

स्वेदनी यन्त्र

एक बड़ी हांडी में जल भरकर उसके मुख पर एक सूती वस्त्र बाँध देते हैं। तत्पश्चात् इस स्वेद्य द्रव्य को रखकर इसे एक शराव द्वारा ढक देते हैं। अब इसे चूल्हें पर चढ़ाकर अग्नि प्रदान करते हैं। इसे स्वेदनी यन्त्र कहते हैं।

उपयोग– स्वेदन हेतु।

विद्याधर यन्त्र

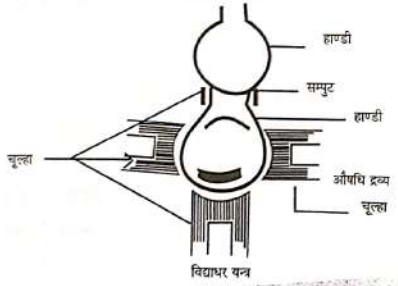

विद्याधर यन्त्र

सिद्धान्त– अग्नि पत्रिकर्ष

यन्त्रं विद्याधरं ज्ञेयं स्थालीद्वितयमम्पुटात्। चुल्लीं चतुर्मुखीं कृत्वा यन्त्रभाण्डं निवेशयेत्॥
तत्रौषधं विनिक्षिप्य निरुन्ध्याद्भाण्डकाननम्। यन्त्रं विद्याधरं नाम तन्त्रज्ञैः परिकीर्त्तितम्॥
(र.र.स. 9/27-28)

दो हांडियों के सम्पुट को विद्याधर यन्त्र कहते हैं। इसमें चार मुख वाला चूल्हे पर बैठने वाली एक हांडी लेते हैं तत्पश्चात् इस हाण्डी में औषधि द्रव्य रखकर इसके मुख को एक दूसरी हांडी के पेंदे से अच्छी प्रकार से सम्पुट कर देते हैं। रससिद्धों ने ऐसे यन्त्र का नाम विद्याधर यन्त्र कहा है।

उपयोग– हिंगुल से पारद निष्कासन हेतु

विभिन्न प्रकार के यन्त्रों का उपयोग

1. उलूखल यन्त्र– कूटने हेत
2. खल्व यन्त्र– मर्दन तथा भावना हेतु
3. कच्छप यन्त्र– जारण हेतु
4. डमरू यन्त्र– हिंगुल से पारद निष्कासन
5. विद्याधर यन्त्र– हिंगुल से पारद निष्कासन
6. ऊर्ध्वपातन यन्त्र– ऊर्ध्वपातन हेतु
7. अधःपातन यन्त्र– अधःपातन हेत
8. तिर्यक्पातन यन्त्र– तिर्यक्पातन हेतु
9. जारणार्थ तुला यन्त्र– जारण हेतु
10. दोला यन्त्र– स्वेदन हेतु
11. पाताल यन्त्र– तैल पातन हेतु
12. पलिका यन्त्र– गंधक जारण हेतु
13. वालुका यन्त्र– कूपीपक्व निर्माण हेतु
14. भूधर यन्त्र– गंधक जारण हेतु
15. स्थाली यन्त्र– ताम्र आदि को पाक हेतु
16. स्वेदन यन्त्र– स्वेदन हेतु

आधुनिक यन्त्र

Grinder

इस मशीन का उपयोग चूर्ण निर्माण हेतु किया जाता है।

सिद्धान्त– Crushing

संचरना - इसमें तीन मुख्य भाग होते है—

1. Hooper या Feeding device
2. Chamber जिसमें दो भारी गोलाकार पत्थर लगे होते हैं।
3. Collection हेतु Bag होता है।

कार्य प्रणाली– Hooper के द्वारा चूर्ण किये जाने वाले द्रव्य को Central chamber में भेजा जाता है जहाँ पर दोनों गोलाकार पत्थरों के दबाव से size reduction की प्रक्रिया होता है, परिणाम स्वरूप चूर्ण निर्माण होता है जो कि एक मोटे कपड़े के वैग में इकट्ठा होता है। यह बिजली से चलने वाला यन्त्र है जो कि एक मोटर की

Scanned with OKEN Scanner

सहायता से गति करता है ।

उपयोग– चूर्ण निर्माण हेतु

विमर्श– आजकल विभिन्न प्रकार की कम्पनियों के छोटे साइज Grinder के भी आते हैं जिनका घरेलु उपयोग कर कम मात्रा में चूर्ण निर्माण आसानी से किया जा सकता है ।

Disintegrator

Disintegrator Mill का उपयोग Size reduction हेतु किया जाता है । अतः यह मशीन चूर्ण/यवकुट निर्माण हेतु प्रयुक्त किया जाता है ।

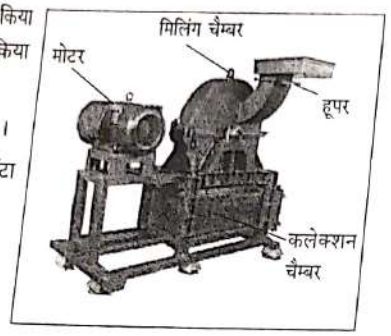

सिद्धान्त– यह Impact के सिद्धान्त पर कार्य करता है ।

संरचना– इसकी संरचना को मुख्य रूप में तीन भागों में बाँटा जा सकता है—

1. Hooper या Feeding device
2. Central shaft
3. Collection chamber

1. Hooper या Feeding device– इसके द्वारा Size reduction किये जाने वाले द्रव्य को Central shoft में भेजा जाता है ।

2. Central shaft– यह लोहे की Drum नुमा संरचना होती है जिसमें एक Disc लगा होता है । इस Disc पर चार लोहे के स्थिर beaters लगे होते हैं । जो कि तेजी से घूम सकने वाले होते हैं । इस Shaft का ऊपरी भाग Hooper से जुड़ा रहता है तथा इसके नीचे के भाग में Sieve लगी होती है जो कि आवश्यकतानुसार बदली जा सकता है ।

3. Dust Bag– इसमें चूर्ण एकत्रित होता है ।

कार्य प्रणाली– जिस द्रव्य को चूर्ण करना होता है उसे Hooper के द्वारा Control shoft में भेजा जाता है । जहाँ पर तेजी से गति करते हुए Beaters के द्वारा द्रव्य पर चोट पहुँचाई जाती है जिसके परिणाम स्वरूप Size reduction होकर Sieve के द्वारा द्रव्य का सूक्ष्म चूर्ण Dust bag में एकत्रित होता रहता है ।

उपयोग– सभी प्रकार के कठिन द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण निर्माण हेतु ।

Disintegrator के लाभ (Advantages)–

1. यह तेजी से कार्य करता है ।
2. आवश्यकतानुसार Particle size प्राप्त कर सकते हैं ।
3. इसमें Contamination होने की सम्भावना नहीं है ।

Disintegrator की हानियां (Disadvantages)

1. औषधि द्रव्य सम्पूर्ण रूप से सूखी होनी चाहिए ।
2. Choking की समस्या होती है ।
3. Thermolabile material को प्रभावित करता है।

Pulverizer

Pulverizer– Pelvis शब्द का अर्थ Powder (चूर्ण) होता है तथा Pulverisation का अर्थ Size reduction process होता है। ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा किसी द्रव्य को उसके छोटे (अणु) स्वरूप में परिवर्तित किया जाय उसे Pulverisation कहा जाता है। इस प्रक्रिया हेतु प्रयुक्त मशीन को Pulverizer कहा जाता है। Pulverizer का प्रयोग रसशास्त्र तथा भैषज्य कल्पना में विभिन्न द्रव्यों के चूर्ण निर्माण हेतु प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार के मशीन Size reduction की प्रक्रिया को निम्न सिद्धान्त पर क्रियान्वित करते है—

1. Impact
2. Attrition
3. Crushing

तथा गति के आधार पर ये तीन प्रकार के होते हैं—

1. निम्न गति (Low speed) - उदाहरण Ball mill
2. मध्यम गति (Medium speed)-Ring and Ball mill
3. उच्च गति (High speed)-Attrition mill

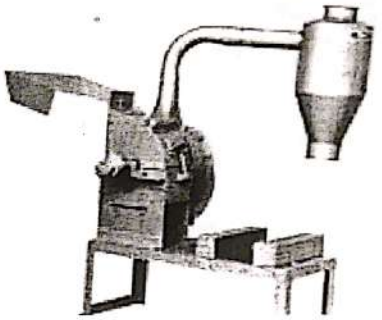

कार्य प्रणाली– कच्ची औषधियाँ जो अच्छी प्रकार से सूखी हों उन्हें Hooper के द्वारा Crushing chamber में भेजा जाता है। इस Chamber में Hammers के द्वारा impact/attrition के माध्यम से औषधियाँ का सूक्ष्म चूर्ण बना जाता है जो कि एक Collection chamber में एकत्रित होता रहता है।

उपयोग– सूक्ष्म चूर्ण निर्माण पर हेतु ।

Scanned with OKEN Scanner

Powder Mixer

Powder Mixer Machine are calibrated for mixing of powder and granulated materials. Mixing plays and important role where final product contains more than two drug. It is very much necessary that all of the ingredients of churna like Lavanbhaskar etc. are mixed uniformly mixed together.

Construction-Ribbon Blender Powder mixing medicine consists of a rectangular chamber. In this chamber a horizontal rod is present in the mid of chamber. To this rod ribbon made of metal is attached in such a way that during the operation is can rotates along with rod.

Working - The powers which are to be mixed are placed inside the chamber with the help of electric power is provided which results into rotation of ribbon along with rod. As a result the powder is mixed homogeneously.

Mechanical Shifter

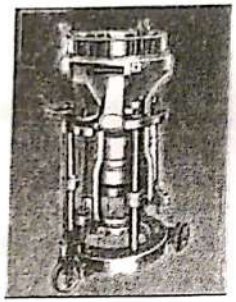

Mechanical shifter निम्न विधियों पर कार्य करते है—

1. Agitate or Brushing the sieve
2. By Centrifuge force

1. Agitation method– इसमें निम्न प्रकार की विधियों का समावेश होता है।

a. Oscillation– इसमें Sieve सामने तथा पीछे की तरफ Osicillate करती है जिससे Shifting प्रक्रिया होती है।

b. Vibration– इस विधि में विद्युत यन्त्र द्वारा Sieve को Vibrate कराया जाता है। जिससे Shifting होती है।

c. Gyration– इसमें Sieve एक Eccentric flywhell द्वारा जुड़ी रहती है तथा Rotary movement के द्वारा Shifting प्रक्रिया को क्रियान्वित किया जाता है।

2. Brushing method– इस प्रकार की विधि में Sieve के सतह पर Brush के चलायमान होने से Shifting की प्रक्रिया पूर्ण की जाती है।

3. Centrifuge method– इस प्रकार की विधि में Vertical cylindrical sieve का उपयोग होता है जिसमें एक High speed motor लगा रहता है ताकि Centrifuge force द्वारा Particles बाहर की तरफ भेजे जाते हैं। इस प्रकार की विधि अति सूक्ष्म चूर्ण प्राप्त करने में उपयोगी होती है।

Ball Mill

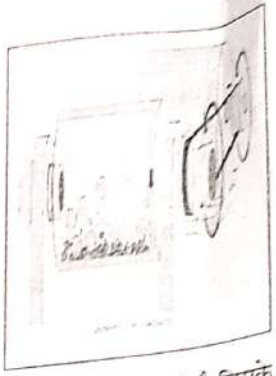

सिद्धान्त— Ball mill, Impact के सिद्धान्त पर कार्य करता है जो कि तेजी से गतिशील Ball तथा Powder materials के बीच होता है। ये दोनों एक Hollow cylender में बन्द रहते हैं। यह Cylender अपने Longitudinal axis पर गति करता है।

संरचना— Ball mill एक Hollow cylender जैसी संरचना होती है जो कि एक Frame पर आधारित होती है। इस प्रकार यह Cylender अपने Longitudinal axis पर गति कर सकता है। इस Cylender की लम्बाई इसके व्यास से ज्यादा होती है। Cylender के आयतन का 30 से 50 प्रतिशत Ball के द्वारा Occupied होता है।

कार्य प्रणाली— गति करने की अवस्था में औषधि द्रव्यों को Ball के द्वारा Impact पहुचाई जाती है जिसके परिणाम रूप इसका चूर्ण बन जाता है।

Granulator

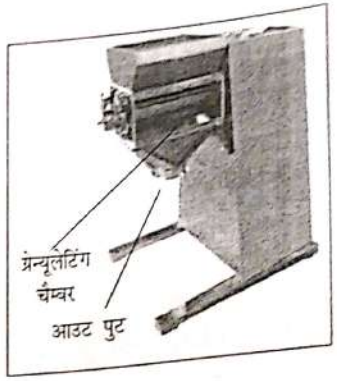

Granulator का उपयोग granules के निर्माण हेतु किया जाता है। Granules, dry granulation तथा wet granulation इन दो प्रकार से बनाये जाते है। Wet granulation विधि में Shear granulator जिसके अन्तर्गत Planetary mixer तथा Oscillating granulator आते है। तथा High speed granulator में Gral mixer granulator. Fluridized bed granulator आदि आते हैं। यहाँ पर Oscillating granulator का वर्णन किया जा रहा है।

संरचना– इसे तीन भागों में बाँटा जा सकता है—

1. Hooper– जिसके द्वारा granules किये जाने वाले material को अन्दर भेजा जाता है।
2. Central part जिसमें की Rotor with blade तथा निचले सिरे Sieve पर लगी होती है। ये Rotor Horizental axis पर Oscillate करता है।
3. Collection chamber जहाँ granules एकत्रित होते हैं।

कार्यप्रणाली– Granulation material को Hooper के द्वारा अन्दर भेजा जाता है जो कि Rotar blades पर आता है। जो कि Oscillating bars के द्वारा छोटे-छोटे में विभाजित हो जाते है तथा Sieve के द्वारा नीचे bottom opening से बाहर आ जाते हैं।

उपयोग– Tablet निर्माण हेतु granules के निर्माण में।

Scanned with OKEN Scanner

Dryer

इस प्रकार के यन्त्रों का प्रयोग सुखाने के उद्देश्य से किया जाता है। विभिन्न प्रकार के Dryer, जो कि अलग-अलग सिद्धान्त पर कार्य करते हैं, उनका प्रयोग विभिन्न प्रकार के materials को सुखाने हेतु किया जाता है। Heat transfer के सिद्धान्त के आधार पर Dryer निम्न तीन प्रकार के होते है—

1. Convection Dryer– Tray Dryer, Tunnel Dryer, Rotary Dryer, Fluidised Bed Dryer.
2. Conduction Dryer– Vaccum Over, Freeze Drying
3. Radiant Heat Dryer– Microware dryer, Infrared dryer

यहाँ पर Tray Dryer तथा Spray Dryer का वर्णन किया जा रहा है।

Tray Dryer

Tray Dryer की संरचना एक Rectangular chamber जैसी होती है जिसके दीवाल insulated होते है। इसके अन्दर Tray रखे रखते है जिनकी संख्या आकार के अनुसार निधारित होती है।

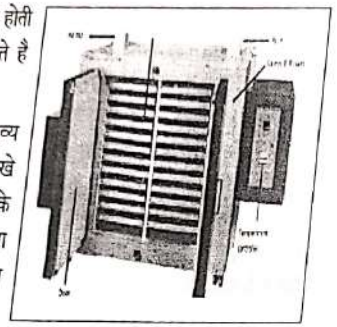

प्रत्येक Tray भी Rectangular आकार का होता है जिस पर द्रव्य जिसे जाना हो उसे रखा जाता है। इस Dryer में हवा के परिभ्रमण हेतु पंखे लगे होते हैं। साथ ही इसमें Heating element भी उपस्थित रहते है जिनके माध्यम से हवा को गर्म किया जाता है। कार्य करने की स्थिति में गर्म हवा इस Chamber में परिभ्रमण करती है जिसके परिणाम स्वरूप उपस्थित औषधि द्रव्य सम्यक प्रकार से Dry हो जाती है।

Spray Dryer

Spray Dryer की संरचना में एक लम्बा Cylendrical drying chamber होता है जिसका bottom short तथा conical होता है Dryer का Bottom एक Cyclone separator से सम्बन्ध रहता है।

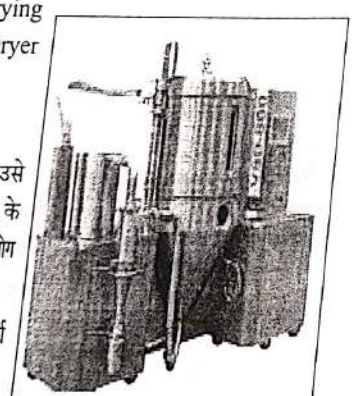

इसमें Drying की प्रक्रिया निम्न तीन Stage में होती है—

a. Atomization of liquid– जिस द्रव्य को सुखाना होता है उसे atomizer द्वारा chamber में भेजा जाता है। इस हेतु विभिन्न प्रकार के atomizer जैसे Pneumatic, pressur nozzle, spinning disc का प्रयोग किया गया है।

b. Drying of liquid droplet– यह प्रक्रिया Hot air द्वारा पूर्ण की जाती है।

c. Recovery of dried product– Atomizer द्वारा प्रदत्त

Centrifuge force द्वारा drop lets, holical path में आगे बढ़ते हैं तथा इसी दौरान drying प्रक्रिया होती है तथा dry होने के पश्चात् Conical bottom पे में एकत्र होते रहते हैं।

Tablet Compressing Machine

प्रारम्भ में हाथ से चलाने वाले Tablet machine होते थे लेकिन आजकल बिजली से चलने वाले (Tablet Machine (Rotary Type Tablet Macines) उपलब्ध है। जिनके द्वारा कम समय में बड़ी संख्या में Tablets निर्मित किये जा सकते हैं। ये Rotation तथा Compression के सिद्धान्त पर कार्य करते हैं।

Hand Tablet Machine

इसकी संरचना को मुख्यतः निम्न भागों में बाँटा जा सकता है।

1. Wheel– जिससे Hopper तथा नीचे का Shoe part लगा होता है।
2. Punch– ऊपर का Punch जिससे Compression का कार्य होता है तथा नीचे का Punch (Lower punch) जिससे die cavity का volume निश्चित किया जाता है।
3. Die– जिसमें granules भरे जाते है तथा Tablet का निर्माण होता है।

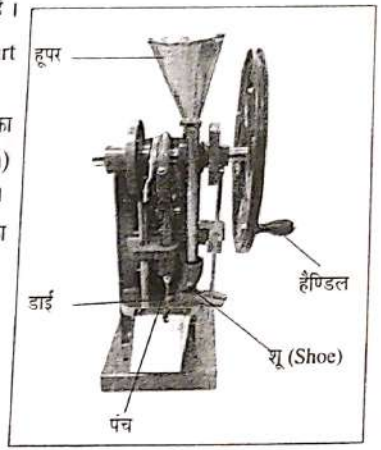

कार्यप्रणाली

1. सर्वप्रथम Hooper में Granules को भर दिया जाता है। तथा ये Granules hooper के निचले सिरा जो कि Shoe के आकार का होता है वहाँ पहुँच जाते है।
2. जब Wheel को घुमाया जाता है तो यह Shoe धीरे-धीरे आगे आता है तथा Die में Granules भर जाते हैं।
3. अगले Stage में यह Shoe पीछे की तरफ जाता है तथा इसी समय Upper punch, die की तरफ नीचे आते है एवं Granules को तेजी Punch से करते है। परिणाम स्वरूप आपस में चिपक कर Tablet में परिवर्तित हो जाते हैं।
4. इसके पश्चात् Upper punch ऊपर की तरफ आ जाते हैं तथा Lower punch भी ऊपर की तरफ उठाते है जिससे Tablet die से बाहर आ जाते हैं।
5. पुनः Shoe जो कि इस प्रक्रिया में पीछे गया रहता है वह पुनः आगे आता है तथा जो Tablet निर्मित है उसे बाहर की तरफ फेकता है, साथ ही साथ Granules को die में भरने की प्रक्रिया भी होती है।
6. यह क्रम लगातार चलता रहता है तथा Tablet निर्माण सतत होता रहता है।

Scanned with OKEN Scanner

Rotary Type Tablet Machine

संरचना– इसमें एक गोलाकार (Circular) Rotating Head होता है जो कि बहुत सारे Punch तथा Dies से assemble होता है तथा इसके तीन Section होते है—

1. Upper part जिसमें upper punch लगे होते है ।
2. Central part जिसमें Dies होती है ।
3. Lower part जिसमें lower punch लगे रहते है ।

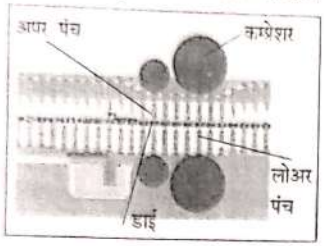

इसके अतिरिक्त Hooper जिसे Feeding device भी कहते है के द्वारा Granules को die में भेजा जाता है ।

कार्यप्रणाली– Hooper के द्वारा granules को die में निर्देशित किया जाता है तथा अगले प्रक्रिया में upper तथा lower punch की मदद से compression का कार्य होता है । परिणाम स्वरूप Tablet का निर्माण होता है ।

Pill Making Machine

यह मुख्य रूप से गुग्गुल वटी के निर्माण हेतु प्रयुक्त होता है । इसमें 2 मशीनों का प्रयोग किया जा सकता है—

1. Stick making machine
2. Stick cutting machine

Stick making machine

संरचना– इसकी संरचना इस प्रकार होती है इसमें एक क्रेम पर Hollow cylender लगा होता है । इसके एक सिरे पर छिद्र वाली प्लेट लगी होती है जो कि चूड़ी के सहारे खोली जा सकती है । इसके दूसरे सिरे पर Piston लगा होता है तथा यह भी handle की मदद से आगे पीछे तथा खोली जा सकती है ।

कार्यप्रणाली– Piston वाले सिरे को खोलकर उसमें स्टिक बनाने वाले Material को भर दिया जाता है । तत्पश्चात् इस Piston को Screw की सहायता से धीरे धीरे आगे की ओर बढ़ाते है । जिसके परिणाम स्वरूप Piston, material पर दबाव बनता है । जिसके फलस्वरूप इस cylender के अगले छोर पर बने छिद्र के द्वारा Material, stick के रूप में बाहर आता है ।

Stick Cutting Machine

संरचना– इसकी संरचना में दो रोलर होते है जो एक ही दिशा में गति करते है । इसके सतह पर एक निश्चित आकार के खाँचे बने होते हैं । जो वटी का आकार तय करते हैं ।

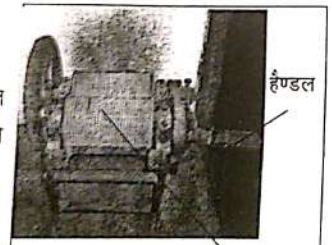

कार्यप्रणाली– Stick को इन दोनों Roller के बीच में रखकर इसे घुमाते है जिसके परिणाम स्वरूप Stick एक निश्चित आकार के वटियों के स्वरूप में बँट जाता है ।

उपयोग– गुग्गुलु वटी के निर्माण में ।

Coating & Polishing Pan

संरचना– यह कापर या स्टेनलेस स्टील के बने हुए गोलाकार संरचना होती है । जो कि अपनी Axis पर 40^0C झुकी हुई होती है तथा यह अपने Axis पर Motor की सहायता से गतिकर सकने वाली होती है । Polishing pan canvas drum की बनी होती है जो कि इसी मशीन पर Coating pan को हटाकर इसी में प्रयुक्त कर उपयोग में लायी जा सकती है । इन Pan में Air blowers लगे होते हैं जिनके माध्यम से गर्म हवा बाहर आती है । इसके अतिरिक्त इसमें Exhaust pipe लगे रहते है जो कि अनावश्यक Dusting powder तथा नमी को से बाहर करते हैं ।

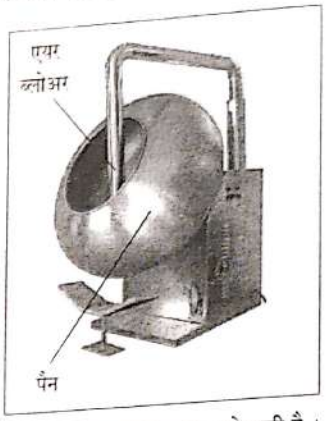

कार्यप्रणाली– जिन Tablets के ऊपर Coating करनी हो उन्हें सर्वप्रथम इस Pan में रख देते है । तत्पश्चात् इन Tablets के ऊपर Coating material को Spray कर देते हैं तथा Pan को Motar की सहायता से गति प्रदान करते हैं । जिसके परिणामस्वरूप Tablets पर Coating material एक Layer के रूप में चढ़ जाता है । तत्पश्चात् Air blowers से गर्म हवा इनके ऊपर प्रवाहित की जाती है जिसके परिणाम स्वरूप Coating material का Layer tablet के ऊपर सूख जाता है तथा Tablet के ऊपर Coating हो जाती है ।

End Runner

सिद्धान्त– इसमें Size reduction compression के द्वारा होता है जो कि भारी पत्थर से निर्मित Pestle के द्वारा प्रदान किया जाता है ।

संरचना– इसमें एक स्टील या पत्थर का Mortar होता है जिसकी निचला भाग एक प्लेट पर मजबूती से लगा होता है । इस प्लेट के नीचे कुछ झुकी हुई एक दाँत नुमा पहिया (Cog wheel) Pully सहित लगा होता है । जिससे कि यह पूरी संरचना तेजी से गति कर सकती है। इसका Pestle एक कोर (Hinge) से जुड़ा रहता है जिससे कि Pestle बाहर भी निकाला जा सकता है ताकि Mortar को आसानी से खाली एवं साफ किया जा सके ।

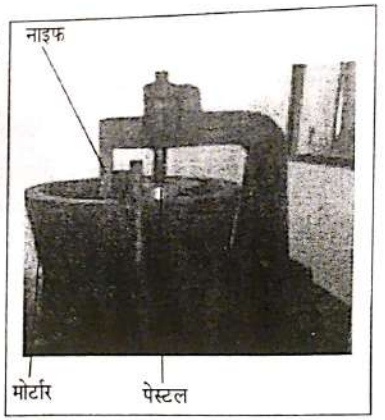

कार्य प्रणाली– कार्य करने की स्थिति में Mortar तथा Pestle दोनों तेज गति की अवस्था में होते हैं । जिस द्रव्य का Size reduction करना हो उसे Mortar में रख देते हैं । इस Mortar में एक लोहे या स्टील की पत्ती लगी होती है जिसके द्वारा द्रव्य Pestle के नीचे तथा सामने आता रहता है । Mortar तथा Pestle के तेज गति के फलस्वरूप Compression से अन्दर रखे द्रव्य का Size reduction होता रहता है ।

Scanned with OKEN Scanner

प्रयोग– इसका उपयोग आयुर्वेद में रसशास्त्र के द्रव्यों जैसे गैरिक, कासीस आदि के Size reduction तथा भावना देने के प्रक्रियाओं में किया जाता है ।

Edge Runner Mill

सिद्धान्त– Edge Runner Mill भी Compression के सिद्धान पर कार्य करता है जो कि भारी पत्थरों या लोहे के द्वारा निर्मित पहियों (Wheel) के द्वारा प्रदान किया जाता है ।

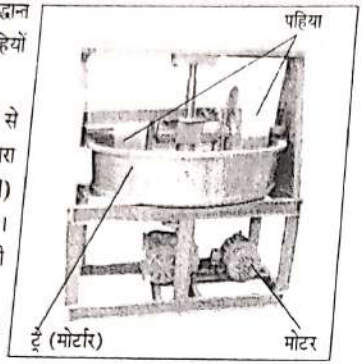

संरचना– इसमें एक टब नुमा संरचना होती है जो कि लोहे से निर्मित होती है । इस टब में दोनो पहिये, जो कि एक लोहे की राड द्वारा आपस में सम्बन्धित होते है, स्थित होते है । ये दोनों पहिये (Wheel) अपने अक्ष पर तथा आधार के चारोंओर गति कर सकने वाले होते है । यह बिजली से चलने वाला यन्त्र है जिसको गति motor द्वारा प्रदान की जाती है ।

कार्य प्रणाली– औषधि को इस टब नुमा संरचना में डाल देते हैं जो कि एक निर्देशक (Scrapper) द्वारा पहियों के रास्ते में निर्देशित होता रहता है । पत्थर के अपने Axis तथा आधार के चारों तरफ गति करने के परिणाम स्वरूप Compression से औषधि द्रव्य का Size reduction होता है ।

उपयोग– रसशास्त्रीय द्रव्यों जैसे हरताल, कासीस आदि के चूर्ण निर्माण में इसका उपयोग किया जाता है । वटी निर्माण हेतु या शोधन कार्य हेतु भावना देने भी इसका उपयोग किया जाता है ।

Capsule Filling Machine

आजकल विभिन्न प्रकार के Capsule filling machine उपलब्ध है । जिनका उपयोग आवश्यकता अनुसार किया जा सकता है । इन प्रकार की मशीनों में Hand operated तथा Electrically operated दोनों प्रकार के Capsule filling machine होते है । Fully automatic capsule filling machine large scale capsule के भरने (Filling) में प्रयोग किये जाते हैं । हाथ से प्रयोग किये जाने वाले Capsule filling machine मुख्य रूप से Hard gelatin capsules में प्रयुक्त किये जाते हैं ।

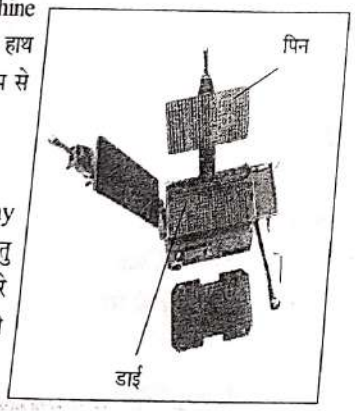

Hand operated Capsule Filling Machine

संरचना– ये Stainless steel के बने होते हैं । इसमें एक Tray होता है जो कि Die के ऊपर लगा रहता है । इन Die में चूर्ण भरने हेतु एक Dispenser तथा Scoop होता है । जिसके द्वारा Die में चूर्ण भरे जाते हैं । उपरोक्त के अतिरिक्त Pin sets भी होते है । जो कि Press करने के कार्य में प्रयुक्त होते है ।

कार्यप्रणाली– सर्व प्रथम खाली Capsule को Die रख देते हैं । तत्पश्चात् Cam handle की मदद से Capsule के ऊपरी भाग Cap को Body से अलग कर लेते है । पुनः इसमें चूर्ण को भर देते हैं तथा Pin set की मदद से Compress कर देते हैं । तत्पश्चात् Lever की मदद से Capsule cap को Body में फिट कर देते है । इसके पश्चात् Tray को हटाकर Capsules को अलग कर लेते हैं ।

Ointment Mixer

Ointment निर्माण हेतु Planetary mixer का प्रयोग किया जाता है। Planetary mixer की संरचना में एक Vertical cylindrical shell होता जो कि ब्लेड को ऊपर उठाकर या इसे ब्लेड से नीचे करके हटाया जा सकता है। Mixing blade, Bowl के शीर्ष से जुड़ा रहता है तथा mixing shaft, planetary gear train द्वारा चलाया जाता है। जिससे यह Ring gear के चारो तरफ घूमता है। जिससे mixer blade घूमता रहता है।

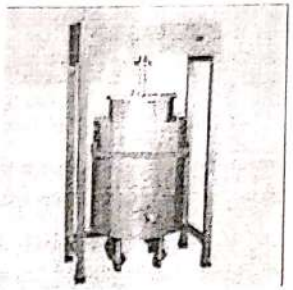

इस प्रकार के Mixer में Agitator planetary motion द्वारा गति करता है। यह अपने Axis तथा केन्द्रीय Axis दोनों पर ही गति करता है। जिससे यह Bowl के सभी भागों में गति करता है। Blade के द्वारा Mass टुटता है तथा गतिशील Blade और स्थिर Wall के बीच Shear का प्रयोग होता है। प्रयुक्त Blader इस प्रकार से Sloped होते है जिससे कि Powder ऊपर तथा नीचे गति करता है। तथा इससे Tumbling गति भी उत्पन्न होती है। Mixing हेतु उच्च Shear का प्रयोग किया जाता है। Bowl को खाली करने हेतु Scoop या Dumping क्रिया का प्रयोग किया जाता है।

Tube filling machine

Tube filling machine दो प्रकार के होते है—

1. Automatic tube filling machine
2. Semi automatic tube filling machine

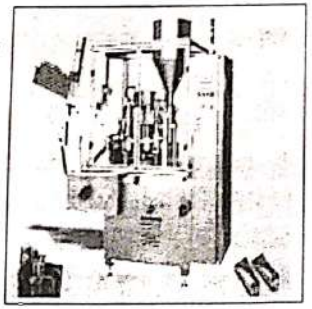

Automatic tube filling machine के निम्न भाग होते हैं जो कि साथ-साथ कार्य करते हैं—

1. Hooper– यह Funnel के आकार की संरचना होती है जिससे कि Filling material को अन्दर की तरफ भेजा जाता है।
2. Filling Nozzles– इसके द्वारा Material को Tube की तरफ भेजा जाता है।
3. Discharge unit– इसके द्वारा Product material को Tube में निर्धारित मात्रा में लाया जाता है।
4. Tube Holders– इसके द्वारा खाली Tubes को निर्धारित दिशा में Hold किया जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

5. Tank– इसमे Product जिसे Tube मे भरा जाता है उसे रखा जाता है।

इसके अतिरिक्त Sealing unit होता है जिसके द्वारा Tube को Seal किया जाता है।

Sieve & Mesh

Sieve को सामान्य भाषा मे चलनी कहा जाता है। इनका उपयोग Size separation मे किया जाता है। Size reduction या चूर्ण निर्माण की प्रक्रिया के उपरान्त प्राप्त Material विभिन्न Size के चूर्ण का मिश्रण होता है। इसे Sieve के द्वारा छान लिया जाता है। तथा Over size इच्छ जिसे Tailing भी कहते है अर्थात् जो चलनी के ऊपर बचता है उसे अलग कर दिया जाता है।

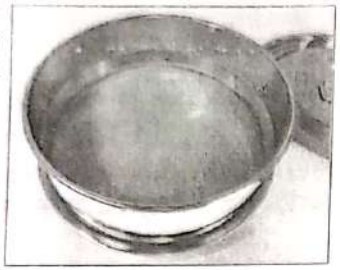

संरचना– Sieve का निर्माण जाली (Mesh) के द्वारा होता है तथा ये Mesh wire के या Perforated plate के बने होते हैं। Wire के निर्माण हेतु निम्न Material प्रयोग किये जाते है—

1. Iron. 2. Coated Iron. 3. Copper. 4. Copper alloys. 5. Stainless steel

इसके अतिरिक्त non-metals का भी प्रयोग Mesh के निर्माण मे किया जा सकता है। आयुर्वेद में वेणु तथा बांस से चालनी बनाने का सन्दर्भ प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त नाइलान तथा टेरीलीन से भी इनका निर्माण किया जाता है।

Mesh के प्रकार– दो प्रकार के होते है

1. Wire type
2. Perforated plate type

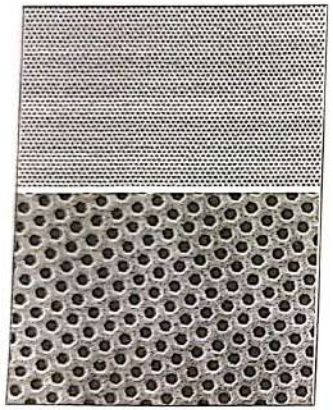

Sieving methods– ये निम्न प्रकार के हो सकते है।

1. Mechanical method
2. Sedimentation method
3. Elutriation method

Mechanical method में Osciclation. Vibration. Gyration जिनमें Agitation process के द्वारा Sieving की जाती है। इसके अतिरिक्त इस Method में Brushing तथा Centrifugal method का भी ग्रहण होता है।

Liquid filling machine

Liquid filling machines expedite the manufacturing of liquid drug suspensions. It dispenses the exact amount of liquid product into different containers such as bottles, cans, cups, cartoon etc. as per need. These can be of manual, semi automatic or fully

automatic, Liquid filling machine draw liquid from a large container or tank and deliver a fixed quantity of liquid into bottles or other container via a nozzle. Most liquid products are filled by one or two major methods that are–

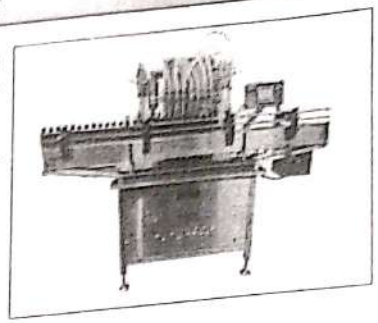

1. Volumetric-Each container is filled accurately. It is of three types-Piston operation, diaphragm action and timed flow.
2. Constant level filling-to be filled act the same level.

Fillers can be of Rotary and straight line types. The rotary filler removes the bottle from conveyor onto a rotating plate which carries them in a circle through the filling machine.

When liquid is filled into the bottele or other container it moves forward where sealing is done after that these are collected and are ready for transportion.

Distillation plant

सामान्य रूप से distillation plant के तीन भाग (Part) होते है—

1. Still
2. Condenser
3. Receiver

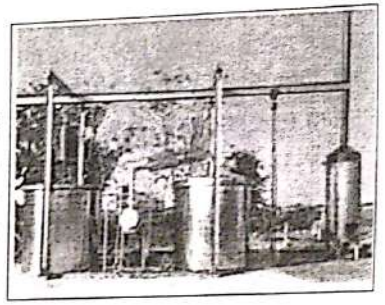

1. Still– यह Vapouring chamber होता है तथा यहाँ पर जिस द्रव्य (Material) का (Distillation) किया जाता है उसे रखते है। Still का आधा या दो तिहाई भाग द्रव से पूर्ण करते हैं। Still को उपयुक्त heating device का प्रयोग कर गर्म किया जाता है। Lab scale पर काँच निर्मित गोल तली का flask किया जाता है जिससे की Distillation की Progress को देखा जा सके। Still काँच के अतिरिक्त स्टेनलेस स्टील, ताँबा या अन्य द्रव्यों से भी बनायें जा सकते हैं।

2. Condensor– इसका कार्य Vapour को संघनित करना है। इसे परिभ्रमित (Circulating) जल के द्वारा ठंडा रखा जाता है। Boiling point तथा Valatility condenser के चयन हेतु २ मुख्य कारक (Factor) होते हैं। Condensor एक उपर्युक्त Adapter के द्वारा Receiver से जुडा रहता है।

Condensor की स्थिति Oblique या Upright होती है। Condensor की ३ विभिन्न श्रेणियाँ निम्न है—

1. Single surface condensor– उदाहरण Spriral

Scanned with OKEN Scanner

2. Double surface condensor

3. Multi tubular condensor– सामान्य रूप से धातु के बने होते है तथा पर कार्य करते है। उदाहरण के रूप में Distilled water के निर्माण हेतु ये प्रयुक्त किये जाते है।

यह Distilled को एकत्र करता है तथा यह एक साधारण Flask या Modified flask जैसे कि Florentine receiver के रूप में होता है। Florentine receiver का प्रयोग Oil तथा Water के अलग करने के लिए प्रयोग करते है। ये दो प्रकार के होते है—

Type I– Used for separation of oil heavier than water

Type II– Used for separation of oil lighter than water

Type I में 2 taps होते है ऊपर वाले से पानी over flow का होता है जबकि bottom वाले से तैल एकत्र किया जाता है, Type II में bottom पर Siphon होता है जो कि पानी के भरने पर कार्य करता है जबकि ऊपर का Tap से वैल के flow हेतु प्रयुक्त होता है।

Strip packing machine

आजकल Automatic strip packing machine उपलब्ध है जो कि कम समय में ही Tablets, Capsule को Strip के रूप में Pack कर देती है। इस प्रकार की मशीनों में स्वचालित रूप में Feeding, Sealing, Sliting तथा Cutting की प्रक्रिया एक के बाद एक होती रहती है। ये मशीन विभिन्न Size तथा Shape में Packing करने में दक्ष होती है। इस प्रकार की मशीनों में विभिन्न कार्यों को करने हेतु निम्न Parts होते हैं—

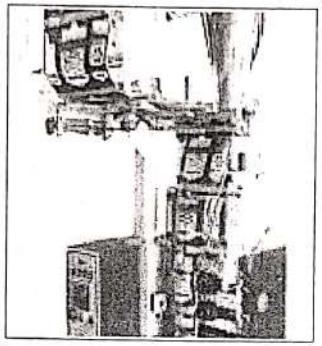

1. Vibrator
2. Chute
3. Sealing roller
4. Slitting
5. Draw brushes
6. Cutter

Hooper के द्वारा जिसे Strip के रूप में Pack करना हो जैसे Tablet, Capsule आदि उसे इसमें रख दिया जाता है। Strip के रूप में परिवर्तन हेतु प्रकार के Foil की आवश्यकता होती है। पहले Foil, एक गर्म रोलर जो कि Cavity युक्त होता है (यह Cavity आवश्यकता अनुसार बदली जा सकती है) के ऊपर से आगे बढ़ता है जिससे की इसमें एक निश्चित आकर की Cavity बन जाती है। आगे के क्रम में इस Cavity में Tablet या Capsule इसमें भर दिये जाते है। इसके आगे बढ़ने पर एक दूसरे Strip से इसकी Sealing प्रक्रिया होती रहती है। Sealing के पश्चात् Cutter से इन्हें आवश्यकतानुसार काटा जा सकता है।

Pouch filling machine

Pouch filling machine दो प्रकार के होते है—

1. Vertical form fill seal (VFFS)
2. Horizontal form fill seal (HFFS)

Vertical form fill seal machine मुख्य रूप से packing हेतु प्रयुक्त किये जाते हैं तथा ये ज्यादा सुविधाजनक होते हैं और इसमें द्रव्य का नुकसान (Wastage of material) भी कम होता है। इस प्रकार की मशीन के निम्न घटक होते हैं—

1. Film pulling system
2. Pouch former
3. Filling and sealing machine
4. Pouch cut
5. Control cabinet

Film packing system– इसमें एक Roller तथा Tensioner होता है। Film roll, जैसे कि PET, aluminum foil etc., को Roller के ऊपर रखा जाता है जो कि सामान्य रूप से पीछे की ओर होता है। Tensioner इस Foil को खोलकर इसे System में भेजता है।

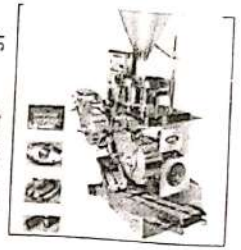

Ponch former– इस System में पहुँचने के साथ Sealing jaw के द्वारा Sealing होकर Foil pouch के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

Filling and Sealing Machine– Pouch के इस भाग में पहुँचने पर इसमें material की पूर्ति होती है तथा अगले क्रम में इसकी Sealing होती है। एक समान मात्रा को भरने के लिए Volumetric filter का प्रयोग किया जाता है।

Pouch cut– Pouch के sealing के उपरान्त इसे निश्चित आकार में काट दिया जाता है तथा यह collection system में एकत्र होता रहता है।

Control cabinet– इसके अन्दर electric parts लगे रहते हैं जिसके द्वारा मशीन के operating तथा controlling का कार्य किया जाता है।

Pyometer

A pyrometer is a such type of instrument that can measure the temperature remotely by measuring the radiation emitting from the object. So where the temperature is needed to recorded without contact with object a pyrometer can be used. Pyrometer can be of two basic types namely optical pyrometer and infrared pyrometer.

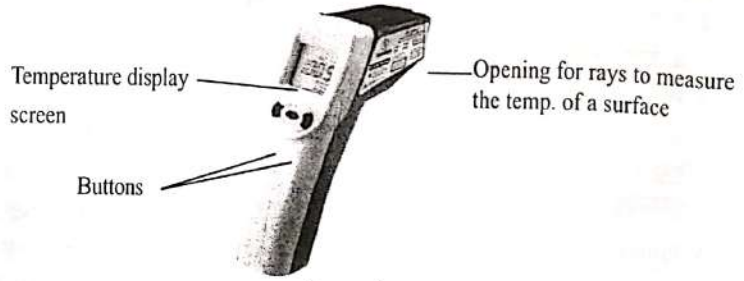

Pyometer

Scanned with OKEN Scanner

Thermocouple– By definition a thermocouple is a sensor which is used for the measurement of temperature in the form of EMF or an electric current, the sensor comprises of two dissimilar metal wires that are connected at one junction.

Structure– Normally, a thermo couple is consists of two different metal wires and both wires are connected together at the junction end. The junction is classified into three types ungrounded, grounded and exposed junction. In ungrounded the conductors are fully separated from the protecting cover whereas in grounded type metal wires as well as protecting cover are connected with each other. Exposed type is used to measure the gas temperature.

Working of thermocouple–

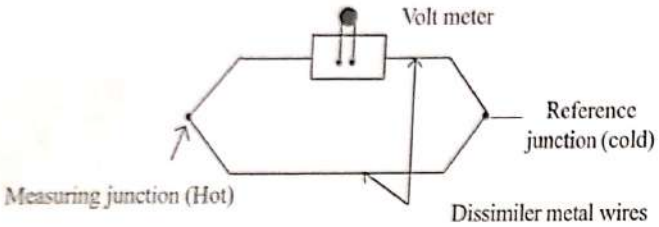

The temperature at the junction end becomes imbalanced then the potential variation induces in this circuit. The entire flow of current through out the circuit in calculated by the measuring tools. Measurement of output can be calculated like potentiometer and amplifier.

Application– Thermocouples are used as temperature sensor in the thermostats in various places. These can be used to test temperature in plans like petroleum, chemical etc.

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. बालुका यन्त्र का प्रयोग होता है—
   a. स्वेदन हेतु **b. कूपी पक्व निर्माण हेतु** c. पाचन हेतु d. उपरोक्त सभी
2. भल्लातक तैल पातन हेतु किस यन्त्र का प्रयोग करते है?
   a. पाताल यन्त्र b. भूधर यन्त्र c. कूपी यन्त्र d. स्थाली यन्त्र
3. Pulverizer का प्रयोग होता है—
   a. चूर्ण निर्माण में b. वटी निर्माण में c. दोनों में d. कोई नहीं
4. End Runner का प्रयोग होता है—
   a. भावना हेतु b. मर्दन हेतु c. चूर्ण निर्माण हेतु **d. उपरोक्त सभी**
5. Pyrometer का प्रयोग होता है—
   a. पुट हेतु b. मारण हेतु **c. तापमान ज्ञात करने में** d. गर्म करने हेतु

अध्याय **5**

पुट परिभाषा

पुट शब्द का अर्थ है खोखली जगह या विवर । रसशास्त्रीय ग्रन्थों में पुट को निम्न रूप में परिभाषित किया गया है–

- धातुपूपलेन्धनदाहः पुटम् (रसकामधेनु उप. 2/25)
- रसादि द्रव्यपाकानां प्रमाणज्ञापनं पुटम् ॥

नेष्टो न्यूनाधिकः पाकः सुपाकं हितमौषधम् ॥ (र.र.स. 10/47)

रस, महारस, धातु आदि के पाक का प्रमाण का ज्ञान कराने वाले प्रक्रिया को पुट कहते हैं इनका कम पाक या अधिक पाक उचित नहीं होता है बल्कि सम्यक पाक वाली (रस उपरस आदि) हितकर औषधि होती है ।

पुट सिद्धान्त– उपरोक्त वर्णन के द्वारा पुट के माध्यम से रस आदि द्रव्यों के हितकर औषधि के रूप में परिवर्तिन होने को बताया गया है । नेष्टों न्यूनाधिक पाक अर्थात् इन द्रव्यों का कम पाक या ज्यादा पाक नहीं होना चाहिए इसके लिए शास्त्र में विभिन्न प्रकार के पुट का वर्णन किया गया है । जिसके द्वारा अग्नि एक निश्चित मात्रा में प्रदान की जाती है । अग्नि की मात्रा द्रव्य जैसे– अभ्रक, स्वर्ण, रजत, ताम्र, आदि के संरचना अनुसार की जाती है । अग्नि की मात्रा को नियन्त्रित करने हेतु आचार्यों ने विभिन्न पुटो में निम्न मानक निर्धारित किया है । ये मानक निम्न हैं—

1. पुट हेतु वर्णित गड्ढे की एक निश्चित लम्बाई, चौड़ाई तथा गहराई ।
2. ईधन हेतु प्रयुक्त उपलों की संख्या
3. एक बार पुट हेतु प्रयुक्त औषधि मात्रा

इन मानकों से यह सुनिश्चित किया जाता है कि जिस रस द्रव्य को पाक हेतु अग्नि प्रदान की जा रही है उस द्रव्य को इस माध्यम से उचित अग्नि (Appropriate quantum of Heat) प्रदान किया जाता सके जिससे कि यह हितकर औषधि में परिवर्तित (Change) हो सके

तापमान का महत्व (Importance of Temperature) - पुट के माध्यम से विभिन्न रस द्रव्यों को विभिन्न वानस्पतिक औषधियों के क्वाथ, स्वरस या अन्य द्रव्यों जैसे गन्धक, हरताल आदि के साथ मर्दन करके इन्हें एक निश्चित मात्रा की अग्नि प्रदान की जाती है। जिसके परिणाम स्वरूप निर्मित भस्म एक विशेष यौगिक के रूप में परिवर्तित हो जाती है। भस्म रंग के उस योगिक विशेष को दर्शाता है। यदि तापमान उचित प्रकार से नहीं दिया जाय तो भस्म अच्छी प्रकार से निर्मित नहीं होती है।

अग्नि की मात्रा (Quntum of Heat) - विभिन्न प्रकार के पुट में प्रयुक्त अतः इनके उत्पन्न अग्नि की मात्रा भी भिन्न-भिन्न होती है। पुट के तापक्रम को निम्न क्रम में विभाजित किया जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

1. आरोही तापक्रम (Ascending temperature)
2. शीर्ष तापक्रम (Peak temperature)
3. अवरोही तापक्रम (Descending temperature)

आरोही तापक्रम– यह वह अवस्था है जब प्रारम्भ में पुट में औषधि को शराव सम्पुट या मूषा सम्पुट के माध्यम से रखकर तत्पश्चात् उपलों में अग्नि लगाकर उसे प्रज्वलित किया जाता है । इस अवस्था में तापमान शुरू में धीरे-धीरे तत्पश्चात् तेजी से बढ़ता है तथा एक निश्चित शीर्ष पर पहुँच जाता है ।

शीर्ष तापक्रम– इस अवस्था में अग्नि अपने शीर्ष (Peak temperature) तापक्रम पर होती है ।

अवरोही तापक्रम– इसमें तापमान (Temperature) धीरे-धीरे कम होता जाता है तथा अन्त में स्वांगशीत (Self cool) हो जाता है ।

Average Temperature Pattern in Various Puta.

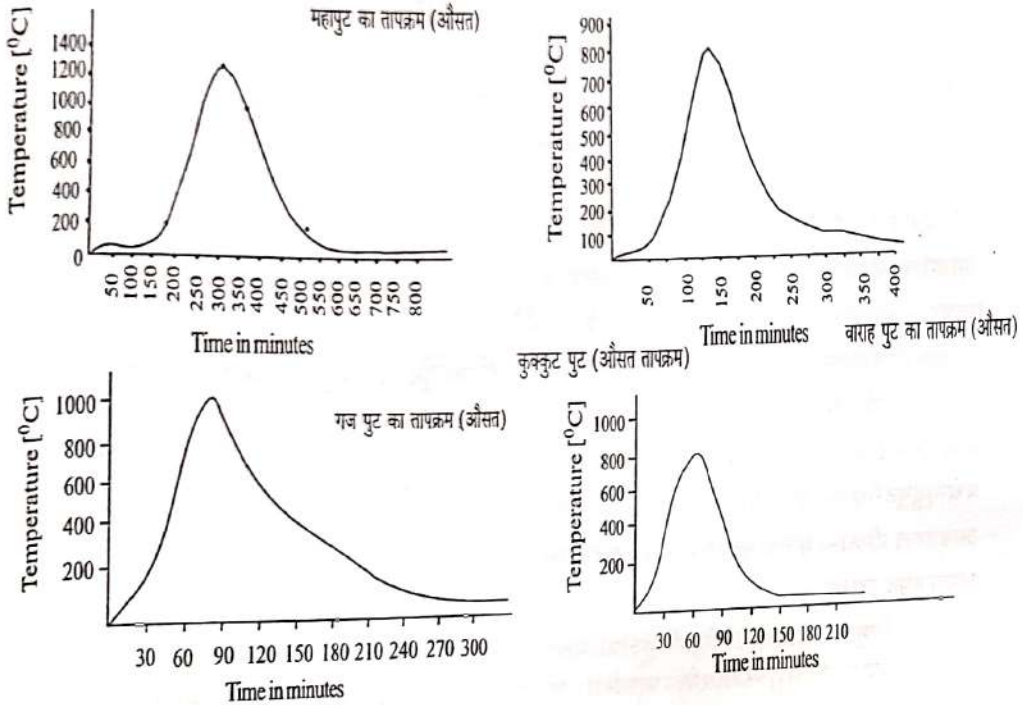

चन्द्रपुट

चन्द्रमा की किरणों से किये जाने वाले संस्कार को चन्द्रपुट कहा जाता है । प्रवाल पिष्टी निर्माण हेतु इसका प्रयोग किया जाता है ।

सूर्यपूट

द्रव्याणां भावितानान्तु भावनौषधजै रसैः । शोषणं सूर्यतापे यत्तत्सूर्यपुटमुच्यते ॥ (र.त. 3/37)

भावना हेतु कही गयी औषधियों के स्वरस, क्वाथ आदि से द्रव्यों को भावित कर धूप में सूखाने को सूर्यपुट या रौद्रपुट कहा जाता है । इस विधि से आयुर्वेद प्रकाश में लोह भस्म बनाने की विधि का उल्लेख है ।

महापुट

निम्नेविस्तरतः कुण्डे द्विहस्ते चतुरस्रके । वनोपलसहस्रेण पूरिते पुटनौषधम् ॥ क्रौञ्च्यां रुद्धं प्रयत्नेन पिष्टिकोपरि निक्षिपेत् । वनोपलसहस्रार्धं क्रौञ्चिकोपरि विन्यसेत् ॥ वह्निं प्रज्वालयेत्तत्र महापुटमिदं स्मृतम् ॥ (र.र.स. 10/51-52)

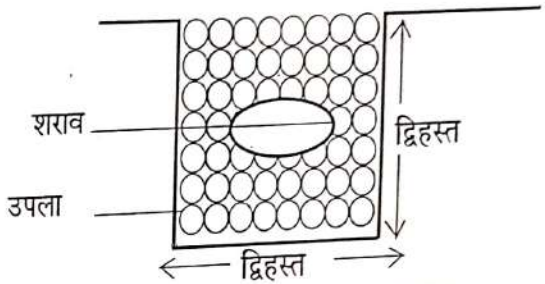

2 हाथ (1 हस्त=45.72 सेमी, 2 हस्त=91.44 सेमी) लम्बा, चौड़ा तथा गहरा गड्ढा में पहले 1000 उपले भर देते हैं, तत्पश्चात् मूषा, जिसका मुखभलीभाँति बन्द हो, को रखकर पुनः इसके ऊपर 500 उपले रखकर इसे जला देते हैं । यही महापुट है ।

विमर्श– आचार्य शार्ङ्गधर ने 30 उपलों का महापुट कहा है ।

गजपुट

राजहस्तप्रमाणेन चतुरस्रं च निम्नकम् । पूर्णं चोपलसाठीभिः कण्ठावध्यथ विन्यसेत् ॥ विन्यसेत् कुमुदीं तत्र पुटनद्रव्यपूरिताम् । पूर्णच्छगणतोऽर्धानि गिरिण्डानि विनिक्षिपेत् ॥ एतद्गजपुटं प्रोक्तं महागुणविधायकम् ॥ (र.र.स. 10/53-54)

Scanned with OKEN Scanner

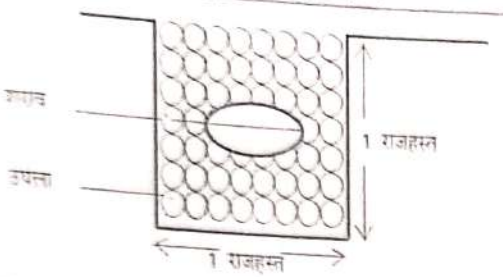

एक राजहस्त प्रमाण (55.88 सेमी) का लम्बा, चौड़ा तथा गहरा गड्ढा में उसके कण्ठ भाग तक उपले भर देने हैं सम्पश्चात् मुख को रखकर जितने उपले भरे गये हैं उसका आधा उपले रखकर पुट देने को गजपुट कहा जाता है। इस सूत्र में उपलों की संख्या वर्णित नहीं है। रस प्रकाश सुधाकर में उपलों की संख्या का वर्णन मिलता है–

राजहस्त प्रमाणं हि चतुरस्त्रं च गर्तकम् ।वनोत्पल सहस्त्रेण गर्तमध्यं च पूरयेत् ॥

(र.प्र.सु. 10/43)

गजपुट में प्रयुक्त उपलों की संख्या 1000 है।

विमर्श– गजपुट का पर्याय वारणाख्यपुट भी है।

अर्द्धगजपुट– रसरत्न समुच्चय में "अर्द्धभाख्य पुट" अभ्रक भस्म निर्माण हेतु प्रयुक्त किया गया है।

वाराह पुट

ग्रन्थों में इसका पर्याय क्रोड पुट कहा गया है।

इत्थं चारत्निके कुण्डे पुटं वाराहमुच्यते ।(र.र.स. 10/55)

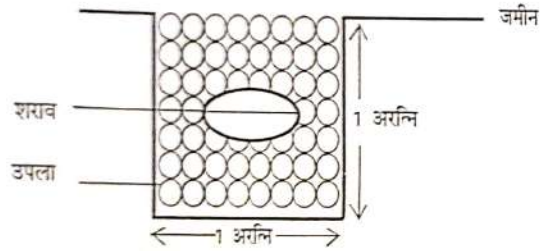

एक अरत्नि (41.91 सेमी) प्रमाण में लम्बा, चौड़ा तथा गहरे गड्ढे में उपले भर कर दिया गया पुट वाराहपुट कहलाता है।

कुक्कुट पुट

पुटं भूमितले तत्तद्वितस्तिद्वितयोच्छ्रयम् । तावच्च तलविस्तीर्णं तत्स्यात्कुक्कुटकं पुटम ॥

(र.र.स. 10/56)

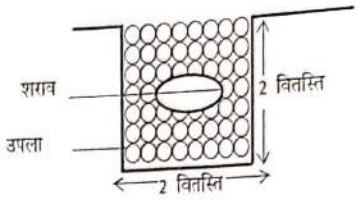

कुक्कुट पुट

2 वित्ता (1 वितस्ति = 22.86, 2 वितस्ति = 45.72 सेमी) लम्बा, चौड़ा, तथा गहरा गड्ढे में उपले भर कर जो पुट दिया जाता है, उसे कुक्कुट पुट कहा जाता है।

विमर्श– उपरोक्त वर्णन में उपलों की संख्या का वर्णन नहीं है। आचार्य शार्ङ्गधर ने स्वर्ण भस्म निर्माण प्रक्रिया में कुक्कुट पुट में 5 गोमय उपल का निर्देश किया है। यथा–

प्रदद्यात्कुक्कुटपुटं पञ्चाभिर्गोमयोपलैः ॥(शा.म. 11/18)

स्वर्ण भस्म निर्माण प्रकरण में शार्ङ्गधर संहिता के टीकाकार 30 उपलों से कुक्कुट पुट की संज्ञा दी है। यथा–

त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात्पुटान्येवं चतुर्दश ॥(शा.म. 11/6)

आढमल्ल टीका– पुटमत्र त्रिंशद्वनोपलैः कृत्वा देयम् ।तच्च कुक्कुटपुट संज्ञया विहितम् ।

मृदुपुट– आढमल्ल ने शार्ङ्गधर की टीका में मृदु पुट से–

1. कुक्कुट पुट तथा 2. अर्द्धगजपुट का ग्रहण किया है तथा दृढ़ पुट से गजपुट को कहा है। यथा–

दशांशं टङ्कणं दत्त्वा पचेन्ममृदुपुटेन तु ।(शा.म. 11/59)

आढमल्ल टीका– मृदु पुटं तु कुक्कुट पुट प्रभृतिकं

पचेन्मृदुपुटेनैव सूतको याति भस्मताम् ॥(शा.म. 12/40)

आढमल्ल टीका– मृदुपुटेनैवति लघुगज पुटेनैवेत्यर्थः ।

लघुगजपुट लक्षण–

निपुणविहितगर्तः षोडशैरङ्गुलैर्योमितसकलविभागस्तस्य मध्ये निधाय ।
ज्वलमतिविशुष्कैर्गोमयैः पारदस्य लघुगजपुटमेतत् प्रोक्तमेवं मुनीन्द्रैः ॥

16 अंगुल लम्बा, चौड़ा तथा गहरे गड्ढे में शुष्क गोमय (उपले) से पुट देने को लघुगज पुट कहा जाता है।

काञ्जिकेन द्वयं पिष्ट्वा पचेद्दृढपुटेन च । (शा.म. 11/39)

Scanned with OKEN Scanner

इडपुटे गजपुट यंत्रके पचेत– आहमल्ल टीका

नरेन्द्रनाथ सेन कृत वैद्यक शब्द सिन्धु में कुक्कुट पुट को निम्न बताया है–

1. हस्त प्रमाण खाते दशावयवकरीष कृतौषपुटः कुक्कुट पुटः एक हस्त प्रमाण के लम्बे, चौड़ा तथा गहरा गड्ढा में 10 वनौषधि से पुट देना कुक्कुट पुट कहा जाता है।
2. वितस्ति मात्रके खाते कथितं कौक्कुटं पुटम्।

एक वित्ता लम्बा, चौड़ा तथा गहरा गड्ढा की संज्ञा कुक्कुट पुट होती है।

3. 16 अंगुल लम्बे चौड़े तथा गहरे गड्ढे से दिया जाने वाला पुट कुक्कुट पुट कहलाता है।
4. 6 अंगुल लम्बा, चौड़ा तथा गहरा गड्ढे में उपले भर कर दिया जाने वाला पुट कुक्कुट पुट कहलाता है।

कपोत पुट

यत्पुटं दीयते भूमावष्टसङ्ख्यैर्वनोपलैः । बद्ध्वा सूतार्कभस्मार्थं कपोतपुटमुच्यते ॥

(र.र.स. 10/57)

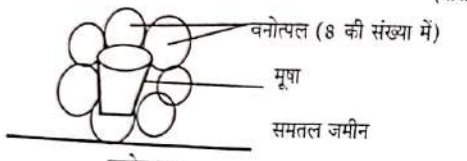

कपोत पुट

ऐसा पुट जो जमीन पर आठ वनोत्पल के प्रयोग से दिया जाय, ऐसे पुट को कपोट पुट कहा जाता है। यह पारद भस्म के निर्माण हेतु प्रयुक्त किया जाता है।

लावक पुट

ऊर्ध्वं षोडशिकामात्रैस्तुषैर्वा गोवरैः पुटम् । यत्र तल्लावकाख्यं स्यात्सुमृदुद्रव्यसाधने ॥

(र.र.स. 10/63)

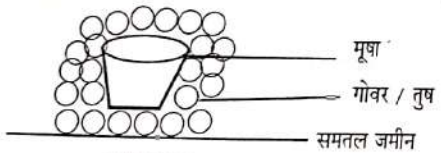

लावक पुट

एक षोडशिका (1 पल = 4 तोले) की मात्रा में तुष या गोवर से जो पुट दिया जाय उसी संज्ञा लावक पुट की होती है। इस पुट का उपयोग मृदु द्रव्यों को सिद्ध (बनाने) हेतु किया जाता है।

भूधर पुट

वह्निमित्रा क्षितौ सम्यङ् निखन्याद् द्व्यङ्गुलादधः । उपरिष्टात्पुटं यत्र पुटं तद्भूधराह्वयम् ॥

(र.र.स. 10/62)

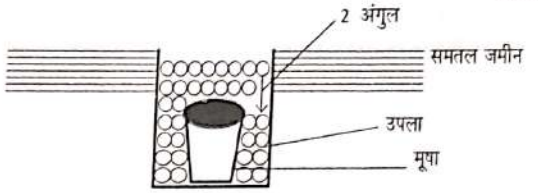

जमीन में एक गड्ढा खोदकर उसमें औषधि युक्त मूषा को इस प्रकार रखते हैं कि मूषा के ढक्कन से ऊपर 2 अंगुल जगह खाली रहे। पुनः इस खाली स्थान में उपले भरकर पुट देना भूधर पुट कहलाता है।

गोमय पुट

गोष्ठान्तर्गोक्षुरक्षुण्णं शुष्कं चूर्णितगोमयम् । गोवरं तत्समादिष्टं वरिष्ठं रससाधने ॥
गोवरैर्वा तुषैर्वापि पुटं यत्र प्रदीयते । तद्गोवरपुटं प्रोक्तं रसभस्मप्रसिद्धये ॥

(र.र.स. 10/58-59)

गोवर परिभाषा– गौशाला में गायों के खुर से रौंदा हुआ एवं सूखा तथा चूर्णीरूप जो गोमय होता उसे गोवर कहते हैं तथा यह रस सिद्धि में श्रेष्ठ होता है।

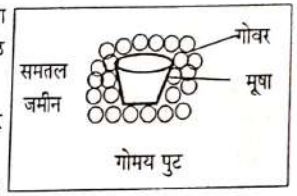

गोमय पुट

गोवर या तुष के द्वारा जो पुट दिया जाता है, उसे गोमय पुट या गोवर पुट कहते हैं। यह रस (पारद) भस्म निर्माण हेतु श्रेष्ठ होता है।

वक्तव्य– इस पुट को समतल जमीन पर दिया है तथा कुछ टीकाकारों ने इस पुट हेतु 64 तोला गोवर/तुष प्रयोग करने को माना है। रसरत्न समुच्चय की आ. दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी की टीका में आठ उपलों से इस पुट को देने को कहा है। रसतरंगिणी में एक वित्ता ऊँचाई में जितनी गोवर की मात्रा आये उतने से इस पुट को देने को कहा है।

बालुका पुट

अधस्तादुपरिष्टाच्च क्रौञ्चिकाऽऽच्छाद्यते खलु । बालुकाभिः प्रतप्ताभिर्यच्च तद्बालुकापुटम् ॥

(र.र.स. 10/61)

ऊपर तथा नीचे से गर्म बालुका से मूषा को ढककर जो पुट दिया जाय उसे बालुका पुट कहा जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

कुम्भपुट / भाण्ड पुट

घड़े में मूषा को रखकर या कुम्भ के समान गड्ढे का निर्माण कर पुनः इसके माध्यम से पुट देने को कुम्भपुट कहा जाता है । यथा–

पूर्णं चोपल माहीधिः कण्ठावध्यं विन्यसेत् । कलशीं तत्र विभजेत्पुटन द्रव्यपूरिताम् ॥

(रस कामधेनु उप. 2/38)

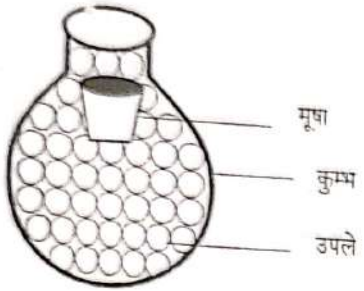

कुम्भ (घड़े) के समान कुण्ड निर्मित कर उसके कण्ठ तक जितने उपले आ सके उतना उपले भर कर पुनः औषधि युक्त कलशी (शीशी) रखकर उसके ऊपर पुनः उपले भर अग्नि प्रज्वलित कर पुट देने को कुम्भ पुट कहा जाता है ।

रसरत्न समुच्चय में भाण्ड पुट का वर्णन किया गया है जो निम्न है–

स्थूलभाण्डे तुषापूर्णे मध्ये मूषासमन्विते । वह्निना विहिते पाके तद्भाण्डपुटमुच्यते ॥

(र.र.स. 10/60)

एक बड़े भाण्ड में तुष (धान की भूसी) आधा भाग (मध्य तक) भर देते हैं पुनः मूषा को स्थापित कर उसे तुष से पूरा भर देते हैं । इसमें अग्नि जला देते हैं । यही भाण्ड पुट है । आचार्य भाव प्रकाश ने तुष को जलाने के पश्चात् भाण्ड के मुख को बन्द कर देने को कहा है । यथा–

क्षिप्त्वाऽग्नि मुद्रयेद् भाण्डं तद्भाण्डपुटमुच्यते । (भा.प्र./धातु शोधन प्रकरण 3/32

विभिन्न द्रव्यों के भस्म (मारण) हेतु प्रयुक्त पुट

		रस तरंगिणी	रसरत्न समुच्चय	आयुर्वेद प्रकाश
1.	रस	लघुपुट, गजपुट तथा भूधर यन्त्र से	लघुपुट तथा भूधर यन्त्र से	गजपुट, लघुपुट, गोमय अग्नि बालुका यन्त्र से
2.	अभ्रक	गजपुट	अर्द्धभाख्य	गजपुट
3.	हरताल	भस्म यन्त्र से लघुपुट, कपोत पट, महापुट	10 उपलों से पुट	भस्म यन्त्र / खात गजपुट
4.	मल्ल	लावक पुट	–	–

5.	गोदन्ती, शुक्ति मृगशृंग	केवल "पुटितं" उल्लेख	–	–
6.	शंख	गजपुट	–	–
7.	जल शुक्ति	अङ्गार अग्नि	–	अंगार अग्नि
8.	वराटिका	करीष अग्नि	–	अङ्गार अग्नि
9.	स्वर्ण	कुक्कुट पुट, लघुपुट	पुटैः	30 उपलों से, खर अग्नि
10.	रजत	लघुपुट, कुक्कुट पुट करीष अग्नि, गजपुट	पुटेत	30 उपलों से, 20 उपलों से
11.	ताम्र	–	गजपुट	गजपुट
12.	वङ्ग	लावक पुट	लघुपुट	गजपुट
13.	नाग	लघुपुट	पुटे पचेत	पुटेत
14.	यशद	"पुटेत*" शब्द प्रयुक्त	–	वंग सदृश
15.	लोहा	गजपुट	गजपुट	गजपुट
16.	मण्डूर	पुटेत*	–	–
17.	स्वर्णमाक्षिक	पुटेत*	क्रोडपुट (वाराह)	गजपुट
18.	रजत माक्षिक	पुटित*	–	–
19.	तुत्थ	लघुपुट, कुक्कुट पुट	कुक्कट पुट	लघुपुट
20.	खर्पर	पुटेत* शुष्क वन्योपल	–	बालुका यन्त्र/लवण यन्त्र
21.	कान्तपाषाण	पुटेत*	–	–
22.	कासीस	लघुपुट	–	–
23.	पित्तल	वारणाख्य पुट (गजपुट)	ताम्रवत (गजपुट)	गजपुट
24.	कांस्य	वारणाख्य पुट	गजपुट	गजपुट
25.	अंजन	–	–	–
26.	शिलाजतु		अष्टवन्योपल	आठ वन्योपल
27.	हीरा	वारणाख्य (गजपुट) महापुट	वराहपुट	गजपुट
28.	माणिक्य	वारण पुट	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
29.	मुक्ता	लघुपुट	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग

Scanned with OKEN Scanner

30.	पुष्पराग	वारण पुट	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
31.	नीलम	वारण (गजपुट)	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
32.	मरकत	वारण पुट	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
33.	वैदूर्य	वारण पुट	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
34.	गोमेद	वारण पुट	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
35.	प्रवाल	"पुटेत*"	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
36.	वैक्रान्त	द्विरदपुट (गजपुट)	पुट शब्द प्रयोग	पुट शब्द प्रयोग
37.	सूर्यकान्त	पुटित	–	–
38.	चन्द्रकान्त	पुटित	–	–
39.	राजावर्त	गजपुट	पुट शब्द प्रयुक्त	पुट शब्द प्रयुक्त
40.	पेरोजक	गजपुट, राजावर्त समान	–	–
41.	स्फटिक	गजपुट	–	–
42.	विमल		पुटैः	–
43.	वर्तलौह		पुटितं*	–
44.	हिंगुल	–	–	10 वन्योपल

अनुक्त पुट प्रमाण– यदि पुट वर्णन क्रम में या मारण हेतु किसी द्रव्य का पुट का प्रमाण वर्णन नहीं है तो निम्न अनुसार पुट प्रयोग करना चाहिए ।

अनुक्तपुटमाने तु साध्यद्रव्यबलाबलात् । पुटं विज्ञाय दातव्यमूहापोहविचक्षणः ॥
(र.र.स. 10/64)

तथा एतानि पुटानि यत्र यत्रोषयुक्तानि तत्र तत्र विचार्य देयानि । प्रथमं पुटं गोवरेणैव । द्वितीयादि पुटे पुनर्गन्धं दत्त्वा निम्बूरसेन मर्दयित्वा कुक्कुट पुटं दद्यात् । एवं यावद्विहितपुट पर्यन्तं कुर्यात् । इदं सर्वत्र लोहादिमारणे ज्ञेयम् । यदि तु तीक्ष्णादि लोहमारणं तदा गजपुटानि ज्ञेयानि, तथा ताम्रादि मारणे काष्ठादि जन्योऽग्निपाको ज्ञेयः । (र.का. उप.पाद 2/42)

यदि पुट के प्रमाण का वर्णन नहीं है तो सिद्ध किये जाने वाले द्रव्य के स्वभाव (मृदु, कठिन, मध्य) के अनुसार पुट देना चाहिए । उपरोक्त वर्णित पुट जहाँ-जहाँ उपयुक्त हो वहाँ भलीभांति विचार करके देना चाहिए । प्रथम पुट गोवर का देना चाहिए । दूसरे पुट से गन्धक डालकर नींबू रस से मर्दन कर कुक्कुट पुट देना चाहिए । इस प्रकार प्रयोजनानुसार पुट देना चाहिए। यह क्रम तथा विधान साधारण लोहों के लिए है । तीक्ष्ण लोह के मारण हेतु गजपुट तथा ताम्रादि भारण हेतु काष्ठ जन्य अग्नि का प्रयोग करना चाहिए ।

मूषा परिभाषा

मुष्णाति दोषान्मूषेयान् सा मूषेति निगद्यते । (र.र.स. 10/2)

मूषेयान अर्थात् हटाने योग्य दोषों को दूर करने के कारण इसे मूषा कहते हैं ।

विमर्श—विभिन्न प्रकार की रसशास्त्रीय प्रक्रियायें यथा शोधन, मारण, सत्वपातव, द्रुतिकरण आदि अग्नि के माध्यम से की जाती है । इन प्रक्रियाओं में अग्नि लगभग 50^0C से 1800^0C तक प्रदान की जाती है। उदाहरण के लिए स्वेदन आदि में 100^{0C} के आसपास तथा अभ्रक सत्वपातन हेतु 1800^0C के आसपास की अग्नि प्रदान की जाती है । मूषा का प्रयोग विभिन्न द्रव्यों के द्रावण, सत्वपातन, मारण आदि में किया जाता है । द्रव्यों को अग्नि में मूषा के माध्यम से या मूषा में रखकर प्रदान की जाती है । मूषा को दोष दूर करने वाला कहा गया है ।

सामान्य मूषा निर्माण हेतु उपयोगी द्रव्य

या मृत्तिका दुग्धतुषैः शणेन शिखित्रकैर्वा हयलदिना च ॥
लोहेन दण्डेन च कुट्टिता या साधारणा स्यात्खलु मूषिकार्थे ॥
(र.र.स. 10/7)

1. उपरोक्त वर्णित मिट्टी – 4 भाग
2. दग्ध तुष – 1 भाग
3. सन/ऊन – 1 भाग
4. बिना पानी के बुझे लकड़ी के कोयलों का चूर्ण – 1 भाग
5. घोड़े की लीद – 1 भाग

उपरोक्त मात्रा में वर्णित द्रव्यों को लेकर उसे लोह दण्ड से खूब कूटकर जब ये आपस में अच्छी प्रकार से मिश्रित हो जाय तब मूषा का निर्माण इससे करना चाहिए ।

Silica Crucible

A crucible can defined as a container usually cup shaped made up of ceramic, metal or other material in which melting of substances at high temperature can be performed. They can be made from different material like clay, graphite, the crucibles may contain lid and are of silica, nickel, platinum etc. The crucible are used in :

1. Melting of substances 2. Chemical analysis
3. Research purposes (Ash value, loss on Ignition)

Silica crucible– These crucible are made of pure fused silica this types of crucible exerts a very low coefficient of thermal expansion due to this it allows quick heating and cooling with no risk due to thermal breakage. These crucible can with stand on high temperature range, and corrosion due to chemicals in comparison to percelain crucible.

मुद्रा

मुद्रा शब्द से यह स्पष्ट है कि मूषा या शीशी का मुख बन्ध या सन्धिबन्ध करना है । रस रत्नाकर के उपकरण पाद यन्त्राधिकार में दो प्रकार की मुद्राओं का उल्लेख है । हठ मुद्रा तथा मदनमुद्रा । हठ मुद्रा का प्रयोग अग्नि से तथा मदन मुद्रा का प्रयोग जहाँ पर जल का प्रयोग होता है वहाँ पर किया जाता है ।

Scanned with OKEN Scanner

हठमुद्रा

चुम्बक लौह चूर्णं च क्रोडस्नेन संयुतम् । तत्र सर्वं प्रदातव्यं घनघातेन ताऽयेत ॥
सन्धारम्भोदयो यावत् सूर्यं बिम्बं न दृश्यते । हठमुद्रेति विख्यातं सर्वसिद्धैर्नमस्कृता ॥
(र.र.उ. 1/249)

चुम्बक चूर्ण को सूअर के रक्त से मिश्रित कर उसे अच्छी प्रकार तेज प्रहार से कूटते हैं । कूटने की प्रक्रिया सूर्यास्त से सूर्योदय (सवेरा) करते हैं । इस प्रकार निर्मित लेप को मदन मुद्रा कहते हैं । इसका प्रयोग तीव्र आदि वाले कार्यों में किया जाता है ।

मदन मुद्रा

औदुम्बराख्य वटदुग्धंपलं पलञ्च लाक्षापलमृषिपलं त्वथ चुम्बकस्य ।
सङ्कुट्यमानमतसीफलतैलमिश्रं सूतस्य जारणाविधौ मदनाख्य मुद्रा ॥
(र.र.उ. 1/256)

उदुम्बर, वट दुग्ध, लाक्षा एकपल तथा चुम्बक चूर्ण सात पल लेकर अतसी तैल की सहायता से कूट कर मोम मृदस बना लेते हैं । यह मदन मुद्रा है। यह पारद के जारण आदि में प्रयोग की जाती है । रस रत्नाकर द्वारा वर्णित अन्य विधि में मदन मुद्रा मोम से निर्मित करने का उल्लेख है । तथा यह जलयन्त्रादि के मुद्रा करने हेतु सर्वोत्तम माना जाता है । इससे मुद्रित जलयन्त्रादि तीव्र जल धारा के वेग से भी प्रभावित नहीं होता है ।

सन्धि बन्धन

मूषादीनां तु यत्सन्धौ किट्टाद्यैः स्याद्विलेपनम् । वत्सन्धिलेपनं ख्यातं तच्चोक्तं सन्धिबन्धनम् ॥
(र.त. 3/5)

मूषा आदि को किसी ढक्कन या पिधान से दोनों के सन्धि स्थान को किट्ट आदि के लेपन से जोड़ने को सन्धि लेपन या सन्धिबन्धन कहा जाता है ।

सन्धि बन्धन द्रव्य

सन्धिबन्धन या मुद्रा का प्रयोग अग्नि या जल के प्रवेश को रोकने हेतु किया जाता जिससे इनके द्वारा होने वाली क्षति को नियन्त्रित किया जा सके । इसके निवारणार्थ दो प्रकार यथा तोयमृत्तिका एवं वह्निमृत्तिका प्रयोग किया जाता है–

तोयमृत्तिका

लेहवत्कृतवब्बूलक्वाथेन परिमर्दितम् । जीर्णकिट्टरजः सूक्ष्मं गुडचूर्णसमन्वितम् ।
(र.र.स. 9/62)

जीर्ण लोहे के चूर्ण तथा गुड़ चूर्ण को लेहवत बबूल क्वाथ से मर्दन कर मिट्टी के जैसा गाढ़ा कर लेते हैं । इसे ही जल मृत्तिका कहते हैं । यह पानी के लिए दुर्भेद्य होता है अर्थात् पानी अन्दर प्रवेश नहीं कर सकता है ।

वह्निमृत्तिका

खटिकापटुकिट्टैश्च महिषीदुग्धमर्दितैः । वह्निमृत्स्ना भवेद्धोरवह्नितापसहा खलु ॥
एतया मृत्स्नया रुद्धो न गन्तुं क्षमते रसः । (र.र.स. 9/63)

खड़िया मिट्टी, नमक (सैन्धव नमक) तथा लौह किट्ट इन तीनों का सूक्ष्म चर्ण भैंस के दुग्ध से मर्दन कर लेप जैसा बना लेते हैं । इसके द्वारा रूद्ध किया गया पारद अधिक ताप पर भी बाहर नहीं जाता है । उपरोक्त लेप अधिक ताप सहने में समर्थ होता है ।

वल्मीकमृत्तिकांऽगारपूरणं लोहकिट्टकम् । श्वेतपाषाणकं चैव तत्सर्वचूर्णयेत्समम् ॥
सर्वतुल्यं दग्धतुषं तोयेनैव विमर्दयेत् । मूषादि संपुटं कुर्यात्सर्वसंधि प्रलेपनम् ॥
(र.र.उप. 1/183-184)

बल्मीक मिट्टी, कोयले, मण्डूर तथा श्वेत पत्थर (चूना) इसका समान मात्रा में चूर्ण तथा इन चारों की मात्रा के बराबर दग्ध तुष लेकर उसे पानी में मर्दन कर चिकना तथा लेप योग्य बना लेते हैं । यह मूषा आदि के सन्धि लेपन में प्रयुक्त होता है ।

कोष्ठी

सत्त्वानां पातनार्थाय पातितानां विशुद्धये । कोष्ठिका विविधाकारास्तासां लक्षणमुच्यते ॥
(र.र.स. 10/32)

द्रव्यों के सत्वपातन हेतु तथा प्राप्त किये गये सत्व का शोधन करने हेतु भिन्न-भिन्न प्रकार के कोष्ठियों की आवश्यकता होती है । इन कोष्ठियों के लक्षण वर्णित किये गये है ।

चुल्हीका

अष्टादशांगुलोत्सेध प्रमाणायामवेष्टनाम् । वल्मीकाकारवद्वृत्तामधोभागे बृहत्तराम् ॥
कोष्ठीवच्छुषिरामन्तः पञ्चगुल्फाग्रसंयुताम् । प्राकाराग्रे यथा गुल्फास्तथागुल्फांश्च कारयेत् ॥
मूलभागे प्रकुर्वीत बहिर्द्वारं च कारयेत् । द्वादशांगुल विस्तारं चतुरस्रं समन्ततः ॥
सद्वारा चुल्हिका कोष्ठी रसज्ञेषु इयं मता ॥ (र.र.उप. 2/1-4)

अट्ठारह अंगुल ऊँची बिना किसी आवरण की, वल्मीक के आकार गले और नीचे के भाग में चौड़ी विस्तार युक्त कोष्ठीवत अन्दर में छिद्र युक्त लोहे की शलाकाओं से युक्त ऊपर में पाँच पैर के पंजे के समान उसी प्रकार गले के नीचे पाँच आधार शुल्क बनाना चाहिए । बारह अंगल उर का विस्तार जिससे अग्नि दी जाती है बनाना चाहिए ।

अङ्गार कोष्ठी

राजहस्तसमुत्सेधा तदर्धायामविस्तरा । चतुरस्रा च कुड्येन वेष्टिता मृन्मयेन च ॥
एकभित्तौ चरेद् द्वारं वितस्त्याभोगसंयुतम् । द्वारं सार्धवितस्त्या च सम्मितं सुदृढं शुभम् ॥
देहल्यधो विधातव्यं धमनाय यथोचितम् । प्रादेशप्रमिता भित्तिरुत्तरङ्गस्य चोर्ध्वतः ॥
द्वारं चोपरि कर्त्तव्यं प्रादेशप्रमितं खलु । ततश्चेष्टिकया रुद्ध्वा द्वारसन्धिं विलिप्य च ॥
शिखित्रैस्तां समापूर्य्य धमेद्धस्त्राद्वयेन च । शिखित्रान् धमनद्रव्यमूर्ध्वद्वारेण निक्षिपेत् ॥
सत्त्वपातनगोलांश्च पञ्च पञ्च पुनः पुनः । भवेदङ्गारकोष्ठीयं खराणां सत्त्वपातिनी ॥
(र.र.स. 10/33-38)

अङ्गार कोष्ठी की संरचना निम्न होगी–

1. इस कोष्ठी की लम्बाई राजहस्त (30 अंगुल) तथा चौड़ाई 15 अंगुल होगी । इसमें चार दीवारे होगी जो कि मजबूत ईट से बनी होगी ।

Scanned with OKEN Scanner

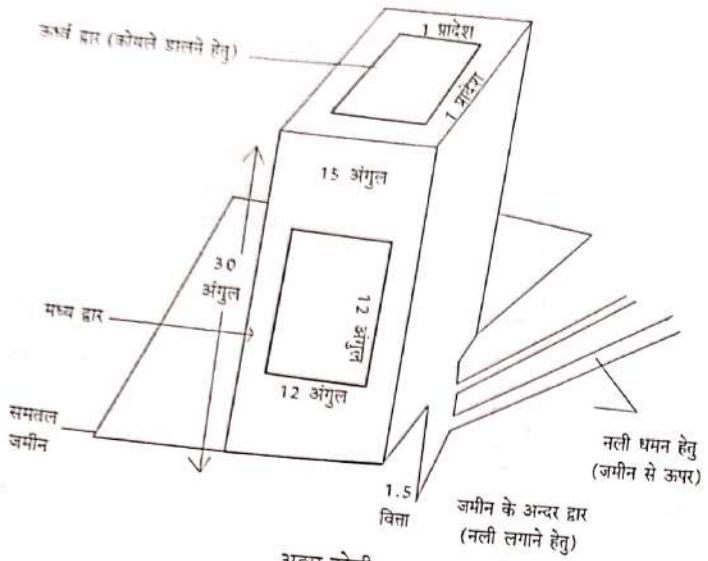

अङ्गार कोष्ठी

2. ऊपर की तरफ ऊर्ध्व द्वार होगी जिसकी लम्बाई तथा चौड़ाई 1 प्रादेश होगी। इस द्वार से कोयले तथा सत्व पातन हेतु गोले डाले जायेंगे। एक बार में पाँच गोले से अधिक नहीं डाले जायेंगे।
3. इसके किसी एक भीत (दीवार) में मध्य द्वार बनाया जायेगा। जो बीच में स्थित होगा तथा इसकी लम्बाई तथा चौड़ाई 12 अंगुल होगी। इस द्वार को सत्व पातन प्रक्रिया से पूर्व ईट तथा मिट्टी से अच्छी प्रकार से बन्द कर दिया जायेगा। तथा इसे सम्पूर्ण रूप से कोयलों से भरा जायेगा।
4. इसमें एक दीवार से अन्दर जमीन में एक द्वार निर्मित किया जायेगा जिसे धमन द्वार कहा जायेगा। इसकी लम्बाई तथा चौड़ाई डेढ़ वित्ता होगी। इस द्वार से दो नलियाँ जुड़ी होगी जिसका एक सिरा जमीन पर निकलेगा तथा इस नली से धमन कार्य किया जायेगा।
5. इस कोष्ठी का उपयोग खर अर्थात् कठिनता से या उच्च तापमान पर निकलने वाले द्रव्यों के सत्व पातन हेतु किया जाता है। उदाहरण अभ्रक आदि जिसमें 1800^0C के लगभग तापमान की लगातार आवश्यकता होती है।

गारकोष्ठी

वितस्तिप्रमिता निम्ना प्रादेशप्रमिता तथा। उपरिष्टात् पिधानं तु भूरिछिद्रसमन्वितम्॥
गर्तमापूर्य चाङ्गारैः प्रघमेद्धनालतः। गारकोष्ठी समुद्धिष्ठा सत्त्वपातनहेतवे॥
(38-39)

1 बिता गहरा, लम्बा-चौड़ा गड्ढा बनायें। प्रादेशमात्र (एक बिता को कहते हैं।) इस गहरे के एक पार्श्व में 4 अंगुल व्यास का गोल 1 छिद्र करें, उस पर अनेक छिद्रों से युक्त एक ढक्कन (पिधान) रखें। उसी छिद्र में वङ्कनाल का मुख फिट कर दें। गड्ढे में आग और कोयले रखकर स्थिर कर दें। पुनः मूषा में सत्वपातनार्थ द्रव्य रख कर धमन करें। इसे गारकोष्ठी कहते हैं। इसका उपयोग खनिजों को पिघलाकर सत्वपातन के लिए करते हैं।

Gas stove

A stove can be defined as an enclosed space within which fuel is subjected to burn to heat wheather the space in which the stove is situated or items put on the heated stove. Depending upon the fuel used the stoves are known. In gas stove liquifying petrolium gas or other flammable gas like natural gas, propane etc. can be used. In this system gas is fed into the stove which is connected to cylender filled with gas or by pipelines etc. The stoves have burner on the top before reaching to burner gas combines with air before ignition. Depending upon energy need the size of burner can be made. Burner heat is calculated in terms of British thermal units (BTU).

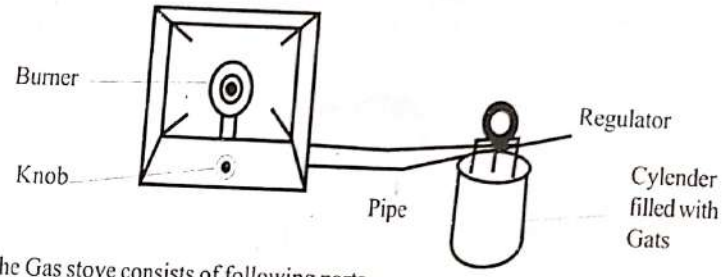

The Gas stove consists of following parts–

1. Stove with burner and knob for regulation of supply of fuel
2. A pipe connecting stove with cylender or other supply sources
3. Cylender or pipeline with regulator

Hot plate– The hot plate consists of a top, round or flat, that can be heated by means of electric filaments. This type of heating appliances is normally used for cooking applications but can also be used in laboratory for scientific purposes. Hot plates are frequently used for various industries like mining, electronics and plastic etc. The size of hot plate varies according to its use viz laboratory, domestic or industrial. The working of hot plate includes as electric current flow through the wire and electric energy converted into heat energy leading to heating of top (Plate). In Rasashastra hot plates can be used as heating device in Tapta khalwa yantra. Hot plate consists of a knob from which temperature can be adjusted.

Scanned with OKEN Scanner

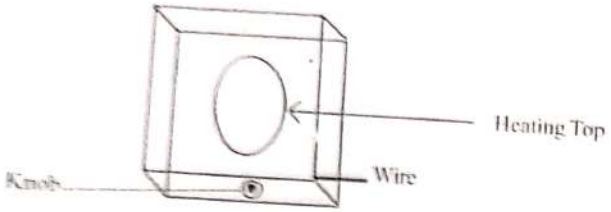

Hot plate

Heating mantle– Heating mantle is also known as heating nest, isomantle or heating basket. Heating mantles may occurs in different forms. In a normal arrangement there is a strip of fabric is wrapped around the electric wires and is made into a basket or nest shape. The current is applied to the device and the temperature is achieved. The temperature is regulated by a rheostat. The maximum temperature achieved by heating mantle is 400^0C. Heating mantles are used for heating organic liquid as these have tendency to burst into flame when exposed to direct heat. The advantage of heating mantle is that glassware etc. are not in direct contact of heat.

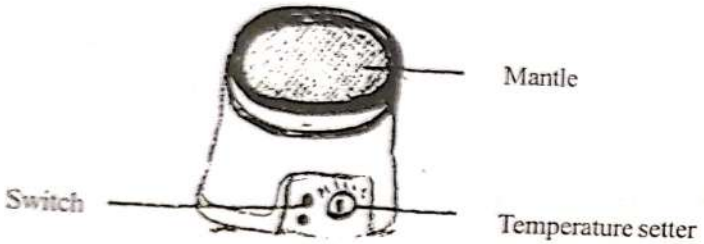

Heating mantle

Induction stove– An induction stove changes electrical energy by induction from a coil of wire into a vessel that must be ferromagnetic. In an induction stove a coil of copper wire is put under the cooking vessel and an alternating current (AC) is passed from it. The resulting oscillating magnetic field wirelessly induces an electric current in the pot. Induction cooking heats a cooking vessel by means of electric induction besides to those of thermal conduction or an electric heating element. So that the cooking vessel in this heating must be of or contain ferromagnetic metal like stainless steel or cost iron. Pans made up of copper or aluminium would not work unless they have additional layer to the bottom of pan that are magnetic. The efficiency of induction stove is better to that of gas or electric stove as the former in approximately use ten percent more energy transfer.

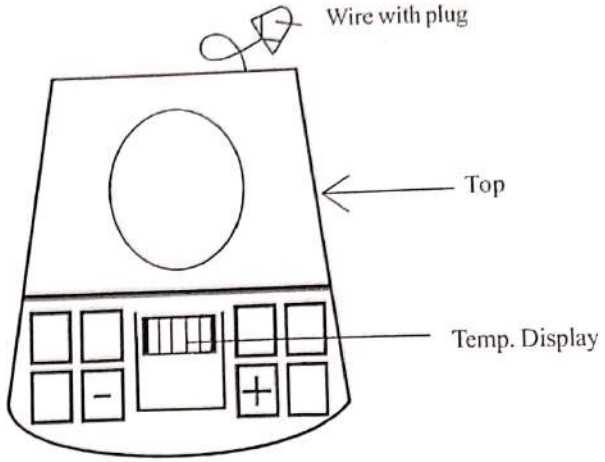

Hot air oven– Hot air oven is used for rapid evaporation of materials and for sterilization of articles like glass ware, crucible etc. that can be sterilized by means of dry heat using electricity. The hot air oven can be of two types that is static air and forced air Hot air oven. These is a thermostat which controls the temperature of oven. In the general construction of these types of oven there is a space between two layer where hot air circulates. The outer layer is metallic and good conductor of heat where as the inner layer is poor conductor of heat. There is an air circulating fan which keeps uniform heat distribution. It is fitted with wire mesh plated trays that can be adjusted.

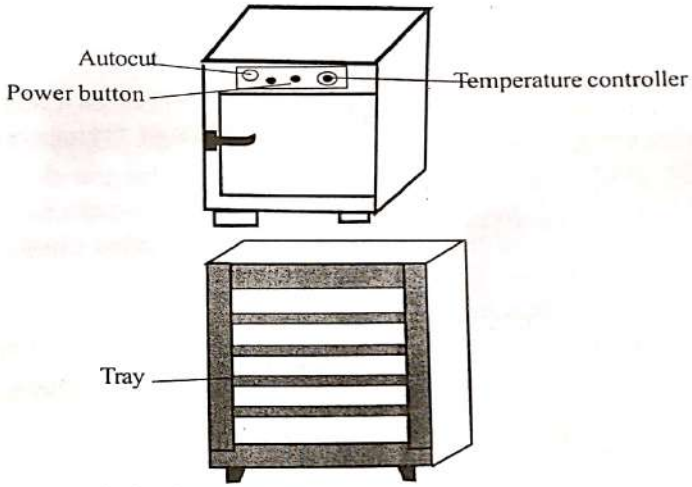

Hot Air Oven

Scanned with OKEN Scanner

Electric Muffle Furnace (E.M.F.)

रसशास्त्रीय प्रक्रियाओं यथा भस्म निर्माण हेतु पुट प्रयोगार्थ तथा कूपीपक्व रसायन यथा रस सिन्दूर, स्वर्णवंग, मकरध्वज आदि के निर्माण हेतु Electric Muffle Furnaces का प्रयोग किया जाता है । उपयोग के आधार पर इसके 2 प्रकार होते हैं–

1. Horizental EMF- पुट प्रक्रिया हेतु ।
2. Vertical EMF- कूपीपक्व निर्माण हेतु ।

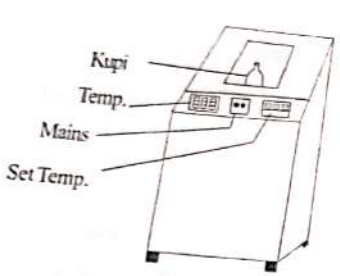

Vertical E.M.F.

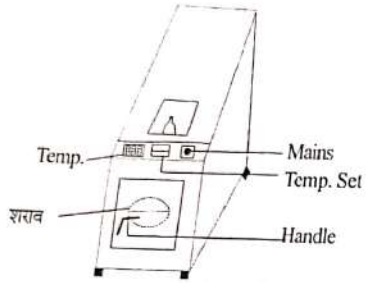

Horizental E.M.F.

संरचना– इसकी संरचना एक चौकोर Box की तरह होती है । जिसके Surface wall पर coils लगे रहते है जिनके माध्यम से ताप दिया जाता है । एक दरवाजा इस प्रकार लगा रहता है जिससे शराव या कूपी को रखा तथा निकाला जा सके । किनारे खाली स्थान जिससे Heat बाहर न आये उसे Firewool से पैक किया हुआ रहता है । तापमान नियन्त्रण हेतु है– एक Set button होता है जिसे दबाकर तापमान को जरूरत के अनुसार Set कर दिया तथा यह Display होता रहता है । एक दूसरे Display द्वारा Actual तापमान दिखता रहता है जब Actual तापमान set तापमान के बराबर हो जाता है तब Sensor की सहायता से यह Auto cut तापमान इसी पर बना रहता है । यह उपकरण बिजली द्वारा चालित होता है ।

अग्नि प्रदान के साधन (Heating material)

काष्ठ

खदिर, असन वृक्ष की लकड़ी सदृश सार वृक्षों की दो वितस्ति लम्बी लकड़ी का प्रयोग काष्ठ से अग्नि प्राप्त करने हेतु किया जाता है । इस प्रकार की अग्नि का प्रयोग पारद के पाक हेतु प्रयोग किया जाता है। (आ.क.अमृती 26 उल्लास)

कोयला (लकड़ी का)– मधुक (महुआ), खदिर, बाँस तथा बेर के कोयलों का प्रयोग अग्नि प्रदान हेतु किया जाता है। मधुक या खदिर के कोयले सत्वपातन हेतु, तेज अग्नि हेतु बांस के तथा स्वेदन हेतु बेर के कोयले प्रयुक्त होते हैं । (र.र.स. 8/36)

पत्थर का कोयला (Stone coal)

इसे Anthracite या Hard coal के नाम से भी जाना जाता है । यह Compact तथा Sub metallic lustre लिये होता इसके द्वारा अधिक ऊर्जा (अग्नि के रूप) प्राप्त होती है तथा यह अच्छी प्रकार से जलता है । धातुओं को पिघलाने तथा सत्व पातन हेतु इसका प्रयोग किया जाता है।

क्षार, लवण तथा बालुका— इन तीनों द्रव्यों के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से अग्नि प्रदान की जाती है अर्थात् अग्नि द्वारा इन्हें गर्म किया जाता है तथा इनके गर्म होने पर विभिन्न द्रव्य पाक किये जाते हैं ।

पुनर्नवा क्षार के द्वारा हरताल भस्म का निर्माण । (आ.प्र. 2/184-187)
लवण के द्वारा अग्नि का प्रयोग लवण यन्त्र में किया जाता है । (र.र.स. 9/40)
बालुका के द्वारा अग्नि बालुका यन्त्र तथा भूधर यन्त्र में किया जाता है। (र.र.स. 9/36-39 एवं 9/44)

शकृत एवं धान्य

इन दोनों के द्वारा अग्नि का प्रदान तप्त खल्व विधि में किया जाता जिसका प्रयोग पारद के शोधन प्रक्रिया में मर्दन हेतु किया जाता है।

अजशकृत्तुषाग्निं च खनयित्वा भुवं क्षिपेत् । तस्योपरि स्थितः खल्वस्तप्त खल्वो ह्यं भवेत् ॥
(आ.प्र. 1/160 1/2)

खल्व के आकार का गड्ढा खोदकर उसमें बकरी का शकृत, धान्य तुष तथा अग्नि डालकर जलाकर उसके ऊपर खरल रखने से यह तप्त खल्व कहा जाता है। इसके द्वारा पारद का मर्दन करते है।

जल तथा भाप (Water & Steam)– इसमें जल या भाप के द्वारा अग्नि प्रदान की जाती है। उदाहरण स्वेदनी यन्त्र इस प्रकार की विधि द्वारा द्रव्य के घुलनशील पदार्थ भाप से शिथिल होकर अलग हो जाते हैं।

तैल द्वारा पाक– यन्त्र (मूषा आदि) में तैल डालकर उसमें पारद को रखकर पाक किया जाता है। उदाहरण पारद का सारणा संस्कार।

सूते सतैलयन्त्रस्थे स्वर्णादिक्षेपणं हि यत् । वेधाधिक्यकरं लोहे सारणा स प्रकीर्तिता ॥
(र.र.स. 8/86)

धान्य राशि– जब धान्य राशि (धान के तुष) में रखकर उसके माध्यम से गर्म रखते है अर्थात् एक समान तापमान बनाये रखते हैं। इस प्रकार गर्म करने की प्रक्रिया लोह भस्म के बनाने में वर्णित है। इस विधि में शुद्ध पारद 1 भाग, शुद्ध गन्धक 2 भाग लेकर कज्जली बनाते है तथा कज्जली के समान भाग लोह चूर्ण लेकर कुमारी स्वरस से दो प्रहर तक मर्दन कर इसका गोला बना लेते हैं। इस गोले को एरण्ड पत्र से लपेट कर कांस्य पात्र में रखकर आधे प्रहर तक तेज धूप में रखते हैं। तत्पश्चात् इसे तीन दिन तक धान्य राशि में स्थापित करते हैं। इसके बाद इसे निकालकर पीसकर कपड़छन कर लेते हैं । (र.र.स. 5/131-135)

भूगर्भ स्थान– इन विधि से गर्म करने में जमीन में गड्ढा खोदकर उसमें स्थापित किया जाता है। शोधन संस्कार में इस विधि का प्रयोग किया जाता है। पारद तथा आर्तव युक्त पात्र को जमीन में एक गज गहरे गड्ढे में तीन दिनों तक स्थापित करने से पारद का षडत्व दूर हो जाता है। (आ.प्र. 1/89)

Scanned with OKEN Scanner

अध्याय 6

कल्पना निर्माण-I (मौलिक तथा व्युत्पन्न कल्पनायें Primary & Secondary Dosage forms)

आयुर्वेदिक औषधि कल्पनाओं को Ayurvedic dosage form कहा जाता है। कषाय कल्पना को आचार्य चक्रपाणी ने निम्नरूप में परिभाषित किया है—

कषायाणां यथोक्त द्रव्याणां कल्पनमुथयोगार्थं संस्करणं कषाय कल्पनम्।

(चक्रपाणि टीका च.सू. 4/1-3)

अर्थात् कषाय (500 कषाय) के अन्तर्गत कहे गये द्रव्यों के संस्करण से उपयोगी कल्पना को ही कषाय कल्पना कहा जाता है। उदाहरणार्थ जीवनीय कषाय के अर्न्गत वर्णित द्रव्यों जैसे जीवक, ऋषभक, मेदा आदि से उपयोगी कल्पना जैसे— स्वरस, कल्क आदि का निर्माण करना ही वह विशेष कषाय कल्पना कहलाती है।

कषाय कल्पनाओं के दो वर्गों में बाँटा जा सकता है–

1. **मौलिक कल्पना (Primary dosage form)–** इसके अन्दर पंच कषाय कल्पनाओं अर्थात् स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम तथा फाण्ट का समावेश होता है।

2. **व्युत्पन्न कल्पना (Secondary dosage form)–** मौलिक कल्पनाओं को आधार बनाकर निर्मित किये जाने वाली कल्पनाओं को व्युत्पन्न कल्पना कहा जाता है। इसमें अन्तर्गत स्नेह, अवलेह, वटी, सधान (fermented syrup) आदि कल्पनाओं का समावेश होता है। इन कल्पनाओं के निर्माण से पूर्व पहले पंचकषाय कल्पना (एक या अधिक) निर्मित की जाती है तत्पश्चात् इससे व्युत्पन्न कल्पना निर्मित की जाती है।

विभिन्न आचार्यों के अनुसार मौलिक कल्पनायें

आचार्य चरक के अनुसार

पचिविध कषाय कल्पनमिति । तद्यथा-स्वरस, कल्कः, शृतः फाण्टश्चेति। तेषां यथा पूर्वं बलाधिक्यं,.....(च.सू. 4/4)

अर्थात् कषाय कल्पनायें पाँच होती है। जैसे– स्वरस, कल्क, शृत शीत तथा फाण्ट । इसमें स्वरस सबसे गुरु तथा फाण्ट सबसे लघु होता है।

आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार

रसः कल्कः शृतः शीतः फाण्टश्चेति प्रकल्पना। पञ्चधैव कषायाणां पूर्वं पूर्वं बलाधिका ॥

(अ.ह्.क. 6/8)

आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार कषाय कल्पना पांच होती है तथा ये एक दूसरे से पहले गुरु या बलाधिक होती है अर्थात् फाण्ट से शीत, शीत से क्वाथ, क्वाथ से कल्क तथा कल्क से स्वरस (रस) अधिक बल वाला होता है।

Scanned with OKEN Scanner

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार

अथातः स्वरसः कल्कः क्वाथश्च हिम फाण्टकौ। ज्ञेयाः कषायाः पञ्चैते लघवः स्युर्यथोत्तरम्॥

(शा.म. 1/1)

अर्थात् स्वरस, कल्क, क्वाथ, हिम तथा फाण्ट ये पंच कषाय है तथा ये उत्तरोत्तर लघु होती है। अर्थात् स्वरस से कल्क, कल्क की अपेक्षा क्वाथ, क्वाथ की अपेक्षा हिम तथा हिम से फाण्ट लघु होता है। (अर्थात् स्वरस सबसे गुरु तथा फाण्ट सबसे लघु होता है)

आचार्य सुश्रुत के अनुसार

क्षीरं रसः कल्कमथो कषायः शृतश्च शीतश्च तथैव फाण्टम्।
कल्पाः षडेते खलु भेषजानां यथोत्तरं ते लघवः प्रदिष्टाः॥ (सु.सू. 44/91)

क्षीर (Latex), रस, कल्क, कषाय, शीत कषाय तथा फाण्ट से छः भेषज कल्प है तथा परस्पर उत्तरोत्तर लघु होती है।

आचार्य काश्यप के अनुसार

चूर्ण शीतकषायश्च स्वरसोऽभिषवस्तथा। फाण्टः कल्कस्तथा क्वाथो यथावत्तं निबोध में॥

(का.खि. 3/35)

चूर्ण, शीत, कषाय, स्वरस, अभिषव, फाण्ट, कल्क तथा क्वाथ ये सात कल्पना है।

विभिन्न आचार्यों द्वारा वर्णित इन कल्पनाओं को निम्न रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है—

	चरक	सुश्रुत	वाग्भट्ट	काश्यप	शार्ङ्गधर	भावमिश्र
01	स्वरस	क्षीर	रस	चूर्ण	स्वरस	स्वरस
02	कल्क	स्वरस	कल्क	शीतकषाय	कल्क	कल्क
03	शृत	कल्क	शृत	स्वरस	क्वाथ	क्वाथ
04	शीत	शृत कषाय	शीत	अभिषव	हिम	हिम
05	फाण्ट	शीत कषाय	फाण्ट	फाण्ट	फाण्ट	फाण्ट
06	—	फाण्ट	—	कल्क	—	—
07	—	—	—	क्वाथ	—	—

पञ्च कषाय कल्पना

पंच कषाय कल्पनायें निम्न है–

1. स्वरस (Expressed Juice)
2. कल्क (Paste)
3. क्वाथ (Decoction)

4. हिम (Cold Infusion)
5. फाण्ट (Hot Infusion)

स्वरस कल्पना

परिभाषा

यन्त्र निष्पीडिताद् द्रव्याद् रसः स्वरस उच्यते। (च.सू. 4)

अर्थात् किसी यन्त्र (या मशीन) के द्वारा द्रव्य को पीड़न कर जो रस प्राप्त होता है उसे स्वरस कहते हैं।

स्वो रसः स्वरसः प्रोक्तः (चक्रपाणि)

आचार्य चक्रपाणि के अनुसार द्रव्य का अपना रस ही स्वरस कहलाता है।

1. आर्द्र द्रव्य से स्वरस निर्माण विधि

आचार्य वाग्भट्ट के अनुसार—

सद्यः समुद्धृतात् क्षुण्णाद् यः स्रवेत पटपीडितात्। स्वरसः स समुदिदष्ट.....॥

(अ.हृ.क. 6/9)

ताजी उखाड़ी (उदधृत) गयी औषधि को क्षुण्णात अर्थात् कूट/पीसकर वस्त्र में रखकर दबाने से स्रवित रस को स्वरस कहते हैं।

आचार्य हेमाद्रि के अनुसार—

यस्मिन् दिने समुद्धृतं तस्मिन्नेव दिने प्रक्षाल्य क्षुण्णं पटपीडितञ्च यद् द्रव्यं तस्य रसः स्वरसः। इति

आचार्य शार्ङ्गधर के मत से—

आहृतात्तत्क्षणाकृष्टाद् द्रव्यात्क्षुण्णात् समुद्धरेत्। वस्त्र निष्पीडितो यः स रसः स्वरस उच्यते॥

(शा.म. 1/2)

जो औषधि किसी भी रूप में नष्ट न हो ऐसी औषधि को तत्काल ग्रहण कर उलूखल आदि के द्वारा कूट कर वस्त्र में रखकर निष्पीडन के पश्चात् जो रस प्राप्त होता है उसे स्वरस कहा जाता है।

स्वरस निर्माण प्रक्रिया को आसानी से समझने के लिए निम्न रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है—

अच्छी अहतात् औषधि
↓
ताजे रूप में ग्रहण
↓
प्रक्षालन करना

Scanned with OKEN Scanner

↓

क्षुण्ण करना (उलूखन, मूसल के द्वारा)

↓

वस्त्र में रखकर पीड़न करना

↓

स्वरस

2. शुष्क द्रव्य से स्वरस निर्माण

चूर्णानामाढकमाढकमुदकस्यहोत्रस्थितं मृदितपूतं स्वरसवत् प्रयोज्यम् । (च.चि. 1/2/12)

अर्थात् एक आढक चूर्ण को एक आढक, जल में भिगोकर रात भर रखकर वस्त्र से छानकर स्वरस के जैसा प्रयोग करना चाहिए ।

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार—

कुडवं चूर्णितं द्रव्यं क्षिप्तं च द्विगुणे जले । अहोरात्रं स्थितं तस्माद्धवेद्वा रस उत्तमः ॥ (शा.म. 1/3)

चूर्ण किये गये द्रव्य को एक कुडव मात्रा में लेकर उसमें दो कुडव जल मिलाकर एक अहोरात्र रखकर छानने से उत्तम रस प्राप्त होता है या वह उत्तम रस होता है ।

आदाय शुष्क द्रव्यं व स्वरसानाम सम्भवे । जलेऽष्टगुणिते साध्यं पादशिष्टं च गृह्यते ॥ (शा.म. 1/4)

ऐसे शुष्क द्रव्य जिनसे स्वरस निकालना सम्भव न हो तो ऐसे द्रव्यों को आठ गुने जल में भिगोकर अग्नि पर उबालते है तथा जब पानी एक चौथाई भाग रहा जाय तब इसे छानकर स्वरस जैसा प्रयोग करते हैं

सिद्धान्त–कुट्टन तथा निष्पीडन

कम मात्रा (Small scale) में स्वरस Juicer द्वारा तथा अधिक मात्रा में (Large scale) स्वरस (Juice extractor) द्वारा प्राप्त किया गया है।

सिद्धि लक्षण– जिस द्रव्य का स्वरस हो तो यह उस द्रव्य के रस, गन्ध तथा वर्ण से युक्त होना चाहिए।

संरक्षण– स्वरस का प्रयोग निकालने के तुरन्त बाद ही करना चाहिए। लेकिन कुछ फलों के स्वरस जैसे आम आदि को Benzoic acid, Sulphur dioxide को मिलाकर इसे किसी उपयुक्त पैकिंग द्वारा कुछ निर्धारित समय तक संरक्षित किया जा सकता है।

सवीर्यता अवधि– ताजा प्रयोग करना चाहिए।

Modern aspect– आजकल आमलकी स्वरस, कुमारी स्वरस, जामुन स्वरस आदि तथा विभिन्न प्रकार के फलों जैसे– आम संतरा आदि के स्वरस बाजार में उपलब्ध है। Juice को Maceration विधि या फलों/सब्जियों को निष्पीडित (Pressing) करके प्राप्त किया जाता है। इस विधि में अग्नि या कोई Solvent का प्रयोग नहीं करते हैं विभिन्न प्रकार के जूस को छानकर इनकी Packing की जाती है। जूस को निकालने के पश्चात् इन्हें छान लिया जाता है तत् पश्चात् पाश्चुराइजेशन करके इन्हें Contains में भर दिया जाता है।

आर्द्रक स्वरस

आर्द्रकस्वरसः क्षौद्रयुक्तो वृषणवातनुत् । श्वासकासारूचीहन्ति प्रतिश्यायं व्यपोहति ॥ (शा.म. 1/13)

घटक द्रव्य	यन्त्र/उपकरण
1. ताजी आर्द्रक	1. छोटा इमामदस्ता या पत्थर के सिल, लोढ़ा
	2. वस्त्र
	3. स्टील के बर्तन जैसे कटोरी
	4. चाकू
	5. Measuring Flask

विधि– सर्वप्रथण आर्द्रक को अच्छी तरह धोकर साफ कर लेते हैं । तत्पश्चात् इसके छोटे टुकड़े कर इमाम दस्ते में रखकर अच्छी तरह से कूट पीस लेते हैं । पुनः इसको निकालकर कपड़े में रखकर अच्छी प्रकार में दबाकर आर्द्रक स्वरस प्राप्त करते हैं । आचार्य शार्ङ्गधर अनुसार इसका प्रयोग प्रतिश्याय, श्वास, कास आदि में शहद के साथ करते हैं ।

तुलसी स्वरस

पीतो मरिच चूर्णेन तुलसीपत्रजो रसः । द्रोणपुष्पी रसो वापि निहन्ति विषमज्वरान् ॥ (शा.म. 1/10)

तुलसी स्वरस निर्माण के लिए निम्न द्रव्य तथा यन्त्र/उपकरण की आवश्यकता होती है ।

द्रव्य	यन्त्र/उपकरण
1. ताजी तुलसी पत्र	1. पत्थर के खल्व या इमामदस्ता
	2. वस्त्र
	3. स्टील के बर्तन जैसे कटोरी
	4. Measuring Flask

सर्वप्रथम ताजे तुलसी पत्रों को अच्छी प्रकार से धो लेते हैं । तत्पश्चात् इसको साफ खरल या इमाम दस्ते में रखकर अच्छी प्रकार से कूट पीसकर कल्क रूप में बना लेते हैं । अब इसको वस्त्र में रखकर सावधानीपूर्वक निचोड़ते है । इस प्रकार तुलसी स्वरस प्राप्त हो जाता है । इसे Measuring flask के द्वारा माप लेने से प्राप्त स्वरस की मात्रा पता चल जाती है ।

कुमारी स्वरस

द्रव्य	यन्त्र/उपकरण
1. कुमारी	1. चाकू
	2. मिक्सर

Scanned with OKEN Scanner

3. वस्त्र
4. स्टील के बर्तन कटोरी
5. Measuring Flask

निर्माण विधि

सर्वप्रथम कुमारी के पत्र को साफकर उसको चाकू की सहायता से बीच से काटकर दो भाग में कर लेते हैं । तत्पश्चात् इसके गुदे (Pulp) को सावधानी पूर्वक अलग कर एकत्र कर लेते हैं । पुनः इसे मिक्सर में थोड़ी देर तक घुमा लेते हैं जिससे यह Pulp असानी से पीस उठता है । इसके पश्चात् इसे वस्त्र या अन्य से छान लेते हैं । इस प्रकार कुमारी स्वरस प्राप्त हो जाता है ।

3. पुटपाक स्वरस

स्वरस निर्माण की विधियों में पुटपाक स्वरस का भी वर्णन प्राप्त होते हैं । इस विधि में अग्नि में पाक (पुटपाक) के द्वारा स्वरस प्राप्त करने से पुटपाक स्वरस कहा जाता है । आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार—

पुटपाकस्य कल्कस्य स्वरसो गृह्यते यतः । अतस्तु पुटपाकानां युक्तिरत्रोच्यते मया ॥ (शा.म. 1/21)

पुटपाक में जिस प्रकार कल्क से स्वरस को ग्रहण करते हैं अब मैं उसकी युक्ति अर्थात् विधि का वर्णन करता हूँ ।

निर्माण विधि

पुटपाकस्य मात्रेयं लेपस्याङ्गारवर्णता । लेपं च द्वयङ्गुलं स्थूलं कुर्याद्वाङ्गुष्ठमात्रकम् ॥ काश्मरीवटजम्ब्वादि पत्रैर्वेष्टनमुत्तमम् । (शा.म. 1/22-23)

जिस औषधि का पुटपाक स्वरस निकालना हो उसे सर्वप्रथम कल्क रूप में बना लेते हैं । तत् पश्चात् इस कल्क को काश्मरी, वट तथा जम्बू आदि में से किसी एक के पत्र पर रखकर फिर सूत्र से बाँध देते हैं । अब इस पर गेहूँ के आटे का अँगूठे की मोटाई के बराबर लेप करते हैं तत् पश्चात् इस लेप के ऊपर दो अंगुल मोटाई का मिट्टी का लेप कर इसे सुखा लेते हैं । अब इसे अग्नि में रखकर तब तक अग्नि देते हैं जब तक कि ऊपर मिट्टी वाला लेप अंगार वर्ण (लाल) न हो जाय । तत्पश्चात् इसे अग्नि से निकालकर लेप हटाकर औषधि कल्क को कपड़े में रखकर दबाकर पुटपाक स्वरस प्राप्त कर लेते हैं ।

सिद्धान्त—पुटपाक

वासा पुटपाक स्वरस

द्रव्य	यन्त्र/उपकरण
1. वासा पत्र ताजे	1. वट पत्र, काश्मरी या जम्बू पत्र
	2. सूत्र बाँधने हेतु
	3. पत्थर का खल्व यंत्र या इमाम दस्ता
	4. गेहूँ का आटा

5. मिट्टी
6. कण्डे
7. कपड़ा
8. कटोरी
9. Measuring Flask
10. चम्मच

निर्माण विधि

पिष्टानां वृषपत्राणां पुटपाकरसो हिमः । मधुयुक्तो जयेद्रक्तपित्तकास ज्वरक्षयान् ॥ (शा.म. 1/34)

सर्वप्रथम वासा पत्र को अच्छी प्रकार से धोकर साफ कर लेते हैं । तत्पश्चात् इसे इमामदस्ता/खल्व यन्त्र में अच्छी प्रकार से कूट/पीसकर कल्क बना लेते हैं । तत्पश्चात् इस कल्क को जम्बूपत्र आदि में रखकर सूत्र से अच्छी तरह बाँध देते हैं । पुनः इस पर आटें का लेप (अंगुठ मोटाई बराबर) तथा मिट्टी का लेप (2 अंगुल मोटाई का) लगाकर सुखा लेते हैं । तत्पश्चात् इसे कण्डे की अग्नि (10-12 संख्या में) में पाक करते हैं । जब यह रक्तवर्ण का हो जाय तब इसे अग्नि से निकालकर लेप हटाकर गर्मावस्था में ही सावधानीपूर्वक कपड़े में रखकर दबाकर वासा पुटपाक स्वरस प्राप्त कर लेते हैं ।

आचार्य शार्ङ्गधर ने वासा पुटपाक, स्वरस का प्रयोग रक्तपित्त में किया है ।

कल्क कल्पना

परिभाषा

यः पिण्डो रसपिष्टानां कल्कः स परिकीर्तितः । (च.सू. 4)

रस (द्रव) के साथ पीसे हुए पिण्ड रूप द्रव्य को कल्क कहते हैं ।

आचार्य वृद्धवाग्भट्ट ने शिला तथा दाँतों से पीसे हुए द्रव्य को कल्क कहा है । यथा—

उपलदशनादि पिष्टस्तु कल्कः (अ.सं.क. 8/10)

आचार्य अरुणदत्त ने इस पर (अ.ह.क. 6/8) टीका करते हुए कहा है "**यतो यद् द्रव्यं द्रवेण सिक्तं पिण्ड भवति न तु विलीयते तत् कल्क संज्ञामासादयति ।**

अर्थात् जिस द्रव्य को द्रव से मिलाकर यदि वह उस द्रव में विलीन न होकर बल्कि पिण्ड रूप में बन जाय तो उसे कल्क की संज्ञा दी जाती है ।

निर्माण विधि—आचार्य शार्ङ्गधर ने कहा है कि आर्द्र द्रव्य को शिला पर पीस लेने से या शुष्क द्रव्य होने पर उसे जल के साथ पीस लेने से कल्क का निर्माण हो जाता है ।

द्रव्यमार्द्रं शिलापिष्टं शुष्कं वा सजलं भवेत् । (शा.म. 5/1)

Scanned with OKEN Scanner

इस प्रकार उपरोक्त मतों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि आर्द्र द्रव्य या शुष्क द्रव्य को किसी द्रव के साथ पीसकर पिण्ड रूप में बनाना कल्क कहलाता है । तथा यही कल्क निर्माण विधि है ।

सिद्धान्त- ऐसण

लघु मात्रा (Small scale) में कल्क का निर्माण सिल बट्टे पर या Mixer द्वारा बनाया जा सकता है। अधिक मात्रा में (Large scale) automatic sauce making machine द्वारा कल्क का निर्माण किया जा सकता है।

सिद्धि लक्षण– रस, गन्ध तथा वर्ण युक्त तथा चटनी सादृश्य

संरक्षण– कल्क का प्रयोग निर्माण के तुरन्त बाद करना चाहिए।

सवीर्यता अवधि– ताजा ही प्रयोग करना चाहिए।

Modern aspect– चटनी या Sauce या Ketch up को कल्क कल्पना का आधुनिक स्वरूप माना जा सकता है।

निम्ब कल्क

औषधि द्रव्य– आर्द्र निम्ब पत्र

यन्त्र/उपकरण– सिल लोढ़ा, खरल, चम्मच

सर्वप्रथम निम्बपत्र को लेकर उसे अच्छी तरह से साफ कर लेते हैं । तत्पश्चात् इसे खरल या सिल लोढ़ा की सहायता से पीसकर कल्क बना लेते हैं। इसका प्रयोग व्रण शोधन, रोपण आदि में किया जाता है ।

लेपान्निम्बदलैः कल्को व्रणशोधनरोपणः । भक्षणाच्छर्दि कुष्ठानि पित्तश्लेष्मकृमीञ्जयेत् ॥

(शा.म. 5/6)

रसोन कल्क

औषधि द्रव्य– निष्पुष लसुन

यन्त्र/उपकरण– सिल लोढ़ा, खरल, चम्मच

निष्पुष लसुन को सिल पर रखकर अच्छी तरह से पीस लेते हैं । यही रसोन कल्क है । इसका प्रयोग वातरोगों में करते हैं ।

शुद्धःकल्को रसोनस्य तिलतैलेन मिश्रितः। वात रोगाञ्जयेत्तीव्रान्विषमज्वर नाशनः ॥

(शा.म. 5/7)

विशेष– लहसुन के गन्धनाश हेतु तक्र में इसका शोधन करते हैं ।

क्वाथ कल्पना

क्वाथ की परिभाषा

आचार्य चरक ने क्वाथ की परिभाषा निम्न बताया है—

बह्वौ तु क्वथितं द्रव्यं शृतमाहुश्चिकित्सकाः (च.सू. 4/25)

आचार्य काश्यप अनुसार—

पादस्थितो भवेत् क्वाथो युक्तोऽबह्वग्नितेजसा (का.खि. 3/42)

आढमल्ल के अनुसार—

क्वाथः क्वथितः कषायः (आढमल्ल टीका शा.म. 1/1)

इस प्रकार अग्नि पर औषध द्रव्य को जल के साथ क्वथित या उबालकर प्राप्त द्रव ही क्वाथ कहलाता है ।

क्वाथ निर्माण विधि

क्वाथ के निर्माण हेतु औषधि तथा जल की आवश्यकता होती है । तथा यह दोनों एक विशेष अनुपात में लिये जाते हैं एवं इसे तब तक उबाला जाता है जब तक निर्देशित मात्रा (चतुर्थांश, षोडशांश आदि) न प्राप्त हो जाय । आचार्य चरक ने विमान स्थान 7/17 के द्वारा क्वाथ निर्माण विधि का वर्णन इस प्रकार दिया है—

.....तान्याहृतान्यभिसमीक्ष्य खण्डशश्छेदयित्वा प्रक्षाल्य पानीयेन सुप्रक्षालितायां स्थाल्यां समावाप्य गोमूत्रेणार्धोदकेनाभिषिच्य साधयेत् सततमवघट्टयन् दर्व्या, तमुपयुक्तभूयिष्ठेऽम्भसि गतरसेष्वौषधेषु स्थालीमवतार्य सुपरिपूतं कषायं ॥ (च.वि. 7/17)

औषधि (जो इस प्रकरण में पहले वर्णित है) को अच्छी प्रकार से देखकर अर्थात् यह हर प्रकार से ठीक हो उसे खण्ड-खण्ड अर्थात् छोटे टुकड़े कर प्रक्षालन योग्य पानी से अच्छी प्रकार साफ कर स्थाली (हाँड़ी) में रखकर उसमें गोमूत्र तथा जल डाल दें तथा इसे सिद्ध करते हैं । सिद्ध करते समय (बनाते समय) इसे दर्वी से चलाते रहते हैं । इस प्रकार जब औषधि का रस अच्छी प्रकार से जल में आ जाय तब स्थाली को उतार कर अच्छी प्रकार से कषाय को छान लें ।

यहाँ पर आचार्य चरक ने प्रारम्भ में ली जाने वाले जल की मात्रा तथा अवशेष जल की मात्रा का उल्लेख नहीं किया है । आचार्य सुश्रुत ने चिकित्सा स्थान 31/8 में ऐसी ही विधि का वर्णन किया है । पर यहाँ आचार्य ने द्रव्य की अपेक्षा आठ गुना या सोलह गुना जल लेकर चतुर्थांश अवशेष रहने तक क्वथन करने का निर्देश दिया है ।

आचार्य शार्ङ्गधर ने क्वाथ निर्माण का वर्णन इस प्रकार किया है—

पानीयं षोडशगुणं क्षुण्णे द्रव्यपले क्षिपेत् । मृत्पात्रे क्वाथयेद्ताह्यमष्टमांशवशेषितम् ॥
तज्जलं पाययेद्धीमानकोष्णं मृद्वाग्निसाधितम् । शृतः क्वाथः कषायश्च निर्यूहः स निगद्यते ॥

(शा.म. 2/1-2)

एक पल क्षुण्णित द्रव्य तथा सोलह गुना पानी लेकर एक मृत् पात्र (मिट्टी के बर्तन) में मृदु अग्नि पर क्वथन करते हैं तथा जब यह अष्टांश बचता है तब उसे उतार लेते हैं । इसको ईषत् उष्ण रहते हुए पीने को देते है । इस क्वाथ निर्माण प्रक्रिया को निम्न रूप में प्रदर्शित कर सकते हैं—

Scanned with OKEN Scanner

द्रव्य (1 पल परिमाण में क्षुण्णित आजकल यवकुट शब्द से ग्रहण होता है)

↓

16 गुना जल (16 पल जल)

↓

मृतपात्र में रखकर

↓

क्वथन (Boiling)

↓

अष्टामांश अवशेष (2 पल शेष)

↓

छानकर पीने हेतु प्रयुक्त करते हैं

क्वाथ के प्रकार

हारीत संहिता के तृतीय स्थान में क्वाथ के छः तथा सात प्रकार के क्वाथ का उल्लेख किया गया है। यथा—

क्वाथः षष्ठविधः प्रोक्तः पाचनः शमनस्तथा। दीपनः क्लेदनः शोषी सन्तर्पणो विशेषतः॥

(हा. तृतीय स्थान 1/41)

अर्थात् पाचन, शमन, दीपन, क्लेदन, शोषण तथा सन्तर्पण भेद से क्वाथ छः प्रकार का होता है।

तथा—

पाचनो दीपनीयश्च शोधनः शमनस्तथा। तर्पणः क्लेदनः शोषी क्वाथः सप्तविधः स्मृतः॥

(हा. तृतीय स्थान 1/47)

पाचन, दीपन, शोधन, शमन, तर्पण, क्लेदन तथा शोषण क्वाथ से सात प्रकार हैं।

सात प्रकार के क्वाथ के लक्षण तथा कार्य

पाचनोऽर्द्धावशेषी स्याच्छोधनो द्वादशांशकः। क्लेदनश्चतुरङ्गश्च शमनोऽष्टावशेषितः॥48॥
दीपनीयो दशांशास्तु तर्पणश्च समाशंकः॥ विशोषी षोडशांशश्च क्वाथभेदाः प्रकीर्त्तिताः॥49॥

(हा. तृतीय स्थान अध्याय 1)

क्रम संख्या	क्वाथ प्रकार	लक्षण	कार्य
01	पाचन	अग्नि में उबालने से पानी 1/2 शेष रहे	दोष पाचन
02	दीपन	1/10 शेष रहे	अग्नि दीपन
03	शोधन	1/12 शेष रहे	मल शोधी
04	शमन	1/8 शेष रहे	रोग शमन
05	तर्पण	उबालकर (समाशंकः)	धातु का तर्पण
06	क्लेदन	1/4 शेष रहे	हृदय में क्लेदक कारक
07	शोषण	1/16 शेष रहे	शोष कारक

सिद्धान्त-तोय अग्नि सन्निकर्ष/क्वथन

कम मात्रा में क्वाथ का निर्माण स्टेनलेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव के द्वारा किया जा सकता है। अधिक मात्रा में इसका निर्माण Steam jacket pan के द्वारा किया जा सकता है।

सिद्धि लक्षण— "गतरसत्व" शब्द का प्रयोग आचार्य चरक द्वारा क्वाथ की सिद्धि लक्षण को निर्देशित किया गया है। अर्थात् जब औषधि द्रव्य का रस गन्ध तथा वर्ण जल में आ जाय तब यह निर्मित हो गया है ऐसा जानना चाहिए।

संरक्षण— क्वाथ को बनाने के बाद तुरन्त प्रयोग करना चाहिए।

सवीर्यता अवधि—क्वाथ चूर्ण - 2 साल तथा प्रवाही क्वाथ - 3 साल

रास्ना सप्तक क्वाथ

रास्ना गोक्षुरकैरण्डदेवदारू पुनर्नवा। गुडूच्यारावधश्चैव क्वाथमेषां विपाचयेत्॥
शुण्ठी चूर्णेन संयुक्तं पिबेज्जङ्घाकटिग्रहे। पार्श्वपृष्ठोरूपीडायामामवाते सुदुस्तरे॥

(शा.म. 2/86-87)

घटक द्रव्य– 1. रास्ना 2. गोक्षुर 3. एरण्ड 4. देवदारू 5. पुनर्नवा 6. गुडुची 7. आरग्वध (सभी समान मात्रा में)

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता या ज्यादा मात्रा में यवकुट बनाने हेतु Disintegrator, भगौना, कलछी, वस्त्र का उपयोग किया जाता है।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम समस्त द्रव्यों को अच्छी प्रकार से सुखा लेते हैं। तत्पश्चात् इसको इमामदस्ते या Disintegrator मशीन से यवकुट साइज का कर लेते हैं। तत्पश्चात् इन सातों द्रव्यों के मिलित मान से सोलह गुना पानी लेकर उबालते हैं तथा अष्टमांश रहने पर छान लेते हैं। तथा इसमें शुण्ठी चूर्ण मिलाकर प्रयोग करते हैं।

उपयोग– जङ्घा कटिग्रह, आमवात, पार्श्वपीड़ा आदि में।

मात्रा– मध्यम मात्रा 2 पल।

Scanned with OKEN Scanner

पुनर्नवाष्टक क्वाथ

पुनर्नवाभयानिम्बदार्वीत्तिक्तापटोलकैः । गुडूचीनागरयुतैः क्वाथो गोमूत्र संयुतः ।
पाण्डुकासोदरश्वासशूल सर्वाङ्गशोथहा ॥ (शा.म. 2/76-77)

घटक द्रव्य– 1. पुनर्नवा 2. अभया 3. निम्ब 4. दार्वी (दारुहरिद्रा)
5. तिक्ता (कुटकी) 6. पटोलपत्र 7. गुडुची
8. नागर (शुण्ठी) (सभी समान मात्रा में)

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता/Disintigrator, भगौना, कलछी, सूती वस्त्र ।

निर्माण विधि– उपरोक्त सभी द्रव्यों को समान मात्रा में ग्रहण कर अच्छी प्रकार से साफ कर सुखा लेते हैं । तत्पश्चात इसे इमामदस्ते या Disintigrator की मदद से यवकुट आकार का कर लेते हैं । पुनः इसमें सोलह गुना जल डालकर मृदु अग्नि पर पाक करते हैं । जब यह अष्टमांश रह जाय तो इसे उतार कर छान लेते हैं तथा प्रयोग करते हैं ।

इस क्वाथ में गोमूत्र डालकर उपयोग करने का निर्देश है ।

उपयोग– पाण्डु, कास, श्वास, उदररोग, शूल तथा सर्वाङ्ग शोथ में ।

कुलत्थ क्वाथ

कुडवकुलत्थक्वथितं पायः कोष्ण विशिष्य निर्ष्पीतम् । शीतज्वरं विजयते रेकं वान्तिमुद्धाव्य ॥
(सिद्धभेषजमणिमाला चतुर्थगुच्छ/26)

घटक द्रव्य– कुलत्थ, जल

निर्माण विधि– 250 ग्रा. कुलथी का 2 लीटर जल में क्वाथ करते हैं । चतुर्थांश शेष रहने पर छान लेते हैं तथा पीने योग्य गरम रहने पर रोगी जितनी मात्रा में पी सके पिला देते हैं ।

उपयोग– शीत ज्वर में ।

हिम कल्पना

परिभाषा

शीतो रात्रि द्रवे स्थिता (अ.हृ.क. 6/10)

इस पर श्री अरूण दत्त ने टीका किया है—

यत् द्रव्यं द्रवे सकलां रात्रिं स्थितं स कल्पना कषायः शीत इत्युच्यते ।

द्रव्य को सारी रात द्रव में रखकर छान लेने के पश्चात् जो कषाय कल्पना प्राप्त होती है उसे शीत कहा जाता है ।

द्रव्यादापोथितात्तोये तत्पुननिशि संस्थितात् । कषायो योऽभिनिर्याति स शीतः समुदाहृतः ॥
(च.सू. 4/6)

उपरोक्त दोनों वर्णनों में इस कल्पना के निर्माण हेतु प्रयुक्त जल की मात्रा का उल्लेख नहीं है । इसमें प्रयुक्त जल की मात्रा, इसकी प्रयोग किये जाने वाले मान तथा पर्याय का उल्लेख आचार्य शार्ङ्गधर ने बताया है ।

निर्माण विधि

क्षुण्णं द्रव्यपलं सम्यक् षड्भिर्नीरपलैः प्लुतम् । निशोषितं हिमः स स्यात्तथा शीतकषायकः ॥
तन्मानं फाण्टवज्ज्ञेयं सर्वत्रैवैष निश्चयः ॥ (शा.म. 4/1-2)

एक पल द्रव्य को क्षुण्ण कर (यवकुट कर) उसको 6 गुना जल में डुबोकर उसे रात्रि पर्यन्त रखकर अगले दिन प्रातः छाने लेने से प्राप्त द्रव शीत कषाय कहलाता है ।

हिम कल्पना निर्माण प्रक्रिया को निम्न रूप में प्रदर्शित कर सकते हैं ।

1 पल यवकुट द्रव्य
+
6 पल जल
↓
रात्रि पर्यन्त रखकर
↓
प्रातः छान लेते हैं
↓
प्राप्त द्रव शीत कषाय का हिम होता है ।

सिद्धान्त-तोय सन्निकर्ष

हिम का निर्माण आवश्यकतानुसार स्टेनलेस स्टील पात्र में किया जा सकता है।

सिद्धि लक्षण– द्रव्य के अनुसार रस, गन्ध तथा वर्ण की उत्पत्ति ।

हिम को आधुनिक में Cold infusion से समन्वित किया जा सकता है। इसमें ठंडे जल के साथ मृदु द्रव्य Volatile या द्रव्य एक निश्चित समय के लिए रखे जाते हैं तत् पश्चात् इसे छान लेते हैं।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– हिम को बनाने के उपरान्त शीघ्र ही प्रयोग किया जाता है।

धान्यक हिम

प्रातः सशर्करः पेयो हिम धान्यक संभवः । अन्तर्दाहं तथा तृष्णा जयेत्स्रोतोविशोधनः ॥
(शा.म. 4/7)

घटक द्रव्य– 1. धान्यक 2. जल
प्रक्षेप हेतु- शर्करा

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता, स्टील का भगौना, कपड़ा या छन्नी ।

निर्माण विधि– धान्यक को अच्छी प्रकार से साफ कर उसे इमाम दस्ते की मदद से मोटे चूर्ण के रूप में कर लेते हैं । तत् पश्चात् इसे भगौने में रखकर 6 गुना पानी डालकर रात्रि पर्यन्त रख देते हैं । अगले दिन प्रातः छानकर शर्करा डालकर प्रयोग करते है ।

Scanned with OKEN Scanner

उपयोग– तृष्णा, अन्तर्दाह तथा स्रोतो शोधन में ।

विशेष– धनियाँ को बहुत बारीक चूर्ण नही करना चाहिए अन्यथा पानी पूरी तरह से सोख लेता है तथा ग्रीष्म ऋतु में जब इसका निर्माण करना हो तो रात्रि में ऐसे स्थान पर रखना चाहिए जहाँ पर Proper ventilation हो अन्यथा खराब होने का भय रहता है ।

सारिवादि हिम

सन्दर्भ ग्रन्थ– सिद्धयोग संग्रह

घटक द्रव्य–

अनन्तमूल	गुलवनपसा
खदिर	खस
आँवला	गोरखमुण्डी
ब्राहमी	शाहतरा
नीलकंठी मीठी	कमल के फूल
चोपचीनी	गुलाब के फूल
मंजिष्ठा	गूमा
गिलोय	पदमाख
धमासा	जीवन्तीमूल
रक्त चन्दन	शंखाहुली

प्रत्येक समान मात्रा में

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता, भगौना, सूती वस्त्र

निर्माण विधि– उपरोक्त समस्त द्रव्य को मोटा चूर्ण कर लेते हैं । ततपश्चात् इसमें से एक तोला चूर्ण को 6 तोले गर्म जल में डालकर रात्रि पर्यन्त रखकर सुबह मसल कर कपड़े से छानकर प्रयुक्त करते हैं । सवेरे में उसी में फिर 5 तोला गरम जल डालकर रख देते हैं । उसी को शाम को मसल कपड़े से छानकर पीने से देते हैं ।

उपयोग– सब प्रकार के रक्त विकार, पामा, कण्डू आदि ।

फाण्ट कल्पना

परिभाषा

क्षिप्त्वोष्णातोये मृदितं तत् फाण्टं परिकीर्तितम् । (च.सू. 4/6)

उष्ण जल में औषधि को डालकर छान लेने के पश्चात् प्राप्त (द्रव) को फाण्ट कहते हैं ।

अष्टांग संग्रह के अनुसार—

उष्णाम्भसि क्षुण्णाभिषुतपूतं फाण्टः (क.अ. 8/)

उष्णजल में द्रव्य को क्षुण्णित करके डालकर छान लेने से फाण्ट प्राप्त होता है ।

निर्माण विधि

क्षुण्णे द्रव्यपले सम्यग्जलमुष्णं विनिक्षिपेत् । मृत्पात्रे कुडवोन्मानं ततस्तु स्रावयेत् पटात् ॥
तस्य चूर्ण द्रवः फाण्टस्तन्मानं द्विपलोन्मितम् । सितामधुगुडादींश्च क्वाथवत्तत्र निक्षिपेत् ॥

(शा.म. 3/1-2)

एक पल द्रव्य को क्षुण्णित कर उसको एक मृत पात्र में रखकर उसके एक कुड़व (1 कुड़व = 4 पल) अर्थात् द्रव्य से 4 गुना उष्ण जल डालते हैं । तत्पश्चात इसे वस्त्र से छान लेते हैं । इसे ही चूर्ण द्रव या फाण्ट कहते हैं ।

1 पल यवकुट द्रव्य
↓
4 पल गर्म जल
↓
मिलाते हैं
↓
छान लेते हैं
↓
फाण्ट

सिद्धान्त-तोय, अग्नि सन्निकर्ष

फाण्ट का निर्माण अवाश्यकतानुसार स्टेनलेस स्टील भगौना तथा Heating device के द्वारा किया जा सकता है।

सिद्धि लक्षण– द्रव्यानुसार रस, गन्ध तथा वर्ण की उत्पति।

फाण्ट को आधुनिक में Hot infusion से समन्वित किया जा सकता है। इसमें गर्म जल के साथ औषधि द्रव्य को निश्चित समय तक रखा जाता है फिर इसे छान लेते है।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि-फाण्ट को ताजा ही प्रयोग करना चाहिए।

पंचकोल फाण्ट

घटक द्रव्य– 1. पिप्पली, 2. पिप्पलीमूल, 3. चव्य, 4.चित्रक, 5. शुण्ठी सभी समान मात्रा में एवं जल ।

यन्त्र उपकरण– इमादस्ता, भगौना, चम्मच, सूतीवस्त्र, छन्नी ।

निर्माण विधि– उपरोक्त सभी द्रव्यों को अच्छी प्रकार से कूटकर उसे भगौने में डालते हैं । तत्पश्चात् इसमें 4 गुना उष्ण जल डालकर चलाते है । तत्पश्चात् इसे सूती वस्त्र या छन्नी से छान लेते हैं ।

मधुयष्टी फाण्ट

घटक द्रव्य– मधुयष्टी तथा जल

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता, भगौना, चम्मच, सूतीवस्त्र या छन्नी

Scanned with OKEN Scanner

निर्माण विधि– मधुयष्टी को अच्छी प्रकार साफ कर उसे यवकुट चूर्ण कर लेते हैं । तत्पश्चात् 4 गुना उष्ण जल लेकर एक भगोने में दोनों को रखकर इसे चम्मच से चला देते हैं । तत्पश्चात् इसे छान लेते हैं ।

Modern Aspect

आधुनिक युग के अनुसार क्वाथ को Decoction हिम को Cold Infusion तथा फाण्ट को Hot Infusion से समन्वित किया जाता है । जहां पर क्वाथ, हिम तथा फाण्ट आयुर्वेदिक विधि से वर्णित Drug extraction process हैं जिसमें पानी को Solvent के रूप में प्रयुक्त किया जाता है तथा प्राप्त औषधि (क्वाथ, हिम या फाण्ट) में विभिन्न Biologically active compound पाये जाते है तथा इनकी अपनी Pharmacological properties होती है । जो कि रोग को दूर करने में सहायक होते है । आधुनिक विज्ञान में Extraction को निम्न रूप में परिभाषित किया गया है—

Extraction can be defined as the removal of soluble active material from the insoluble residue like cell tissue by treatment with a liquid solvent.

The solvent used for extraction is known as Menstrum and the inert insoluble material that remain after extraction is called Marc. In the various extraction process water, alcohol, ether, chloroform etc. used as Menstrum.

विभिन्न प्रकार के Extraction process निम्न है—

1. Infusion
2. Decoction
3. Digestion
4. Maceration
5. Percolation

1. Infusion– इस Process में Cold या Boiling water प्रयोग किया जाता है । इसमें प्रयुक्त द्रव्य Soft tissue वाले होते हैं तथा Volatile drug भी प्रयुक्त किये जा सकते हैं । औषधि द्रव्य Drug को Menstrum में एक निश्चित समय में लिए रखकर (बीच-बीच में चलाते रहते हैं) फिर छान लेते हैं ।

2. Decoction– ये कठिन द्रव्यों (Hard and woody drugs) से extraction के लिए प्रयोग किया जाता है । इसमें को एक निश्चित समय के लिए पानी में उबालते हैं । तत्पश्चात् छान लेते हैं ।

3. Digestion– इस प्रक्रिया में Drug को एक लम्बे समय तक एक विशेष दबाव (Pressure) तथा कम तापमान (Low temperature) पर गर्म किया जाता है ।

4. Maceration– इस प्रक्रिया में Drug तथा Mentrum एक Closed vessel में सात दिन के लिए रख दिये जाते हैं । तत्पश्चात् इसे छान लेते हैं । पुनः Marc को दबाकर छान लेते हैं । इस प्रकार प्राप्त दोनों द्रवों को मिला देते हैं ।

5. Percolation– इस प्रक्रिया से सामान्य रूप से Tinctures बनाये जाते हैं । इसमें औषधि तथा Menstrum को Percolater में Pack कर देते हैं । इसमें Menstrum धीरे-धीरे Gravity के प्रभाव से नीचे आता रहता है । इस प्रक्रिया में औषधि चूर्ण रूप में प्रयुक्त की जाती है ।

चूर्ण कल्पना

परिभाषा

चूर्ण शुष्क पेषणाणूकृतावयवैः– डल्हण

सूखी औषधि को पेषण (पीसना) के उपरान्त प्राप्त अणु अवयव (Fine ingredients) को चूर्ण कहते हैं ।

अं.सं में चूर्ण को कल्क कल्पना का ही भेद कहा गया है । इसके अनुसार बिना द्रव के उपयोग होने से चूर्ण तथा द्रव के साथ उपयोग करने से इसकी संज्ञा कल्क की होती है । तथा चूर्ण सूखे द्रव्य को पीसकर कपड़े से छान लेने के पश्चात् प्राप्त होते हैं । यथा—

शुष्कपिष्टः सूक्ष्मतान्तवपटच्युच्चूर्णः । तस्य समस्त द्रव्य परित्यागादाप्लुतोपयोगाच्च कल्कादभेदः । (अ.सं.क. 8/10)

निर्माण विधि

अत्यन्त शुष्कं यद्द्व्यं सुपिष्टं वस्त्रगालितम् । तत्स्याच्चूर्ण रजः क्षोदस्तन्मात्रा कर्षसंमिता ॥ (शा.म. 6/1)

सूखे द्रव्य को अच्छी प्रकार से पीसकर वस्त्र से छान लेते है । यही चूर्ण कहलाता है ।

विशेष– अत्यन्त शुष्क का अर्थ धूप में सुखाने से ग्रहण करना चाहिए– आढ़मल्ल ।

चूर्ण निर्माण प्रक्रिया को निम्न रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है—

शुष्क द्रव्य (Complete Dry Drug)
↓
पिष्ट (Grinding)
↓
वस्त्र गालित (Sieving or screaning)
↓
चूर्ण (Powder)

सिद्धान्त- पेषण तथा गालन

कम मात्रा में चूर्ण निर्माण उलूखल यन्त्र द्वारा अधिक मात्रा (Large scale) में Pulverizer या Disintegrator द्वारा किया जाता है।

चूर्णों की संरक्षण विधि

चूर्ण को Air tight containers में रखना चाहिए । जिससे कि इन पर वातावरण का प्रभाव न पड़ सके तथा ये ज्यादा समय तक उपयोगी रह सके ।

Scanned with OKEN Scanner

सवीर्यता अविधि– चूर्ण कल्पना की सवीर्यता अवधि 2 माह या The Drugs and Cosmetics Rule 1945 में 2 साल कहा गया है ।

सितोपलादि चूर्ण

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वाश रोचना ॥
पिप्पली स्याच्चतुष्कर्षा स्यादेला च द्विकार्षिकी । एकः कर्षस्त्वचः कार्यश्चूर्णयेत्सर्वमेकतः ॥
सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् । श्वासकासक्षयहरं हस्तपादाङ्गदाहजित् ॥
मन्दाग्निं सुप्त जिह्वत्वं पार्श्वशूलमरोचकम् । ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तं पित्तमाशु व्यपोहति ॥

(शा.म. 6/134-137)

घटक द्रव्य–

1. सिता	–	16 कर्ष
2. वंशलोचन	–	08 कर्ष
3. पिप्पली	–	04 कर्ष
4. एला	–	02 कर्ष
5. दालचीनी	–	01 कर्ष

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता, सूती वस्त्र, आजकल Disintigrator के प्रयोग से निर्माण होता है ।

निर्माण विधि– उपरोक्त पाँचों द्रव्यों को सुखाकर इमामदस्ते में कूट पीस लेते हैं तत्पश्चात् इसे वस्त्र से छान लेते हैं । यही सितोपलादि चूर्ण है ।

सहपान– शहद तथा घृत

उपयोग– श्वास, कास, क्षय, मन्दाग्नि, ज्वर आदि में ।

हिंग्वाष्टक चूर्ण

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे । समधरण धृतानामष्टमो हिङ्गुभागः ॥
प्रथमकवलयुक्तं सर्पिषश्चूर्णमेत ज्जनयति जठराग्नि वातरोगांश्च हन्ति ॥

(भै.र. अग्निमाद्य 59)

घटक द्रव्य–

1. शुण्ठी	–	1 भाग
2. मरिच	–	1 भाग
3. पिप्पली	–	1 भाग
4. सैन्धव लवण	–	1 भाग
5. श्वेत जीरा	–	1 भाग
6. काला जीरा	–	1 भाग
7. अजमोदा	–	1 भाग
8. शु. हींग	–	1/8 भाग

यन्त्र– इमामदस्ता, सूतीवस्त्र, (Large scale हेतु Disintigrator प्रयोग)

निर्माण विधि– सर्वप्रथम हींग को शुद्ध करते हैं । हींग शोधन की प्रक्रिया में हींग को एक कड़ाही में घृत डालकर भर्जन करते हैं । जब यह भूरे रंग का हो जाय तब इसे उतार लेते हैं । यही शुद्ध हींग है । अब क्रम संख्या 1 से 7 तक में वर्णित द्रव्यों का चूर्ण कर छान लेते हैं । तत्पश्चात् हींग को खरल में मर्दन कर उपरोक्त चूर्ण में मिला देते हैं । यही हिंग्वाष्टक चूर्ण है ।

प्रयोग विधि– इसे प्रथम कवल में घृत साथ प्रयुक्त करते हैं।

उपयोग– अग्निमांद्य तथा वात रोग में ।

लवणभास्कर चूर्ण

सामुद्रलवणं कार्यमष्टकर्षमितं बुधैः । पञ्च सौवर्चलं ग्राह्यं विडं सैन्धव धान्यकात् ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं कणाजीरक पत्रकम् । नागकेशर तालीसमम्लवेतसकं तथा ॥
द्विकर्षमात्राण्येतानि प्रत्येकं कारयेद्बुधः । मरिचं जीरकं विश्वमेकैकं कर्षमात्रकम् ॥
दाडिमं स्याच्चतुष्कर्ष त्वगेले चार्धकार्षिके । एतच्चूर्णीकृतं सर्व लवणं भास्कराभिधम् ॥
शाण प्रमाण देयं तु मस्तुतक्र सुरासवैः । वातश्लेष्मभवं गुल्म प्लीहानमुदरं क्षयम् ॥
अर्शांसि ग्रहणीं कुष्ठं विबन्ध च भगन्दरम् । शोफं शूलं श्वासकासावामवातं च हृद्रुजम् ॥
मन्दाग्निं नाशयेदेतद्दीपनं पाचनं परम् । सर्वलोकहितार्थाय भास्करेणोदितं पुरा ॥

(शा.म. 6/139-144)

घटक द्रव्य–

1. सामुद्र लवण	–	8 तोला	10. तालीस पत्र	–	2 तोला
2. सौवर्चल लवण	–	5 तोला	11. अम्लवेतस	–	2 तोला
3. विड लवण	–	2 तोला	12. तेजपत्र	–	2 तोला
4. सैन्धव लवण	–	2 तोला	13. काली मिर्ची	–	1 तोला
5. धनियाँ	–	2 तोला	14. श्वेत जीरा	–	1 तोला
6. पिप्पली	–	2 तोला	15. शुण्ठी	–	1 तोला
7. पिप्पली मूल	–	2 तोला	16. दाड़िम (अनारदाना)	–	1 तोला
8. कृष्ण जीरक	–	2 तोला	17. दालचीनी	–	$^1/_2$ तोला
9. नागकेशर	–	2 तोला	18. छोटी एला	–	$^1/_2$ तोला

यन्त्र उपकरण– इमामदस्ता/Disintigrator, सूतीवस्त्र, चालनी (Sieve)

निर्माण विधि– उपरोक्त समस्त द्रव्यों को सुखाकर पीसकर छान लेते हैं । यही लवण भास्कर चूर्ण है ।

मात्रा– 1 शाण (3 ग्रा.)

अनुपान– मस्तु, तक्र, सुरा या आसव के साथ

उपयोग– अर्श, ग्रहणी, मन्दाग्नि, दीपन, पाचन आदि में ।

Scanned with OKEN Scanner

Modern Aspect of Churna

आयुर्वेद में वर्णित चूर्ण कल्पना को आधुनिक समय में Powder के नाम से जाना जाता है तथा इसे निम्न रूप में परिभाषित किया जा सकता है—

Powders are solid dosage form of medicament that can be used internally as well as externally.

पाउडर प्रयोग विधि के अनुसार आन्तरिक प्रयोग हेतु तथा वाह्य प्रयोग हेतु 2 प्रकार से वर्गीकृत किये जा सकते हैं। जब पाउडर में केवल एक घटक द्रव्य होता है तब इसे Simple powder तथा जब इसमें एक से ज्यादा घटक द्रव्य होते हैं तब इसको Compound Powder कहा जाता है।

पाउडर निर्माण की प्रक्रिया 2 चरण में पूरी होती है—

1. Size reduction (जिसे आयुर्वेद में सुषिष्ट शब्द से कहा गया है)
2. Size separation (इसे आयुर्वेद में वस्त्र गालित शब्द से कहा गया है)

Size reduction– यह वह प्रक्रिया है जिसमें द्रव्य को छोटे अथवा Powder रूप में बदला जाता है।

Size reduction की प्रक्रिया निम्न चार सिद्धान्तों पर आधारित है—

1. Cutting– इस प्रक्रिया में द्रव्य Sharp blades के द्वारा काटा जाता है। उदाहरण के लिए Cutter Mill
2. Compression– इस प्रक्रिया में Size reduction, Pressure के द्वारा होता है। द्रव्यों को पत्थर या लोहे मे बने यन्त्रों में दबाव के द्वारा Powder बनाया जाता है।

   उदाहरण— Mortar & Pestle (इमामदस्ता)
3. Attrition– इस प्रक्रिया में दो सतहों के बीच में रगड़ से Size reduction की प्रक्रिया होती है। ये सतह (Surface) गतिमान (Moving) होते हैं।

   उदाहरण— Roller Mill
4. Impact– इस प्रक्रिया में द्रव्य कम या ज्यादा रूप से स्थिर (Stationary) होता है तथा यह गतिमान/ Moving object के द्वारा चोट (Hit) पहुँचाकर Size reduction करता है। उदाहरण– Hammer Mill इसमें तेजी से घूमते हथौड़े (Hammers) द्रव्यों को चोट पहुँचाकर Powder निर्माण करते हैं।

विभिन्न प्रकार के Mill, उनके कार्य तथा प्राप्त Powder आदि का वर्णन निम्न है—

Sr.No.	Mill	Action	Product size	Use for
01	Cutter mill	Cutting	20 to 80 Mesh	Crude animal and vegetable drugs
02	Edge Runner	Crushing	20 to 80 Mesh	All most all drug
03	Roller Mill	Compression	20 to 200 Mesh	Soft material
04	Hammer Mill	Impact	4 to 325 Mesh	All most all drug

Factors affecting size reduction– निम्न factors, size reduction की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं—

1. Hardness
2. Toughness
3. Abrasiveness
4. Stickiness
5. Moisture content
6. Material content
7. Softening temperature

Size separation– यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा विभिन्न आकार (Size) के Particles अलग किये जाते हैं। इस प्रक्रिया के लिए Sieving तथा Screening शब्द भी प्रयोग किये जाते हैं। यह प्रक्रिया सामान्य रूप से विभिन्न प्रकार के Sieve (चलनी) द्वारा की जाती है।

Sieve No– इसकी परिभाषा निम्न है—

The number of sieve indicating the number of meshes (Openings) included in a length of 25.4 m.m. (1 inch) in each direction parallel to the wires. Thus a No. 10 Sieve has 10 meshes per inch in each direction.

British Pharmacopoeia में Powder के पाँच ग्रेड निम्न रूप में बताये हैं—

Sr.no	Grade of powder	Sieve through which all particles must pass	Sieve through which not more than 40% of particle pass
01	Coarse	10	44
02	Moderately coarse	22	60
03	Moderately fine	44	85
04	Fine	85	Not specified
05	Very fine	120	Not specified

प्रमथ्या

परिभाषा

प्रमथ्यां मध्यदोषाणां दद्याद्दीपनपाचनीम्। (च.चि. 19/19)

प्रमथ्या दोषों की मध्यमा अवस्था में प्रयुक्त दीपन पाचन करने वाला क्वाथ है।

निर्माण विधि

प्रमथ्या प्रोच्यते द्रव्यपलात्कल्कीकृताच्छृतात्। तोयेऽष्टगुणिते तस्याः पानमाहुः पलद्वयम्॥
(शा.म. 2/150)

अर्थात् प्रमथ्या निर्माण में एक पल द्रव्य लेकर उसको कल्क रूप में बनाते हैं तथा उससे आठ गुना जल लेकर क्वाथवत् पाक करते हैं। तथा जब पानी 2 पल शेष रहें (चतुर्थांश) तब छान कर इसका प्रयोग करते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

1 पल द्रव्य
↓
कल्क बनाते हैं
↓
जल 8 गुना मिलाते हैं
↓
अग्नि पर पाक
↓
2 पल शेष रहने पर
↓
छानते हैं

क्वाथ तथा प्रमथ्या में अन्तर

	क्वाथ	प्रमथ्या
01.	निर्माण में यवकुट प्रयोग	कल्क कर निर्माण होता है
02.	दोषों की सभी अवस्था में प्रोयग	मध्यदोष अवस्था में
03.	शोधन, शमन आदि में प्रयोग करते हैं	दीपन पाचन हेतु प्रयोग करते हैं
04.	आ. अरुण ने इसे अकृत यूष कहा है	इसे कृत यूष कहा है।

सिद्धान्त-तोय अग्नि सन्निकर्ष

प्रमथ्या के निर्माण हेतु स्टेनलेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव का प्रयोग किया जाता है।

सिद्धि लक्षण– द्रव्य के अनुसार गंध वर्ण तथा रस की उत्पत्ति।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– ताजा ही प्रयोग करते है।

मुस्तादि प्रमथ्या

मुस्तकेन्द्रयवैः सिद्धा प्रमथ्या द्विपलोन्मिता। सुशीता मधुसंयुक्ता रक्तातीसारनाशिनी॥

(शा.म. 2/151)

घटक द्रव्य– 1. मुस्त, 2. इन्द्रयव (कुटज वीज) समान मात्रा में।

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता, भगौना, वस्त्र या छन्नी (वस्त्र=सूती वस्त्र) या मारकीन कपड़ा

निर्माण विधि– उपरोक्त दोनों द्रव्यों का कल्क बनाकर एक भगौने में लेते हैं तथा जल डालकर (आठ गुना) पाक करते हैं। पुनः 2 पल शेष रहने पर छान लेते हैं। जब यह शीतल हो जाय तब इसमें मधु मिलाकर पीने हेतु प्रयोग करते हैं।

उपयोग– रक्त अतिसार में।

पानीय कल्पना

परिभाषा

यदप्सुशृतशीतासु षडङ्गादि प्रयुज्यते। कर्षमात्रं ततो द्रव्यं साधयेत् प्रास्थिकेऽम्भसि॥ अर्धशृतं प्रयोक्तव्यं पाने पेयादि संविधौ।

एक कर्ष द्रव्य लेकर उसे एक प्रस्थ जल (अर्थात् 64 गुना) में सिद्ध करते हैं तथा जब यह आधा रह जाय तो इसे छानकर पान अर्थात् पीने में तथा पेयादि अर्थात् पेया, मण्ड आदि के निर्माण में प्रयुक्त करते हैं।

निर्माण विधि

क्षुण्णं द्रव्यपलं साध्यं चतुःषष्टि पले जले। अर्द्धशिष्टं च तद्देयं पाने भक्तादि संविधौ॥ (शा.म. 2/157)

एक पल यवकुट द्रव्य को 64 गुना जल में डालकर पाक करते है। जब यह आधा बचे तो इसका प्रयोग पीने तथा यूष, रस, यवागू आदि के निर्माण में प्रयुक्त करते हैं।

सिद्धान्त– तोय अग्नि सन्निकर्ष

यन्त्र निर्माण हेतु स्टेनलेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव का प्रयोग करते है।

सिद्धि लक्षण– गन्ध, वर्ण, रस युक्त होना चाहिए।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– ताजा ही प्रयोग करना चाहिए।

उष्णोदक

परिभाषा

अष्टमेनांशशेषेण चतुर्थेनार्धकेन वा। अथवा क्वथेनैव सिद्धमुष्णोदकं वदेत्॥ (शा.म. 2/159)

आठवाँ भाग, चतुर्थ या आधा भाग शेष रहे या केवल उबाले हुए जल को उष्णोदक कहा जाता है।

सिद्धान्त– अग्नि सन्निकर्ष

यन्त्र– स्टेनलेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव द्वारा आवश्यकतानुसार बनाया जा सकता है।

सिद्धिलक्षण– आठवाँ भाग, चतुर्थ या आधा भाग शेष रहे या केवल उबाल आने तक।

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– निर्माण पश्चात् शीघ्र ही प्रयोग करते है।

क्षीरपाक

परिभाषा

क्षीर (Milk), औषधि द्रव्य तथा जल को एक निश्चित मात्रा में लेकर इसे पकाने के उपरान्त प्राप्त क्षीर को ही क्षीरपाक कहा जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

निर्माण विधि— आचार्य वृद्ध वाग्भट्ट ने क्षीरपाक निर्माण की विधि का वर्णन निम्नवत किया है—

क्षीरादि सहितं च द्रव्यं न सम्यङ्मुक्तरसं भवतीति वारिक्वाथ पूर्वकं क्षीराद्यैस्तदुपदेशे अनुपदग्धं क्वाथयेत्। (अ.सं.क. 8/12)

आचार्य वृद्धवाग्भट्ट के अनुसार यदि औषध द्रव्य को क्षीरादि (क्षीर, दधि, मस्तु आदि) के साथ पाक करते है तो औषध द्रव्य अपना सम्पूर्ण रस ठीक प्रकार से दूधादि में नहीं छोड़ता है। अतः पहले औषधि का क्वाथ बना लेना चाहिए तत्पश्चात् उस क्वाथ के बराबर मात्रा में दूध लेकर उसका पाक करना चाहिए तथा जब क्षीर की मात्रा के बराबर बचे तो इसे प्रयुक्त करना चाहिए।

आचार्य शार्ङ्गधर ने क्षीरपाक विधि का वर्णन ऐसे किया है—

क्षीरमष्टगुणं द्रव्यात्क्षीरान्नीरं चतुर्गुणम्। क्षीरावशेषं तत्पीतं शूलमामोद्भवं जयेत्॥
(शा.मा. 2/161)

द्रव्य से आठगुना क्षीर तथा क्षीर से चार गुना जल लेकर अग्नि पर पाक करते हैं तथा जब केवल क्षीर शेष रहे तो इसे वस्त्र से छानकर प्रयुक्त करते हैं।

आचार्य यादव जी त्रिकम जी के अनुसार

क्षीरं तिथिगुणं द्रव्यात् क्षीरान्नीरं समं मतम्। क्षीरावशेषं कर्तव्यं क्षीरपाके त्वयं विधिः॥
(द्र.गु.वि. यादव जी)

द्रव्य से क्षीर तिथि गुण अर्थात् 15 गुणा तथा क्षीर के बराबर मात्रा में जल लेकर पाक करते हैं एवं जब केवल क्षीर अवशेष रहे तो इसे छानकर प्रयोग करते हैं। यही क्षीरपाक की विधि है।

उपरोक्त तीनों मतों से निम्न रूप से प्रदर्शित किया जा सकता है—

आचार्य	द्रव्य	क्षीर	जल	अवशेष
वाग्भट्ट	द्रव्य+जल का क्वाथ	क्वाथ क्षीर समान मात्रा	-	क्षीर की मात्रा के बराबर
शार्ङ्गधर	1	8	32	क्षीर की मात्रा बराबर
यादव जी	1	15	15	क्षीर की मात्रा बराबर

सिद्धान्त– *अग्नि सन्निकर्ष*

यन्त्र– *स्टेनलेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव द्वारा आवश्यकतानुसार बनाया जा सकता है।*

सिद्धिलक्षण– *दूध में औषधि का रस, गन्ध तथा वर्ण आ जाय तथा केवल दूध ही शेष बचे।*

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– *निर्माण पश्चात् शीघ्र ही प्रयुक्त करते है।*

रसोन क्षीरपाक

साधयेच्छुष्क शुद्धस्य रसोनस्य चतुः पलम्। क्षीरोदकेऽष्टगुणिते क्षीरशेषञ्च पाययेत्॥
वातगुल्ममुदावर्त्तं गृध्रसी विषम ज्वरम्। हृद्रोगं विद्रधिं शोषं नाशयत्याशु तत् पयः॥
(चक्रदत्त गुल्म चिकि. 10-11)

घटक द्रव्य– छिलका रहित रसोन 4 पल, दुग्ध, जल।

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछुल, सूतीवस्त्र, खल्व यन्त्र।

निर्माण विधि– लहसुन को कल्क जैसा बनाकर उसे एक भगौने में दूध तथा जल के साथ मिलाकर पाक करते हैं तथा जब क्षीर शेष बचे तो उसे छानकर प्रयोग करते हैं।

उपयोग– वातगुल्म, हृद्रोग, उदावर्त आदि में।

अर्जुनक्षीरपाक

अर्जुनस्य त्वचा सिद्ध क्षीरं योज्यं हृदामये। (चक. हृद्रोग चिकि/8)

घटक द्रव्य– 1. यवकुट अर्जुन छाल, 2. क्षीर, 3. जल।

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी, सूती वस्त्र।

निर्माण– एक भगौने में अर्जुन छाल, क्षीर तथा जल को लेकर उसे क्षीरपाक विधि से पाक करते हैं। जब केवल क्षीर बचे तो इसे छानकर प्रयोग करते हैं।

उपयोग– हृद्रोग में।

शुण्ठी क्षीर पाक

सनागरं समृद्वीकं सघृतक्षौद्र शर्करम्। शृतं पयः सखर्जूरं पिपासा ज्वरनाशनम्॥
(च.चि. 3/337)

घटक द्रव्य– 1. शुण्ठी 2. घृत 3. मुनक्का 4. मधु 5. शर्करा 6. क्षीर 7. जल

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी आदि।

निर्माण विधि– शुण्ठी तथा मुनक्का को लेकर क्षीरपाक विधि अनुसार क्षीर को सिद्ध करते हैं। पुनः कुछ ठंडा होने पर इसमें घृत, शर्करा तथा शहद मिलाकर प्रयोग करते हैं।

उपयोग– पिपासा, ज्वर में।

लाक्षारस

परिभाषा— लाक्षा पाक के उपरान्त प्राप्त रस को लाक्षा रस कहते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

निर्माण विधि—लाक्षा को 6 गुने जल में दोलायन्त्र विधि मध्यम अग्नि पर पाक करते हैं तत्पश्चात् उसे 21 बार छान लेते हैं । यही लाक्षारस है ।

षडगुणेनाभ्भसा लाक्षां दोलायन्त्रे विपाचयेत् । त्रिसप्तधा परिस्राव्या लाक्षारसमिमं विदुः ॥

(द्र.गु.वि.यादव जी)

रसतन्त्रसार एवं सिद्ध प्रयोग संग्रह के अनुसार लाक्षा को चार गुने जल में मिलाकर, दसवाँ भाग लोध्र, सज्जीक्षार तथा कुछ बेर के पत्तों के साथ गर्म करने पर लाक्षा रस बन जाता है ।

लाक्षा
↓
6 गुना जल डालकर
↓
दोला यन्त्र में स्वेदन
↓
21 बार छानते हैं
↓
लाक्षारस प्राप्त होता है।

सिद्धान्त– तोय अग्नि सन्निकर्ष तथा परिस्रावण

यन्त्र– दोला यन्त्र का प्रयोग किया जाता है।

सिद्धि लक्षण– लाक्षा के रस, गन्ध तथा वर्ण युक्त द्रव।

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– निर्माण पश्चात् शीघ्र ही प्रयुक्त करते हैं।

मांसरस

परिभाषा

मांस तथा जल को मसाले के साथ या मसाले से रहित पाक करने के पश्चात् प्राप्त रस को मांस रस कहा जाता है।

प्रकार—मांस रस गाढ़ा, मध्यम तथा पतला ऐसे तीन प्रकारों का उल्लेख आचार्य श्री यादव जी ने किया है । जिसका विवरण निम्न है—

पलाष्टकं जले प्रस्थे घनेऽथ मध्यमे तु षट् । मांसस्य वण्टनं कुर्यात् कुडवे तनुके रसे ॥

(द्रव्यगुण विज्ञान, यादव जी)

गाढ़ा मांस रस– गाढ़ा मांस रस बनाने हेतु 8 पल मांस लेकर उसे 64 तोले जले में पकाते हैं तथा जब यह सिद्ध हो जाये तो उसका रस ग्रहण करते हैं । यह गाढ़ा मांस रस है ।

मध्यम मांस रस– इस प्रकार के मांस रस के निर्माण हेतु 6 पल मांस को 64 तोले जल में पाक करते हैं ।

पतला मांस रस– पतला या तनु मांस रस निर्माण हेतु 4 पल मांस को 64 तोले जल में पाक करते हैं ।

इसे निम्न रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है—

क्रम संख्या	मांस रस	मांस की मात्रा	जल की मात्रा
1.	गाढ़ा	8 पल	64 तोला
2.	मध्यम	6 पल	64 तोला
3.	पतला	4 पल	64 तोला

आचार्यों ने मांस रस के कृत एवं अकृत दो भेद माने है । जिस मांस रस में घृत, तैल, लवण, हिंगु तथा त्रिकटु आदि का संस्कार किया गया हो ऐसे मांस रस को कृत मांस रस कहते हैं । तथा जिस मांस रस में उपरोक्त द्रव्यों या किसी भी प्रकार के सुगन्धित आदि द्रव्यों का प्रयोग न किया गया हो उसे अकृत मांस रस कहते हैं । यथा आचार्य सुश्रुत के अनुसार—

अस्नेहलवणं सर्वमकृतं कटुकैर्विना । विज्ञेय लवण स्नेह कटुकैः संयुतं कृतम् ॥

(सु.सू. 46/379)

निर्माण विधि

पाकपात्रें घृतं दद्यात्तैलञ्च तदभावतः । तत्र हिङ्गु हरिद्रा च भर्जयेत्तदनन्तरम् ॥
छागादेरस्थि रहितं मांसं तत्खण्डितं धुवम् । धौतं निर्गालितं तस्मिन्धृते तद्भर्जयेच्छनैः ॥
सिद्धयोग्यं जलं दत्त्वा लवणन्तु पचेत्ततः । सिद्धे जलेन सम्पिष्य वेसवारं परिक्षिपेत् ॥

(भा.प्र. कृतान्नवर्ग 80-82)

एक पाक पात्र में घृत लेते हैं, घृत के अभाव में तैल भी प्रयोग किया जा सकता है । तत्पश्चात् इसमे हिङ्गु, हरिद्रा डालकर इसे अच्छी प्रकार से भर्जन करते हैं । पुनः इसमें अस्थि रहित बकरे के मांस के टुकड़े, जो कि अच्छी प्रकार से साफ हो, उसे इस घृत में डालकर अच्छी प्रकार से भर्जन करते हैं । पुनः इसमें आवश्यकता अनुसार जल तथा नमक डालकर इसे सिद्ध करते है पुनः इसमें वेसवार डाल देते हैं । यही मांस रस निर्माण की विधि है ।

सिद्धान्त– अग्नि सन्निकर्ष

यन्त्र– स्टेन लेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव

सिद्धिलक्षण– प्रयुक्त मांस के गन्ध, वर्ण तथा रस युक्त

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– निर्माण पश्चात् शीघ्र ही प्रयुक्त करते है।

मन्थ कल्पना

यह कल्पना मन्थन की प्रक्रिया से बनाया जाता है । मन्थन का अर्थ है मथना । यह सत्तू तथा फलों से बनायी जाने वाली कल्पना है जो कि सद्यः बलकारक होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

परिभाषा

मक्तवः सर्पिषाऽभ्यक्ताः शीतवारिपरिप्लुताः। नातिद्रवा नातिसान्द्रा मन्थ इत्युपदिश्यते ॥
(सु.सू. 46/385)

सतू में (यव, चना या मसूर के सतू) घी मिलाकर इसमें शीतल जल इतनी मात्रा में मिलाते है कि यह न अधिक पतला (द्रव) हो तथा न ही अधिक गाढ़ा (सान्द्र) हो, इसे ही मन्थ कहते हैं।

निर्माण विधि

मन्थोऽपि फाण्ट भेदः स्यात्तेन चात्रैव कथ्यते। जले चतु : पले शीते क्षुण्णं द्रव्यपलं क्षिपेत् ॥
मृत्पात्रे मन्थयेत्सम्यक्तस्माच्च द्विपलं पिबेत्। (शा.म. 3/9)

एक मिट्टी के पात्र में एक पल औषधि का चूर्ण लेकर उसमें चार पल शीतल जल डालकर उसको अच्छी प्रकार से मथते हैं। यही मन्थ है। इसकी 2 पल मात्रा पीने हेतु प्रयुक्त करते हैं।

औषधि चूर्ण 1 पल + 4 पल शीतल जल
↓
मन्थन करते हैं
↓
मन्थ

सिद्धान्त– मन्थन

यन्त्र– निर्माण हेतु मथानी तथा मृतिका पात्र (आधुनिक समय में स्टेनलेस स्टील पात्र) प्रयोग करते हैं।

सिद्धिलक्षण– नाति द्रव नाति सान्द्र

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– निर्माण पश्चात् शीघ्र ही प्रयुक्त करते है।

खर्जूरादि मन्थ

खर्जूरदाडिमीद्राक्षातिन्तिडीकाम्लिकामलैः। सपरूषैः कृतो मन्थः सर्वमद्यविकारनुत् ॥ (शा.म. 3/10)

घटक द्रव्य– 1. खर्जूर 2. दाडिम 3. द्राक्षा
4. तिन्तिडीक 5. अम्लिका (चिञ्चा) 6. आमलकी
7. परूषक सभी समान मात्रा में

यन्त्र/उपकरण– मिट्टी का पात्र या स्टील का भगौना, मथनी, वस्त्र सूती।

निर्माण विधि– उपरोक्त समस्त द्रव्यों के फल को लेकर उसे कूट लेते हैं तत्पश्चात् इसमें जल डालकर मथनी से अच्छी प्रकार से मथ लेते हैं। पुनः इसे वस्त्र से छान लेते हैं तथा प्रयोग करते हैं।

मात्रा– 2 पल

उपयोग– मदात्यय

औदक कल्पना

इसके अन्तर्गत तण्डुलोदक का समावेश किया जाता है।

तण्डुलोदक

परिभाषा

तण्डुल अर्थात् चावल तथा उदक (जल) के संयोग से बनने के कारण इस कल्पना को तण्डुलोदक कहते हैं।

निर्माण विधि

कण्डितं तण्डुलपलं जलेऽष्टगुणिते क्षिपेत्। भावयित्वा जलं ग्राह्यं देयं सर्वत्र कर्मसु ॥
(शा.म. 1/28)

1 पल चावल लेकर उसे मुसल/उलूखल से कूट लेते हैं। तत्पश्चात् इसमें आठ गुना जल डालकर रखते हैं। तत्पश्चात् इसे प्रक्षालित करते है और जो जल प्राप्त होता है उसे तण्डुलोदक कहते हैं।

1 पल चावल के टुकड़े
↓
8 गुना जल में रखकर
↓
प्रक्षालन
↓
तण्डुलोदक

सिद्धान्त– कुट्टन तथा तोय सन्निकर्ष

यन्त्र– भगौना, इमामदस्ता तथा चलनी।

सिद्धिलक्षण– श्वेत वर्ण का मण्ड युक्त जल।

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– ताजा प्रयुक्त करते हैं।

पानक कल्पना

यह एक द्रव रूपी कल्पना (Liquid preparation) है। तथा यह फलों जैसे— द्राक्षा, खर्जूर आदि गुड़, कटु द्रव्य जैसे मरिच आदि के संयोग से बनायी जाती हैं।

परिभाषा

गुडाम्लिकादि संस्कृतमुदकादि द्रवं-पानकम्। (हेमाद्रि टीका अ.हृ. 6/35)

अर्थात् गुड़, अम्लिका उदक आदि द्रव्यों से निर्मित द्रव को पानक कहते हैं।

निर्माण विधि

फलमम्लमनम्लं वा शीताम्बुपरिमर्दितम्। सितामरिचसंयुक्तं पूतं स्यात् पानकं वरम् ॥
(द्र.वि. यादवजी)

Scanned with OKEN Scanner

खट्टे या बिना खट्टे फल को शीतल जल से अच्छी प्रकार मर्दन करते हैं । तत् पश्चात् छानकर इसमें चीनी, काली मरिच डाल देने से श्रेष्ठ पानक बन जाता है ।

फल
↓
शीतल जल मिलाकर
↓
मर्दन
↓
छानते हैं
↓
चीनी आदि मिलाते हैं
↓
पानक

सिद्धान्त– तोय सन्निकर्ष/अग्नि सन्निकर्ष एवं मर्दन

यन्त्र– इसका निर्माण स्टेनलेस स्टील भगौना तथा गैस स्टोव द्वारा आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।

सिद्धिलक्षण– रसगन्ध तथा वर्ण युक्त

संरक्षण/सवीर्यता अवधि– सवीर्यता अवधि ज्यादा न होने से शीघ्र ही प्रयुक्त करते हैं।

चिञ्चा पानक (अनुभूत योग)

घटक द्रव्य–

1. पक्व इमली फल (बीज रहित)	–	100 ग्रा.
2. शर्करा	–	200 ग्रा.
3. सैन्धव लवण	–	10 ग्रा.
4. भूना जीरा चूर्ण	–	10 ग्रा.
5. मरिच चूर्ण	–	10 ग्रा.
6. जल	–	400 मिली.

यन्त्र/उपकरण– खल्व यन्त्र, भगौना, सूती वस्त्र ।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम चिञ्चा फल को पानी में भिगों देते हैं । थोड़ी देर पश्चात् इसे मर्दन करते हैं । तत्पश्चात् इसे छान लेते है । पुनः इसमें शर्करा, जीरा तथा काली मिर्च डालकर अच्छी प्रकार से इसे मिला देते हैं ।

उपयोग– दीपन, पाचन, अरुचि आदि में ।

चन्दन पानक (अनुभूत)

औषधि द्रव्य–

1. श्वेत चन्दन चूर्ण	–	100 ग्रा.
2. शर्करा	–	250 ग्रा.

3. नीबू रस	–	10 मिली.
4. जल	–	400 मिली

उपकरण– खल्व यन्त्र, स्टील भगौना, सूती वस्त्र

निर्माण विधि– श्वेतचन्दन चूर्ण को भगौने में रखकर उसमें पानी डाल देते हैं । तथा इसे रात्रि पर्यन्त रख देते हैं । पुनः अगले दिन इसे छान लेते है । अब इसमें चीनी मिलाकर पाक करते हैं तथा जब यह कुछ गाढ़ी हो जाय तब इसे अग्नि से उतार लेते हैं तत्पश्चात् इसमें नीबू रस डाल देते है तथा इसे पुनः छान लेते हैं ।

उपयोग– दाह, मूत्रविकार, तृष्णा आदि में ।

अर्क कल्पना

अर्क कल्पना का उल्लेख आयुर्वेदिय संहिता ग्रन्थों में नहीं प्राप्त होता है । 12वीं सदी में सोढ़ल ने पहली बार 'अर्क' का उल्लेख किया है । जबकि अर्क प्रकाश नाम के ग्रन्थ, जो कि रावण तथा मन्दोदरी के संवाद के रूप में है तथा जिसका काल 16वीं सदी के आस पास माना जाता है, में अर्क कल्पना का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है । अर्क कल्पना यूनानी वैद्यक में प्रचलित कल्पना है ।

अर्क की परिभाषा

जब किसी द्रव पदार्थ को स्थिर या कम उड़नशील विजातीय द्रव्य से पृथक् करने के लिए उसे किसी पात्र (अर्क यन्त्र/डेग भभका/Distillation Apparatus) में रखकर उत्ताप (Temperature) के द्वारा वाष्प के रूप में बदल कर उसे पुनः ठंडा कर द्रव के रूप में परिणत करके किसी अन्य पात्र में एकत्रित करते हैं। प्राप्त द्रव को अर्क कहते हैं।

Ayurvedic formulary of India के अनुसार परिभाषा

Arka is a liquid preparation obtained by distillation of certain liquids or of drugs soaked in water by using the Arkayantra or any convenient modern distillation apparatus.

सिद्धान्त– Distillation

अर्क निकालने हेतु यन्त्र

अर्क निकालने हेतु अर्क प्रकाश में जीर्णास्थिमत्तिका पात्र का वर्णन प्राप्त होता है । यूनानी में करअ अंबीक, हम्माम नारिया, तअ्रीक हब्ली तथा नल भभका द्वारा अर्क निकालने का विवरण प्राप्त होता है । अर्क, भभका या डेग भभका नामक यन्त्र से पहले निकाला जाता है । परन्तु आजकल Distillation apparatus की सहायता से अर्क निकाला जाता है । यूनानी में वर्णित यन्त्र तथा अन्य यन्त्र भी आधुनिक Distillation apparatus के ही पुराने स्वरूप है ।

अर्क निकालने की विधि

जिस द्रव्य का अर्क निकालना हो उसे सर्वप्रथम साफ कर लेते हैं । तत्पश्चात् उसे यदि सूखा द्रव्य हो तो यवकुट कर लेते हैं । यदि पुष्प हो तो उसके पंखुडी को अलग-अलग कर लेते हैं । सूखे द्रव्य की स्थिति में उसमें कुछ पानी डालकर भिगों देते हैं । पुनः अगले दिन शेष जल की मात्रा डालकर अग्नि पर चढ़ाकर अर्क प्राप्त करते हैं । आर्द्र द्रव्यों

Scanned with OKEN Scanner

को उसी दिन शास्त्र में वर्णित मात्रा अनुसार जल डालकर अर्क प्राप्त करते है । अर्क हेतु जल की मात्रा द्रव्य से 8-10 गुना या फिर वर्णित सन्दर्भ के अनुसार ग्रहण करते हैं । यूनानी द्रव्यगुणदर्श के अनुसार 10-15 तोले औषधि से एक सेर अरक निकालना श्रेयस्कर है । यह अरक बादियान (सौंफ) जैसे मामूली अर्कों की बात है । वरन् औषध द्रव्य और जल के अनुपात के विषय में जैसा लिखा है, उसका पालन करना चाहिए । यदि पाव भर औषध द्रव्य में दो सेर अरक निकालना अभीष्ठ हो तो लगभग चार सेर जल में औषध द्रव्य भिगोये तब दो सेर अरक प्राप्त होगा । अर्क हेतु प्रयुक्त तापमान 60-65^{0}C के बीच रखना चाहिए तथा लगभग 70% (प्रयुक्त जल की मात्रा से) अर्क निकल जाने के पश्चात् इससे अधिक ग्रहण नहीं करना चाहिए ।

सिद्धिलक्षण– मुख्य औषधि के गन्ध तथा वर्ण युक्त (Suspension of distillate in water) द्रव जो कुछ Turbid होता है।

अर्क रखने हेतु पात्र

जीर्णास्थिपात्रे गृह्णीयादर्कं वा काचसम्भवे । पाषाणकेऽथवा पात्रे ह्यभावे मृण्मयेन्यसेत् ॥

(अर्कप्रकाश 1/87)

अर्क को जीर्णास्थिपात्र अथवा काँच या पत्थर के पात्र में रखते हैं । यदि ये पात्र उपलब्ध न हों तो मिट्टी के बर्तन में रखते हैं ।

सक्रियता अवधि– 1 वर्ष

यवानी अर्क

सन्दर्भ– A.F.I. Part 2 में वर्णित हैं जो कि अर्कप्रकाश से लिया गया है ।

यवान्याः पाचनो रूच्यो दीपनास्त्रिक्शूलहृत् । (अर्कप्रकाश 3/7)

यन्त्र उपकरण– **अर्क यन्त्र**

घटक द्रव्य–	1. यवानी	1 भाग
	2. जल (भिगोने हेतु)	2 भाग
	3. शेष जल अर्क निकालने हेतु	4 भाग

विधि– सर्वप्रथम यवानी को लेकर उससे 2 गुना जल डालकर रख देते हैं । तत् पश्चात् अगले दिन इसमें जल की 4 गुना मात्रा डालकर अर्क यन्त्र में रखकर अग्नि प्रदान कर इसका अर्क प्राप्त कर लेते हैं ।

मात्रा– 10 मिली. से 25 मिली.

उपयोग– त्रिकशूल (Pain in sacral region), अग्निमांद्य ।

मिश्रेया अर्क

सन्दर्भ– A.F.I. Part I

मिश्रेयाया बह्निमान्द्ययोनिशूल कृमीन् हरेत ॥ (अर्कप्रकाश 3/10)

घटक द्रव्य–	1. मिश्रेया	– 1 kg
	2. पानी भिगोने तथा निर्माण हेतु	– 7 lt.
	3. प्राप्त अर्क की मात्रा	– 5 lt.

यन्त्र/उपकरण– अर्कयन्त्र (Distillation apparatus)

निर्माणं विधि– अर्क निर्माण विधि द्वारा अर्क प्राप्त करते हैं ।

मात्रा– 12 से 24 मिली.

उपयोग– अग्निमांद्य, योनिशूल तथा कृमि रोग में ।

गुलाब अर्क

घटक द्रव्य–	1. गुलाब पुष्प की ताजी पंखुडियाँ	– 1 भाग
	2. जल	– 10 गुना

यन्त्र/उपकरण– अर्कयन्त्र (Distillation apparatus)

निर्माण विधि– सर्वप्रथम गुलाब की पंखुडियों को सावधानी पूर्वक अलग-अलग कर लेते हैं । तत्पश्चात् इसे अर्क यन्त्र में भर देते हैं । पुनः इसमें जल मिलाकर अग्नि प्रदान करते हैं । तापमान 60-65^{0}C से ज्यादा प्रदान नहीं करते हैं । जब 70% अर्क प्राप्त हो जाय तो अग्नि देना बन्द कर देते हैं । तथा प्राप्त अर्क को काँच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं ।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. आचार्य काश्यप ने कल्पनाओं की संख्या कितनी कही है—
   a. 5 b. 6 **c. 7** d. 8
2. कल्क कल्पना का भेद है—
   a. चूर्ण b. अवलेह c. मन्थ d. पानक
3. तण्डुलोदक में जल की मात्रा (चावल से) होती है—
   a. 2 गुना b. 4 गुना c. 6 गुना **d. 8 गुना**
4. यवानी अर्क निर्माण हेतु प्रयुक्त जल का मात्रा है—
   a. 2 भाग b. 3 भाग c. 4 भाग d. समभाग
5. हिम तथा फाण्ट में प्रयुक्त जल का मान है—
   a. 4 तथा 6 गुना b. दोनों में 4 गुना **c. 6 तथा 4 गुना** d. 2 तथा 4 गुना
6. यदि 85 no. sieve से सभी Particles pass हो तो चूर्ण की संज्ञा है—
   a. Coarse **b. Fine** c. Very fine d. Moderate fine

Scanned with OKEN Scanner

अध्याय 7

कल्पना निर्माण-II (विभिन्न कषाय कल्पना एवं Dietary Supplements)

अवलेह कल्पना

परिभाषा

क्वाथादीनां पुनः पाकाद्धनत्वं सा रसक्रिया । सोऽवलेहश्च लेहः स्यात्तन्मात्रा स्यात्पलोन्मिता ॥

(शा.म. 8/1)

क्वाथ, स्वरस, फाण्ट आदि को अग्नि पर पुनः पाक करके गाढ़ा कर लिया जाय तो उसे रसक्रिया, अवलेह तथा लेह की संज्ञा दी जाती है । तथा इसकी मात्रा एक पल होती है ।

घटक द्रव्य

अवलेह के निर्माण में निम्न घटक द्रव्यों की आवश्यकता पड़ती है—

1. द्रव द्रव्य जैसे क्वाथ, स्वरस ।
2. मधुर द्रव्य जैसे गुड़, शर्करा, मत्स्याण्डिका आदि ।
3. प्रक्षेप द्रव्य

उपरोक्त के अतिरिक्त स्नेह द्रव्य जैसे घृत, तैल, कल्क द्रव्य के रूप में आमलकी आदि तथा शहद का भी प्रयोग किया जाता है ।

अवलेह निर्माण विधि

1. सर्वप्रथम यदि स्वरस से अवलेह निर्माण का वर्णन है तो उस द्रव्य का स्वरस निकाल लेते हैं ।
2. यदि क्वाथ बनाना है तो वर्णित क्वाथ द्रव्यों को यवकुट कर क्वाथ निर्माण करते हैं ।
3. यदि कल्क का भी उल्लेख है तो कल्क बनाकर उसे स्नेह भर्जित कर लेते हैं ।
4. तत्पश्चात् क्वाथ या स्वरस में मधुर द्रव्य डालकर उसको पकाते हैं । (यदि कल्क डालने का उल्लेख है तो एक या दो तार की चासनी बनने के उपरान्त कल्क को इसमें अच्छी तरह से मिला देते हैं)
5. अवलेह सिद्धि लक्षण आने पर इसे अग्नि से उतार लेते हैं ।
6. कुछ ठंडा होने पर प्रक्षेप द्रव्य का सूक्ष्मचूर्ण अच्छी प्रकार से मिला देते हैं ।
7. एकदम ठंडा हने पर शहद (यदि डालने का उल्लेख है) डालते हैं ।

अनुक्त परिभाषा

यदि अवलेह वर्णन के प्रकरण में चीनी, गुड़ आदि के मान का वर्णन न हो तो इसे कितनी मात्रा में ग्रहण करना चाहिए, इसका उल्लेख आचार्य शार्ङ्गधर ने निम्न किया है—

सिता चतुर्गुणा कार्या चूर्णाच्च द्विगुणो गुडः । द्रवं चतुर्गुणं दद्यादिति सर्वत्र निश्चयः ॥

(शा.म. 8/2)

जिस अवलेह का निर्माण यदि चीनी से करना हो और चीनी की मात्रा का वर्णन नहीं है तो चूर्ण की मात्रा से चार गुना चीनी लेना चाहिए । इसी प्रकार गुड़ से बनाना है तो गुड़ दो गुना मात्रा में तथा यदि द्रव की मात्रा का वर्णन नहीं है तो इसे चूर्ण की मात्रा से चार गुनी मात्रा में लेना चाहिए ।

तापमान का महत्व (Importance of Temperature)

अवलेह निर्माण करते समय मृदु से मध्यम अग्नि का प्रयोग करना चाहिए। तीव्र अग्नि पर चीनी की चाशनी के जलने (Carmelization) तथा पात्र से बाहर आने का भय रहता है। उच्च ताप पर औषधियों के वीर्य के नष्ट होने की भी सम्भावना होती है।

अवलेह सिद्धि लक्षण

विभिन्न आचार्यों ने अवलेह सिद्धि लक्षण का वर्णन निम्न किया है—

तं लेहं साध्येद्दर्व्या घट्टयन्मृदुनाऽग्नि । यावत् स्यात्तन्तुमत्तोये पतितं तु न शीर्यते ॥

(च.क. 3/17)

लेहस्य तन्तुमत्ताऽप्सु मज्जनं सरणं न च । (अ.हृ.क. 6/19)

सुपक्वे तन्तुमत्त्वं स्यादवलेहोऽप्सु मज्जति । स्थिरत्वं पीडिते मुद्रागन्धवर्णरसोद्भवः ॥

(शा.म. 8/3)

अच्छी प्रकार से हुए पाक स्वरूप अवलेह में निम्न लक्षण दिखाई देते हैं।

1. तन्तुमत्व- दर्वी से चलाते समय चासनी बनने से उसमें तार बनते है ।
2. अप्सु मज्जन- पानी में कुछ बूँद डालने पर वह पानी में नीचे बैठ जाती है ।
3. स्थिरत्वं- बूँद पानी में नीचे स्थिर हो जायेगी ।

(शुरू में जब बूँद को गिराते है तो वह फैल जाती है लेकिन बाद में यह बूंद जिस रूप में गिरती है वैसे ही बैठ जाती है तथा किनारों पर फैलती नहीं है) ।

4. पीड़िते मुद्रा— ठंडा होने पर अंगूठे से दबाने पर उसमें अंगूठे के रेखाओं के निशान (Thumb impression) बन जाते हैं ।
5. गन्धवर्ण रसोद्भव— प्रयुक्त औषधियों (क्वाथ, कल्क, आदि) के गन्ध वर्ण तथा रस आ जाते हैं ।

अवलेह निर्माण हेतु पात्र

अवलेह निर्माण में विभिन्न प्रकार के पात्रों का उल्लेख प्राप्त होता है यथा—

Scanned with OKEN Scanner

क्रम.सं.	अवलेह	प्रयुक्तपात्र	सन्दर्भ
01	ब्रह्म रसायन	उदुम्बर पात्र	च.चि. 1/1/51
02	अमृत प्राश अवलेह	रजत पात्र	गदनिग्रह 5/296
03	अगस्त्य हरीतकी अवलेह	ताम्र पात्र	गदनिग्रह 5/74
04	धत्तूरातक अवलेह	लोह पात्र	गदनिग्रह 5/192

विमर्श– आजकल स्नेहलेस स्टील के पात्रों का उपयोग अवलेह निर्माण हेतु किया जाता है ।

अवलेह की पाक काल

घृततैलगुडादीश्च साधयेन्नैकवासरे । प्रकुर्वन्त्युषिता होते विशेषाद्गुणसंचयम् ॥ (शा.म. 9/18)

आचार्य शार्ङ्गधर ने घृत, तैल, गुड़ आदि को एक दिन से अधिक दिन में पाक करने का निर्देश किया है । आचार्य के अनुसार ऐसा करने से इनमें विशेष गुणों की उत्पत्ति हो जाती है ।

संरक्षण– Food Grade Plastic Container या काँच पात्र में संरक्षित करते हैं।

सवीर्यता अवधि– 3 साल

वासावलेह

वासकस्य रस प्रस्थं मानिका सितशर्करा । पिप्पल्या द्विपलं तावत्सर्पिषश्च शनैः पचेत् ॥
तस्मिल्लेहत्वमायाते शीते क्षौद्रपलाष्टकम् । दत्त्वाऽवतारयेद् वैद्यो लीढो लेहोऽयमुत्तमः ॥
हन्त्यमेव राजयक्ष्माणं कासं श्वासं च दारुणम् । पार्श्वशूलञ्च हृच्छूलं रक्तपित्तं ज्वरं तथा ॥
(भा.प्र. राजयक्ष्मा 55-57)

घटक द्रव्य–
1. वासा स्वरस/क्वाथ – 64 तोला
2. शर्करा – 32 तोला
3. पिप्पली चूर्ण – 8 तोला
4. घृत – 8 तोला
5. शहद – 32 तोला

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी, कटोरी, इमामदस्ता, सूती वस्त्र ।

निर्माण विधि– *सर्वप्रथम वासा के ताजे पत्रों को साफ कर उसका स्वरस निकाल लेते हैं । यदि स्वरस न उपलब्ध हो सके तो वासा यवकुट लेकर उसका क्वाथ निर्माण विधि से क्वाथ बना लेते हैं । तत्पश्चात् इसमें शर्करा डाल कर उसका पाक करते हैं । अवलेह सिद्धि लक्षण आने पर इसे उतार लेते हैं । तत्पश्चात् कुछ ठंडा होने पर इसमें पिप्पली चूर्ण अच्छी प्रकार से मिला देते हैं । पूरी तरह से जब यह ठंडा हो जाय तो शहद मिलाकगर सुरक्षित रख लेते हैं ।*

विमर्श– *वासा अवलेह निर्माण करते समय जब स्वरस/क्वाथ मं चीनी डालकर पाक करते हैं तभी घृत को भी डाल देना अच्छा रहता है । इस योग में शहद की मात्रा भी ज्यादा है इसलिए इसका पाक अवलेह पाक की अपेक्षा*

थोड़ा अधिक करना उचित रहता है जिससे शहद मिलाने पर यह अवलेह जैसा बन जाय । आधुनिक समय में कई कम्पनियाँ वासा अवलेह ग्रेनयूलस के रूप में बाजार से बेचती है । वैसे यदि इसका ज्यादा पाक कर शहद मिलाया जाय तो यह अवलेह की Consistency का बनता है तथा खराब भी नही होता है । अन्यथा इसमें Fungus लगने की पूरी सम्भावना रहती है ।

मात्रा– 1 तोला

उपयोग– श्वास, कास, राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, ज्वर, पार्श्वशूल आदि में ।

कूष्माण्ड अवलेह

निष्कुलीकृत्य कूष्माण्ड खण्डात्पलशतं पचेत् । निक्षिप्य द्विगुणं नीरमर्धशिष्टं च गृह्यते ॥
तानि कूष्माण्डखण्डानि पीडयेद्दृढवाससा । आतपे शोषयेत्किंचिच्छूलाग्रैर्बहुशो व्यधेत ॥
क्षिप्त्वा ताम्र कटाहे च दद्यादष्टपलं घृतम् । तेन किंचिद्भर्जयित्वा पूर्वोक्तं तज्जलं क्षिपेत् ॥
खण्डात्पलशतं दत्त्वा सर्वमेकत्र पाचयेत् । सुपक्वे पिप्पली शुण्ठी जीरकं द्विपलं पृथक् ॥
पृथक्पलार्धं धान्याकं पत्रैला मरिचं त्वचम् । चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र घृतार्धं क्षौद्रमावपेत् ॥
खादेदाग्निबलं दृष्ट्वा रक्तपित्ती क्षयी ज्वरी । शोष तृष्णावमिच्छर्दिश्वासकासक्षतातुरः ॥
कूष्माण्डकावलेहोऽयं बाल वृद्धेषु युज्यते । उरः सन्धानकृद्वृष्यो बृंहणो बलकृन्मतः ॥
(शा.म. 8/22-28)

घटक द्रव्य–
1. बीजरहित कूष्माण्ड (श्वेत) - 100 बल
   जल - 2 गुना (200 पल)
   अवशेष- 1/2
2. घृत - 8 पल
3. खण्ड - 100 पल
4. प्रक्षेप द्रव्य— पिप्पली - 2 पल
   शुण्ठी - 2 पल
   श्वेतजीरक - 2 पल
   धान्यक - 1/2 पल
   तेजपत्र - 1/2 पल
   छोटी एला - 1/2 पल
   मरिच - 1/2 पल
   त्वक् - 1/2 पल
5. शहद - 4 पल

निर्माण विधि– बीज रहित कूष्माण्ड के छोटे-छोटे टुकड़े कर शूल में वेध कर उसे 2 गुना जल में उबालते हैं जब आधा पानी शेष रहे तब इसे उतार लेते हैं। कूष्माण्ड को पानी से छान लेते हैं तथा इसे वस्त्र में रखकर हाथ से

Scanned with OKEN Scanner

दबाकर जल को निचोड़े लेते हैं। अब इसे धूप में अच्छी प्रकार से सुखा लेते है। तत्पश्चात् एक ताम्र की कड़ाही में घृत लेकर कूष्माण्ड के टुकड़ों को भर्जित करते हैं। पूर्वोक्त शेष जल को लेकर उसमें 100 पल चीनी लेकर चासनी निर्मित करते हैं। चासिनी निर्मित होने के पश्चात् इसमें कूष्माण्ड में टुकड़ों को डालकर सुपक्व होने तक पकाते हैं। तत्पश्चात् इसमें प्रक्षेप द्रव्य का चूर्ण इसमे मिला देते है। ठंडा होने पर शहद मिलाकर इसे सुरक्षित रख लेते हैं। यही कूष्माण्ड अवलेह है।

Research updates on Avaleha Kalpana

च्यवन प्राश में Vitamin C, Polyphenolic, compound, flavoroids आदि पाये जाते हैं। च्यवनप्राश में उपस्थित Phenolic compounds में Antioxident गुण होते हैं जो कि रसायन गुण के लिए कारक होते हैं। H.PTLC विश्लेषण में विभिन्न प्रकार से Biologically active phenolics जैसा कि Gallic acid, protocatechnic acid, catechin, caffeic acid, vanillic acid, chlorogenic acid, rutin, ferulic acid आदि की उपस्थिति का पता चला है जो कि च्यवन प्राश की Therapeutic activity के कारण है।[1]

आयुर्वेदिक फार्माकोपिया आफ इंडिया के अनुसार च्यवनप्राश में 0.5% से कम Gallic acid नहीं होना चाहिए। आधुनिक रिसर्च से पता चला है कि च्यवनप्राश में विटामिन, प्रोटीन, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, तथा Fe, Zn, Cu की उपस्थिति होती है।

Gupta A. तथा Prajapati P.K. ने, अपने एक अध्ययन जो कि विभिन्न प्रकार के अवलेहों का श्वास रोग पर प्रभाव के सन्दर्भ में किया गया था, यह पाया कि अवलेह जैसे- कंस हरीतकी, कण्टकारी अवलेह, भार्गी गुड अवलेह तथा वासावलेह का श्वास रोग (Bronchial asthama) में अच्छा प्रभाव है । इन्हें रोग तथा रोगी के अनुसार श्वास रोग में प्रयोग किया जा सकता है। यह अध्ययन I P G T & RA, जामनगर में किया गया था ।[2]

Gupta A. et al. ने अपने अध्ययन में वासावलेह का निर्माण वासा स्वरस तथा वासा क्वाथ से किया तथा इन दोनों की Analytical अध्ययन करने पर यह पाया कि इसमें Vasicine, Vasicinone नामक Alkaloid की उपस्थिति होती है जिसका Bronchodilation प्रभाव होता है।[3]

Market Survey

Market survey is the survey research and unit of analysis of the market for a particular product/service which includes the investigation into customer inclinations.

आजकल बाजार में विभिन्न प्रकार के अवलेह जैसे- च्यवनप्राश, वासावलेह, ब्रह्म रसायन, कण्टकारी अवलेह, अगस्त्य हरीतकी आदि विभिन्न प्रकार के Packing size जैसे- 250 gm, 500 gm या 1 kg में उपलब्ध है । इनका

1. Sharma R, Martins N, Kuca K, Chaudhary A, Kabra A, Rao M.M. Prajapati, P.K. Chyawanprash. A Traditional Indian Bioactive Health Supplement. Biomolecules : 2019 Apr 26;9(5):161 doi 10.3390/biom 9050161. PMID 31035513, PMCID:PMC 6571565.
2. Gupta and Prajapati : Clinical efficacy of different Avalehas in Bronchial Ashthma Ayu. 2011 Jul; 32(3)427-31 doi 10.4103/0974-8520-93928 PMID 22529664, PMCID:PMC 332 896.
3. Ankit Gupta, A.K. Chaudhary, P.K. Prajapati, Acomparative study of vasa Avaleha prepared by Swarasa & Kwatha, JRAS vol xxxv No. 1-4 Jan-Dec. 2014 pp 1-16.

निर्माण तथा मार्केटिंग विभिन्न प्रकार की फार्मा कम्पनी जैसे— डाबर, वैद्यनाथ, धूतपापेश्वर आदि द्वारा की जाती है। विभिन्न प्रकार के प्रचार माध्यमों द्वारा च्यवनप्राश की मार्केटिंग की जाती है। अकेले च्यवनप्राश का मार्केट लगभग 700 करोड़ रूपये का है तथा यह तेजी से बढ़ रहा है।

Market survey of Avalcha can be done on following points–

1. Name of the product
2. Reference– According to different reference availibility
3. Name of the Pharma company (Manufacturing it)– Total number of Pharma company.
4. Availability in the market/online availability
5. Other dosage form Availability of like candy, Chocklate granules etc.
6. Packaging size
7. Distribution Channel
8. Cost of product (of Different Pharmacies)

स्नेह कल्पना

स्नेह कल्पना का उद्देश्य

आयुर्वेद विधा में रोगों के चिकित्सार्थ स्नेह कल्पना का विशेष महत्व है । आयुर्वेद के सभी मुख्य संहिता ग्रन्थों में रोगों के चिकित्सा के लिए स्नेह कल्पना का प्रयोग किया है । घृत, तैल, वसा तथा मज्जा इन चार प्रकार के स्नेहों का उपयोग विभिन्न औषधियों के साथ निर्मित कर प्रयुक्त किया जाता है । इन स्नेहों में से एक स्नेह का प्रयोग या दो स्नेह को मिलाकर (यमक रूप में) तीन स्नेह को मिलाकर (त्रिवृत रूप में) या चारों स्नेहों को एक साथ मिलाकर महास्नेह के रूप में प्रयोग किया जाता है । चरक संहिता से विभिन्न प्रकार के स्नेह, एकल तथा संयोग रूप में, निम्न है—

घृत— रोहिण्याद्य घृत, वासाघृत, शतावर्यादि घृत आदि ।

तैल— चन्दनादि तैल, अणु तैल, मूलक तैल, बला तैल आदि ।

यमक रूप में— बलादि यमक, दशमूल मज्जा स्नेह, वसा स्नेह आदि ।

महास्नेह रूप में— त्रिफलादि महास्नेह, जीवकादि महास्नेह , चतुःस्नेह अनुवासन बस्ति आदि ।

स्नेह कल्पना का प्रयोग पान, अभ्यंग तथा नस्य के रूप में किया जाता है। पान के शरीर की आभ्यान्तर व्याधियों, अभ्यंग द्वारा बलाधान तथा वातशामक तथा नस्य के द्वारा शिरोगत व्याधियों के रामनार्थ इनका प्रयोग किया जाता है। तीनों दोषों में वात को प्रमुख माना गया है तथा वात के शमन हेतु स्नेह को उत्तम कहा गया है। इस प्रकार स्नेह के माध्यम से औषधि का प्रयोग इसका मुख्य उद्देश्य है। स्नेह कल्पना में औषधि में उपस्थिति Water soluble के साथ-साथ Fal soluble content भी आने के कारण तथा स्नेह के Blood brain barrier के Cross करने के कारण इस कल्पना का अपना अलग ही उद्देश्य है।

Scanned with OKEN Scanner

परिभाषा

कल्क द्रव्य की स्नेह (घृत, तैल आदि) तथा द्रव (जल, स्वरस, क्वाथ क्षीर आदि) के साथ एक विशेष मात्रा में लेकर पाक करने के पश्चात् प्राप्त औषधि ही स्नेह कल्प कही जाती है ।

स्नेह निर्माण हेतु तीन घटक द्रव्यों की आवश्यकता होती है ।

1. **स्नेह–** यथा घृत, तैल, वसा या मज्जा । इनमें से एक या एक से अधिक स्नेह को लेकर स्नेह पाक या स्नेह कल्पना की जा सकती है ।
2. **द्रव–** जैसे-जल, क्वाथ, स्वरस, दूध, दधि आदि । इसमें सन्दर्भ के निर्देशानुसार द्रवों का ग्रहण किया जाता है । यदि किसी द्रव का उल्लेख न हो तो जल का द्रव रूप में ग्रहण किया जाता है ।
3. **कल्क–** औषधि को कल्क रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।

स्नेह निर्माण की सामान्य विधि

कल्काच्चतुर्गुणीकृत्य घृतं वा तैल मेव वा । चतुर्गुणे द्रवे साध्यं तस्य मात्रा पलोन्मिता ॥
(शा.म. 9/1)

औषधि कल्क से चार गुना घी या तैल लेकर तथा स्नेह से चार गुना द्रव लेकर सिद्ध करते हैं । यही स्नेह पाक की सामान्य विधि है । इसकी प्रयोज्य मात्रा एक पल है ।

स्नेह निर्माण निम्न Steps में की जाती है—

1. सर्वप्रथम एक पात्र में स्नेह को मन्दाग्नि पर गर्म करते है ।
2. तत्पश्चात् इसे अग्नि से उतार कर सावधानी पूर्वक कल्क डालते हैं तथा चलाते हैं ।
3. पुनः इसमें द्रव डालकर सिद्धि लक्षण आने तक पाक करते हैं ।
4. स्नेह सिद्ध हो जाने के पश्चात् इसे सूती वस्त्र से छानकर सुरक्षित रख लेते हैं ।

स्नेह निर्माण के विशेष नियम

स्नेह भेषज तोयानां प्रमाणं यत्र नेरितम् । तत्रायं विधिरास्थयो निर्दिष्टे तद्वदेव तु ॥
(सु.चि. 31/9)

स्नेह, भेषज (कल्क हेतु) तथा जल का प्रमाण जहाँ पर न बताया गया हो वहाँ पर कल्क से चार गुना स्नेह तथा स्नेह से चार गुना जल लेना चाहिए ।

अनुक्ते द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिलं मतम् । कल्कक्वाथावनिर्देशे गणात्तस्मात् प्रयोजयेत् ॥
(सु.चि. 31/10)

यदि द्रव का उल्लेख न होतो जल का ग्रहण करना चाहिए । इसी प्रकार यदि कल्क तथा क्वाथ हेतु औषधियों का उल्लेख न हो तो स्नेह पाक हुते वर्णित प्रकरण अनुसार उस गण की औषधियों का ग्रहण करना चाहिए ।

ऐसी ही वर्णन आचार्य चरक ने किया है यथा—

जलस्नेहौषधानां तु प्रमाणं यत्र नेरितम् । तत्र स्यादौषधात् स्नेहः स्नेहात्तोयं चतुर्गुणम् ॥
(च.क. 12/101)

स्नेह साधन हेतु क्वाथ परिभाषा— आचार्य शार्ङ्गधर ने औषधियों के मृदु, मध्यम, कठिन तथा अतिकठिन के अनुसार जल की विभिन्न मात्रा ग्रहण करने का उल्लेख किया है । यथा—

चतुर्गुणं मृदुद्रव्ये कठिनेऽष्टगुणं जलम् । तथा च मध्यमे द्रव्ये दद्यादष्टगुणं पयः ॥
अत्यन्त कठिने द्रव्ये नीरं षोडशिकं मतम् ॥ (शा.म. 9/3)

अर्थात् मृदु द्रव्य जैसे गुडुची आदि हो चार गुना, कठिन द्रव्य जैसे दशमूल आदि होने पर आठगुना, मध्यम द्रव्य जैसे आरग्वध आदि होने पर आठ गुना तथा कठिन द्रव्यं जैसे पद्यमक आदि होने पर सोलह गुना जल क्वाथ निर्माण हेतु प्रयुक्त करना चाहिए ।

द्रव्य मात्रा के अनुसार क्वाथ हेतु जल मात्रा

1 कर्ष से 1 पल (1 तोला से 4 तोले होने पर) – 16 गुना

1 पल से 1 कुड़व (4 तोले से 16 तोला तक) – 8 गुना

1 प्रस्थ से 1 खारी (64 तोले से 16384 तोले तक) – 4 गुना जल ग्रहण करना चाहिए । यथा—

कर्षादितः पलं यावत्क्षिपेत्षोडशिकं जलम् । तदूर्ध्वं कुडवं यावद्भवेदष्टगुणं पयः ॥
प्रस्थादितः क्षिपेन्नीरं खारी यावच्चतुर्गुणम् ॥ (शा.म. 9/4-5)

एक से अधिक द्रव होने पर स्नेहपाक निर्देश

सामान्य रूप से स्नेह पाक में यदि किसी एक द्रव डालने का निर्देश है तो उसे स्नेह से चार गुना मात्रा में लेकर स्नेहपाक किया जाता है । लेकिन यदि एक से ज्यादा द्रव द्रव्यों से स्नेह पाक का उल्लेख है तो इसके लिए आचार्य शार्ङ्गधर ने निम्न उल्लेख किया है ।

द्रवाणि यत्र स्नेहेषु पञ्चादीनि भवन्ति हि । तत्र स्नेहसमान्याहुर्यथापूर्वं चतुर्गुणम् ॥
(शा.म. 9/8)

यदि स्नेह साधन करने हेतु पांच द्रवों का ग्रहण करने का उल्लेख हो जैसे स्वरस, क्वाथ, नीर दुग्ध तथा गोमूत्र तो इस स्थिति में प्रत्येक द्रव को स्नेह की मात्रा के बराबर ग्रहण करते हैं ।

विशेष– एक से अधिक द्रव द्रव्य का उल्लेख होने पर दोनों द्रवों की किसी मात्रा ग्रहण करनी चाहिए इस विषय पर आचार्य जेज्जट का मत इस प्रकार है । यदि एक द्रव हो तो स्नेह से चार गुना, दो द्रव हो तो दोनों को मिलाकर चार गुना, इसी प्रकार तीन द्रव होने पर तीन को मिलाकर चार गुना ग्रहण करना चाहिए । जहाँ पर पाँच या अधिक द्रव हो तो प्रत्येक द्रव स्नेह के समान मात्रा में लेनी चाहिए । यथा— आचार्य जेज्जट

एक द्वित्रिद्रवैर्द्रव्यैः कुर्यात् स्नेहाच्चतुर्गुणं । क्षीरं स्नेहसमं दद्यात् चतुर्भिश्च चतुर्गुणम् इति ॥

Scanned with OKEN Scanner

अस्यायमर्थः यत्रैको द्रवैस्तत्रैकेन चातुर्गुण्यं, एवं द्वाभ्यां, त्रिभिर्मिलित्वा चातुर्गुण्यमित्यर्थः। यत्र पञ्चाधिकानि भवन्ति तत्र स्नेसमानीति पूर्वार्धः।

विभिन्न द्रवों से स्नेहपाक में कल्क की मात्रा

स्नेह पाक हेतु विभिन्न प्रकार के द्रव जैसे- क्वाथ, जल, मांसरस, दुग्ध, दही आदि प्रयुक्त किये जाते है। इन द्रवों से स्नेहपाक करने के लिए कल्क की मात्रा सामान्य परिभाषा जिसके अनुसार कल्क स्नेह का चतुर्थांश लिया जाता है, इससे भिन्न होती है। इसकी मात्रा का वर्णन आचार्य शार्ङ्गधर ने निम्न किया है। यथा—

अम्बुक्वाथ रसैर्यत्र पृथक्स्नेहस्य साधनम्। कल्कस्त्यांशं तत्र दद्याच्चतुर्थं षण्ठमष्टमम्॥
दुग्धे दधिन्रसे तक्रे कल्को देयोऽष्टमांशकः। कल्कस्य सम्यकपाकार्थं तोयमत्र चतुर्गुणम्॥

(शा.म. 9/6-7)

इसे निम्न रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है—

प्रयुक्त द्रव द्रव्य	कल्क की मात्रा
1. अम्बु (जल)	स्नेह से 1/4
2. क्वाथ	स्नेह से 1/6
3. स्वरस	स्नेह से 1/8
4. दूध, दही, मांसरस, तक्र	स्नेह से 1/8

उपरोक्त स्नेह पाक प्रक्रिया में जहाँ स्वरस, दूध, दही, मांसरस तथा तक्रादि से स्नेह पाक करना हो तो ऐसी स्थिति में सम्यक् पाक हेतु स्नेह से चार गुना जल अवश्य मिलाना चाहिए। ऐसा करने से वीर्याधान भी हो होता है। यथा—

स्वक्षीरमाङ्गल्यैः पाको यत्रेरितः क्वचित्। जलं चतुर्गुणं तत्र वीर्याधानार्थमावपेत्॥
न मुञ्चति रसं द्रव्यं क्षीरादिभिरूपस्कृतम्। सम्यक पाको न जायेत तस्मात्तोयं चतुर्गुणम्॥

(वैद्यक परिभाषा प्रदीप)

केवल क्वाथ से स्नेहपाक– जहाँ पर केवल क्वाथ से स्नेह पाक का निर्देश हो वहाँ पर क्वाथ द्रव्यों को स्नेह से चतुर्थांश लेकर कल्क रूप में जल से पीसकर प्रयुक्त करना चाहिए। यथा—

क्वाथेन केवलेनैव पाको यत्रेरितः क्वचित्। क्वाथद्रव्यस्य कल्कोऽपि तत्र स्नेहे प्रयुज्यते॥

(शा.म. 9/9)

केवल कल्क द्रव्य से स्नेहपाक– यदि किसी योग में या जहाँ पर केवल कल्क द्रव्य का उल्लेख हो तो ऐसी स्थिति में स्नेहपाक करते समय कल्क को स्नेह से चतुर्थांश ग्रहण करते हैं। तथा इसे जल से पीसकर तब प्रयुक्त करते हैं तथा द्रव के रूप में चार गुना जला प्रयुक्त करते हैं।

द्रव्येण केवलनैव स्नेहपाको भवेद्यदि। तत्राम्बुपिष्टः कल्कः स्याज्जलं चात्र चतुर्गुणम्॥

(शा.म. 9/8)

कल्क हीन स्नेहसाधन विधि– जिस स्नेह के साधन में कल्क का निर्देशन हो, वहाँ बिना कल्क के भी स्नेह पाक किया जा सकता है। यथा —

कल्कहीनस्तु यः स्नेहः स साध्यः केवले द्रवे। (शा.म. 9/10)

पुष्प कल्क से स्नेह पाक विधि

पुष्पकल्कस्तु यः स्नेहस्तत्र तोयं चतुर्गुणम्। स्नेहे स्नेहाष्टमांशश्च पुष्पकल्कः प्रयुज्यते॥

(शा.म. 9/11)

जो स्नेह केवल पुष्प कल्क के द्वारा सिद्ध किया जाय वहाँ पर स्नेह का अष्टमांश (1/8) पुष्प कल्क, लेना चाहिए तथा जल चार गुना लेकर स्नेह पाक करना चाहिए।

तापमान का महत्व

स्नेह को मध्यम अग्नि 90^0C-110^0C पर ही पाक करना चाहिए। अधिक तापमान पर दूध आदि के खराब होने का भय रहता है। तथा औषधि द्रव्य में उपस्थित Alkaloids आदि के Destroy होने की संभावना अधिक रहती है। इसिलिए आयुर्वेदिक शास्त्र में गन्ध द्रव्यों को पाक के अन्त में डालने को लिखा है।

घृत मूर्च्छन

पथ्याधात्रीविभीतैर्जलधररजनीमातुलुङ्गद्रवैश्चसर्वैरितैः सुपिष्टैः पलकपरिमितैर्मन्दमन्दानलेन।
आज्य प्रस्थं विफेनं परिचपलगतं मूर्च्छयेद्वैद्यराजस्तस्मादामोपदोषंहरति च सहसा वार्यवान् सौख्यदापि॥

(भै.र.ज्वर. 1285)

घृत हेतु मूर्च्छन द्रव्य– 1. हरीतकी 2. आमलकी 3. विभीतक 4. मुस्त 5. हल्दी 6. मातुलुंग निम्बू

उपरोक्त प्रत्येक द्रव्य एक पल (4 तोला), घृत एक प्रस्थ (64 तोले) तथा जल एक प्रस्थ मात्रा ग्रहण करना चाहिए।

मूर्च्छन विधि– सर्वप्रथम एक स्टेनलेस स्टील के भगौने में घृत लेकर उसे मन्दाग्नि पर गर्म करते है। जब यह फेन रहित हो जाय तो इसे अग्नि से उतार कर कल्क द्रव्य तथा जल को डालकर मन्दाग्नि पर सावधानी पूर्वक पाक करना चाहिए। जब ऐसा करने से घृत का आमदोष नष्ट हो जाता है तथा यह वीर्यवान एवं सुखदायक हो जाता है।

मूर्च्छन का फल

उपरोक्त मूर्च्छन प्रकरण में निम्न प्रभावों या फल को कहा गया है—

1. आमदोष नष्ट हो जाता है।
2. तैल का दुर्गन्ध दूर होकर अच्छे वर्ण का हो जाता है। एवं सुगन्धित हो जाता है।
3. घृत वीर्यवान तथा सुखदायक हो जाता है।

तिल तैल मूर्च्छन

तैलं कृत्वा कटाहे दृढतरविमले मन्दमन्दानलैस्तत् तैलं निष्फेनभावं गतमिह च यदा शैत्यभावं समेत्य।
मञ्जिष्ठारात्रिलोधैर्जलधरनलिकैः सामलैः साक्षपथ्यैः सूचीपुष्पाङ्घ्रनीरैरुपहितकथितैर्गन्धयोगं जहाति॥

Scanned with OKEN Scanner

तैलस्येन्दुकलांशिकैकविकसा भागोऽपि मूर्च्छांविधौ ये चान्ये त्रिफलापयोदरजनीह्रीबेरलोध्रान्विताः ।
मूर्वीपुष्पवटावरोहनलिकास्तस्याश्च पादांशिकादुर्गन्धं विनिहन्ति तैलमरुणं सौरभ्यमाकुर्वते ॥
(भै.र.ज्वर. 1286-87)

मूर्च्छन द्रव्य– 1. मंजिष्ठा 2. हरिद्रा 3. लोध्र
4. मुस्ता 5. नलिका 6. आमलकी
7. विभीतक 8. हरीतकी 9. केतकी पुष्प
10. वटांकुर 11. ह्रीवेर 12. नीर

मात्रा– मंजिष्ठा तैल की मात्रा से $^1/_{16}$ भाग तथा शेष द्रव्य तेल से $^1/_4$ भाग लेना चाहिए ।

मूर्च्छन विधि

लोहे के एक स्वच्छ कड़ाही में तिल तैल को डालकर उसे मन्दाग्नि पर गर्म करते है । ऐसा करने से तेल में फेन निकलता है, तत्पश्चात् फेन समाप्त हो जाता है । जब फेन समाप्त हो जाय तब उसमें कहे गये कल्क द्रव्य यवकुट स्वरूप में तैल में डाल देते है पुनः इसमें पानी डालकर पाक करते हैं । जब सम्पूर्ण रूप से पानी जाल जाय तथा तैल दुर्गन्ध रहित हो जाय तो इसे उतार कर छान लेते हैं । यही तिल तैल मूर्च्छना की विधि है । इस मूर्च्छित तिल तैल को तैल निर्माणार्थ प्रयुक्त करते है । तैल मूर्च्छना करने से तैल सुगन्धित तथा लाल वर्ण का हो जाता है । तैल का आमदोष भी नष्ट हो जाता है ।

कटुतैल मूर्च्छन

वयस्थारजनीमुस्तबिल्वदाडिमकेशरैः । कृष्णजीरकह्रीबेरनलिकैः सविभीतकैः ॥
एतैः समांशैः प्रस्थे च कर्षमात्रं प्रयोजयेत् । अरुणाद् द्विपलं तत्र तोयञ्चाढकसम्मितम् ॥
कटुतैलं पचेत्तेन चामदोषहरं परम् ॥ (भै.र.ज्वर. 1288-89)

मूर्च्छन द्रव्य– 1. हरीतकी 2. हरिद्रा 3. मुस्ता 4. बिल्वफल
5. दाडिम बीज 6. नागकेशर 7. कृष्णजीरक 8. ह्रीबेर
9. नलिका 10. विभीतक 11. मंजिष्ठा

यहाँ पर मंजिष्ठा 2 पल मात्रा तथा शेष 10 द्रव्यों को 1 कर्ष अर्थात् मंजिष्ठा आठ तोला तथा अन्य द्रव्य एक तोला मात्रा में ग्रहण करना चाहिए तथा इनका कल्क बना लेना चाहिए । तैल को एक प्रस्थ अर्थात् 64 तोले तथा जल को एक आढक (256 तोले) लेना चाहिए ।

विधि– सर्वप्रथम तैल को मन्दाग्नि पर गर्म करना चाहिए । तत्पश्चात् इसे अग्नि से उतार कर कल्क औषधियों को तैल से डालना चाहिए । इसके बाद इसमें जल डालकर यथाविधि पाक करने से तैल का आमदोष नष्ट हो जाता है ।

एरण्ड तैल मूर्च्छन

विकसा मुस्तकं धान्यं त्रिफला वैजयन्तिका ।ह्रीवेरवनखर्जूरवटशुङ्गा निशायुगम् ॥
नलिका भेषजं देयं केतकी च समं समम् ।प्रस्थे देयं शाणमितं मूर्च्छने दधिकाञ्जिकम् ॥
(भै.र.ज्वर. 1290-91)

मूर्च्छन द्रव्य– 1. मंजिष्ठा 2. मुस्त 3. धनियाँ 4. आमलकी
5. हरीतकी 6. विभीतकी 7. अरणी 8. ह्रीवेर
9. वनखजूर 10. वटशुंङ्ग (प्ररोह) 11. हरिद्रा 12. दारूहरिद्रा
13. नलिका 14. शुण्ठी 15. केतकी पुष्प 16. दधि
17. काञ्जी

मात्रा– मंजिष्ठा से केतकी पुष्प पर्यन्त द्रव्यों को 1 शाण अर्थात् 3 ग्रा. दधि 2 प्रस्थ (128 तोला), काञ्जी 2 प्रस्थ (128 तोला), एरण्ड तैल एक प्रस्थ (64 तोला) तथा जल एक आढक (256 तोला) लेना चाहिए ।

विधि– सर्वप्रथम एक लोहे की कड़ाही में एरण्ड तैल लेकर उसे मन्दाग्नि पर गर्म करते है । जब यह अच्छी प्रकार से गर्म हो जाय तथा फेन समाप्त हो जाय तो इसे अग्नि से उतार लेते हैं । पुनः इसमें कल्क द्रव्यों को डाल देते हैं । तत्पश्चात् इसमें दधि, काञ्जी तथा जल डालकर पाक करते हैं । जब यह अच्छी प्रकार से सिद्ध हो जाय तो इसे उतारकर छाने लेते हैं । यही मूर्च्छित एरण्ड तैल है ।

उपरोक्त मूर्च्छन द्रव्यों को स्मरणार्थ निम्न तालिका में प्रदर्शित किया जा रहा है—

घृत मूर्च्छन में प्रयुक्त द्रव्य	तिल तैल मूर्च्छन में प्रयुक्त द्रव्य	कटु तैल मूर्च्छन में प्रयुक्त द्रव्य	एरण्ड तैल मूर्च्छन में प्रयुक्त द्रव्य
हरीतकी	हरीतकी	हरीतकी	हरीतकी
आमलकी	आमलकी	बिल्वफल	आमलकी
विभीतकी	विभीतकी	विभीतकी	विभीतकी
नागरमोथा	नागरमोथा	नागरमोथा	नागरमोथा
हरिद्रा	हरिद्रा	हरिद्रा	हरिद्रा
मातुलुंगस्वरस	मंजिष्ठा	मंजिष्ठा	मंजिष्ठा
	लोध्र	दाडिम बीज	अरणी
	नलिका	नलिका	नलिका
	केतकी पुष्प	कृष्णजीरक	केतकीपुष्प
	ह्रीबेर	ह्रीबेर	ह्रीबेर
	वटांकुर	नागकेसर	वटप्ररोह
			वन खर्जूर
			शुण्ठी
			दारूहरिद्रा
			धनियाँ
			दधि एवं कांजी

Scanned with OKEN Scanner

स्नेह सिद्धि लक्षण

आचार्य सुश्रुत ने स्नेह सिद्धि के निम्न लक्षण बताये है—

शब्दस्योपरमे प्राप्त फेनस्योएशमे तथा। गन्धवर्णरसादीनां सम्यत्तौ सिद्धिमादिशेत्॥
घृतस्यैव विपक्वस्य जानीयात् कुशलो भिषक्। फेनोऽतिमात्रं तैलस्य शेषं घृतवदादिशेत्॥

(सु.चि. 31/12-13)

स्नेह सिद्धि की पहचान निम्न लक्षणों से किया जाता है—

1. स्नेह को अग्नि पर डालने से उसमें चट-चट की आवाज नहीं आती है।
2. पाक हेतु प्रयुक्त औषध कल्क के गन्ध, वर्ण तथा रस से स्नेह समृद्ध (सम्पत्त) अर्थात युक्त हो जाता है।
3. घृत में फेन की शान्ति तथा तैल से फेन अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है।

विशेष– आचार्य डल्हण के अनुसार पकते समय स्नेह में दो प्रकार के शब्द होते हैं। प्रथम द्रव से तथा दूसरा कल्क में। शब्दस्य उपरम का विशेष अर्थ है कि द्रव से शब्द नहीं आना चाहिए। पंच इन्द्रिय अर्थों में स्पर्श से प्रधान रूप से स्नेह पाक का ज्ञान होता है तथा शेष अर्थों से स्नेह सिद्धि लक्षणों का ज्ञान होता है।

स्नेह पाक प्रकार तथा उसके लक्षण

आचार्य सुश्रुत ने स्नेह पाक तीन प्रकार का माना है—

1. मृदु पाक
2. मध्य पाक
3. खर पाक

तथा इन तीनों के लक्षणों का वर्णन निम्न किया है—

तत्र स्नेहौषधि विवेकमात्रं यत्र भेषजं स मृदुरिति, मधूच्छिष्टमिव विशदमविलेपि यत्र भेषजं स मध्यमः, कृष्णमवसन्नमीषद्विशदं चिक्कणं च यत्र भेषजं स खर इति;

उपरोक्त स्नेह पाक किस प्रकार का है, इसका निर्णय कल्क की स्थिति को स्पर्श कर निर्धारित किया जाता है। जब भेषज (कल्क) डाले गये कल्क से थोड़ा सा पृथक (अन्तर) होता है तब इसे मृदु पाक से जाना जाता है। जब कल्क मोम सदृश विशद तथा अविलेपी होता है तब मध्यम पाक की स्थिति होती है। तथा जब कल्क छूने पर कुछ भर्जित तथा कुछ विशद तथा चिक्कण हो तो इसे खर पाक की स्थिति मानी गयी है। इसके पश्चात दग्ध स्नेह की स्थिति आती है इसे पुनः सिद्ध करना चाहिए।

आचार्य शार्ङ्गधर ने इसे निम्न वर्णित किया है—

स्नेह पाकस्त्रिधा प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा। ईषत्सरसकल्कस्तु स्नेहपाको मृदुर्भवेत्॥
मध्यपाकस्य सिद्धिश्च कल्के नीरसकोमलः। ईषत्कठिनकल्कश्च स्नेहपाको भवेत्खरः॥

तदूर्ध्वं दग्धपाकः स्याद्दाहकृन्निष्प्रयोजनः॥ (शा.म. 9/14-16)

विभिन्न आचार्यों द्वारा वर्णित स्नेह पाक तथा उसके लक्षण

आचार्य चरक	आचार्य सुश्रुत	आचार्य वाग्भट्ट	आचार्य शार्ङ्गधर
मृदुपाक-तुल्ये कल्केन निर्यासे	मृदुपाक-विवेकमात्रं भेषज	मन्द-कल्क के समान किट्ट	मृदुपाक-ईषत् सरस कल्क
मध्यपाक-संयाव हलवे जैसा	मध्यपाक-मोम सदृश,	चिक्कण-मोम	मध्यपाक-कल्क नीरस
निर्यास, दर्वी पर चिपकता नहीं	विशद अविलेपी	सदृश किट्ट	कोमल
खरपाक-निर्यास शीर्यमाण तथा वर्ती बनती है	खरपाक-चिक्कण कृष्ण तथा ईषद् विशद	खरचिक्कण-कृष्ण तथा वर्ति बनती है।	खरपाक-कल्क ईषत् कठिन
	उपरोक्त के अतिरिक्त दग्ध पाक भी कहा है।	दग्ध पाक भी कहा है।	इसके अतिरिक्त आमपाक एवं दग्ध पाक का उल्लेख है।

पत्र (गन्ध पाक)

गन्ध द्रव्यों से पाक को गन्धपाक या पत्रपाक कहा गया है। कुछ लोग पुष्प कल्क प्रयोग के स्थान पर कल्क का ग्रहण करते है तथा इसे पत्र कल्क प्रक्षेप से वर्णित करते है। जैसे—

गन्धनिर्यास पुष्पाणां सिद्धशीतेऽवतारिते। प्रक्षेपो गन्धवृद्धर्थं पत्रकल्कं तु तद्विदुः॥

(आढमल्ल टीका शा.म. 9/11)

पत्र कल्क का उल्लेख आचार्य चरक ने चिकित्सास्थान 28 में किया है।

त्वाचकुन्दुरूकर्पूरतुरूष्क श्रीनिवासकैः। लवङ्गनखकंकोलकुष्ठमांसी प्रियङ्गुभिः॥
स्थौणेयतगरध्यामवचा मदनपल्लवैः। सनागकेशरैः सिद्धे क्षिपेच्चात्रावतारिते॥
पत्रकल्कं ततः पूतं विधिना तत् प्रयोजयेत्। (च.चि. 28/153-155)

पत्र कल्क पर आचार्य चक्रपाणि ने निम्न ठीक की है—

पत्रकल्कमिति सुगन्धित्वादस्य तैलस्य गन्धशास्त्रपरिभाषाया पत्र कल्को देय इत्युच्यते; गन्धशास्त्रे च चूर्ण स्वरसपुष्पाणां सिद्धशीते ऽवतारिते। दीयते गन्धवृद्धर्यं पत्र कल्को मनीषिभिः॥

अर्थात् तैल सिद्ध होने के पश्चात् शीत होने पर उसके गन्धवृद्धि हेतु गन्ध द्रव्य का चूर्ण, स्वरस या पुष्प मिलाने को पत्र कल्क कहा जाता है। यहाँ पर कर्पूर आदि पत्र कल्क के रूप में प्रयुक्त है।

चक्रदत्त के अनुसार पत्र कल्क स्वरूप

पक्वपूतेऽप्पुष्णा एवं सम्यक् पेषणवर्तितम्। दीयते गन्धवृद्धयर्थं पत्रकल्कं तदुच्यते॥

(चक. वातव्याधि 309)

Scanned with OKEN Scanner

तैल पाक हो जाने पर छानने के पश्चात् उष्णावस्था में कस्तूरी आदि गन्ध द्रव्यों को पीसकर जो गन्धवृद्धि के लिये डाला जाता है, उसे पत्र कल्क कहते हैं।

स्नेह पाक में दिन मर्यादा– स्नेह का पाक कितने दिनों में किया जाय इसके लिए शास्त्रों में दो सन्दर्भों का उल्लेख मिलता है।

1. आचार्य शार्ङ्गधर ने घृत, तैल तथा गुड़ आदि को एक से अधिक दिन में पाक करने का निर्देश दिया है। आचार्य के अनुसार ऐसा करने से अर्थात् उषित (बासी) कर पाक करने से उसमें विशेष गुणों का संचय होता है। यथा—

घृततैलगुडादीश्च साधयेन्नैकवासरे। प्रकुर्वन्त्युषिता ह्येते विशेषाद्गुण संचयम्॥

(शा.म. 9/18)

2. स्नेह पाक में प्रयुक्त विभिन्न द्रवों के अनुसार पाक काल भिन्न बताया गया है। यथा—

क्षीरे द्विरात्रं स्वरसेत्रिरात्रं तक्रारनालदिषु पञ्चरात्रम्।
स्नेहं पचेद् वैद्यवरः प्रयत्नादित्याहुरेके भिषजः प्रवीणाः॥
द्वादशाहन्तु मूलानां वल्लीनां क्रममेव च। एकाहं व्रीहिमांसानां पाकं कुर्याद्विचक्षणः॥

(वैद्यक परिभाषा प्रदीप 3/26-27)

इसे निम्न रूप में दर्शाया जा सकता है—

1. क्षीर	–	2 रात्रि में
2. स्वरस	–	3 रात्रि में
3. तक्र, आरनाल, गोमूत्र	–	5 रात्रि में
4. मूल तथा लताओं से	–	12 दिन में
5. व्रीहिधान्य तथा माँसरस	–	1 दिन में

सवीर्यता अवधि– 3 साल

फलघृत

त्रिफला मधुकं कुष्ठं द्वे निशे कटुरोहिणी॥
वटङ्गं पिप्पली मुस्तं विशाला कट्फलं वया। द्वे मेदे द्वे च काकोल्यौ सारिवे द्वे प्रियङ्गुका॥
शतपुष्पा हिङ्गु रास्ना चन्दनं रक्तचन्दनम्। जातीपुष्पं तुगाक्षीरी कमलं शर्करा तथा॥
अजमोदा च दन्ती च कल्कैरेतैश्च कार्षिकैः। जीवद्वत्सैकवर्णाया घृत प्रस्थं च गोः क्षिपेत्॥
चतुर्गुणेन पयसा पचेदारण्यगोमयैः। सुतिथौ पुष्यनक्षत्रे भृद्भाण्डे ताम्रजे तथा॥
ततः बिवेच्छुभदिने नारी व पुरुषोऽथवा। एतत्सर्पिर्नरः पीत्वा स्त्रीषु नित्यं वृषायते॥
पुत्रानुत्पादयेद्भीभान्वन्ध्यादि लभते सुतम्। अनायुषं या जनयेद्या च सूता पुनः स्थिता॥
पुत्रं प्राप्नोति सा नारी बुद्धिमन्तं शतायुष्म्। एतत्फल घृतं नाम भारजेन भाषितम्॥

(शा.म. 9/79-86)

घटक द्रव्य

1. कल्क द्रव्य–

1. त्रिफला	2. मधुक	3. कुष्ठ
4. हरिद्रा	5. दारूहरिद्रा	6. कटुरोहिणी
7. विडंग	8. पिप्पली	9. मुस्त
10. विशाला	11. कटफल	12. वचा
13. मेदा	14. महामेदा	15. काकोली
16. क्षीरकाकोली	17. श्वेत सारिवा	18. कृष्ण सारिवा
19. प्रियंगु	20. शतावरी	21. हिङ्गु
22. रास्ना	23. चन्दन	24. रक्त चन्दन
25. जाती पुष्प	26. वंशलोचन	27. कमल
28. शर्करा	29. अजमोदा	

प्रत्येक द्रव्य 1 कर्ष की मात्रा में

2. घृत– 1 प्रस्थ (ऐसी गाय जिसका बछड़ा जीवित हो तथा एक वर्ष का हो)।

3. दूध– 4 प्रस्थ

निर्माण विधि— सर्वप्रथम घृत को मिट्टी या ताम्र पात्र में लेकर इसे गर्म करते हैं। तत्पश्चात् कल्क द्रव्य मिलाते हैं पुनः इसके क्षीर मिलाते हैं। क्षीर के सम्यक् पाक हेतु जल भी क्षीर की मात्रा समान मिलाकर स्नेह सिद्ध लक्षण आने तक मन्दाग्नि पर पाक करते हैं। तत्पश्चात् इसे छान लेते है। इस घृत का निर्माण पुण्य नक्षत्र में करना चाहिए। यह फल घृत भारद्वाज ऋषि द्वारा प्रणीत है।

क्षीरबला तैल

बला कल्क कषायाभ्यां तैल क्षीरसमां पचेत्। सहस्त्रशतपाकं तद् वातासृग्वातरोगनुत्॥
रसायनं मुख्यतममिन्द्रियाणां प्रसादनम्। जीवनं बृंहणं स्वर्यं शुक्रासृग्दोषनाशनम्॥

(अ.ह.चिकि. 22/45-46)

घटक द्रव्य–

1. बला कषाय	–	16 भाग
2. बला कल्क	–	1 भाग
3. तैल	–	4 भाग
4. क्षीर	–	4 भाग
5. जल	–	16 भाग

निर्माण विधि— तैल को एक स्टेनलेस स्टील भगौने में लेकर गर्म करते हैं। तत्पश्चात् इसमें कल्क डालकर चलाते हैं। पुनः इसमें बला कषाय तथा क्षीर डालकर पाक करते हैं। स्नेह सिद्धि लक्षण आने पर छान लेते हैं। तथा प्राप्त स्नेह को पुनः पाक करते हैं। इस तरह या प्रक्रिया सौ बार या एक हजार बार करते हैं।

मात्रा– 12 ग्रा. (A.F.I. Part-I P. 379)

अनुपान– दूध या गर्म जल

Scanned with OKEN Scanner

आवर्तना सिद्धान्त

आवर्तन शब्द का अर्थ है कि किसी कार्य का बार-बार होना। आवर्तना की प्रक्रिया में हम स्नेह पाक की प्रक्रिया को बार-बार कराते हैं। एक बार स्नेह सिद्धि लक्षण आने पश्चात् इसी स्नेह को पुनः सिद्ध किया जाता है। आवर्तना में प्रत्येक बार कल्क या क्वाथ द्रव्य को नया लिया जाता है जबकि स्नेह जो सिद्ध हो गया है उसे ही लेते है। आवर्तना के निम्न प्रभाव है। आचार्य चरक अनुसार—

इत्येते रसायनाः स्नेह वस्तयः सति विभवे शतपाकाः । सहस्रपाक वा कार्या वीर्य बलाधानार्थमिति ॥

(च.सि. 12/19)

1. कल्क द्रव्य तथा में उस्थित वीर्य (Phytochemicals) स्नेह में अच्छी प्रकार से आ जाते हैं।
2. स्नेह का बल (Therapeutic efficacy) बढ़ जाती है जिससे इसे नम मात्रा में प्रयोग किया जाता है।
3. बार-बार पाक की प्रक्रिया से स्नेह का Absorption तथा इसकी Bio-availability बढ़ जाती है।

आवर्तना का वर्णन चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टांग संग्रह में उपलब्ध है जहाँ पर दश पाक (10 बार), शतपाक (100 बार) तथा सहस्रपाक (1000 बार) करने का उल्लेख है। यहाँ पर वृहतत्रयी में उपलब्ध आवर्तित स्नेह का उल्लेख किया जा रहा है—

क्रम.सं.	योग	ग्रन्थ	आवर्तन संख्या	सन्दर्भ
1.	आमलक घृत	च.स.	100/1000	रसा. 1/2/4
2.	भल्लातक तैल	च.स.	100	रसा. 1/2/16
3.	शतपाक मधुक तैल	च.स.	100	चिकि. 29/116
4.	सहस्रपाक मधुक तैल	च.स.	1000	चिकि. 29/117
5.	सत पाक सहस्रपाक बला तैल	च.स.	100/1000	चिकि. 29/117-20
6.	शतपाक सहस्रपाक स्नेह वस्ति	च.स.	100/1000	सिद्धि. 12/19
7.	शतपाकी बलातैल	सु.सं.	100	सु.उ. 21/12-13
8.	अणु तैल	अ.सं.	10	अ.सं.सू 29/9

Research update

1. Savrikar et.al ने गुडुची स्वरस तथा गुडुची घृत के तीन सैम्पल का adaptogenic activity against forced swimming induced gastric ulceration and heamatological changes in albino rats के अध्ययन में यह पाया कि गुडुची घृत का गुडुची स्वरस की तुलना में अच्छा प्रभाव है।[1]

1. Savrikar SS, Dole V, Ravishankar B, Shukla V.A comparative pharmacological investigation of three samples of 'Guduchi ghrit' for adaptogenic activity against forced swimming induced gastric ulceration and heamatological changes in albin rats. Int J. Ayurveda Res 2010;1:67-72.

2. स्नेह कल्पना की तुलना, इसके (Drug delivery method general, sustain तथा Controll pattern) के कारण Liposomal drug delivery से की जाती है। तथा इसके Validation पर अन्य Research हो रहे है।[1]
3. Patgiri B. et al. ने अपने अध्ययन में पाया कि जैसे-जैसे आवर्तना की संख्या बढ़ती जाती है। वैसे-वैसे तैल, द्रव्य Liquid से Semi solid consistency की हो जाती है।[2]
4. स्नेह पाक के शास्त्रों में कई प्रकार बताये गये हैं । बृहत्जीवकाद्य तैल को मृदु पाक तथा मध्यम पाक किया गया तथा यह पाया गया कि मृदु पाक की Viscosity 86.93 mPa-s तथा मध्यम पाक की 91-93mPa-S थी जिसे कि क्रमशः LVO (Low visocosity oil) तथा MVO (Medium Viscosity Oil) कहा गया तथा Mirgane को करने हेतु Double blind clinical trial किया गया जिसमें Higher viscocity drug के बेहतर प्रभाव देखे गये।[3]

Market Survey

स्नेह कल्पना के रूप में तैल तथा घृत का प्रयोग किया जाता है। तैल का बाजार में प्रचलन सौन्दर्य प्रसादन तथा औषधि दोनों के रूप में मिलता है। औषधि के रूप में विभिन्न प्रकार के तेल जैसे बला तैल, महाविष गर्भ तैल, अणु तैल, जात्यादि तैल आदि को उपलब्धता प्रचुर रूप में मिलती है। ये सभी तैल विभिन्न प्रकार के Packing के रूप में जैसे— 100, 200 मिली. विभिन्न फार्मा कम्पनियों के द्वारा उपलब्ध है। सौन्दर्य प्रसादन के रूप में Hair oil का मार्केट बहुत बड़ा है। Hair oil शास्त्रीय जैसे— महाभृंगराज तैल, Proprietary oil के रूप में जैसे— केश निखार, केश किंग, केयो कार्पिन आदि की उपलब्धता बाजार में है जो कि विभिन्न कम्पनियों के द्वारा बेचे जाते हैं। इन तेलों का विज्ञापन विभिन्न प्रचार मीडिया जैसे— समाचार पत्र, टेलीविज़न आदि के द्वारा किया जाता है। ग्लोबल हेयर आयल मार्केट 2020 से 2023 के दौरान 4.7% CAGR की दर से वृद्धि की सम्भावना है। विभिन्न प्रकार के शास्त्रीय घृत जैसे त्रिफल घृत, पंचगव्य घृत आदि की उपलब्धता बाजार में देखी जाती है।

Point for market survey on Sneha Kalpana

1. Name of the product
2. Reference
3. Name of the Pharma company (Manufacturing it)
4. Other dosage form available
5. Packaging size
6. Packaging type-e.g. pouch packing, plastic bottle packing etc.

1. Singh N. Chaudhary A., A comparative review study of Sneha Kalpna (Paka) vis-a-vis liposome. Ayu. 2011 Jan; 32(1) 103-8
2. Patgiri B. Krishnamenti MS. Subrata B, Singh K.A. comperative pharmaceuticoclinical study of 1, 7 & 50 avartita ksheerbala taila. Ayu. 2008, 29(1):19-24.
3. Singh Sk, Rajoria K, Kumar A, Sharma S. A deuble-blind controlled clinical trial to evaluate the effect of nasal thrapy with Vrihatajivakadya oil on different viseosites in patients with migraine. J Ayurveda, Integr Med. 2023 Mar-Apr.; 14(2):100 662

Scanned with OKEN Scanner

7. Cost of the product of different pharmacies
8. Availability in the market
9. Distribution channel

संधान कल्पना

सन्धान शब्द सन्धीयते यदिति, संधा में ल्युट प्रत्यय लगाने से निर्मित होता है। मेदिनी ने 'संधादृनम्' सन्धानार्थक लिखा है जिसका तात्पर्य एक साथ कई द्रव्यों को एकत्र मिलना होता है।

भरत के अनुसार—**सन्धीयते सन्धानं वशांङ्कुटफलादीन् बहुकालं सन्धाय यत् जियते**

अमरकोश में 'अभिषवः' शब्द पर्याय के रूप में दिया है।

केवलं द्रव द्रव्यं वा भेषजान्नादि संयुतम् । चिरकालस्थितं वैद्यैः सन्धानं परिकीर्तितम् ॥

(द्र.गु.वि. यादव जी)

केवल द्रव द्रव्य (स्वरस/जल आदि) या द्रव द्रव्य के साथ भेषज, अन्न, मधुर द्रव्य आदि को मिलाकर चिरकाल तक रखने की प्रक्रिया को सन्धान कहा जाता है।

द्रवेषु चिरकालस्थं द्रव्यं यत्संधितं भवेत् । आसवारिष्ट भेदैस्तु प्रोच्यते भेषजोचितम् ॥

(शा.म. 10/01)

द्रव (जल, क्वाथ आदि) द्रव्य अथवा वानस्पतिक द्रव्य, अन्न, गुड़ आदि को एक साथ मिलाकर चिरकाल तक रखने के परिणाम स्वरूप निर्मित (संधित) द्रव्य को आसव/अरिष्ट के नाम से जाना जाता है।

आचार्य चरक ने सूत्रस्थान के पच्चीसवें अध्याय में वर्णित चौरासी आसव प्रकरण के अन्तर्गत आसव योनियों को नव आसव योनियों में वर्गीकृत किया है। इस योनियों में वर्णित धान्यासव के अन्तर्गत निम्न का उल्लेख किया है—

1. सुरा, 2. सौवीर, 3. तुषोदक, 4. मैरेय, 5. मेदक तथा 6. धान्यामल।

इनमें सुरा, मैरेय तथा मेदक मद्य कल्पना जबकि सौवीर, तुषोरक तथा धान्यामल शुक्त होते हैं। इस प्रकार आचार्य चरक ने आसव शब्द से सामान्य रूप से दोनों प्रकार के उत्पादों के लिए प्रयुक्त किया है तथा इसके कारण में निम्न उल्लेख किया है—

एषामासवानामासुत्वत्वादासव संज्ञा (च.सू. 25/49)

अर्थात् इनमें "आसुतत्वात" होने के कारण उपरोक्त सभी (84 प्रकार) की संज्ञा आसव की है। आसुतत्वात शब्द पर आचार्य चक्रपाणि ने टीका कर कहा है कि "आसुतत्वादिति सन्धानरूपत्वात्"।

अर्थात् आसुतत्वात का अर्थ सन्धान लक्षण वाला है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है इनमें सन्धान होने के कारण इनकी संज्ञा आसव की है या दूसरे शब्दों में मद्य तथा शुक्त के अन्तर्गत वर्णित उत्पादों में सन्धान की प्रक्रिया समान रूप से होती है। आचार्य चरक के अनुसार ये सभी आसव संयोग तथा संस्कार इन दोनों प्रक्रियाओं के फलस्वरूप निर्मित होते हैं तथा अपना-अपना कार्य करते हैं। यथा—

द्रव्य संयोगविभागविस्तारस्त्वेषां बहुविधकल्पः संस्कारश्च। यथा स्वं संयोग संस्कार संस्कृता ह्यासवः स्वं कर्म कुर्वन्ति। संयोग संस्कार देशकालमात्रादयश्च भावास्तषां तेषामासवानां ते ते समुपदिश्यन्ते तत्तत्कार्यमभिसमीक्ष्येति। (च.सू. 25/49)

अर्थात् द्रव्यों के संयोग और विभाग का विस्तार किया जाय तो इन सभी आसवों का भेद बहुत अधिक हो जाता है। इसी तरह इन द्रव्यों के संस्कार भी अनेक प्रकार के होते हैं। अपने-अपने संयोग तथा संस्कार से निर्मित आसव अपना-अपना कार्य करते हैं। इन आसवों के उन कर्मों का विचार करके द्रव्यों के संयोग, संस्कार, देश, काल तथा मात्रादि भावों का यहाँ उपदेश किया जा रहा है जिसे ठीक से विचार करके कार्य में लाना चाहिए।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संधान की प्रक्रिया में संयोग तथा संस्कार का विशेष महत्व है। संयोग तथा संस्कार के अतिरिक्त देश, काल तथा मात्रादि का विचार संधान में करना चाहिए।

संधान कल्पना का महत्व (Significance)

1. इस प्रकार की औषधियों में water soluble extracts के साथ Alcohol soluble extract (आसव/अरिष्ट) की उपस्थिती पायी जाती है जिससे कि ये शीघ्रता से कार्यकारी होते है।
2. इस प्रकार की कल्पना की सवीर्यता अवधि अधिक होती है।

संधान के भेद

तस्य भेदद्वयं प्रोक्तं मद्यं शुक्तं तथैव च। (द्र.गु.वि. यादव जी)

इस (संधान) के मद्य (Alcoholic fermentation) तथा शुक्त (Acidic fermentation) ये दो भेद कहे जाते हैं या होते हैं।

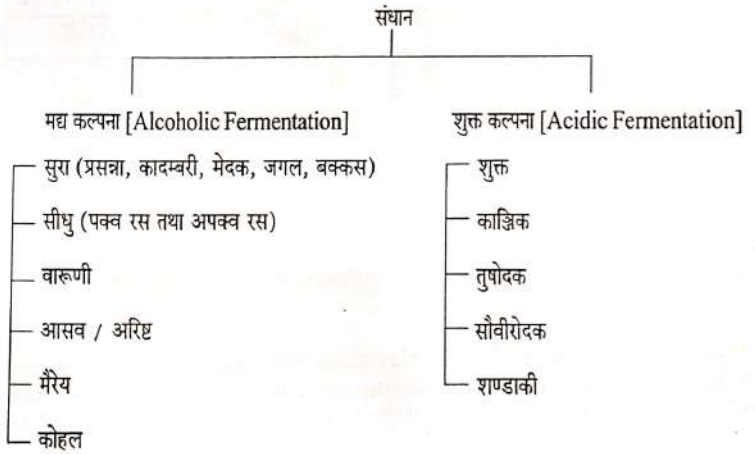

Scanned with OKEN Scanner

मद्य तथा शुक्त कल्पना में अन्तर

मद्य	शुक्त
1. मद्य कल्पना में Ethy alcohol बनाता है।	1. शुक्त कल्पना में Acitic acid उपस्थित रहता है।
2. इसमें मधुर द्रव्य से संधान किया जाता है।	2. इसमें अन्न आदि से संधान किया जाता है।

सन्धान कल्पना की निर्माण विधि

संधान कल्पना निर्माण हेतु सर्व प्रथम औषधि का क्वाथ करते हैं। यदि केवल जल लेने का उल्लेख है तो जल लेते हैं (विशेषकर आसव निर्माण हेतु) तत्पश्चात् इसमें उल्लिखित मधुर द्रव्य जैसे गुड़, शर्करा, शहद आदि) को इस द्रव द्रव्य (क्वाथ/जल) में मोटा दरदरा चूर्ण तथा धातकी पुष्प मिलाकर इसे संधान हेतु रख देते हैं। संधान पश्चात् इसे छान लेते हैं तथा सुरक्षित रख लेते हैं। यह संधान की सामान्य निर्माण विधि है।

संधान हेतु आवश्यक घटक द्रव्य—

1. द्रव द्रव्य - स्वरस, क्वाथ, जल
2. मधुर द्रव्य - गुड़, शर्करा, शहद आदि
3. प्रक्षेप द्रव्य - धातकी पुष्प तथा अन्य औषधियाँ
4. औषधियों का एकत्रीकरण

अनुक्तमान परिभाषा

आचार्य शार्ङ्गधर ने आसव तथा अरिष्ट में, यदि जल, गुड़ तथा प्रक्षेप आदि का मान नहीं कहा गया हो, तो इसके लिए निम्न परिभाषा का उल्लेख किया है । यथा—

अनुक्तमानारिष्टेषु द्रवद्रोणे तुलां गुडम् । क्षौद्रं क्षिपेद् गुडादर्धं प्रक्षेपं दशमांशिकम् ॥

(शा.म. 10/3)

अर्थात् 1 द्रोण (12.2 लीटर) द्रव में गुड़ 1 तुला (4.8 किलो) तथा शहद, गुड़ से आधा अर्थात् 2.4 किलो तथा प्रक्षेप गुड़ का दशमांश (480 ग्रा) लेकर आसव/अरिष्ट का निर्माण करना चाहिए ।

सन्धान परीक्षा

सन्धान परीक्षा दो चरणों में की जाती है—

1. सन्धान के दौरान परीक्षा (During fermentation)
2. सन्धान समाप्ति की परीक्षा (Completion of fermentation)

संधान के दौरान परीक्षा (Examination during fermentation) जब तक संधान होता रहता है, तब तक निम्न लक्षण होते हैं—

1. संधान पात्र में बुदबुद या सनसनाहट का शब्द होना ।
2. प्रक्षेप द्रव्य ऊपर तैरते रहते हैं ।

3. मद्य (Alcohol) की महक आती है ।

संधान समाप्ति की परीक्षा (Completion of fermentation) – जब संधान क्रिया सम्पूर्ण हो जाती है तो इसकी परीक्षा निम्न रूप से करते हैं—

1. संधान पात्र से किसी भी प्रकार का शब्द नहीं आता है ।
2. प्रक्षेप द्रव्य नीचे बैठ जाते हैं तथा द्रव पदार्थ पूर्ण स्वच्छ हो जाता है ।
3. गन्ध, वर्ण तथा रस की उत्पत्ति हो जाती है ।

Burning Candle test–संधान पात्र में जलती हुई मोमबत्ती लेजाने पर यदि वह बुझ जाय तो संधान प्रक्रिया होने का पता चलता है यदि मोमबत्ती जलती रहती है तो संधान प्रक्रिया पूर्ण हो गयी है।

Lime water test– संधान के समय CO_2 निकलती है जिसे Lime water से पास करने पर इसमें से बुलबुले निकलते हैं तथा Lime water दूधिया रंग (Milky) का हो जाता है। यह संधान की प्रक्रिया होते रहने को बताता है।

संधान विधि

पात्र चयन

संधान हेतु निम्न द्रव्यों से निर्मित पात्रों का उल्लेख प्राप्त होता है—

1. मृत्तिका
2. सागौन काष्ठ
3. धातु निर्मित
4. चीनी मिट्टी (Porcelin Jars)
5. Syntax के प्लास्टिक टंकिया आजकल फार्मेसी में प्रयुक्त किये जाते हैं ।

ग्रन्थों में यह निर्देश है कि यदि शास्त्र में केवल पात्र शब्द का उल्लेख हो तो मृतिका से निर्मित पात्र का ग्रहण करना चाहिए । मृत्तिका पात्र का प्रयोग संधान के रूप में किया जा सकता है । लेकिन इस प्रकार के पात्र बहुत ज्यादा बड़े न उपलब्ध होने के कारण ज्यादा मात्रा में निर्माण नहीं किया जा सकता है । दूसरे एक बार प्रयोग करने के बाद इन्हें पुनः प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि ये कमजोर हो जाते हैं जिससे टूटने का डर रहता है । सागौन काष्ठ से निर्मित पात्र में संधान अच्छी तरह से होता है तथा इन्हें आवश्यकतानुसार बनाया जा सकता है । पुराने समय में चीनी मिट्टी के पात्र (Porcelin Jar) संधान कल्पना हेतु प्रयुक्त किये जाते थे । सिरका निर्माण हेतु भी ऐसे जार का प्रयोग घरों में किया जाता था । आजकल बड़ी-फार्मेसी में Syntax के प्लास्टिक टंकिया संधान हेतु प्रयुक्त की जाती है । इनका एक फायदा यह भी है कि आसव/अरिष्ट निकालने के पश्चात् किण्व इसी में रह जाता है जिससे अगली बार इसे प्रयोग कर लिया जाता है तथा संधान प्रक्रिया आसानी से शुरू हो जाती है ।

पात्र का धूपन– धूपन प्रक्रिया हेतु अगरू, चन्दन, गुग्गुलु आदि द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है ।

पात्र का लेपन– संधान पात्र के अन्दर लेपन हेतु मधु तथा पिप्पली चूर्ण या घृत तथा पिप्पली चूर्ण से बने लेप का प्रयोग करते हैं । धूपन तथा लेपन का कार्य करने से पात्र का निर्जीवाणुकरण होता है मृत्तिका पात्र था या लकड़ी

Scanned with OKEN Scanner

के पात्र को सिल करना इसलिए भी आवश्यक होता है । जिससे कि इनमें स्थित सूक्ष्म छिद्रों को बन्द किया जा सके । जिससे अन्दर स्थित द्रव पदार्थ सिप कर बाहर न आ सके । तथा इन्हीं सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा बाहरी वायु भी पात्र में प्रविष्ट हो जाती है जिसके कारण अन्दर का तापमान भी स्थिर नहीं रह पाता है और संधान हेतु रखा द्रव्य खराब हो जाता है ।

अम्लता विरोधी संस्कार– इस संस्कार को नये पात्र में करना आवश्यक नहीं होता है । किन्तु ऐसे पात्र जिनमें पूर्व में आसव अरिष्ट निर्माण किया गया हो या जिनमें आसव/अरिष्ट निर्माण करते समय अम्ल हो गया हो, में यह संस्कार करना आवश्यक होता है ।

विधि– सर्वप्रथम गर्मजल से संधान पात्र को अच्छी प्रकार से धुलकर सुखा लेते हैं । तत्पश्चात् कलई चूना एक भाग तथा जल पन्द्रह भाग में घोलकर इसे संधान पात्र में डालकर तत्पश्चात् इसे गिरा देते हैं । अब इसे तब तक स्वच्छ जल से साफ करते हैं जब तक कि यह अम्लता से मुक्त न हो जाय । इसके लिए Litmus paper का प्रयोग करते हैं । अन्त: इसे पुन: गर्म जल से धोकर तथा सुखाकर संधान हेतु प्रयुक्त करते हैं ।

द्रव द्रव्य निर्माण

आसव/अरिष्ट या अन्य संधान कल्पना हेतु द्रव द्रव्य की आवश्यकता होती है । इस द्रव द्रव्य में जल, औषधियों का स्वरस, क्वाथ का ग्रहण होता है । यदि जल लेने का निर्देश है तो बेहतर है कि Potable water को प्रयुक्त किया जाय । यदि औषधि का स्वरस लेने का निर्देश है तो इसे स्वरस निर्माण विधि द्वारा प्राप्त करना चाहिए । यदि क्वाथ का निर्देश हो तो उक्त औषधियों को यवकुट कर उसे कहीं गयी जल के मात्रा में क्वथन करते है तथा जितना शेष रखने का निर्देश हो उतनी मात्रा में जब द्रव बचे तो उसे छान लेना चाहिए । इस प्रकार द्रव द्रव्य को तैयार करना चाहिए ।

वक्तव्य– क्वाथ करते समय शेष द्रव की मात्रा का निर्धारण करने हेतु सबसे पहले शेष मात्रा के समान द्रव डालकर उसे Scale से नाप लेते हैं । तत्पश्चात् पूरी मात्रा डालकर पाक करते हैं तथा जब यह मापे गये Scale के निशान पर आ जाय तो इसे छान लें ।

मधुर द्रव्य मिश्रण

द्रव द्रव्य का निर्माण हो जाने अगली प्रक्रिया में इस द्रव द्रव्य में मधुर द्रव्य का मिश्रण करना होता है । मधुर द्रव्य के रूप में गुड़, चीनी, शहद का प्रमुखता से प्रयोग किया जाता है । मधुर द्रव्य के रूप में इनकी मात्रा प्रारम्भ में कितनी डाली जाय यह एक विचारणीय प्रश्न है । इस विषय में अनेक मत मतान्तर हैं । आचार्य पक्षधर झा द्वारा विरचित आसवारिष्ट विज्ञान में ऐसा उल्लेख है कि 1 मन जल में 2.5 सेर से 6 सेर तक मधुर पदार्थ गुड़, शर्करा आदि मिलाने पर आसवारिष्ट ठीक प्रकार से बनता है । श्रीयुत् स्वामी हरिशरणानन्द ने भी आसव में मधुर पदार्थ मिलाने के पक्ष में अपने मत में कहा है कि वस्तुतः निर्माण कार्य समाप्त होने के बाद आसव छानने से पूर्व अथवा बोतलों में बन्द करने से पूर्व चतुर्थांश मधुर पदार्थ-गुड़ मिलाना चाहिए । इससे तिक्तसर विशिष्ट द्रव्यों से निर्मित आसवारिष्ट की स्वादुता अधिक होती है एवं आसवारिष्ट का वर्ण भी उत्तम बना रहता है । इसमें उष्णता नहीं आती है । दूसरा लाभ यह है कि पुनः मधुर द्रव्य की मात्रा डालने पर संधान क्रिया नहीं होती । अन्यथा ऐसा देखा जाता है कि बोतलों में बन्द करने के बाद भी उत्सेचन क्रिया प्रारम्भ हो जाती है और बोतलों का मुखबन्धन स्वयं खुलकर कार्क अलग हो जाता है । आधुनिक संधान में भी प्रारम्भ में 30-40% मधुर द्रव्य डालने का उल्लेख मिलता है । शेष मधुर द्रव्य संधान प्रारम्भ होने के 7-10 दिन पश्चात् डालना उचित रहता है ।

In their study Gandhi P.K. et al. have reported that Aacharya Charaka and Sharangdhara have mentioned using 39.06% of sweet substances (generally carbohydrate) for the process of fermentation in Sandhana Kalpana. But to initiate the easy and early fermentation, only 40% of sweet substances are advised to be added and the rest quantity is supplemented after fermentation begins[1].

प्रक्षेप द्रव्य

प्रक्षेप द्रव्य के रूप में डाले जाने वाले औषधि द्रव्यों को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं । यथा—

1. औषधियों का मोटा चूर्ण स्वरूप ।
2. धातकी पुष्प का प्रक्षेप के रूप में प्रयोग ।

औषधियों के मोटे या दरदरे चूर्ण के रूप में दालचीनी, छोटी इलायची, तेज पत्र या नागकेशर या अन्य द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है। यद्यपि आचार्य चरक ने चरक संहिता में वर्णित आसव/आरिष्ट योगों में प्रक्षेप के रूप में धायपुष्प को नहीं प्रयुक्त किया है । तथापि आचार्य वाग्भट्ट ने इसे अपने योगों में प्रयुक्त किया है । आधुनिक शोध में धातकी पुष्प तथा मधूक पुष्प (महुआ पुष्प) को संधान कारक (Fermentation Initiator) माना जाता है । संधान कारक के रूप में संहिताओं में किण्व का उल्लेख किया गया है । धातकी पुष्प (Wood fordia fruticosa) को Saccharomyces cerevisiae का Carrier माना जाता है । तथा यह S. cerevisiae संधान (Fermentation) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । इसके अतिरिक्त प्रक्षेप द्रव्य गन्ध, वर्ण तथा रस की उत्पत्ति में सहायक होते हैं ।

भस्मों का मिश्रण

कुछ आसव/अरिष्ट जैसे लोहासव, सारस्वतारिष्ट में लोहभस्म तथा स्वर्ण भस्म डालने का उल्लेख है। इनमें वारितर भस्मों का प्रयोग करना अधिक उचित है। आसव अरिष्ट में मिलाने के बाद ये इसमें मिलकर के रूप में उपस्थित रहते हैं।

पात्र पूरण तथा संधिबन्धन (Importance of Room Temperature)

पात्र पूरण का अर्थ है कि संधान पात्र में द्रवद्रव्य (जल/क्वाथ/स्वरस), मधुर द्रव्य तथा प्रक्षेप द्रव्य को मिलाकर रखना । यहाँ ध्यान देने योग्य विषय यह है कि सामान्य रूप से संधान पात्र को दो तिहाई ही भरना चाहिए शेष एक तिहाई खाली रखना चाहिए । जिससे कि संधान के दौरान गैस या कई बार ज्यादा संधान होने की स्थिति में द्रव्य बाहर निकल जाता है । इनके लिए स्थान शेष रहे ।

आसवारिष्ट निर्माण के दौरान सन्धान पात्र में सभी द्रव्यों (द्रव द्रव्य + मधुर द्रव्य + प्रक्षेप द्रव्य) को रखने के पश्चात् संधिबन्धन की प्रक्रिया एक महत्वपूर्ण कदम है । यह प्रक्रिया आसव/अरिष्ट में मद्य की प्राप्ति हेतु किया जाता है तथा मद्यांश की प्राप्ति CO_2 की उत्पत्ति पर निर्भर करता है । ऐसी परिस्थिति में यदि पात्र के मुख को बिल्कुल बन्द नहीं

1. Gandhi P. Choudary AK, Ravishankar B. Day S, Prajapati PK. A comparative study of different formulation of Vasa (Avaleha, Sneha, Sandhan) WSR to its shwas har effect MD (Ay) disseration of IPGTRA, Jamnagar. Gujrat Ayurveda University, 2005

Scanned with OKEN Scanner

किया जायेगा तो रासायनिक परिवर्तन (Chemical reaction) के परिणामस्वरूप उत्पन्न वायु विशेष पात्र में नहीं रुक पायेगी । यदि पात्र के मुख को सम्पूर्ण रूप से बन्द कर दिया जाय तो उत्पन्न विशेष गैस निकल नहीं पायेगी तथा शुद्ध वायु बाहर से प्रविष्ट नही कर पायेगी । इस कारण से पात्र के मुख को प्रारम्भ में तब तक जब तक उत्सेचन कार्य हो रहा हो एक वस्त्र से इस प्रकार बाँधना चाहिए जिससे वायु विनिमय (Exchange) क्रिया होती रहे । इस क्रिया की समाप्ति के पश्चात् पात्र के मुख को शराव या अन्य किसी ढक्कन से एयर टाइट सन्धि बन्धन करना चाहिए ।

स्थान चयन/स्थान विमर्श

संधान पात्र को किण्वन (Fermentation) हेतु आचार्य चरक एवं आचार्य सुश्रुत ने इसे धान्य राशि में रखने का निर्देश किया है । इसके अतिरिक्त परम्परा अनुसार संधान पात्र को निम्न विधियों से रखने का उल्लेख मिलता है । यथा—

1. जमीन के अन्दर पात्र को आकण्ठ दबाना ।
2. जमीन के अन्दर पात्र को आधा दबाना । (भूगर्भ चौगुल्य-आ.सोढल)
3. जमीन पर पात्र को रखना ।
4. धान्य राशि के अन्दर पात्र को रखना ।

उपर्युक्त विधियों का मुख्य उद्देश्य (वातावरण के अनुसार) संधान पात्र के तापमान को नियन्त्रित रखना है या दूसरे शब्दों में एक समान तापमान को बनाये रखना है । आधुनिक विज्ञान द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि 35^0C से 40^0C का तापमान आसव/अरिष्ट के निर्माण हेतु अच्छा माना जाता है ।

सन्धान काल– आसव/अरिष्ट निर्माण हेतु अलग-अलग आचार्यों ने अलग-अलग दिनों का उल्लेख किया है । यथा पक्षजात (15 दिन), मासमेकं (1 मास) आदि । इस प्रकार यह निश्चित नहीं कहा जा सकता है किन्तु प्रायः सन्धान कार्य ग्रीष्म ऋतु में 15 से 20 दिन तथा शीत ऋतु में 20-25 दिनों में पूर्ण हो जाता है ।

आसव/अरिष्ट को छानना (Filteration)

संधान समाप्ति की परीक्षा करने के पश्चात् आसव/अरिष्ट को छानने की प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है ।आसव को एक पात्र से दूसरे पात्र में छान लेते हैं । तत्पश्चात् इसे तीन-चार दिनों के लिए रखे देते हैं । इससे आसव/अरिष्ट में मौजूद गाद नीचे बैठ जाता है । तत्पश्चात् रबर नली की मदद से इसे आवश्यकतानुसार छोटे या बड़े काँच की बोतलों या प्लास्टिक की शीशीयों में भर लेते हैं । छानने के उपरान्त इसे Air tiet बन्द करना चाहिए जिससे इस पर बाहरी वातावरण का प्रभाव न पड़ सके ।

विमर्श– आसव/अरिष्ट को छानने के पश्चात् तुरन्त ही प्रयोग नहीं करना चाहिए ऐसा कुछ लोगों का मत है । आधुनिक विज्ञान में इसे Maturation कहा जाता है । नया आसव/अरिष्ट या कोई भी मद्य न प्रयोग करने की पीछे आचार्य चरक के निम्न मत को आधार माना जा सकता है । यथा—

प्रायशोऽभिनवं मद्यं गुरु दोष समीरणम् । स्त्रोतसां शोधनं जीर्णं दीपनं लघु रोचनम् ॥
(च.सू. 27/193)

प्रायः सभी नवीन मद्य गुरु, वात, पित्त एवं कफ का प्रकोप करने वाले होते हैं । तथा प्रायः सभी पुराने मद्य स्त्रोतों शोधक, अग्निदीपक, लघु और भोजन में रुचि उत्पन्न करते हैं । तथा पुराने आसव के सन्दर्भ में आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार—

पुराणाः स्युर्गुणैर्युक्ता आसवा धातवो रसाः ।
अर्थात् पुराने होने पर भी या पुराने आसव, धातु भस्म तथा भस्म गुण युक्त होती है ।

आसव/अरिष्ट में अन्तर

यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः । अरिष्टः क्वाथसिद्धः स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम् ॥
(शा. म. 10/2)

अपक्व जल तथा औषधि को साधकर संधान करने के पश्चात् निर्मित मद्य को आसव कहते हैं। क्वाथ करके उसमें मधुर द्रव्य आदि मिलाकर निर्मित होने वाले मद्य को अरिष्ट कहते हैं।

आसव तथा अरिष्ट में भेद– आसव तथा अरिष्ट में निम्न भेद किया जा सकता है—

आसव	अरिष्ट
1. यह सामान्य रूप में अपक्व द्रव (जल, स्वरस) से निर्मित किया जाता है ।	1. यह सामान्य रूप से क्वाथ निर्माण कर बनाया जाता है ।
2. आचार्य डल्हण के अनुसार आसव द्रव प्रधान होते हैं ।	2. आचार्य डल्हण के अनुसार अरिष्ट द्रव्य प्रधान होते हैं ।

सवीर्यता अवधि– 10 साल

द्राक्षारिष्ट

द्राक्षातुलार्धं द्विद्रोणे जलस्य विपचेत्सुधीः । पादशेषे कषाये च पूते शीते विनिक्षिपेत् ॥
गुडस्य द्वितुलां तत्र त्वगेलापत्रकेशरम् । प्रियङ्गुमुर्मारिचं कृष्णा विडङ्गा चेति चूर्णयेत् ॥
पृथक् पलोन्मितैर्भागैस्ततो भाण्डे निधापयेत् । समन्ततो घट्टयित्वा पिबेज्जात रसं ततः ॥
उरःक्षतः क्षयं हन्ति कासश्वासगलामयान् । द्राक्षारिष्टाह्वयः प्रोक्तो बलकृन्मलशोधनः ॥

क्वाथ द्रव्य– द्राक्षा - 2.5 किलो
जल (क्वाथ हेतु) – 26 लीटर
शेष – 6.5 लीटर

प्रक्षेप द्रव्य–

1. धातकी पुष्प	– 250 ग्रा.	6. प्रियंगु	– 50 ग्रा.
2. दालचीनी	– 50 ग्रा.	7. मरिच	– 50 ग्रा.
3. छोटी एला	– 50 ग्रा.	8. बडी पिप्पली	– 50 ग्रा.
4. तेजपत्र	– 50 ग्रा.	9. विडङ्ग	– 50 ग्रा.
5. नागकेशर	– 50 ग्रा.		

मधुर द्रव्य– गुड़ – 10 किलो

Scanned with OKEN Scanner

निर्माण विधि

सर्वप्रथम एक बड़े पात्र में द्राक्षा (मुनक्का) लेकर उसमें जल डालकर मध्याग्नि पर क्वाथ करते हैं। जब यह 6.5 लीटर शेष रहे तो इसे छान लेते हैं। क्वाथ करने पूर्व द्रव्यमात्रा में मुनक्का को थोड़ा कूट देना उचित रहता है। तत्पश्चात् जब यह ठंडा हो जाय तो इसमें गुड़ मिलाकर संधान पात्र में रख देते हैं। तत्पश्चात् इसमें प्रक्षेप द्रव्यों का मोटा चूर्ण मिलाकर संधान हेतु रख देते हैं तथा बीच-बीच में इसकी संधान हेतु परीक्षा करते रहते हैं। जब संधान सिद्धि लक्षण आ जाय अर्थात् संधान प्रक्रिया पूर्ण हो जाय तो छानकर रख देते हैं। इसे एक वर्ष पश्चात् प्रयुक्त करना चाहिए।

गुण– यह द्राक्षारिष्ट उरःक्षत, क्षय, कास, श्वास एवं गले के रोग को नष्ट करता है। यह दीपन तथा पाचन गुण युक्त होता है। यह बलकारक तथा मल शोधक होता है।

मात्रा– एक से दो तोला बराबर जल से। भोजन पश्चात् प्रयोग करते हैं।

एल्कोहल की मात्रा– 5-10%

उशीरासव

उशीरं बालकं पद्मं काश्मर्यं नीलमुत्पलम्। प्रियङ्गु पद्मकं लोध्र मञ्जिष्ठां धन्वयासमम्॥
पाठां किरात तिलक्ष न्यग्रोधोदुम्बरं शरीरम्। पर्पटं पुण्डरीकं च पटोलं काञ्चनारकम्॥
जम्बूशाल्मलिनिर्यासं प्रत्येकं पलसम्मितम्। सर्वं सुपूर्णितं कृत्वा द्राक्षायाः पलविंशतिम्॥
धातकी षोडशपलां जलद्रोणे द्वये क्षिपेत। शर्कराया स्तुलां दत्वा क्षौद्रस्यार्द्ध तुलां तथा॥
मासं संख्यावयेद् भाण्डे मरिच धूपिते। उशीरासव इत्येष रक्तपित्त विनाशनः॥
पाण्डु कुष्ठ प्रमेहार्शः कृमिशोथहरस्तथा॥ (भ.र.रक्तपित्त 137-141)

घटक द्रव्य–

1. उशीर	2. सुगन्धवाला	3. पद्म
4. गम्भारी	5. नीलोत्पल	6. प्रियङ्गु
7. पद्मक	8. लोध्र	9. मञ्जिष्ठ
10. धन्यवास	11. पाठा	12. किराततिक्ता
13. न्यग्रोध	14. उदम्बर	15. शटी
16. पर्पट	17. कमल	18. पटोल
19. काँचनार	20. जम्बू	21. शाल्मली निर्यास
22. द्राक्षा-960 ग्रा.	23. धातकी-768 ग्रा.	24. जल-24.576 ली.
25. शर्करा-4.8 किग्रा.	26. मधु- 2.4 कग्रा	

उपरोक्त प्रत्येक द्रव्य 48 ग्रा.

मांसी तथा मरिच– आवश्यकतानुसार धूपन दें।

निर्माण विधि– *एक संधान पात्र लेकर उसका मांसी तथा मरिच द्वारा अच्छी प्रकार से धूपन कर लेते हैं। तत्पश्चात् इसके उल्लिखित जल भरकर इसमें चीनी तथा शहद को अच्छी प्रकार से घोल लेते हैं। तत्पश्चात् इसमें द्राक्षा को (कूटकर) तथा क्रम संख्या, 1 से 21 तक की औषधियों का उरदरा चूर्ण इसमें मिला देते हैं अन्त में धातकी पुष्प मिलाकर इसे संधान हेतु रख देते हैं। जब संधान समाप्त हो जाय तो इसे छानकर सुरक्षित रख लेते हैं।*

मात्रा– 12 से 24 मिली, बराबर मात्रा जल के साथ।

Alcohol–4-9%

Research update

आसव तथा अरिष्ट को Traditionally fermented Ayurvedic Biomedicine कहा जाता है। इसमें किण्वन (Fermentation) sugar तथा Woodfordia fruticosa kurz (धातकी पुष्प) के द्वारा होता है। आसव तथा अरिष्ट में 12% (Max.) alcohol (Ethyl alcohol) उपस्थित होता है। Microbial biotrans formation के कारण इनकी Therapeutic property अधिक हो जाती है। आसव तथा अरिष्ट में water soluble molecules के साथ-साथ alcohol soluble molecules भी पाये है जो कि fermentation process के द्वारा आते है।[1]

Water, specific nutritive materials as growth promotor and energy is needed to the micro organisms which are involved in the preparation of Asava-Arishta for fermentation. Nature and concentration of Carbohydrate affect the rate of fermentation and final product, i.e. biomass and primary as well as secondary metabolites[2]

Mishra et al. (2010) Critically overviewd and analysed the fermented Ayurvedic products and discussed the transformation of chemical compound during fermentation and better extraction of herbal constituents into the water/alcohol medium of fermented drug[3].

Fermentation process help in rapturing the cells of the herbs and exposing their contents to bio transformation. Fermentation also creates and active transport system with dissolved constituents from herbal materials[4].

Viburnum Linn species में sesquiterpenes, triterpeneus तथा phyto sterols, phenolic compound के derivatives जैसे tannins flavinoids तथा anthocyanius और iridoid glocosides इसके Root, stem तथा leaves में पाये जो है। जो कि (Diuretic), cardiovasular stimulant, anti inflammatory anstispasmodic, antiasthanatic तथा astrigent प्रभाव रखते हैं।[5]

---

1. S. Sekar, S. Mariapan. Traditionally fermented biomedicines Arishtas and Asavas from Ayurveda, Indian J. Traditional Knowledge, Vol. 7(4). October 2008 pp 548-556]
2. Chaudhary A, Singh N. Dalvi M., Wele A. A progressive review of Sandhana Kalpana (Biomedical fermentation) : An advanced innovative dosage form of Ayurveda. Ayu. 2011 Jul; 32(3): 408-17.

3&4. Mishra, AK & Gupta, A & Gupta, Vaishali & Sannd, Rajesh & Bansal, pPraveen (2010). Asava and Arishta : An Ayurvedic Medicine - An overview. Int. J. Pharm Biol Arch. 1.

5. Abdul hameed Sabu & Madhathilkovilabathu Haridas (2015). Fermentation in ancient Ayurveda : Its present implication, frontiers in life science, 8:4, 324-331, DOI:10.1080/21553769.2015.1041165.

Scanned with OKEN Scanner

Market survey

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति मे आसव/अरिष्ट का अपना विशेष महत्व है तथा बहुतायत से प्रयोग की जाने वाली कल्पना है। यही कारण है कि बाजार में विभिन्न प्रकार के आसव/अरिष्ट की उपलब्धता अत्यन्त सुगम है। बाजार में विभिन्न प्रकार के अरिष्ट जैसे— द्राक्षारिष्ट, अर्जुनारिष्ट, अशोकारिष्ट, खदिरारिष्ट, दशमूलारिष्ट आदि तथा आसव जैसे कनकासव, चन्दनासव, कुमार्यासव, उशीरासव, आदि विभिन्न प्रकार के साइज जैसे— 450 मिली, 200 मिली. में उपलब्धता प्राप्त होती है। ये उत्पाद विभिन्न प्रकार की कम्पनियों जैसे वैद्यनाथ, डाबर, धूतपापेश्वर आदि द्वारा निर्मित कर बाजार में उपलब्ध कराये जाते है।

Points for market survey

1. Name of the product
2. Reference
3. Name of the Pharma company
4. Packaging size of the product
5. Packaging type
6. Cost of the product
7. Availability in the market
8. Distribution channel

पथ्य कल्पना

परिभाषा

पथ्यं पथोऽनपेतं यद्यच्चोक्तं मनसः प्रियम्। यच्चाप्रियामपथ्यं च नियतं तन्न लक्षयेत् ॥
मात्रा काल क्रिया भूमि देह दोषगुणान्तरम्। प्राप्य तत्तद्धि दृश्यन्ते ते ते भावास्तथा तथा ॥

(च.सू. 25/45-46)

जो आहारादि द्रव्य तथा अर्थात् शारीरिक स्त्रोतों में हानि करने वाला न हो तथा मन के लिये प्रिय हो उसे पथ्य कहते हैं। जो आहारादि द्रव्य तथा (शारीरिक स्त्रोत) में अपकार अर्थात् हानि करने वाला हो तथा मन के लिये अप्रिय हो उसे अपथ्य कहते हैं।

विमर्श—यह पथ्य तथा अपथ्य नियत रूप से नहीं रहते हैं। बल्कि पथ्य की मात्रा, काल, क्रिया, भूमि, देह तथा दोष की विभिन्न अवस्थाओं को प्राप्त होकर अपथ्य हो जाती है तथा इन्हीं कारणों से अपथ्य द्रव्य भी पथ्य हो जाती है।

उपरोक्त विषय को आचार्य चक्रपाणि ने बहुत ही अच्छे ढंग से स्पष्ट किया है जो कि पथ्य अपथ्य के सिद्धान्त को बताता है। यथा— जो औषध या आहार द्रव्य शरीर के लिए अपकारक या हानिकारक न हो उन्हे पथ्य कहा जाता है। यहाँ पथ शब्द से स्रोतस में बहने वाली द्रव धातुओं एवं दोष के साथ-साथ स्रोतस का निर्माण करने वाले शरीर धातुओं का भी ग्रहण होता है। जिन भावों के द्वारा (1) स्वस्थ स्वास्थ्य रक्षणम् तथा (2) आतुराश्च व्याधि परिमोक्ष हो उसे भी

पथ कहा जाता है। तथा जो इसमें अहितकर न हो उसे पथ्य कहा जाता है। इस लक्षण में मनोचानी भावों का ग्रहण नहीं है। इसे यच्चोक्तं मनसः प्रियमिति के द्वारा स्पष्ट किया गया है। मन के प्रिय विषयों को उपलब्ध कराना या जो मन के लिए हितकर हो उसे मनसो हितम् कहा गया है। अतः पथ्य उसे कहते हैं जो शरीर व मन दोनों के लिए हानिकर न हो यही पथ्य की निर्विवादित परिभाषा है। कुछ लोग पथ्य के इन दो लक्षणों को स्वीकार करते हैं। यदि पथ्य का केवल एक लक्षण होता तब ज्वरादि व्याधियों में प्रयुक्त तिक्त रस औषधियाँ मन को अप्रिय होने से पथ्य के रूप में नहीं मानी जानी चाहिए जबकि ज्वर में तिक्त द्रव्यों का प्रयोग मन के लिए अप्रिय होते हुए भी अपथ्य नहीं मानी जाती हैं। यहाँ पर मनसः प्रिय का अभिप्राय है कि किसी प्रकार का मनोविकार न हो।

जिनको हितकर कहा गया है वह मात्रादि में परिवर्तन होने से अहितकर भी हो सकते हैं। उदाहरण— घृत को पथ्य कहा गया है। अतिमात्रा में इसका प्रयोग अपथ्य होता है, वसन्त ऋतु में उचित मात्रा में भी इसका सेवन अपथ्य कर होता है, (काल प्रभाव)।

देश प्रभाव– आनूप देश के लिए अपथ्य होता है।

संस्कार प्रभाव– विरुद्ध द्रव्यों से संस्कारित करने पर अपथ्य होता है।

देह प्रभाव– अतिस्थूल पुरुष में घृत का प्रयोग अहितकर होता है एवं कफ दोष वाले पुरुष में भी अहितकर है।

इस प्रकार एक ही घृत जिसे पथ्य कहा गया है, मात्रा, काल, संस्कार, देश, देह एवं दोष भेद से गुणों में परिवर्तन आ जाता है। इसी प्रकार विष अपथ्य होते हुए भी मात्रादि का विचार कर प्रयोग करने पर पथ्य होता है।

पथ्य का महत्व

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधिनिषेवणैः। पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषधिनिषेवणैः ॥

(वैद्यजीवन 1/10)

यदि पथ्य आहार का सेवन किया जाय तो औषधि सेवन की आवश्यकता नहीं होगी तथा यदि अपथ्य आहार का सेवन किया जाय तो औषधि सेवन की कोई आवश्यकता नहीं है। अर्थात् नियमित रूप से पथ्य आहार विहार का यदि सेवन किया जाता है तो शरीर में विकार उत्पन्न होने की सम्भावना अत्यन्त कम होती है। लेकिन पथ्य भी विभिन्न कारणों से अपथ्य बन जाते हैं अतः आहारादि का सेवन करने समय इन कारणों को सम्यक् विचार कर प्रयुक्त करना चाहिए।

पथ्य कल्पना के भेद– पथ्य कल्पना में प्रयुक्त अन्न आदि के आधार पर निम्न भेद किये जा सकते है—

1. शूकधान्य युक्त– यवागू, मण्ड, पेया, विलेपी।
2. शमीधान्य युक्त– यूष
3. शमीधान्य एवं शाकयुक्त– खड, काम्बलिक
4. फल युक्त– राग, षाडव
5. दधि द्वारा– तक्र, मथित, छच्छिका आदि

कृत तथा अकृत भेद से पथ्य कल्पना 2 प्रकार की होती है।

Scanned with OKEN Scanner

मण्ड कल्पना

परिभाषा

असिक्थो द्रवो-मण्डः (आचार्य हेमाद्रि)

अर्थात् चावल रहित द्रव को मण्ड कहते है ।

निर्माण विधि– मीरे चतुर्दशगुणे सिद्धो मण्डस्त्वसिक्थकः । (शा.म. 2/170)

अर्थात् चावल से 14 गुना जल लेकर सिद्ध करने के पश्चात् इसके चावल रहित द्रव भाग को मण्ड कहते हैं ।

प्रकार—उपरोक्त श्लोक की टीका में आचार्य आढमल्ल ने मण्ड के तीन प्रकार बताया है, यथा—

मण्डस्तु त्रिविधो ज्ञेय एकद्वित्रिपरिस्रुतः ।

अर्थात् एक, दो या तीन बार छोकर बनाने से मण्ड तीन प्रकार का होता है । इसके अतिरिक्त आचार्य शार्ङ्गधर ने वाट्यमण्ड तथा लाजमण्ड का वर्णन किया है ।

वाट्यमण्ड

मुकण्डितैस्तथा भृष्टैर्वाट्यमण्डो यवैर्भवेत् । कफ पित्तहरः कण्ठ्यो रक्तपित्त प्रसादनः ॥

(शा.म. 2/173)

दले हुए यव को भून कर उससे निर्मित मण्ड को वाट्यमण्ड कहते हैं । यह कफ पित्तहर, कण्ठ्य तथा रक्त एवं पित्त का प्रसादन करने वाला होता है ।

लाजमण्ड

लाजैर्वा तण्डुलैर्भृष्टैर्लाजमण्डः प्रकीर्तितः । श्लेष्म पित्तहरो ग्राही पिपासाज्वरजिन्मतः ॥

(शा.म. 2/174)

लाजा या तण्डुल को भूँज कर उससे निर्मित मण्ड को लाज मण्ड कहते हैं । यह कफ पित्त नाशक, ग्राही, पिपासा तथा ज्वर नाशक होता है ।

पेया

परिभाषा

चावल से निर्मित कल्पना जिसमें चावल के कण अल्प मात्रा में तथा द्रव भाग अधिक हो उसे पेया कहते हैं.

निर्माण विधि

द्रवाधिका स्वल्प सिक्था चतुर्दशगुणे जले ॥ सिद्धा पेया बुधैर्ज्ञेया.....।

(शा.म. 2/167)

14 गुना जल लेकर चावल सिद्ध करते है तथा इसमें द्रव भाग अधिक रहे एवं चावल के सिद्ध कण अल्प मात्रा रहे इसे पेया कहते हैं ।

ज्यादातर आचार्य पेया एवं यवागू को पर्याय मानते हैं । यथा आचार्य डल्हण—

1. पेया सिक्थसमन्वितेति अत्र पेया यवागूरुच्यते अर्थात् जिस पेया में सिक्थ हो उसे यवागू कहते हैं ।
2. पेया यवागू, सा विरल द्रव
3. प्रागुक्ता या पेया यवाग्वपर पर्याया तस्या विलेपीसकाशाद्भेदज्ञापनायाह-यवागूर्विरलद्रवेति । यवागूः पेयेत्यर्थः । आचार्य हेमाद्रि भी पेया को यवागू का एक भेद मानते हैं ।

यवागू

परिभाषा

द्रवैर्बहुविधैर्द्रव्यैस्तथा चान्नैरतण्डुलैः । यूष इत्युच्यते सिद्धो, यवागूस्तण्डुलैः सह ॥

(का.खिल. 4/18)

विविध प्रकार के द्रव जैसे– जल, क्वाथ, स्वरस आदि एवं औषध द्रव्य तथा शिम्बी धान्य जैसे मूँग, मसूर, आढकी आदि के साथ जो द्रव कल्पना निर्मित की जाती है, उसे यूष कहते हैं । तथा जब यह तण्डुल या शालि धान्य से निर्मित की जाती है तो इसे यवागू कहते हैं । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि द्रव एवं शालिधान्य/तण्डुल से निर्मित कल्पना को यवागू कहा जाता है ।

भेद—यवागू सिद्ध करने वाले द्रव्य दो प्रकार के होते हैं । या द्रव्यों के भेद के अनुसार निर्मित यवागू 2 प्रकार के होते हैं—

1. वीर्य प्रधान औषध द्रव्य से निर्मित ।
2. रस प्रधान आहार द्रव्य से निर्मित ।

वीर्य प्रधान औषध द्रव्य तीन प्रकार के होते हैं—

1. तीक्ष्ण वीर्य द्रव्य— जैसे शुण्ठी, पिप्पली आदि ।
2. मध्य वीर्य द्रव्य— जैसे बिल्व, आग्निमन्थ, श्योनाक आदि ।
3. मृदु वीर्य द्रव्य— जैसे आमलकी आदि ।

इन द्रव्यों की मात्रा आचार्य अग्निवेश ने निम्न बताई है—

कर्षार्धं वा कणा शुण्योः कल्क द्रव्यस्य वा पलम् ।
विनीय पाचयेद्युक्त्या वारि प्रस्थेन चापरम् ॥

अर्थात् तीक्ष्ण वीर्य द्रव्य $^1/_2$ कर्ष लेकर 64 तोले जल में

मृदु वीर्य द्रव्य 1 पल लेकर 64 तोले जल में

तथा मध्य वीर्य द्रव्य 1/2 पल लेकर 64 तोले जल में पाक करते हैं ।

तथा रस प्रधान आहार द्रव्य से यवागू निर्माण हेतु निम्न परिभाषा बताई गयी है—

क्वाथ्य द्रव्याञ्जलिं क्षुण्णं श्रपयित्वा जलाढके । अर्धशृतेन तेनाथ यवाग्वाद्युपकल्पयेत् ॥

Scanned with OKEN Scanner

एक आढक जल (256 तोला) में अक्षति प्रमाण (16 तोला) में वक्ष्यमाण द्रव्य को लेकर पकाते हुए आधा अवशिष्ट रखे। इस अवशिष्ट जल से यवागू आदि को सिद्ध करना चाहिए।

यदि कल्क से यवागू का निर्माण किया जाता है तो वहाँ सूदशास्त्र में निर्दिष्ट परिभाषा के अनुसार करते है यथा—

अन्नं पञ्चगुणे साध्यं विलेपी च चतुर्गुणे। मण्डश्चतुर्दश गुणे यवागूः षड् गुणेऽम्भसि॥

अर्थात् अन्न पकाते समय 5 गुना, विलेपी में 4 गुना, मण्ड में 14 गुना तथा यवागू निर्माण हेतु 7 गुना जल का प्रयोग करते है।

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार निर्माण विधि

साध्यं चतुष्पलं द्रव्यं चतुःषष्टिपलेऽम्बुनि। तत्क्वाथेनार्ध शिष्टेन यवागूं साधयेद्धनाम्॥
(शा.म. 2/52)

अर्थात् 4 पल (16 तोला) द्रव्य लेकर उसे 64 पल (256 तोला) जल में सिद्ध करते है तथा जब यह आधा शेष बचे तब उस अवशिष्ट जल से यवागू का निर्माण करते है। तथा यह यवागू घन अर्थात् द्रव रहित होती है।

अन्न प्रकिया वत यवागू निर्माण परिभाषा

अथान्नप्रक्रियात्रैव प्रोच्यते नातिविस्तरात्। यवागूः षड्गुण जले सिद्धा स्यात्कृशरा घना॥
तण्डुलैर्मुद्गमाषैश्च तिलैर्वा साधिता हिता। (शा.म. 2/164-65)

इस विधि में यवागू का निर्माण अन्न से 6 गुना जल लेकर किया जाता है। तथा इसका स्वरूप घन होता है।

विमर्श– आ. चक्रपाणि की टीका जो पूर्व में वर्णित है तथा आचार्य शार्ङ्गधर के दोनों निर्माण विधियों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यवागू का निर्माण 2 प्रकार के द्रव के प्रयोग से किया जाता है। प्रथण औषधियों का क्वाथ तथा दूसरा केवल जल के प्रयोग से। जब केवल जल के प्रयोग से यवागू निर्माण करना हो तो 6 गुना जल लेकर सिद्ध किया जाता है। तथा यदि क्वाथ से निर्माण करना है तो उसके पहले औषधियों के अनुसार (यथा मृदु, मध्य या तीक्ष्ण वीर्य) क्वाथ निर्माण कर या जिसकी परिभाषा आचार्य शार्ङ्गधर ने मध्यम खण्ड 2/52 के अनुसार कहीं है उसके अनुसार क्वाथ निर्मित कर पुनः चावल की मात्रा अनुमान से निश्चित कर यवागू का निर्माण किया जाता है।

आचार्य काश्यप अनुसार यवागू निर्माण विधि

द्रवाद्विंशति भागेन तण्डुलैः सह साधयेत्। तथा पञ्चदशाख्येन यवागूर्दशकेन वा॥
(का.खि. 4/72)

अर्थात् यवागू निर्माण हेतु चावल से 20 गुना द्रव लेकर चावल सिद्ध करना चाहिए। और भी यह यवागू 15 गूना द्रव लेकर या 10 गुना जल लेकर भी सिद्ध किया जा सकता है।

विलेपी

परिभाषा

चावल से निर्मित कल्पना जिसमें द्रव भाग अति अल्प तथा चावल घन मात्रा में होते हैं उसे विलेपी कहा जाता है।

निर्माण विधि

विलेपी घन सिक्था स्यात्सिद्धा नीरे चतुर्गुणे। (शा.म. 2/166)

चावल को चार गुना जल में पकाकर जिसमें सिक्थ घन अवस्था में हो उसे विलेपी कहा जाता है। यह तर्पण करने वाली, बृहंण, ह्रद्य, मधुर तथा पित्त का नाश करने वाली होती है।

आचार्य डल्हण के अनुसार–

विलेपी घन सिक्था, सा च लेह्या।

अर्थात् विलेपी में सिक्थ घन होते हैं तथा यह लेह्य (चाटने) योग्य होता है।

आचार्य सुश्रुत ने मण्ड, पेया, विलेपी तथा यवागू को एक श्लोक में निम्न रूप में परिभाषित किया है—

सिक्थैर्विरहितो मण्डः पेया सिक्थसमन्विता। विलेपी बहु सिक्था स्याद्यवागूर्विरलद्रवा॥
(सु.सू. 46/344)

मण्ड सिक्थ रहित होता है, पेया में सिक्थ होते है जबकि द्रव भाग अधिक रहते है। विलेपी में द्रव कम सिक्थ ज्यादा तथा यवागू में द्रव विरल होता है।

अन्न/ओदन

परिभाषा

अद्रवाणि सिक्थानि-ओदन (हेमाद्रि-अ.हृ. 6/26)

अर्थात् द्रव रहित सिक्थ को ओदन कहते हैं।

निर्माण विधि

ओदनो विशदः सिद्धः सुस्विन्नो निस्रुतो मृदुः। तण्डुलैः सकल प्रायैर क्षीणैश्चापि पठ्यते॥
(काश्यप खिल 4/70)

आचार्य काश्यप के अनुसार ओदन में तण्डुल अक्षीण (बिना टूटा हुआ) की स्थिति में होते हैं। यह ओदन विशद, मण्ड निकाला हुआ, मृदु तथा अच्छी प्रकार से सिद्ध किया हुआ होना चाहिए।

कृशरा कल्पना

कृशरा लोकभाषा में खिचड़ी के नाम से वयवहृत होता है। खिचड़ी का एक अर्थ मिला जुला होता है अर्थात् जिसमें शूक धान्य, शिम्बी धान्य, लवण, आर्द्रक, हिंगु आदि मिले हो या मिलाकर कल्पना बनाई गयी हो उसे कृशरा कहते हैं। आचार्य डल्हण एवं आचार्य शार्ङ्गधर ने इसे यवागू का ही एक प्रकार माना है।

परिभाषा

कृशरा तिलतण्डुल माष कृता यवागूः डलहण सु.सू. 46/346

अर्थात् कृशरा तिल, चावल तथा माष (उड़द), से निर्मित यवागू है।

Scanned with OKEN Scanner

तण्डुलाद्यानिषमिश्रा लवणाद्यैक हिङ्गुभिः । संयुक्ताः सलिले सिद्धाः कृशरा कथिता बुधैः ॥
(भा.प्र. मिश्र प्रकरण, कृतान्न)

तण्डुल, मुद्ग, लवण, आदैक, हिंगु को 6 गुने जल में पकाने है । इसे ही कृशरा कहा जाता है ।

आचार्य लोकेश्वर सेन ने कृशरा का पर्याय खिशरा कहा है ।

निर्माण विधि

यवागूः बहुजले सिद्धा स्यात्कृशरा घना । तण्डुलैर्मुद्गमाषैश्च तिलैर्वा साधिता हिता ॥
(शा.म. 2/165)

अर्थात् 6 गुने जल में तण्डुल (चावल), मुद्ग, माष (उड़द) तथा तिल आदि को लेकर बनायी यवागू जो घन स्वरूप में होती है, उसे कृशरा कहा जाता है ।

आचार्य अहमल्ल ने कृशरा निर्माण में प्रयुक्त द्रव्यों के मात्रा निर्धारण में कहा है कि 2 भाग तण्डुल, एक भाग माष, आधा भाग तिल तथा सभी द्रव्यों के मान से 6 गुना जल लेकर सिद्ध करने से इसका निर्माण होता है ।

यूष कल्पना

यूष कल्पना सामान्य रूप से शिम्बी धान्य जैसे, मूँग, मँसूर, अरहर आदि से निर्मित की जाती है । आचार्य काश्यप के अनुसार यूष आदि व्यञ्जनों से युक्त भोज्य पदार्थ स्वस्थ तथा रोगी दोनो के लिये पथ्य होता है तथा विशेष रूप से आरोग्य को देने वाला होता है । यथा—

यूषादि व्यञ्जनोपेतं भोज्यं पथ्यतरं भवेत् । स्वस्थानामातुराणां च विशेषारोग्यकारकम् ॥
(का.खि. 4/3)

आचार्य काश्यप के अनुसार यूष की परिभाषा निम्न है—

द्रव्यैर्बहुविधैद्रव्यैस्तथा चान्यैरतण्डुलैः । यूष इत्युच्यते सिद्धो, यवागूस्तण्डुलैः सह ॥
(का.खि. 4/18)

तण्डुलो को छोड़कर अन्य बहुत से पदार्थों को अनेक प्रकार के द्रवों के साथ मिलकर सिद्ध करने पर यूष कहलाता है । तथा यदि तण्डुलों के साथ सिद्ध किया जाय तो उसे यवागू कहते हैं ।

इसी प्रकार की परिभाषा आचार्य यादव जी ने भी दिया है—

कर्षमष्टमिकां वाऽपि कल्कद्रव्यस्य वा पलम् । वारिप्रस्थेन विपचेत् स द्रवो यूष उच्यते ॥
(द्रव्य गुण विज्ञान उत्तरार्ध श्री यादव जी)

आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार यूष निर्माण विधि

कल्क द्रव्य पलं शुण्ठी पिप्पली चार्धकार्षिकी । वारि प्रस्थेन विपचेत् य द्रवो यूष उच्यते ॥
(शा.म. 2/154)

आचार्य शार्ङ्गधर ने क्वाथ प्रकरण में ही यूष के निर्माण विधि/परिभाषा का वर्णन किया है । आचार्य के अनुसार

एक पल कल्क द्रव्य (अर्थात् 4 तोले) लेकर उसे 64 तोले जल में एक मिट्टी के पात्र में उबालते है । तथा इसमें आधे तोले की मात्रा में पिप्पली तथा शुण्ठी भी डाल देते हैं । जब यह सिद्ध हो जाय तो इसे क्वाथ वत वस्त्रपूत कर छान लेते हैं । यही यूष है ।

विमर्श– यूष सिद्ध करने के लिए मूँग आदि को कुछ भूनकर उसे 14 या 16 गुना जल में पकाकर आधा जल शेष रहने पर उतार लिया जाता है । संहिताओं में सूप का भी वर्णन प्राप्त होता है जो कि शिम्बी धान्यों जैसे मूँग, मसूर आदि से ही निर्मित किया जाता है । यूष और सूप में यह अन्तर है कि यूष को छान लिया जाता है तथा यह केवल द्रव होता है । जबकि सूप में दाल के दाने भी उपस्थित रहते हैं । यूष को इसलिए आचार्य वृद्ध जीवक ने द्रवयोनय भी कहा है ।

यूष के भेद

यूष के निम्न भेद आचार्यों ने बताये हैं—

1. रसों के अनुसार
2. दोषों के अनुसार
3. यापन के अनुसार
4. कृताकृत भेद अनुसार
5. वीर्य के अनुसार
6. द्रव्यों के संयोग अनुसार

1. रसों के अनुसार– आचार्य काश्यप ने रसों के आधार पर सम्पूर्ण प्रकार के यूषों को दो प्रकार का कहा है—

1. कषाय मधुर
2. कषाय अम्ल

यूषाः कषायमधुरा कषायाम्लाश्च भार्गवः! । द्विविधा विहिताः सर्वे सर्वे च द्रव योनयः ॥
(का.खि. 4/24)

इसके अतिरिक्त रसों के अनुसार यूष की संख्या 50 होती है । काश्यप संहिता खिलस्थान 4/23 के अनुसार–

पञ्चविंशतिरित्येते यूषाः काश्यपनिर्मिताः ।

अर्थात् आचार्य काश्यप द्वारा ये 25 प्रकार के यूष निर्मित है । इन्हें 2 प्रकार अर्थात् कषाय अम्ल एवं कषाय मधुर से भेद करने पर अर्थात् 25x2=50 इस प्रकार कुल संख्या 50 हो जाती है ।

2. दोषों के अनुसार–

दोष भेदेन यूषास्ते संख्याताः पञ्चसप्ततिः ॥ (का.खि. 4/28)

दोष भेद से ये यूष 75 कहे गये हैं । अर्थात् वात, पित्त एवं कफ के अनुसार 25x3=75 हो जाते हैं ।

3. यापन के अनुसार– यापन अर्थात् साध्य, याप्य तथा असाध्य के अनुसार (25x3=75) यूष की संख्या 75 मानी गयी है ।

Scanned with OKEN Scanner

4. कृताकृत भेद अनुसार–

कृताऽकृताऽकृतकृताः पित्तश्लेष्मानिलात्मसु । रोगेषु स्नेहयोगाच्च ते यूषास्त्रिविधाः स्मृताः ॥

(का.खि. 4/25)

पित्त, श्लेष्म तथा वातरोगों में स्नेह के योग के अनुसार तीन प्रकार के यूष माने गये हैं—

1. कृत 2. अकृत 3. कृताकृत

5 और 6. वीर्य एवं द्रव्यों के संयोग अनुसार–

त एव पाचनाः प्रोक्ताः कर्षण बृंहणास्तथा । शीतोष्णमिश्रवीर्यत्वान्नानाद्रव्योपसंश्रयात् ॥

(का.खि. 4/26)

ये यूष, शीत, उष्ण तथा मिश्र वीर्य के कारण तीन प्रकार तथा नाना द्रव्यों के संयोग से पाचन, कर्षण तथा बृंहण भेद से भी तीन प्रकार के होते हैं ।

तक्र

आचार्य भावमिश्र ने तक्र के बारे में कहा है कि—

यथा सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः ॥

अर्थात् जिस प्रकार देवताओं के लिए अमृत सुखकारी होता है उसी प्रकार मनुष्यों के लिए तक्र सुखकर होता है । अर्थात् तक्र अमृत के समान सुखकर होता है ।

तक्र की परिभाषा

आचार्य सुश्रुत ने तक्र को निम्न रूप में परिभाषित किया है—

मन्थनादि पृथाभूतस्नेहमर्धोदकं च यत् । नाति सान्द्र द्रवं तक्रं.....॥

(सु.सू. 45/85)

अर्थात् दही को मथने के उपरान्त उससे स्नेह निकाल कर तथा उसमें आधा भाग पानी मिलाने के उपरान्त ना अधिक गाढ़े द्रव को तक्र कहते हैं ।

आचार्य भावमिश्र के अनुसार ऐसा दही जिसका स्नेह न निकाला गया हो उसमें 1/4 भाग पानी मिलाने पर तक्र का निर्माण होता है । यथा—

तक्रं पाद जलं प्रोक्तं.....। (भाव प्रकाश तक्रवर्ग)

तक्र के भेद

आचार्य चरक ने तक्र के तीन प्रकार बताये हैं । यथा—

रूक्षमर्द्धोद्घृतस्नेहं यतश्चानुद्धृतं घृतम् । तक्र दोषाग्निबलवित्त्रिविधं तत् प्रयोजयेत् ॥

(च.चि. 14/84)

1. रूक्ष तक्र– जिसका सम्पूर्ण मक्खन निकाला गया हो ।

2. अर्द्धस्नेहयुक्त– आधा मक्खन निकाला गया हो ।

3. पूर्ण स्नेहयुक्त– सम्पूर्ण रूप से मक्खन युक्त हो ।

आचार्य भावमिश्र ने दधि में स्नेह के तर-तम भेद तथा जल की मिलाई जाने वाली मात्रा के अनुसार पाँच भेद कहे है । यथा—

घोलं तु मथितं तक्रंमुदश्चिच्छच्छिकाऽपि च । ससरं निर्जलं घोलं मथितं त्वसरोदकम् ॥
तक्रं पाद जलं प्रोक्तमुदश्चित्त्वर्धवारिकम् । छच्छिका सारहीना स्यात्स्वच्छा प्रचुरवारिका ॥

(भा.प्र. पूर्व तक्रवर्ग)

1. **घोल–** मलाई (सर) के साथ बिना पानी मिलाये जब दही को मथानी से मथ दिया जाता है तो उसे घोल कहते हैं ।
2. **मथित–** जब दही से मलाई (सर) पृथक् करके तथा बिना पानी मिलाये मथ दिया जाता है, तो उसे मथित कहते हैं ।
3. **तक्र–** जब दही का मक्खन निकाले बिना उसमें दही की मात्रा से एक चौथाई पानी मिलाकर मथ दिया जाता है तो उसे तक्र कहते हैं ।
4. **उदश्वित–** दधि के इसकी मात्रा से आधा मात्रा के बराबर जल मिलकार उदश्वित निर्मित किया जाता है।
5. **छच्छिका–** सर रहित दधि तथा अधिक मात्रा में जल मिलाकर बनने वाली कल्पना को छच्छिका कहा जाता है।

खड-काम्बलिक

खड एवं काम्बलिक यूष विशेष हैं । जहाँ यूष निर्माण हेतु द्रव द्रव्य के रूप में जल का प्रयोग सामान्य रूप से किया जाता है । वहीं पर खड के निर्माण में तक्र का प्रयोग तथा काम्बलिक के निर्माण में मस्तु का प्रयोग द्रव रूप में किया जाता है । आचार्य डल्हण ने सुश्रुत सूत्रस्थान 46/376 की टीका में खड काम्बलिक का वर्णन कई आचार्यो के मतानुसार किया है, जो कि निम्न है—

आचार्य डल्हण के अनुसार खड 2 प्रकार के होते है, यथा—

तत्र खडो द्विविधः– सतक्रशमीधान्यः, सतक्रशाकश्च । तथादि-सतक्राणि शमीधान्यानि स्निग्धानि संग्राहकाणि खडानि'' इति ।

सतक्रशाकस्तु '' कपित्थतक्रचाङ्गेरीमरिचाजाजि चित्रकैः । सुपक्वः खडयूषोऽयमथ काम्बलिकोऽपरः ।

अर्थात् खड 2 प्रकार के होते हैं–

1. सतक्रशमीधान्य 2. सतक्रशाक

निर्माण विधि

1. सतक्रशमीधान्य– इस प्रकार के खड के निर्माण में शमी धान्य यथा मुद्ग, माष आदि, स्नेह द्रव्य तथा घी को लेकर सर्वप्रथम शमी धान्य को तक्र में पका लेते हैं । पुनः इसमें घृत जीरा, लवण, शुण्ठी आदि मिलाकर प्रयोग करते हैं ।

Scanned with OKEN Scanner

2. सतक्रशाक– इस प्रकार के खड निर्माण हेतु शमीधान्य को तक्र में पका लेते है । पुनः इसमें कपित्थ, चाङ्गेरी मरिच, जीरा तथा चित्रकमूल एवं लवण (आवश्यकतानुसार) डालकर प्रयोग करते हैं ।

आचार्य चक्रपाणि ने अपने ग्रन्थ चक्रदत्त में इसी प्रकार ही खड यूष की परिभाषा कही है, यथा—

तक्रं कपित्थचाङ्गेरीमरिचाजाजिचित्रकैः । सुपक्वः खडयूषोऽयमयं काम्बलिकोऽपरः ॥

(चक्रदत्त अतिसार 29)

अर्थात् तक्र, कपित्थ, चांगेरी, काली मिर्च, जीरा तथा चित्रक इन सभी को एकत्र पकाकर जो यूष निर्मित किया जाता है, उसे खड यूष कहते है ।

आचार्य जेज्जट के मतानुसार दधि, दाड़िम, माष (उड़द), शाक तथा घृत से निर्मित व्यंजन को खड कहते हैं । यथा—

दधि दाडिम माष शाकस्नेहयुक्तं व्यञ्जनं खड इत्युच्यते ।

आचार्य नल ने खड को निम्न रूप में बताया है—

तिलं सुतृप्तिंत कृत्वा पिष्टं क्षीरे त्र्यहोषितम् । पटे पूतं पचेद्धीमानार्द्रकावापिते घृते ॥
मरिचाजाजिसामुद्रैर्युक्तस्तिल खडो भवेत् ।

अर्थात्, तिल को अच्छी प्रकार से पीसकर उसे दूध में डालकर तीन दिन तक के लिए रख देते हैं । पुनः इस दूध को छानकर पका लेते है तथा इसे दधि बना लेते हैं । पुनः इस दधि में घृत, आर्द्रक, मरिच, जीरा तथा सामुद्र लवण डालते हैं । यह तिल खड है ।

काम्बलिक

निर्माण विधि

दधिमस्त्वम्लसिद्धस्तु यूषः काम्बलिकः स्मृतः । पुनः सौवर्चलाजाजी बीज पूरक सौरभैः ॥
संयोज्य मथितः स्वच्छ एव काम्बलिको भवेत् । (डल्हण, सु.सू. 46/376)

जिस यूष का निर्माण दधिमस्तु (दही का पानी) की सहायता से किया जाय उसे काम्बलिक कहा जाता है । इसके निर्माण में सर्वप्रथम शमीधान्य को दधिमस्तु में पका लेते हैं । पुनः इसमें सौवर्चल लवण, जीरा, बिजौरा निम्बू स्वरस तथा अन्य सुगन्धित द्रव्य जैसे एला, लवङ्ग, तेजपत्रा आदि का चूर्ण मिला देते हैं । यही काम्बलिक है । यथा—

आचार्य डल्हण के अनुसार काम्बलिक विशेष रूप से अम्ल होता है । यथा—

तक्राम्लसिद्धः काम्बलिकः, अम्लानां, बहुत्वात् । (डल्हण, सु.सू. 46/376)

आचार्य काश्यप के अनुसार काम्बलिक निर्माण विधि

रोहितापोतमत्स्यानां निर्यूहं साधयेज्जले । तं क्वाथं साधयेद्भूयः शुक्तकाञ्जिक मस्तुभिः ॥
द्रवाणि कुडवीजानि गुडपञ्चपले श्रृतः । एष काम्बलिको रुक्षः कटुतैलेन वा कृतः ॥

(का.खि. यूष निर्देश 54-55)

रोहित मछली को जल में पकाकर उसका क्वाथ करते हैं । पुनः इस क्वाथ में शुक्त (सिरका), काञ्जी तथा मस्तु के साथ सिद्ध करते हैं । तथा इसमें कुड़व बीज एवं पाँच पल गुड़ लेकर पकाते हैं । इसे काम्बलिक कहते हैं।

राग षाडव

आचार्य सुश्रुत ने राग षाडव को निम्न रूप में परिभाषित किया है, यथा—

ज्ञेयाः पथ्यतमश्चैव मुद्गयूषः कृताकृतः । स तु दाडिममृद्वीकायुतः स्याद्रागषाडवः ॥

(सु.सू. 46/367)

अर्थात्, मुद्गयूष, चाहे वह कृत हो या अकृत हो, पथ्यतम होते है । तथा इस मुद्गयूष को यदि मृद्वीका से संस्कारित कर दिया जाय तो ऐसे मुद्गयुष की संज्ञा राग षाडव दी जाती है । आचार्य डल्हण ने राग षाडव को मुद्गयूष के दाडिम, मृद्वीका के संयोग से उपरान्त दिये गये नाम को कहा है ।

आचार्य डल्हण ने ही राग तथा षाडव को निम्न रूप से कहा है, यथा—

राग–

सितारूचकसिन्धूत्थैः सवृक्षाम्लपरुषकैः । जम्बूफलरसैर्युक्तो रागो राजिकया कृतः ॥ इति ।।

अर्थात् सिता, रूचक, सेन्धानमक, वृक्षाम्ल, परुषक, जम्बूफल रस, राई से युक्त यूष को राग कहा जाता है ।

षाडव— षाडवाः पुनर्मधुराम्ललवण संयोगजानानविधाः ।

षाडव, मधुर, लवण तथा अम्ल रस के संयोग से बनते हैं तथा ये विभिन्न प्रकार के होते हैं ।

यद्यपि आचार्य सुश्रुत ने यहाँ पर यूष विशेष को ही राग षाडव कहा है । लेकिन अन्य ग्रन्थों का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि राग षाडव अन्य विभिन्न कल्पनाओं के रूप में भी हो सकते हैं ।

निर्माण विधि

वैद्यक शब्द सिन्धु में राग षाडव को निम्न रूप में निर्माण करने का उल्लेख मिलता है, यथा—

आममाम्रं त्वचाहीनं द्वित्रिर्वा खण्डितं ततः । सुपक्वं च समुत्तार्य मरिचैलेन्दुवासितम् ॥
स्थापितं स्निग्धमृद्भाण्डे राग षाडव संज्ञितः ॥

कच्चे आम को छीलकर उसको दो-तीन टुकड़े करते हैं । तथा एक पात्र में पानी के साथ पकाते हैं, तथा जब यह पक जाय तो उतार कर उसमें मरिच, एला तथा कर्पूर से सुगन्धित करते है (डाल देते हैं) तथा इसे एक मिट्टी के पात्र में, जिसमें घृत लेप किया गया हो, सुरक्षित रख लेते हैं । इसे राग षाडव कहते हैं ।

क्वथितं तु गुडोपेतं सहकारफलं नवम् । तैलनागर संयुक्तं विज्ञेयो राग षाडवः ॥

कच्चे आम के फल के छोटे-छोटे टुकड़े कर उसका क्वाथ कर लेते हैं । तत् पश्चात् इसमें गुड़ तैल तथा शुण्ठी मिला देते हैं । यही राग षाडव है ।

प्रकार—गदनिग्रह में कल्क रूप में, चूर्ण रूप में तथा गुटिका स्वरूप में भी राग षाडव का उल्लेख प्राप्त होता है, यथा—

Scanned with OKEN Scanner

चूर्ण षाडव–

कोलाम्रचूर्णं सितया समेतं सन्मातुलुङ्गाम्ररसेन सिक्त्वा।
पुनः पुनः सूर्यकरैर्विशोषितः सिन्धूत्थयुक्चूर्णक खाडवोऽयम्॥

(गदनिग्रह वाजीकरण 106)

जङ्गली बैर चूर्ण, आम्रचूर्ण, चीनी इन्हें समभाग में लेकर अच्छी प्रकार से मिला लेते हैं। तत्पश्चात् इसमें मातुलङ्ग नींबू स्वररस की भावना लेकर धूप में सुखा लेते हैं तथा इसमें आवश्यकतानुसार सैन्धव नमक चूर्ण मिलाकर रख लेते हैं। इसे चूर्ण षाडव कहते हैं।

कल्क षाडव–

षाऽवश्च कपित्थानां सव्योष मधुशर्कर :। अरोचकेषु सर्वेषु प्रशस्तो धारितो मुखे॥

(गदनिग्रह अरोचक 13/20)

कपित्थ, त्रिकटु, मधु तथा शर्करा को पीसकर कल्कवत् कर लेते हैं। यह सभी प्रकार के अरोचक को मुख में धारण करने से नष्ट करते हैं।

तथा,

अजाज्यौ मरिचं द्राक्षा तिन्तिडीकं सदाडिमम्। सौवर्चलं कारवी च गुडमाक्षिक संयुतः॥
द्राक्षाषाडव इत्येष ख्यातो मुखविशोधनः। अरोचकानां सर्वेषां प्रशस्तः षाडवोत्तमः॥

(गदनिग्रह अरोचक 13/20)

कृष्ण जीरक, श्वेत जीरक, काली मिर्च, द्राक्षा, इमली, दाड़िम, सौवर्चल लवण, मंगरैल को एक साथ पीसकर चूर्ण कर इसमें गुड़ तथा माक्षिक (मधु) मिला देने के उपरान्त इसे द्राक्षा षाडव की संज्ञा दी जाती है। तथा यह द्राक्षा षाडव मुख शोधन तथा सभी प्रकार के अरोचक में प्रशस्त होती है।

गुटिका षाडव–

कपित्थकाम्राणि सदाडिमानि पिष्टानि सूक्ष्मं सितया युतानि।
सबीजपूराम्बु विभावितानि सन्तर्पणोऽयं गुटिकाख्यखाडवः॥

(गदनिग्रह वीज 105)

कपित्थ फल, आम का कच्चा फल, अनार, इन तीनों को समान भाग में पीसकर उसमें चीनी पीस कर मिला देते हैं। तत् पश्चात् इसको बिजौरा नींबू स्वरस की भावना देकर गुटिका बना लेते हैं। यह गुटिका खाडव है। यह षाडव सन्तर्पण करने वाली होती है।

Research update

1. Dietetic preparations mentioned in Ayurvedic texts can be used as food supplements for ill patients. Yavagu and Manda contains the main ingredients as rice, Yusha (Main ingredients as pulse), Raga Shadava (Main ingredients are sugar, rock salt and juice of pome granate). Such food preparations provide nutrition as well as it contain various medicinal plants, fruits, vegetables, oil etc. which may be useful to improve the quality of life of patients and serve as a medicinal diet.[1]
2. Providing right gut environment with right diet can help to establish the right microbiomeni, which can have significant metabolic benefits and help to boost immunity and help to prevent infections. Ayurvedic Pathya Kalpana may have significant role in providing nutrition, food satisfaction and health benefits in various ailments in quick and affordable way.[2]
3. Using spices in food preparation has many health benefits like digestive stimulant action, bio-enhancer, hypor-lipidemic effect, anti-diabetic influence, anti-oxident potential, anti-inflammatory property etc.[3]
4. 'Pathya Aaharar Kalpana' makes our food healthy and suitable. It is helpful in the both the conditions viz : Swastha (Healthy) and Aatur (Diseased). It is Ayurved's approach that the Jataharagni (Digestive capacity) of the patients is equally important to that properties of Aushadha. It also makes the food pleasurable thus acting over both Physical and mental.[4]
5. Dietary supplements and herbal remedies are popular complementary or alternative products for people. These are the supplements that are intended to supplement the diet and contain one or more dietary ingredients (including vitamins, minerals, herb or other botanicals amino acids and other substances) or their constituents.[5]
6. The dietary preparation are more balanced and provide all the nutrients which help in allying the disease. Moreover the conditments used in Pathya Kalpana have been described as curative of various diseases.[6]

Market Survey of Dietary Supplement

Dietary supplement– Dietary supplements are intended to add to or supplements the diet and are different from conventional food. Supplements are ingested and come in

1. Goyal M Role of Ayurveda in end-of-life care. Ayu 2019;40:1-2.
2. Rajan R; Mohanan A : Dhanya S : Ramesh NV Covid-19 and functional food. Exploring Ayurvedic Knowledge on food Habits and Dietary preparation in Human Health W.S.R. to Pathya Kalpana (Whole some Diet). 2021, 68, https://doi.org/10.3390/xxxxx.
3. Ayush Dietary Advisory for Kuposhan Muht Bharat www.ayush.gov.in
4. Rajendra Garg et.al/International Journal of Ayurveda/Feb. 2021/Vol. 6/Issue 02/33-41.
5. Pandey MM, RastogiS, Rawat A.K. Indian traditional ayurvedic system of medicine and nutritional supplementation. Evid based complement. Alternate Med. 2013; 2013:376327. doi;10.1155/2013/376327. Epub 2013 Jun 23.
6. Pandey A, BhushanS, Chaudhary A. worthy diet and dosage forms in decree on diseases for Healthy days : A doctrine of Ardour J. Nutri. 2017; 4(3):166. PMID. 23864888; PMCID:PMC 3705899.

Scanned with OKEN Scanner

many forms, including tablets, capsules, soft gels, caps, powder, bars, gummies and liquids. Dietary supplement can improve or maintain overall health and supplements can also help to meet the daily requirements of essential nutrients. The class of nutrient compounds include vitamins, minerals, fiber, fatty acids and amino acids.

Market Survey can be done on following points.

1. Dietary supplement market by type - e.g. Botanicals, Vitamins, minerals, aminoacid probiotics, enzymes
2. Form - Tablet, Capsule Granules, Iincutus etc.
3. Function - Rejuvenator, body builder
4. Health application
5. Target consumer - Children, women, elderly person etc.
6. Distribution channel (Pharmacy, Supermarket/Hyper market/online)
7. Geography
8. Global forecast

https://www.gminsights.com

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. अवलेह के निर्माण हेतु निम्न में किसकी आवश्यकता होती है?
   a. क्वाथ b. शहद c. चीनी **d. उपरोक्त सभी**
2. निम्न में एक अवलेह सिद्धि लक्षण नहीं है—
   a. वर्ति निर्माण b. अप्युमज्जन c. तार बनना d. पीडिते मुद्रा
3. यदि क्षीर से स्नेह कल्पना सिद्ध करते है तो पाक कितने दिन तक करना चाहिये?
   a. 3 रात्र b. 1 रात्र **c. 2 रात्र** d. 5 रात्र
4. मद्य कल्पना में निर्मित Alcohol है—
   a. C_2H_5OH b. CH_3OH c. CH_3COOH d. C_3H_7OH
5. धातकी पुष्प की योनि है—
   a. धान्य b. फल **c. पुष्प** d. सार
6. ग्रीष्म ऋतु में सामान्य संधान काल है—
   a. 5-7 दिन b. 7-10 दिन **c. 15-20 दिन** d. 20-25 दिन
7. पेया में प्रयुक्त जल की मात्रा है—
   a. 5 गुना b. 4 गुना **c. 14 गुना** d. 6 गुना
8. रसों के अनुसार यूष की संख्या है—
   a. 50 **b. 75** c. 60 d. 6
9. छच्छिका में जल होता है—
   a. दधि से आधा b. दधि से चौथाई c. दधि तुल्य **d. कोई नहीं**
10. खड किसका प्रकार है?—
    a. पानक **b. यूष** c. षाडव d. यवागू

अध्याय **8**

रस द्रव्य परिचय-I

1. पारद

पारद के पर्याय

पारद के विभिन्न नाम (पर्याय) का उल्लेख रसशास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में विभिन्न प्रकरण के अनुसार किया गया है। जो कि निम्न रूप में वर्णित है–

1. **गत्यात्मक–** पारद की चंचलता/गति को बताता है, यथा–

   (i) खेचर, (ii)चपल, (iii)धूर्तक, (iv) चल

2. **देवात्मक–** पारद को शिव वीर्य माना गया है तथा भगवान शिव के नाम से इस प्रकार वर्णित किया गया है–

   (i) त्रिनेत्र, (ii) लोकेश, (iii) शिववीर्य, (iv) त्रिलोचन, (v) देहज, (vi) देव, (vii) प्रभु, (viii) बीजेन्द्र, (ix) रूद्रज, (x) शान्त, (xi) बुध, (xii) शान्तः, (xiii) रजस्वलः, (xiv) शिवः, (xv) स्कंद, (xvi) शिवाद्वय, (xvii) शिवबीजम्, (xviii) हरतेज, (xix) हररेतः, (xx) स्कंदाशक।

3. **दर्शन रूपात्मक–** पारद के यह पर्याय इसके दार्शनिक पक्ष को प्रस्तुत करते हैं–

   (i) जैव, (ii) जीव, (iii) दिव्य, (iv) अचिन्त्यः

4. **देहवादात्मक–** देहवाद को उल्लेख करता है–

   (i) अमृतम, (ii) परमामृतम्, (iii) पारदः, (iv) पारतः, (v) जैत्र, (vi) देहदः, (vii) रसायन, (viii) रसायन श्रेष्ठ, (ix) मृत्युनाशनः।

5. **धातुवादात्मक–** जिस पर्याय से धातुवाद हेतु प्रयोग होने का उल्लेख है यथा–

   (i) महारस, (ii) रसः, (iii) रसेन्द्र, (iv) मिश्रक, (v) सूत, (vi) सूतक, (vii) रसेश, (viii) रसोत्तम, (ix) सूतराटः, (x) रसधातु, (xi) रसनाथ, (xii) रसलेह, (xiii) दिव्यरस, (xiv) रसराज, (xv) सिद्ध धातु।

6. **स्वरूपात्मक–** इन पर्यायों से पारद के स्वरूप का ज्ञान होता है।

   (i) गलद रौप्यनिभम्, (ii) सुवर्ण, (iii) महाबह्नि, (iv) चामर, (v) महातेज

7. **विशिष्ट गुणात्मक–** इससे पारद के विशिष्ट गुण युक्त होने का उल्लेख मिलता है–

   (i) अनन्त, (ii) अमर, (iii) सूक्ष्म, (iv) सौभाग्य, (v) यशादे, (vi) कलिकान्तक

Scanned with OKEN Scanner

Physical properties of Mercury

Lusture	-	Metallic
Transparency	-	Opaque
Colour	-	Tin white
Density	-	13.596 g/cm^3 (measured)

पारदोत्पत्ति (Natural Source of Parada)

रसरत्न समुच्चय में पारदोत्पत्ति का निम्न वर्णन किया गया है–

शैलेऽश्मिञ्शिवयोः प्रीत्या परस्परजिगीषया । सम्प्रवृत्ते च सम्भोगे त्रिलोकीक्षोभकारिणि ॥
विनिवारयितुं वह्निः संभोगं प्रेषितः सुरैः । काङ्क्षमाणैस्तयोः पुत्रं तारकासुरमारकम् ॥
कपोतरूपिणं प्राप्तं हिमवत्कन्दरेऽनलम् । अपक्षिभावसंक्षुब्धं स्मरलीलाविलोकिनम् ॥
तं दृष्ट्वा लज्जितः शम्भुर्विरतः सुरतात्तदा । प्रच्युतश्चरमो धातुर्गृहीतः शूलपाणिना ॥
प्रक्षिप्तो वदने वह्नेर्गङ्गायामपि सोऽपतत् । बहिःक्षिप्तस्तया सोऽपि परिदन्दह्यमानया ॥
सञ्जातास्तन्मलाधानाद्धातवः सिद्धिहेतवः । यावदग्निमुखाद्रेतो न्यपतद्दूरिसारतः ॥
शतयोजननिम्नांस्तान्कृत्वा कूपांस्तु पञ्च च । तदाप्रभृति कूपस्थं तद्रेतः पञ्चधाऽभवत् ॥

(र.र.स. 1/61-67)

हिमालय पर्वत पर शिवजी तथा पार्वती जी का प्रेम पूर्वक एक दूसरे को हराने की इच्छा से तीनों लोकों में कम्प उत्पन्न करने वाला सम्भोग जब प्रारम्भ हुआ तब तारकासुर नाम के राक्षस का वध करनेवाला पुत्र उनसे (शिव-पार्वती से) शीघ्र पैदा हो ऐसा चाहने वाले देवों ने उस सम्भोग को समाप्त करने हेतु अग्नि देव को भेज दिया था । अग्नि देव कपोत का रूप लोकर हिमालय की गुफा में आये और पक्षी के स्वभाव के विपरीत मदन व्यापार (चंचलता) उत्पन्न हुई तथा रतिक्रीड़ा को जो देख रहा है ऐसे अग्नि देव को देखकर शिव जी को लज्जा उत्पन्न हुई तथा उन्होंने सम्भोग को समाप्त कर दिया ऐसे समय जो उनके शरीर से वीर्य द्रवित हुआ उस वीर्य को शिव जी ने अपने हाथ में लेकर उसे अग्नि के मुख में फेक दिया । अग्नि उस वीर्य के तेज को न सहन कर सकने के कारण उसे गंगाजी में गिरा दिया । गंगा जी भी ज्वलन के कारण उस वीर्य को बाहर फेंक दिया । इस प्रकार फेके हुए उस वीर्य के मलभाग से सिद्धि (देह एवं धातु सिद्धि) देने वाले पारदादि भिन्न-भिन्न धातु उत्पन्न हुए । शिव जी का वीर्य बहुत भारी होने के कारण एक सौ योजन गहरे पाँच कुओं को बनाता हुआ वह वीर्य पाँच प्रकार का हो गया ।

विमर्श– *पारद का उपरोक्त वर्णन शास्त्रानुसार पारद की उत्पत्ति का वर्णन है । आधुनिक मतानुसार इसका सामञ्स्य ऐसे किया जा सकता है । क्षोभ अर्थात् जहाँ पर कम्पन हो ऐसा कम्पन प्रायः ज्वलामुखी के फटने के समय होता है । अग्नि अर्थात् ज्वलामुखी का लावा है । वीर्य स्खलन जो लावा बाहर आता है वह निश्चित ही पृथ्वी के अन्दर की चीजों को बाहर लाता है । आधनिक युग में भी यह बात सिद्धि है कि ज्वालामुखी के आसपास ही पारद के खाने पाये जाते हैं लेकिन सभी खदाने ज्वालामुखी के पास नहीं पाये जाते है । आजकल के भारत में पारद से कोई खान नहीं पायी जाती है । आर्यावृत जिसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है वहाँ पर पारद निश्चित रूप से पाया जाता रहा होगा तथा उपरोक्त वर्णन वहीं से सम्बन्धित होगा ।*

शास्त्रों में वर्णित पारद प्राप्ति स्थान– *रस शास्त्रीय ग्रन्थों में पारद तथा इसके खनिज हिंगुल एवं गिरि सिन्दूर के स्थान के विषय में निम्न वर्णन आता है–*

- *पश्चिमे तु रसेन्द्रं हि पूजयेत् सिद्धिपूर्वकम्– रससार*
- *पश्चिमायां विमुक्तं यत् सूतोऽभूत् सर्वकार्यकृत्– रस संकेत कलिका । उपरोक्त दोनों प्रकरणों में पश्चिम दिशा में पारद प्राप्ति स्थान (देश) का वर्णन है ।*

आधुनिक मतानुसार पारद प्राप्ति

The abundance of mercury in the earth's crust has been reported at 0.08 ppm. In nature it can exist as–

- Metal
- Inorganic compound
- Organic compound

The most prevalent mineral of mercury is cinnabar (HgS). It is found in highest concentration in volcanically active zone such as the circumpacific volcanic belt, the East pacific rise and the Mid-Atlantic Ridge (Ehrlich, H.L.; Newman D.K. (2008) ISBN 978-0-8493-7906-2 Geo microbiology CRC press p 265.]

Mercury is found either as a native metal, which is rare, or in cinnabar, meta cinnabar, corderoite, livingstonite and other mineral with cinnabar (HgS) being the most common. Mercury is most commonly produced in Spain particularly from Almaden mine which is known for its high quality mercury. It may also be obtained from United States (mainly California), Yugoslavia and Italy. The Mt. Amiata mining district (Southern Tuscany, Italy) is a world class district with a cumulate production of more than 100,000 tonnes of Hg between 1870-1980. Besides these countries like Peru, Mexico, China, Australia, France, Hungery etc. are also mercury producing country.

पारद के खनिज– पारद के मुख्य खनिज निम्न है–

1. Calomel – $(Hg_2)^{2+}Cl_2$ (Hg_2Cl_2)
2. Cinnabar – HgS
3. Meta cinnabar– HgS
4. Eglestonite– $(Hg_2)^{2+}{}_3OCl_3(OH)$
5. Terlinguaite– $(Hg_2)^{2+}Hg^{2+}{}_2Cl_2O_2$
6. Lovingstonite– $HgSb_4+S_8$ (It is a mercury antimony sulfosalt mineral and is black in colour)

पारद के प्रकार

पारद के भेद– क्षेत्र भेद (कूप भेद) से पारद के पाँच प्रकार कहे गये हैं । इसका वर्णन निम्न है–

Scanned with OKEN Scanner

रसो रसेन्द्रः सूतश्च पारदो मिश्रकस्तथा। इति पञ्चविधो जातः क्षेत्र भेदेन शम्भुजः ॥
(र.र.स. 1/68)

1. रस 2. रसेन्द्र
3. सूत 4. पारद 5. मिश्रक

ग्राह्य लक्षण

पारद के ग्राह्य लक्षण का वर्णन निम्न है–

अन्तः सुनीलो बहिरूज्ज्वलो यो मध्याह्नसूर्यप्रतिमप्रकाशः। योज्योऽथ.....॥ (आ.प्र. 1/139)

ऐसा पारद जिसके अन्दर नीलवर्ण की आभा तथा परिच्छाया स्पष्ट रूप से दिखाई दे जिससे पारद में एक तरह से प्रतिबिम्ब ग्रहिता शक्ति दिखाई दे तथा बाहर से उज्जवल, निर्मल एवं श्वेत तथा दोपहर के सूर्य के समान तेजस्वी पारद को शोधन आदि रस कार्य हेतु प्रयोग करना चाहिए।

अग्राह्य लक्षण

धूम्रःपरिपाण्डुरश्च चित्रो न योज्यो रसकर्म सिद्धये ॥ (आ.प्र. 1/139)

धूम्र (कृष्ण लोहित वर्ण), पीत संवलित शुक्ल वर्ण तथा चित्र (कर्बुर) वर्ण का पारद रसकर्म हेतु नहीं प्रयोग करना चाहिए।

पारद दोष

एवंभूतस्य सूतस्य मर्त्यमृत्युगदच्छिदः। प्रभावान्मानुषा जाता देवतुल्यबलायुषः ॥
तान्दृष्ट्वाऽध्यर्थितो रुद्रः शक्रेण तदनन्तरम्। दौषैश्च कञ्चुकाभिश्च रसराजो नियोजितः ॥
तदाप्रभृति सूतोऽसौ नैव सिध्यत्यसंस्कृतः ॥ (र.र.स. 1/80-82)

जरा, मृत्यु तथा रोगनाशक आदि गुणों से युक्त होने के कारण तथा सभी सिद्धियों को प्रदान करने के कारण मनुष्य भी देवताओं के सदृश बलवान एवं दीर्घायु हो गये। जिस कारण देवराज इन्द्र ने रुद्र (शंकर जी) से प्रार्थना की जिस पर उन्होंने पारद को दोष एवं कञ्चुक से युक्त कर दिया। जिससे यह पारद (सूत) बिना संस्कृत होने पर या बिना शुद्धि के वैसा गुण नहीं प्रदान करता है।

विमर्श– पारद एक खनिज द्रव्य है जो कि पृथ्वी के गर्भ से प्राप्त होता है जिस कारण इसमें विभिन्न प्रकार की अशुद्धि होती है। जिसे प्रयोग से पूर्व दूर करना नितान्त आवश्यक होता है।

पारद के दोषों का वर्णन रसरत्न समुच्चय में निम्न रूप में प्राप्त होता है–

1. नैसर्गिक दोष
2. यौगिक दोष
3. औपाधिक दोष

1. नैसर्गिक दोष– पारद में स्वाभाविक रूप से पाये जाने वाले दोष को नैसर्गिक दोष कहा जाता है। जिसे शोधन या संस्कार करके दूर करना अत्यन्त आवश्यक है। नैसर्गिक दोष निम्न है–

विषं बह्निर्मलश्चेति दोषा नैसर्गिकास्त्रयः। (र.र.स. 11/17)

अर्थात् विष, बह्नि तथा मल ये तीन पारद के नैसर्गिक दोष है। इन दोषों को यदि दूर न किया गया तथा उसका प्रयोग मनुष्य में किया जाय तो निम्न प्रभाव दर्शाता है, यथा–

रसे मरणसन्तापममूर्च्छानां हेतवः क्रमात् ॥ (र.र.स. 11/17)

अर्थात् विष दोष रहने पर मरण, अग्नि (बह्नि) दोष से सन्ताप तथा मल दोष के रहने पर मूर्च्छा होती है।

2. यौगिक दोष– यौगिक दोष ऐसे होते है जिनके साथ पारद योग (मिलावट) रूप में मौजूद रहता है।

इसके प्रकार तथा इससे होने वाली प्रभाव का निम्न वर्णन है–

यौगिकौ नागवङ्गौ द्वौ तौ जाड्याध्मान कुष्ठदौ ॥ (र.र.स. 11/18)

नाग और वङ्ग ये दो यौगिक दोष हैं जिनके उपस्थित रहने पर यदि पारद सेवन किया जाय तो जड़ता आध्मान तथा कुष्ठ रोग होता है।

3. औपाधिक दोष– औपाधिक दोष ऐसे दोष होते है जो पारद में विभिन्न कारकों जैसे भूमि, जल आदि के संसर्ग से उत्पन्न होता है। पारद जिस स्थान से पृथ्वी से निकाला जाता है या प्राप्त होता वहां की भूमि के सम्पर्क से भूमिज दोष होता है। इसी प्रकार जल के सम्पर्क से वारिज दोष होता है। औपाधिक दोषों को ही कञ्चुक दोष कहा जाता है। क्योंकि पारद का विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) सबसे ज्यादा होता है अतः उपरोक्त दोष पारद के ऊपर सतह पर ही एक अवारण (Covering) के रूप में मौजूद रहते है इसलिए इन्हें कंचुक दोष की संज्ञा दी गयी है। रसतरंगिणी में इन्हें निम्न रूप से वर्णित किया है–

धातवो रस संश्लेष्टा यदा विष्णुपदामृतम्। गृह्णन्ति हि तदा तेषां कश्चिद् भागोऽवशीर्यते ॥
ततश्चूर्णत्वमापन्ना रसमाच्छादयन्ति ते। तेनावरणसाम्येन धातवः सूतसंगताः ॥
कञ्चुकाख्यां भजन्तीति प्राच्यपाश्चात्त्यसम्मतिः। केचिदेते कञ्चुकाख्या दोषा औपाधिकाः स्मृताः ॥
(र.त. 5/11-13)

पारद में मिश्रित नाग, वङ्ग आदि धातुयें जब विष्णुपदामृत (Oxygen) से संयोग कर Oxidise हो जाते हैं तो उनका Oxidised भाग अवशिष्ट होकर चूर्ण रूप में पारद को आच्छादित कर लेता है। आवरण के रूप में धातु के पारद को आच्छादित करने से आधुनिक तथा प्राचीन लोग इसे कञ्चुक के नाम से व्यवहृत करते हैं। कोई-कोई इस कञ्चुक को औपाधिक दोष से भी कहते हैं।

औपाधिकाः पुनश्चान्ये कीर्तिताः सप्त कञ्चुकाः। भूमिजा गिरिजा वार्जा द्वे च द्वे नागवङ्गजे ॥
(र.र.स. 11/19)

औपाधिक दोष को ही कुछ आचार्य सप्त कञ्चुक दोष कहते हैं। ये सप्तकञ्चुक दोष भूमि, गिरि, वारि तथा नाग से दो एवं वंग से दो इस प्रकार कुल सप्त अर्थात् सात होते हैं।

सप्त कंचुक दोषों के नाम

पर्पटी पाटनी भेदी द्रावी मलकरी तथा। अन्धकारी तथा ध्वाङ्क्षी विज्ञेयाः सप्त कञ्चुकाः ॥
(र.र.स. 11/21)

पर्पटी, पाटनी, भेदी, द्रावी, मलकरी, अन्धकारी तथा ध्वाङ्क्षी ये सात कंचुक दोष हैं।

Scanned with OKEN Scanner

इनकी उत्पत्ति को निम्न रूप में दर्शाया जा सकता है–

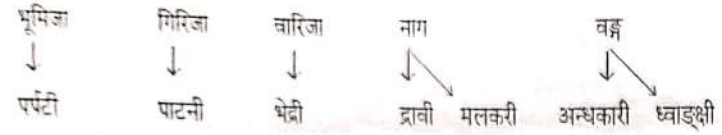

उपरोक्त दोषों से हानि– यदि भूमिज आदि दोष पारद में उपस्थित रहते हैं तो ऐसे पारद प्रयोग से निम्न हानि होती है–

भूमिजाः कुर्वते कुष्ठं गिरिजा जाड्यमेव च । वारिजा वातसङ्घातं दोषाढ्यं नागवङ्गयोः ॥

(र.र.स. 11/22)

भूमिज से कुष्ठ, गिरिज से जड़ता वारि से वात विकार तथा नाग एवं वङ्ग दोषों को प्रकुपित करते हैं ।

विमर्श– उपरोक्त वर्णित पर्पटी, पाटनी आदि दोषों की व्याख्या में पर्पटी दोष से शरीर को शोष या शोषिणी करने वाला, पाटिनी अर्थात् विदारकत्व करने वाला, मल भेद करने से भेदी, शरीर की धातुओं को द्रवित करने से द्रावी, दोष बढ़ाने से मलकरी, अन्धता जनन करने से अन्धकारी तथा कर्कश स्वर करने ध्वाङ्क्षी दोषों की संज्ञा दी गई है । (पं. श्रीमदाशुबोध विद्याभूषण एवं श्री नित्यबोध विद्यारत्न की टीका अनुसार)

आयुर्वेद प्रकाश के अनुसार पारद दोष

नागो वङ्गो मलो वह्निश्चापल्यं च विषं गिरिः । असह्याग्निर्महादोषा निसर्गात्पारदे स्थिताः ॥

(आ.प्र. 1/10)

अर्थात्, नाग, वङ्ग, मल, वह्नि, चापल्य (चपलता), विष, गिरि तथा असह्याग्नि (अग्नि को न सहन करना) ये आठ पारद के महादोष है जो कि प्राकृतिक रूप से पारद में स्थित रहते हैं । इनमें विष, वह्नि तथा मल ये तीन मुख्य दोष हैं । आयुर्वेद प्रकाश में भी पारद के दोष रसरत्न समुच्चय के जैसा ही कुल 12 माना है, यथा–

द्वादशैते रसे दोषाः प्रोक्ता रसविशारदैः । (आ.प्र. 1/11)

इन बारह दोषों को निम्नरूप में प्रदर्शित किया जा सकता है–

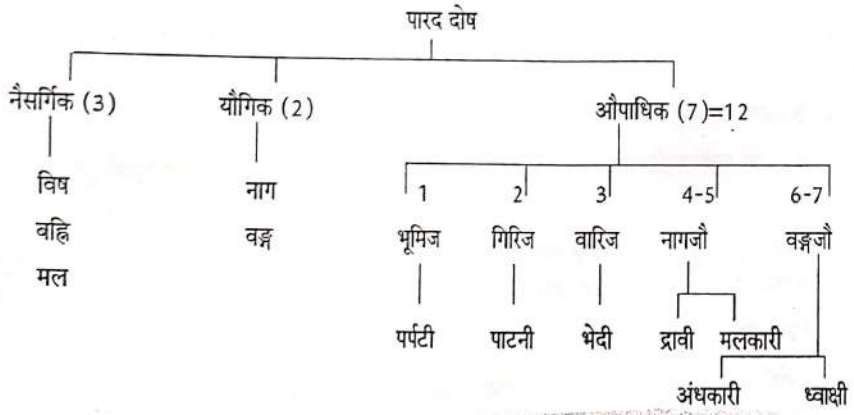

पारद के दोष दूर करने के उपाय– पारद के उपरोक्त दोषों को दूर करने हेतु शास्त्रों में संस्कार/शोधन का वर्णन किया गया है, जो निम्न है–

	दोष	दूर करने हेतु प्रक्रिया
1.	विष	चित्रकमूल से मूर्च्छन संस्कार
2.	वह्नि	त्रिफला से मूर्च्छन संस्कार
3.	मल	गृहकन्या से मूर्च्छन संस्कार
4.	वङ्ग तथा नाग	ऊर्ध्वपातन संस्कार ताम्र की पिष्टी से
5.	वङ्गादि भूज कञ्चुक दोष	मूर्च्छन संस्कार से
6.	वङ्गाहि सम्पर्क कञ्चुक दोष	पातन संस्कार से
7.	सप्तकञ्चुक दोष नाश	शोधन से (र.त. 6/36-37) (मर्दन तथा क्षालन से)

शोधन

रसेश्वरं समसुधारजसा मर्दयेत् त्र्यहम् । ततो द्विगुणवस्त्रान्तर्गालितं खल्वकेन्यसेत् ॥
रसोन निष्तुषं तुल्यं तदर्ध लवण हरेत्। तत्कल्के मर्दयेत्सूतं यावदायन्ति कृष्णताम् ॥
कृष्णं कल्कं परित्यज्य तथा प्रक्षाल्य युक्तितः । एवमेकेन वारेण रसेन्द्रः शुद्धिमाप्नुयात् ॥

(र.त. 5/27-30)

उपरोक्त वर्णित विधि को निम्न रूप में दर्शाया जा सकता है–

पारद + सुधा चूर्ण → समान मात्रा में → 3 दिन मर्दन → तत्पश्चात्
(चूना पाउडर) लेकर (पत्थर खल्व यन्त्र में) (2 तह वाले सूती वस्त्र से छान कर पारद प्राप्त करते हैं)

उपरोक्त प्राप्त पारद + पारद की मात्रा जितनी + 1/2 भाग सैन्धव लवण → खल्व यन्त्र में मर्दन
छिलका रहित लहसुन (पारद की मात्रा से)

→ जब लहसुन कल्क काला हो जाय → जल या काञ्जी से प्रक्षालन → शुद्ध पारद की प्राप्ति

विमर्श– उपरोक्त विधि से पारद का मर्दन करने पारद छोटे-छोटे कणों (Globules) के रूप विभिक्त हो जाता है । तथा जब इसे पानी द्वारा धुलते है तो पानी के साथ निकल जाने की अत्याधिक संभावना होती है । अतः प्रक्षालन अत्यन्त सावधानी पूर्वक करना चाहिए । पारद के इस प्रकार के हानि को ही शास्त्रों में जल गति कहा गया है ।

रसतरंगिणी में ही पारद के विभिन्न दोषों अनुसार पारद शोधन विधि का वर्णन निम्न है–

धूमेष्टिकाहट्टविलासिनीनां सोर्णैस्तु चूर्णैः परिमर्द्य सूतम् ।
प्रक्षालयेदम्लजलेन सम्यक् ततो रसो मुञ्चति नागदोषम् ॥

Scanned with OKEN Scanner

कृष्णाह्वकन्दनिर्गुण्डीचूर्णैः सूतो जहात्येष तु वङ्गदोषम्।
चिक्कोऽग्निदोषं विनिहन्ति शीघ्रं दोषं मलोत्थं खलु राजवृक्षः॥
काण्डन्यहारी खलु कृष्णधूर्तो विषापहर्त्री त्रिफला प्रशस्ता।
दोषं गिरेस्त्वृषभाशुदृन्यात् त्रिकण्ठको बह्वयसहत्वदोषम्॥
चूर्णं कलोज्झप्रथितं तु सूतात् सकन्यकं भाषित भेषजानाम्।
निर्मर्दयेत्खल्वगतं दिनैकं प्रक्षालयेच्चापि ततोऽम्लतोयैः॥
सैन्धानया शोधित ईशसंज्ञः सत्यं भवेत्कञ्चुकदोषहीनः।
इत्थं विशुद्धं खलु सूतराजं नियोजयेद्वैद्यवरो रसेषु॥

(र.त. 5/22-26)

क्र.सं.	दोष	प्रयुक्त द्रव्य	मात्रा	द्रव द्रव्य मर्दन हेतु	प्रक्षालन हेतु	विधि	परिणाम
1.	नाग	गृहधूम+ईंट चूर्ण+हल्दी+ ऊन का चूर्ण	प्रत्येक द्रव्य पारद से 1/16 मात्रा में	घृतकुमारी स्वरस	खट्टी काञ्जी	मर्दन	नागदोष से रहित
2.	वङ्ग	इन्द्रायण, अंकोल हरिद्रा	"	"	"	"	वङ्ग दोष रहित
3.	अग्नि	चित्रक	"	"	"	"	अग्नि दोषनाश
4.	मल	आरग्वध	"	"	"	"	मल रहित पारद
5.	चपलता	काला धतूरा	"	"	"	"	चाञ्चल्य रहित
6.	विष	त्रिफला	"	"	"	"	विष दोष रहित
7.	गिरि	त्र्यूषण	"	"	"	"	गिरि दोष रहित
8.	असह्याग्नि	त्रिकण्टक (गोक्षुर)	"	"	"	"	असह्याग्नि दोष रहित

मारण

1. विष्णुक्रान्ता देवदालीमारनालेन मर्दयेत्। तयोरेव द्रवेणाथ भावयेत सप्तवारकम्॥
मूर्च्छितञ्च सुविज्ञाय पारदं खर्परे न्यसेत्। दीप्तानलायां चुल्लायञ्च स्थापयेदथ खर्परम्॥
बारं बारं तयोस्तत्र द्रवं शीघ्रं विनिक्षिपेत्। एवं रसो दिनैकेन समुपैति हि पञ्चताम्॥

(र.त. 7/17-19)

नील अपराजिता, देवदाली को आरनाल में मर्दन करते है तथा प्राप्त द्रव से पारद को सात बार भावित करते हैं। जब मर्दन करते हुए पारद मूर्च्छित अवस्था में हो जाय तो इसे मिट्टी के एक मजबूत खर्पर में रखकर चूल्हे पर चढ़ाकर अग्नि प्रदान करते है तथा उक्त औषधि का द्रव डालकर मर्दन करते हैं। ऐसा करने से एक दिन में पारद की भस्म बन जाती है।

2. अङ्कोलमूल सलिलैः सूतं खल्वे विपर्दयेत्। सूतमानोन्मितं गन्धं शुद्धं तत्र विनिक्षिपेत॥
संस्थाप्य सूतं मूलायां विदध्याद् बत्रिमृत्स्नया। सन्धिलेपं, ततः प्राज्ञः प्रदीप्तोपलपानके॥
यन्त्रे भूधरसंज्ञे च पचेद्याम चतुष्टयम्। एवं रसेश्वरः शीघ्रं नियतं याति भस्मताम्॥

(र.त. 7/20-22)

शुद्ध पारद को खल्व में लेकर उसे अंकोल मूल स्वरस के साथ मर्दन करते हैं। जब पारद मूर्च्छित अवस्था में हो जाय तो उसमें समभाग गन्धक मिलाकर मर्दन करते है। तत् पश्चात् इसे मूषा में रखकर, मूषा के मुख को वह्निमृत्तिका की सहायता सन्धि लेप कर देते हैं। अच्छी प्रकार से सन्धि लेप सूखने के पश्चात् मूषा को भूधर यन्त्र में रखकर चार प्रहर तक उपलों की अग्नि में पकाते हैं। इस विधि से पारद शीघ्र भस्म हो जाता है।

पारदबन्ध इनका वर्णन निम्न है—

1. हठबन्ध–

हठो रसः स विज्ञेयः सम्यक् शुद्धिविवर्जितः। स सेवितो नृणां कुर्यान्मृत्युं वा व्याधिमुद्धतम्॥

(र.र.स. 11/65)

पारद का सम्यक शोधन किये बिना ही यदि उसका बन्धन किया जाता है तो उसे हठ बन्ध कहते हैं। इस प्रकार के पारद सेवन से मृत्यु या व्याधि उत्पन्न होती है।

2. आरोट बन्ध–

सुशोधितो रसः सम्यगारोट इति कथ्यते। स क्षेत्रीकरणे श्रेष्ठः शनैर्व्याधिविनाशनः॥

(र.र.स. 11/66)

पारद को अच्छी प्रकार से शोधन करने के पश्चात् जो बन्ध किया जाता है, उसे आरोट बन्ध कहते हैं। यह पारद क्षेत्रीकरण हेतु श्रेष्ठ होता है तथा शीघ्र ही व्याधि का नाश करता है।

विमर्श– क्षेत्रीकरण-क्षेत्रीकरण का तात्पर्य शरीर को एक निश्चित कार्य हेतु तैयार करना है। पारद के रसायन गुण हेतु प्रयोग से पूर्व शरीर का क्षेत्रीकरण किया जाता है, जिससे शरीर में यह रसायन गुणों का फल प्रदान कर सके। इस हुते आरोट बन्ध पारद का प्रयोग किया जाता है।

3. आभास बन्ध–

पुटितो यो रसो याति योगं मुक्त्वा स्वभावताम्। भावितो धातुमूलाद्यैराभासो गुणवैकृतेः॥

(र.र.स. 11/67)

जो पारद धातु या वनस्पति आदि से भावित (संयोग) कर पुट देने से अपने स्वभाव (चंचलता, दुग्रर्हत्व) से मुक्त होकर बद्ध जाय उसे आभास बन्ध कहा जाता है। स्वाभाविक गुणों के विकृति ही आभास बन्ध है।

4. क्रियाहीन बन्ध–

असंशोधितलोहाद्यैः साधितो यो रसोत्तमः। क्रियाहीनः स विज्ञेयो विक्रियां यात्यपथ्यतः॥

(र.र.स. 11/68)

Scanned with OKEN Scanner

उत्तम गुण युक्त पारद को बिना शोधित धातु आदि के द्वारा साधित करने को क्रियाहीन बन्ध कहा जाता है । ऐसे पारद के सेवन काल में यदि अपथ्य सेवन किया जाय तो भारी हानि होती है ।

5. पिष्टिका बन्ध–

तीव्रातपे गाढतरावमर्दात्पिष्टी भवेत्सा नवनीतरूपा ॥
ख्यातः स सूतः किल पिष्टिबद्धः संदीपनः पाचनकृद् विशेषात् ॥

(र.र.स. 11/69)

तेज धूप में बलपूर्वक पारद को मर्दन कर नवनीत सदृश (मक्खन सदृश) बना लेना ही पिष्टिका बन्ध कहा जाता है । पिष्टिका बद्ध पारद जाठराग्नि दीप्त करता है तथा विशेष रूप से भक्षण किये भोजन का पाचन करता है ।

विमर्श– परिभाषा प्रकरण में नवनीत पिष्टी को निम्न बताया गया है–

अर्काशतुल्याद्ररसतोऽथगन्धान्निष्कार्धतुल्यात्कुटितोऽभिखल्ले ।
अर्कातपे तीव्रतरे विमर्द्या पिष्टी भवेत्सा नवनीतरूपा ॥

(र.र.स. 8/7)

अर्द्ध निष्क गन्धक (1.5 ग्रा) तथा उसका 12 गुना पारद लेकर उसे तेज धूप में मर्दन कर जो पिष्टी बनती है, उसे नवनीत पिष्टी कहा जाता है । अर्थात् उपरोक्त प्रमाण में पारद तथा गन्धक को ग्रहण करना है । नवनीत रूपा अर्थात् ऐसी निर्मित पिष्टी मक्खन सदृश कोमल होती है जिसे हाथ से स्पर्श कर जाना जा सकता है ।

6. क्षारबन्ध–

शङ्खशुक्तिवराटाद्यैर्योऽसौ संसाधितो रसः । क्षारबन्धः परं दीप्तिपुष्टिकृच्छूलनाशनः ॥

(र.र.स. 11/70)

शंख, शुक्ति, वराटिका आदि क्षारीय द्रव्यों के संयोग से सिद्ध पारद को क्षार बद्ध पारद कहा जाता है । यह जाठराग्नि दीपन, शरीर पुष्टि तथा शूलनाशन में श्रेष्ठ होता है ।

7. खोटबन्ध–

बन्धो यः खोटतां याति ध्मातो ध्मातः क्षयं व्रजेत । खोटबन्धः स विज्ञेयः शीघ्रं सर्वगदापहः ॥

(र.र.स. 11/71)

ऐसा बद्ध पारद जो अग्नि पर बार-बार धमन करने पर भी धीरे-धीरे उड़ जाता है तो उसे खोट बन्ध कहते हैं । ऐसा पारद सर्वरोगों को शीघ्र ही नष्ट करता है ।

8. पोटबन्ध–

द्रुतकज्जलिका मोचापत्रके चिपिटीकृता । स पोटः पर्पटी सैव बालाद्यखिलरोगनुत् ॥

(र.र.स. 11/72)

कज्जली को द्रवित करके केले के पत्ते के बीच रखकर उसे चिपटा कर देना है पोट बन्ध या पर्पटी से कहा जाता है । यह बच्चों से लेकर बड़ों तक के सभी रोगों का नाश करती है ।

विमर्श– यद्यपि यहाँ कज्जली से ही निर्मित पर्पटी का उल्लेख है, फिर भी शास्त्रों में अनेक प्रकार की पर्पटी यथा ताम्र पर्पटी, गगन पर्पटी, लोह पर्पटी आदि का वर्णन प्राप्त होता है ।

9. कल्क बन्ध–

स्वेदाद्यैः साधितः सूतः पङ्कत्वं समुपागतः । कल्कबद्धः स विज्ञेयो योगोक्तफलदायकः ॥

(र.र.स. 11/73)

स्वेदन, मर्दन आदि विधियों द्वारा सिद्ध पारद जो पङ्क (कीचड़) सदृश हो जाय उसे कल्क बद्ध कहा जाता है । ये जिस योग के साथ प्रयुक्त होता है वैसा फल देने वाला होता है ।

10. कज्जली बन्ध–

कज्जली रसगन्धोत्था सुश्लक्ष्णा कज्जलोपमा । तत्तद्योगेन संयुक्ता कज्जलीबन्ध उच्यते ॥

(र.र.स. 11/74)

पारद तथा गन्धक के योग से निर्मित सुश्लक्ष्ण तथा काजल सदृश काली होने से कज्जली संज्ञा होती है । यह कज्जली बन्ध जिस योग में प्रयुक्त की जाती है उसे भी कज्जली बन्ध कहा जाता है ।

11. सजीव बन्ध–

भस्मीकृतो गच्छति बह्नियोगाद् रसः सजीवः स खलु प्रदिष्टः ।
संसेवितोऽसौ न करोति भस्मकार्यं जराद्रोगविनाशनं च ॥

(र.र.स. 11/75)

भस्म रूप में आ जाने पर भी जो पारद अग्नि प्रदान करने पर उड़ जाता है, उस सजीव बन्ध कहा जाता है । ऐसा पारद सेवन करने पर भस्म का कार्य नहीं करता है तथा यह जरा एवं व्याधि या जरा रूपी व्याधि का नाश नहीं करता है ।

12. निर्जीव बन्ध–

जीर्णाभ्रको वा परिजीर्णगन्धो भस्मीकृतश्चाखिललोहमौलिः ।
निर्जीवनामा हि स भस्मसूतो निःशेषरोगान्विनिहन्ति सद्यः ॥

(र.र.स. 11/76)

पारद में पहले अभ्रक या गन्धक का जारण कर फिर उसका भस्म निर्माण करते है । इस प्रकार निर्मित पारद भस्म को निर्जीव बन्ध कहा जाता है । निर्जीव बन्ध पारद सभी रोगों को तत्काल नाश कर देता है ।

13. निर्बीज बन्ध–

रसस्तु पादांशसुवर्णजीर्णः पिष्टीकृतो गन्धकयोगतश्च ।
तुल्यांशगन्धैः पुटितः क्रमेण निर्बीजनामा सकलामयघ्नः ॥

(र.र.स. 11/77)

Scanned with OKEN Scanner

पारद से चतुर्थांश (1/4) भाग में स्वर्ण लेकर उसे पारद में जीर्ण करते हैं। तत्पश्चात् समभाग गन्धक के योग से उसकी पिष्टी बना लें। पुनः इस पिष्टी को समभाग गन्धक मिलाकर क्रम से अग्नि (धीरे-धीरे कम अग्नि से ज्यादा अग्नि पर क्रमशः) द्वारा फूंक देते हैं। इस विधि से बद्ध पारद निर्बीज बन्ध कहा जाता है। यह पारद सभी रोगों का नाशक होता है।

14. सबीज बन्ध–

पिष्टीकृतैरभ्रकसच्चहेमतारार्ककान्तैः परिजारितो यः।
हतस्ततः षड्गुणगन्धकेन स बीजबद्धो विपुलप्रभावः॥
(र.र.स. 11/78)

इस प्रकार के पारद बन्ध में–

1. अभ्रक बन्ध 2. स्वर्ण 3. रजत 4. ताम्र

5. काच लोह इन पाँचों को पारद में भलीभाँति जारित करके पुनः 6 गुना गन्धक से मारित करते हैं। इस प्रकार मारित पारद को सबीज बन्ध कहा जाता है। यह बड़े प्रभाव देने वाला होता है।

15. शृङ्खलाबन्ध–

वज्रादिनिहतः सूतो हतः सूतः समोऽपरः। शृङ्खलाबद्धसूतस्तु देहलोहविधायकः॥
चित्रप्रभावं वेगेन व्याप्तिं जानाति शङ्करः॥ (र.र.स. 11/79)

वज्र आदि रत्नों के द्वारा मारित पारद तथा धातु एवं रस मारक वनस्पतियों द्वारा मारित पारद (इन दोनों विधियों से मारित) को समान मात्रा में लेकर मिश्रित कर देते हैं। ऐसा पारद देहवाद तथा धातुवाद दोनों में श्रेष्ठ होता है। इसका विचित्र प्रभाव अतिशीघ्र होता है उसका ज्ञान केवल भगवान शङ्कर को है।

16. द्रुतिबन्ध–

युक्तोऽपि बाह्यद्रुतिभिश्च सूतो बन्धङ्गतो वा भसितस्वरूपः।
स राजिकापादमितो निहन्ति दुस्साध्यरोगान्द्रुतिबद्धनामा॥
(र.र.स. 11/80)

सर्वप्रथम पारद के बाह्य द्रुति संस्कार करके पुनः उसे किसी शास्त्रोक्त विधि से बद्ध कर लें या भस्म बना लें। इस प्रकार बद्ध पारद द्रुतिबन्ध पारद कहा जाता है। इस पारद की राई के चतुर्थांश जितनी मात्रा में सेवन करने से यह दुसाध्य रोगों को नष्ट कर देता है।

17. बाल बन्ध–

समाभ्रजीर्णः शिवजस्तु बालः संसेवितो योगयुतो जवेन।
रसायनो भाविगदापहश्च सोपद्रवारिष्टगदान्निहन्ति॥
(र.र.स. 11/81)

पारद के समान मात्रा में अभ्रक लेकर उसे पारद में जीर्ण कर देते हैं। ऐसा पारद को यदि भस्म बना दी जाय तो

इसे बाल बन्ध कहा जाता है। योग्य अनुपान के साथ सेवन करने से यह रसायन कार्य करता है। एवं भविष्य में होने वाले रोगों को भी नहीं होने देता है। यह रोगों के उपद्रव को भी नष्ट करता है।

18. कुमार बन्ध–

हरोद्भवो यो द्विगुणाभ्रजीर्णः स स्यात्कुमारो मिततण्डुलोऽसौ।
त्रिःसप्तरात्रैः खलु पापरोगसंघातघाती च रसायनं च॥
(र.र.स. 11/82)

पारद में द्विगुण अर्थात् पारद से दो गुनी मात्रा में अभ्रक लेकर जीर्ण कर पुनः भस्म बना लेने से उसे कुमार बन्ध कहा जाता है। इस पारद की एक तण्डुल मात्रा 3 सप्ताह तक सेवन करने से सम्पूर्ण पाप रोग नष्ट हो जाते हैं। ऐसा पारद रसायन गुण युक्त भी होता है।

19. तरूण बन्ध–

चतुर्गुणाव्योमकृताशनोऽसौ रसायनाग्र्यस्तरुणाभिधानः।
स सप्तरात्रात्सकलामयघ्नो रसायनो वीर्यबलप्रदाता॥
(र.र.स. 11/83)

पारद में चार गुना अभ्रक जीर्ण करने के पश्चात् उसकी भस्म बनाई जाई तो इसे तरूण बन्ध कहा जाता है। यह सात रात (दिन) तक सेवन करने पर सभी रोगों का नाश करता है। तरूण बन्ध पारद रसायन, वीर्य तथा बल देने वाला होता है।

20. वृद्धबन्ध–

यस्याभ्रकः षड्गुणितो हि जीर्णः प्राप्ताग्निसख्यः स हि वृद्धनामा।
देहे च लोहे च नियोजनीयः शिवादृते कोऽस्य गुणान्प्रवक्ति॥
(र.र.स. 11/84)

पारद से 6 गुना अभ्रक जीर्ण उसकी निरूत्थ भस्मा बना लेने से इसे वृद्धबन्ध कहा जाता है। ऐसा पारद देहवाद तथा लोहवाद दोनों में उपयोगी होता है तथा इसके गुणों का बखान भगवान शंकर भी नहीं कर सकते।

21. मूर्तिबन्ध–

यो दिव्यमूलिकाभिश्च कृतोऽत्यग्निसहो रसः। विनाभ्रजारणात्स स्यान्मूर्तिबन्धो महारसः॥
अयं हि जार्यमाणस्तु नाग्निना क्षीयते रसः। योजितः सर्वयोगेषु निरौपम्यफलप्रदः॥
(र.र.स. 11/85-86)

पारद में अभ्रक जारण किये बिना ही उसे दिव्य वनस्पतियों के द्वारा सिद्ध किया जाय तथा यह पारद तेज अग्नि को सहन कर सके तो ऐसे पारद बन्ध को मूर्ति बन्ध कहा जाता है। यह अग्नि पर क्षीण नहीं होता है तथा इसे सभी योगों में प्रयोग किया जा सकता है। ऐसा पारद आश्चर्यजनक फल देना वाला होता है।

Scanned with OKEN Scanner

22. जल बन्ध–

शिलातोयमुखैस्तोयैर्बद्धोऽसौ जलबन्धवान् । स जरारोगमृत्युघ्नः कल्पोक्तफलदायकः ॥
(र.र.स. 11/87)

शिलातोय (एक विशेष प्रकार का जल) से जब पारद का बन्धन किया जाता है तो उसे जल बन्ध कहा जाता है । यह बन्ध जरा, रोग, तथा मृत्यु का नाश करता है तथा जिस योग में पड़ता है उस योग में कहे गये परिणाम को देता है ।

23. अग्निबन्ध–

केवलो योगयुक्तो वा ध्मातः स्याद् गुटिकाकृतिः । अक्षीणश्चाग्निबद्धोऽसौ खेचरत्वादिकृत्स हि ॥
(र.र.स. 11/88)

केवल पारद को अन्य पदार्थों के योग से अग्नि पर धमन से पारद को गुटिका कार बनाकर तथा यह अग्नि पर अक्षीण हो तो ऐसे बद्ध पारद को अग्निबन्ध कहते हैं । यह पारद खेचरत्व (उड़ने की शक्ति) प्रदान करनेवाला होता है ।

24. सुसंस्कृत बन्ध–

विष्णुक्रान्ताशशिलताकुम्भीकनकमूलकैः । विशालानागिनीकन्दव्याघ्रपादीकुरुण्टकैः ॥
वृश्चिकालीभशुण्डीभ्यां हंसपाद्या सहासुरैः । अप्रसूतगवां मूत्रैः पिष्टं वाकुलकै पचेत् ॥
पक्वमेवं मृतैर्लोहैर्मर्दितं विपचेद्रसम् । यन्त्रेषु मूर्च्छा सूतानामेष कल्पः समासतः ॥
(र.र.स. 11/89-91)

विष्णुक्रान्ता, सोमलता, जलकुम्भी, धतूरामूल, इन्द्रायण, लक्ष्मणाकन्द, विकन्कत छाल, पियाबाँसा (पीले फूल वाला), बीछी घास, हाथी शुण्डी, हंसपदी, मुद्गपर्णी तथा राई इन सभी को समभाग लेकर अप्रसूत गाय के मूत्र से पीसकर कल्क बनाकर इस कल्क में पारद रखकर इसका पाक बालुका यन्त्र के माध्यम से करके भस्म निर्मित करते हैं । इस पारद भस्म को अन्य धातु भस्मों के साथ मिलाकर तथा किसी उपयुक्त यन्त्र की सहायता से मूर्च्छन प्रक्रिया पूर्ण करते हैं । इस प्रकार की विधि से बद्ध पारद सुसंस्कृत बन्ध कहा जाता है ।

25. महाबन्ध–

हेम्ना वा रजतेन वा सहचरो ध्मातो व्रजत्येकतामक्षीणो निविडो गुरुश्च गुटिकाकारोऽतिदीर्घोज्ज्वलः ।
चूर्णत्वं पटुवत्प्रयाति निहतो घृष्टो न मुञ्चेन्मलं निर्गन्धो द्रवति क्षणात्स हि महाबन्धाभिधानो रसः ॥
(र.र.स. 11/92)

निम्न गुणों से युक्त पारद महाबन्ध वाला होता है–

1. जो चाँदी या स्वर्ण के साथ धमन करने पर उससे मिलकर एक रूप हो जाय ।
2. धमन किया जाने पर भी वजन में घटता नहीं है ।
3. जो देखने में ठोस दिखता है ।
4. वजन में भारी हो तथा गोलाकार हो ।
5. बहुतकाल तक चमकदार हो तथा हथौड़ी से पीटने पर नमक के समान टूट जाय ।

6. घिसने पर मैल न छोड़े
7. गर्म करने पर तत्काल द्रवित हो जाय लेकिन कोई गन्ध न आयें ।

उपरोक्त 25 बन्ध के अतिरिक्त 26वाँ बन्ध जलूका बन्ध कई आचार्यों ने माना है जो स्त्रियों को द्रवित करने में प्रयुक्त होता है । इसका वर्णन निम्न है–

26. जलूका बन्ध–

सूते गर्भनियोजिताधकनके पादांशनागेऽथवा पञ्चाङ्गुष्ठकशाल्मलीकृतमदाश्लेष्मातबीजैस्तथा ॥
तद्वत्तेजिनिकोलकाख्यफलजैश्चूर्णं तिलं पत्रकं तप्ते खल्लतले निधाय मृदिते जाता जलूका वरा ॥
(र.र.स. 11/93)

घटक द्रव्य– शु. पारद – 1 भाग

1/2 भाग स्वर्ण या 1/4 भाग सीसा जारित करते है तथा उसका 1/16 मात्रा निम्न द्रव्यों का चूर्ण–

एरण्ड बीज
सेमल बीज
भङ्गा
श्लेष्मात बीज
माल कङ्गुनी
छोटी बेर
तिल
तेजपत्र

लेकर मर्दन कर जलूका बन्ध निर्मित करते हैं–

जलौका की लम्बाई

बाल्ये चाष्टाङ्गुला योज्या यौवने च दशाङ्गुला । द्वादशैव प्रगल्भानां जलौका त्रिविधा मता ।
(र.र.स. 11/95)

बाला में आठ अंगुल, यौवना में 10 तथा प्रगल्या में 12 अंगुल लम्बी जलौका को उपयोग करते हैं ।

जलूका को प्रयोग करने से पूर्व उसे भेड़ी दुग्ध में 21 दिन तक रखकर तेज धूप में रखते हैं । तत्पश्चात् उसे प्रयुक्त करते है । रसरत्नसमुच्चय में जलूका निर्माण की कुल आठ विभिन्न विधियों का वर्णन किया गया है ।

Probable physico-chemical changes

The following physical properties of Parada was seen before and after Shodhan[1]

1. Bhinde SS, Patgiri B.J. Quantification of mercury after Samanya Shodhan (Purifying process) A preliminary analysis. J. Drug Res. Ayurvedic Sci. 2022:6:65-71.

Scanned with OKEN Scanner

Sr.No.	Property	Ashodhita Parada	Shuddha Parada
1.	Colour	Silverish white	Bright silver
2.	Odour	Odourless	Odourless
3.	Touch	Soft	Soft
4.	Luster	Present	Increases after Shodhan

ICP-AES analysis of Parada Samples

Sample	As	Cd	Pb	Hg
Ashodhita Parada	Not detected	Not detected	Not detected	99.97%
Shuddha Parada	0.026%	0.0021%	Not detected	99.93%
Permissible limit (in ppm)	3	0.3	10	–

Importance of Temperature while processing– रसशास्त्र के ग्रन्थों तथा आधुनिक विज्ञान द्वारा यह सिद्ध हो गया है कि पारद अग्नि पर अस्थायी होता है। पारद कमरे के ताप पर भी वाष्पीकृत होता रहता है। इसलिए पारद को अग्नि पर रखने से पहले इसे अग्नि स्थायी बनाया जाता है। इसके लिए मुख्य रूप से गन्धक का प्रयोग किया जाता है। जैसे रसपर्पटी, कज्जली या रस सिन्दूर के निर्माण में। क्योंकि इन तीनों का निर्माण विभिन्न तापक्रम अर्थात् कज्जली कमरे के तापमान, रसपर्पटी 118-120^{0}C तथा रस सिन्दूर का निर्माण 250-650^{0}C। अतः इन्हें निर्माण करते समय या पारद की विभिन्न औषधियाँ बनाते समय उपयुक्त अग्नि प्रदान करते हैं जिससे कि इनका निर्माण किया जा सके।

In their study Sunil Kumar Signh et al. found that Kajjali shows peaks due to free sulphur, mercury oxide and mecury sulphide in the XRD analysis while peaks only due to mercury sulphide were seen in the XRD analysis of Rase Sindoor. This shows that effect of temperature and process of medicine that free Sulphur and mercury oxide were not present after processing[1].

योग– 1. रसपर्पटी
2. रस सिन्दूर
3. मकरध्वज
4. आरोग्यवर्द्धनी वटी
5. रस पुष्प
6. रस कर्पूर

1. Sunil Kumar Singh, Anand Chaudhary, D.K. Rai and S.B. Rai, Preparation and Characterization of a Mercury Based India Traditional Drug Ras-sindur; Indian Journal of Traditional knowledge, Vol. 8(3), July 2009, pp. 346-351.

Research updates

Safety evaluation of Siddha Makardhwaj done by Gajendra Kumar et al. shows that Siddha Makardhwaj upto five times to the equivalent human dose administered for 28 days did not show any toxicological effects on rat brain, cerebrum, liver and kidney*.

Safety studies on Arogya Vardhini under the aegis of Deptt. of Pharmacology, AIIMS. Delhi shows that Arogya Vardhini Vati in the doses equivalent upto to 10 times of the human dose administered to rats for 28 days does not have appreciable toxicological effect on brain, liver and kidney due to mercury. Study was conducted by Department of Ayush under Union Ministry of Health & Family welfare, Government of India.

2. अभ्रक (Biotite Mica)

पर्याय

अभ्रकं गगनं भृङ्गमभ्रं खं व्योमनामकम् । वज्रं घनञ्च गिरिजं बहुपत्रमनन्तकम् ॥
आकाशमम्बरं शुभ्रं त्वमलं गरजध्वजम् । मेघाख्यमन्तरिक्षञ्च तदेव परिकीर्तितम ॥
(र.त. 10/1-2)

अभ्रक, गगन, भृंग, ख, व्योम, वज्र, घन, गिरिज, बहुपत्र, अनन्तक, आकाश, अम्बर, अमल, गरजध्वज तथा मेघ के जितने नाम हो, अन्तरिक्ष एवं गौरीतेज। ये अभ्रक के पर्याय है।

Minerological Identification

Nature	–	Platy (Separable in thin layers)
Colour	–	Greenish black
Streak	–	Greenish black
Clevage	–	Perfect
Lusture	–	Splendent
Tenacity	–	Flexible
Transparency	–	Translucent
Hardness	–	2.5 to 3
Sp.gr.	–	2.6 to 3

स्रोत (प्राप्ति)– अभ्रक, शुद्ध रूप में Igneous rocks में तथा Schists एवं Gneisses के रूप में Metamorphic rocks में पाया जाता है। यह ore के रूप में Pegmatites लेकिन इसे तोड़कर Sheet रूप में शुद्ध खनिज के रूप में उपलब्ध होता है। यह Earth crust के सभी Igneous terrains में उपलब्ध होता है। भारत में

* Kumar G. Srivastava A, Sharma SK, Gupta YK. Safety evaluation of mercury based Ayurvedic formulation (Sidh Makardhwaj) on brain cerebrum, liver & kidney in rats. Indian J Med Res. 2014 Apr; 139 (4):610-8, PMID:24927349; PMCD:PMC 4078501.

Scanned with OKEN Scanner

मुख्यतः यह राजस्थान, आंध्र प्रदेश तथा झारखंड से प्राप्त होता है । राजस्थान के अजमेर, भीलवाडा, टोंक, आन्ध्र प्रदेश में गुडूर, कालीचेडु तथा खालपुर एवं झारखण्ड के गिरिडीह में कोडरमा खान में प्राप्त होता है । रसग्रन्थों के अनुसार जहाँ से अभ्रक प्राप्त हो वहाँ पर सवा हाथ (राजहस्त) या पुरुष प्रमाण की गहराई के बाद का ही अभ्रक लेना चाहिए । यथा–

राजहस्तादधस्ताद् यत्समानीतं घनं खनेः । भवेत् तदुक्तफलदं निःसत्त्वं निष्फलं परम् ॥ (र.र.स. 2/3)

भेद– रस ग्रन्थों में अभ्रक के पिनाक, नाग, मण्डूक तथा वज्र इन चार प्रकार के अभ्रक का भेद बताया गया है । प्रत्येक के श्वेत, रक्त, पीत तथा कृष्ण चार भेद इस प्रकार कुल 16 भेद हो जाते हैं । इसमें कृष्ण वज्र अभ्रक को सर्वश्रेष्ठ तथा रसकर्म एवं चिकित्सार्थ प्रयुक्त करना चाहिए । अभ्रक के उपरोक्त भेद इसे अग्नि में गर्म (तपाने) करने पर उत्पन्न लक्षण के आधार पर किये गये हैं, जो निम्न हैं–

1. पिनाक–

पिनाकं पावकोत्तप्तं विमुञ्चति दलोच्चयम् । तत्सेवितं मलं बद्ध्वा मारयत्येव मानवम् ॥
(र.र.स. 2/5)

इस प्रकार का अभ्रक अग्नि पर तप्त (Red hot) करने से इसके पत्र आसानी से अलग हो जाते हैं । इसके सेवन में मलबद्धता होती है जिसके कारण यह मारक हो जाता है ।

2. नाग–

नागाभ्रं नागवत्कुर्याद्ध्वनिं पावकसंस्थितम् । तद्भुक्तं कुरुते कुष्ठं मण्डलाख्यं न संशयः ॥
(र.र.स. 2/6)

इस अभ्रक को अग्नि पर गर्म करने से सर्प (नाग) ये फुफकार की तरह शब्द आती है इसके सेवन से मण्डल कुष्ठ की उत्पत्ति होती है ।

3. मण्डूक–

उत्प्लुत्योत्प्लुत्य मण्डूकं ध्मातं पतति चाभ्रकम् । तत्कुर्यादश्मरीरोगमसाध्यं शस्त्रतोऽन्यथा ॥
(र.र.स. 2/7)

जो अभ्रक अग्नि पर तपाने से मेढक की भाँति उछलता है अर्थात् पत्र उछलकर दूर गिरते हैं उसे मण्डूक अभ्रक कहा जाता है । इसके सेवन से अश्मरी होती है जो केवल शस्त्र साध्य है ।

4. वज्र अभ्रक–

वज्राभ्रं वह्निसन्तप्तं निर्मुक्ताशेषवैकृतम् । देहलोहकरं तच्च सर्वरोगहरं परम् ॥
(र.र.स. 2/8)

इसे अग्नि पर गर्म करने से यह सभी प्रकार के विकृति से मुक्त निश्चल रहता है अर्थात् अग्नि पर फूल जाता है । यह देह लोह सिद्धि देनेवाला तथा सभी रोगों को दूर करता है।

आधुनिक मतानुसार अभ्रक के भेद

अभ्रक (Mica) Hydrous Potassium Aluminium Silicate minerals का एक समूह है जो कि विभिन्न प्रकार में उपलब्ध होता है । इसके मुख्य 6 भेदों का नाम तथा Chemical formula निम्न है–

1. Biotite – $K(Mg\ Fe^{2+})_3\ (Al\ Fe^{3+})\ Si_3\ O_{10}\ (OH\ F)_2$ कृष्ण वर्ण
2. Phlogopite – $KMg_3Si_3\ Al\ O_{10}\ (F\ OH)_2$ – Brown भूरे वर्ण का
3. Lepidolite – $K\ (Li\ Al)_3\ (Si\ Al)_4\ O_{10}\ (F\ OH)_2$ – गुलाबी रंग
4. Muscovite – $K\ Al2\ (SiAl)\ O_{10}\ (OH\ F)_2$ – श्वेत रंग
5. Paragonite – $Na\ Al_2\ (Si_3Al)\ O_{10}\ (OH)_2$ – श्वेत रंग
6. Glauconite – $(K\ Na)\ (Fe^{3+}\ Al\ Mg)_2\ (Si\ Al)_4\ O_{10}\ (OH)_2$ – हरा रंग

अभ्रक कई तत्वों से बना हुआ खनिज (Mineral) है । जिसमें पोटेशियम, मैगनीशियम, एल्युमीनियम, सोडियम आयरन के साथ सिलिका तथा OH आदि पाये जाते हैं । यह परत के रूप में होता है जिसे अलग किया जा सकता है । रस ग्रन्थों के अनुसार देवी पार्वती का रज गन्धक तथा शुक्र धातु को अभ्रक कहा गया है, यथा–

देव्या रजो भवेद् गन्धो धातुः शुक्रं तथाऽभ्रकम् । (र.र.स. 2/2)

अभ्रक ग्राह्य स्वरूप

स्निग्धं पृथुदलं वर्णसंयुक्तं भारतोऽधिकम् । सुखनिर्मोच्यपत्रं च तदभ्रं शस्तमीरितम् ॥
(र.र.स. 2/11)

जो अभ्रक चिकना, मोटे दल (पत्र) वाला, उत्तम वर्ण (जिस कार्य हेतु प्रयुक्त वैसे उत्तम वर्ण वाला) भारी तथा जिसके पत्र आसानी से अलग किये जा सके ऐसा अभ्रक प्रशस्त होता है ।

अग्राह्य—उपरोक्त लक्षणों से रहित अभ्रक को नहीं ग्रहण करना चाहिए ।

अभ्रक शोधन

1. **प्रतप्तं सप्तवाराणि निक्षिप्तं काञ्जिकेऽभ्रकम् । निदोषं जायते नूनं प्रक्षिप्तं वाऽपि गोजले ॥ त्रिफलाक्वथिते चापि गवां दुग्धे विशेषतः ॥** (र.र.स. 2/16)

अभ्रक (कृष्ण वज्राभ्रक) को तपाकर (Red Hot) काञ्जी, गोजल (गोमूत्र) त्रिफला क्वाथ या गाय के दुग्ध, इनमें से किसी एक में बुझा (Quenching) लेने की प्रक्रिया सात बार करने से अभ्रक शुद्ध हो जाता है ।

2. **अभ्रकं दहनोत्तप्तं सप्तवारं निषेचितम् । बदरीक्वथिते पश्चात् पेषितं शुद्धिमाप्नुयात् ॥**
(र.त. 10/21)

अभ्रक को दहन (Red hot) कर बदरी क्वाथ में बुझा लेते हैं । ऐसा सात बार करके पीस लेने से अभ्रक शुद्ध हो जाता है ।

धान्याभ्रक– धान्याभ्रक का शाब्दिक अर्थ है कि धान्य (धान) तथा अभ्रक के संयोग (मर्दन) पश्चात् अभ्रक जिस, स्वरूप को प्राप्त हो जाता है उसे धान्याभ्रक कहते हैं इसकी विधि निम्न है–

Scanned with OKEN Scanner

पादांश शालिसंयुक्तमभ्रकं कम्बलोदरे। त्रिरात्रं स्थापयेन्नीरे तत् क्लिन्नं मर्दयेत् दृढम्॥
कम्बलाद्गालितं श्लक्ष्णं बालुकारहितञ्च यत्। तद्धान्याभ्रमिति प्रोक्तमभ्रमारण सिद्धये॥
(र.सा.स. 1/154)

सूर्णांभं शालिसंयुक्तं वस्त्रबद्धं हि काञ्जिके। निर्यातं मर्दनाद्वस्त्राद्धान्याभ्रमिति कथ्यते॥
(र.र.स. 2/21)

शुद्ध अभ्रक तथा अभ्रक से 1/4 भाग शालि धान्य लेकर उसे एक कम्बल/वस्त्र की पोट्टली में रखकर इस पोट्टली को तीन रात तक काञ्जी/जल में रख देते हैं। तत्पश्चात् इसे दृढ़ मर्दन करते हैं। ऐसा करने पर वस्त्र से सूक्ष्म रूप में अभ्रक बाहर आता है। इसे एकत्र कर लेते हैं। यही धान्याभ्रक है। यह श्लक्ष्ण तथा बालू रहित होता है।

विमर्श– अभ्रक शोधन तथा धान्याभ्रक निर्माण से अभ्रक की Particle size कम हो जाती है जिससे इसकी भस्मीकरण की प्रक्रिया आसान हो जाती है। धान्याभ्रक निर्माण में अभ्रक को सावधानी पूर्वक निथारना चाहिये।

अभ्रक मारण

1. **धान्याभ्रं कासमर्दस्य रसेन परिमर्दितम्। पुटितं दशवारेण म्रियते नात्र संशयः॥**
(र.र.स. 2/22)

धान्याभ्रक को कासमर्द स्वरस से भावना देकर उसे पुट दे देते हैं। ऐसा दस पुट देने से अभ्रक की भस्म निश्चित रूप से बन जाती है।

2. **गन्धर्व पत्र तोयेन गुडेन सह भावितम्। अधोर्ध्व वटपत्राणि निश्चन्द्रं त्रिपुटैः खगम्॥**
र.र.स. 2/26)

धान्याभ्रक के समान मात्रा में गुड़ मिलाकर एरण्ड पत्र स्वरस की भावना देकर उसे टिकिया बनाकर शराव में ऊपर नीचे वट पत्र रखकर उसके बीच में अभ्रक रखकर सम्पुट कर पुट देते हैं। ऐसे तीन पुट से अभ्रक की निश्चन्द्र भस्म बन जाती है।

अभ्रक भस्म लक्षण– अभ्रक भस्म की वर्ण इष्टिका (लाल) वर्ण की होनी चाहिए।

अभ्रक भस्म लोहितीकरण

अथ नागबलाभद्रमुस्ताक्वाथैर्वटस्य च। दुग्धैर्वटजटातोयैर्हरिद्रावारिणाऽपि च॥
मञ्जिष्ठाक्वाथतोयेन सर्वैरभिर्यथाक्रमम्। पुटितं भावनायोगाच्चरमे पुटने मुहुः॥
जायते ह्यरूणं चाति भस्म वज्राभ्रकोद्भवम्। (आ.प्र. 2/133-134)

नागबला, भद्रमुस्ता (नागरमोथा), वटदुग्ध, वट जटा (Aerial Root of Ficus bengalensis) क्वाथ, हरिद्रा तथा मञ्जिष्ठा क्वाथ से उत्तरोत्तर क्रम से, जब अभ्रक भस्म बन जाय, भावना देकर पुट देने से अरुण वर्ण (रक्त) की अभ्रक भस्म बन जाती है।

अभ्रक भस्म अमृतीकरण

1. **तुल्यं घृतं मृताभ्रेण लोहपात्रे विपाचयेत्। घृते जीर्णे ततश्चूर्ण सर्वकार्येषु योजयेत्॥**
(आ.प्र. 2/139)

गाय का घी तथा अभ्रक भस्म समान मात्रा में लेकर लोह पात्र में मन्दाग्नि पर पाक करते हैं जब घृत जीर्ण (पच) जाय तो इसे सभी कार्य में प्रयुक्त करते हैं।

2. **वराम्बु गोघृतं चाभ्रं कलाषड्दिकसमांशकम्। मृद्वाग्निना पचेल्लौह्यमभृतीकरणं त्विदम्॥**
(आ.प्र. 2/138)

त्रिफला क्वाथ, गोघृत तथा अभ्रक भस्म क्रमशः 16 (कला भाग), 6 तथा 10 (द्विकभाग=10 दिशा) भाग लेकर मन्दाग्नि पर पाक करने से अभ्रक का अमृतीकरण संस्कार हो जाता है।

अमृतीकरण संस्कार से लाल भस्म में गुणवृद्धि तथा वर्ण हानि होती है। यथा–

अरूणभस्मनस्तु पुनरमृतीकरणेन गुणवृद्धिर्वर्णहानिश्च भवति॥ (आ.प्र. 2/135)

अभ्रक सत्व पातन

पादांशटङ्कणोपेतं मुसलीरसमर्दितम्। रून्ध्यात्कोष्ठ्यां दृढं ध्मातं सत्त्वरूपं भवेद् घनम्॥
(र.र.स. 2/28)

अभ्रक से चौथाई भाग टंकण (Borax) मिलाकर मुसली स्वरस से मर्दन कर कोष्ठिका यन्त्र में धमन करने पर अभ्रक का सत्व निकल आता है।

सत्व शोधन

प्राप्त अभ्रक सत्व को अम्ल तथा काञ्जी में रखकर क्वथित, करके उसे शोधनीयगण के साथ मूषा में रखकर दो बार तीव्र आँच देने से सत्व शोधन हो जाता है।

अथ सत्त्वकणांस्तांस्तु क्वाथयित्वाऽम्लकाञ्जिकैः। शोधनीयगणोपेतं मूषामध्ये निरुध्य च॥
सम्यग्द्रुतं समाहृत्य द्विवारं प्रधमेद्घनम्। (र.र.स. 2/36)

सत्व मृदुकरण

सत्व को मूषा में द्रवित कर मधु, तैल, वसा एवं घृत में (प्रत्येक में) 10 बार बुझाने से सत्व का मृदुकरण हो जाता है।

मधुतैलवसाज्येषु द्रावितं परिवापितम्। मृदु स्याद्दशवारेण सत्त्वं लोहादिकं खरम्॥
(र.र.स. 2/38)

अभ्रक द्रुति

अगस्त्यपत्रनिर्यासैर्मर्दितं धान्याकाभ्रकम्। सूरणोदरमध्ये तु निक्षिप्तं लेपितं मृदा॥
गोष्ठभूमौखनित्वा तु हस्तमात्रे हि पूरितम्। मासान्निष्काशितं तत्तु जायते पारदोपमम्॥
(आ.प्र. 2/156-157)

धान्याभ्रक को अगस्त्य पत्र स्वरस से मर्दन कर उसे सूरणकन्द में रखकर ऊपर से मिट्टी का लेप कर गोशाला में एक हाथ गहरा गड्ढा खोदकर एक महीने तक रख देते हैं। एक मास पश्चात् निकालने पर निश्चित ही पारद सदृश द्रुति बन जाती है।

Scanned with OKEN Scanner

Probable Physico-chemical Changes

The following changes in crystalline size of Abhraka was observed when ist was subjected to Shodhana, Dhanyabhraka, Marana and Amritikarna process. The study was done by K. Shailesh et al. in which they have synthesized Abhraka Bhasma by two different traditional methods and it was analyzed during each phase of preparation i.e. Shodhan, Dhanyabhraka, Marana and Amritikarana. The following mean crystalline size/nm were found by XRD–

	After stage	Crystalline size/nm	
		Method-1	Method-2
1.	Shodhana	114	119
2.	Dhanyabhraka	47	106
3.	Marana	62	54
4.	Amritikarana	85	80

Method I– Shodhan in Go-Dugdha for seven times (Nirvapa)

Method II– Shodhan in Cow urine for seven times (Nirvapa)

The above observation shows that the crystalline size goes on decreasing with the process such as Shodhan, Dhanyabhraka and Marana.

Importance of Temperature

अभ्रक के शोधन, मारण तथा सत्वपातन की प्रक्रिया में उच्च तापमान की आवश्यकता होती है। अभ्रक को वर्नर फ्लेम के आउटर जोन तापमान लगभग 1000^0C पर गर्म करने पर यह लगभग अपने Volume का दोगुना हो जाता है (API)। सत्व पातन हेतु 1500^0C से 1800^0C की तापमान की आवश्यकता होती है जबकि भस्म निर्माण महापुट द्वारा Peak aprox 1200^0C की आवश्यकता होती है।

अभ्रक भस्म के प्रमुख योग–

1. आरोग्यवर्द्धनी वटी
2. नागार्जुनाभ्र रस
3. पंचामृत पर्पटी
4. गगन पर्पटी
5. वसन्त कुसुमाकर रस
6. श्वासकास चिन्तामणि रस
7. योगेन्द्र रस
8. लक्ष्मी विलास रस

Research updates

EDX spectrum of Abhraka Bhasma shows presence of elements Si, Al, Mg, Fe, K, Na, Ca at major level and also traces of Mn, Cr, Li, Ti, Ba, Rb, Cs at minor levels.

XRD pattern exhibit major crystalline peaks pertaining to Mica and matches well with monoclinic $KMg_3(Si_3Al)O_{10}(OH_2)$. Highly crystalline nature of Bhasma is shown in XRD. Nano sized particle size distribution is seen in DLS curve[1].

3. माक्षिक (Chalco-Pyrite)

पर्याय–

सुवर्णमाक्षिकं स्वर्णमाक्षिकं हेममाक्षिकम् । माक्षीकं माक्षिकञ्चैव ताप्यञ्च धातुमाक्षिकम् ॥ माक्षीकधातुञ्च तथा तापीञ्चापि तन्मतम् ॥ (र.त. 21/1-2)

सुवर्ण माक्षिक, स्वर्ण माक्षिक, हेम माक्षिक, माक्षीक, ताप्य, धातु माक्षिक तथा तापीज स्वर्ण माक्षिक के पर्याय हैं।

Minerological Identification–

Nature– Massive, Smooth
Colour– Golden yellow
Streak– Greenish black
Fracture– Uneven
Lusture– Metallic
Tenacity– Brittle
Transparency– Opaque
Hardness– 3 to 4
Sp.Gr.– 3.4 to 3.7

प्राप्ति तथा स्रोत

रस ग्रन्थों में माक्षिक की उत्पत्ति एवं प्राप्ति स्थान का निम्न वर्णन उपलब्ध होता है–

सुवर्णशैलप्रभवो विष्णुना काञ्चनो रसः । ताप्यां किरातचीनेषु यवनेषु च निर्मितः ॥ ताप्यः सूर्यांशुसन्तप्तो माधवे मासि दृश्यते ॥ (र.र.स. 2/77-78)

सुमेरु पर्वत पर उत्पन्न स्वर्ण सदृश रस को विष्णु भगवान ने तापी नदी किनारे, किरात देश (भूटान), चीन तथा यवन देश में निर्मित किया। वैशाख मास में सूर्य से तप्त होकर स्वर्ण माक्षिक अपने स्थान में दिखाई देता है। रसरत्न समुच्चय में कान्यकुब्ज तथा तापी तीर भी इसका स्थान माना गया है।

माक्षिक के 2 प्रकार रसरत्न समुच्चय में वर्णित है। पहला स्वर्ण माक्षिक तथा दूसरा रजत माक्षिक। A.P.I. में स्वर्ण माक्षिक को Copper are containing chalcopyrite ($CuFeS_2$) से माना गया है। इसकी उत्पत्ति Pre cambrian age के Metamorphic rocks से हुई है या पायी जाती है। स्वर्ण माक्षिक सामान्य रूप से जिस पत्थर/स्थान पर पाया जाता है वहाँ यह Streaks, stringer, patches, veins या Fracture तथा Cleavage के रूप में पाया जाता है। स्वर्ण माक्षिक Pyrrhotite, pyrite, sphelerite एवं galena minerals के साथ मिला हुआ पाया जाता है।

1. Kantaks, Rajukar N, Adhyapak P. Synthesis and characterization of Abhraka (mica) bhasma by two different methods. J Ayurveda Integr Med. 2020 Jul-Sep; 11 (3): 236-242. doi:10.1016/j.jam 2018. 11.003.

Scanned with OKEN Scanner

प्राप्त है यह मुख्य रूप से खेतड़ी, (जिला झुन्झनु, राजस्थान), मलन्जखण्ड, (जिला बालाघाट, मध्य प्रदेश) एवं घाटशीला (जिला सिंह भूमि, झारखण्ड) से पाया जाता है। इन तीन स्थानों से ९०% आपूर्ति होती है। चित्रदुर्गा, हसन कर्नाटक तथा रूपपुर एवं गुरु आन्ध्र प्रदेश एवं सिक्किम के रांगपो में भी स्वर्णमाक्षिक पाया जाता है।

भेद– माक्षिक के 2 भेद होते हैं–

माक्षिकं द्विविधं हेयमाक्षिकस्तारमाक्षिकः। (र.र.स. 2/81)

1. स्वर्ण माक्षिक (Copper pyrite या Chalcopyrite) $CuFeS_2$
2. रजत माक्षिक (Iron pyrite, Fe_2S_3)

ग्राह्य स्वर्ण माक्षिक

स्निग्धं गुरु श्यामलकान्ति किञ्चितकषे सुवर्णद्युतिसुप्रकाशम्।
कोणोज्झितं स्वर्ण समान वर्णं सुवर्णमाक्षीकमिह प्रशस्तम्॥ (र.त. 21/4)

तथा, तप्ततीतीरसमभूतं पञ्चवर्णं सुवर्णवत् (र.र.स. 2/81)

स्निग्ध, भारी, नीला काला चमकयुक्त, कसौटी पर घिसने पर कुछ स्वर्ण के जैसी रेखा वाला (पंचवर्ण स्वर्ण वत्) कोण रहित, स्वर्ण के जैसा वर्ण वाला स्वर्ण माक्षिक प्रशस्त होता है।

अग्राह्य स्वर्ण माक्षिक

खरं परं वै गुरूताविहीनं प्रवृत्तकोणं खरलोहकाभम्।
प्रकीर्तितं तत्परिहेयमेव सुवर्णमाक्षीकमिहाययज्ञैः॥ (र.त. 21/5)

ऐसा स्वर्णमाक्षिक जो स्पर्श करने में खर (Rough) अल्प भारवाला, कोणयुक्त तथा खर लोह की आभा वाला हो वह हेय अर्थात् अग्राह्य होता है। इसका ग्रहण नहीं करना चाहिए।

ग्राह्य रजत माक्षिक

स्निग्धं सकोणं गुरु च वर्तुल रजतोज्जवलम्। रौप्यवच्चाकचिक्याढयं जात्यं तद्रौप्यकमाक्षिकम्॥
(र.त. 21/57)

जो रजत माक्षिक स्निग्ध, कोण युक्त, भारी वर्तुल (गोल) तथा रजत के समान चमक तथा उज्जवल हो वह ग्राह्य होता है।

अग्राह्य रजत माक्षिक

समलं लघु रूक्षञ्च कषेऽतिमलिनच्छवि। अवर्तुलं विवर्णञ्च हेयं स्याद्रौप्यमाक्षिकम्॥
(र.त. 21/58)

मलयुक्त (Mix with impurity or other things), हल्का, रूक्ष, कसौटी पर घिसने से अति मलिन रेखा खींचने वाला, वर्तुल रहित तथा हल्के वर्ण का रजत माक्षिक श्रेष्ठ नहीं होता है तथा इसे ग्रहण नहीं करना चाहिए।

माक्षिक शोधन

माक्षिक का शोधन निम्न विधि से किया जाता है।

एरण्डतैललुङ्गाम्बुसिद्धं शुद्ध्यति माक्षिकम्। सिद्धं वा कदलीकन्दतोयेन घटिकाद्वयम्।
तप्तं क्षिप्तं वराक्वाथे शुद्धिमायाति माक्षिकम्। (र.र.स. 2/83)

1. एरण्ड तैल तथा मातुलुंग स्वरस में दोला यन्त्र विधि से माक्षिक का स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है।
2. दो घड़ी तक (6 घंटा) कदली कन्द (केले) स्वरस में स्वेदन से भी माक्षिक का शोधन हो जाता है।
3. माक्षिक को तप्त कर त्रिफला क्वाथ में बुझाने से इसका शोधन हो जाता है।

विमर्श– इस प्रक्रिया को सात बार करना चाहिए।

माक्षिक मारण

1. मातुलुङ्गाम्बुगन्धाभ्यां पिष्टं मूषोदरे स्थितम्। पञ्चक्रोडपुटैर्दग्धं म्रियते माक्षिकं खलु॥
(र.र.स. 2/84)

शुद्ध माक्षिक में समानभाग गन्धक मिलाकर मातुलुङ्ग स्वरस से मर्दन कर मूषा में रखकर वराहपुट देते हैं। ऐसा पाँच पुट देने से माक्षिक का मारण (भस्म) हो जाता है।

2. एरण्डस्नेहगव्याज्यैर्मातुलुङ्गरसेन वा। खर्परस्थं दृढं पक्वं जायते धातुसन्निभम्॥
एवं मृतं रसे योज्यं रसायनविधावपि॥ (र.र.स. 2/85-86)

एरण्ड तैल, गोघृत या मातुलुंग स्वरस में मर्दन कर खर्पर में रखकर तीव्र अग्नि में पाक करने पर स्वर्ण गैरिक सदृश भस्म बन जाती है। इस भस्म को रसायन विधा हेतु भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

माक्षिक सत्व पातन

पादांशटङ्कणोपेतं मर्दितं हेममाक्षिकम्। ध्मातं मूषागतं सत्त्वं मुञ्चत्याशु सुनिश्चितम्॥
(र.त. 21/46)

स्वर्ण माक्षिक से चौथाई भाग टंकण लेकर मर्दन कर मूषा में रख कर धमन करने से इसका सत्व निकल जाता है।

Probable physico chemical changes

The follwoing physico chemical changes were observed in the Shodhan of Swarna Makshika in Triphala Kwatha

Scanned with OKEN Scanner

Physico chemical parameters*

Sr.No.	Parameters	Swarna makshika Before shodhana	After shodhana
1.	Colour	Brassy golden yellow	Blackish
2.	Odor	Odorless	Odorless
3.	Texture	Hard crystallin & Shiny	Brittle, coarse powder
4.	Taste	Metallic	Metallic

Sr.No.	Parameters	Swarna makshika After shodhana	Before shodhana
1.	pH (5% aqueous sol^{n})	4.24	4.52
2.	Loss on drying 110^{0}C (%w/w)	0.67	0.54
3.	Ash value (% w/w)	96.66	91.48

Importance of temperature while processing

स्वर्णमाक्षिक शोधन, त्रिफला क्वाथ में निर्वाय विधि के लिए, औसत तापमान (कोयलों का) 829.95^{0}C की आवश्यकता होती है। इस पर यह तप्त होता है*। भस्म निर्माण हेतु वाराहपुट** 850^{0}C तथा सत्व पातन हेतु 1400^{0}C तापमान की आवश्यकता होती है।***

योग– 1. चन्द्रप्रभा वटी 2. जयमंगल रस
3. नवरत्नराजमृगांक रस 4. मृत्युंजय रस
5. रत्नगर्भपोट्टली

Research updates

XRD studies done on raw Swarna Makshika and Swarna Makshika Bhasma show that raw Swarna makshika contains $CuFeS_2$ while Bhasma Contains Fe_2O_3, FeS_3, CuS and SiO_2. Grains in Bhasma were found uniformly arranged in agglomerates of size 1-2

* Taviad K.K, Vekariya S, Bedarkar P, Galib R. Patgiri BJ. Process Standardization of Swarna Makshika Shodhan (Purification) in Triphala Kwatha (Decoction). Ayu-2018 Jul-Sep; 39(3):187-194 doi.10.4103/ayu. Ayu-26-18.

** Pathiraja Pmys, Ranatunga ymmk,Herapathdeniya SK MK, Guna wardens SHP. Swarna Makshika Bhasma preparation using an alternative heating methodto traditional Varaha puta. J Ayurveda Integr 2020 Jul-Sep; 11 (3) 206-212.

*** Singh, Sumer & Dwivedi, Laxmikant & Gupta, Ramesh & Rana, Seema, (2015). Standard Manufacturing Procedure of Makshika Satva Bhasma. International Journal of Research in Ayurveda & Pharmacy. 6. 43-46. 10.7897/2277-4343,06111

microns as compaired to raw, Swarna Makshika which has grain size of 6-8 microns, in Electron Microscope (SEM) study*.

4. शिलाजतु (Asphaltum Punjabianum)

पर्याय–

शिलाजतु च शैलेयं शिलाजं शैलधातुजम् । शिलामयः शिलास्वेदः शिला निर्यास इत्यपि ॥
अश्मजं त्वश्मजतुकं गिरिजं त्वद्रिजं तथा । अश्मोत्थमश्मलाक्षा च गैरेयञ्च मतन्तु तत् ॥
(र.त. 26/60-61)

शिलाजतु, शैलेय, शिलाज, शैलधातुज, शिलामय, शिला स्वेद, शिलानिर्यास, अश्मज, अश्मजतुक, गिरिज, अद्रिज, अश्मोत्थ, अश्मलाक्षा तथा गैरेय शिलाजतु के पर्याय है ।

स्रोत–

सूर्य सन्तापसन्तप्तः शिलाः शैलाधियस्य यद् । गाढ़ मुञ्चन्ति निर्यासं तच्छिलाजतु कीर्तितम् ॥
शैलाधिपशिलासारो निर्गतो रवितापतः । शुष्कः सन्मूर्ततां यातः शिलाजतु निगद्यते ॥
(र.त. 22/62-63)

सूर्य के तीव्र किरणों से हिमालय को शिला तप्त हो जाती है तो उसमें स्थित रस पिघल कर गाढ़े स्वरूप में शिलाओं के बीच के स्थान से बाहर आता है । इसे ही शिलाजतु कहते हैं ।

भेद– शिलाजतु संहिता काल से ही प्रयोग किया जाता रहा है । इसके भेद निम्न है–

	चरक संहिता	सुश्रुत संहिता	र.र.स.	आ.प्र.	र.त.
1.	स्वर्ण अद्रिज	स्वर्ण	हेमगर्भ	स्वर्ण	स्वर्ण
2.	रजत अद्रिज	रजत	रौप्यगर्भ	रजत	रजत
3.	ताम्र अद्रिज	ताम्र	ताम्रगर्भ	ताम्र	ताम्र
4.	लोह अद्रिज	कृष्ण लोह	अयोगर्भ	लौह	लौह
5.	–	नाग	–	–	–
6.	–	वंङ्ग	–	–	–

ग्राह्य लक्षण

गोमूत्र गन्धि यत्कृष्णां स्निग्धं मृदु तथा गुरु । तिक्तं कषायं शीतं च सर्वश्रेष्ठं तदायसम् ॥
(आ.प्र. 4/99)

* Mohaptra S. Jha CB, Physicochemical characterization of Ayurvedic Bhasma (Swarna Makshika Bhasma) : An approach to standardization Int J. Ayurveda Ras : 2010 Apr; 1 (2):82-6. doi:10.4103/0974-7788.64409.PMID:20814520; PMCID:PMC 2924988.

Scanned with OKEN Scanner

गोमूत्र से मुख्य रूप खारा, कड़वा, चिकना, कोमल, भारी, तिक्त, कषाय और शीतल शिलाजीत सर्वोत्तम तथा लोहित होता है।

अशुद्ध

उपरोक्त लक्षणों से भिन्न शिलाजतु अशुद्ध होता है।

दोष

अशुद्धं दाहमूर्च्छाभ्रमपित्तास्रशोषकृत्। शिलाजतु विधत्ते हि माद्यमग्नेश्च विड्ग्रहम्॥
(आ.प्र. 4/105)

अशुद्ध शिलाजीत दाह, मूर्च्छा, भ्रम, रक्तपित्त, शोष, अग्निमांद्य तथा विबन्ध करता है।

शोधन

क्षारगन्धलगोजलैर्धौतं शुद्धत्यत्येव शिलाजतु॥
शिलाधातुं च दुग्धेन त्रिफलामार्कवद्रवैः। लोहपात्रे विनिक्षिप्य शोधयेदतियत्नतः॥
(र.र.स. 2/116-117)

1. शिलाजीत को क्षार, अम्ल या गोमूत्र से प्रक्षालन करने से यह शुद्ध हो जाता है। या फिर इसे एक लोह पात्र में गोदुग्ध, त्रिफला या भृंगराज स्वरस में घोलकर सावधानी पूर्वक शोधन करते हैं।

क्षारगन्धगुग्गुलोपेतैः स्वेदनीयन्त्रमध्यगैः। स्वेदितो घटिकामानाच्छिलाधातुर्विशुद्ध्यति॥
(र.र.स. 2/118)

2. क्षार, अम्ल या गुग्गुलु के साथ इसे स्वेदनी यन्त्र के माध्यम से स्वेदन करने, (एक घड़ी तक), से शिलाजीत शुद्ध हो जाता है

3. आयुर्वेद प्रकाश में शिलाजीत शोधन की निम्न विधि का वर्णन किया गया है–

उष्णे च काले रवितापयुक्ते व्यभ्रे निवाते समभूरिभागे।
चत्वारि पात्राण्यसितायसानि न्यस्यातपे तत्र कृतावधानः॥
शिलाजतु श्रेष्ठमवाप्य पात्रे प्रक्षिप्य तस्माद् द्विगुणं च तोयम्।
उष्णं तदर्धं क्वथितं च दत्वा विशोधयेत्तन्मृदितं यथावत्॥
ततस्तु यत्कृष्णमुपैति चोर्ध्वं सन्तानिकाद्रविरश्मितप्तम्।
पात्रे तदन्यत्र ततो निदध्यात् तत्रापरं कोष्णलं क्षिपेच्च॥
पुनश्च तस्मादपरत्र पात्रे पश्चाच्च पात्रादपरत्र भूयः।
यदा विशुद्धं जलमेवमूर्ध्वं कृष्णं समस्तं मलमेत्यधस्तात्॥
तदा व्यजेतत् सलिलं मलं च शिलाजतु स्याज्जलशुद्धमेव॥
(आ.प्र. 4/110-115)

उष्णकाल में बादल रहित निवात स्थान में काले लोहे के चार पात्र रखते हैं। फिर सावधानी पूर्वक अशुद्ध शिलाजतु

तथा उससे दो गुना जल तथा आधी मात्रा में क्वाथ (त्रिफला आदि) में शिलाजतु डालकर मर्दन करते हैं। तथा वस्त्र से छानकर प्रथम लोहे के पात्र में गिरा देते हैं। जब सूर्य से तप्त होकर ऊपरी सतह पर काली मलाई जैसा जम जाय तो उसे दूसरे पात्र में निकाल लेते हैं तथा पात्र में पुनः जल/क्वाथ डाल देते हैं तथा पुनः काली मलाई जमने पर निकाल लेते हैं। इसी भाँति तीन चार वार करने से समस्त कृष्ण मलाई निकल जाय तथा मल नीचे बैठ जाय तथा ऊपर स्वच्छ जल मात्र रह जाय यही जल शुद्ध शिलाजीत है। जब चौथे पात्र से छानकर लिया शिलाजतु तैयार हो जाय तो इसकी परीक्षा की जाती है।

कर्पूरगन्धि शिलाजतु शोधन

एलातोयेन सम्भिन्नं सिद्धं शुद्धिमुपैति तत्। (र.र.स. 2/124)

एला क्वाथ (हिम) में अशुद्ध कर्पूर गन्धि शिलाजीत को मर्दन करने से इसका शोधन हो जाता है।

मारण

शिलया गन्धतालाभ्यां मातुलुङ्गरसेन च। पुटितो हि शिलाधातुर्म्रियतेऽष्टगिरिण्डकैः॥
(र.र.स. 2/119)

शिलाजीत को समभाग गन्धक तथा हरताल को मातुलुंग स्वरस से मर्दन कर आठ उपलों की पुट (कपोत पुट) देने से इसका मारण हो जाता है।

सत्व पातन

पिष्ट्वा द्रावणवर्गेण साम्लेन गिरिसम्भवम्। क्षिप्त्वा मूषोदरे रुद्ध्वा गाढैर्ध्मातं हि कोकिलैः॥
सत्त्वं मुञ्चेच्छिलाधातुस्तत्क्षणाल्लोहसन्निभम्॥(र.र.स. 2/122)

शिलाजतु को द्रावक वर्ग की औषधियों के साथ मिलाकर अम्ल द्रव से पीसकर मूषा में रखकर तीव्र धमन (कोयलों की आँच पर) करने से लोहे के सदृश इसका सत्वं निकल जाता है।

Probable physico-chemical changes

The following physico chemical values were noted in Shodhita Shilajatu

S.N.	Physical constituents	Result
1.	Moisture content	1%
2.	Ash value	19.2%
3.	Acid insoluble ash	1%
4.	Water soluble ash	13.6%
5.	Specific gravity	1.005
6.	pH	6.5
7.	Percentage of solubility	74% (in DW)

Scanned with OKEN Scanner

Arya Elias, Pramod C. Bargi, Kashinath Hadimur, K.A. Patil, Khazi Rahimbi, Pharmaceutico analytical study of Shodhita Shilajatu. J Ayurveda Integr Med Sci. 2020; 5:214-219 http://dx.doi.org/10.21760/Jaims. 5.5.30.

Importance of temperature while processing– शिलाजतु की संरचना में उपस्थित तत्वों के कारण इसकी शोधन विधि में सूर्य के ताप से या मन्द अग्नि पर इसका पाक करते हैं जिससे यह नष्ट न हो सके। यद्यपि इसके मारण तथा सत्वपातन का भी उल्लेख है लेकिन आधुनिक समय में यह प्रचलित नहीं है।

प्रमुख योग– 1. आरोग्य वर्द्धनी वटी, 2. चन्द्रप्रभावटी, 3. शिवागुटिका, 4. शिलाजत्वादि लौह, 5. सर्व आरोग्य वटी ।

Research updates

* The origin and the process of transformation of Shilajatu in its natural habitat contribute to the odour of Shilajit i.e. smell of Cow's urine (Gomutra gandhi) or Camphor (Karpura gandhi).

** Shilajit is composed of three primary chemical units–

1. Low and medium molecular weight non-humic organic compounds comprising free and conjugated (e.g. fatty acyl, aminoacyl, lipoidal) dibenzo-α-pyrones.
2. Medium and high molecular weight DCPs (Dibenzo-α-pyrons chromoproteins) containing trace metal ions along with carotenoids and indigoids as colouring matter.
3. Metallo-humates like fulvic acids and fusims with dibenzo-pyrones in their core nucli.

*** Composition of Shilajit is considered as phytocomplex, very rich in fulvic acid. Researches hypothesize that it is produced by the decomposition of plant material from species such as Euphorbia royleana and Trifolium repens. It is composed mainly of humic substances including fulvic acid, that account for around 60 to 80% of the total nutraceutical compound and some oligo elements including selinium of antiaging properties.

---

* [Ghosal S, 2006, Shilajit in perspective, first ad, Alpha Science International limited, Oxford, United Kingdom].

** Wilson E. et al. Review on Shilajit used in traditional. India Medicine. Journal of Ethnopharmcology. vol 136. Issue 1; 14 June 2011; p1-9.

*** Carraasco-Gallandoc, Guzman L. Maccioni RB. Shilajit : a natural phyto complex with potenial procognitive activity. Int. J Alzheimers Dis. 2012; 2012:674142. doi:10.1155/2012/674142. Epub 2012 Feb 23. PMID:22482027;PMCID: PMC 3296184.

5. गन्धक (Sulphur)

पर्याय

गन्धको गन्धपाषाणः गन्धी च रसगन्धकः । सुगन्धिको गन्धिकश्च गन्धः सौगन्धिकस्तथा ॥
पूतिगन्धोऽतिगन्धश्च पामारिः कीटनाशनः । बलिर्वलिवसाख्यश्च कुष्ठारिः शरभूमिजः ॥
शुल्वारिर्नवनीतश्च दैत्येन्द्रो गन्धमादनः । कीटघ्नः क्रूरगन्धश्च स एव परिकीर्तितः ॥
(र.न. 8/1-3)

गन्धक, गन्ध पाषाण, गन्धी, रसगन्धक, सुगन्धिक, गन्धिक, गन्ध, सौगन्धिक, पूतिगन्ध, अतिगन्ध, पामारि, कीटनाशन, बलि, बलिवसा, कुष्ठारि, शरभूमिज, शुल्वारि, नवनीत, दैत्येन्द्र, गन्धमादन, कीटघ्न, क्रूरगन्ध ये गन्धक के पर्याय है ।

Physical properties

Nature	–	Crystalline lumps
Colour	–	Sulphur yellow
Streak	–	Yellowish white
Cleavage	–	Poor
Fracture	–	Conchoidal
Lusture	–	Resinous
Tenacity	–	Brittle
Transparency	–	Translucent
Hardness	–	1.5 to 2.5
Sp. Gr.	–	1.95 to 2.10

स्रोत

प्राचीन रस ग्रन्थों में गन्धक की उत्पत्ति देवी पार्वती द्वारा मानी गयी है तथा इनके रज को ही गन्धक कहा गया है यथा–

देव्या रजो भवेद्गन्धो.....।(र.र.स. 2/2)

गन्धक की उत्पत्ति स्थान श्वेतदीप के पास क्षीर सागर माना गया है, यथा–

श्वेतद्वीपे पुरा देवि सर्वरत्नविभूषिते । सर्वकाममये रम्ये तीरे क्षीरपयोनिधेः ॥
विद्याधरीभिर्मुख्याभिरङ्गनाभिश्च योगिनाम् । सिद्धाङ्गनाभिः श्रेष्ठाभिस्तथैवाप्सरसां गणैः ॥
देवाङ्गनाभी रम्याभिः क्रीडन्तीभिर्मनोहरैः । गीतैर्नृत्यैर्विचित्रैश्च वाद्यैर्नानाविधैस्तथा ॥
एवं संक्रीडमानायाः प्राभवत्प्रसृतं रजः । तद्रजोऽतीव सुश्रोणि सुगन्धि सुमनोहरम् ॥
रजसश्चातिबाहुल्याद्वासस्ते रक्ततां ययौ । तत्र त्यक्त्वा तु तद्वस्त्रं सुस्नाता क्षीरसागरे ॥
घृता देवाङ्गनाभिस्त्वं कैलासं पुनरागता । ऊर्मिभिस्तद्रजोवस्त्रं नीतं मध्ये पयोनिधेः ॥
एवं ते शोणितं भद्रे प्रविष्टं क्षीरसागरे । क्षीराब्धिमथने चैतदमृतेन सहोत्थितम् ॥

Scanned with OKEN Scanner

निजगन्धेन सान्द्रार्द्रकर्षचन्दनसदृशान्वितान् । ततो देवगणैरुक्तं गन्धकाख्यो भवत्वयम् ॥
(र.र.स. 3/2-9)

प्राचीन समय में सभी प्रकार के रत्नों से सुशोभित पार्वती जी क्षीर सागर के तट पर श्वेत द्वीप में नृत्य कर रही थी । उस समय जो उन्हें नैसर्गिक रज स्राव हुआ तथा वह आर्तव अत्यन्त सुगन्धित एवं मनोहर था । अत्यधिक रजस्राव से वस्त्र लाल होने के कारण उसे वहीं छोड़ दिया जो समुद्र की लहरों द्वारा क्षीर सागर में प्रविष्ट हो गया तथा बाद में समुद्र मंथन के समय अमृत के साथ यह भी ऊपर आ गया । देवों तथा दैत्यों को इसकी गन्ध से हर्षित कर दिया जिससे इसका नाम गन्धक हुआ । उपरोक्त वर्णन अनुसार गन्धक की उत्पत्ति श्वेत द्वीप (आधुनिक समय में सिसली, इटली) में हुई तथा इसमें विशेष गन्ध आने के कारण इसे गन्धक कहा जाता है ।

आधुनिक समय में गन्धक मुक्त तथा यौगिक रूप में पाया जाता है । मुक्त रूप अमेरिका में यह ज्वालामुखीय क्षेत्रों तथा सिसली, इटली, टेक्सास, पोलैण्ड में प्रचुर मात्रा में under ground deposits के रूप में पाया जाता है । खनिज रूप में Iron pyrite, Copper pyrite, Galena, Gypsum, Copper तथा Ferrous sulphates आदि में पाया जाता है । गन्धक पेट्रोलियम, कोयला तथा प्राकृतिक गैस के साथ भी पाया जाता है । भारत में गन्धक deposits बहुत ही कम है । जम्मू-कश्मीर के लेह क्षेत्र में Tsokar झील में गन्धक की उपस्थिति पायी जाती है । इसके अतिरिक्त भारत में गन्धक खदानों के द्वारा प्राप्त नहीं होता है । लेकिन Elemenal Sulphur खाद के कारखानों द्वारा पानीपत, नया नांगल, घटिंडा तथा मथुरा में तेल शोधक कारखानों से प्राप्त होता है ।

भेद– श्रेष्ठता के अनुसार गन्धक के तीन भेद होते हैं–

स चापि त्रिविधो देवि शुकचञ्चुनिभो वरः । मध्यमःपीतवर्णः स्याच्छुक्लवर्णोऽधमः प्रिये ॥
(र.र.स. 3/12)

1. शुकचञ्चु (तोते की चोंच) – रक्तवर्ण – श्रेष्ठ
2. पीत वर्ण (शुकपुच्छ) – मध्यम
3. शुक्ल वर्ण – अधम

वर्ण तथा इनके गुण अनुसार गन्धक चार प्रकार का होता है–

चतुर्धा गन्धको ज्ञेयो वर्णैः श्वेतादिभिः खलु । श्वेतोऽत्र खटिका प्रोक्तो लेपने लोहमारणे ॥
तथा चामलसारः स्याद्यो भवेत्पीतवर्णवान् । शुकपिच्छः स एव स्याच्छ्रेष्ठो रसरसायने ॥
रक्तश्च शुकतुण्डाख्यो धातुवादविधौ वरः । दुर्लभः कृष्णवर्णश्च स जरामृत्युनाशनः ॥
(र.र.स. 3/13-15)

क्र.सं.	वर्ण	अन्य नाम	उपयोग
1.	श्वेत वर्ण	खटिका	लेप तथा लोह मारण (भस्म निर्माण)
2.	पीत वर्ण	आमलासार/शुकपिच्छ	श्रेष्ठ रस रसायन
3.	रक्त वर्ण	शुकतुण्ड	धातुवाद
4.	कृष्ण वर्ण		जरामृत्यु नाशक

ग्राह्य लक्षण

शुकपिच्छसमच्छायो नवनीतसमप्रभः । मसृणः कठिनः स्निग्धः श्रेष्ठो गन्धक उच्यते ॥
(आ.प्र. 2/20)

शुक पिच्छ सदृश (तोते की पूँछ सदृश, पीत वर्ण) मक्खन सदृश चमकदार, चिकना कठिन तथा स्पर्श में स्निग्ध गन्धक श्रेष्ठ होता है । ऐसा गुणयुक्त गन्धक प्रयोग (चिकित्सीय) करना चाहिए ।

अग्राह्य लक्षण

उपरोक्त लक्षणों से भिन्न गन्धक अग्राह्य होता है।

दोष

गन्धेमलद्वयं दृष्टं शिलाचूर्णं विषं तथा । (रसजलनिधि द्वितीय भाग अध्याय 2 P 131)

गन्धक में दो प्रकार के मल होते है— 1. शिला चूर्ण 2. विष

शोधन

1. पयःस्विन्नो घटीमात्रं वारिधौतो हि गन्धकः । गव्याज्यविद्रुतो वस्त्राद्गालितः शुद्धिमृच्छति ॥
एवं संशोधितः सोऽयं पाषाणानम्बरे त्यजेत् । घृते विषं तुषाकारं स्वयं पिण्डत्वमेव च ॥
इति शुद्धो हि गन्धाश्मा नापथ्यैर्विकृतिं व्रजेत् । अपथ्यादन्यथा हन्यात्पीतं हालाहलं तथा ॥
(र.र.स. 3/20-21)

गाय के घी के साथ गन्धक को पिघलाकर उसे, एक हांडी के पात्र जिसमें गोदुग्ध भरा हो तथा उस पात्र के मुख पर सूती वस्त्र बधा हो, इस पात्र में गिरा देते हैं । तत्पश्चात् इस गन्धक+दुग्ध युक्त पात्र को मंदाग्नि पर एक घड़ी (3 घण्टे) तक स्वेदन करते हैं । ऐसा करने से गन्धक शुद्ध हो जाता है । इस प्रकार की शोधन प्रक्रिया से पत्थर आदि दूर हो जाते हैं तथा गन्धक में उपस्थित विष तुष के रूप में घी में रह जाता है तथा ऊपर तैरता है। इसके पश्चात् गन्धक को निकाल कर गर्म जल से प्रक्षालन कर लेते हैं । ऐसे गन्धक सेवन से यदि अपथ्य भी किया जाय तो भी किसी प्रकार की विकृति नहीं होती है ।

2. गन्धको द्रावितो भृङ्गरसे क्षिप्तो विशुध्यति । तद्रसैः सप्तधा भिन्नो गन्धकः परिशुध्यति ॥
(र.र.स. 3/23)

गन्धक को पिघलाकर भृंगराज स्वरस में गिरा देते हैं । तत्पश्चात् इसी स्वरस में स्वेदन करते हैं । ऐसा सात बार करने से गन्धक सम्यक् रूप से शुद्ध हो जाता है ।

Probable physico chemical changes– Rajlakshmy et al. द्वारा किये गये अध्ययन में शोधन के पहले तथा बाद में गन्धक के physico chemical लक्षण निम्न पाये गये–

S.N.	Characters	Raw Sulphur	Processed Sulphur
1.	Colour	Shiny yellow	Yellow
2.	Appearance	Highly crystalline, sharp and shiny	Amorphous, not sharp, no shiny

Scanned with OKEN Scanner

3.	Texture	Hard, rough	Soft, Smooth
4.	Melting point (^{0}C)	96	110
5.	Density (g/cc)	2.07	1.95
6.	Smell	Foul	No foul smell
7.	Sulphur concentration (%)	99.52	98.61

Importance of Temperature

गन्धक (Sulphur) का melting point 115.21^{0}C तथा Boiling point 444.6^{0}C होता है।

अतः शोधन करते समय तथा रसपर्पटी निर्माण करते समय तापमान का विशेष ध्यान रखना चाहिए अन्यथा गन्धक के जलने की पूरी सम्भावना रहती है।

योग– 1. रस पर्पटी
2. रस सिन्दूर
3. आरोग्यवर्द्धनी रस
4. गन्धक रसायन
5. मकरध्वज
6. स्वर्ण वंग
7. मल्ल सिन्दूर
8. शंख वटी
9. गन्धक द्रुति
10. कज्जली

Research updates

Study done on Bhringraja Shodhit and Godugdha Shodhita Gandhaka, to see the immunomodulatory activity by Neutrophil Function Assay Test, both samples show significant Immunomodulatory effect. In the comparison of both sample, from 5µl concentrations to 100 µl, it was found that there is no significant difference between sample 1 & 2 (P>0.05) over all[1].

Studies were done on Shodhita Gandhaka, (Done by melting in ghee then pouring it into cow's milk for seven times) on modern technique like ICP-AES, XRD, SEM and analysied. The SEM images of both samples of sulphur show presence of an extraneous on the SEM surface image for raw sample and it was found to be absent in processed sample. In XRD the 2θ values were observed in the range 23.74 to 29.34^0, typical of alpha Sulphur and were present in both pattern. The highly intense peak at 2θ of 52.7 for a d=7.14 is observed in XRD pattern of raw sulphur and were found to diminish to an intensity of 200 Lin counts in processed Sulphur. The finger printing region, 1400 cm^{-1} to 900 cm^{-1} for processed sulphur was observed to have a complex form compared to that for raw sulphur, which is indicative of presence of organic groups.[2]

1. Gaikwad B, Baragi P.C. Immunomodulatory effect of Bhringraj Swaras Shodhit Gandhak and Godugdha Shodhita Gandhak : A comparative invitro study; Ayushdhara; March-April 2019; vol 6; (2) p 2079-2088.
2. M.R. Raja Laksmy, CV. Sruthi, AK. Maniyan, S. Vendasmirtham, P.T. Naraj and A. Sindhu. Physicochemical Transformation of Sulfur during Pharma- ceutical Processing in Traditional Indian Medicine. Indian J Pharma Sci-2017; 79[5]; 794-800

6. गैरिक (Red Ochre)

पर्याय

गैरिकं त्वथ गैरेयं गिरिमृद् गिरिमृत्तिका। रक्तधातु र्लोह धातुस्तदेव गिरिमृद्भवम्॥
(र.त. 22/110)

गैरिक, गैरेय, गिरिमृद, गिरिमृत्तिका, रक्तधातु; लोहधातु तथा गिरिमृद्भव ये सब गेरु (गैरिक) के पर्याय है।

Minerological Identification

Nature– Massive clayey
Colour– Reddish brown
Streak– Reddish brown
Fracture– Uneven
Lustre– Earthy
Tenacity– Brittle
Transparency– Opaque
Hardness– 5.5 to 6.5 but much softer in earthy variety
Sp. Gr.– 2.7

भेद–

गैरिकं तु समाख्यातं द्विविधं रसकोविदैः। पाषाणगैरिकं त्वाद्यं द्वितीयं स्वर्णगैरिकम्॥
(र.त. 22/111)

गैरिक के दो भेद होते हैं— 1. स्वर्ण गैरिक, 2. पाषाण गैरिक

रंग के आधार पर Ochres भारत में 2 प्रकार का पाया जाता है—

1. Red Ochre - An hydrous iron oxide
2. Yellow Ochre - Hydrated iron oxide

ग्राह्य स्वरूप

सुवर्ण गैरिकं स्निग्धं मसृणं त्वतिकोमलम्। पाषाण गैरिकं रूक्षं कठिनं नाति लोहितम्॥
पाषाण गैरिकात् श्रेष्ठं कथितं स्वर्णगैरिकम्। अतः सर्वत्र मतिमान् योजयेत्स्वर्णगैरिकम्॥
(र.त. 22/112-13)

स्वर्ण गैरिक स्निग्ध, चमकीला (मसृण), अति लाल वर्ण का तथा अधिक कोमल होता है तथा यह पाषाण गैरिक से श्रेष्ठ होता है। अतः सभी कार्य हेतु इसी का प्रयोग करना चाहिए। पाषाण गैरिक रूक्ष, कठिन तथा अति कोमल नहीं होता है।

अग्राह्यता

उपरोक्त लक्षणों से भिन्न गैरिक अग्राह्य होता है।

Scanned with OKEN Scanner

शोधन

1. गैरिकं तु गवां दुग्धैर्भावितं शुद्धिमृच्छति। (र.र.स. 3/49)

गैरिक को गाय की दूध से भावना देने से यह शुद्ध हो जाता है।

2. गव्याज्येन तु सम्भृष्टं चत्वतो मन्दवह्निना। सुवर्ण गैरिकं शीघ्र शुद्धिमाप्नोत्यसंशयम्॥

(र.त. 22/115)

स्वर्ण गैरिक के चूर्ण को कड़ाही में थोड़े से घृत के साथ भर्जन कर लेने से यह शुद्ध हो जाता है।

विमर्श– भर्जन विधि भावना विधि की अपेक्षा आसान तथा शीघ्र ही हो जाती है। इसे किसी भी मौसम में किया जा सकता है। इसकी अपेक्षा भावना विधि में यदि यह ठीक से सूखी नहीं है तो दूध की मावा के उपस्थित होने के कारण Fungal growth की पूरी सम्भावना रहती है। स्वर्ण गैरिक को शुद्ध रूप में ही प्रयुक्त किया जाता है।

सत्व पातन

गैरिकं सत्त्वरूपं हि नन्दिना परिकीर्तितम्॥
कैश्चिदुक्तं पतेत्सत्त्वं क्षाराम्लस्विन्नगैरिकात्। उपतिष्ठति सूतेन्द्रमेकत्वं गुणवत्तरम्॥

(र.र.स. 3/50)

रसाचार्य नन्दी के अनुसार यह स्वयं सत्वरूपा है अतः इसके सत्वपातन की आवश्यकता नहीं है। अन्य आचार्यों के अनुसार क्षार, अम्ल के साथ अलग-अलग स्वेदन करने से इसका सत्व निकल आता है। यह सत्व पारद से मिल जाता है तथा गैरिक की अपेक्षा गुणवान होता है।

Probable Physico-chemical changes

गोघृत से भर्जन विधि द्वारा शोधित स्वर्ण गैरिक (Processed Red Ochre PRO) के Physico chemical character* निम्न पाये गये–

Sr.No.	Parameter	Mean of 3 batches
1.	Loss on Drying (%)	0.47
2.	Loss on Ignition (%)	17.56
3.	Acid insoluble Ash (%)	39.67
4.	Iron as Fe (% w/w)	18.92
5.	Silicon as Si (% w/w)	18.92

Importance of temperature while processing– गैरिक को शुद्ध करते समय अत्याधिक तापमान नहीं रखना चाहिए अन्यथा घृत के गुण नष्ट होने की सम्भावना रहती है।

* SB Chavan, VS Gupta, VV Deshmukh & SP Sardeshmukh. Pharmaceutical Standardization and physicochemical characterization of traditional ayurvedic mineral drug red ochre roasted in cow's ghee [Shuddha Gairik]. Indian J Tradit knowVol 21 (2), April 2022 pp 303-316.

योग– 1. पुष्यानुग चूर्ण
2. गैरिकाद्य मलहर
3. इरिमेदादि तैल
4. विषम ज्वरान्तक लौह
5. महाज्वरांकुश रस

Research updates

In their study done by Chavan et al. on Gairika Shodhan it was found that SEM analysis did not show any structural changes in both i.e. before and after Bharjana. Particle size of he agglomerates in both were in similar range. XRD pattern did not show any chemical and crystalline phase changes. FT-IR analysis shows addition bands in processed Red Ochre (Shodhita Gairika) as compared to raw that may be due to mixing or deposition of fat on the red ochre. The XRD analysis, showed prominent peaks simulation with that of Ferric oxide (Fe_2O_3) and Karolinite*.

Study done in suckling and weaning rats by feeding then combination of iron with several types of fat shows that those consuming iron with saturated fat have higher Fe uptake and haemoglobin regeneration.** This may be the reason for Shodhan of Gairika by Ghrita that is given in the texts of Rasa Shastra.

7. कांक्षी (Alum)

पर्याय

स्फटिकारिः स्फुटी चैव स्फटिका स्फुटिकारिका। स्फुटिका फटिका चैव शुभ्रा कांक्षी च रङ्गदा॥
दृढ़रङ्गा रङ्गदृढ़ा तथैव दृढरङ्गरा। तुवरी रङ्गदात्री च कथिता भिषजां वरैः॥

(र.त. 11/178-79)

स्फटिकारि, स्फुटी, स्फटिका, स्फुटकारिका, स्फुटिका, फटिका, शुभ्रा, कांक्षी, रंगदा, दृढ़रंगा, रंगदृढ़ा, दृढरंगदा, तुवरी तथा रङ्गादात्री में स्फटिका या फिटकरी के पर्याय हैं।

Minerological Identification

Colour – White
Lustre – Vitreous

* SB Chavan, VS Gupta, VV Deshmukh & SP Sardeshmukh. Pharmaceutical Standardization and physicochemical characterization of traditional ayurvedic mineral drug red ochre roasted in cow's ghee [Shuddha Gairik]. Indian J Tradit knowVol 21 (2), April 2022 pp 303-316.

** Pabon ML & Lonnerdal B, Effects of type of fat in the diet on iron bio availability assumed in suckling and weanling rats, J. Trace Elem Med Biol, 15 (2001) 18-23 http://www.urbanfischer.de/journals/itraceelm.

Scanned with OKEN Scanner

Hardness – 2
Specific gravity – 1.757

स्रोत

शास्त्रों में कांक्षी को सौराष्ट्र देश में उत्पन्न होना कहा गया है । आधुनिक समय में जामनगर एवं राजकोट, जूनागढ़ का इलाका सौराष्ट्र देश है ।

सौराष्ट्रमत्तिकैवेह निर्भरं निर्मलीकृता । तच्छोधकैर्जनैलोके कथिता स्फुटिकारिका ॥
(र.त. 11/180)

सौराष्ट्र में पायी जाने वाली मिट्टी विशेष को साफ कर लिया जाता है तो इसे लोक भाषा में लोग स्फटिका कहते है ।

Potassium alum do deca hydrate occurs in nature as a sulfate mineral called alum-(k) typically as en crustations on rocks in areas of weathering and oxidation of Sulphide minerals and potassium bearing minerals. Potassium alum is now produced industrially by adding potassium sulfate to a concentrated solution of aluminium sulfate.

भेद

फटकी फुल्लिका चेति द्वितीया परिकीर्तिता ॥ (र.र.स. 3/60)

इसके दो भेद है– 1. फटकी, 2. फुल्लिका

ग्राह्य लक्षण

ईषत्पीता गुरुः स्निग्धा पीतिकाविषनाशिनी । व्रणकुष्ठहरा सर्वकुष्ठघ्नी च विशेषतः ॥
निर्भारा शुभ्रवर्णा च स्निग्धा साम्लाऽपरा मता । सा फुल्ला तुवरी प्रोक्ता लेपात्ताम्रं चरेदयः ॥
(र.र.स. 3/60-61)

फटकी किञ्चित पीले रंग की गुरु तथा स्निग्ध होती है । फुल्लिका भार में कुछ हल्की, श्वेतवर्ण की, स्निग्ध तथा अम्ल होती है इसके लेपन ताम्र की भस्म आसानी से बन जाती है ।

अग्राह्यता लक्षण

उपरोक्त लक्षणों से भिन्न ग्राह्य नहीं होती है।

शोधन

1. **तुवरी काञ्जिके क्षिप्ता त्रिदिनाच्छुद्रिमृच्छति ॥** (र.र.स. 3/64)
   फिटकरी को तीन दिन तक काञ्जी में रखने से यह शुद्ध हो जाती है ।
2. **.....लोका वह्नावुत्फुल्लयन्ति हि ।** (आ.प्र. 2/258)
   अग्नि में फुलाकर इसे प्रयोग (व्यवहार) में लाते हैं ।

मारण

वह्नौ प्रोत्फुल्लयेत् किं वा सम्यग् लघुपुटे पचेत् । कुन्दवज्जायते भस्म सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
(पारद संहिता)

स्फटिका को अग्नि पर फूला लेने या लघुपुट में पाक करने से इसकी श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है ।

सत्वपातन

क्षाराम्लैर्मर्दिता ध्माता सत्त्वं मुञ्चति निश्चितम् । (र.र.स. 3/65)

फिटकरी को क्षार (यवक्षार आदि) तथा अम्ल कांजी आदि के साथ मर्दन कर धमन करने से इसका सत्व निकल आता है ।

Probable physio chemical changes

शोधन के पश्चात् शुद्ध स्फटिका के Physico chemical parameter निम्न पाये गये । यह शोधन Direct heat method से किया गया था।[1]

Sr.No.	Parameter	Value
1.	pH	3.14
2.	Total ash	70.5%
3.	Acid insoluble Ash	4%

Importance of temperature while processing– Alum का melting point 92.5^{0}C होता है। अतः शोधन करते समय अग्नि तीव्र नहीं देना चाहिए अन्यथा प्राप्त स्फटिका श्वेत वर्ण की नहीं मिलती है।

योग– 1. शंख द्राव, 2. श्वेत पर्पटी, 3. सौवीराञ्जन चूर्ण, 4. द्रावक रस, 5. महाद्रावक रस।

Research updates

In Vitro study of antimicrobial and antioxidant activities of Alum and its Bhasma (Sphatika bhasma-procured from local Ayurvedic shop) evaluated against 4 gram negative [E.coli [ATCC-101148), Klebsilla pneumoniae (ATCC-700603), Pseudomonas aeruginosa (Fisher's Immuno type iv), Salmonella typhi (NCTC-786), 4 gram positive [Bacillus subtilis (ATCC-9372), Enterococcus faecalis (ATCC-29212), Methicillin Resistant Staphylococcus aureus (MRSA ATCC-25923), Sarcina lutea (NCTC-2470) and 2 Fungi (Aspergillus niger (ATCC-16404) and Candida albicans (ATCC-102313) using MIC, MBC/MFC and Ager well Diffusion method. It was found that Alum and Sphatika Bhasma both have broad spectrum antibacterial activities inhibiting gram positive

1. Ambika S., Rakshitha D. and Gazala Hussain, Pharmaceutico - Preliminary Analytical Study of Sphatika Shodhana by Two Different Methods. WJ PPS. Vol 9 (9) 2020 PP2076-2084

Scanned with OKEN Scanner

as well as gram negative organism and moderate antifungal activities. It was also found that Sphatika Bhasma exhibit better antimicrobial and antioxidant activities than Alum.*

8. हरताल (Orpiment)

पर्याय

हरितालं पत्रं नालं तालकं नटभूषम्। नटमण्डनकञ्चापि मतं शैलूषभूषणम्॥
विडालकं चित्रगन्धं पिङ्गरं वंश पत्रकम्। आलं पीतनकञ्चापि कथितं मल्लगन्धजम्॥
तालकं जायते यस्मान्मल्लगन्धक मिश्रणात्। तस्माद्भिषवरैरेतन्मल्ल गन्धजमुच्यते॥
(र.त. 11/1-3)

हरिताल, नाल, तालक, नटभूषण, नटमण्डनक, शैलूषभूषण, विडालक, चित्रगन्ध, पिङ्गर, वंशपत्रक, आल, पीतनक तथा मल्लगन्धज ये हरताल के पर्याय है। हरताल में संखिया (मल्ल, As) तथा गन्धक (S) का मिश्रण होता है अतः इसे मल्ल गन्धज कहा जाता है।

Mineralogical Identification

Lusture– Pearly
Transparency– Transparent
Colour– Orange yellow to lemon yellow
Streak– Light lemon yellow
Tenacity– Sectile
Clevage– Perfect
Hardness– 1.5 to 2
Sp. Gr.– 3.49

भेद

तालकं द्विविधं ख्यातं रस सिद्धैः पुरातनैः। प्रथमं पत्रतालं स्याद् द्वितीयं पिण्डतालकम्॥
(र.त. 11/4)

पुराने रसाचार्यों ने हरताल के 2 प्रकार बताये हैं–

1. पत्र हरताल
2. पिण्ड हरताल

आयुर्वेद प्रकाश में इसके चार भेद निम्न बताया है–

सिद्धाद्यैस्तु हरितालश्चतुर्विधः प्रोक्तः– बुगदादी 1, गोदन्ती 2, तवकी 3, पिण्डतालश्च 4 एते पिण्डाख्यात् क्रमेण श्रेष्ठतरा ज्ञेयाः॥ (आ.प्र. 2/209)

* Anuga Aparna Rege, Dipti Bhushan Kolte and Susan Samuel Martin [2022]; In Vitro Evaluation of Antimicrobial and Antioxidant Activities of Alum and its Bhasma (Sphatika Bhasma. Int J of Adv Res Io (Aug). 891-902] [ISSN 2320-5407].

सिद्धादिकों ने हरताल के 4 भेद माने हैं–

1. बुगदादी हरताल (पत्र ताल)
2. गोदन्ती हरताल (इसमें आर्सेनिक नहीं होता है)
3. तवकी हरताल (यह कृत्रिम हरताल होता है)
4. पिण्ड हरताल, ये चारों उत्तरोत्तर हीनगुण हैं।

ग्राह्य तथा अग्राह्य

पत्र हरताल–

स्वर्णवर्णं गुरु स्निग्धं तनुपत्रञ्च भासुरम्। तत्पत्रतालकं प्रोक्तं बहुपुत्रं रसायनम्॥
(र.र.स. 3/66)

पत्र हरताल स्वर्ण सदृश पीले वर्ण का, भारी, स्निग्ध, पतले पत्र युक्त तथा चमकदार एवं बहुत पत्र युक्त रसायन गुण वाला होता है।

पिण्ड ताल–

निष्पत्रं पिण्डसदृशं स्वल्पसत्त्वं तथा गुरु। स्त्रीपुष्पहरणं तत्तु गुणाल्पं पिण्डतालकम्॥
(र.र.स. 3/67)

पिण्ड हरताल पत्ररहित, अल्प सत्व वाला, पिण्ड रूप में, भारी तथा स्त्री पुष्प का नाश करने वाला अपेक्षाकृत अल्पगुण वाला होता है। अल्प गुण होने से यह औषधि प्रयोग में नहीं लिया जाता है।

शोधन

1. स्विन्नं कूष्माण्डतोये वा तिलक्षारजलेऽपि वा। तोये वा चूर्णसंयुक्ते दोलायन्त्रेण शुद्ध्यति॥
(र.र.स. 3/70)

अशुद्ध हरताल को कूष्माण्ड स्वरस, तिलक्षार जल या चूर्णोदक से दोलायन्त्र से स्वेदन करने पर यह शुद्ध हो जाता है।

2. तालकं कणशः कृत्वा दशांशेन च टङ्कणम्। जम्बीरोत्थद्रवैः क्षाल्यं काञ्जिकैः क्षालयेत्ततः॥
वस्त्रे च चतुर्गुणे बद्ध्वा दोलायन्त्रे दिनं पचेत्। (र.र.स. 3/71-72)

हरताल के छोटे-छोटे टुकड़े कर उससे 1/10 भाग टंकण मिलाकर जम्बीरी, नींबू स्वरस तथा काञ्जी से प्रक्षालन करते हैं तथा इसे चतुर्गुण वस्त्र (4 Folded cloth) में पोट्टली बनाकर चूर्णोदक तथा आरनाल में एक दिन तक दोलायन्त्र के माध्यम से स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है।

हरताल मारण

विमलं तालमादय भिषक पौनर्नवे रसे। दिनैकं खल्वयन्त्रे च पेषयित्वाऽथ शोषयेत्॥
घनीभूतं ततो ज्ञात्वा चक्रिकाः कारयेद्भिषक। सम्यक् ताः शोषयित्वा च भस्म यन्त्रेण वै पचेत्॥

Scanned with OKEN Scanner

क्षारैः पौनर्नवैश्चात्र स्थाल्यर्द्धं परिपूरयेत् । निधाय चक्रिकाश्चाथ क्षारैस्तैरेव पूरयेत् ॥
बह्निं प्रदापयेत् यत्नाद्विधानज्ञो निरन्तरम् । मल्लगन्धजमेवन्तु म्रियते नात्र संशयः ॥
(र.त. 11/26-29)

शुद्ध हरताल को पुनर्नवा स्वरस से एक दिन मर्दन कर सुखाने से जब यह घन हो जाय (टिकिया बनने योग्य) तो इसकी चक्रिका का बनाकर अच्छी प्रकार से सुखा लेते हैं । ततपश्चात् इसे भस्म यन्त्र की सहायता से पाक करते हैं । इसमें एक स्थाली (हांडी) में पहले आधे भाग में पुनर्नवा क्षार भर देते हैं तत्पश्चात् हरताल की टिकिया रख कर पुनः पुनर्नवा क्षार से भर देते हैं । तत्पश्चात् इसे चूल्हे पर रखकर अग्नि प्रदान करते हैं । इससे हरताल की भस्म निश्चित रूप से बन जाती है ।

सत्वपातन

पलालकं रवैर्दुग्धैर्दिनमेकं विमर्दयेत् । क्षिप्त्वा षोडशिकातैले मिश्रयित्वा ततः पचेत् ॥
अनावृतप्रदेशे च सप्तयामावधि ध्रुवम् । स्वाङ्गशीतमधःस्थञ्च सत्त्वं श्वेतं समाहरेत् ॥
(र.र.स. 3/80-81)

एक पल हरताल को अर्क दुग्ध से एक दिन पर्यन्त मर्दन करते हैं । तत्पश्चात् इसमें एक तोला तिल तैल मिलाकर कूपी में रखकर बालुका यन्त्र के माध्यम से सात याम तक पाक करते हैं । स्वांगशीत होने पर तल भाग से श्वेत रंग का सत्व प्राप्त करते हैं ।

Probable physico chemical changes

Physico chemical changes after the process of Shodhan of Hartala in different media is as follow[1].

Sr.No.	Parameter	Ashuddha Hartala	Kanji Shodhita Hartala	Triphala Kwatha Shodhita Hartala
1.	Loss on drying (w/w)	0.6	0.7	18.1
2.	Ash value (w/w)	1.35	0.9	5.65
3.	Acid insoluble ash	2.701	0.55	3.4146
4.	As% (AAS)	19.89	6.50	8.21

AAS–Atomic Absorption spectroscopy

Importance of temperature while processing– Orpiment 300^{0}C से 325^{0}C के तापमान पर melt होता है। स्वेदन विधि से हरताल का शोधन करते समय द्रव का तापमान 90^0-95^{0}C.* के बीच रखते है। जबकि रसमाणिक्य, जो कि हरताल को द्रवित करके बनाया जाता है उसका तापमान अभ्रक पत्र सम्पुट

1. Jani KS, Bedarkar P. Shukla VJ. Patgiri B. Comparative pharmacueutical analytical study of Hartala (Orpiment) Shodhana (Purification) using different shodhan media. BLDE uni J Health sci 2022' 7:141-6.

द्वारा निर्माण विधि में 450^{0}C-650^{0}C[1] तथा कूपी पक्व द्वारा निर्माण विधि में 359^{0}C melting temperature तथा 450^{0}C तापमान रस माणिक्य के निर्माण हेतु प्रदान की जाती है।[2]

योग–
1. रसमाणिक्य
2. ताल सिन्दूर
3. नित्यानन्द रस
4. समीरपन्नग
5. वातगजांकुश रस

Research updates

XRD data of different samples of Shodhita Hartala, with the standard by following the Hanawalt analysis and Fink method was identified as AS_2S_3 (Monoclinic)[1]

Hartala Bhasma prepared by Shodhita Hartala by Dolayantra using Churnodaka as liquid media following the Swedana method for three hours. After that 21 Bhavana were given with the decoction of Ficus religiosa bark and Bhasma was prepared by Bhasma Yantra using Ash of bark of Ficus religiosa. The chemical analysis of the obtained Hartala Bhasma shows ash valve (w/w%) 99.10, Acid insoluble as (w.w%) 10.28 and sulphur as S (w/w%) 20.914.[3]

9. मनःशिला (Realgar)

पर्याय

मनःशिला रोगशिला शिला नैपालिका तथा । मनोगुप्ता मनोज्ञा च मनोह्वा नाग जिह्विका ॥
कुनटी कुलटी गोला नागमाता च सा मता । कल्याणिका च सैवह कथिता रसनेत्रिका ॥
(र.त. 11/104-05)

मनःशिला, रोगशिला, शिला, नैपालिका, मनोगुप्ता, मनोज्ञा, मनोह्वा, नागजिह्विका, कुनटी, कुलटी, गोला, नागमाता, कल्याणिका तथा रसनेत्रिका मनःशिला के पर्याय हैं ।

Minerological Identification

Crystal system– Monoclinic
Colour – Red to Yellow

1. Srimannarayan K, Patgiri BJ, Prajapati PK. Process Standardization of Rasamanikya. Ayu. 2010 Jan; 31(1):7-11.doi 10.4103/0974-8520.68195. PMID:22131676; PMCID:PMC 3215326.
2. Sudesh N Gaidhani, Arjun Singh, CE Lagad, Suman Kumari, GSlavekar, mm Padhi and B Ssharma. Validation and Quality assessment of Rasa -manikya A classical herbo mineral preparation. J SCI IND RES Vol;70 October 2011; PP 871-874
3. Lokesh Kumar, G., Mahendra, S., Richa, S., & Rajesh, D. (2015) Pharmaceutico Analytical study and comparative Antimicrobial Effect of Hartala Bhasma and HartalaGodanti Bhasma. International journal of ayurveda and Pharma Research, 1(3) 36-46

Scanned with OKEN Scanner

Twinning- Contact twins
Clevage- Good
Streak- Red orange
Luster- Resinous to pearly
Hardness- 1.5 to 2
Sp. Gr.- 3.56

स्रोत– मन:शिला, Realgar सामान्य रूप से Low temperature hydro thermal vein के रूप में आर्सेनिक तथा अन्य एण्टीमनी खनिज के साथ पाया जाता है। यह ज्वालामुखी से निकलने वाले लावा प्रक्षेप तथा Hot springs में भी पाया जाता है। यह हरताल, आर्सेनोलाइट, कैल्साइट तथा बेराइट के साथ भी पाया जाता है। यह हंगरी, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन तथा स्पेन आदि देशों में पाया जाता है।

भेद

मन:शिला त्रिधा प्रोक्ता श्यामाङ्गी कणवीरका। खण्डाख्या चेति तद्रूपं विविच्य परिकथ्यते ॥
(र.र.स. 3/88)

मन:शिला के तीन भेद होते हैं–

1. श्यामाङ्गी 2. कणवीरका
3. खण्डाख्य

उपरोक्त तीनों के लक्षण निम्न हैं

श्यामा रक्ता सगौरा च भाराढ्या श्यामिका मता। तेजस्विनी च निर्गौरा ताम्राभा कणवीरका ॥
चूर्णीभूताऽतिरक्ताङ्गी सभारा खण्डपूर्विका। उत्तरोत्तरतः श्रेष्ठा भूरिसत्त्वा प्रकीर्तिता ॥
(र.र.स. 3/89-90)

श्यामाङ्गी– श्याम, रक्त एवं गौर तथा विशेष भारी। श्रेष्ठ
कणवीरका– ताम्र आभा, चमकयुक्त, पीलापन रहित। श्रेष्ठतर
खण्डाख्य– अतिरक्त वर्ण, चूर्णस्वरूप तथा भार युक्त। श्रेष्ठतम

ग्राह्य लक्षण

मन:शिला शिलाखण्ड शून्या रक्तोत्पलप्रभा। भारे गुरूतरा दीप्ता शोधनार्हा मता बुधैः ॥
(र.त. 11/10)

शोधन योग्य मन:शिला पत्थर/कंकड रहित, लाल कमल सदृश, भार में अधिक तथा चमकदार होना चाहिए। उपरोक्त लक्षण खण्डाख्य में लक्षित होते हैं।

शोधन

1. अगस्त्यपत्रतोयेन भाविता सप्तवारकम्। शृङ्गवेररसैर्वाऽपि विशुद्धयति मन:शिला ॥
(र.र.स. 3/93)

अशुद्ध मन:शिला को अगस्त्य पत्र स्वरस से या आर्द्रक स्वरस की सात भावना देने से यह शुद्ध हो जाती है।

2. सुधोदके निपातिता मन:शिला तु चूर्णिता। दिनत्रयाद्विनिर्गता भवेत्तु दोष वर्जिता ॥
(र.त. 11/109)

अशुद्ध मन:शिला को चूर्णोदक में तीन दिन तक रखने पर यह शुद्ध हो जाती है।

सत्वपातन

अष्टमांशेन किट्टेन गुडगुग्गुलुसर्पिषा। कोष्ठ्यां रुद्ध्वा दृढं ध्माता सत्त्वं मुञ्चेन्मन:शिला ॥
(र.र.स. 3/95)

मन:शिला तथा 1/8 भाग मण्डूर, गुड़, गुग्गुलु एवं घृत लेकर मूषा में रखकर इसे कोष्ठी में स्थापित कर दृढ़ धमन करने से मन:शिला का सत्त्व निकल आता है।

Probable physico chemical changes

The Shodhan of Khandakhya variety of Manhshila as it was processed (Triturated) with Aardraka Swarasa for seven times in seven days was done. Shodhita Manhshila was analysed on various physico chemical parameter.* The result was as follows–

1. Loss on drying at 110^0C (w/w)	–	0.5325%
2. Loss on ignition (w/w) at 450^0-550^0C	–	95.0686%
3. Ash value (w/w)	–	4.9544%
4. Water insoluble ash (w/w)	–	4.1978%
5. Acid insoluble ash (w/w)	–	0.5008%

Importance of temperature while processing

मन:शिला का melting point 320^0C होता है। रसशास्त्र में मन:शिला का प्रयोग मुख्यता शुद्ध मन:शिला के रूप में विभिन्न योगों के माध्यम से किया जाता है। भावना विधि द्वारा शोधन कमरे के तापमान पर ही किया है।

योग– 1. शिला सिन्दूर
2. समीरपन्नग
3. सोमनाथी ताम्र/रसराज रस
4. श्वास कुठार रस
5. मन:शिलादि धूम

Research updates

Study done by Sharma Vinamra et.al on the Shodhan of two samples of Manhshila

* Atul Kumar. Pharmaceutical, Physico chemical and clinical study on "Suddha Manhashila" with special reference to Kasa Roga. Indian J. Traditional Knowledge, vol 3. No 3, July 2004 pp 240-246.

Scanned with OKEN Scanner

identified as Kanavirak and Khandhakya, by Bhavana using freshly extracted ginger juice. The process was repeated for seven times. After that all the four samples were analysed on modern tool. XRD study classifies Knavirak as alacranite and Khandabhya as realger. While EDX confirms 51.33% and 68.14% of arsenic in alacranite and realger samples respiectively. SEM study of M3 (Shuddha Manhshila-Khandhakya variety) shows minimum size of half of the particles range from 400-800 nm (with maximum size. 15:55 µm)*

Study done on the Antiinflammatory activity of unpurified and purified Manhashila, by using inhibition of albumin denauration technique, shows that Shuddha Manhshila has marked in vitro anti inflammatory effect as compared to Ashuddha Manhshila against the denauration of protein and hemolysis of the erythrocyte. It can be also concluded than Shodhana process has important role into physical and chemical change of drug**.

10. कम्पिल्लक (Mallotus Philippinensis)

पर्याय– काम्पिल्लः कर्कशश्चन्द्रो रक्ताङ्गो रोचनोऽपि च ॥ (भा.प्र.नि.हरी. 147)

काम्पिल्ल, कर्कश, चन्द्र, रक्ताङ्ग, तथा रोचन कम्पिल्लक के पर्याय है ।

प्राप्ति स्थान– सौराष्ट्रदेशे चोत्पन्नः सहि कम्पिल्लकः स्मृतः ॥ (र.र.स. 3/122)

रसरत्न समुच्चय के वर्णन अनुसार कम्पिल्लक सौराष्ट्र देश में उत्पन्न होता है । कम्पिल्लक Mallotus philippinensis, Mwell Arg. यह प्रायः सभी गर्म स्थानों में हिमालय के नीचे पूर्व की ओर तथा सिन्ध से दक्षिण आदि जगहों में पाया जाता है ।

ग्राह्य लक्षण– इष्टिका चूर्ण सङ्काशश्चान्द्रिकाढयो.....॥ (र.र.स. 3/122)

उत्तम कम्पिल्लक इष्टिका चूर्ण सदृश लाल रंग का तथा चमक युक्त होता है ।

वक्तव्य– आचार्य दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी जी ने रसरत्न समुच्चय की हिन्दी टीका में कम्पिल्लक परीक्षा हेतु निम्न वर्णन किया है–

1. कम्पिल्लक को पानी में डालने पर यह घुलता नहीं है बल्कि ऊपर तैरता है । यदि इसमें ईट के चूर्ण की मिलावट होती है तो यह भारी होने के कारण नीचे बैठ जाती है ।
2. अग्नि पर डालने से यह दगता है ।
3. भीगी अंगुली से श्वेत कागज पर यह पीली रेखा खींचता है ।

* Sharma Vianmra, Samal Amiya K, Chaudhary Anand K, Srivastava Rajesh K. Characterization and comparative physico-chemical studies of Manhshila (Traditionally used arsenic mineral) and the corresponding polymophs of realgar (As_4S_4), current Science, Vol. 112, No, 9, 10 May 2017. pp 1936-1941.

** Sharma Vineet, Himanshu, Gautam Dev Nath Singh. In vitro anti-inflammatory activity of unpurified and purified Manhshila Asian Journal of Pharmacy and Pharmacology, 2018; 4(2): 179-183.

4. स्पर्श में मृदु होता है ।

उपरोक्त लक्षणों से भिन्न अग्राह्य होता है।

शोधन– शोधन हेतु जल में डालकर देने से अशुद्धि (ईट चूर्ण) नीचे बैठ जाती है । फिर इसे सुखा लेते हैं ।

योग–
1. कृमिघातिनी गुटिका
2. कम्पिल्लक मलहर
3. बिन्दु घृत
4. महोदय प्रत्यय सार रस
5. गगन गर्भा वटी

Research updates

Mallotus phillippenesis (Lam), mostly found in India sub continent is one of the endangered plant of central eco region. Its whole part is rich in secondary metabolites having medicinal use. Fruit of this plant contains Rottlerin (Reddish-Yellow resin) 47.80% fixed oil 5.83-24%, citric acid, mallotoxin , Kamalin etc.

The crude powder obtained as a glandular pubescence from the exterior of fruits is found to be useful in case of worm (hook worm, earth and round worms). Anti helminthic activity is due to rottlerin and isollorotterin[1].

11. नवसादर (Ammonium chloride)

पर्याय

नवसारो नव्यसारस्तथैव नवसादरः । नृसादरो नृसारश्च नरसारश्च कीर्तितः ॥
किट्टक्षारो निगदितस्तथैव नरसादरः । चूलिका लवणं ख्यातं चुल्लिका लवणञ्च तत् ॥
(र.त. 14/1-2)

नवसार, नव्यसार, नवसादर, नृसादर, नृसार, नरसार किट्टक्षार, नरसादर, चूलिका लवण, तथा चुल्लिका लवण नवसादर के पर्याय है ।

प्राप्ति– रसरत्न समुच्चय में नवसादर की प्राप्ति निम्न बताई हैं–

ग्राह्य लक्षण

इष्टिकादहने जातं पाण्डुरं लवणं लघु । तदुक्तं नवसाराख्यं चूल्लिकालवणञ्च तत् ॥
(र.र.स. 3/128)

ईट की भट्ठे में जलाने पर जो पीला सफेद लवण प्राप्त होता है उसे नवसादर या चुल्लिका लवण कहते हैं ।

शोधन

नवसारन्तु सलिले त्रिगुणे द्रावयेद्भिषक । वस्त्रपूतं ततः कृत्वा भाजने स्थापयेत्ततः ॥

1. Sharma Jaya Varma Rajana. A review on Erdangered plant of Mallopus phillippensis (Lam.) M. Arg. Pharmacologyonline 3: 1256-1265 (2011) News letter.

Scanned with OKEN Scanner

चुल्लिकायां निधायाद्य पचेन्नीलाग्नि भृशम्। जले शुष्के तलस्थञ्च नृसारं विमलं हरेत्॥
(र.त. 14/3-4)

1 भाग मैसादर + 3 भाग जल → घोलकर → वस्त्र पूत → तीव्र अग्नि पर जल का शोषण → शुद्ध नवसादर

मन्थपातन

शुद्ध खड़िया 3 तोला तथा शुद्ध नवसादर 4 तोला लेकर पीसकर डमरू यन्त्र में पाक करने से नवसादर का सत्व ऊपर की हांडी में प्राप्त होता है।

Probably physico chemical changes

Importance of temperature while processing– Ammonium chloride is an inorganic compound and a neutral salt and it does not completely dissociate when added to water. As temperature rises the dissociation of ammonium chloride rises increasing its solubility. That is why during Shodhan of Ammonium chloride in water the vessel becomes cool due to endothermic reaction.

योग— 1. श्वेत पर्पटी
2. शंखद्राव
3. सूचिका भरण रस
4. तीक्ष्णमुख रस

Research updates

Ammonium chloride is used as an expectorant in cough. Its expectorant action is caused by irritative action on the bronchial mucosa, resulting into the production of excess respiratory tract fluid, which presumably is earlier to cough up. (en.m.wikipedia.org).

12. हिङ्गुल (Red Cinnabar)

पर्याय

हिङ्गुलो हिङ्गुलञ्चैव हिङ्गुलं चेङ्गुलाह्वयम्। म्लेच्छं रक्तं सुरङ्गञ्च चित्राङ्ग चूर्णपारदम्॥
रसोद्भवो रसस्थानं रञ्जनं कपिशीर्षकम्। रक्तकायो हंसपादो दरदञ्च प्रकीर्तितम॥
(र.त. 9/1-2)

हिंगुल, हिंगल, हिंगुल, इंगुल, मलेच्छ, रक्त, सुरंग, चित्रांग, चूर्ण पारद रसोद्भव, रसस्थान, रञ्जन, कपिशीर्षक, रक्तकाय, हंसपाद तथा दरद इसके पर्याय है।

Minerological Identification

Colour– Conchineal Red towards brownish red
Twinning– Simple contact twins
Cleavage– Perfect, Prismatic

Fracture– Uneven-Sub con choidal
Tenacity– Slightly sectile
Streak– Scarlet
Hardness– 2.0 to 2.5
Sp. Gr.– 8.176

प्राप्ति– हिंगुल (Cinnabar) सामान्य रूप से Vein-filling खनिज के रूप में ज्वलामुखी के आसपास तथा alkaline hot springs के साथ पाया जाता है। यह Stibnite, Realgar, Pyrite आदि के पाया जाता है Almeden (स्पेन) के साथ, इटली, कैलीफोर्निया, फिलीपीन्स, पेरु आदि देशों में पाया जाता है।

भेद– रसरत्न समुच्चय में इसके 2 भेद कहे हैं–

हिङ्गुलः शुकतुण्डाख्यो हंसपादस्तथाऽपरः।
प्रथमोऽल्पगुणस्तत्र चर्मारः स निगद्यते। श्वेत रेखः प्रवालाभो हंसपादः स ईरितः॥
(र.र.स. 3/142)

हिंगुल के 2 भेद निम्न है–

1. शुक्र तुण्ड– अल्पगुण, चर्मार भी कहते हैं।
2. हंसपाद– श्वेत रेखा तथा प्रवाल आभा वाला।

रस तरंगिणी में निम्न 2 भेद किये हैं–

प्रथमः खनिजोऽन्यस्तु कृत्रिमो हिंगुलो मतः। खनिजः खनितो जातः कृत्रिमो रसगन्धजः॥
(र.त. 9/4)

हिंगुल के 2 भेद होते हैं–

1. खनिज– खानों से प्राप्त।
2. कृत्रिम– पारद गन्धक के योग से निर्मित।

ग्राह्य लक्षण

जपाकुसुमवर्णाभः पेषणे सुमनोहरः। महोज्ज्वलो भारपूर्णो हिंगुलः श्रेष्ठ उच्यते॥
(र.त. 9/3)

श्रेष्ठ हिंगुल गुड़हल पुष्प सदृश वर्ण का, पीसने में कोमल, देखने में चमकीला तथा भारयुक्त होता है।

अग्राह्य लक्षण

शुक तुण्ड अल्प गुण होने से ग्राह्य नहीं होता है।

Scanned with OKEN Scanner

शोधन

सप्तकृत्वाऽऽर्द्रकद्रावैर्लकुचस्याम्बुनाऽथ वा। शोषितो भावयित्वाऽथ निर्दोषो जायते खलु॥
(र.र.स. 3/142)

हिंगुल को आर्द्रक स्वरस या लकुच (बड़हल) स्वरस की सात भावना देने से यह शुद्ध हो जाता है।

किमत्रचित्रं दरदः सुभाविताः क्षीरेण मेष्या बहुशोऽम्लवर्गः।
एवं सुवर्णं बहुघर्मतापितं करोति साक्षाद्धरकुङ्कुमप्रभम्॥ (र.र.स. 3/143)

हिंगुल को भेड़ी दुग्ध में नींबू तथा काञ्जी आदि अम्ल द्रव्य के साथ कई बार मर्दन करने से तथा तेज धूप में सुखाने से यह शुद्ध तथा श्रेष्ठ केशर वर्ण का हो जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

मारण

हिङ्गूलं तनुवस्त्र कञ्चुकगतं कृत्वा, पटरञ्जन कन्द मध्यस्थं कृत्वा, मृदा संवेष्टय, पुटपाक विधानेन दशवनोपलैः पुटेत, एवं शतपुटान्नि। ततः शतपुटान्येवं वनवृन्ताकस्य, ततः शतपुटान्येव मन्दारफलस्य, ततः शतपुटान्येवमिन्द्रवारुणिकाफलस्य, ततः शतपुटान्येवमम्लवेतसफलस्य, ततः सिद्धो जातश्चात्यरूणवर्णो भवति। (आ.प्र. 2/76)

हिंगुल को पतले कपड़े में लपेट कर कपड़े को गेद जैसा बनाकर नीलकन्द में रखकर इसके ऊपर मिट्टी का एक अंगुल लेप लगाकर दस उपलों की पुट देते है। इस प्रकार सौ पुट देते हैं। इसी प्रकार भटकटैया, अर्कफल, इन्द्रवारुणी फल, अम्लवेतस फल से सौ-सौ पुट देने से इसकी लाल वर्ण की भस्म बन जाती है।

सत्वपातन

दरदः पातनायन्त्रे पातितश्च जलाश्रये। तत्सत्त्वं सूतसङ्काशं जायते नात्र संशयः॥
(र.र.स. 3/144)

पातन यन्त्र से सत्व पातन करने से सूत सदृश सत्व प्राप्त होता है।

Probable physico chemical changes

Analysis of Hingula before and after Shodhan was done by Bhavana process using Aardraka Swarasa and the process was repeated for seven time. The following physico chemical changes were observed[1]–

Sr.No.	Tests	Raw Hingula	Purified Hingula
1.	pH (1% Aqueous suspension)	5.82	6.11
2.	Loss on Drying at 105^0C	0.29%w/w	0.58 w/w
3.	Total Ash	0.0079%w/w	3.7237% w/w
4.	Acid in soluble Ash	0.00263% w/w	2.4127% w/w
5.	Solubility in water	Insoluble	Partially soluble
6.	Hg	78.944%	80.743%

1. Sushanta Kumar Meher, Arun Kumar Das, Rabinarayan Acharya and Sushil Kumar Mehar. Pharmaceutico-Analytical Study of Hingula [Cinnabar] purified with Aadrakaswarasa. [Juice of Zingiber officinale Rose] Int J Ayu Pharm Chem. 2018 Vol 9 (3) PP 376-388

Importance of temperature while processing and Research udate

Cinnabar (Mercury Sulphide, HgS) decomposes into mercury and sulphur at a temperature of 580^0C.

Research Update

Research studies show that solubility and bioavailability of Cinnabar is quite different from mercury vapour, mercuric chloride and methyl mercury. Cinnabar has quite different toxicology potentials and it is very important for appropriate safety assessment of mineral cinnabar used in traditional medicine[1].

योग–
1. हिंगुलेश्वर रस
2. आनन्दभैरव रस
3. त्रिभुवनकीर्ति रस
4. वसन्तमालती रस
5. कनक सुन्दर रस

13. स्वर्ण (Gold)

धातु शब्द की निरुक्ति

वलीपलितखालित्य काश्यर्यावल्यजरामयान्। निवार्य दधते देहं नृणां तद्धातवो मताः॥
(आ.प्र. 3/2)

वली (झुर्रियां) पलित (बालों का असमय पकना), खालित्य (असमय केश पतन), कृशता, दुर्बलता तथा जरा रूपी विकार को दूर करके जो देह का धारण करते हैं उन्हें धातु कहा जाता है।

धातुर्लोहे लुह इति मतः सोऽपि कर्षार्थवाची॥ (र.र.स. 5/1)

लोह शब्द लुह धात से बना है, जिसका अर्थ खींचना होता है।

वक्तव्य– यहाँ पर खींचना शब्द के 2 अर्थ लिए जा सकते हैं–

1. देह से रोग को खींचकर निकालने के कारण इनकी संज्ञा धातु हैं।
2. खनिज से निकालने (प्राप्त) के कारण इनकी संज्ञा धातु हैं।

1. Liu J, Shi J2, Yulm, Goyer RA, Waalkes MP. Mercury in traditional medicines is cinnbar toxicologically similar to common mercurials? Exp Bio Med (Maywood), 2008 Jul; 233(7): 810-]DOI: 10.3181/0712-MR-336. Epub 2008 Apr 29. PMID: 18445765; PMCIDPMC 2755212.

Scanned with OKEN Scanner

धातुओं की संख्या– वेद तथा रसशास्त्रीय एवं अन्य ग्रन्थों अनुसार धातुओं की संख्या निम्न है–

अथर्व वेद	चतुर्वेद	मनु.	रसा.	रसे. चूडा	आ.प्र.	र.त.	शार्ङ्ग.	भा.प्र.
1. हिरण (स्वर्ण)	हिरण्य	स्वर्ण	स्वर्ण	स्वर्ण	स्वर्ण	स्वर्ण	स्वर्ण	स्वर्ण
2. रजत (चाँदी)	अयस	रजत	रजत	रजत	रौप्य	तार	तार	रजत
3. श्यामवर्ण लोह (ताम्र)	श्याम	ताम्र	ताम्र	ताम्र	ताम्र	ताम्र	ताम्र	ताम्र
4. लोहितवर्ण लोह (लोह)	लोह	लोह	तीक्ष्ण लोह	लोह	लोह	लोह	तीक्ष्ण लोह	लोह
5. –	सीस	नाग	सीस	नाग	सीस	सीस	नाग	सीस
6. –	त्रपु	वंग	वंग	वंग	वंग	वंग	वंग	रंग (वङ्ग)
7. –	–	कांस्य	–	पित्तल	यशद	यशद	आर (पीत लोह)	यशद
8. –	–	रीति	–	कांस्य	–	–	–	–
9. –	–	–	–	वर्तलोह	–	–	–	–

धातु ग्रह सम्बन्ध

ताम्रनागरसनागाश्च हेमवङ्गौ च तीक्ष्णकम्। कांस्यकं वर्तलोहं च धातवो नव ये स्मृताः॥
सूर्यादीनां ग्रहाणां ते कथिता नामभिः क्रमात्। (आ.प्र. 3/3)

धातु		ग्रह	धातु		ग्रह
1. ताम्र	–	सूर्य	2. तार (रजत)	–	चन्द्रमा
3. आर (पित्तल)	–	मंगल	4. नाग	–	बुध
5. हेम	–	गुरु	6. वङ्ग	–	शुक्र
7. तीक्ष्ण लोह	–	शनि	8. कांस्य	–	राहु
9. वर्तलोह	–	केतु			

स्वर्ण के पर्याय

स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम्। तपनीयं कलधौतं गाङ्गेयं भर्म काञ्चनम्॥
चामीकरं शातकुम्भं तथा कार्तस्वरं च तत्। जाम्बूनदं जातरूपं महारजतमित्यपि॥
(आ.प्र. 3/21-22)

स्वर्ण, सुवर्ण, कनक, हिरण्य, हेम, हाटक, तपनीय, कलधौत, गाङ्गेय, भर्म, काञ्चन, चामीकर, शातकुम्भ, कार्तस्वर, जाम्बूनद, जातरूप तथा महारजत ये स्वर्ण के पर्याय हैं।

Metallic Identification— Symbol-Au

Nature– Granular, dentrites and nuggets
Colour– Golden yellow
Streak– Bright yellow
Cleavage– None
Fracture– Hackly
Lustre– Metallic
Tenacity– Very malleable and ductile
Transparency– Opaque
Hardness– 2.5 to 3.0
Sp. Gr.– 19.30
Melting point– 1064^0C

प्राप्ति– रसरत्न समुच्चय में स्वर्ण के पाँच भेदों का वर्णन किया गया है तथा प्रत्येक की उत्पत्ति/प्राप्ति को निम्न वर्णन किया है– (र.र.स. 5/3-8)

1. प्राकृत – रजोगुण से उत्पन्न
2. सहज – जरायु की पोट्टली के आवरण से
3. बह्नि सम्भूत – अग्नि देव के वमन द्वारा
4. खनि सम्भव – पर्वत के खानों से
5. रसेन्द्र वेधजन्य – पारद के वेध द्वारा

स्वर्ण Earth curst तथा Sea water में पाया जाता है। स्वर्ण ज्यादातर Earth crust में native अवस्था में पाया जाता है। यह दो प्रकार के deposits के रूप में पाया जाता है–

1. Hydrothermal veins में 2. Placers में

Hydrothermal ज्यादातर Quartz vein के रूप में Pyrite या अन्य Sulphides तथा Gold-silver telluride के रूप में पाया जाता है। स्वर्ण का Primary deposits, intrusive rocks में diorite, quartz-diorite तथा granite और उनके meta morphic संगठन में होता है।

Placers, rounded या Flattered grains तथा Nuggets के रूप में अन्य Heavy metals के साथ पाया जाता है। भारत में स्वर्ण हासन, चित्रदुर्गा (कर्नाटक) कोझीकोट चित्तूर, (आंध्रप्रदेश) में पाया जाता है। राजस्थान तथा मध्यप्रदेश में भी स्वर्ण के उपस्थिति के साक्ष्य मिले हैं। उ.प्र. के सोनभद्र में भी स्वर्ण की उपस्थिति के प्रमाण मिले हैं।

भेद– प्राकृतं सहजं बह्निसम्भूतं खनिसम्भवम्। रसेन्द्रवेध सञ्जातं स्वर्णं पञ्चविधं स्मृतम्॥
(र.र.स. 5/2)

1. प्राकृत 2. सहज
3. अग्निसम्भव

Scanned with OKEN Scanner

4. खनिज से प्राप्त (खान से प्राप्त)

5. पारदवेधजन्य

प्राकृत, सहज तथा अग्नि सम्भूत स्वर्ण 16 कला से युक्त होता है। इसके धारण से अजरता अमरता प्राप्त होती है। खान से प्राप्त स्वर्ण 14 कलाओं से युक्त तथा भक्षण से समस्त रोगों का नाश करता है। पारद वेधजन्य स्वर्ण महाश्रेष्ठ तथा महापवित्र रसायन होता है। (र.र.स. 5/5-8)

ग्राह्यस्वर्ण लक्षण

दाहे रक्तं सितं छेदे निकषे कुङ्कुमप्रभम्। तारशुल्वोज्झितं स्निग्धं कोमलं गुरु हेम तत्॥ (आ.प्र. 3/23)

अग्नि में तपाने पर लाल, काटने पर श्वेत तथा कसौटी पत्थर पर घिसने से कुङ्कुम (केसर) समान, ताम्र तथा रजत दोष रहित, स्निग्ध, मुलायम तथा वजन में भारी ये ग्राह्य स्वर्ण के लक्षण हैं।

अग्राह्य स्वर्ण के लक्षण

यच्छ्वेतं कठिनं रूक्षं विवर्णं समल दलम्। दाहे छेदे सितं, श्वेतं कषे त्याज्यं लघु स्फुटम्॥ (आ.प्र. 3/24)

जो स्वर्ण श्वेत, कठिन, रूक्ष, अन्य वर्ण का (गंदा) मलयुक्त तथा दल युक्त, तपाने, काटने तथा घिसने पर श्वेत वर्ण का, हल्का हो ऐसा स्वर्ण त्याज्य होता है।

विमर्श– दलं नाम यद् घनाहतं स्फुटति। (आ.प्र. 3/24)

दल का अर्थ है कि तेज आघात से जो टूट जाय। क्योंकि स्वर्ण तेज आघात से भी नहीं टूटता है। इसलिए स्फुटन को अग्राह्य लक्षण कहा है।

दोष

वलं च वीर्यं हरते नाराणां रोगवज्रं पोषयतीह काये। असौख्यकार्येव सदा सुवर्णमशुद्धमेक्तमरणं च कुर्यात्॥ (आ.प्र. 3/39)

अशुद्ध स्वर्ण सेवन से वल और वीर्य को नष्ट करता है। शरीर में रोग समूह को बढ़ाता है। सदा ही असुख तथा मृत्युकारक है।

शोधन

सभी धातुओं का सामान्य शोधन निम्न विधि से किया जाता है–

तैले तक्रे गवां मूत्रे ह्यारनाले कुलत्थजे। क्रमान्निषेचयेत्तप्तं द्रावे द्रावे तु सप्तधा॥
स्वर्णादिलोहपत्राणां शुद्धिरेषा प्रशस्यते॥ (र.र.स. 5/13)

स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि लोह (धातु) पत्रों को तैल, तक्र, गोमूत्र, आरनाल, तथा कुलत्थ क्वाथ से प्रत्येक में सात बार तप्त कर बुझाने से ये शुद्ध हो जाते हैं।

वक्तव्य– तैल अर्थात् तिल तैल, तक्र (दधि में 1/4 भाग जल मिलाकर बनाते हैं), गोमूत्र, आरनाल (काञ्जी), तथा

कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक द्रव में 7 बार इस प्रकार कुल 35 बार इस प्रक्रिया को करना है। उपरोक्त प्रक्रिया तप्त कर बुझाने को निर्वाप कहते हैं। शोधन हेतु धातुओं के पतले पत्र लेते हैं। क्योंकि आगे इनकी भस्म बनानी है अतः शोधन के द्वारा इनका size reduction करना भी उद्देश्य है।

1. स्वर्ण का सामान्य शोधन, तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में 7 बार तप्त कर बुझाने से हो जाता है।

विशेष शोधन–

1. **कर्ष प्रमाणं तु स्वर्णं पत्रं शरावरुद्धं पटुधातुयुक्तम्। अङ्गारसंस्थं प्रहरार्धमानं ध्मातेन तत्स्यात्रनु पूर्णवर्णम॥** (र.र.स. 5/12)

एक तोला स्वर्ण पत्र को सैन्धव लवण तथा गैरिक (स्वर्ण गैरिक) का लेप कर उसे शराव सम्पुट तथा आधे प्रहर ($1^1/_2$ घंटा) तक कोयले की अग्नि पर रखने धमन करने से ये पत्र पूर्णवर्ण के हो जाते हैं।

2. **वल्मीकमृत्तिकाः धूमं गैरिकं चेष्टिकापटु। इत्येता मृत्तिकाः पञ्च जम्बीरैरारनालकैः॥**
पिष्ट्वा लेप्यं स्वर्णपत्रं पुटेन तु विशुद्ध्यति। धारयेत्स्वर्णपत्रीभिस्त्रिदिनं पञ्च मृत्तिका॥ (र.मा.स. 1/258-259)

वल्मीक मिट्टी, गृहधूम, स्वर्णगैरिक, ईंट का चूर्ण तथा सैन्धव लवण (पंचमृत्तिका) को जम्बीरी नींबू स्वरस तथा काञ्जी से लेप बनाकर इसे स्वर्ण पत्र पर लेप कर पुट देने से स्वर्ण पत्र शुद्ध हो जाते हैं।

मारण– 1. **कृत्वा कण्टक वेध्यानि स्वर्णपत्राणि लेपयेत्। लुङ्गाम्बु भस्मसूतेन म्रियते दशभिः पुटैः॥** (र.र.स. 5/15)

स्वर्ण पत्र के कण्टक वेधी पत्र बनाकर उसे पारद भस्म (रस सिन्दूर) का मातुलुङ्ग स्वरस से लेप कर पुट (कुक्कुटपुट) देते हैं। ऐसे दस पुट से स्वर्ण की भस्म बन जाती है।

2. **स्वर्णाच्च द्विगुणं सूतमम्लेन सह मर्दयेत्। तद्गोलकसमं गन्धं निदध्याद धरोत्तरम्॥**
गोलकं च ततो रून्ध्याच्छरावदृढ़संपुटे। त्रिंशद्धनोपलैर्दद्यात्पुटान्येवं चतुर्दश॥
निरूत्थं जायते भस्म गन्धो देयः पुनः पुनः॥ (शा.म. 11/5-6)

स्वर्ण से दो गुना पारद लेकर इसकी पिष्टि बनाकर नींबू स्वरस से मर्दन करते हैं। इसके बराबर मात्रा में गन्धक लेकर गन्धक को ऊपर तथा नीचे से रख देते हैं। तत्पश्चात् इस गोलक को शराव सम्पुट कर तीस वन्योपल का पुट देते हैं। यह प्रक्रिया स्वर्ण की निरूत्थ भस्म होने तक करते हैं। प्रत्येक पुट में गन्धक का प्रयोग करते हैं।

स्वर्ण लवण

विशोधितं पावक भागमानं स्वर्णं तु सत्काच शराव संस्थम्।
सुराप्रदीपे विनिधाय चाथ मन्दानलेनेह पचेद्रसज्ञः॥
शनैः शनैः सन्ततमल्पमल्पं तुर्यांशसोराम्लकमिश्रितन्तु।
क्षिपेद्विशुद्धं लवणाम्लमाराद्यावत्सुवर्णं द्रवतामुपैति॥
द्रुतं सुवर्णन्तु विलोक्य शुद्धं दिग्भागिकं सिन्धुभवं क्षिपेच्च।

Scanned with OKEN Scanner

नागद्रवद्रव्यु जले विशुष्के सुवर्णपूर्वं लवणं हरेद्वै ॥

(र.त. 15/35-37)

एक पात्र में शुद्ध स्वर्ण 3 भाग → सुराप्रदीप पर गर्म → धीरे-धीरे लवण द्राव + सोरक द्रव मिलाते हैं → स्वर्ण इसमें घुल जाता है → 10 भाग सैन्धव लवण मिलाते हैं → जलीयांश सुखने तक गर्म करते हैं → नारंगी वर्ण का स्वर्ण लवण ।

इस स्वर्ण लवण को काँच पात्र (शीशी) में रख लेते हैं तथा आवश्यकतानुसार प्रयोग करते हैं ।

स्वर्णद्रुति

मण्डूकाम्बिवसाटङ्कहयत्तालेन्द्रहगोपकैः । प्रतिवापेन कनकं सुचिरं तिष्ठति द्रुतम् ॥ (र.र.स. 5/20)

मेढ़क की अस्थि, वसा, टंकण, घोड़े की लार, इन्द्रगोप इनके प्रतिवाप से स्वर्ण देर समय तक द्रुति में स्थित रहता है ।

Physico chemical changes

The following change was seen when gold was converted to Bhasma.

Advanced physico chemical tests like XRD, FE-SEM, FE-TEM and Gravimetric test done on the Swarna Bhasma prepared with gold and mercury (1:2) and juice of C. Medica (Q1) were triturated to form amalgam. Then it was placed in an earthen crucible with equal quantity of Sulphur powder. It was subjected to Puta with 30 cow dung cakes. The temperature gradually reaching up to a temperature 900^{0}C prepared Bhasma was analysed and found that XRD pattern confirm that it comprises of pure gold. FE TEM confirm the presence of gold nano particles of 5-20 nm size, and Gravimetric test shows 55% Gold in Swarna Bhasma.*

Importance of temperature while processing

स्वर्ण के सामान्य शोधन हेतु इसे तप्त (Red hot) कर बुझाते है। स्वर्ण लगभग 760^{0}C पर (Cherry red) होता है। जब कि भस्म निर्माण हेतु कुक्कुट पुट की आवश्यकता होती है जिसमें उच्चतम तापमान (880-994^{0}C)** की आवश्यकता होती है।

योग–

1. जयमंगल रस
2. स्वर्ण पर्पटी
3. मकरध्वज
4. हेमगर्भ पोट्टली
5. कस्तूरी भैरव रस

* Bhole Trupti Patil Wele Ashmita, Gudi Ramacharya. Thakam kapil, Nadram Shailesh, Panmand Rajendra, Kale Bharat. Nano structured gold in ancient Ayurvedic calcinated drug Swarna Bhasma Journal of Ayurveda and Intergative Medicine 12 (2021) 640-648.

** Khadekar Sanjay B, Patgiri Biswajyoti, Prajapati Pradeep Kumar. Pharmaceutical standardization of Swarna Bhasma (Incinerated Gold) by Adopting Traditional Method. Annals of Ayurvedic Medicine; Vol-4 Issues 3-4 Jul-Dec. 2015 pp 83-94.

Research updates

Swarna bhasma, having nano sized particles with a crystallite size of 28-35 nm having 90% pure gold as visible from XRD and elemental analysis, did not induce any blood cell aggregation or any protein adsorption. Activation potential of these preparations towards complement system or platelets was negligible. These particles were also non cytotoxic.*

Research study demonstrated that uptake of gold nano particles occurred in the small intestine by absorption through single, degrading enterocyst in the process of being extruded from a villus and gold nanoparticles typically less than 58nm in size reaching various organs through blood.**

Study done on cellular entry of incinerated ancient gold particles (Swarna Bhasma) and chemically synthesized gold particles shows that Incinerated Gold particles (I Au Ps) are large irregular shaped particles formed from 60 nm crystallites that are non toxic to HELA or HFF-1 cells. It was also found that larger I Au Ps entered cells via macropinocytosis, while smaller particles entered via clathrin-dependent recaptor mediated endocytosis.***

14. रजत (Silver)

पर्याय

रजतं रूचिरं रौप्यं तारं सौधञ्च शुभ्रकम । चन्द्रलोहं चन्द्रहासं रूपकं चन्द्रसंज्ञकम् ॥

(र.त. 16/01)

रजत, रुचिर, रौप्य, तार, सौध, शुभ्रक, चन्द्रलोह, चन्द्रहास, रूपक तथा चन्द्रमा के सभी पर्याय रजत के लिए प्रयुक्त होते हैं ।

रजत के कुछ खनिज निम्न है–

1. Argentite
2. Polybasite
3. Cerargyrite
4. Pyrargyrite
5. Stephanite

* Paul W. Sharma CP. Blood compatibility studies of Swarna Bhasma (Gold bhasma), an Ayurvedic drug. Int J. Ayurveda Res 2011;2:14-22.

** De Wall SL, Painter C, Stone JD, Bandaranaayeke R. Wiley DC. Mitchison T J et al. Novel metals strip peptides from class II MHC proteins. Nat. Chem. Biol 2006; 2:197-201.

*** Beandet D, Badilescu S. et al. Comparative study on cellular entry of incinerated ancient gold particles (Swarna bhasma) and chemically synthesized gold particles. Scientific reports. 7:10678. DOI:10.1038/s 41598-017-10873-3 www.nature.com/scientific reports.

Scanned with OKEN Scanner

Metallic Identification

Nature– Granular, nuggets and feather like dendrites
Colour– Silver white, turning greyish black the due tarnishing
Streak– White
Cleavage– None
Fracture– Hackly
Lustre– Metallic
Tenacity– Sectile, ductile and malleable
Transparency– Opaque
Hardness– 2.5 to 3.0
Sp.Gr.– 10.1 to 11.1
Melting point– 961.8^{0}C

स्रोत

रसरत्न समुच्चय में रजत के विभिन्न भेदों की प्राप्ति निम्न बतायी गयी है ।

1. **सहज– कैलासाद्यद्रि सम्भूतं सहजं रजतं भवेत् ।** (र.र.स. 5/23)

कैलाश आदि पर्वत पर पाया जाने वाला सहज रजत होता है ।

2. **खनिज– हिमालयाद्रिकूटेषु यद्रूप्यं जायते हि तत् । खनिजं.....॥** (र.र.स. 5/24)

3. **कृत्रिम– श्रीरामपादुकान्यस्तं वङ्गं यद्रूप्यतां गतम् ।** (र.र.स. 5/25)

प्रभु श्रीराम जी के पादुका (खड़ाऊँ) के स्पर्श से जो वङ्ग रौप्य बन गया उसे कृत्रिम रौप्य कहा जाता है ।

रजत (Silver) प्रकृति में मुक्त अवस्था (Free state) में, 99% शुद्ध, सामान्य रूप से ताम्र, स्वर्ण तथा अन्य धातुओं के साथ पाया जाता है । यह Sulphides, Zealites, Calcite, Barite, Fluorite तथा quartz में पाया जाता है । रजत मरकरी के Amalgamation तथा Cyanidation प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है । भारत में चाँदी के भण्डार नहीं पाये जाते हैं । लेकिन Galena के साथ उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, बिहार तथा उत्तराखण्ड में कुछ स्थानों से प्राप्त होता है ।

रजत के भेद– सहजं खनिसञ्ज्ञातं कृत्रिमं त्रिविधं मतम् । रजतं पूर्वपूर्वं हि स्वगुणैरूत्तरोत्तरम् ॥
(र.र.स. 5/22)

रजत के 3 प्रकार निम्न हैं–

1. सहज– सभी व्याधि का नाशक केवल स्पर्श मात्र से– श्रेष्ठतम
2. खनिज– श्रेष्ठ रसायन– श्रेष्ठतर
3. कृत्रिम– सर्वरोगनुत– श्रेष्ठ

ग्राह्य लक्षण

घनं स्वच्छं गुरु स्निग्धं दाहे छेदे सितं मृदु । शङ्खाभं मसृणं स्फोटरहितं रजतं शुभम् ॥
(र.र.स. 5/26)

घन (ठोस) साफ, भारी, स्निग्ध, काटने तथा तपाने पर श्वेत वर्ण का, मुलायम, शंख की आभा वाला, चिकना तथा जो पीटने से फटे नहीं ऐसे गुण युक्त रजत श्रेष्ठ होता है ।

अग्राह्य लक्षण

दाहे रक्तं च पीतं च कृष्णं रूक्षं स्फुटं लघु । स्थूलाङ्गं कर्कशाङ्गं च रजतं त्याज्यमष्टधा ॥
(र.र.स. 5/27)

जो रजत तपाने पर लाल, पीले या काले रंग का हो जाय, रूक्ष हो, वजन में हल्की हो, मोटे अंग वाली, तथा कर्कश अंगवाली इन आठ गुणों से युक्त रजत अग्राह्य या त्याज्य होती है ।

शोधन

1. **नागेन टङ्कणेनैव वापितं शुद्धिमृच्छति । तारं त्रिवारं निक्षिप्तं तैले ज्योतिष्मतीभवे ॥**
(र.र.स. 5/31)

चाँदी को समभाग नाग (सीसा) तथा टंकण (Borax) को प्रतिवाप (चांदी तथा सीसा को मिलाकर इसमें टंकण डालकर) ज्योतिष्मती के तैल में बुझाने से यह शुद्ध हो जाती है ।

2. **खपरि भस्मचूर्णाभ्यां परितः पालिकां चरेत् । तत्र रूप्यं विनिक्षिप्य समसीसमन्वितम् ॥**
जातसीसक्षयं यावद्धमेत्तावत्पुनः पुनः । इत्थं संशोधितं रूप्यं योजनीयं रसादिषु ॥
(र.र.स. 5/32-33)

राख तथा चूने को मिलाकर उसे एक मजबूत खपड़े के तल में पलिका निर्मित करते हैं । इस पलिका में चांदी तथा इसके समभाग सीसा डाल देते है तत् पश्चात् इसे अग्नि देते हैं जब तक कि सीसा खत्म न हो जाय ऐसा करने से रजत शुद्ध हो जाता है तथा इसे औषधीय कार्य हेतु प्रयुक्त करना चाहिए ।

मारण

1. **सूतगन्धकयोस्तारतुल्ययोः कज्जली भिषक् । द्रवीकृत्य कुमार्याद्भिस्तारपत्राणि लेपयेत् ॥**
शराब सम्पुटे रूद्धवा विंशुदुल्पलकैः पचेत् । द्विवारं रजतस्याशु भस्म स्यात् प्रायशः सितम् ॥
(आ.प्र. 3/107-08)

चाँदी के बराबर मात्रा में पारद तथा गन्धक की कज्जली लेकर कुमारी स्वरस से लेप बनाकर उसे चाँदी के पत्र पर लेप करते हैं । इसे शराव सम्पुट कर 20 उपलों का पुट देते हैं । ऐसे दो पुट से रजत की भस्म बन जाती है ।

2. **माक्षीकचूर्णलुङ्गाम्लमर्दितं पुटितं शनैः । त्रिंशद्धारेण तत्तारं भस्मसाज्जायतेतराम् ॥**
(र.र.स. 5/36)

शुद्ध स्वर्ण माक्षिक तथा रजत को मातुलुंग स्वरस से मर्दित कर पुट देते हैं ऐसा 30 पुट देने से रजत की भस्म बन जाती है ।

रजतद्रुति

सप्तधा नरमूत्रेण भावयेद्देवदालिकाम् । तच्चूर्णवापमात्रेण द्रुतिः स्यात्स्वर्णतारयोः ॥
(र.र.स. 5/41)

Scanned with OKEN Scanner

देवदाली चूर्ण को सात बार नरमूत्र से भावना देते है । इस चूर्ण को द्रुत रजत मे मिलाने से यह द्रुति अवस्था में ही रहती है ।

Probable physico chemical changes

Rajat Bhasma prepared with Kajjali followed by Bhavana of Kumari Swarasa (the total number of Puta given 17) shows the following physico chemical values[1]–

Sr.No.	Physico chemical parameter	Value
1.	pH	7.34
2.	Ash value	98.32
3.	Acid insoluble ash	9.32
4.	Water soluble ash	0.10
5.	Loss on Drying (at 110^0C)	0.54
6.	%Ag	81.77
7.	% S	13.15

Importance of temperature while processing– रजत को तप्त करने के लिए लगभग 650^0C तापमान की आवश्यकता होती है। अतः निर्वाप विधि से शोधन करते समय ऐसा Heating device प्रयुक्त करना चाहिए। जिससे उपरोक्त तापमान प्रदान किया जा सके । रजत भस्म निर्माण हेतु कुक्कुट पुट या लघु पुट का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है। इस पुट का उच्चतम तापमान 700^0C[2] के आसपास होता है।

योग– 1. वृहत् कस्तूरी भैरव रस 2. जय मंगल रस
3. वृहत् वात चिन्तामणि रस 4. राजमृगांक रस
5. रसराज रस

Research updates

In their study done on Rajat Bhasma and silver nanoparticle by Sharma R. et al. the average particle size of Rajat bhasma was in the range of 10-60 nm while ICP-AES analysis shows 76%-90% silver content. Anti bacterial activity of Rajat Bhasma (500 µg) and synthesized Nano particle (500 µg) at the present concentration was evident only against S. aureus.[3]

Study done by Kar Pallab et al on the Rajat Bhasma shows nano particles were

1. Gokarn, Rohit & Patgiri, Biswajyoti & Hiremath, Shobhs. (2013) Pharma-ceutical Standardization of Rajat Bhasma (Incinerated silver] by Two Different methods. Anuals of Ayurvedic Medicine 2347-6923.2.7-15.
2. Chaturvedi R. Jha CB. Standard manufacturing procedure of Rajat Bhasma. Ayu. 2011. Oct; 32(4):566-71. doi:10.4103/0974-8520.96135.
3. Sharma, R, Bhatt A, Thakur M. Physico chemical characterization and antibacterial activity of Rajat Bhasma and silver nanoparticles. AYU 2016; 37:71-5.

spherical and cubical in shape while EDX analysis shows that 80.00% Ag in case of nano particle synthesized from Clerodendrum inerme and 37.30% in Rajat Bhasma nano particle.[1]

15. ताम्र (Copper)

पर्याय

ताम्रं शुल्वं रक्तकं म्लेच्छवक्त्रं नेपालीयं त्रयम्बकं सूर्यलोहम् ।
त्वाष्ट्रं त्वकं सूर्यपर्यायसंज्ञ द्विष्टं द्वयष्टं त्वम्बकं कीर्तितं तत् ॥
उदुम्बरञ्चारविन्दं सूर्याङ्गं लोहितायसम् । रविप्रियं भास्करं च ताम्रकं च प्रकीर्तितम् ॥
(र.त. 17/1-2)

ताम्र, शुल्व, रक्तक, मलेच्छवक्त्र, नेपालीय, त्र्यम्बक, सूर्यलोह, त्वाष्ट्र, त्वक्, सूर्य के सभी पर्याय, द्विष्ट, द्वयष्ट, त्वम्बक्, उदुम्बर, अरविन्द, सूर्याङ्ग, लोहितायस, रविप्रिय, भास्कर, तथा ताम्रक ये ताम्बे के पर्याय है ।

Metallic Identification

Nature– Plates, wires or rods can be bent by hand
Colour– Copper red
Streak– Copper red
Cleavage– None
Fracture– Hackly
Lustre– Metallic
Tenacity– Malleable
Transparency– Opaque
Hardness– 2.5 to 3.0
Sp.Gr.– 8 to 9
Melting point– 1085^0C

स्त्रोत

उत्पत्ति– शुक्रं यत्कार्तिकेयस्य पतितं धरणीतले । तस्मात्ताम्रं समुत्पन्नमिदमाहुः पुराविदः ॥
(आ.प्र. 3/110)

प्राचीन आचार्यों के अनुसार कार्तिकेय भगवान का शुक्र पृथ्वी पर जिस स्थान पर गिरा वहाँ पर ताम्र की उत्पत्ति हुई ।

नेपाल से प्राप्त ताम्र को नेपाली तथा अन्य देश की खान से प्राप्त मलेच्छ ताम्र होता है । ताम्र मुक्त अवस्था (Native form) में मुख्यतः Igneous rock में Irregular platy dendrites crystal तथा Compact mass के रूप

1. Kar, Pallab & Banerjee, Swarnendra & Chhetri, Abhijit & Sen, Arnab. (2021) Synthesis, physico chemical characterization and biological activity of synthesized silver and Rajat Bhasma nano particles using clerodendrum inerme. J Phytol. 2021 13:64-071. doi:10.25081/jp.2021.V13.7026 http://update publishing.com/journal/index.php/jp.

Scanned with OKEN Scanner

में पाया जाता है । राजस्थान के खेतरी तथा झारखण्ड के मऊ भंडार एवं घाटशीला में ताम्र का उत्पादन Electrolytic विधि से किया जाता है । ऐसा ताम्र 99.50% to 100% शुद्ध होता है । यह ताम्र Wires, Sheets तथा Rods के रूप में उपलब्ध होता है ।

भेद– म्लेच्छं नेपालकं चेति तयोर्नेपालकं वरम् । (र.र.स. 5/42)

ताम्र के 2 भेद होते हैं–

1. नैपाली ताम्र– यह श्रेष्ठ होता है ।
2. म्लेच्छ ताम्र– यह अधम होता है ।

ग्राह्य ताम्र

सुस्निग्धं मृदुलं शोणं घनाघातक्षमं गुरू । निर्विकारं गुण श्रेष्ठं ताम्रं नेपालमुच्यते ॥
(र.र.स. 5/44)

यह अधिक स्निग्ध, मुलायम, लालवर्ण की, तेज आघात सहने वाली (न टूटने वाली) भारी तथा दोष रहित होती है । इन गुणों से युक्त नेपाली ताम्र होती है जो कि गुणों में श्रेष्ठ होती है ।

पाण्डुरं कृष्ण शोणं च लघुस्फुटन संयुतम् । रूक्षाङ्गं सदलं ताम्र नेष्यते रस कर्मणि ॥
(र.र.स. 5/45)

पाण्डु कृष्ण सा लाल वर्ण का, हलका, पीटने पर जो टूट जाय, रूक्ष तथा पत्र युक्त ताम्र रस कर्म योग्य नहीं होता है ।

अग्राह्य

सिताकृष्णारूणच्छायमतिवामि कठोरकम् । क्षालितं च पुनः कृष्णमेतन्म्लेछकताम्रकम् ॥
(र.र.स. 5/43)

म्लेच्छ ताम्र में श्वेत, कृष्ण तथा अरूण रंग की छाया होती है । यह अत्यन्त वमन कराने वाला होता है, कठोर (पीटने से कठिनता से फैलता है) तथा इसे प्रक्षालन करने के पश्चात् यह पुनः काला हो जाता है । यह ग्राह्य नहीं होता है ।

दोष

न विषं विषमित्याहुस्ताम्रं तु विषमुच्यते । एको दोषो विषे ताम्रे त्वष्टौ दोषाः प्रकीर्तिताः ॥
(आ.प्र. 3/115)

विष को विष नहीं कहा है किन्तु ताम्र को विष बताया है । विष में केवल एक ही दोष होता है किन्तु ताम्र में आठ दोष होते हैं । यह आठ दोष निम्न है–

भ्रमो मूर्च्छा विदाहश्च स्वेदक्लेदनवान्तयः । अरुचिश्चित्तसंताप एते दोषा विषोपमाः ॥
(आ.प्र. 3/116)

1. भ्रम, 2. मूर्च्छा, 3. विदाह, 4. स्वेद, 5. क्लेद, 6. वमन, 7. अरुचि, 8. चित्तसंताप ये ताम्र के अष्ट दोष हैं ।

शोधन

सामान्य शोधन- ताम्र को तप्त कर तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक सात-सात बार प्रतप्त कर बुझाने से ताम्र का शोधन हो जाता है ।

विशेष शोधन

1. निम्बम्बुपटुलिप्तानि तापितान्यष्टवारकम् । विशुध्यन्त्यर्कपत्राणि निर्गुण्डी रसमज्जनात् ॥
(र.र.स. 5/51)

ताम्र पत्र पर निम्बु स्वरस तथा सेन्धा लवण का लेप कर तपा कर उसे निर्गुण्डी रस में बुझाते हैं । ऐसा आठ बार करने से ताम्र शुद्ध रहो जाता है ।

2. गोमूत्रेण पचेद्यामं ताम्र पत्रं दृढाग्निना । शुद्ध्यते नात्र सन्देहो मारणं चाप्यथोच्यते ॥
(र.र.स. 5/52)

ताम्र पत्र को गोमूत्र में डाल कर एक प्रहर तक उसका तीव्र अग्नि में स्वेदन करने से यह शुद्ध होकर मारण योग्य हो जाता है ।

ताम्र मारण

1. जम्बीर रस सम्पिष्ट रसगन्धकलेपितम् । शुल्वपत्रं शरावस्थं त्रिपुटैर्याति पञ्चताम् ॥
(र.र.स. 5/53)

पारद तथा गन्धक की कज्जली को निम्बू स्वरस के लेप बनाकर ताम्र पर लेप कर पुट देते हैं । ऐसे तीन पुट देने से ताम्र की भस्म बन जाती है ।

2. अथवा मारितं ताम्रमम्लेनैकेन मर्दितम् । तद्गोलं सूरणस्यान्ता रुद्ध्वा सर्वत्र लेपयेत् ॥
शुष्कं गजपुटे पच्यात्सर्वदोषहरं भवेत् । वान्ति भ्रान्ति विरेकं च न करोति कदाचन ॥
(र.र.स. 5/54-55)

उपरोक्त मारित ताम्र भस्म को नींबू स्वरस से मर्दन कर टिकिया बना लेते हैं । इस टिकिया को सूरणकन्द में रखकर कपड़मिट्टी का लेप करते हैं । जब यह सूख जाय तो इसे गजपुट में पाक करते हैं (देते हैं) । इससे ताम्र भस्म वमन भ्रम, विरेचन एवं सर्वदोष से रहित हो जाती है ।

3. ताम्रपत्राणि सूक्ष्माणि गोमूत्रे पञ्च यामकम् । क्षिप्त्वा रसेन भाण्डे तद् द्विगुणं देहि गन्धकम् ॥
अम्लपर्णी प्रपिष्याथ ह्याभितो देहि ताम्रकम् । सम्यङ् निरुध्य भाण्डे तमग्निं ज्वालय यामकम् ॥
भस्मीभवति ताम्रं तद्यथेष्टं विनियोजयेत् ॥ (र.र.स. 5/56-58)

ताम्र पत्र को गोमूत्र में पांच याम तक रख देते हैं । तत्पश्चात् इसमें से गोमूत्र निकाल देते हैं तथा इसमें ताम्र से दो गुना गन्धक तथा समभाग पारद की कज्जली बनाकर अम्लपर्णी स्वरस से लेप बनाकर उस भाण्ड को बन्द कर एक याम तक अग्नि देते हैं । ऐसा करने से ताम्र की भस्म बन जाती है । तथा इसे आवश्यकतानुसार प्रयोग कर सकते हैं ।

Scanned with OKEN Scanner

ताप्य भस्म का अमृतीकरण

लोहादीनां धृतायां वैशिष्ट दोषापनुत्तये। क्रियते यस्तु संस्कार अमृतीकरणं मतम् ॥
(र.त. 2/58)

लोह आदि धातु के मारण के पश्चात् उसमें शेष दोष को दूर करने के लिए जो संस्कार किया जाता है उसे अमृतीकरण कहते हैं। अमृतीकरण संस्कार ताम्र तथा अभ्रक भस्म हेतु विशेष रूप से किया जाता है।

1. सुपूतं ताम्रचूर्णन्तु तदर्धं गन्धकं तथा। पञ्चामृतेन सम्पेष्य विधानज्ञा भिषग्वरः ॥
शराव सम्पुटे न्यस्य ताम्रं विहित चक्रिकम्। त्रिवारं पुटयेदेवं रस तन्त्र विचक्षणः ॥
(र.त. 17/37-38)

ताम्र भस्म से आधी मात्रा में गन्धक तथा पंचामृत (गोदुग्ध, दही, घृत, शर्करा एवं शहद) के साथ शराव सम्पुट कर पुट देते हैं। ऐसे तीन पुट से ताम्र भस्म का अमृतीकरण हो जाता है।

2. सम्यङ्मृतं सूर्यसखस्य चूर्णं तदर्धसंशोधितगन्धकञ्च।
दत्त्वा ततोऽम्लैः खलु निम्बुकोत्थैः सम्पेषयेद् यामलं रसज्ञः ॥
गोलं विधायाऽथ रवि प्रियस्य ह्यपर्यधः सूरण कन्द संस्थम्।
मृत्कर्पटैश्चाथ विलिप्य गोलं पुटे गजाख्ये पुटयेद्विधिज्ञः ॥
रसागमज्ञैरनघा तु रीत्याऽमृत क्रियायां खलु पाचितन्तु।
वान्त्यादिकं न प्रकरोति नूनं ताम्रं निकामं त्वमृतोपमं स्यात् ॥
(र.त. 17/40-42)

अच्छी प्रकार से मारित ताम्र भस्म को एक भाग तथा गन्धक आधा भाग लेकर नींबू स्वरस से मर्दन करते हैं। तत्पश्चात् इसका गोला बनाकर सूरणकन्द में रखकर कपड़मिट्टी कर सुखाकर गजपुट देते हैं। स्वाङ्गशीत होने पर निकाल कर खरल में पीसकर रख लेते हैं। यह वान्ति आदि दोष रहित होता है।

Probable physico chemical changes

In their study done by M.P. Wadekar et.al Tamra Bhasma was analysed on various modern tool and it was found that surface state of Tamra bhasma as compared to standard was identified as CuO in XPS analysis while XRD also suggests Tamra bhasma is composed of cupric oxide. The elemental composition of the drug sample analysed by EDX shows 60% copper present in 'Tamra bhasma' was equivalent to 75% CuO (as per the stoichiometry)*

Analytical study done on Tamra Bhasma by Dahikar et al. shows that it is having pH 6.76, loss on drying 1.14% while acid insoluble ash 1.12%.**

* *Wadekar M.P. Rode CV, Bendali. YN et al. Preparation and characterization of a copper based Indian traditional drug : Tamra bhasma. Journal of Pharmaceutical and Biomedical Analysis xxx (2005) xxx-xxx doi : 10.1016/j. jpba. 2005.06.015.*

** *Gunja K. Dahikar : Pharmaceutical and Analytical study of Tamra Bhasma-A research article, International Ayurvedic Medical Journal (Online) 2019. http://www.iamj.in/polls/images/upload/2158 2164. pdf.*

Effect of temperature while processing– Heating copper in the air can produce two different reactions depending on how hot it gets oxidation at a temperature below 980^{0}C and decomposition of carbon monoxide at higher temperature above 98^{0}C.

योग–
1. आरोग्यवर्द्धनी वटी
2. हृदयार्णव रस
3. ताम्र पर्पटी
4. पंचामृत पर्पटी
5. नित्यानन्द रस

Research updates

Toxicity study done by Jagtap et.al on Tamra Bhasma prepared from Ashodhita and Shodhita Tamra in rats show that Tamra Bhasma prepared from Ashodhita Tamra has pathological implications on different hematological, serum biochemical and cyto architecture of different organ even at therapeutic dose level (5.5 mg/kg). While Tamra Bhasma prepared from Shodhita Tamra is safe even at five fold to therapeutic equivalent does (27.5 mg/kg).*

16. लोहा (Iron)

पर्याय

मुण्ड लौह– मुण्डं तथा मुण्डलौहं कृषिलोहं शिलात्मजम्। कृष्णायसं हृषत्सारमायसञ्च निगद्यते ॥
(र.त. 20/2)

मुण्ड, कृषि लोह, शिलात्मज, कृष्ण अयस तथा हृषत्सार एवं अयस मुण्ड लौह के पर्याय है।

Metallic Identification – Kanta Lauha

Nature– Lump
Colour– Greyish black
Streak– Reddish black
Cleavage– None
Fracture– Uneven
Lustre– Metallic
Tenacity– Brittle

* Jagtap C.Y. Ashok BK, Patgiri BJ, Prajapati PK, Ravi Shankar B. Acute and Sub chromic Toxicity study of Tamra bhasma (incinerated copper) prepared from Ashodhita (Unpurified) and Shodhita (Purified) Tamra in Rats. Indian J. Pharm. Sci. 2013. May; 75(3):346-52. doi:10.4103/0250-474x.117433.PMID:24082351; PMCID:PMC378375.

Scanned with OKEN Scanner

Transparency– Opaque
Mangnetism– Magentic in nature
Hardness– 5.5 to 6.0
Sp.Gr.– 5 to 6

स्रोत

लोहा धातु के रूप में विरल रूप में Earth crust में Meteorities deposit के रूप पाया जाता है । ज्यादातर यह संयुक्तावस्था में पाया जाता है । जहाँ से Extraction के द्वारा आइरन प्राप्त किया जाता है । कान्तलौह (An Iron are containing Magnetite Fe_3O_4), Metamorphic Rock तथा Igneous rock, दोनों में बुहतायत से पाया जाता है । भारत में कान्त लौह गुंटुर (आंध्र प्रदेश) तमिलनाडु, कर्नाटक, उड़ीसा, झारखण्ड में तथा Hematite के साथ बिहार, गोवा, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में प्रचुर में पाया जाता है ।

लोहे के खनिज–
1. गैरिक – Fe_2O_3
2. मैग्नेटाइट – Fe_2O_4
3. रोप्य माक्षिक – Fe_2S_3
4. लाइमोनाइट – $2Fe_2O_3.3H_2O$
5. सिडेराइट – $FeCO_3$
6. स्वर्णमाक्षिक – $CuFeS_2$

उपरोक्त खनिज में लोहा प्रधान रूप से गैरिक द्वारा प्राप्त किया जाता है । इसके अतिरिक्त लोहा हरी पत्तियों में तथा प्राणियों के रक्त आदि में उपलब्ध होता है ।

भेद– मुण्डं तीक्ष्णञ्च कान्तञ्च त्रिप्रकारमयः स्मृतम् । (र.र.स. 5/69)

लोहे के तीन प्रकार हैं– 1. मुण्ड लोह 2. तीक्ष्ण लोह 3. कान्त लोह

वक्तव्य– मुण्ड लोह को ढलवाँ लोह (Cast Iron या Pig Iron) तीक्ष्ण लोह को फौलाद/पिटवाँ लोह (Wrought Iron) तथा कान्त लोह को Magnetic Iron या Magnetite कहा जाता है ।

Pig Iron– The iron that comes out from the blast furnace is known as Pig Iron. It has more impurities and contains up to 4.5% Carbon, Maganese 1.7%, Phosphorous 0.3%. Sulphur 0.04% and Silicon 1%. Pig Iron contains iron carbide which makes it brittle.

Cast Iron– Molded pig iron is known as cast iron and it is alloy of iron and carbon. It contains 3 to 3.5% carbon and is less brittle than pig iron.

Wrought Iron– यह Carbon तथा Iron का alloy है जिसमें Carbon की मात्रा 0.08% से कम होती है । इस प्रकार के लोहा में 2% भार तक fibrous slag होता है जो कि इसे एवं दानेदार संरचना (पोगर) प्रदान करती है यह संरचना टूटने या मुड़ने पर दिखाई देती है ।

Steel– यह भी Iron तथा Carbon का Alloy है जिसमें Carbon की भार 2.14% होती है । कभी-कभी इसमें Chromium तथा Nickel की भी उपस्थिति मौजूद रहती है ।

Magnetite– यह एक mineral है जिसका सूत्र Fe_3O_4 है तथा इसमें चुम्बकीय गुण पाये जाते हैं ।

मुण्ड लौह, तीक्ष्ण लौह तथा कान्त लोह के विभिन्न भेद तथा लक्षणों का वर्णन निम्न है ।

मृदु कुण्ड कडारञ्च त्रिविधं मुण्डमुच्यते ॥
खरं सारञ्च हन्नालं तारावट्टञ्च वाजिरम् । काल लोहाभिधानञ्च षड्विधं तीक्ष्णमुच्यते ॥
भ्रामकञ्चुम्बकञ्चैव कर्षकं द्रावकं तथा । एवञ्चतुर्विधं कान्तं रोमकान्तञ्च पञ्चमम् ॥
(र.र.स. 5/69-71)

मुण्ड लोह (3)	तीक्ष्ण लोह (6)	कान्त लोह (5)
1. मृदु	खर	भ्रामक
2. कुण्ड	सार	चुम्बक
3. कडार	हन्नाल	कर्षक
4. –	तारावट्ट	द्रावक
5. –	वाजिर	रोमकान्त
6. –	काललोह	–

मुण्ड लोह के लक्षण

द्रुतद्रावमविस्फोटं चिक्कणं मृदु तच्छुभम् ॥
हतं यत्प्रसरेद्दुःखान्तत्कुण्ठं मध्यमं स्मृतम् । यद्भृतं भज्यते भङ्गे कृष्णं स्यात्तत्कडारकम् ॥
(र.र.स. 5/72-73)

मृदु मुण्ड– जो लोहा अग्नि में शीघ्र ही द्रवित (Melt) हो जाय, हथौड़ी के आघात से जल्दी न टूटे, चिकना तथा मृदु हो वह मृदु मुण्ड होता है ।

कुण्ड मुण्ड– जो आघात से आसानी से न फैले उसे कुण्ठ कहा जाता है । यह मध्यम होता है ।

कडार मुण्ड– जो आघात से फट जाता है तथा टूटा स्थान काला रंग का दिखता है उसे कठार मुण्ड कहा जाता है । लोहे का उपरोक्त वर्गीकरण आघातवर्द्धनीयता के आधार पर है ।

तीक्ष्ण लौह

खरं सारञ्च हन्नालं तारावट्टञ्च वाजिरम् । काललोहाभिधानञ्च षड्विधं तीक्ष्णमुच्यते ॥
1. खर– परूषं पोगरोन्मुक्तं भङ्गे पारदवच्छवि । नमने भङ्गुरं यत्तत्खरलोहमुदाहृतम् ॥
(र.र.स 5/77)

जो तीक्ष्ण लोह कठोर, पोगर रहित तथा कटा भाग पारद सदृश (श्वेत वर्ण) तथा मोड़ने पर टूट जाता है उसे खर तीक्ष्ण लोह कहा जाता है ।

2. सार– वेगभङ्गुरधारं यत्सारलोहं तदीरितम् । पोगराभासकं पाण्डु भूमिजं सारमुच्यते ॥
(र.र.स. 5/78)

Scanned with OKEN Scanner

तेजी से एटकने पर जिस लोहे की धार टूट जाय तथा इसमें पोगर न दिखाई पड़े जो पाण्डु वर्ण की भूमि से प्राप्त हो उसे सार लोह कहते है ।

3. हृन्नाल– कृष्णाणाश्वत्थपृक्षबीजतुल्योरुपोगरम् । छेदने चातिपरूषं हृन्नालमिति कथ्यते ॥ (र.र.स. 5/79)

जिस लोहे का वर्ण कृष्ण श्वेत, जिसमे एरण्ड बीज सदृश पोगर हो तो तोड़ने में अत्यन्त कठिन हो उसे हृन्नाल कहते है ।

4. वाजिर– पोगरैर्वज्रसङ्काशैः सूक्ष्मरेखैश्च सान्द्रकैः । निचितं श्यामलाङ्गञ्च वाजीरं तत्प्रकीर्त्यते ॥ (र.र.स. 5/81)

जिस तीक्ष्ण लोह में पोगर हीरे के समान कठोर तथा चमकदार हो, जो घन तथा सूक्ष्म रेखाओं से युक्त हो तथा जिसका वर्ण श्याम (नीला काला) हो वह वाजिर तीक्ष्ण लोह होता है ।

5. काल लोह– नीलकृष्णाप्रभं सान्द्रं मसृणं गुरुभासुरम् । लोहाघातेऽप्यभङ्गात्यधारं कालयसं मतम् ॥ (र.र.स. 5/82)

जो तीक्ष्ण लोह नीले काले वर्ण का, घना, चिकना, भारी तथा चमकदार तो आघात से भी न टूटे वह काल लोह कहा जाता है ।

उपरोक्त वर्णन में तारावट्ट तीक्ष्ण लोह के लक्षणों का वर्णन नहीं है । आचार्य दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी जी के रसरत्न समुच्चय की टीका में इसके लक्षणों का वर्णन निम्न है–

चिकुरं भंगुरं लोहात् पोगरं तत्परं स्मृतम् । (र.र.स. 5/80)

अर्थात् जिस तीक्ष्ण लोह के पोगर रोम (केश) के समान स्पष्ट दृष्टिगोचर हो वह तारावट्ट लोहा होता है । तीक्ष्ण लोह का उपरोक्त वर्णन उसमें मौजूद पोगर के अनुसार होता है ।

पोगर

अङ्गं छाया च वङ्गञ्च पोगरस्याभिधात्रयम् । चिकुरं भङ्गुरं लोहात्पोगरं तत्परं स्मृतम् ॥ (र.र.स. 5/80)

अंग, छाया तथा वङ्ग ये तीन पोगर के पर्याय है । लोहे को तोड़ने पर जो भङ्गुर तथा केशाकृति (Fibrous) संरचना दिखाई देती है उसे पोगर कहते हैं ।

विमर्श– Wrought Iron में Fibrous slag पोगर हो सकता है ।

श्रेष्ठता– खरलोहात्परं सर्वमेकैकस्माच्छतोत्तरम् ॥ (र.र.स. 5/83)

खर, सार, हृन्नाल, तारावट्ट, वाजिर तथा काललोह ये उत्तरोत्तर एक दूसरे से सौ गुना अधिक श्रेष्ठ होते हैं ।

कान्त लौह

भ्रामकं चुम्बकञ्चैव कर्षकं द्रावकं तथा । एवं चतुर्विधं कान्तं रोमकान्तञ्च पञ्चमम् ॥ (र.र.स. 5/85)

भ्रामक, चुम्बक, कर्षक, द्रावक तथा रोमकान्त ये कान्तलोह के पाँच भेद है ।

मुख तथा रंग के अनुसार भेद

उपरोक्त पाँचों के मुख तथा रंग के अनुसार निम्न भेद हैं–

एकद्वित्रिचतुष्पञ्चसर्वतो मुखमेव तत् । पीतं कृष्णं तथा रक्तं त्रिवर्णं स्यात्पृथक् पृथक् ॥ (र.र.स. 5/86)

1. भ्रामक–	1, 2, 3, 4 या सर्व तरफ से मुख भेद से = 5 प्रकार	पीत, रक्त तथा कृष्ण भेद =3 प्रकार	इनमें पीत वर्ण स्पर्श वेधि
2. चुम्बक	"	"	कृष्ण श्रेष्ठ
3. कर्षक	"	"	रसायन तथा रक्त वर्ण
4. द्रावक	"	"	रसबन्ध में प्रयुक्त होता है
5. रोमकान्त	"	"	

प्रत्येक मुख भेद से 5 प्रकार तथा वर्ण भेद से 3 प्रकार के होते हैं ।

गुण–

भ्रामयेल्लोहजातं यत्तत्कान्तं भ्रामकं मतम् । चुम्बयेच्चुम्बकं कान्तं कर्षयेत्कर्षकं तथा ॥
साक्षाद्यद् द्रावयेल्लोहं तत्कान्तं द्रावकं भवेत् । तद्रोमकान्तं स्फुटिताद्यतो रोमोद्गमो भवेत् ॥ (र.र.स. 5/90-91)

भ्रामक– छोटे लोहे के टुकड़े को भ्रामित (कुछ घुमा/हिला) कर देता है ।

चुम्बक– लोहे के छोटे, टुकड़े को पास से चूम (खीच) लेता है ।

कर्षक– तेजी से अपने तरफ खींचता है ।

द्रावक– लोहे की छोटी वस्तुओं को अपने से दूर कर देता है ।

रोमकान्त– जिस लोहे (चुम्बक) को तोड़ने पर छोटे टुकड़े रोम जैसे खड़े हो जाते हैं ।

उपरोक्त के 4, 5 या सर्वमुख वाले श्रेष्ठ होते हैं ।

ग्राह्य लक्षण

तीक्ष्ण लोह– कासीसामलकल्कास्ते लोहेहङ्गं दृश्यते स्फुटस । तीक्ष्णलोहं तदुदिष्टं मारणायोत्तमं विदुः ॥ (आ.प्र. 3/214)

कासीस तथा आँवला को पीसकर कल्क बनाकर इससे तीक्ष्ण लोह पर लेप कर उससे रगड़कर साफ करने से यदि उसमें अपना अंग स्पष्ट दिखाई दे तो वह तीक्ष्ण लोह मारण हेतु प्रशस्त होता है ।

उत्तम कान्तलोह के लक्षण

पात्रे यस्य प्रसरति जले तैलबिन्दुर्न लिप्तो, गन्धं हिङ्गु त्यजति च तथा तिक्ततां निम्बकल्कः ॥
पाके दुग्धं भवति शिखराकारकं नैति भूमौ, कान्तं लौहं तदिदमुदितं लक्षणोक्तं च नान्यत् ॥ (र.र.स. 5/95)

उत्तम कान्त लोह के पात्र में निम्न लक्षण दृष्टिगोतर होना चाहिए–

1. पात्र में जल भरकर इसमें तैल बिन्दु डालने पर यह फैलता नहीं है ।

Scanned with OKEN Scanner

2. हींग अपना गन्ध त्याग देता है । 3. निम्ब की तिक्तता खत्म हो जाती है ।
4. दुग्ध उबालने पर यह उबल कर भूमि पर गिरता नहीं है बल्कि शिखराकार हो जाता है ।

लोहे के दोष

गुरूता दृढतोत्क्लेदः कश्मलं दाहकारिता । अश्मदोषः सदुर्गन्धो दोषाः सप्तायसः स्मृताः ॥
(आ.प्र. 3/223)

1. गुरूता (शरीर में भारीपन), 2. जकड़ाहट, 3. मिचली, 4. ग्लानि (कश्मल), 5. दाह, 6. अश्मरी, 7. शरीर में दुर्गन्धता ये सात लोहे के दोष है ।

शोधन

सामान्य शोधन- लोहे को तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में 7 बार बुझाने से यह शुद्ध हो जाता है ।

विशेष शोधन

क्वाथ्यमष्टगुणे तोये त्रिफलाषोडशं पलम् । तत्क्वाथे पादशेषे तु लोहस्य पलपञ्चकम् ॥
कृत्वा पत्राणि तप्तानि सप्तवारं निषेचयेत् । एवं प्रलीयते दोषो गिरिजो लोहसम्भवः ॥
(र.र.स. 5/102-103)

शोधन हेतु क्वाथ निर्माण

पाँच पल लोहे के शोधन हेतु 16 पल त्रिफला लेकर उसे 8 गुना (128 पल) जल में उबालते हैं जब यह क्वाथ 32 पल बचे तो इसमें शोधन करते हैं ।

लोहे के पत्र को तप्त कर उपरोक्त विधि से निर्मित क्वाथ में बुझाते हैं । ऐसा सात बार करने से लोह गिरिदोष से मुक्त हो शुद्ध हो जाता है ।

सामुद्रलवणोपेतं तप्तं निर्वापितं खलु । त्रिफलाक्वथिते नूनं गिरिदोषमयस्त्यजेत् ॥
(र.र.स. 5/104)

समुद्र लवण के गाढ़े घोल में लोह पत्र को डुबा देते हैं । तत्पश्चात् इसे तप्त कर त्रिफला क्वाथ (उपरोक्त विधि से निर्मित) में बुझाते है । ऐसा सात बार करने से लोहा सम्पूर्ण गिरि दोष से मुक्त हो जाता है ।

शशक्षतजसंलिप्तं त्रिवारं परितापितम् । मुण्डादिसकलं लोहं सर्वदोषान्विमुञ्चति ॥
(र.र.स. 5/101)

मुण्ड आदि तीनो लोहों को खरगोश के रक्त से भावित कर तपाने से लोहा शुद्ध हो जाता है । इस प्रक्रिया को तीन बार दोहराते हैं ।

शोधन हेतु लोहे की मात्रा

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शुद्धं लोहं च मारयेत् । नायः पचेत्पञ्चपलादर्वागूर्ध्वं त्रयोदशात् ॥
(र.र.स. 5/97)

लोह शोधन/मारण हेतु 5 पल (20 तो.) से 13 पल (52 तो.) की मात्रा लेनी चाहिए ।

लोह मारण

1. तीक्ष्णलौहस्य पत्राणि निर्दलानि दृढेऽनले । ध्यात्वा क्षिपेज्जले सद्यः पाषाणोलूखलोदरे ॥
खण्डयेद्दृढनिर्घातैः स्थूलया लोहपारया । तन्मध्यात्स्थूलखण्डानि रुद्ध्वा मल्लद्वयान्तरे ॥
ध्यात्वा क्षिप्त्वा जले सम्यक् पूर्ववत्कण्डयेत्खलु । तच्चूर्णं सूतगन्धाभ्यां पुटेद्विंशतिवारकम् ॥
पुटे पुटे विधातव्यं पेषणं दृढवत्तरम् । एवं भस्मीकृतं लौहं तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥
(र.र.स. 5/109-112)

तीक्ष्ण लौह पत्र को तपाकर उसे तुरन्त ही पत्थर के उलूखल में रखे पानी में बुझा देते हैं । तत्पश्चात् इसे तीव्र आघात से कूटकर चूर्ण बना लेते हैं । इस विधि से शेष बचे बड़े लोहे के टुकड़े को पुनः शराव में रखकर तपा कर बुझाते हैं तथा कूटते है जिससे इसका चूर्ण बन जाय । अब इस लौह चूर्ण को पारद तथा गन्धक की कज्जली के साथ पुट देते हैं । इस प्रकार बीस पुट देने से लोहे की भस्म बन जाती है । प्रत्येक पुट में मर्दन अत्यन्त दृढ़ करना चाहिए । इस प्रकार निर्मित भस्म को विभिन्न रोगों में प्रयोग करते हैं ।

2. हिङ्गुलस्यपलान् पञ्च नारीस्तन्येन पेषयेत् । तेन लोहस्य पत्राणि लेपयेत्पलपञ्चकम् ॥
रुद्ध्वा गजपुटे पच्यात्कषायैस्त्रिफलैः पुनः । जम्बीरैरारनालैर्वा विंशत्यंशेन हिङ्गुलम् ॥
पिष्ट्वा रुद्ध्वा पचेल्लोहं तद्द्रवैः पाचयेत्पुनः । चत्वारिंशत्पुटैरेवं कान्तं तीक्ष्णं च मुण्डकम् ॥
म्रियते नात्र सन्देहो दत्त्वा दत्त्वैव हिङ्गुलम् ॥ (र.र.स. 5/113-115)

पाँच पल हिंगुल को स्त्री दुग्ध से पीसकर पांच पल लोहे पर लेप करते हैं । तत् पश्चात् इसे गजपुट देते हैं । स्वांगशीत होने पर प्राप्त लोहे को 1 तोला हिंगुल तथा त्रिफला क्वाथ तथा नींबू रस से भावना देकर पुट देते हैं । प्रत्येक पुट में इसी को दोहराते हैं । इस प्रकार 40 फुट देने से कान्त लोह, तीक्ष्ण लोह तथा मुण्डलोह तीनों की भस्म बन जाती है ।

3. गोमूत्रैस्त्रिफला क्वाथ्या तत्कषायेण भावयेत् । त्रिःसप्ताहं प्रयत्नेन दिनैकं मर्दयेत्पुनः ॥
रुद्ध्वा गजपुटे पच्याद्दिनं क्वाथेन मर्दयेत् । दिवा मर्द्यं पुटेद्रात्रावेकविंशद्दिनावधि ॥
एकविंशत्पुटैरेवं म्रियते त्रिविधं ह्ययः ॥ (र.र.स. 5/125-26)

लोहे की समान मात्रा में त्रिफला लेकर उसका गोमूत्र द्वारा क्वाथ बनाते हैं । तत् पश्चात् इस क्वाथ से 21 भावना देते हैं । पुनः इसे गजपुट की अग्नि देते हैं । इस प्रकार 21 दिन में 21 पुट देने से लोहे की भस्म बन जाती है ।

त्रिविध लोह पाक

प्रथमं भानुपाकेन स्थालीपाकात्ततः परम् । पुटपाकेन पक्वञ्च लौहं सुमृतिमाप्नुयात् ॥
(र.त. 20/20)

लोहे को तीन विधियों से पकाये (जाने से त्रिविध लोह पाक कहा जाता है) । इससे इसकी भस्म निश्चित बन जाती है । ये तीनों पाक निम्न है- 1. भानुपाक 2. स्थाली पाक 3. पुटपाक

1. भानुपाक

वराक्वाथ युतं लौहं भानौः प्रखर भानुभिः । शुष्यन् विपच्यते यस्माद् भानुपास्ततः [illegible]

2. हींग अपना गन्ध त्याग देता है । 3. निम्ब की तिक्तता खत्म हो जाती है ।
4. दुग्ध उबालने पर यह उबल कर भूमि पर गिरता नहीं है बल्कि शिखराकार हो जाता है ।

लोहे के दोष

गुरूता दृढतोत्क्लेदः कश्मलं दाहकारिता । अश्मदोषः सदुर्गन्धो दोषाः सप्तायसः स्मृताः ॥
(आ.प्र. 3/223)

1. गुरूता (शरीर में भारीपन), 2. जकड़ाहट, 3. मिचली, 4. ग्लानि (कश्मल), 5. दाह, 6. अश्मरी, 7. शरीर में दुर्गन्धता ये सात लोहे के दोष है ।

शोधन

सामान्य शोधन– लोहे को तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में 7 बार बुझाने से यह शुद्ध हो जाता है ।

विशेष शोधन

क्वाथ्यमष्टगुणे तोये त्रिफलाषोडशं पलम् । तत्क्वाथे पादशेषे तु लोहस्य पलपञ्चकम् ॥
कृत्वा पत्राणि तप्तानि सप्तवारं निषेचयेत् । एवं प्रलीयते दोषो गिरिजो लोहसम्भवः ॥
(र.र.स. 5/102-103)

शोधन हेतु क्वाथ निर्माण

पाँच पल लोहे के शोधन हेतु 16 पल त्रिफला लेकर उसे 8 गुना (128 पल) जल में उबालते हैं जब यह क्वाथ 32 पल बचे तो इसमें शोधन करते हैं ।

लोहे के पत्र को तप्त कर उपरोक्त विधि से निर्मित क्वाथ में बुझाते हैं । ऐसा सात बार करने से लोह गिरिदोष से मुक्त हो शुद्ध हो जाता है ।

सामुद्रलवणोपेतं तप्तं निर्वापितं खलु । त्रिफलाक्वथिते नूनं गिरिदोषमयस्त्यजेत् ॥
(र.र.स. 5/104)

समुद्र लवण के गाढ़े घोल में लोह पत्र को डुबा देते हैं । तत्पश्चात् इसे तप्त कर त्रिफला क्वाथ (उपरोक्त विधि से निर्मित) में बुझाते है । ऐसा सात बार करने से लोहा सम्पूर्ण गिरि दोष से मुक्त हो जाता है ।

शशक्षतजसंलिप्तं त्रिवारं परितापितम् । मुण्डादिसकलं लोहं सर्वदोषान्विमुञ्चति ॥
(र.र.स. 5/101)

मुण्ड आदि तीनो लोहों को खरगोश के रक्त से भावित कर तपाने से लोहा शुद्ध हो जाता है । इस प्रक्रिया को तीन बार दोहराते हैं ।

शोधन हेतु लोहे की मात्रा

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शुद्धं लोहं च मारयेत् । नायः पचेत्पञ्चपलादर्वागूर्ध्वं त्रयोदशात् ॥
(र.र.स. 5/97)

लोह शोधन/मारण हेतु 5 पल (20 तो.) से 13 पल (52 तो.) की मात्रा लेनी चाहिए ।

लोह मारण

1. **तीक्ष्णलौहस्य पत्राणि निर्दलानि दृढेऽनले । ध्मात्वा क्षिपेज्जले सद्यः पाषाणोलूखलोदरे ॥**
खण्डयेद्दृढनिर्घातैः स्थूलया लोहपारया । तन्मध्यात्स्थूलखण्डानि रुद्ध्वा मल्लद्वयान्तरे ॥
ध्मात्वा क्षिप्त्वा जले सम्यक् पूर्ववत्कण्डयेत्खलु । तच्चूर्णं सूतगन्धाभ्यां पुटेद्विंशतिवारकम् ॥
पुटे पुटे विधातव्यं पेषणं दृढवत्तरम् । एवं भस्मीकृतं लौहं तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥
(र.र.स. 5/109-112)

तीक्ष्ण लौह पत्र को तपाकर उसे तुरन्त ही पत्थर के उलूखल में रखे पानी में बुझा देते हैं । तत्पश्चात् इसे तीव्र आघात से कूटकर चूर्ण बना लेते हैं । इस विधि से शेष बचे बड़े लोहे के टुकड़े को पुनः शराव में रखकर तपा कर बुझाते हैं तथा कूटते है जिससे इसका चूर्ण बन जाय । अब इस लौह चूर्ण को पारद तथा गन्धक की कज्जली के साथ पुट देते हैं । इस प्रकार बीस पुट देने से लोहे की भस्म बन जाती है । प्रत्येक पुट में मर्दन अत्यन्त दृढ़ करना चाहिए । इस प्रकार निर्मित भस्म को विभिन्न रोगों में प्रयोग करते हैं ।

2. **हिङ्गुलस्यपलान् पञ्च नारीस्तन्येन पेषयेत् । तेन लोहस्य पत्राणि लेपयेत्पलपञ्चकम् ॥**
रुद्ध्वा गजपुटे पच्यात्कषायैस्त्रैफलैः पुनः । जम्बीरैरारनालैर्वा विंशत्यंशेन हिङ्गुलम् ॥
पिष्ट्वा रुद्ध्वा पचेल्लोहं तद्द्रवैः पाचयेत्पुनः । चत्वारिंशत्पुटैरेवं कान्तं तीक्ष्णं च मुण्डकम् ॥
म्रियते नात्र सन्देहो दत्त्वा दत्त्वैव हिङ्गुलम् ॥ (र.र.स. 5/113-115)

पाँच पल हिंगुल को स्त्री दुग्ध से पीसकर पांच पल लोहे पर लेप करते हैं । तत् पश्चात् इसे गजपुट देते हैं । स्वांगशीत होने पर प्राप्त लोहे को 1 तोला हिंगुल तथा त्रिफला क्वाथ तथा नींबू रस से भावना देकर पुट देते हैं । प्रत्येक पुट में इसी को दोहराते हैं । इस प्रकार 40 फुट देने से क्रान्त लोह, तीक्ष्ण लोह तथा मुण्डलोह तीनों की भस्म बन जाती है ।

3. **गोमूत्रैस्त्रिफला क्वाथ्या तत्कषायेण भावयेत् । त्रिःसप्ताहं प्रयत्नेन दिनैकं मर्दयेत्पुनः ॥**
रुद्ध्वा गजपुटे पच्याद्दिनं क्वाथेन मर्दयेत् । दिवा मर्द्यं पुटेद्रात्रावेकविंशद्दिनावधि ॥
एकविंशत्पुटैरेवं म्रियते त्रिविधं ह्ययः ॥ (र.र.स. 5/125-26)

लोहे की समान मात्रा में त्रिफला लेकर उसका गोमूत्र द्वारा क्वाथ बनाते हैं । तत् पश्चात् इस क्वाथ से 21 भावना देते हैं । पुनः इसे गजपुट की अग्नि देते हैं । इस प्रकार 21 दिन में 21 पुट देने से लोहे की भस्म बन जाती है ।

त्रिविध लोह पाक

प्रथमं भानुपाकेन स्थालीपाकात्ततः परम् । पुटपाकेन पक्वञ्च लौहं सुमृतिमाप्नुयात् ॥
(र.त. 20/20)

लोहे को तीन विधियों से पकाये (जाने से त्रिविध लोह पाक कहा जाता है) । इससे इसकी भस्म निश्चित बन जाती है । ये तीनों पाक निम्न है– 1. भानुपाक 2. स्थाली पाक 3. पुटपाक

1. भानुपाक

वराक्वाथ युतं लौहं भानौः प्रखर भानुभिः । शुष्यन् विपच्यते यस्माद् भानुपास्ततः स्मृतः ॥
(र.त. 20/21)

Scanned with OKEN Scanner

एक पात्र में लोहे को त्रिफला क्वाथ में रखकर तेज धूप में रख देते हैं। सूर्य के ताप से त्रिफला क्वाथ को सुखाने की प्रक्रिया को भानुपाक कहा जाते हैं।

विधि–

विमलं खलु लौहन्तु सलिलक्षालितं भिषक्। त्रिफला क्वाथ संयुक्तं ततः खल्वे निधापयेत्॥
निदाघे तु निधाद्यावद भानोः प्रखरभानुभिः। शोषयेद्भिषजां वर्यः कुर्यादेवं तु सप्तधा॥
(र.त. 20/22-23)

शुद्ध लोहे के चूर्ण को अच्छी प्रकार जल से साफ कर उसे किसी खरल में रखते हैं। तत्पश्चात् इसमें त्रिफला डालकर धूप में रख देते हैं। जब धूप से त्रिफला क्वाथ सुख जाय तो इसमें पुनः त्रिफला डालते हैं। ऐसा सात बार करने से लोहे का भानुपाक हो जाता है।

भानुपाक हेतु त्रिफला क्वाथ निर्माण– भानुपाक हेतु त्रिफला क्वाथ का निर्माण निम्न विधि से करते हैं–

भानुपाके लौहतुल्या त्रिफला द्विगुणं जलम्। पादावशेषितञ्चाथ वराक्वाथं प्रयोजयेत॥
(र.त. 20/24)

लोहे की मात्रा बराबर त्रिफला +2 गुना जल $\xrightarrow{\Delta}$ 1/4 अवशेष रहने पर इस क्वाथ को भानुपाक हेतु प्रयुक्त करते हैं।

2. स्थाली पाक

त्रिफलाक्वथितोपेतं लौहं स्थाल्यां खराग्निना। शुष्यन विपच्यते यस्मात् स्थालीपाकस्ततः स्मृतः॥
(र.त. 20/25)

भाण्ड में त्रिफला क्वाथ तथा लोहे को लेकर उसे तीव्र अग्नि पर सुखाने को स्थाली पाक कहा जाता है।

विधि–

भानुपाक विपक्वन्तु लोहं प्रक्षालयेदलम्। ततः स्थाल्यां तु विन्यस्य चुल्लिकायां निधापयेत्॥
वराक्वाथेन सुपचेदतिवेलं खराग्निना। शोषयेत्सलिलं यत्नात् लौहकर्मविचक्षणः॥
(र.त. 20/26-27)

भानुपाक से प्राप्त लौह को जल से प्रक्षालित कर उसे एक हाण्डी में त्रिफला क्वाथ के साथ तीव्र अग्नि पर पाक करते हैं। जब क्वाथ सूख जाय तो इसे स्थाली पाक कहा जाता है।

त्रिफला क्वाथ निर्माण विधि–

स्थालीपाके त्रिगुणिता वरा, षोडाशिकं जलम्। अष्ट भागावशिष्टञ्च क्वाथमानं विधीयते॥
(र.त. 20/28)

लोहे से 3 गुना त्रिफला + 16 गुना जल $\xrightarrow{\Delta}$ 1/8 शेष। इस प्राप्त क्वाथ को स्थाली पाक हेतु प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त जिस रोगनाशक हेतु प्रयोग करना हो उस रोगनाशक औषधि क्वाथ भी प्रयोग कर सकते हैं।

3. पुटपाक

रसादिभिर्भेषजानां खल्वे लौहं विमर्दितम्। पुटस्थं पच्यते यस्मात् पुटपाकस्ततः स्मृतः॥
(र.त. 20/31)

स्थालीपाक से प्राप्त लोहचूर्ण को खल्व की सहायता से विभिन्न औषधियों के स्वरस क्वाथ आदि की सहायता से पुट के द्वारा पाक करना पुटपाक कहा जाता है।

मृतलोह अमृतीकरण

द्विगुणे त्रिफला क्वाथे तुल्ये पिष्ट्वाऽप्ययोरजः। विपचेन्मध्यपाकेन सर्वव्याधिजरापहम्॥
(आ.प्र. 3/280)

लोह भस्म से 2 गुना त्रिफला क्वाथ में लोह भस्म को पीसकर मन्द आग में पचाने से इसकी अमृतीकरण होता है।

Probable physico chemical changes– After preparation of Bhasma the following changes were seen. The colour of Loha Bhasma is purple (Pakwa Jambuphala was obtained in their study done by Sarkar P.K et al.[1]

While Ash value 98.24%, water soluble 1.56% and Acid soluble 99.44% was found in their study done by M.L Rajendra Prasad et al.[2]

Fe_2O_3 was found in the XRD study of Lauha Bhasma[3]

Importance of temperature while processing– लोहे के शोधन हेतु निर्वाप विधि का सामान्य रूप से प्रयोग किया जाता है। इसमें लोहे को तप्त कर विभिन्न द्रवों में बुझाते है। जिसके हेतु लगभग 750^0C तापमान[4] की आवश्यकता होती है। लोहे के मारण हेतु प्रयुक्त गजपुट का तापमान 800^0C-1000^0C के रेंज में होता है।

लौह भस्म के प्रमुख योग–

मुण्डलौह	तीक्ष्ण लौह	कान्त लौह
1. मेहबद्धरस	तीक्ष्ण मुख रस	त्रैलोक्य चिन्तामणि
2. पित्तार्शहर रस	पित्तार्शहर रस	वडवानल रस
3. पित्तरोगन्तक रस	सर्वारोग्यवटी	मेहशत्रु रस
4. मदेभसिंह रस	राक्षस रस	कासीस वद्ध रस
5. —	पित्तरोगान्तक रस	महाविद्या वटी

1. Sarkar PK, Choudhary AK, Prajapati PK. Evaluation of Lauha Bhasma on classical analytical parameters–A pilot study. Ant.Sci of life. Vol : No. XVII (3) Jan Feb. March 2008. pp 24-30.
2. Rajendra Prasad, ML Shruti, Shekar Subramanya AR Pharmaceutical and Analytical Study on Lauha Bhasma. International Journal of Ayurvedic Medicine, 2010, 1(1), 48-59.
3. Bhargava SC, Reddy KR, Sastry GV. Identification studies of Lauha Bhasma by X-Ray Diffraction and X-Ray Fluorescence. Ayu. 2012 Jan; 33(1):143-5. doi; 10.4103/0974-852.100332.
4. Singh N. Reddy K.R. Pharmaceutical study of Lauha Bhasma Ayu. 2010 Jul; 31(3):387-90. doi:10.4103/0974-8520.77157.

Scanned with OKEN Scanner

Research updates

Study done by Sarkar, et al. on hematinic evaluation of Lauha and Mandura Bhasma on $HgCl_2$-induced Anaemia in rats show that both the Bhasma possess significant ($P<0.05$) hematinic and cytoprotective activity.[1]

Safety and toxicity study done on Tamra bhasma, Lauha bhasma and Yashada bhasma by Prajapati P.K. et al reveal no serious deleterious effects of these Bhasmas on the body function as a whole.[2]

Study done by Tiwari M.K. et al, the detailed Rietveld analysis of the measured XRD spectrum indicates that the pharmaceutical grade Fe Bhasma is primarily composed of the Fe_3O_4 magnetite phase.[3]

17. मण्डूर (Rust Iron)

पर्याय

मण्डूरं तु समाख्यातं किट्ट लोहभवं तथा। लोह किट्टं लोहमलं लोहोच्छिष्टञ्च तन्मतम्॥

(र.त. 20/124)

मण्डूर, किट्ट, लोहभव, लोह किट्ट, लोहमल, लोहोच्छिष्ट इसके पर्याय है।

Physical properties –

Nature	–	Black lumpy masses
Colour	–	Black
Streak	–	Black
Cleavage	–	None
Fracture	–	Conchoidal
Tenacity	–	Brittle but hard
Hardness	–	6 to 6.5
Sp. Gr.	–	3 to 3.8

प्राप्ति– मण्डूर आइरन तथा ताम्र के निष्कर्षण प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न हुआ by product है जो इन धातुओं के खानिजों से धातु निष्कर्षण प्रक्रिया के दौरान पैदा होता है। यह प्रगलन (Smelting) प्रक्रियाओं के स्थानों में Lump के रूप में प्राप्त होता है जिसे रस तरंगिणीकार ने भी लिखा है। मण्डूर में मुख्य रूप से आइरन होता है तथा अल्प मात्रा में

1. Sarkar P.K. Prajapati PK. Choudhary A.K et al Heamatinic evaluation of Lauha Bhasma and Mandura bhasma on $HgCl_2$-Induced Anemia in Rats. IJPS. 2007 Nov Dec pp 791-795.
2. Prajapati PK, Sarbar PK, Nayak SV, Joshi RD, Ravishankar B Safety and toxicity profile of some metallic preparations of Ayurveda.Anc Sci Life, 2006 Jan; 25 (3-4): 57-63
3. M.K. Tiwari, Arjun Singh, Ajay Khooha, UK Gautam. Structural Investigation of Ayurveda Lauha (Iron) Bhasma. Journal of Ayurveda and Integrative Medicine, Vol. 14, (2); 2023 pp-https://doi.org/10.1016/j.jaim.2023.100690.

ताम्र, सल्फर, लेड, जिंक आदि तत्व भी पाये जाते हैं।

भारत में मण्डूर खेतड़ी राजस्थान (500 वर्ष से ज्यादा पुराना) तथा अन्य स्थानों पर भी पाया जाता है।

भेद– लोह भेद से यह तीन प्रकार का होता है–

1. मुण्ड किट्ट
2. तीक्ष्ण किट्ट
3. कान्त किट्ट

ग्राह्य मण्डूर लक्षण

स्निग्धं गुरु दृढ़ं चैव कृष्णं कोटरवर्जितम्। जीर्ण नष्टपुरःस्थञ्च मण्डूरं ग्राह्यमुच्यते॥

(र.त. 20/126)

चिकना, भारी, कठिन, कृष्ण वर्ण को कोटर (छिद्र) रहित तथा पुराने नष्ट हुए शहरों के समीप पाया जाने वाला मण्डूर ग्राह्य होता है।

अग्राहयता

अधमं षष्टिवर्षीयं ततो हीनं विषोपमम्॥ (आ.प्र. 3/290)

60 वर्ष पुराना अधम होता है। इससे कम समय का मण्डूर विष समान होता है। अतः इसे नहीं लेना चाहिए।

शोधन

1. **अक्षङ्गारैर्धमेत्किट्टं लोहजं तद्गवां जलैः। सेचयेदक्षपात्रान्तः सप्तवारं पुनः पुनः॥ मण्डूरोऽयं समाख्यातश्चूर्ण श्लक्ष्णं नियोजयेत्।** (र.र.स. 5/150)

मण्डूर को बहेड़े के कोयले की अग्नि पर गर्म करके बहेड़े की लकड़ी से बने पात्र में रखे गोमूत्र में बुझाने से यह शुद्ध हो जाता है। इस प्रक्रिया को सात बार करना चाहिए।

2. **गोमूत्रैस्त्रिफला क्वाथ्या तत्क्वाथे सेचयेच्छनैः। लोह किट्टं सुसन्तप्तं यावज्जीर्यति तत्स्वयम्॥ तत्चूर्णं जायते पेष्यं मण्डूरोऽयं प्रयोजयेत्॥** (र.र.स. 5/151)

आठ गुना गोमूत्र में त्रिफला क्वाथ का निर्माण करते हैं। इस क्वाथ में लोह किट्ट (मण्डूर) को तपा कर बार-बार बुझाते हैं। इससे यह जीर्ण हो चूर्ण रूप में हो जाता है जिसे पीसकर चूर्ण कर लेते हैं।

मारण

1. **चूर्णीकृतं तु मण्डूरं त्रिफला क्वथिताम्भसा। सम्पेष्य सम्पुटे कृत्वा त्रिंशद्वारं ततः पुटेत्॥ एवं नाति चिरादेव रक्त चन्दन सप्रभम्। मण्डूरं जायते तूर्णं ततो योगेषु योजयेत्॥**

(र.त. 20/129-30)

शुद्ध मण्डूर चूर्ण को त्रिफला क्वाथ में मर्दन कर चक्रिका बनाकर सुखाकर सम्पुट कर गजपुट देते हैं। ऐसा 30

Scanned with OKEN Scanner

पर ऐसे में इसकी रक्तवर्धक सदृश लाल वर्ण की भस्म बन जाती है ।

2. कन्या रसेन सत्पूर्णं मर्दयित्वा पुटे पचेत् । एवं सप्तपुटैर्भस्म मण्डूरस्य प्रजायते ॥
(रसामृत 3/149)

शुद्ध मण्डूर चूर्ण को घृत कुमारी स्वरस से मर्दन कर पुट देते हैं । ऐसे सात पुट से मण्डूर की भस्म बन जाती है ।

Probable physico chemical changes– In their study done by Gawate Reshma P. et al on Mandur Bhasma shows that one sample of Bhasma was black in colour while two samples of Mandoor Bhasma were dark brown in colour. Loss on drying was 0.20%, 0.21% and 0.54% for Mb1, Mb2, Mb3 respectively. Total ash values were 33.14% 35.53% and 39.86% w/w for Mb1, Mb2 & Mb3. Iron content measured by AAS method was 57.32%, 55.62% and 50.76 % respectively.[1]

Study done by Malik SB on Mandura Bhasma, the XRD analysis shows that raw Mandura contained Fe_2SiO_4 while Mandura Bhasma contained Fe_2O_3 and SiO_2.[2]

Importance of temperature while processing– मण्डूर शोधन हेतु इसे रक्त तप्त करते है जो कि 630°C पर होता है तथा भस्म निर्माण हेतु औसत 850°C[3] प्रदान किया जाता है।

योग– 1. पुनर्नवा मण्डूर 2. मण्डूर वटक
3. त्रिफला मण्डूर 4. शतावरी मण्डूर
5. महायोगराज गुग्गुलु

Research update

In their study on the effect of Mandura bhasma on Lipolytic activities of liver, kidney and adipose tissue of albino rat during CCl_4 induced heapatic injury by Devarshi P. et al shows that treatment with Mandura bhasma prevented the Paraffin mediated and CCl_4 mediated changes in the enzyme activities. These results suggest the hepato protective role of Mandur bhasma during CCl_4 induced hepatic injury.[4]

---

1. Gawate,Reshma&kilor, Vaishali &Sapkal, Nidhi (2016). Physico-chemical characteristics and hepatoprotective activity of mandurbhasma. International Journal of Pharmacy and Pharmaceutical science.
2. Mulik Sachin B, Jha CB. Physico chemical characterization of an Iron based traditional medicine Mandura Bhasma. Anc. Sci. Life. 2011. Oct. Dec; 31(2):52-57. PMCID:PMC 3530268/ PMID:23284206.
3. Rajput, Dhirajsingh& Gokarn, Rohit, 2016). Analytical standardization of Mandura BhasmaCincinerated iron oxide). Journal ofIndian System of Medicine. 4.77-82.
4. Devarshi P, Kanase A. Kanase R. et al. Effect of Mandura Bhasma on lipolytic activities of liver, Kidney, adipose tissue of albino rat during CCl_4 induced hepatic injury. J. Bio Sci, vol. 10, Number 2, June 1986, pp. 227-234.

18. वंग (Tin)

पर्याय

वङ्गञ्च वङ्गकं रङ्गं रङ्गकं शुक्लोहकम् । कुरूप्यं त्रपुसञ्चैव त्रपु कीर्तितम् ॥
(र.त. 18/1)

वङ्ग, वङ्गक, रङ्ग, रङ्गक, शुक्लोह, कुरूप्य, त्रपु, त्रपुस तथा त्रपु ये सभी वंग के पर्याय है ।

प्राप्ति– वङ्ग (Tin) स्वतन्त्र (Native) रूप से नहीं पाया जाने वाला धातु हैं । यह विभिन्न प्रकार के खनिज से प्राप्त (Extract) किया जाता है । टिन के खनिज हमेशा Granite Rock से मिले हुए रहते हैं । कैसेटेराइट इसका प्रमुख खनिज है । वाणिज्यिक रूप से Tin की प्राप्ति इसी खनिज से होती है । टिन आक्साइड भारी होने के कारण खानों से प्राप्त 80% टिन Secondary deposits के रूप में प्राप्त होता है । आस्ट्रेलिया, चीन, दक्षिण अफ्रीका आदि देश तथा भारत में झारखण्ड में पाया जाता है ।

प्रमुख खनिज– 1. Cassiterite (SnO_2) – major
2. Cylindrite– minor
3. Canfieldife– minor

भेद

खुरकं मिश्रकञ्चेति द्विविधं वङ्गमुच्यते । (र.र.स. 5/153)

वङ्ग के दो भेद होते हैं–

1. खुरक वंग 2. मिश्रक वंग

ग्राह्य तथा अग्राह्य

खुरं तत्र गुणैः श्रेष्ठं मिश्रकं न हितं मतम् ॥ (र.र.स. 5/153)

उपरोक्त दोनों भेदों में खुरक वंग श्रेष्ठ तथा मिश्रक हितकर नहीं होता है ।

लक्षण

धवलं मृदुलं स्निग्धं द्रुतद्रावं सगौरवम् । निःशब्दं खुरवङ्गं, स्यान्मिश्रकं श्याम शुभ्रकम् ॥
(र.र.स. 5/154)

खुरकं वंग श्वेत, मुलायम, स्निग्ध तथा जल्दी पिघलने वाला (Melting point–231.93°C) तथा भारी होता है । यह वंग श्रेष्ठ तथा औषधि कार्य में प्रयुक्त करना चाहिए ।

मिश्रक वंग रंग में काला सफेद होता है कठिनता से पिघलने वाला तथा अन्य धातुओं से मिश्रित होता है ।

द्रावेऽतिकठिनं रूक्षं त्वन्य धातु विमिश्रतम् । धूसरं कठिनञ्चैव मिश्रकं वङ्गमुच्यते ॥
(र.त. 18/4)

Scanned with OKEN Scanner

शोधन हेतु वंग को तप्त कर तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में सात बार बुझाते है। ऐसा करने से वंग का सामान्य शोधन हो जाता है।

विशेष शोधन

1. द्रावयित्वा निशायुक्ते क्षिप्तं निर्गुण्डिकारसे। विशुद्धयति त्रिवारेण खुरवङ्गं न संशयः॥

(र.र.स. 5/156)

वंग को द्रवित कर उसे हरिद्रा युक्त निर्गुण्डी स्वरस में गिराकर जमा लेते हैं। ऐसा तीन बार करने से यह शुद्ध हो जाता है।

विमर्श– शोधन की इस विधि को ढालन (द्रवित कर उसे किसी द्रव में डालकर पुनः ठोस रूप करना) कहा जाता है।

2. खुराभिधानं खलु शुक्लोहं निधाय दर्व्यां भिषजो वरेण्यः।
चुल्लीगतञ्चाप्यथ गालयित्वा विशुद्धचूर्णोदकपूर्णगर्भे॥
गाढन्तु सच्छिद्रपिधानकेन क्षिपेत्समाच्छन्न मुखे तु कुम्भे।
इत्थं निषिक्तं भिषजाश्ववारं वङ्गं विशुद्धिं समुपैति नूनम्॥ (र.त. 18/8-9)

खुरक वंग को एक लौह दर्वी में लेकर उसे द्रवित करते हैं। तत्पश्चात् इसे पिठर यन्त्र में रखे चूर्णोदक में गिरा देते हैं। ऐसा सात वार करने से वंग शुद्ध हो जाता है।

चूर्णोदक– 2 रत्ती चूने को पाँच तोले जल में घोलने से चूर्णोदक का निर्माण होता है।

मारण

1. भल्लातैल संलिप्तं वङ्गं वस्त्रेण वेष्टितम्। चिञ्चापिप्पलपालाश काष्ठाग्नौ याति पञ्चताम्॥

(र.र.स. 5/162)

वंग के पतले पत्र को भल्लातक तैल से लिप्त कर उसे सूती वस्त्र से लपेट देते हैं। तत्पश्चात् इसे इमली, पीपल या पलाश के काष्ठ की अग्नि देते हैं इससे वंग की भस्म बन जाती है। इस प्रकार तीन या चार लघुपुट देने से वंग भस्म बन जाती है।

2. विमलं वङ्गमादाय चुल्लिकोपरिसंस्थिते। विनिक्षिपेत् कटाहे तु तत्तो बह्निं प्रदीपयेत्॥
विद्रुतं बङ्गकं ज्ञात्वा रसकर्म विशारदः। पादांशापामार्गचूर्णं स्वल्पं स्वल्पं मुहुमुहुः॥
निक्षिप्य लोहदण्डेन यत्नतः परिचालयेत्। वङ्ग भस्म भवेद्यावचूर्ण तावत्समापयेत्॥
शशीकृत्य ततो भस्म शरावेण पिधापयेत्। ततौ दिनैकपर्यन्तं यथा बह्निप्रदीपयेत्॥
ज्वलदङ्गार वर्णं स्याद् वङ्ग भस्म यथा ध्रुवम्। स्वतः शीतं ततो ज्ञात्वा वङ्गभस्म समाहरेत्॥
शङ्ख कुन्देन धवलं वङ्गभस्म भवेद ध्रुवम। इत्थं मृतं वङ्गकन्तु वीतशङ्कः प्रयोजयेत्॥

(र.त. 18/19-24)

एक लोहे की कढ़ाई को चूल्हे पर रखकर उसमें वङ्ग डालकर चुल्हे में अग्नि जलाकर वङ्ग को द्रवित करते हैं। जब वंग पिघल जाय तो वंग से चतुर्थांश मात्रा में लिये अपामार्ग पंचांग चूर्ण से थोड़ा सा डालकर फिर किसी लौह दर्वी से दृढ़ मर्दन करते हैं। यह प्रक्रिया तब तक करते हैं जब तक कि वंग भस्म न हो जाय। ऐसा करने से वंग द्रवित अवस्था को छोड़कर चूर्ण रूप (भस्म) में हो जाता है (इस प्रक्रिया को वंग जारण कहा जाता है)। अब इस वंग भस्म को एक शराव से ढककर तीव्र अग्नि देते हैं जब तक कि शराव लाल वर्ण का न हो जाय। इस स्थिति में अग्नि देना बन्द कर देते हैं। स्वांगशीत होने पर शंख/चन्द्रमा के समान श्वेत वर्ण की वंग भस्म निकाल लेते हैं तथा इसे प्रयुक्त करते हैं।

विमर्श– वंग भस्म निर्माण की इस प्रक्रिया को जारण कहा जाता है। इसमें निम्न 2 चरण होते हैं-

1. वंग जारण, 2. वंग मारण

यदि जारण पश्चात् कुछ भस्म होना शेष रह जाता है तो उसे मारण प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। घृतकुमारी स्वरस से मर्दन कर उसे लघुपुट की अग्नि देने से वंगभस्म श्वेत वर्ण की बन जाती है। वंग भस्म को क्षार मुक्त करने हेतु शास्त्र में इसे जल से प्रक्षालन करने का विधान है। क्षार शून्यता की परीक्षा निम्न विधि से की जाती है–

क्षारशून्यत्व विज्ञान भिषजां स्यात्कथं स्वतः। रसायनात्क्रमागण सर्व तदुपदिश्यते॥
रक्तं वर्णकपत्रं चेद्भावनाम्भसि संस्थितम्। सर्वथा नीलतां नैति क्षार शून्यं ततो वदेत्॥

(र.त. 18/34-35)

वंग को धोकर पृथक् किये जल में रक्तवर्ण का क्षारीयांश प्रदर्शक पत्र (Red Litmus Paper) को डालकर कुछ देर बाद देखते हैं। यदि वह कागज उस जल के संयोग से बिल्कुल भी नीले रंग का न हो जाय तो वंगभस्म क्षार मुक्त है ऐसा समझना चाहिए।

वंग भस्म का निर्माण हरताल तथा गन्धक आदि एवं क्षार आदि यथा अपामार्ग के संयोग से बनाया जाता है। हरताल गन्धक आदि द्वारा मारित वंग भस्म उष्ण तथा अपामार्ग, पिप्पल आदि द्वारा मारित वंग भस्म शीत होता है, यथा–

वङ्गं गन्धादियोगेन मारितं तूष्णतां व्रजेत्। क्षारादिना मृतञ्चेह शीततां याति निर्भरम्॥

(र.त. 18/45)

वंग भस्म का निर्माण टाट सम्पुट विधि से किया जाता है। इस विधि से निर्मित भस्म श्रेष्ठ मानी जाती है।

Probable physico chemical changes– The following physico chemical changes were found in their study done by Lagad CE et al.[1]

Sr.No	Parameter	Raw Vanga	Jarita Varga	Vanga Bhasma
1.	Total Ash (%)	99.14	99.5	99.09
2.	Acid insoluble ash (%)	92.39	90.04	83.09
3.	Water soluble ash (%)	0.97	2.82	4.56
4.	Tin (Sn)*	99.9(%)	74.4%	76.5%

* By acid digestion method, ICP-AES technique.

1. Lagad CE, Sawant RS, Tagade AN. Wadodkar DS. Physicochemical Characterization of Varga Bhans. IRJP 2013,4(2) 97-101

Scanned with OKEN Scanner

Importance of temperature while processing– वंग शोधन, जिसमें वंग को द्रवित कर चूर्णोदक में डालते हैं इस प्रक्रिया को डालना कहा जाता है। इस प्रक्रिया में वंग को द्रवित करने हेतु 232^{0}C तापमान की आवश्यकता होती है। कारण प्रक्रिया जिसमें कि शोधित वंग को एक लोहे की कड़ाही में द्रवित कर इसे अलग अलग स्थान अर्थात स्थान चूर्ण को थोड़ा-थोड़ा डालकर दर्वी की सहायता से दृढ़मर्दन करते हैं। इसमें तापमान के 600^0-700^{0}C बीच रहता है। वंग भस्म निर्माण हेतु 600^{0}C का तापमान एक घंटे तक देते हैं तब इस प्रकार 6 पुट वंग भस्म निर्माण हेतु प्रदान करते हैं।

योग– 1. त्रिवंग भस्म
2. स्वर्ण वंग
3. चिन्तामन्द रस
4. एकांगवीर रस
5. तालकेश्वर रस

Research updates

In the XRD study of Vanga Jarana peaks were identified as SnO_2 (Tin dioxide) and Sn (Tin) and $K_2Sn_2O_3$ (Potassium tin oxide). The strong peak corresponds to tin dioxide, few peaks corresponds to reduced metallic tin and potassium tin oxide peak is very low in intensity. In the XRD of Vanga Bhasma strongest peak is identified as SnO_2 with a small peak of $K_2Sn_2O_3$ which was followed from Jarana process*.

**To screen the toxic effects of Vanga Bhasma, an experimental study was carried out for a 10 days and it was found that Vanga Bhasma has no acute toxic effects on G.I.T. Pacreas and liver even in 1 gm/kg dose.

19. नाग (Lead)

पर्याय–

सीसकं शीषकं सीसं नागकं नागनामकम्। कुवङ्गकं कुरङ्गञ्च तथा सिन्दूरकारणम्॥
(र.त. 19/01)

सीसक, शीषक, सीस, नाग तथा नाग के सभी नाम, कुवंग, कुरंग तथा सिन्दूरकारण इसके पर्याय है।

स्रोत– नाग (Lead) मुक्तावस्था में बहुत कम या नहीं पाया जाता है। यह यौगिक के रूप में मुख्यतः गन्धक के साथ पाया जाता है। जिस कारण वर्गीकरण में इसे Chalophile के अन्तर्गत रखा गया है। इसके खनिज पृथ्वी के ऊपरी सतह पर ही पाये जाते हैं। नाग का द्रवणांक (Melting point) 327.46^{0}C होता है। इसके खनिज भारत में राजस्थान, तमिलनाडु, झारखण्ड, पंजाब तथा कश्मीर एवं विदेशों में मैक्सिको, संयुक्त राज्य अमेरिका, वर्मा आदि देशों में प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

नाग की खनिज– 1. गेलेना (Galena Pbs या Lead Sulphide)

2. ऐंग्लेसाइट (Anglesite–$PbSO_4$)
3. सेरूसाइड (Cerussite–$PbCO_3$)
4. बोलंगेराइट (Boulangerite–$Pb_5Sb_4S_{11}$)

भेद–

नागं च द्विविधं प्रोक्तं कुमारं समलं तथा। कुमारं रसकार्येषु योजनीयं गुणाधिकम्॥
(वृ.र.रा.सु. नाग प्रकरण P 80)

इसके 2 भेद होते हैं– 1. कुमार– रस कार्य में प्रयुक्त, श्रेष्ठ
2. समल– हीन होता है।

ग्राह्य लक्षण

द्रुतद्रावं महाभारं छेदे कृष्णसमुज्जवलम्। पूतिगन्धं बहिः कृष्णं शुद्धं सीसमतोऽन्यथा॥
(र.र.स. 5/170)

अग्नि में शीघ्र पिघलने वाला (M.P.-327.46^{0}C), अतिभारी काटने पर काले रंग का चमकदार, दुर्गन्ध युक्त तथा बाहर से देखने पर भी काला हो वह श्रेष्ठ नाग होता है। इससे विपरीत गुण वाला अच्छा नहीं होता है।

अग्राह्य लक्षण

बहिः शुक्लं भारहीनं रूक्षं छेदे च निष्प्रभम्। समलं कठिनद्राव सीसकं हेयमादिशेत्॥
(र.त. 19/3)

बाहर से देखने में श्वेत, हल्का, रूक्ष, काटने पर चमक रहित, मलयुक्त, देर से द्रवित होने वाला सीसा निकृष्ट होता है।

शोधन

सामान्य शोधन– नाग को तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में सात बार तप्त कर बुझाने से शोधन हो जाता है।

विशेष शोधन–

1. **सिन्दुवार जटा कौन्तीहरिद्राचूर्णकं क्षिपेत्। द्रुते नागेऽथ निर्गुण्ड्यास्त्रिवारं निक्षिपेद्रसे॥ नागः शुद्धो भवेदेवं मूर्च्छा स्फोटादि नाचरेत्॥** (र.र.स. 5/172-73)

नाग को द्रवित कर निर्गुण्डी स्वरस (जिसमें निर्गुण्डी मूल चूर्ण, रेणुका बीज चूर्ण तथा हरिद्रा चूर्ण नाग के 1/

---

* Hiremath R. Jha CB. Narang KK. Vanga Bhasma and Its XRD Analysis. Ancient Science of Life. Vol. 29, No. 4 (2010) pp. 24-28.

** Nagaraju V., Joshi D. Aryya N.C. Toxicity studies on Vanga Bhasma (Part I with special reference to G.I.T. Liver and Pancreas), Anceint science of life. Vol IV No 1 July 1984 pp 32-35.

Scanned with OKEN Scanner

16 भाग के बराबर मिला हो) में बुझाते है । ऐसा तीन बार करने से नाग शुद्ध होकर मूर्च्छा, स्फोट आदि दोष रहित हो जाता है । शोधन की इस प्रक्रिया को ढालन कहा जाता है । उपरोक्त शोधन प्रक्रिया को पिठर यन्त्र के द्वारा करना चाहिए ।

2. **सीसकं द्रावयेल्लोहदर्वीगतं स्वच्छ चूर्णोदके चाथ निर्वापयेत् ।**
पूर्वमार्गेण वै शेष कर्माचरेत् सीसकं सत्वरं याति शुद्धि परम् ॥ (र.त. 19/10)

सीसे को लौह दर्वी में द्रवित कर उसे चूर्णोदक में गिराते हैं । पुनः निकालकर द्रवित कर फिर उसे चूर्णोदक में गिराते है । पुनः निकालकर द्रवित कर फिर उसे चूर्णोदक में गिराते है । ऐसा सात बार करने से सीसा शुद्ध हो जाता है । इस प्रक्रिया को पिठर यन्त्र के माध्यम से करते है ।

मारण

सीसकं शुद्धमादाय कटाहे गालयेद्भिषक् । विशुष्काश्वत्थवल्कोत्थं समंचूर्ण विनिक्षिपेत ॥
स्वल्पं स्वल्पं मुहुश्चाथ लोहदर्व्या प्रचालयेत् । सीसभस्म भवेद्यावच्चूर्णं तावत्समापयेत् ॥
शशीकृत्य ततो भस्म शरावेण पिधापयेत । ज्वल्दङ्गारवर्णं स्यात्सीसभस्म यथा चिरम् ॥
स्वाङ्गशीतं ततोज्ञात्वा मृतं सीसं समाहरेत् । बहुशः क्षालयेत्तोयैः क्षारहीनं यथा भवेत् ॥
सीसतुल्यां रोगशिलां विमला तत्र निक्षिपेत् । निम्बूकवारिणा वापि काञ्जिकेनाथ पेषयेत् ॥
सम्पुटस्थं ततः कृत्वा पुटयेदतियत्नतः । इत्थं त्रिभिः पुटैरेव सीसकं मृतिमाप्नुयात् ॥
द्वितीयादि पुटे वैद्यस्तुल्यामेव शिलां क्षिपेत । इत्थं मृतं सीसकन्तु वीतशङ्कः प्रयोजयेत् ॥
भस्मसञ्जायते श्लक्ष्णं विशदं कज्जल प्रभम् । पक्षाघातादिकान् नागदोषान् नैव करोति च ॥

(र.त. 19/11-18)

उपरोक्त नाग मारण विधि 2 चरणों में पूर्ण है ।

1. नाग जारण 2. नाग मारण

नाग जारण

शुद्ध नाग को एक लोहे की कड़ाही में डालकर चूल्हे पर रखकर पिघलाते है । तत्पश्चात् इसमें पीपल वृक्ष त्वक्चूर्ण की धीरे-धीरे डालकर लौह दर्वी से मर्दन करते हैं । जब सीसा द्रवित रूप से चूर्ण रूप में हो जाय तो इसे एक मिट्टी के शराव से ढककर तीव्र अग्नि देते हैं । जब शराव रक्तवर्ण का हो जाय तो अग्नि देना बन्द कर देते हैं । स्वांगशीत होने पर इसे जल से प्रक्षालित कर क्षारमुक्त करते हैं ।

मारण– उपरोक्त विधि से प्राप्त नाग में समभाग शुद्ध मनःशिला डालकर नींबू स्वरस या काञ्जी से मर्दन कर टिकिया बनाकर पुट (लघुपुट) देते हैं । ऐसा तीन पुट देते हैं । प्रत्येक पुट में मनःशिला प्रयुक्त करते हैं । इस प्रकार निर्मित भस्म कज्जल सदृश होती है तथा इसे पक्षाघात आदि रोग में प्रयुक्त कर सकते हैं ।

शिलया रविदुग्धेन नागपत्राणि लेपयेत् । मारयेत्पुटयोगेन निरूत्थं जायते तथा ॥

(र.र.स. 5/184)

नागपत्र पर अर्कदुग्ध की सहायता से मनःशिला का लेप बनाकर लगाते है । तथा उसे पुट देते है । इस प्रकार उस पुट देने से मनःशिला की निरूप भस्म बन जाती है ।

Probable physico-chemical changes– The following physico chemical values after preparation of Bhasma were obtained in their study done by Verma A. et al.*

Sr. No.	Parameter	Naga Bhasma (NBAD)			Naga Bhasma (NBAS)		
		I	II	II	I	II	I
1.	Loss on drying at 105^0C	00.48	00.39	00.32	00.24	00.19	00.14
2.	Ash Value	99.95	99.90	99.90	99.90	99.95	99.85
3.	Acid insoluble ash	06.4	05.98	05.62	16.58	16.71	16.45
4.	pH	8.29	8.22	8.87	6.12	6.46	6.34

NBAD = Naga Bhasma prepared with Latex of C. Procera

NBAS = Naga Bhasma prepared leaf juice of C. procera.

Verma A, Bedarkar P., Galib Patgir BJ, Prajapati PK. Standardization of Naga Bhasma prepared by two different Bhavana dravya. J phytopharmacol 2016;5(5):208-214.

Importance of temperature while processing– ढालन प्रक्रिया का प्रयोग नाग का शोधन करने में किया जाता है। इस प्रक्रिया में नाग को द्रवीभूत करने हेतु 325^0C तापमान की आवश्यकता होती है। जो कि नाग धातु (Pb) का Melting point है। नाग भस्म निर्माण हेतु 600^0C के आसपास की तापमान की आवश्यकता है। अतः इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु नाग का जारण विभिन्न द्रव्यों द्वारा किया जाता है। जारण करने के पश्चात् जब यह 325^0C के ऊपर के तापमान देने पर भी नहीं द्रवित होता है तब इसका मारण किया जाता है।

योग–
1. त्रिवंग भस्म
2. आन्त्रशोषान्तक रस
3. वृहत् नृपतिवल्लभ रस
4. एकांगवीर रस
5. नवरत्नराजभृगांक रस

Research updates

Study done by Singh S.K. et al on Naga Bhasma shows that the prepared Naga Bhasma, by following the reference of Ananda Kanda 2/6/25-28, contains lead in nano-crystallin (~60 nm) range in lead sulphide form (Pb^{+2}) associated with the organic contents and different nutrient elements.

Scanned with OKEN Scanner

Naga Bhasma prepared was found to be totally safe in histopathology study on rats of a dose of 5mg/100g/day.*

Naga Bhasma has several variants : black, white, yellows red and green, prepared by using different accompaniments. These may differ from each other in composition. Plumbous oxide (PbO) is yellow. Lead sulphide (PbS) in black, plumbic oxide is purple brown in colour. PbO is diamorphy in yellow and red form.**

20. यशद (Zinc)

पर्याय

यशदं यसदञ्चैव जशदं जसदं तथा। रीतिहेतुः खर्परजं समाख्यातं भिषग्वरैः॥
(र.त. 19/94)

यशदं रङ्गसंकाशं रीतिहेतुश्च तन्मतम्। (आ.प्र. 3/181)

यशद, यसद, जशद, जसद, रीतिहेतु, खर्परज, रंगसंकाश यशद के पर्याय हैं।

स्रोत

जिंक के अयस्क (ore) 2 प्रकार के deposit रूप में मिलते हैं। पहला Rakes के रूप में जो कि Thin vein कहे जाते हैं। दूसरा Secondary deposit के रूप में जो कि Primary mineral vein के weathering के परिणाम स्वरूप निर्मित होते हैं। यशद के खनिज भारत में झारखण्ड, राजस्थान, पंजाब, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश आदि राज्यों में पाये जाते हैं।

जिंक के खनिज- 1. कैलामाइन (Calamine-$ZnCO_3$)
2. स्मिथ स्टोनाइट (Smithstonite)
3. जिंक ब्लेन्ड (ZnS Zinc Suphide)
4. जिंकसाइट (Zincite ZnO)
5. हेमीमारफाइट (Zinc Silicate)

ग्राह्य लक्षण

छेदे समुज्जवलं स्निग्धं मृदुलं निर्मलं तथा। द्रुतद्रावं महाभारं यशदं ग्राह्यमुच्यते॥
(र.त. 19/95)

* Singh SK, Gautam DNS, Kumar M, Rai SB. Synthesis, characterization and Histopathological study of a lead-Based India Traditional Drug : Nag Bhasma. Indian J. Pharm. Sci; 2010, 72(1):24-30.

** Patgiri DJ, Rajput Dhiraj Singh Summer Singh. A brief review of Naga (Lead) through Ayurvedic literature. J. Res. Educ. India. Med. 2013; vol. XIX (1-2) 49-59.

जो यशद काटने पर चमकदार, स्निग्ध, मूलायल, साफ, जल्दी से पिघलने वाला (M.P.-419.5^{0}C) अत्यन्त भारी ऐसे लक्षणों वाला यशद ग्राह्य होता है।

विमर्श– वंग, नाग, तथा यशद तीनों हेतु द्रुतद्राव शब्द का प्रयोग किया गया है जो कि स्वर्ण, रजत आदि धातुओं की तुलना में इसके कम द्रवणांक का होना है।

अग्राह्य लक्षण

कठिनं कठिनद्रावं रूक्षं रूक्षप्रभं लघु। मलिनं यशदं यत्तु तदग्राह्यं प्रकीर्तितम्॥ (र.त. 19/96)

जो यशद कठिन (मोड़ने पर), देर से पिघलने वाला, रूक्ष तथा रूक्ष चमक युक्त गन्दा हो ऐसा यशद अग्राह्य होता है।

शोधन

सामान्य शोधन–यशद को तिल तैल, तक्र, गोमूत्र, कांञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में सात-सात बार तप्त कर बुझाने से यशद का सामान्य शोधन हो जाता है।

विशेष शोधन–

जात्यं यशदमादाय लोहदर्व्यान्तु विन्यसेत्। तीव्राग्निना तु विद्राव्य चूर्णवारिप्रपूरिते॥
सच्छिद्रेण पिधानेन पिहितास्ये घटे क्षिपेत्। सप्तवारं प्रयत्नेन यशदं शुद्धिमाप्नुयात्॥
(र.त. 19/98-99)

उत्तम यशद को लोह दर्वी में तीव्राग्नि पर द्रवित कर पिठर यन्त्र के माध्यम से चूर्णोदक में गिराते हैं। ऐसा सात बार करने से यशद का शोधन हो जाता है।

मारण–

यशदं विमलं न्यस्य कटाहे गालयेद्भिषक्। अपामार्गस्य चूर्णञ्च स्वल्पं स्वल्पं मुहुर्मुहुः॥
विनिक्षिपेत भिषग्वर्यो लोहदर्व्याथ चालयेत्। भस्मयावद् भवेत सम्यक् चूर्णं तावत् समापयेत्॥
राशीकृत्य ततो भस्म शरावेण विधापयेत्। ज्वलदङ्गारवर्णं स्याद्यशदं तु यथा चिरम्॥
तथा प्रदीपयेदग्निं दिनमेकं भिषक्तमः। स्वतः शीतं ततो ज्ञात्वा यशदं मृतमाहरेत्॥
(र.त. 19/112-15)

शुद्ध यशद को लोहे की कढ़ाही में डालकर अग्नि पर द्रवित करते हैं। तत्पश्चात् इसमें थोड़ा-थोड़ा अपामार्ग पचांग चूर्ण डालकर लोहे की दर्वी से मर्दन करते हैं। यह तब तक करते हैं जब तक कि यशद चूर्ण रूप में न हो जाय। जब यह चूर्ण हो जाय तो इसे एक मिट्टी के शराब से ढककर तीव्र अग्नि देते हैं। जब इस शराव का वर्ण रक्त हो जाय तो इसे अग्नि देना बन्द कर देते हैं। जब यह स्वांगशीत हो जाय तो इसे कढाही से निकालकर यशद भस्म ग्रहण करते हैं।

यशद विशुद्धमादौ विनिधाय वै कटाहे। अति तीव्र बह्नियोगात् खलु गालयेन्निकायम्॥
दृढनिम्बदण्डदर्व्या परिचालयेत्प्रयत्नात्। सुमृतं ततो विलोक्य त्ववतारयेत्कटाहम्॥
विमलं प्रदाय तालं चरणाशिकं रसज्ञः। खलु पेषयेत्प्रयत्नात् पुटवित पुटेत पुटस्थम्॥

Scanned with OKEN Scanner

शीत्यानद्या तु यशदं मृत्तिमेति निर्विशेषाम्। विविधानुपानयोगात् वितरेतु वीतशङ्कः॥
(र.त. 19/108-111)

शुद्ध यशद को एक कड़ाही में तीव्र अग्नि पर द्रवित करते हैं। तत्पश्चात् इसे एक नीम के दण्ड से दृढ़ मर्दन तब तक करते हैं जब तक कि यह चूर्ण रूप न हो जाय। तत्पश्चात् इसे चूर्ण से चतुर्थांश मात्रा में हरताल मिलाकर पुट देते हैं। इस प्रकार यशद भस्म निर्मित हो जाती है। इस यशद भस्म को विभिन्न अनुपान के साथ विभिन्न रोगों में प्रयुक्त करते हैं।

Probable physico chemical changes

Study done by Pareek et al on Yashada Bhasma, physical parameters values were found as total ash for Bhasma was 99.76%, Acid insoluble ash 46.10%, Water soluble ash 1.66 and loss on drying 0.01%. XRD result of raw metal shows the presence of crystallite zinc metal while pattern of Yashada Bhasma shows hexagonal ZnO (Zincite) crystalline phase.[1]

Importance of temperature while processing

यशद का melting point 419.5^{0}C होता है। अतः शोधन करते समय इतने तापमान की आवश्यकता होती है जिससे कि यशद को द्रवित कर उसे चूर्णोदक या अन्य द्रव में निक्षिप्त किया जा सके।

अपने एक अध्ययन में Jadar PG., Bhojashettar S. et. al का ने पाया कि 700-900^{0}C का तापमान 3 घंटे तक प्रदान करने से यशद की भस्म 2 पुट में बन जाती है। इसे भस्म के निर्माण हेतु पारद तथा गन्धक का प्रयोग किया गया।[2]

योग–
1. त्रिवंग भस्म
2. पारदादि वटी
3. यशदामृत मलहर

Research updates

1. Various Marana Dravya are used for the preparation of Yashada Bhasma. Parada as well as Hartala are used for the Marana of Yashada. In their study done by Kundilkrao IR et.al it was found that Parad Marit Yashad Bhasma contains splaerite (ZnS) as major phase while Zincite (ZnO), Zinc Oxide as minor phase whereas Hartala Marita Yashad Bhasma contains Zincite (ZnO) as major phase while minor phase as Sphalerite (Zns) in

1. Parrek, A. Bhatnagar N., Physico-chemical characterization of traditionally prepared Yashada Bhasma. Journal of Ayurveda and Integrative Medicine 11 (2020) 228-235 http://doi.org/10.1016/j.jaim.2018.11.004.
2. Bhojashettar S. Jadar PG, Rao VN. Pharmaceutical study of Yashad Bhasma. Anc Sic Life. 2012. Jan; 31(3):90-4. doi:10.4103/0257-7941.103181.

the XRD study. The colour of Yashada Bhasma was bright yellowish white in case of Parad Marita while it was dark yellow in case of Hartal, Marita.[1]

Studies done on Yashad Bhasma by Aparna Chavaere et. al on bioaccumulation of Zinc in major organs like liver and kidney in Swiss Mice show that Bhasma did not cause any deleterious effects on kidney and liver as indicated by blood chemistry and SPECT studies (Single Photon Emission Computed Tomography)[2]

21. मुक्ता (Pearl)

परिचय तथा प्राप्ति– मोती, मुक्ता शुक्ति (Oyster) में बनता है तथा यहीं से प्राप्त होता है। Oyster शब्द विभिन्न फेमिली जो कि नमकीन जल (Salt water) के Marine या Brackish Habital में पाये जाने वाले Bivalve Molluscs के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं। कई प्रजातियों में ये Valve, highly calcified तथा अनियमित आकार के होते हैं। ज्यादातर Oyster तथा True oyster फेमिली Ostreoidea से सम्बन्धित होते हैं। Oyster के अन्दर पाया जाने वाले कीड़ा के बाहरी त्वचा से एक विशेष प्रकार का स्राव (Secretion) हमेशा होता रहता है। कभी-कभी Skin तथा Valve के बीच किसी प्रकार कोई Foreign particle के चले आने से इस कण के ऊपर उस स्राव के अनेक स्तर (Layer) बन जाते हैं। इस प्रकार बहुत सारे स्तरों के एक दूसरे के ऊपर बन जाने के कारण यह आकार मोती जैसा हो जाता है तथा इसे ही मोती कहा जाता है। विभिन्न स्तरों में प्रकाश किरणों के परावर्तन के कारण मोती चमकदार दिखता है। मोती की रसायनिक संगठन में कैल्शियम कार्बोनेट ($CaCO_3$) तथा कांचिआलिन $C_{30}H_{40}N_{2O}$ होता है। प्राकृतिक मोती के अतिरिक्त Cultured मोती का भी निर्माण होता है।

काठिन्य -3.5, आ.घ.-2.65-2.89।

Cultured pearl– ऐसा मोती जो जिसमें कण बाहर से Valve को खोलकर उसमें प्रविष्ट कराकर पुनः जल में छोड़ दिया जाता है। जिससे कुछ समय पश्चात् इसमें मोती का निर्माण हो जाता है। बाद में इसे शुक्ति (Oyster) से प्राप्त कर लिया जाता है। कल्चर तथा प्राकृतिक मोती में कोई विशेष भेद नहीं होता है।

प्राप्ति स्थान– श्रीलंका, जापान, चीन, आस्ट्रेलिया, इटली तथा भारत आदि देशों से मोती प्राप्त होती है। भारत में यह कच्छ की खाड़ी एवं अन्य समुद्र से प्राप्त होता है।

उत्पत्ति (योनि) के अनुसार रसग्रन्थों में इसके आठ स्रोत (योनि) बताये गये हैं–

1. Ingde Rajesh, Kundlikrao. Patanga Ravish Shams, Dhanurkar Santosh Ramchandra, Bakare Sunil Chandrakant. Preparation of Parad Yashad Bhasma and Hartal Marit Yashad Bhasma with their comparative analytical study. Int. J. Res. Ayurveda Pharm. 2013; 4(4):507-509.
2. Aparna Chavare & Praneeth, Chowdari & Sandipto, Ghosh & Priyanka, Pawar & Meena, Patkan & Suresh, Dakave & Vikram, Gota & Chandhari, Pradip & Chiplumkar, Shubhada & Shantaram, Kane & Suresh, A.K. & Bellare. Jayesh (2016). Safety and Bioactivity studies of Jasad Bhasma and its in-process intermediate in Swiss Mice. Journal of Ethnopharmacology. 197. 10.2016/j.jep.2016.06.048.

Scanned with OKEN Scanner

शुक्ति शङ्खो गजः क्रोडः फणी मत्स्यश्च दर्दुरः। वेणुश्चाष्टौ समाख्याताः सुज्ञैर्मौक्तिकयोनयः॥

(आ.प्र. 5/13)

1. शुक्ति, 2. शंख, 3. गज, 4. क्रोड (सुअर), 5. सर्पज, 6. मछली, 7. मेढक, 8. बांस ये आठ मुक्ता की योनियाँ हैं।

मोती के पर्याय

मुक्ता मुक्ताफलञ्चैव मौक्तिक मौक्तिकेयकम्। शुक्तिजं शौक्तिकेयञ्च शशिरत्नं शशिप्रियम्॥

(र.त. 23/63)

मुक्ता, मुक्ताफल, मौक्तिक, मौक्तिकेय, शुक्तिज, शौक्तिकेय, शशिरत्न तथा शशिप्रिय ये मोती के पर्याय है।

भेद– योनि भेद से मुक्ता के आठ प्रकार कहे गये हैं।

ग्राह्य मुक्ता लक्षण

ह्लादि श्वेतं लघु स्निग्धं रश्मिवन्निर्मलं महत्। ख्यातं तोयप्रभं वृत्तं मौक्तिकं नवधा शुभम्॥

(र.र.स. 4/13)

मन को प्रसन्न करने वाला, श्वेत, लघु, स्निग्ध, कान्तिवाला, निर्मल, बड़े आकार का पानी की आभावाला तथा गोल इन नव गुणों से युक्त मोती शुभ माना जाता है।

प्राकृतिक मोती परीक्षा

विमर्दितं शालितुषै गोमूत्रपटुना भृशम्। यत्रैति विकृतिं किञ्चित्तन्मौक्तिकम कृत्रिमम्॥

(र.त. 23/65)

जिस मोती को धान की भूसी से या गोमूत्र में लवण मिलाकर इससे रगड़ने पर उसकी चमक में कोई परिवर्तन न आये उसे प्राकृतिक मोती कहा जाता है।

अग्राह्य मोती लक्षण

दीर्घं पार्श्वकृशं रूक्षं त्र्यस्रं श्यामञ्च सव्रणम्। हतप्रभं क्षुद्रकायं मौक्तिकं हेयमीरितम्॥

(र.त. 23/66)

लम्बे आकार का एक तरफ मोटा एक ओर पतला, स्पर्श में रूक्ष, तिकोना श्याम वर्ण का, व्रण सहित, चमकरहित छोटा मोती अग्राह्य होता है।

शोधन– जयन्ती पत्र स्वरस से 1 प्रहर तक स्वेदन करने से मोती का शोधन हो जाता है।

मारण– 1. मनःशिला, गन्धक तथा हरताल एवं लकुच स्वरस से पुट देने पर मोती का मारण हो जाता है।

2. विमलं मौक्तिकं गव्यपयसा परिपेषितम्। त्रिधा लघुपुटे पक्वं मृतं स्याच्छशिसुन्दरम्॥

(र.त. 23/70)

शुद्ध मोती को गाय के दुग्ध की भावना देकर लघुपुट देते हैं। ऐसे तीन लघुपुट से श्वेत वर्ण की मोती भस्म बन जाती है।

Probable physico chemical changes– The various physico chemical values. for Mukta Bhasma as found by Lata Suman et al.* in their study are loss on drying, at 110^0C (w/w) 0.24%, specific gravity 1.0185, Acid insoluble ash (w/w) 0.34%. Total ash w/w 99.84% , water soluble ash w/w 8.31%, water insoluble ash w/w 91.39%. Calcium was 43.86% w/w and calcium oxide (both by AAS method) 61.36% w/w, while by XRF method calcium was 45.07% w/w.

XRD study shows that in raw Mukta and Mukta Pishti the major peaks are of $CaCO_3$ in Aragonite form while in Mukta Bhasma as calcite form. This change is due to heat given above the temperature of 400^0C.**

***Chemical composition of pearl.

Corbonate of lime	–	91-72%
Organic matter (animal)	–	5.94%
Water	–	2.23%
Loss	–	0.11%
		100.00

Effect of temperature while processing– Study shows that the chemical composition of the pearl and the shell of pearl oyster indicates that the pearl as well as the shell contain about 90 % of calcium carbonate and a few percent of concholin. XRD pattern indicate crystalline preparation of calcium carbonate from the pearl and shell materials. Calcite is known to form the most stable lattice of calcium carbonate while aragonite is less stable under usual crytallographic conditions. For aragonite crystal to be produced, therefore, certain special conditions should be given such as higher temperature, higher pH value of surrounding media, or a larger growing rate or crystals due to sudden supply of material.* So it may be concluded that during Shodhan process which is done on lower temperature no change in the form of calcium carbonate is occurred but during Maran form of calcium carbonate is changed.

---

* Suman Lata, Rudrambika S. Biradar. Pharmaceutic-Analytical study of Mukta Bhasma prepared in Godugdha. International Journal of Ayurveda and Pharma Research. 2015;3(7):56-60.

** S, S.R. (2015). Comparative study of muktabhasma&muktapishti with reference to their particle size. International Journal of Ayurvedic Medicine 6(1).

*** Biochemical studies on Pearl. VIII. Occurrence of Calcites, Aragonite and Dolomite in Pearl and Shell. ShoZo Tanaka, Hiroyukti Hatano and Osamu Itasaka vol. 33 No.2.

Scanned with OKEN Scanner

योग– 1. कस्तूरीभैरव रस (बृहत)
2. कुमार कल्याण रस
3. वसन्त तिलक रस
4. हिरण्यगर्भ पोट्टली रस
5. नवरत्नराज मृङ्गाक रस

Research updates

Study on Antiulcer activity of Mukta Bhasma in the experimental animals (Rats) by cold restraint stress induced ulcer model and Diclofenae induced ulcer model shows that Mukta Bhasma produced significant result (P<0.001) 57.53% and 59.18% at 60 mg/kg and 120 mg/kg dose level respectively, when compared with control. Result of this study also suggest that it possess significant gastro protective and antiulcer activity in lower doses of therapeutic range and its effect is not dose dependent.*.

22. प्रवाल (Coarl)

परिचय तथा प्राप्ति

Coral (प्रवाल/मूँगा) फाइलम सिनेडारिया (सीलेन्ट्रेटा) के Anthozoa वर्ग (Class) के समुद्री Invertebrates प्राणी है । ये जन्तु एक सघन कालोनी के रूप में रहते हैं । जिसके एक जन्तुप्राणी को Polyps कहा जाता है । इनके द्वारा उत्सार्जित $CaCO_3$ इनके संरचना को कठिनता प्रदान करता है । ये Polyp एक दूसरे से साधर्म्य (Identical) होते हैं । ये Polyp Sac जैसे जन्तु होते हैं जिनका व्यास मिली मीटर में तथा लम्बाई सेमी में होती है । ये आधार की तरफ एक Exoskeleton उत्सर्जित करते हैं । इस प्रकार ये एक के ऊपर एक कई पीढ़ियों तक इसे उत्सर्जित करते रहते है जिससे इनकी लम्बाई कई मीटर तक हो जाती है । इस प्रकार Coral Reef का निर्माण होता है । इनकी उत्पत्ति तथा वृद्धि हेतु विशेष प्रकार के जल तथा उष्णता की आवश्यकता होती है । इस कारण से इनकी प्राप्ति कुछ विशेष समुद्र में ही होती है । युरोप तथा अफ्रीका के बीच भूमध्यसागर तथा आस्ट्रेलिया के उत्तर में यह प्रवाल बहुतायत से पाये जाते हैं । भारतीय समुद्रों में कच्छ की खाड़ी से श्वेत प्रवाल प्राप्त किये जाते हैं ।

काठिन्य - 3.5 अ.घ.-2.6 से 2.7।

पर्याय

प्रवालक प्रवालाश्च भौमरत्नश्च विद्रुमम्। अब्धिजन्तुविशेषोत्थं तदेव परिकीर्तितम्॥

(र.त. 23/128)

प्रवालक, प्रवाल, भौमरत्न, विद्रुम, अब्धिजन्तु विशेषोत्थ प्रवाल (मूंगा) के पर्याय है ।

* Dubey N, Dubey Nidhi, Mehta RS, Salnja AK, Jain DK, Antiucler activity of a traditional peast preparation . Mukta bhasma. Research J. Pharm. Tech. 2(2):April June 2009 pp 287-290

भेद– प्रवाल के दो भेद माने गये हैं—

1. प्रवाल शाखा– लता या शाखा आकृति (ठोस)
2. प्रवाल मूल– मधुमक्खी के छत्ते जैसा (छेद युक्त)

ग्राह्य प्रवाल लक्षण

पक्वबिम्बफलच्छायं वृत्तायतमवक्रकम्। स्निग्धमव्रणकं स्थूलं प्रवालं सप्तधा शुभम्॥

(र.र.स. 4/17)

पके बिम्बी (कुन्दरू) फल के समान रंग वाला, गोल, आयताकार, सीधा, स्निग्ध खोखलापन रहित तथा मोटा प्रवाल इन सात गुणों से शुभ माना जाता है । आयुर्वेद प्रकाश ने लता समान प्रवाल श्रेष्ठ माना है—

बालार्क किरणारक्ता सागर सलिलोद्भवा लतायाऽस्ति। नत्यजति निजरूचिं निकषेधृष्टाऽपि साम्मृताजात्या॥

(आ.प्र. 5/91)

अग्राह्य प्रवाल लक्षण

पाण्डुरं धूसरं रूक्षं सव्रणं कोटरान्वितम्। निर्भारं शुभ्रवर्णञ्च प्रवालं नेष्यतेऽशुभम्॥

(र.र.स. 4/18)

पाण्डु या गन्दे वर्ण का, रूक्ष, व्रणयुक्त, कोटर युक्त हल्का श्वेतवर्ण का प्रवाल योग्य नहीं होता है ।

प्रवाल शोधन

जयन्तयाः स्वरसेनेह दोलायन्त्रे तु विद्रुमम्। यामैकं सुपरिस्विन्नं शुद्धिमायात्यनुत्तमाम्॥

(र.त. 23/131)

प्रवाल को जयन्ती स्वरस की सहायता से दोला यन्त्र के माध्यम से 1 याम तक स्वेदन करने से प्रवाल शुद्ध हो जाता है ।

प्रवाल मारण

विशोधितं विद्रुमं तु श्लक्ष्णचूर्णं तु कारयेत्। कन्याम्भसाऽथ सम्पेष्य शोषयेत् कृत चक्रिकम्॥
सम्पुटस्थं ततः कृत्वा त्रिवारं पुटयेद्भिषक्। एवं पुटत्रयैर्भस्म जायते शशि सुन्दरम्॥

(र.त. 23/134-35)

शुद्ध प्रवाल को श्लक्ष्ण चूर्ण करके घृतकुमारी स्वरस में मर्दन कर चक्रिका बनाकर शराव सम्पुट कर पुट देते हैं । ऐसा तीन पुट देने से प्रवाल की श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है ।

प्रवाल पिष्टी– शुद्ध प्रवाल को गुलाब जल से 21 दिनों तक दृढ़ मर्दन करने से गुलाबी रंग की पिष्टी बन जाती है ।

Probable physico chemical changes– The various physico chemical paramters of raw, Shuddha and Pravala Bhasma as well as of Pishti are as follows–

Scanned with OKEN Scanner

Sr.No.	Sample	pH	Loss on drying	Ash value	Acid insoluble Ash	Water soluble extractive	Alcohol soluble
1.	Praval Mula (Raw)	8.8	0.49	59.37	1.29	1.36	2.035
2.	Praval Shakha (Raw)	9.1	0.47	57.60	0.57	1.58	1.641
3.	Praval Mula (Shodhita)	9.3	0.45	61.49	1.31	2.40	1.98
4.	Praval Shakha (Shodhita)	9.4	0.39	58.44	0.71	1.92	1.15
5.	Praval Mula Bhasma	10.2	0.72	68.76	1.43	9.67	4.46
6.	Praval Shakha Bhasma	10.6	0.82	64.35	1.28	6.16	4.74
7.	Pravalmula Pishti	9.3	1.52	58.84	1.91	3.85	6.02
8.	Praval Shakha Pishti	9.7	1.14	56.66	1.83	8.20	8.20

Importance of temperature while processing– प्रवाल भस्म के निर्माण हेतु 800^0C^2 (30 मिनट तक) की आवश्यकता होती है जबकि शोधन हेतु स्वेदन करते है जिसका तापमान 90^0-110^0C के बीच होता है।

योग–

1. प्रवाल पंचामृत रस
2. रत्नगर्भपोट्टली
3. कस्तूरीभैरव रस (वृहत)
4. नवरत्न राजमृगांक रस
5. वृहत् वात चिन्तामणि रस

Research updates

Coral skeletons are composites of 97.5 w% aragonite ($CaCO_3$), 0.07 w%. organics and upto 2.5 w% water associated with organics[3].

1. Arushi K et al. A comparative analytical study of Praval Bhasma and Pisti w.s.r to Moola and Shakha. Int J. Ayu. Pharma Chem. Vol 2 Issue 1. 2015 pp 70-77.
2. Nageswar Rao, Dixit S.K. Standardization of Praval Bhasma Ancient Science of Life. Vol. No. 17(3) January 1998 pp 203-206.
3. Sun Chang-Yu et.al. From particle attachment to space-filling coral skeletons. PNAS. Dec. 1,2020, vol. 117. no 48.30159-30170 doi:10.1073/pnas.2012025117/-1 DCS supplemental.

23. वज्र (Diamond)

प्राप्ति– हीरा, Alluvial formation तथा Volcanic pipes (पूरी लम्बाई में Kimberlite से भरे हुए) तथा Igneous rock मुख्यतः Serpentine से संयुक्त, ऐसे स्थानों पर पाया जाता है ।

हीरा श्वेत वर्ण का अत्यन्त चमकदार रत्न है । रासायनिक दृष्टि से यह कार्बन होता है जिसमें कार्बन अणु (Atoms) का Crystal structure. Diamond cubic के रूप में होते हैं । कठिनता में यह संसार का सबसे कठिन द्रव्य माना जाता है । हीरे का कोई विशेष रंग नहीं होता है । सामान्य रूप से यह वर्णहीन होना है फिर भी पीले, हरे, लाल रंग का भी प्राप्त होता है । हीरे अत्यन्त चमकदार सम्पूर्ण परावर्तन प्रक्रिया के फलस्वरूप होता है । हीरा पारदर्शक (Transparent), अपारदर्शक (Opaque) तथा पारभासक (Translucent) तीनों प्रकार का पाया जाता है । वर्णहीन हीरा में केवल कार्बन होता है लेकिन वर्णयुक्त हीरे में सिलिकान, एल्यूमीनियम, वोरान, आयरन, मैग्नीशियम आदि तत्व पाये जाते हैं । हीरा ताप का उत्तम किन्तु विद्युत का अल्पवाहक होता है । ग्रन्थों में हीरे की उत्पत्ति दाधीचि ऋषि के अस्थियों से मानी गयी है ।

भारत में हीरा गोलकुण्डा (आंध्र प्रदेश), पन्ना (मध्य प्रदेश) विजयान गरम (कर्नाटक) के खानों से प्राप्त होता है । विदेशों में दक्षिण अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, ब्राजील आदि देशों से प्राप्त होता है ।

पर्याय

हीरको हीरकं हीरमभेद्य भिदुरं तथा। कुलिशं वज्रकं वज्रं तथोक्तं भार्गव प्रियम् ॥
(र.त. 23/5)

हीरक, हीर, हीरम, अभेद्य, भिदुर, कुलिश, वज्रक, वज्र तथा भार्गव प्रिय इसके पर्याय है ।

Identification

Colour Habit– Octahedral
Cleavage– Perfect
Lustre– Adamantine, Greasy
Streak– None
Tenacity– Brittle
Fracture– Irregular
Hardness– 10
Sp.Gr.– 3.5

भेद–

1. लिंग के आधार पर हीरा तीन प्रकार का होता है–

वज्र च त्रिविधं प्रोक्तं नरो नारी नपुंसकम् ॥ (र.र.स. 4/26)

1. नर वज्र
2. नारी वज्र
3. नपुंसक वज्र

Scanned with OKEN Scanner

2. वर्ण के आधार पर– वर्ण के आधार पर हीरा चार प्रकार का होता है ।

1. श्वेत, 2. रक्त, 3. पीत, 4. कृष्ण

3. जाति के आधार पर– जाति के आधार पर वज्र चार प्रकार का होता है ।.

ब्रह्मक्षत्रियविटशूद्रं स्वस्ववर्णफलप्रदम् । (र.र.स. 4/30)

1. ब्राह्मण, 2. क्षत्रिय, 3. वैश्य तथा शूद्र ये निम्न फलदायक होते हैं–

1. ब्राह्मण– रसायनार्थ
2. क्षत्रिय– रोगनाशक हेतु
3. वैश्य– धातुकर्म हेतु
4. शूद्र– वयः स्थापक तथा रोग शमनार्थ

नर, नारी तथा नपुंसक हीरे का लक्षण

अष्टास्त्रंज्ञाऽष्टफलकं षट्कोणमतिभासुरम् । अम्बुदेन्द्रधनुर्वारितरं पुंवज्रमुच्यते ॥
तदेव चिपिटाकारं स्त्रीवज्रं वर्तुलायतम् । वर्तुलं कुण्ठकोणाग्रं किञ्चिद्गुरु नपुंसकम् ॥

(र.र.स. 4/27-28)

पुंवज्र– आठ कोने, आठ फलक, छ कोण युक्त अत्यन्त चमकदार, इन्द्र धनुष के समान चमक वाला तथा हल्का (वारितर) हो उसे नर वज्र कहते हैं ।

स्त्रीवज्र– उपरोक्त लक्षणों से युक्त उसका आकार चपटा हो तो उसे स्त्रीवज्र कहा जाता है ।

नपुंसक वज्र– उपरोक्त लक्षणों से युक्त उसका आकार गोल, आयत कोण तथा कोने तीक्ष्ण न हो तथा कुछ भारी हो उसे नपुंसक वज्र कहते हैं ।

स्त्रीवज्र स्त्री को, पुरुष वज्र पुरुषों में तथा नपुंसक वज्र नपुंसक में प्रयोग किया जाता है । पुरुष वज्र को सभी में प्रयोग किया जा सकता है ।

ग्राह्य लक्षण

स्निग्धं विद्युद्विभं स्वच्छ मलेख्यं च विलेखनम् । तीक्ष्णं षट्कोणमष्टास्त्रं नात्यं हीरकमुच्यते ॥

(र.त. 23/6)

ऐसा हीरा जिसका स्पर्श चिकना, बिजली के समान चमकीला, स्वच्छ, स्वयं न काटे जाने वाला तथा शीशे को भी काट लेने वाला, तीव्र, छः कोण वाला तथा आठ फलक वाला श्रेष्ठ हीरा होता है ।

हीरा की परीक्षा

यन्निकाषफलके शिलातले घृष्यते न हि निकामघर्षितम् । लीलयैव दलयत्यधापरान् प्रद्वरं भिदुरमीरितं बुधैः ॥

(र.त. 23/8)

उत्तम हीरे को कसौटी पर या किसी दृढ़ पत्थर पर घिसने से यह बिल्कुल नहीं घिसता है बल्कि अपनी तेज धार से कसौटी आदि कठिन द्रव्यों को भी आसानी से काट देता है ।

अग्राह्य लक्षण

वर्तुलं मलिनं नीलं भूत्याभं स्फुटितं खरम् । स काकपदं रेखाद्वयं हेयं हीरकमादिशेत् ॥

(र.त. 23/07)

गोलाकार, गन्दा, नीले वर्ण का, राख की आभा वाला, फटा हुआ, खर, काक पद जैसा चिन्ह वाला, तथा अनेक रेखा युक्त हीरा आग्रह्य होता है ।

हीरे के दोष

बिन्दुः काकपदं यवः किल मलो रेखेति नाम्नोदिता । दोषाः पञ्च पवेरथात्र कथितो बिन्दुः समो बिन्दुना ॥

(आ.प्र. 5/32)

हीरे के 5 दोष होते हैं–

1. बिन्दु–

कृष्णो रक्त इति क्रमेण स पुनर्द्वेधा मतो वर्तुला । वर्ताकारभिदा ग्रहीतुरफलः शस्त्रो न सर्वाऽपि सः ॥

(आ.प्र. 5/32)

बिन्दु (जल के समान बूँद) कृष्ण तथा रक्त वर्ण का तथा गोल एवं चिपटे आकार का होता है । ऐसा हीरा निष्फल तथा अधम होता है ।

2. काकपद–

ज्ञेयं काकपदं तु काकचरमाकारं परीक्षकृता । वज्रे श्रीमति संस्थितं पुनरिदं धर्तुर्भवेन्मृत्युदम् ॥

जिस हीरे में कौअे के पैर सदृश चिन्ह दिखे । ऐसो हीरा धारण करने मृत्युकारक होता है ।

3. यव–

रक्तापीतसितासितच्छविभिदा ज्ञेयाश्चुर्धा यवाकारस्तत्र । यवः सितः खलु पवेः पूज्योऽपरे निन्दिताः ॥

(आ.प्र. 5/33)

लाल, पीला, श्वेत तथा काले रंग का यव के आकार की संरचना यव दोष कहलाती हैं । जिस हीरे में श्वेत बिन्दु हो वह उत्तम तथा अन्य अधम होते हैं ।

4. मल–

धाराकोणकमध्यसंस्थिततया त्रेधा मल्लो रत्नविद्ध्याख्यातः स पुनर्ग्रहीतुरनल व्याघ्रादि भीतिप्रदः ॥

हीरे के धार, कोण के मध्य में मल रहता है तथा इसके तीन भेद होते हैं । मलयुक्त हीरा धारण से अग्नि एवं व्याघ्र से भय रहता है ।

5. रेखा–

सव्यासव्यनिवासिनी तदपरा तत्र स्थिताच्छेदिनी च्छिन्ना चोर्ध्वगतिर्मतोर्ध्वमिति ता रेखाश्चत स्रो मतः ॥

(आ.प्र. 5/34)

वाम भाग से, दक्षिण भाग से, तीसरी रेखा को छेदन करके जानी वाली तथा चौथी रेखा को छेदन करके ऊपर

Scanned with OKEN Scanner

उसमें खनी से चार रेखा दोष हीरे में होते हैं । वाम रेखा उत्तम तथा अन्य तीन रेखा दुर्भाग्य कर होती है ।

हीरक शोधन

कुलत्थ कोद्रव क्वाथे दोलायन्त्रे त्रिपाचयेत् । त्र्याहीकन्द गतं वज्रं त्रिदिनं तद्विशुद्धयति ॥

(आ.प्र. 5/77)

त्र्याही कन्द में रखकर वज्र को कुलत्थ अथवा कोद्रव क्वाथ की सहायता से दोला यन्त्र में तीन दिन स्वेदन करने से हीरे का शोधन हो जाता है ।

हीरक मारण

त्रिसप्तवारं संतप्तं खरमूत्रेण सेचितम् । मत्कुणैस्तालकं पिष्ट्वा तद्गोले कुलिशं क्षिपेत् ॥
प्रध्मातं चाजिमूत्रेण सिक्तं पूर्वक्रमेण वै । भस्मीभवति तद्वज्रं शङ्खशीतांशुसुन्दरम् ॥

(आ.प्र. 5/83-84)

हीरे को 21 बार अग्नि में तप्त कर गर्दभ के मूत्र में बुझाते हैं । खटमल के रक्त से हरताल को कल्क बनाकर गोला बनाते हैं । इस गोले में हीरे को रखकर गजपुट देते हैं । इससे हीरे की शंख तथा चन्द्रमा तुल्य श्वेतवर्ण की भस्म बन जाती है ।

Probable physico chemical changes– The colour of raw Hirah stones shows mix coloured appearance, rough small chips and thermal conductivity while colour of Hiraka Bhasma is Malina Rakta and the compound shown in XRD study as Fe_2O_3.*

Effect of temperature while processing– हीरे (Diamond) का melting point 3550^0C तथा Boiling point 4830^0C होता है। हीरे को शोधन करने के उद्देश्य से इसे तप्त कर बुझाते है। Parekh DN et. द्वारा किये गये अध्ययन में हीरे को 500^0C-600^0C (बर्नर तापमान) पर गर्म कर इसे गुलाब अर्क में बुझाया गया। तथा इसी अध्ययन में हीरे की भस्म बनाने हेतु इसे 900^0C का तापमान, EMF द्वारा, दिया गया तथा इस तापमान को एक घंटे तक रखा गया। इस प्रकार कुल 60 पुट दिये गये तथा जो हीरे की भस्म प्राप्त हुई उसका वर्ण श्वेत था ।**

हीरक भस्म के प्रमुख योग– 1. कन्दर्पसुन्दर रस
2. नवरत्नराजमृगांक रस
3. वसन्त कुसुमाकर रस
4. त्रैलोक्यचिन्तामणि रस
5. रत्नगर्भ पोट्टली रस

* Zala upendra U. Rea K. Shankar, Prajapati PK, Vaishnav PU. A comparative Analytical study of Hiraka Bhasma (Diamond-Ash) IJLTEMAS: volume V; Issue 111, March 2016. pp 25-27.

** Parekh DN, Bopaliya DJ, Chudhary SY, Patgiri B.J. An exploration of the preliminary unit operative pharmaceutical process of Vajra Bhasma (Diamond ash). J Drug Res Ayurvedic Sci 2022;7:243-52.

Research update

Solid tumours i.e. Dalton's lymphoma generated in CD 1 mice when treated with Herak Bhasma (Ayu-ND), due to its immunostimulation it reduces tumour cell proliferation and indues apoptosis aided by the active participation of dendritic cells.*

24. कपर्द (Cowries)

पर्याय

वराटको वराटश्च वराटी च वराटिका । कपर्दकः कपर्दश्च कपर्दी च कपर्दिका ॥
बालक्रीडनकश्चापि चरो वर्यश्चराचरः । वराटकं वराटं च कपर्द च निगद्यते ॥

(र.त. 12/82-83)

वराटक, वराट, वराटी, वराटिका, कपर्दक, कपर्द, कपर्दी, कपर्दिका, बालक्रीडनक, चर, चराचर ये कौड़ी के पर्याय है ।

प्राप्ति– यह Phylum Mollusca के समुद्री प्राणी Large sea snails, marine का कवच (Shell) है

जिसका जन्तु इसी Shell के अन्दर रहता है । यह हिन्द महासागर मालदीव, श्री लंका, मलावार कोस्ट, तथा पूर्वी भारतीय समुद्री तट पर प्रचुर रूप से पाया जाता है । कौड़ी शेल चिकनी, चमकदार तथा अण्डाकार होती है । इसके बीच में दाँतदार खाँचा होता है ।

भेद– कौड़ी के दो भेद किये गये हैं–

1. वराटिका
2. वराट

वराटिका

**पीताभा ग्रन्थिका पृष्ठे दीर्घवृत्ता वराटिका । रसवैद्यैर्विनिर्दिष्टा सा चराचरसंज्ञिका ॥
सार्धनिष्कभरा श्रेष्ठा निष्कभारा च मध्यमा । पादोननिष्कभारा च कनिष्ठा परिकीर्तिता ॥**

(र.र.स. 3/130-131)

वराटिका के ग्राह्य लक्षणों में पीतवर्ण, जिसके पृष्ठ भाग पर ग्रन्थि हो तथा गोलाकार हो उसे वराटिका या चराचर कहते हैं । वजन के आधार पर यह तीन प्रकार की होती है–

$1^1/_2$ निष्क भार वाली– श्रेष्ठ

1 निष्क भार वाली– मध्यम

* Paladhi A. Rej A, Sarkar D. Singh R. Bhattacharya S., Sarkar PK, Kar PK, Manna PP and Hira SK (2022). Nanoscale Diamond-based formulation as an immunomodulator and potential therapeutic for Lymphoma. Front. pharmacol. 13:852065 doi:10.3389/fphar.2022.852065.

Scanned with OKEN Scanner

वराट

इससे भिन्न लक्षण वाली वराट कही जाती है/होती है ।

शोधन–

1. **वराटाः काञ्जिके स्विन्ना यामाच्छुद्धिमवाप्नुयुः ।** (र.र.स. 3/134)

2. **अम्लेन केनचिद्वापि दोलायन्त्रे विपाचिता । वराटी याम मात्रेण विशुद्धयति न संशयः ॥**

(र.त. 12/89)

कौड़ी को किसी अम्ल द्रव की सहायता से दोलायन्त्र के माध्यम से एव याम तथा स्वेदन करने से इसका शोधन हो जाता है ।

मारण–

अङ्गाराग्नौ स्थिता ध्याता सम्यक् प्रोत्फुल्लिता यदा । स्वाङ्गशीता मृता, तां तु पिष्ट्वा सम्यक् प्रयोजयेत ॥

(आ.प्र. 2/300)

अङ्गार की आँच पर रखकर धमन करने से यह लावे की तरह फूल जाती है तथा इसकी भस्म बन जाती है । स्वाङ्गशीत होने पर इसे अच्छी तरह पीसकर प्रयोग करते हैं ।

Probable physico chemical changes– Physico chemical evaluation of Varatika Bhasma shows that it has pH (1% solution) 10.30, loss on drying (%)0.6566, total ash (%) 96.5590, water soluble ash (%) 3.8001 and acid insoluble ash (%) 1.2779. Raw Varatika contains total calcium (%) as 15.63 while Varatika Bhasma as 19.32%. XRD studies confimed the formation of more crystalline compound may be due to impact of Shohan and Marana process.*

Importance of temperature while processing– वराटिका का शोधन स्वेदन विधि से किया जाता है। इसके हेतु 90-110^{0}C तापमान की आवश्यक होती है। जबकि भस्म निर्माण 650^0-700^{0}C तापमान की आवश्यकता होती है। ज्यादा तापमान होने पर चक्रियायें कठिन हो जाती है। आयुर्वेद प्रकाश में इसे अंगार अग्नि पर रखकर फुला लेने के लिए ही कहा गया है तथा जब यह स्वांगशीत हो गया तो इसे पिष्ट कर रख लेते हैं।

योग–

1. ग्रहणी कपाट रस
2. अग्नि कुमार रस
3. प्रवाल पंचामृत रस
4. राजमृगाङ्क रस
5. लोकनाथ रस

* Devanathan. R, Rajalakshm and Brindha P, Chemical Standardization studies on Varatika Bhasma. Int. J Curr Pharm Res, Vol 2, Issue 4, 12-16.

Research update

Study on Varatika Bhasma on albino rats for its ulcer protective effects show significant result in lower does when compared to Sucralfate. Dose was given Sucralfate 1 gm 6 hourly and Varatika bhasma 250 mg twice daily. In ulcer index and histopathology studies there were less/no ulcers found in the group treated with Varatika Bhasma in comparison with sucralfate and control group.*

Structural and physicochemical analysis showed that cowries shells were mainly composed of aragonite crystals which were converted into poorly crystilline B-type carbonate apatite once soaked at 37^{0}C in simulated body fluid for 7 day.**

25. शुक्ति (Oyster shell)

पर्याय

शुक्तिश्च शुक्तिका चापि मुक्तामाता तथैव च । मुक्तागृहं महाशुक्ति मौक्तिक प्रसवा च सा ॥
मुक्ताशुक्तिस्तथा मुक्तागेहं मौक्तिकमन्दिरम् । (र.त. 12/64-65)

शुक्ति, शुक्तिका, मुक्तिमाता, मुक्तागृह, महाशुक्ति, मौक्तिक प्रसवा, मुक्ताशुक्ति, मुक्ताकगेह तथा मौक्तिक मन्दिर मुक्ताशुक्ति के पर्याय है ।

जलशुक्ति के पर्याय

जलशुक्तिर्वारिशुक्तिः कृमिभूीःक्षुद्र शुक्तिका । शम्बूका जलडिम्बश्च पुटिका तोयशुक्तिका ॥

(आ.प्र. 2/328)

जलशुक्ति, वारिशुक्ति, कृमिभू, क्षुद्रसुक्तिका, शम्बूका, जलडिम्ब, पुटिका तथा तोय शुक्तिका जलशुक्ति के पर्याय है ।

प्राप्ति– शुक्ति, मोलस्का फाइलम के वाइवाल्विया (Bivalvia) वर्ग के जन्तुओं का समूह है जो कि सामान्य रूप से समुद्री जल या खारे जल में पायी जाती है । इसमें दो चम्मच के आकार की संरचना आपस में जुड़ी होती है जो कि Calified होती है । तथा इसके अन्दर जीव पाया जाता है । जिसमें से मोती की प्राप्ति होती है ऐसी शुक्ति को मुक्ता शुक्ति या Pearl oyster कहा जाता है । विभिन्न प्रकार के शुक्ति (Oyster) निम्न है–

1. Saddle oyster
2. True oyster

* Bhatti P. From the proceedings of insight Ayurveda 2013, comibatore 24th and 25th may 2013. OAO_2.09. Evaluation of Varatika Bhasma for its ulcer protective effect on albino rats. Anc. Sci Life. 2013 Jan; 32 (Suppl 2): 515. doi:10.4103/0257-7941.123829.

** Abilal N, Lemaire F, Bercu NB, Sayen S, Gangloff SC, Khalfaoui Y, RammalnKerdjoudj H. Cowries derived aragonite as raw biomaterials for bone regenerative medicine.Mater Sci Eng c mater Biol Appl. 2019.1; 94: 894-900

Scanned with OKEN Scanner

3. Windowpane oyster
4. Dumvasan oyster
5. Feather oyster
6. Spiney oyster

शुक्ति विभिन्न प्रकार के आकृति जैसा गोल तश्तरी जैसी, चम्मच की आकृति में त्रिकोण आदि विभिन्न रूप में पायी जाती है। बहुत सी ऐसी शुक्तियाँ एकत्र हो Reef का भी निर्माण करती है।

भेद– शुक्ति के 2 भेद होते है–

1. मुक्ताशुक्ति
2. जलशुक्ति

शोधन–

1. जयन्त्याः स्वरसैनैव शुक्तिं दोलगतां पचेत्। यामैकेनैव नियतं शुक्तिः शुद्धिमावाप्नुयात्॥
(र.त. 12/65)

शुक्ति को 1 याम (3 घण्टे) तक जयन्ती स्वरस में दोलायन्त्र की सहायता से स्वेदन करने से इसका शोधन हो जाता है।

2. अम्लेन केनचिद्वापि दोला यन्त्रेण यत्नतः। शुक्तिकां पाचयेद्धीमान् शुद्धिमायात्यनुत्तमाम्॥
(र.त. 12/66)

किसी अम्ल नींबू आदि से 1 याम तक दोलायन्त्र विधि से स्वेदन करने से इसका शोधन हो जाता है।

शुक्ति मारण

शुक्तिकां खण्डशः कृत्वा सम्पुटस्थां ततः पुटेत्। हिमकुन्देन्दुसङ्काशां शुक्तेर्भूतिं समाहरेत्॥
(र.त. 12/67)

शुद्ध शुद्धि को टुकड़े कर शराव सम्पुट कर पुट (गजपुट) की अग्नि देते हैं। ऐसे 2-3 पुट से शुक्ति की श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है। पुट में मर्दन हेतु घृत कुमारी स्वरस तथा अगले पुट में नीबू स्वरस का प्रयोग करते हैं।

Propable physico chemical changes– Mukta Shukti Bhasma prepared by Kumari Bhavana has ash value 61.82%, acid insoluble ash 1.21% and loss on drying at 110^0C was 0.042% and the colour of bhasma was olyhmpus white. The pH of Bhasma was 9 when Mukta Shukti Bhasma is prepared by Bhavana of Kumari Swarasa then Bhasma is in calcite form while Bhavana with Jala leads to formation of calcium oxide hydrate form.*

* Biradar MH Shankar Gowda, Madhava Diggav. Pharmaceutical Analytical study of Mukta Shukti Bhasma, Journal of Ayurveda and Integrated Medical Sciences. July-Aug. 2017. Vol 2. Issue 4. pp.89-99. DOI:10.21760/jaims. v2i4, 9333.

Importance of temperature while processing– The average temperature for Jala Shukti and Mukta Shukti Bhasma preparation is around 850^0C. while for Shodhan it is between 90^0 to 110^0C.

योग– 1. प्रवाल पंचामृत रस
2. बडवानल रस
3. ग्रहणी शार्दूल रस
4. विषमज्वरान्तक रस

Research updates

Oysters are rich in selenium, which supports a number of cellular functions including heavy metal detoxification. Oyster shells mainly consist of calcium carbonate ($CaCO_3$;95%) in addition to a small propartion of organic matrix protein (~0.1-5%) which are also called shell/skeleton proteins. Calcined oyster shell powders has attracted considerable attention due to its biocompatibility, antimicrobial and biocidal activities. Recent in vitro and in vivo studies also suggests that nacre is a biocompatible and biodegradable material with osteoinductive, osteointegrative and osteoconductive properties.*

26. शंख (Conch shell)

यह समुद्र में पैदा होने वाला फाइलम मोलस्का के प्राणी का बाह्य कवच है जिसके अन्दर इसका प्राणी रहता है। समुद्र के लहरों द्वारा यह जीवित अवस्था में या मृत अवस्था में तट के किनारे आ जाता है जहाँ से मछुवारे लोग इसे एकत्र कर लेते हैं। अन्दर के प्राणी को पानी में उबाल देते हैं जिससे यह मृत हो जाता है और आसानी से बाहर निकल जाता है। बचा हुआ कठिन पृष्ठ भाग शंख कहलाता है। यदि इस पर काई आदि लगी हो तो इसे साफ कर लेते हैं। रासायनिक दृष्टि से यह कैल्शियम कार्बोनेट होता है। यह समुद्र के तटीय भागों में सर्वत्र पाया जाता है।

पर्याय

शङ्खस्तु शङ्खकः कम्बुस्त्रिरेखश्च समुद्रजः। सुनादो दीर्घनादश्च कम्बोजश्च प्रकीर्तितः॥
(र.त. 12/01)

शङ्खः समुद्रजः कम्बुः क्षुद्रः शङ्खनकः स्मृतः। (आ.प्र. 2/255)

शंख, शंखक, कम्बु, त्रिरेख, समुद्रज, सुनाद, दीर्घनाद, कम्बोज, कम्बु, छुद्र शंखनक इसके पर्याय है।

भेद– द्विधा स दक्षिणावर्तो वामावर्तः शुभेतरः। (आ.प्र. 2/259)

1. दक्षिणावर्त
2. वामावर्त

* Ulagesan S, Krishnan S, Nam T-J and Choi Y-H (2022) A review of Bioactive compounds in Oyster Shell and Tissues. Front. Bioeng. Biotechnol. 10:913839. doi : 10.3389/fboil.2022.913839.

Scanned with OKEN Scanner

1. दक्षिणावर्त– दक्षिणावर्तशङ्खस्तु प्रशस्तो देवपूजने। त्रिदोषघ्नो निधिश्चापि स्मृतो दारिद्र्यनाशनः ॥
(र.त. 12/04)

दक्षिणावर्त शंख देवपूजन हेतु प्रशस्त होता है। यह त्रिदोषघ्न तथा दारिद्र रोग करने वाली निधि होती है।

2. वामावर्त– वामावर्तोभिधः शङ्खः सर्वत्र सुलभो मतः। अतः स एव वैद्यस्तु मारणार्थं प्रयुज्यते ॥
(र.त. 12/05)

वामावर्त शंख सर्वत्र सुलभ होता है तथा मारण हेतु यह प्रयुक्त होता है।

ग्राह्य शंख लक्षण

व्रतः स्निग्धः सूक्ष्ममुखो निर्मलश्चेन्दुसुन्दरः। दीर्घकायो गुरूश्चापि शङ्खः श्रेष्ठः प्रकीर्तितः ॥
(र.त. 12/02)

गोलकार, चिकना, छोटे मुखवाला, स्वच्छ, चन्द्रमा समान वर्ण, बड़े आकार वाला, भारी शंख औषधि कार्य हेतु श्रेष्ठ होता है।

शंख शोधन

शङ्खन्तु खण्डशः कृत्वा पोट्टल्यां स्थापयेद्भिषक। दोलायन्त्रे चतुर्यामं पचेज्जम्बीरवारिणा ॥
प्रक्षालयेच्छङ्ख खण्डान् प्रतप्तेनाम्भसा ततः। इत्थं नातिचिरादेवं शङ्ख शुद्धिमवाप्नुयात् ॥
(र.त. 12/6-7)

शंख के टुकड़े कर उसे पोटली के माध्यम में नीबू स्वरस में 4 याम तक दोलायन्त्र में स्वेदन करते हैं। तत्पश्चात् इसे निकाल कर गरम जल से साफ कर लेते हैं। ऐसा करने से शंख का शोधन हो जाता है।

शंख का शोधन जयन्ती स्वरस, चौलाई स्वरस, काञ्जी से भी किया जा सकता है।

शंख मारण

शुद्ध शङ्खस्य खण्डानि शरावे स्थापयेत्सुधीः। शरावेण पिधायाथ यत्नात्सन्धिं प्रलेपयेत् ॥
आतपे त्वथ संशोष्य पुटेद गजपुटे भिषक्। स्वतः शीतं समुद्धृत्य खल्वे सञ्चूर्णयेद्भिषक् ॥
चूर्णितञ्चाथ विज्ञाय सम्पुटस्थं ततः पुटेत्। एवं पुटद्वयेनैव शङ्खको मृतिमाप्नुयात् ॥
(र.त. 12/17-19)

शुद्ध शंख के टुकड़े को शराव सम्पुट कर सन्धि बन्धन कर धूप में सुखा लेते है तत्पश्चात् इसे गजपुट देते हैं। स्वांगशीत होने पर निकाल कर चूर्ण पुनः इसे (घृतकुमारी स्वरस से मर्दन कर) पुट देते हैं। ऐसे दो पुट से शंख की श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है।

Probable physico chemical changes– Physico chemical testing of Shankha Bhasma exhibits pH value-10.25, loss on drying (by oven)-0.176% w/w, total ash 95.56% w/w, acid insoluble ash 0.73% w/w and Ca content 46.24% w/w. In this study Bhasma was prepared by classical Puta method and the temperature given was around 800^{0}C. Ca content in raw conch shell was 49.24%. XRD analysis revealed that calcium carbonate present in Bhasma was Calcite as major composition having polygonal structure.*

Importance of temperature while processing– शंख शोधन करते समय स्वेदन विधि में 90^{0}C-110^{0}C के बीच का तापमान प्रदान किया जाता है। इससे इसमें उपस्थित अशुद्धियाँ शिथिल हो जाती है। भस्म निर्माण के लिए 800^{0}C के आसपास का तापमान देते हैं जिससे कि आवश्यक गुणयुक्त शंख भस्म का निर्माण हो सके। अधिक तापमान देने से इसकी प्रकृति में परिवर्तन हो जाता है।

योग–
1. शंख वर्ति
2. अर्जुनहर चूर्ण
3. विरेख वार्तिका
4. ग्रहणी कपाट रस
5. प्रवाल पंचामृत रस
6. शंखद्राव

शम्बूक (Pila) को घोंघा कहा जाता है। यह भी मोलस्क वर्ग का प्राणी है जो कि नदी, तालाब तथी झीलों में पाया जाता है। इसका भी शोधन अम्ल रस नींबू आदि से स्वेदन विधि से तथा मारण शंख जैसा करते हैं।

Research update

In the study done by Cavan S. et al. it was found that calcium carbonate was converted from its aragonite form to calcite when Bhasma from Shankha was prepared.**

27. गोदन्ती (Gypsum)

प्राप्ति– गोदन्ती Evaporates, sedimentary deposits imbedded with limestone, red shales तथा clay stone के साथ पायी जाती है। सामान्य रूप से यह शुद्ध रूप में पायी जाती है।

भारत में गोदन्ती आन्ध्र प्रदेश (नेल्लोर, गुटुंर) राजस्थान (बीकानेर, जैसलमेर, बाड़मोर, गंगानगर आदि) स्थानों पर मुख्य रूप से पायी जाती है। इसके अतिरिक्त गुजरात, जम्मू काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा तमिलनाडु से भी प्राप्त होती है।

पर्याय

गोदन्तिका च गोदन्ता गोदन्तं कथ्यते बुधैः। तत्तु पाषाणजातीयं सौम्यं तालसमं न तत् ॥
(र.त. 11/237)

---

* Sachin, Agrawal & Prasad, Anjali & Sandip, Baheti& Dipti, Dongre & Tomar, Rinku. (2020). Pharmaceutical characterization & Pharmacology consideration of Shankha Bhasma: An Ayurvedic formulation IAMJ: Vol I, Issue 4. April 2020

** Chavan S, Tayades, Gupta v, Deshmukh V, Sardeshmukh S. Phar tical Start Standardization and Physicochemical Chara -ation of Traditional Ayurvedic Marine Drug: Incinera Shell I Shankha Bhasma), Mar Drugs. 2018 Nov 15;16(11):450

Scanned with OKEN Scanner

गोदन्तिका, गोदन्ती, गोदन्त इसके पर्याय है । यह एक पाषाणजानीय (Mineral origin) द्रव्य है । लेकिन यह हरताल का भेद नही है ।

Minerological Identification – (Selenite)

Nature – Crystalline showing elongated tabular crystals
Colour– Greyish white
Streak– White
Cleavage– Perfect
Fracture– Even
Lustre– Silky
Tenacity– Sectile
Transparency– Translucent
Hardness– 2
Sp. Gr. – 2 to 2.5

ग्राह्य रूप

पत्राचितं सुमसृणं शरदिन्दुसुनिर्मलम् । दीप्तप्रभं तु गोदन्तं ग्राह्यमत्र प्रकीर्तितम् ॥
(र.त. 11/238)

पत्र (Layer) युक्त, चिकना, शरतऋतु के चन्द्रसदृश साफ, चमकीला गोदन्ती ग्राह्य होती है ।

शोधन

गोदन्तं निम्बुनीरेण द्रोणपुष्पीरसेन वा । यामार्द्धेनैव सुस्विन्नं विशुद्धयति न संशयः ॥
(र.त. 11/239)

गोदन्ती को (छोटे टुकड़े कर) नीम्बू स्वरस या द्रोण पुष्पी स्वरस की द्रव में दोला यन्त्र विधि से डेढ़ घंटे स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है ।

गोदन्ती मारण

1. **शरावसम्पुटान्तःस्थं गोदन्तं सुविशोधितम् । म्रियते पुटितं भस्म जायते शशिसुन्दरम् ॥**
(र.त. 11/240)

गोदन्ती को शराव सम्पुट पर पुट देने से इसकी श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है ।

2. **शुद्ध गोदन्तिजं चूर्णं कुमारीस्वरसैर्दिनम् । निम्बपत्र रसैर्वाऽपि मर्दितं कृत चक्रिकम् ॥**
शुष्कं गजपुटे पक्वं श्वेतवर्णं प्रजायते ॥ *(रसामृत 5/5-6)*

शुद्ध गोदन्ती चूर्ण को कुमारी स्वरस या निम्ब पत्र स्वरस से मर्दन कर चक्रिका बनाते है । जब यह सूख जाय तो इसे शराव सम्पुट कर गजपुट से पाक करते हैं । जिससे इसकी श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है ।

Probable physico chemical changes– Chemical analysis of Hartala Godanti Bhasma show that it has pH (5% w/v suspension) 10.46, ash value w/w% 99.802, acid insoluble ash (w/w%) 5.275, Loss on drying (at 110^0C) w/w%. 2.00, Calcium as Ca (w/w%). 31.970 and Sulphur as S (w/w%) 8.574, in their study done by Kumar G.L. et al.*

Effect of temperature while processing– In their study done by Das Subrata K et. al Godanti Bhasma was prepared at 800^0C temprature and the structural difference of Gypsum and Godanti Bhasma was characterised by Raman spectroscopy. In Godanti Bhasma some Raman Spectra observed at 129, 177 cm^{-1} in gypsum and 126, 168 cm^{-1} in Godanti Bhasma were attributed to Ca ion. The EDX was used to detect elemental composition of Bhasma particle and identified as calcium sulphate.**

योग– 1. गोदन्ती भस्म 2. त्रैलोक्यचिन्तामणि रस
3. शंखद्रव 4. कालाग्नि भैरव रस
5. मुक्तादि वटी

Research update

Experimental models used for antiulcer activity were cold restraint stress induces ulcer model and diclofenace induced ulcer model in rat shows that Godanti Bhasma at the doses of 250 and 500 µg/kg produced significant ($P<0.001$) reduction in ulcer index as compared to control. Yeast induced pyrexia model in rat for the study of anti pyretic activity show that Godanti Bhasma at the dose of 250 and 500 µg/kg body weight decreased the rectal temperature of the rats but not in a dose dependent manner. Like wise Godanti Mishran showed significant potent antimicrobial effect against staphylococcus aureus in different concentration 1000 µg/ml, 500 µg/ml, 250 µg/ml and 125 µg/ml.***

28. समुद्र फेन (Cuttle Fish Bone)

पर्याय

समुद्रफेनः फेनश्च सुफेनः फेनकस्तथा । अब्धिफेनश्च फेनश्च डिण्डीरोऽब्धिकफो मतः ॥
(र.त. 12/110)

---

* Garg Lokesh Kumar, Singh Mahendra, Singh Richa, Dhaked Rajesh. Pharma-ceutico Analytical study and comparative Antimicrobial effrenHartala Bhasma and Hartalagodanti Bhasma. Int. J. Aywz. PL Research 2013; 1(3): 36-46

** Subrata K. Das, Alpana Joshi, Laxmi Bisht, Neeladrisinghe Dan, Acharya Balkrishna, Santanu Dhara. Godanti Bhasma (anhydrous Caso4) induces massive cytoplasmic vacuolation and cell survival through stimulation of LC3 Associated Phagocytosis (LAD) bio Rxiv 2020.02.01.930594.

*** Sharma, K & Arun, Sharma 4 Yadav, Yadevendra. (2020). Updated overview on Godanti Bhasma Can Ayurvedic formulation of UJAHM, 2019, 07(04): P 19-26.

Scanned with OKEN Scanner

समुद्रफेन, फेन, पुफेन, फेनक, अब्धिफेन, डिम्बहीन तथा अब्धिफेन, डिम्बहीन तथा अब्धि कफ इसके पर्याय है ।

परिचय

समुद्रे कर्तुलः क्षुद्रो दशहस्तमयश्चितः । मीनजाति समुत्पन्नो जन्तुरेको विलक्षणः ॥
मीनराजः कूर्मपृष्ठः स यदा विजहात्यसून् । तत्पृष्ठास्थि विशुष्यन्तु सुनाभं दृश्यते तदा ॥
अब्धिमध्ये तत्फेनस्तद्वैराहतं मुहुः । घनोऽब्धौ फेनवत्तारि त्वब्धिफेनं ततः स्मृतम् ॥
(र.त. 12/124-26)

आयुर्वेद वर्णन अनुसार यह समुद्र में एक मछली प्रजाति का प्राणी है जो दस हाथ लम्बा, गोल शरीर, क्षुद्र प्रकृति विलक्षण प्रकार का होता है । यह बड़े मेरु का तथा इसका पृष्ठ भाग कछुए जैसा होता है । जब यह प्राणी मर जाता है तो इसके पीठ की अस्थि सूख कर झाग जैसी दिखाई देने लगती है तथा समुद्र की लहरों द्वारा यह किनारे पर झाग जैसी तैरने लगती है । जिससे इसे समुद्रफेन कहा जाता है ।

Cuttle Fish– इसकी आँख W के आकार के Pupil युक्त, आँठ भुजा तथा 2 Tentacles होते हैं । यह सामान्य रूप से 6-10 इंच लम्बा होता है । यह मोलस्क फाइलम का प्राणी है । Cuttle fish bone इसी प्राणी का पृष्ठ भाग है । Cuttle Fish में मुख्य रूप से Aragonite पाया जाता है । सबसे लम्बा Cuttle fish bone sepia apama से सम्बन्धित होता है जो कि 100 मीटर तक लम्बा हो सकता है ।

शोधन

पृष्ठास्थीन्यब्धिफेनस्य विलिख्यापनयेत्ततः । खल्वे सम्पेष्य कृत्स्नेन श्लक्ष्ण चूर्णञ्च कारयेत् ॥
निम्बूकस्वरसेनाथ भावयेदकवारकम् । एवमब्धिकफः शीघ्रं शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥
(र.त. 12/111-12)

समुद्रफेन के बाह्य पतले कठिन परत को खुरच कर अलग कर खल्व यन्त्र में इसका श्लक्ष्ण चूर्ण बनाकर इसे नींबू स्वरस एक दिन भावना देने से यह शुद्ध हो जाता है ।

Physico chemical characteristic

*Analysis of cuttle fish bone on various parameter shows loss on drying-16%, total ash value 93.87%, acid insolube ash 9.6% Crystalline form likening multistoried structures on evenly distributed pillers are seen in microscopic view.**

Effect of temperature while processing– समुद्रफेन का शोधन भावना विधि द्वारा किया जाता है। जो कि कमरे के तापमान पर किया जाता है।

* *Venkatesan, J. & Pd, Rekha & Anil, Sukumaran & Bhatnagar, Ira & Sudha, P. & Dechsakulwanta, Chutiwan& Kim, Se-Kwon & Shim, Min. (2010). Hydroxyapatite from Cuttlefish Bone; Isolation, Characterizations, and Applications. Biotechnology and Bioprocess Engineering. 23. 383-393.*

योग– 1. जलधूम केतु रस 2. वह्नानल रस
3. सूर्यप्रभा गुटिका 4. गरुड़ाञ्जन
5. अग्निमारनाशन रस

Research update

Cuttlefish bone and corals contain bioceramics in their exoskeletons, and can be considered main natural resources for obtaining bioceramics. Cuttlefish bone has a highly complicated structure that is mainly composed of biomineral aragonite, which is a polymorph of calcium carbonate.*

29. कुकुण्डात्वक (Hen's egg shell)

अण्डे के छिलके को कुकुण्डात्वक कहते हैं ।

शोधन– अण्डे के छिलके को अम्ल (सिरका) या नमक एवं नौसादर के मिले (दोनों 1/8 भाग) जल मे चार छः दिन भिगो देते हैं । तत्पश्चात् मुलायम हो जाने पर इसकी झिल्ली को हटा देने से धोकर सुखा लेते हैं । यही इसकी शोधन विधि है ।

मारण– घृतकुमारी स्वरस से मर्दन कर चक्रिका बनाकर शराव सम्पुट कर 5 किलो कण्डे की अग्नि में पुट देने से इसकी श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है । यदि एक पुट से भस्म न बने तो दुबारा उपरोक्त पुट को देते हैं ।

Physico chemical changes

The chicken egg shell is 95-97% Calcium carbonate crystals which are stabilized by a protein matrix. XRD[1] study shows that raw Kukkutanda tvak is $CaCO_3$ (Calcite) and $CaCO_3$ (Calcium Carbonate) whereas the Bhasma contain $Ca_2H_2O_2$ (Portlandite syn) and $Ca(OH)_2$.

Table showing physico-chemical values of Kukkutand twak Bhasma (Sample A)

Sr.No.	Parameters	Value
1. pH	10.5	
2. Loss on drying (%)	1.54	
3. Ash value (%)	74.34	
4. Acid insoluble ash (%)	0.67	

Effect of temperature while processing– कुकुण्डात्वक भस्म निर्माण हेतु 800^0C का औसत तापमान की आवश्यकता होती है। जबकि शोधन के लिए इसे सिरका युक्त जल में डुबाकर कमरे के तापमान पर रखते हैं।

1 Singh TR, Fanasiya KM, Bedarkar P., Patgiri BJ, Prajapati PK. Analytical profile of Kukkutanda Tvak Bhasma (Incerated hen egg shells) prepared by two different methods. Ayu 2017;38:158-64. doi:10.4103/ayu-Ayu-209-17

Scanned with OKEN Scanner

Research update

Egg shell have been found to contain calcium, magnesium, copper, iron, manganese and many more other useful elements. Calcium one of the content in egg shell had been clinically trialed to prove effective prevention of osteoporotic fractures in elderly community-dwelling residents.[1]

30. टंकण क्षार (Borax) $Na_2B_4O_7.10H_2O$)

पर्याय

टङ्कणष्टङ्कनश्चैव टङ्कष्टङ्कश्टङ्कणः। द्रावकष्टङ्कण क्षारष्टङ्क क्षारश्च कथ्यते॥
रंगक्षारस्तथा रंगी रंगदो लोहशोधनः। लोहशोधनकश्चापि कीर्तितः स्वर्णशोधनः॥
सौभाग्यश्च सितक्षारः श्वेतक्षारश्च टंककः। क्षारराजश्च कथितो रसायन विशारदैः॥
(र.त. 13/72-75)

टंकण, टंकन, टंक, टंग, टंगण, द्रावक, टंकणक्षार, रंगक्षार, रंग, रंगद, लोहशोधन, स्वर्णशोधन, सौभाग्य, सितक्षार, श्वेतक्षार, टंनक, क्षारराज, रसक्षार तथा रसघ्न।

Minerological Identification –

Nature	–	Crystalline lumps
Colour	–	White
Streak	–	White
Cleavage	–	Poor
Fracture	–	Conchoidal
Lustre	–	Vitreaous
Tenacity	–	Brittle
Hardness	–	2 to 2.5
Sp. Gr.	–	1.65 to 1.7
Transparency	–	Translucent
Taste	–	Sweetish alkaline

प्राप्ति

यह Borax खनिज है। इसे Tincal के नाम से भी जाना जाता है। टंकण Volcanic emanatious, hot springs तथा dried up shallow basius या Saline lakes में जमा हुआ पाया जाता है। यह Halites, Sulphates. Carbonates तथा अन्य के साथ पाया जाता है। यह माँग पूरी करने हेतु बाहर से आयतित किया जाता है। भारत में यह गुजरात (सुरेन्द्र नगर) तथा राजस्थान (जयपुर, नागौर) तथा लेह (जम्मू-काश्मीर) में पाया जाता है।

भेद– 1. टंकण– श्वेत वर्ण का सामान्य होता है।
2. नीलकण्ठ टंकण– नीलाभ, श्रेष्ठ होता है। (श्रेष्ठो नीलच्छविः)

बाजार में 1. सोनारी सुहागा तथा 2. चौकिया सुहागा। ये दो प्रकार का मिलता है। इसमें सोनारी सुहागा श्वेत, मणिभाकृति एवं बड़े-बड़े टुकड़े के रूप में प्राप्त होता है तथा यह औषधि कार्य हेतु श्रेष्ठ होता है।

टंकण शोधन

1. टङ्कणं चूर्णितं तोये तत्त्वसङ्ख्यगुणे भिषक्। सन्द्राव्य वस्त्रपूतञ्च कृत्वा चुल्लयां निधापयेत्॥
तीव्राग्निना पचेत्कामं नीरं च परिशोषयेत्। स्वल्प नीरांशरोषे च टङ्कणं निर्मल हरेत्॥
(र.त. 13/75-76)

1 भाग टंकण चूर्ण को 24 भाग स्वच्छ जल में मिलाकर जल को छानकर चूल्हे पर तीव्र अग्नि से पकाकर पानी को उड़ा देते हैं। जब कुछ गीला चूर्ण पात्र तल पा रहा जाय तो उसे उतारकर सुखा लेते हैं। ऐसे करने से टंकण साफ हो जाता है।

2. सुचूर्णितं टङ्कणं तु खलु पञ्चपलोन्मितम्। समुज्जवलोदरे क्षुद्र कटाहे विन्यसेत्ततः॥
चुल्लिकायां निधायाथ पचेद् दर्व्या प्रचालयन्। सुपुष्पितं नष्टनीरं शुद्धिमायाति टङ्कणम्॥
(र.त. 13/77-78)

पाँच पल अशुद्ध सुहागा लेकर उसे चूर्ण कर एक साफ कढ़ाई में डालकर कढ़ाई को आग पर रखकर उसे चम्मच से चलाते हैं। जब इसका जलीयांश नष्ट हो जाय तो यह खील की भाँति फूल जायेगा। इसे ही शुद्ध टंकण कहते हैं।

Probable physico chemical charges– Raw Tankana contains $Na_2B_4O_7.10H_2O$ having Rhombohedral structrure, while purified Tankana contains $Na_2B_4O_7.5H_2O$ having Orthorhombic structure. Quantitive chemical analysis showed percentage of Boran as 10.08% and 13.48% of raw as well as shodhita Tankana respectively.*

Effect of temperature while processing– टंकण शोधन को प्रक्रिया में इसे अग्नि पर भर्जित किया जाता है। इस प्रक्रिया में टंकण में उपस्थित Water of crystallization की हानि होती है। तथा यह Puffy mass जैसा हो जाता है।

योग– 1. आनन्द भैरव रस 2. मृत्युञ्जय रस
3. प्रताप लङ्केश्वर रस 4. सर्वांग सुन्दर रस
5. टंकणामृत मलहर

1. *Ajala, Olawale & Eletta, Omodele & Ajala, Mary A. & Oyeniyi, Samuel. (2018). Characterization and Evaluation ofChicken Eggshell for use as priorresource. Arid zone Journal of Engineering, Technology srsese and Environment, March, 2018; Vol. 14(1): 26-40.*

1 Bhandari, Srinivasulu & P. ??Bhadra & C, Murthy. (2012). Physico-chemical Standardization of Tankana (Borax): An Ayurvedic mineral Drug. The pharma Innovation. 1. 16-22.

Scanned with OKEN Scanner

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पारद के दोष है—
   a. 3 b. 12 c. 7 **d. उपरोक्त सभी**
2. विष दोष दूर करने हेतु प्रयुक्त द्रव्य है—
   a. चित्रक b. गृह कन्या c. त्रिकण्टक **d. त्रिफला**
3. गैरिक किसका पर्याय है?
   a. अभ्रक b. गन्धक **c. शिलाजतु** d. गिरिसिन्दूर
4. रस पर्पटी निर्माण हेतु आवश्यक तापमान होता है?—
   a. 115-120°C b. 150°C c. 700°C d. 250°C
5. भस्म परीक्षण में प्रयुक्त विधि है—
   a. XRD b. SEM c. AAS **d. उपरोक्त सभी**
6. हरताल के भेद होते है—
   a. 2 b. 5 c. 1 d. 6
7. स्वर्ण के कितने भेद कहे गये है— (र.र.स. अनुसार)
   a. 2 **b. 5** c. 1 d. 6
8. नैपाली भेद किस धातु से सम्बन्धित है—
   a. नाग b. वंग **c. ताम्र** d. यशद
9. नर, नारी तथा नपुसंक भेद किससे सम्बन्धित है—
   a. हीरा b. माणिक्य c. वैक्रान्त d. अग्रिजार
10. टंकण का रासायनिक सूत्र है ?
    a. $Na_2B_4O_7.10H_2O$ b. $Na_2B_4O_7.5H_2O$ c. $Na_2B_4O_7.7H_2O$ d. $Na_2B_4O_7$

अध्याय 9 रस द्रव्य परिचय-II

1. सस्यक (Peacock ore)

पर्याय

तुत्थं तु तुत्थकं तुत्थाञ्जनञ्चापि मयूरकम् । सस्यकं ताम्रगर्भञ्च शिखिग्रीवञ्च तन्मतम् ॥
(र.त. 21/71)

तुत्थ, तुत्थक, तुत्थाञ्जन, मयूरक, सस्यक, ताम्रगर्भ, शिखि ग्रीव इसके पर्याय हैं ।

Minerological Identification–

Nature– Crystalline lumps
Colour– Berlin or sky blue
Streak– Colourless
Cleavage– Poor
Fracture– Conchoidal
Lusture– Vitreous
Tenacity– Brittle
Transparency– Translucent
Hardness– 2 to 2.5
Sp. Gr.– 2.12 to 2.30

रसरत्न समुच्चय में वर्णित सस्यक प्रकरण में सस्यक, मयूर तुत्थ तथा तुत्थ खर्पर इन तीन शब्दों का प्रयोग हुआ है । इसके वर्णन में मयूरकण्ठ सदृश शब्द इस द्रव्य के रंग को बताता है । मयूर कण्ठ में तीन रंग नीला हरा तथा लाल रंग की उपस्थिति होती है । नीला थोथा ($CuSO_4$) में हरा, लाल रंग नहीं होता है तथा यह मयूरकण्ठ सदृश भी नहीं होता है । Peacock are (Bornite) जिसका रासायनिक Cu_5FeS_4 सूत्र होता है । सम्भवतः यही सस्यक है । जो प्रयोगशाला में निर्मित होता है वह तुत्थ होता ($CuSO_4.5H_2O$) है । इसलिए रसजलनिधि कार ने कहा है कि प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाले सस्यक तथा कृत्रिम (प्रयोगशाला) रूप से निर्मित तुत्थ कहा जाता है । यथा–

सस्यकं हि स्वभावजं तुत्थकं कृत्रिम मतं । एकाभावे परं ग्राह्यं नात्र कार्या विचारणा ॥
(र.ज.नि. द्वि.खण्ड प्रथम अध्याय P 110)

Ayurvedic Pharmacopoeia of India के अनुसार तुत्थ (पर्याय सस्यक) $CuSO_4.5H_2O$ है जिसे Blue vitriol, copper vitriol, blue store या Chalcanthite mineral लिया गया है ।

Scanned with OKEN Scanner

प्राप्ति स्थान– तुत्थ खनिज तथा उद्गम के Hydrated sulphates के Oxidized form में copper sulphide ore deposits के surface zones के रूप में पाया जाता है। यह mine purified waters के साथ भी पाया जाता है। भारत में तुत्थ की प्राकृतिक खनिज मात्रात्मक रूप से नहीं है। सहज रूप मात्रा में मध्य प्रदेश, राजस्थान तथा झारखण्ड के खानों से प्राप्त होता है। आयुर्वेदिक योगों में प्रयुक्त तुत्थ एक रसायन (Chemical) है।

रस ग्रन्थ अनुसार उत्पत्ति

पीत्वा हालाहलं शम्भौ पीतामृतगलस्थिता । विषेणामृतयुक्तेन गिरौ मरकताह्वये।
सञ्जातं हि घनीभूतं सञ्जातं सम्यक्कं खलु ॥ (र.र.स. 2/125-26)

परन्तु ने पहले अमृत मिश्रित विष का भी पान किया जिससे उसको नीलगिरि पर्वत पर अमृत युक्त विष वमन हो गया। कुछ समय पश्चात् वह वमित द्रव्य घन हो गया तथा सम्यक की उत्पत्ति हुई।

भेद– 1. स्वाभाविक– सम्यक

2. कृत्रिम– तुत्थ

ग्राह्य लक्षण–

मधुरकाष्ठमञ्जाभं भाराढ्यमतिशस्यते। (र.र.स. 2/126)

मधु काष्ठ के जैसा, अत्यन्त भारी सम्यक ग्रहण करना चाहिए।

सम्यक (तुत्थ) शोधन

1. सम्यकं शुद्धिमाप्नोति रक्तवर्गेण भावितम् । स्नेहवर्गेण संसिक्तं सप्तवारमदूषितम् ॥
(र.र.स. 2/129)

1. सम्यक को रक्तवर्ग की औषधियों की भावना देकर उस पर स्नेह वर्ग का सिञ्चन करते हैं। ऐसा सात बार करने से सम्यक (तुत्थ) शुद्ध हो जाता है।

2. दोलायन्त्रेण मुग्धिन्नं सम्यकं प्रहरत्रयम् । गोमहिष्याजमूत्रेषु शुद्धयते तुत्थखर्परम् ॥
(र.र.स. 2/130)

सम्यक को गाय, भैंस या बकरी के मूत्र में तीन प्रहर तक दोला यन्त्र से स्वेदन करने पर तुत्थ खर्पर/सस्यक शुद्ध हो जाता है।

तुत्थ मारण

लकुचद्रावगन्धाश्मटङ्कणेन समन्वितम् । निरुध्य मृषिकामध्ये म्रियते कौक्कुटैःपुटैः ॥
(र.र.स. 2/131)

शुद्ध तुत्थ को समभाग गन्धक, टंकण मिलाकर लकुच स्वरस से भावना देकर कुक्कुट पुट देने से तुत्थ की भस्म बन जाती है। अन्यत्र (र.त. 21/123) 3 पुट देने का निर्देश है।

सत्वपातन

सम्यकस्य तु चूर्णं तु पादसौभाग्यसंयुतम् । करञ्जतैलमध्यस्थं दिनमेकं निधापयेत् ॥
अन्यमूषायमध्यस्थं ध्मापयेत्कोकिलाग्नि । इन्द्रगोपाकृति चैव सत्त्वं भवति शोभनम् ॥
(र.र.स. 2/132-33)

सम्यक चूर्ण में एक चौथाई भाग टंकण मिलाकर करंज तैल में एक दिन रख देते हैं। तत्पश्चात् इसे अन्यमूषा में रखकर कोयले के अग्नि में तीव्रध्मन करने से इन्द्रगोप (लाल रंग) सदृश सत्व निकल आता है।

Probable chemical reactions– Since blue vitrol is penta hydrated copper sulphate. At 100^0C it loses 4 molecules of crystallization and the following reaction takes place.

$$CuSO_4.5H_2O \xrightarrow{100^0C} CuSO_4.H_2O + 4H_2O$$

Monohydrated copper sulphate

At 230^0C it loses the fifth moleuce of water and becomes white amorphus powder. The reaction is as follows–

$$CuSO_4.H_2O \xrightarrow{230^0C} CuSO_4.H_2O$$

An hydrous copper sulphate

The powder again becomes blue in presence of water. At 730^0C it under goes dissociation as follows :

$$CuSO_4.H_2O \xrightarrow{730^0} CuO + SO_3$$

CuO का रंग काला होता है तथा Cu_2O का रंग लाल होता है। सस्यक भस्म का वर्ण शास्त्रों में रक्तवर्ण का कहा गया है।

Importance of temperature– तुत्थ का शोधन स्वेदन तथा भावना दोनों विधि से किया जाता है। भावना की प्रक्रिया room temperature पर होती है, जबकि स्वेदन 90-110^0C में का तापमान होता है। अतः स्वेदन विधि में Monohydrated copper sulphate की सम्भावना हो सकती है। मारण लघुपुट या कुक्कुट पुट के द्वारा किया जाता है। जिसका उच्च तापमान 600^0C के आसपास होता है। तुत्थ के सत्वपातन हेतु 1350^0C[1] तापमान की आवश्यकता होती है।

प्रमुखयोग– 1. जात्यादि तैल
2. श्वेत मलहर
3. वारिशोषण रस
4. सूचीमुख रस
5. सर्वज्वरादि रस।

1 Patel Manish Kumar, Archana, Lalchand, Parhate Saroj. A Pharmaceutico. -Analytical study of Tuttha Satva. I JCRT, Vol 6 (2) Apr 2018, 889-896

Scanned with OKEN Scanner

Research updates

Muralidhar R et al in their study done on Wistar Albino rats have find that Tuttha Bhasma is much safer to use at therapeutic dose level. However, at higher dose levels there is chances of organ toxicity.*

Study done by Vaishagh p. et al. shows that Tuttha bhasma has better antifungal properties than anti bacterial properties.**

2. कासीस (Green Vitrol)

पर्याय

काशीशकञ्च कासीसं पुष्पकासीसकन्त था। पांशुकं पांशुकासीसं खगाख्यञ्च प्रकीर्तितम् ॥

(र.त. 21/227)

कासीस, काशीशक, पुष्प कासीस, पांशुक, पांशु कासीस, खग कासीस के पर्याय है ।

Minerological Identification

Nature– Massive lumps
Colour– Greenish white
Cleavage– None
Streak– White
Fracture– Un even
Lusture– Earthy
Tenacity– Brittle
Transparency– Translucent
Hardness– 1.95 to 2
Sp. Gr.– 1.90 to 1.97

स्रोत

कासीस एक Secondary mineral है जो कि Pyrites के Decomposition (in the oxidation zone) के परिणाम स्वरूप प्राप्त होता है । It occurs widely as efflorescence on the walls and timbers of mine working. कासीस Chalcanthite, Gypsum तथा अन्य Hydrous basic sulphates के साथ प्राप्त होता है । व्यापारिक रूप से निर्मित कासीस एक रसायन (Chemical) है जिसका आयुर्वेदिक योगों में प्रयोग होता है । खनिज कासीस सिंह भूमि के माक्षिक (Pyrite) खानों से प्राप्त होता है ।

* Ballal, M.R, R.S & M.R (2023). Chronic toxicity studies of Tutthabhasma[CuSO4.5H20] in Wistar Albino Rats. International Journal of Ayurvedic medicine, 13(4), 884-890

** Vaishgh P. Nayak Dinesh J, Shobha KL. An Antimicrobial Evaluation of Tuttha Bhasma. International Journal of Ayurvedic and HerbalMedicine. 8:4(2018) 3278-3282.

भेद– सुश्रुत संहिता में इसके 2 प्रकार कहे गये हैं जिसे डल्हण ने (1) भस्म सदृश तथा (2) पुष्प कासीस भेद से कहा है । रसरत्न समुच्चय में इसके 2 भेद कहे हैं–

कासीसं बालुकाद्येकं पुष्पपूर्वमथापरम् ॥ (र.र.स. 3/51)

1. बालु कासीस
2. पुष्प कासीस

रस जल निधि में इसके चार प्रकार बताये हैं–

1. बालु कासीस– श्वेत वर्ण का
2. पुष्प कासीस– पीले वर्ण का
3. कृत्रिम कासीस– हरे रंग का
4. धातुकासीस– श्याम वर्ण का

यह सामान्य रूप से हरे रंग का हीरा कासीस के नाम से उपलब्ध होता है । बालु के समान दानेदार होने से इसे बालु कासीस कहा जाता है । इसे ही कुछ दिन रखने वातावरण के प्रभाव यह पीले रंग का से हो जाता है तो इसे पुष्प कासीस कहते हैं ।

ग्राह्य

चूर्णकासीसकं श्वेतमीषत्पीतञ्च कीर्तितम्। पुष्पकासीसकं स्वच्छहरिद्वर्ण प्रकीर्तितम् ॥

(र.त. 21/229)

चूर्ण कासीस श्वेत तथा ईषत्पीत जबकि पुष्प कासीस स्वच्छ हरित वर्ण का होता है ।

शोधन

1. सकृद्भृङ्गाम्बुना क्लिन्नं कासीसं निर्मलं भवेत् । (र.र.स. 3/45)
   कासीस को भृंगराज स्वरस से क्लिन्न (भिगोना) या भावना देने से यह शुद्ध हो जाता है ।
2. कासीसं शुद्धिमाप्नोति पित्तैश्च रजसा स्त्रिया । (र.र.स. 3/45)
   कासीस को पित्त (पित्त वर्ग) से या स्त्री रज से क्लिन्न करने से शुद्ध हो जाता है ।

मारण

काञ्जिकेन तु विभाव्य सप्तधा शोषयेत्खगमिनांशुभिर्बुधः ।
सम्पुटेच्च लघुना पुटेन तत् स्याद्धि भस्म खलु लोहितप्रभम् ॥
समादायाथ तद्भस्म पेषयेन्निम्बुकद्रवैः ।
चक्रिकाः कारयित्वाच पुटेल्लघुपुटे पुनः ॥
यावन्निरम्लं तद्भस्म तावदेवं पुनः पुनः ।
निम्बुकोत्थैः रसैवैद्यः पिष्ट्वा संशोष्य सम्पुटेत् ।

Scanned with OKEN Scanner

मुक्तकाख्यं जायते धम्यं सर्वदोषविवर्जितम् ॥
तत्साध्येषु विकारेषु क्षीणशुक्रः प्रयोजयेत् ॥

(र.त. 21/255-58)

कासीस को काकड़ी की खट भावना देकर चक्रिका निर्मित कर लघुपुट देने से इसकी रक्तवर्ण की भस्म बन जाती है। सत्वपातन इस भस्म को अम्लता रहित करने हेतु इसे निम्बु स्वरस से भावना देकर लघुपुट देते हैं तथा इस पुट प्रक्रिया को तब तक करते हैं जब तक कि भस्म अम्लता रहित हो जाय।

सत्वपातन

तुवरीसत्त्ववत सत्त्वमेतस्याधि समाहरेत। (र.र.स. 3/55)
क्षाराम्लैर्मर्दिता ध्माता सत्त्वमुञ्चति निश्चितम्। (र.र.स. 3/65)

फिटकरी के सत्व पातन की तरह क्षार तथा अम्ल द्रव्यों के साथ मर्दन कर मूषा में रखकर धमन करने से इसका सत्व निश्चित रूप से ही निकल आता है।

Importance of temperature– कासीस के शोधन में (80-90^{0}C के तापमान पर) यह स्वेदन में प्रयुक्त द्रव (भृंगराज स्वरस) में पोट्टली के सूक्ष्म छिद्र से बाहर आकर उसमें घुल जाता है। कासीस भस्म निर्माण हेतु 650^{0}C* तापमान की आवश्यकता होती है तथा प्राप्त भस्म का वर्ण लाल होता है। AAS अध्ययन द्वारा भस्म में औसत 65% आइरन की उपस्थिति पाई गयी। कासीस सत्वपातन हेतु 1600^{0}C अधिकतम तापमान की आवश्यकता होती है तथा सत्व में 81.21% तक आइरन की उपस्थिति होती है।** फेरस सल्फेट $FeSO_4.7H_2O$ सापेक्षिक आर्द्रता 65% से कम होने पर या 40^{0}C तापमान पर गर्म करने पर $FeSO_4.4H_2O$ में बदल जाता है।***

Probable chemical reaction– The heating effect of Green Vitrol is as follows–

$$FeSO_4.7H_2O \xrightarrow{140^0C} FeSO_4.H_2O$$

$$FeSO_4.H_2O \xrightarrow{300^0C} 2\,FeSO4 \xrightarrow[Temperature]{High} Fe_2O_3+SO_2\uparrow+SO_3\uparrow$$

योग– 1. रजः प्रवर्तनी वटी 2. श्रिन्नारि रस
3. कासीसादि तैल 4. सर्वश्वर पर्पटी
5. महाविद्या वटी 6. वारिशोषण रस।

* Rajput DS, Tekale GS. Study on Bhasma Kalpana with special reference to preparation of Kasisa Bhasma. Ayu. 2011 Oct; 32 (4):554-9. doi:10.4103/0974-8520.96133
** Vd. Kanchan Tejashri Kailas, Vd. Dudewar Arati. Pharmaceutical study of Kasisa Satva. J. Ayurveda Integr Med Sci 2020; 1:81-86. htpp://dx.doi.org/10.21760/Jaims.5.1.14.
*** Mitchell AG. The preparation and characterization of Ferous Sulphate hydrates. J Pharm Pharacol. 1984 Aug; 36(8):506-10.

Research update

FTIR sepctra of Kasia Bhasma were evident with the principal peaks correspond to inorganic metal (Fe_2O_3), hydrated metal salt or oxide (FeO or Fe_2O_3). Study on Kasisa Bhasma shows that it is an efficient iron preparation for the management of iron deficiency anemia.*

3. गौरीपाषाण (Arsenic Oxide)

पर्याय

शंखमूषं शंखविषं गौरीपाषाणकं तथा। दारूमूषं दारूमूषा दारूमोचश्च मल्लकः ॥
फेनाश्म भस्म संज्ञाश्च सोमलः सम्वलं तथा। आसुपाषाणकं चैव रसज्ञैः परिकीर्तितम् ॥

(र.त. 11/130-31)

शंख मूष, शंख विष, गौरी पाषाण, दारूमूष, दारूमूषा, दारूमोच, मल्लक, फेनाश्म भस्म, सोमल, सम्वल तथा आखुपाषाण में शंख विष (सखिया) के पर्याय है।

इसकी कठिनता 3-4 तथा विशिष्ट गुरुत्व 5.6 से 5.8 होता है।

प्राप्ति– रसग्रन्थों में शंखविष के कृत्रिम तथा खनिज दो रूपों में प्राप्ति का वर्णन किया है।

कृत्रिमः श्वेतमल्लस्तु रक्तश्चाकरसंभवः ॥ (र.त. 11/132)

कृत्रिम मल्ल श्वेत वर्ण का होता है जबकि रक्तवर्ण का पर्वत (खनिज) से प्राप्त होता है।

As_2O_3 प्राकृतिक रूप में Arsenolite तथा Claudetite खनिज के रूप में प्राप्त होता है। लेकिन ये दोनों खनिज आर्सेनिक बहुल अयस्क में Secondary minerals के रूप में पाये जाते हैं। कृत्रिम रूप से यह स्वर्ण, आइरन तथा ताम्र वाले खनिज को गर्म (Roasting) करने के परिणामस्वरूप चिमनियों जमा हुआ पाया जाता है। भारत में यह माक्षिक की खानों में पाया जाता है।

भेद– गौरीपाषाणकः पीतो विकटो हतचूर्णकः। (र.र.स. 3/124)

गौरीपाषाण के तीन भेद होते हैं–

1. पीत 2. विकट 3. हतचूर्णक

ग्राह्य लक्षण

गौरीपाषाणकः पीतो विकटो हतचूर्णकः। स्फटिकाभश्च शङ्खाभो हरिद्राभस्त्रयः स्मृताः ॥
पूर्वः पूर्वो गुणै श्रेष्ठः.....॥ (र.र.स. 3/124)

* Rajput DS, Tekale GS. Study on Bhasma Kalpana with special reference to preparation of Kasisa Bhasma. Ayu. 2011 Oct; 32 (4):554-9. doi:10.4103/0974-8520.96133.

Scanned with OKEN Scanner

1. पीत- स्फटिकाभ- श्वेतम 2. विकट- शङ्खाभ 3. हतचूर्णक- हरिद्राभ

शोधन

1. **कारवल्लीफलेक्षिपेत् । स्वेदयेद्धण्डिकामध्ये शुद्धो भवति मूषकः ॥** (र.र.स. 3/125)

गौरीपाषाण को करेले में रखकर भाण्ड में जल भरकर स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है ।

2. **सुचूर्णितं शङ्खविषं दृढं वस्त्रेण गोधयेत् । मेघनाद रसेनैव दोलायन्त्रे विपाचयेत् ॥**
मृद्वाग्निना दिनैकन्तु शुद्धिमायात्यनुत्तमाम् ॥ (र.त. 11/33-34)

संखिया के दरदरे चूर्ण करके उसकी वस्त्र में एक दृढ़ पोट्टली बनाकर उसे मेघनाद स्वरस में मृदु अग्नि पर दोलायन्त्र के माध्यम से एक दिन स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है ।

सत्वपातन

तालवद्रह्योत्सत्वं शुद्धं शुभ्रं प्रयोजयेत् । (र.र.स. 3/126)

हरताल सत्वपातन विधि अनुसार इसका सत्व पातन किया जाता है तथा सत्व श्वेतवर्ण का होता है ।

मात्रा– खनेत्रेन्दुमिताद् भागाद् रक्तेरारभ्य यत्नतः । खबह्नि भाग प्रमितं शङ्ख भूषं नियोजयेत् ॥
(र.त. 11/145)

1/120 रत्ती (1 मिग्रा.) से 1/30 रत्ती (4 मिग्रा.) तक ।

Probable chemical reaction[1]– In the natural evnrionment arsenic is rarelly encountered as the free element most frequently it is a component of sulphuric ores in which it occurs as metal arsenides. Arsenic Trioxide is the primary product of arsenic smelter. During Shodhan or Sattva Patana of Arsenic oxide there may be chance of form change as arsenic trioxide has been reported to exist in three allotropic forms.

Importance of temperature[1]– Arsenic trioxide has been reported to exist in 3 allotropic modifications.

1. Arseniolite–Cubic form, stable below– 13^0C
2. Claudelite–Monoclinic form, at higher temperature . It melts as 313^0C
3. Amorphous, glassy modification– The macromolecular structure is similar to that of claudelite but irregular. Arsenic trioxide begins to sublime at 135^0C. Arsenic trioxide begins to sublime at 135^0C. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK231019.

Research update

Arsenic the ancient drug has remarkable efficacy in the treatment of relapsed acute promyelocytic leukemia (APL). Arsenic trioxide (White arsenic or AS_2O_3) was approved by the United States Food and Drug Administration for being used in the treatment of relapsed/refractory APL in 2000.*

1. National Research Council (US) committee on Medical and Biological Effects of Environmental Pollutants. Arsenic; Medical and Biological Effects of Environmental Pollutants. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK231019.

4. तृणकान्त (Amber)

परिचय

आचार्य यादव जी त्रिकमजी द्वारा रचित रसामृत तथा यूनानी वैद्यक ग्रन्थों में इसका वर्णन मिलता है । यह एक अश्मीभूत वानस्पतिक राल (Fossil Resin) है । यह गोंद सदृश हल्का पीला या लालिमा युक्त पीले रंग का स्वच्छ, चमकदार, पारभासक (Transparent) होता है । फारसी में इसे कहरुवा कहते हैं । इसका शाब्दिक अर्थ निम्न है ।

कह = घास, तिनका, रुवा = आकर्षित करना ।

जो तिनके को आकर्षित करे उसे कहरूबा कहते हैं । इसे अंग्रेजी में Amber कहते हैं तथा इसका रासायनिक सूत्र $C_{40}H_{64}O_4$ होता है । इसकी कठिनता 2.5 तथा SP. Gr. 11 होती है ।

यह वर्मा, इटली, रुमानिया आदि देशों से तथा भारत के त्रावणकोर, कच्छ तथा निकोबार से प्राप्त होता है ।

पर्याय

तृणग्राहि, तृणकान्त, तृणकान्तमणि

शोधन एवं मारण– शोधन तथा मारण नहीं किया जाता है । इसके पिष्टी प्रयोग का वर्णन है ।

तृणकान्तमणि पिष्टि– तृणकान्त को गुलाबजल, केवडा अर्क या चन्दन अर्क से दो तीन तक मर्दन कर इसकी पिष्टि का निर्माण कर लेते हैं ।

As fossilized tree resin, amber is composed of Volatile and non volatile terpenoids and/or phnolic secondary compounds (Langenheim, 2002, p 24: Ragazzi and Schmidt, 2011: Vavra 2009) Because amber is fossilized resin it belongs to few organic semi precious stones. Amber consists of organic compounds of carbon, hydrogen and oxygen. It is still not cleared whether amber should be considered a mineral (without a crystal structure) as a fossil. The most common Baltic ambesis known as amber or succinite.

Effect of temperature– Heat causes amber to darken and dehydrate. Its melting point is between 285^0C and 395^0C. Because it is fossilized resin so its Pishti is used to preserve its properties.

योग–
1. जवाहर मोहरा
2. ब्राह्मी वटी

Research updates

The findings of study done Sandra Soumah-Asante et.al provide scientific evidence

* Jiang H., Liu L., Zheng T, Yin D. An evidence-based perspective of Arsenic Trioxide (AS_2O_3) for cancer patient. DOI:10.1007/978-94-0.07-0526-5=2.

Scanned with OKEN Scanner

to support folkloric use of amber as a novel stress buffering and longevity-enhancing nutraceutical.*

5. अकीक (Agate)

Minerological Identification –

Nature - Banded Form
Colour– White
Streak– White
Cleavage– Not present
Lustre– Waxy
Tenacity– Brittle
Hardness– 6 to 7
Sp. Gr.– 2.5 to 2.65

अकीक एक सिलिका खनिज (SiO_2) है तथा Chalcedony का banded स्वरूप है। यह सामान्यतः शुद्ध रूप में पाया जाता है। यह Igneous तथा Metamorphic rock में Crust पर पाया जाता है। भारत में यह गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, बिहार तथा मध्य प्रदेश के विभिन्न स्थानों से प्राप्त होता है।

शोधन– अकीक को तप्त कर गुलाब जल या वेदमुष्क अर्क या गोदुग्ध में 21 बार बुझाने से यह शुद्ध हो जाता है। (र.त.स.सि.ब.स. भाग. I p 73)

पिष्टी निर्माण– गुलाब जल से मर्दन कर इसकी पिष्टी का निर्माण करते हैं।

6. सुधा (Lime stone)

सुधा को अंग्रेजी में Lime कहते हैं। इसका रासायनिक सूत्र CaO होता है। यह खनिज रूप में चूने के पत्थर (Lime stone) के नाम से प्राप्त होता है। चूने के पत्थर को आग में पका देने से चूना बन जाता है।

चूने का पत्थर भारत में सर्वत्र पाया जाता है।

Limestone, कार्बोनेट Sedimentary rock है जो कि प्रायः समुद्री जन्तुओं जैसे Coral तथा Molluses आदि के कंकाल के एकत्र हो जमा हो जाने के परिणामस्वरूप (Calcite/Aregomite) तथा Mineral dolomite के रूप में पाया जाता है।

पर्याय

चूर्ण चूर्णक चूर्णन्तु सुधा सौधविलेपनम्। तदैव च समाख्यातं शिलाक्षारं भिषग्वरैः॥
(र.त. 11/215)

* Somyah-Asantes, Sakamoto K. Stress Buffering and Longevity effects of Amber extract on Caenohabditis elegans (C. elegans). Moleculs. 2022 June 16;27(12):3858.doi:10.3390/molecules 27123858.

चूर्ण, चूर्णक, चूर्णन्तु, सुधा, सौध विलेपन तथा शिलाक्षार इसके पर्याय है।

Chemical reaction– $CaCO_3\,(S) \longrightarrow CaO\,(S) + CO_2\uparrow$
[Limestone]
$CaO\,(s) + H_2O\,(l) \longrightarrow Ca\,(OH)_2$
[Quick lime]

7. खटिका (Chalk/Pipe clay)

यह श्वेत वर्ण की स्वादहीन किन्तु सोधी महक वाली खनिज मृत्तिका है। यह भंगुर होती है तथा जीभ पर चिपकती है। ब्लैकबोर्ड पर इसी के द्वारा लिखा जाता है। इसका काठिन्य 1 होता है।

पर्याय

खटिका खटिनी चैव खटी लेखनमृत्तिका। कठिनी वै कठिनिका वर्णिका वर्णलेखिका॥
(र.त. 11/220)

खटिका, खटिनी, खटी, लेखन मृत्तिका, कठिनी, कठिनिका, वर्णिका तथा वर्ण लेखिका इसके पर्याय है।

इसका रसायनिक संगठन में $CaCO_3$ होता है तथा इसमें अल्प मात्रा में Silt तथा Clay पाया जाता है। यह समुद्र में Submicroscopic plankton के द्वारा समुद्र तल पर गिरने तथा वहीं ठोस होकर जमने के परिणाम स्वरूप निर्मित होता है। Chalk एक Sedimentary carbonate rock है जो कि खनिज Limestone का ही भेद होता है।

भेद एवं स्वरूप– इसके 2 भेद होते हैं।

खटी गौरखटी चेति द्विधाऽद्या मलिन स्मृता। मृदुपाषाणसदृशा खटी शुभ्राऽधिका गुरुः॥
(आ.प्र. 2/264)

1. खटी 2. गौरखटी

खटी कुछ मलिन (गंदी) होती है।

गौरखटी मुलायम पत्थर सदृश अधिक श्वेत तथा भारी होती है।

खटिका शोधन

खटी चूर्ण शुद्धपात्रे निधाय विमले जले। प्रक्षालयेद्विधानज्ञो विशुद्धयति न संशयः॥
(र.त. 11/210)

खटी को चूर्ण एक पात्र में शुद्धजल भर इसमें डालकर रख देते हैं जब यह घुल जाय तो इसे एक सूती वस्त्र से छान लेते हैं। इस विधि से इसमें उपस्थित कंकड, पत्थर आदि वस्त्र में रह जाते हैं। अब इसे धूप में सुखा लेते हैं। यही शुद्ध खटिका है जिसे आवश्यकतानुसार प्रयोग करते हैं।

प्रमुख योग– 1. दशनसंस्कार चूर्ण (मंजन) 2. मुग्ध रस

Scanned with OKEN Scanner

8. अजास्थि (Goat's Bone)

अजास्थि का समावेश जाङ्गम द्रव्य के अन्तर्गत किया जाता है तथा यह कैल्शियम एवं फास्फोरस युक्त द्रव्य (अस्थि, Bone) है। अजास्थि रस तथा विपाक में मधुर, वीर्य उष्ण तथा सूक्ष्म, उष्ण एवं व्यवायी गुण युक्त होती है। अजास्थि भस्म के रासायनिक विश्लेषण से इसमें 51.66% कैल्शियम तथा 18.59% फास्फोरस (फास्फेट के रूप में) की उपस्थिति ज्ञात होती है।* अजास्थि भस्म की मात्रा 250-500 मिग्रा. प्रयुक्त की जाती है।

9. जहरमोहरा (Serpentine)

जहर मोहरा हरे (Blackish green) रंग का मृदु पत्थर है । व्यापार की भाषा में इसे Green Marble कहा जाता है । जहर मोहरा (Serpentine) hydrous silicate of magnesium है जिसका रासायनिक सूत्र ($Mg_6(Si_4O_{10})$ x $(OH)_8$) होता है ।

Minerological Identification

Nature – Crystalline, Coarse grained, Soapy feel
Cleavage– Blackish green
Streak– Colourless
Cleavage– Perfect
Fracture– Conchoidal
Lustre– Greasy
Transparency– Translucent
Hardness– 3.5 to 5
Sp. Gr.– 2.5 to 2.7

स्रोत– जहर मोहरा का निर्माण जो चट्टान मैग्नीशियम प्रचुरता वाले होते हैं, 400^{0}C से कम पर Metamorphism या Late stage hydrothermal action के द्वारा होता है । इसमें मैग्नीशियम के साथ कम मात्रा में निकिल, कैल्शियम, आइरन तथा एल्युमीनियम भी पाये जाते हैं । भारत में यह राजस्थान, कर्नाटक, झारखण्ड, मध्य प्रदेश तथा आंध्र प्रदेश के Metamorphic क्षेत्र में पाया जाता है ।

शोधन– जहर मोहरा को रक्त तप्त कर गोदुग्ध या आमलकी स्वरस में 21 वार बुझाने से इसका शोधन हो जाता है । (र.त.स. सि.प्र.स. भाग 1 पे. 73)

पिष्टी– गुलाब जल से मर्दन कर इसकी पिष्टी का निर्माण करते हैं ।

Chemical reaction– $Mg_3Si_2O_5(OH)_4 + 3CO_2 + H_2O \rightarrow 3\,MgCO_3 + 2\,SiO_2 + 3H_2O$ (Geology.com)

Importance of temperature– Under high temperature, hydroxyl groups, linked to

* Sonal D Wankhede & Nithesh K. Kamble : Role of Tikta Ksheer Basti and Ajasthi Bhasma in the management of Asthi Kshaya Janya Kastigat-Vata wsr to Degenrative Lumber Spondylosis-A case study. IAMS, oct 22.

Mg atoms escape the structure. During this dehydroxylation process, serpentine transformed into amorphous phases between 550-750^{0}C and then recrystallized into forsterite (Mg_2SiO_4>750^{0}C) associated with enstatite ($MgSiO_2$>800^{0}C) as the temperature increased.*

Research update

Lizardite, Antigornite and Chrysotill are the main minerals of serpentine group [$Mg3SiO_2O_5(OH)_4$) belonging to the phyllosilicate class. Serpentine structure is made of stacked layers composed of two sheets : the tetrahedral layer composed of silicon tetrahedral (SiO_4) linked to the lateral Mg of the octahedral layer by its optical oxygen atoms, forming a covalent bond.

10. दुग्धपाषाण (Talc)

परिचय

20वीं सदी के ग्रन्थ रसामृत, रस तरंगिणी आदि रस ग्रन्थों में इसका वर्णन प्राप्त होता है । Talc, clay mineral है जो कि hydrated magnesium silicate है तथा इसका Chemical formula $Mg_3Si_40_{10}(OH)_2$ है । यह दुग्ध के समान श्वेत, नीलाभश्वेत, अत्यन्त मृदु तथा चिकना पत्थर है । इसे आसानी से पीसा जा सकता है । फेस पाउडर, बाडी पाउडर, क्रीम आदि के निर्माण हेतु इसे प्रयुक्त किया जाता है । यह सामान्य रूप से Metamorphic rock में पाया जाता है । यह इटली, फ्रांस, जर्मनी, स्विटरजरलैण्ड आदि देशों से प्राप्त होता है ।

Minerological Identification –

Tenacity – Sectile
Cleavage– Perfect
Lustre– Waxlike
Streak– White
Hardness– 1
Sp. Gr.– 2.58-2.83

पर्याय

दुग्धपाषाणको दुग्धी दुग्धपाषाणिका तथा। दुग्धा दुग्धशिलाचैवक्षीरी क्षीरक्षवश्च ॥
वज्राभो दीप्तिकश्चापि सौधो गोमेदसन्निभः। दुग्धोपलो दुग्धदृषद् भिषग्भिः परिकीर्तितः ॥

(र.त. 11/230-31)

* Du Breuilc cesar pasquierl, Dipple, G : Blais J-F Illiuta MC Mercier minerological Transformation of Heated Serpentine and their Impact on Dissolution during Aqueous phase mineral carbonation reaction in flue Gas conditions. Mineral 2019, 9, 680. hjttps://doi.org/10.3390/min 9110680.

Scanned with OKEN Scanner

दुग्धपाषाण, दुग्धे तथा पर्वतीजा, दुग्ध दुग्धोपला, क्षीरज्ञ वज्राभ, दीप्तिक सौध, गोमेदयनिज, दुग्धोपल तथा दुग्धपुर इसके पर्याय है ।

शोधन तथा मात्रा– इसका उल्लेख नहीं है । इसके सूक्ष्म चूर्ण को गुलाब जल से पीसकर प्रयुक्त करते है ।

Effect of temperature– When Talc is heated upto 800°C there is no change in the crystal structure of the talc. At 800 to 840°C the talc decomposed to enstatite, amorphous silica and water vapour. Around 1200°C enstatite gradually changed to clinoenstatite and amorphous silica changed to crestobalite around 1300°C.*

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. पाषाण का अन्य नाम है—
   a. मधुरकाष्ट संज्ञाय b. मधुर स्निग्ध संज्ञाय c. श्वेत वर्ण d. नील वर्ण
2. मृदु खनीज का वर्ग है—
   a. हरित वर्ग b. हरिद्रा वर्ग c. श्वेत वर्ण d. नील वर्ण
3. पाषाणादि किस वर्ग में रखा गया है?
   a. पाषाण b. उपरत्न c. साधारण रस d. विष वर्ग
4. मृदुपाषाण क्या है?
   a. Stone **b. Fossil** c. Gem d. Mani
5. क्या मोहस में उल्लिखित तत्व है?
   a. Ca **b. Si** c. Be d. C

* *RM Ewell, EN Bunting, RF Geller, Thermal Decomposition of Tale. Part of Journal of Research of the National Bureau of Standards. U.S. Department of Commerce. Volume 15. November 1935, pp551-556*

अध्याय **10**

रस द्रव्य परिचय–III

1. वैक्रान्त

वैक्रान्त को Tourmaline (Sodium Aluminium Borosilicate) कहा जाता है जिसका रासायनिक सूत्र [CCa. Na)x $(Mg, Al_6)x$ $\{B_3Al_2Si_6X(O,OH)30\}$]

पर्याय– वैक्रान्तञ्चैव विक्रान्तं वैक्रान्तं जीर्णवज्रकम् । कुवज्रं क्षुद्रकुलिश चूर्णवज्रञ्च तन्मतम् ॥
(र.र.स. 23/155)

वैक्रान्त, विक्रान्त, वैक्रान्त, जीर्णवज्र, कुवज्र, क्षुद्र कुलिश तथा चूर्ण वज्र इसके पर्याय हैं ।

विशेष– रसतरंगिणीकार ने वैक्रान्त की निरुक्ति निम्न दी है–

वज्रवत् सर्वरोगाणां हरणाय यतस्त्विदम् । धत्ते विक्रान्तिमतुलां वैक्रान्तं कथ्यते ततः ॥
(र.त. 23/156)

वज्र सदृश सभी रोगों को हरने की अनुपम शक्ति रखने के कारण इसे वैक्रान्त कहा जाता है ।

Minerological Identification

Nature	–	Crystalline prismatic
Colour	–	Black
Streak	–	Colourless
Cleavage	–	None, prismatic faces strongly striated vertically and crystals rounded to barrel shaped.
Fracture	–	Un even
Lusture	–	Vitreous
Tenacity	–	Brittle and often rather friable
Transparency	–	Translucent
Hardness	–	7 to 7.5
Sp.Gr.	–	3 to 3.2

प्राप्ति (Occurrence)– वैक्रान्त Granite pegatites में, Radial crystal form में सामान्य रूप से पाया जाता है । यह Metamorphic rocks ज्यादातर Schists एवं Gneisses में भी पाया जाता है । वैक्रान्त का प्रयोग खनिज (Mineral) तथा Gem stone (उपरत्न) के रूप में किया जाता है ।

Vaikranta is a common detrial heavy mineral in Sedimentary rocks.

यह भारत में राजस्थान, झारखण्ड, बिहार तथा कर्नाटक के Igneous तथा Metamorphic भूखण्ड (Terrain)

Scanned with OKEN Scanner

में पाया जाता है। यह उदयपुर, भीलवाड़ा, अजमेर तथा राजसमंद जिलों में पाया जाता है। वैक्रान्त Topaz Spodumene, cassiterite, fluorite तथा appatite के साथ भी पाया जाता है।

विन्ध्यस्य दक्षिणे भागे ह्युत्तरे चाऽस्ति सर्वतः। (र.र.स. 2/60)

वैक्रान्त विन्ध्य पर्वत के दक्षिण तथा उत्तर भाग में सर्वत्र पाया जाता है।

वक्तव्य– वैक्रान्त आधुनिक समय में किस द्रव्य से साम्यता रखता है। इस बारें में विद्वानों में मत भिन्नता है। फल्पुअरस्पार, फेल्स्पार, स्फटिक (Rock crystal) तथा टूर्मेलीन इन चारों से इसकी तुलना की जाती है। Ayurvedic Pharmacopoeia of India में इसे Tourmaline माना गया है।

भेद- रस ग्रन्थों में वैक्रान्त के सात या आठ भेद कहे गये हैं–

1. श्वेतो रक्तश्च पीतश्च नीलः पारावतच्छविः। श्यामलः कृष्णवर्णश्च कर्बुरश्चाष्टधा हि सः॥ (र.र.स. 2/54)

1. श्वेत, 2. रक्त, 3. पीत, 4. नील, 5. पारावत सदृश[1], 6. श्यामल, 7. कृष्ण, 8. कर्बुर (रंग बिरंगा, चितकबरा)

2. श्वेतः पीतस्था रक्तो नीलः पारावतप्रभः। मयूरकण्ठसदृशाश्चान्यो मरकतप्रभः॥ (र.र.स. 2/61)

1. श्वेत, 2. पीत, 3. रक्त, 4. नील, 5. पारावत सदृश, 6. मयूर कण्ठ (नील), 7. मरकत (हरा)

ग्राह्य लक्षण– अष्टास्त्रश्चाष्टफलकः षट्कोणो मृसणो गुरुः। शुद्धमिश्रित वर्णेश्च युक्तो वैक्रान्त उच्यते॥ (र.र.स. 2/53)

आठ अस्त्र (किनारा) आठ फलक तथा 6 कोण युक्त, भारी, चिकना शुद्ध तथा मिश्रित वर्ण वाला वैक्रान्त श्रेष्ठ होता है।

Tourmaline के तीन प्रकार होते हैं–

1. Alkali Tourmaline
2. Magnesium Tourmaline
3. Iron Tourmaline

वैक्रान्त शोधन

1. वैक्रान्तकाः स्युस्त्रिदिनं विशुद्धाः संस्वेदिताः क्षारपटूनि दत्त्वा।
अम्लेषु मूत्रेषु कुलत्थरम्भानीरेऽथवा कोद्रववारिपक्वाः।
कुलत्थक्वाथसंस्विन्नो वैक्रान्तः परिशुध्यति॥ (र.र.स. 2/65-66)

वैक्रान्त को तीन दिन, काञ्जी आदि अम्ल में या मूत्र में या कुलत्थ क्वाथ में या केले की जड़ के स्वरस या कोद्रव क्वाथ में या क्षार तथा नमक में स्वेदन करने से वैक्रान्त शुद्ध हो जाता है।

2. हयमूत्रेण तत्सेच्य तप्तं तप्तं त्रिसप्तधा। (रसे.चि. 7/63)

वैक्रान्त को अश्वमूत्र में 21 बार तपाकर बुझा लेने से शुद्ध हो जाता है।

वैक्रान्त मारण

1. म्रियतेऽष्टपुटैर्गन्धनिम्बुकद्रव संयुतः॥ (र.र.स. 2/67)

वैक्रान्त को समभाग गन्धक के साथ नींबू स्वरस की भावना देकर पुट देते हैं। इस प्रकार आठ पुट देने से वैक्रान्त की भस्म बन जाती है।

2. वैक्रान्तेषु च तप्तेषु हयमूत्रं विनिक्षिपेत्। पौनःपुन्येन वा कुर्याद् द्रवं दत्त्वा पुटं त्वनु॥
भस्मी भूतं तु वैक्रान्तं वज्रस्थाने नियोजयेत्॥ (र.र.स. 2/67-68)

वैक्रान्त को तप्त कर अश्व मूत्र में बुझाते हैं। ऐसा बार-बार करते हैं। तत् पश्चात् इसे अश्वमूत्र से भावना देकर पुट देते हैं। जब इसकी भस्म बन जाय तो से वद्र भस्म के स्थान पर प्रयक्त करते हैं।

भस्म वर्ण– रक्ताभ

वैक्रान्त सत्व पातन

सत्वपातनयोगेन मर्दितश्च वटीकृतः। मूषास्थो घटिकाध्मातो वैक्रान्तः सत्त्वमुत्सृजेत॥ (आ.प्र. 5/171)

सत्वपातनोपयुक्त (गुड़, टंकणं आदि) द्रव्यों के साथ मर्दन कर वटी बनाकर मूषा में रखकर धमन (1 घड़ी तक) करने से वैक्रान्त का सत्व निकल जाता है।

Probable chemical changes– Tourmaline is a six-member ring cyclosilicate having a trigonal crystal system. Study on Vaikranta Bhasma shows that it is a multi-mineral compound which contains iron and silica as major constituents. Vaikranta Bhasma scanned under FESEM shows that it is well agglomerated, having very tiny particle unarranged and irregular in shape with amorphous/semicrystalline nature.*

वैक्रान्त के गुण

आयुःप्रदश्च बलवर्णकरोऽतिवृष्यः प्रज्ञाप्रदः सकलदोषगदापहारी॥
दीप्ताग्निकृत्यविसमानगुणस्तरस्वी वैक्रान्तकः खलु वपुर्बललोहकारी॥
रसायनेषु सर्वेषु पूर्वगण्यः प्रतापवान्। (र.र.स. 2/55-56)

वैक्रान्त आयु, बल तथा वर्ण के बढ़ाने वाला, अति वृष्य, बुद्धिवर्द्धक, वातादि तीनों दोषों से उत्पन्न रोगों को नष्ट करने वाला, जाठराग्नि दीपक शरीर को बलवान तथा लोहे के सदृश दृढ़ करने वाला होता है। यह सभी रसायन में अग्रम होता है।

---

* Tripathi R. Rathore AS, Mehra BL. Raghubir R. Physicochemical study of Vaikranta Bhasma. Ancient Sci. life 2013;32:199-204.

Scanned with OKEN Scanner

मात्रा– नवतोलसो रसिकाया रुद्रांशाधिनं मृतम् । वैक्रान्तकं प्रयुञ्जन बलकालाद्यपेक्षया ॥
(र.त. 23/170)

1/24 रत्ती (कच = 24) से 1/8 (रुद्र = 8) रत्ती (5 मिग्रा. से 15 मिग्रा.) बल तथा काल के अनुसार प्रयोग करते हैं।

अनुपान– शहद

उपयोग– दौर्बल्य, मंदाग्नि, नपुंसकता, पाण्डु, ज्वर, श्वास, कास, यक्ष्मा आदि में।

अशुद्ध वैक्रान्त सेवन जन्य दोष

अशुद्धौ वज्रवैक्रान्तौ किलासं दाहसंततिम् । पार्श्वपीड़ा तथा पाण्डु कुरुतस्तौ विशोधयेत् ॥
(आ.प्र. 5/168)

अशुद्ध वैक्रान्त सेवन से किलास, दाह, पार्श्वपीड़ा, पाण्डु शोथ होते हैं। अतः शोधन उपरान्त इन्हें प्रयुक्त करना चाहिए।

वैक्रान्त के योग– 1. नवरत्नराजमृगांक रस
2. सूचिकाभरण रस
3. रत्नगिरि रस
4. अपूर्वमालिनीवसन्त रस
5. त्रैलोक्य तिलक रस

Research update

Research study was done on Vaikranta Bhasma in place of Vajra Bhasma to evaluate its anti tumour activity on Ehrlich Ascites Carcinoma in expermenal animals. Analysis on their blood and hepatic tissue for Survival time, Haematological profile, biochemical markers and antioxidant status showed that Vaikranta Bhasma possesses potent antitumour activity in mice.*

2. विमल (Iron Pyrite)

पर्याय– विमल, तापीज

Minerological Identification–

Nature– Massive cubic

Colour– Pale brass yellow, Tarnishes darken and iridescent

Cleavage– Indisinct

Streak– Greenish black

* *Tripathi R. Rathore RS, Mehra BL, Raghubir R, Physicochemical study of Vaikranta bhasma. Ancient sci life 2013;32:199-204.*

Fracture– Uneven but some times choncoidal

Tenacity– Brittle

Lusture– Metallic

Hardness– 6 to 6.5

Sp. gr. – 4.9 to 5.2

प्राप्ति स्थान

यह सामान्य रूप से अन्य Sulphides या Oxides के साथ quartz veins, sedimentary rock तथा metamorphic rock के साथ पाया जाता है। कभी-कभी यह कम मात्रा में सोने के साथ पाया जाता है जिससे इसे Fool's Gold कहा जाता है। यह Calcite, barite, quartz flurite, hematite, galena आदि के साथ पाया जाता है। भारत में यह सिंहभूमि (झारखण्ड), सलादीपुरा (बिहार) तथा धारवाड़ (कर्नाटक) में पाया जाता है।

भेद– रसरत्न समुच्चय में इसके तीन भेद किये गये हैं–

विमलस्त्रिविधः प्रोक्तो हेमाद्यस्तारपूर्वकः । तृतीयः कांस्यविमलस्तत्तत्कान्त्या स लक्ष्यते ॥
(र.र.स. 2/95)

1. हेम विमल– श्रेष्ठतम, पीत वर्ण
2. तार विमल– श्रेष्ठतर, श्वेत वर्ण
3. कांस्य विमल– श्रेष्ठ, कांस्य वर्ण

ग्राह्य स्वरूप– वर्तुलःकोण संयुक्तः स्निग्धश्च फलकान्वितः । (र.र.स. 2/96)
गोल, कोणयुक्त, फलक वाला तथा स्निग्ध विमल श्रेष्ठ होता है।

शोधन– 1. **आटरूषजले स्विन्नो विमलो विमलो भवेत् ।** (र.र.स. 2/98)
वासा क्वाथ से दोलायन्त्र विधि से स्वेदन करने पर विमल शुद्ध हो जाता है।

2. **जम्बीर स्वरसे स्विन्नो मेषशृङ्गीरसेऽथवा । आयाति शुद्धिं विमलो धातवाश्च यथाऽपरे ॥**
(र.र.स. 2/98-99)

जम्बीरी नींबू स्वरस या मेषशृङ्गी स्वरस में दोलायन्त्र से स्वेदन करने से भी विमल का शोधन हो जाता है।

विमल मारण

गन्धाश्मलकुचाम्लैश्च म्रियते दशभिः पुटैः । (र.र.स. 2/100)

शुद्ध विमल चूर्ण को समभाग गन्धक के साथ मिलाकर लकुच फल स्वरस से भावना देकर पुट देते हैं। ऐसा दस पुट देने से विमल की भस्म बन जाती है।

विमल सत्व पातन

सटङ्कलकुचद्रावैर्मेषशृंग्याश्च भस्मना । पिष्टो मूषादरे लिप्तः संशोष्य च निरुध्य च ॥

Scanned with OKEN Scanner

षट्प्रस्थकोकिलैर्ध्मातो विमलः सीससन्निभः । सत्त्वं मुञ्चति तद्युक्तो रसः स्यात्स रसायनः ॥
(र.र.स. 2/101-102)

विमल से समभाग टंकण तथा मेषशृङ्गी भस्म मिलाकर लकुच स्वरस से मर्दन (पिष्ट) कर उसे मूषा में लेप कर सुखा कर मूषा का मुख बन्द कर देते हैं । तत्पश्चात् इसे 6 प्रस्थ कोयले की अग्नि देने से सीसे जैसा विमल का सत्व निकल जाता है । यह सत्व पारद के साथ मिलाने से रसायन गुण वाला होता है ।

Probable chemical changes

Study done by Shweta S Nayak et al. on Vimal shows that raw Vimal can be considered as Iron havic cubic crystal structures. Vimal Bhasma prepared by classical Puta method as well as EHMF was identified as ferrous sulphide and ferric oxide. The crystal structure was found to be hexagonal and cubic.*

विमल के गुण

मरुत्पित्तहरो वृष्यो विमलोऽति रसायनः । (र.र.स. 2/96)

विमल वात पित्त नाशक, वृष्य तथा अत्यन्त रसायन गुण युक्त होता है ।

मात्रा– 1/2 रत्ती से 2 रत्ती (60 मिग्रा. से 250 मिग्रा.)

अनुपान– शहद

उपयोग– क्षय, पाण्डु, ग्रहणी, आदि में ।

अपक्व/अशुद्ध सेवन जन्य विकार शान्ति उपाय

विकारो यदि जायेत विमलाया निषेवणात् । शर्करा सहिता भक्षेत् मेषशृङ्गी दिनत्रयम् ॥
(वृ.र.रा.सु. विमलप्रक 111)

विमल सेवन से उत्पन्न विकार शान्ति हेतु मेषशृङ्गी चूर्ण को शर्करा के साथ तीन दिन सेवन कराते हैं ।

प्रमुख योग– 1. शूलान्तक रस, 2. सर्वेश्वर पर्पटी, 3. नवरत्नराजमृगांक रस, 4. विमल रसायन । 5. शीघ्र प्रभाव रस

Research update

*Study on iron (Pyrite) disulfide nanocrystal suggests that it could be a excellent antimicrobials and it does not significantly influence the cytotoxicity proving its as a non toxic metallic Sulphide.***

---

* *Nayak Shweta S et al. A comparative pharma ceutico Analytical study of Vimal Bhasma Prepared by classical Puta method and Electrical Horizontal Muffle Furnace. Deptt. of PG Studies in Rasa Shastra, Taranath Govt. Ayu. Medical college. Bellary, Karnataka. 2010.*

** *Santos-Gur J, Nuner-Anita RE, Mayen-Hernader SA, Martiner Alverer O_2 Acosta-Torres LS et al. Collaidol Synthesis of bio-compatible iron disulphide nanocrystals, Artif cells Nanomed. Biotechnol 2017, 6.18.*

3. चपल

चपल आधुनिक समय में क्या है इसके बारे में मतभिन्नता है । रसतरंगिणी की टीका में Selenium से उद्धोषित किया गया है । जबकि दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी जी की रसरत्न समुच्चय की हिन्दी टीका में इसे Bismuth ore लिया गया है । चपल को रसग्रन्थ में निम्न परिभाषित किया गया है–

वङ्गवत्द्रवते वह्नौ चापलस्तेन कीर्तितः । (र.र.स. 2/143)

अर्थात् वङ्ग की तरह शीघ्र पिघल जाने के कारण इसे चपल कहा जाता है ।

उत्पत्ति– यत्र जातौ नागवङ्गौः चपलस्तत्र जायते । (वृ.र.रा.सु.)

अर्थात् जहां नाग वङ्ग उत्पन्न होते हैं वहाँ पर चपल भी पाया जाता है । इसके अतिरिक्त रसरत्न समुच्चय के परिभाषा प्रकरण नागसम्भूत चपल तथा वङ्गसम्भूत चपल के निर्माण का वर्णन प्राप्त होता है ।

त्रिंशत्पलमितं नागं भानुदुग्धेन मर्दितम् । विमर्द्य पुटयेत्तावद्यावत्कर्षावशेषितम् ॥
न तत्पुटसहस्त्रेण क्षयमायाति सर्वथा । चपलोऽयं समादिष्टो वार्तिकैर्नागसम्भवः ॥
(र.र.स. 8/41-42)

तीस पल नाग को लेकर उसे अर्क दुग्ध से भवित करते हैं । तथा इसे तब तक पुट देते हैं जब तक कि यह 1 कर्ष बचे । अब इस शेष (1 कर्ष) को सहस्र पुट देने पर भी इसका क्षय नहीं होता है । यही नाग सम्भूत चपल है । ऐसा ही वंग में भी करने से शेष बचे हुए को वङ्ग सम्भूत चपल कहते हैं ।

भेद– रसरत्न समुच्चयं में वर्ण के आधार पर चार भेद किये गये हैं–

गौरः श्वेतोऽरूणः कृष्णश्चपलस्तु चतुर्विधः । (र.र.स. 2/145)

1. गौर, 2. श्वेत, 3. अरुण, 4. कृष्ण

रस कामधेनु में धातुओं के अनुसार 6 भेद बताये हैं–

1. स्वर्ण चपल, 2. तार चपल 3. ताम्र चपल, 4. तीक्ष्ण चपल, 5. नाग चपल, 6. वङ्ग चपल ।

ग्राह्य लक्षण

चपलः स्फटिकच्छायः षडस्रः स्निग्धको गुरुः । (र.र.स. 2/145)

चपल स्फटिक की आभा वाला, छः किनारे वाला, स्पर्श में चिकना तथा भारी होता है ।

चपल शोधन

जम्बीर कर्कोटकशृङ्गबेरर्विभावनाभिश्चपलस्य शुद्धिः ॥ (र.र.स. 2/147)

चपल को जम्बीर नींबू, कर्कोटक या आर्द्रक स्वरस की भावना देने से यह शुद्ध हो जाता है ।

चपल मारण

चपलेन समः सूतो निर्गुण्डी रस मर्दितः । पाचितो बालुकायन्त्रे रक्त भस्म प्रजायते ॥
(र.सम.शो.म.प्र. 222)

Scanned with OKEN Scanner

चपल को सप्तम भाग शुद्ध पारद के साथ घिसकर मिर्गुण्डी स्वरस से मर्दन करते हैं । तत्पश्चात् इसे बालुका यन्त्र में पाक करने से इसकी रस क्रिया की क्षमता बढ़ जाती है ।

मन्त्र पातन

शैलं तु चूर्णयित्वा तु धान्याम्लोष्णविषैर्विषैः । पिण्डं बद्ध्वा तु विधिवत्पातयेच्चपलं तथा ॥
(र.र.स. 2/148)

चपल के चूर्ण करके उसे धान्याम्ल तथा विष एवं उपविष के क्वाथ की भावना देते हैं । तथा पिण्ड बनाकर मूषा में रखकर धमन करने से इसका सत्व निकल जाता है ।

चपल के गुण

चपलो लेखनः स्निग्धो दैहलोहकरो मतः । रसराजसहायः स्यात्तिक्तोष्णमधुरो मतः ॥
(र.र.स. 2/144)

चपल, लेखन करने वाला, स्निग्ध, देह लोह कर, पारद के गुणों की वृद्धि करने वाला, तिक्त रस, उष्ण तथा मधुर विपाक होता है ।

अशुद्ध चपल सेवन जन्य दोष– अशुद्ध चपल सेवन से मन्यास्तम्भ, भ्रम, विस्फोट, दाह, प्रदर, जड़ता आदि होते हैं ।

दोष शान्ति हेतु उपाय– दुग्ध में चीनी मिलाकर पान कराते हैं । (र.सम.शो.मा. 229/230)

चपल योग– 1. चपल रस (प्रथम)
2. चपल रस (द्वितीय)
3. चपल बद्धरस

Research update

*Safety study done on Calx of Bismuth and Selenium according to OECD guidelines has shown that Bismuth calx have shown considerable change in hispothodogy reports while fewer changes in selenium clax. The Chapala Bhasma prepared by Bismuth and Selenium was nontoxic while selenium clax showed more safety profiel than Bismuth clax.**

4. रसक

रसक पर्याय

गोभद्रो रसकस्तुत्थः क्षितिकिट्टो रसोद्भवः । खर्परो नेत्ररोगारी रीतिकृत्ताम्ररंजकः ॥
(रसार्णव 7/37)

* *Prasanna Mathad, MR Pandya, Arathi Chandrau JL. Safety profile of Chapala Bhasma with special referenence to Bismuth and Selenium. Int. J. Res., Ayurveda. Pharm. 2022; 13(6):71-25 http://dx.doi.org/10.7897/2277-4343.1306159.*

गोभद्र, रसक, तुत्थ, क्षितिकिट्ट, रसोद्भव, खर्पर, नेत्ररोगारि, रीतिकृत तथा ताम्र रंजक रसक के पर्याय हैं ।

रसकस्तुत्थभेदः स्यात्खर्परं चापि तत्स्मृतम् । ये गुणास्तुत्थके प्रोक्तास्ते गुणा रसके स्मृताः ॥
(आ.प्र. 2/276)

रसक तुत्थ का भेद है तथा इसे खर्पर भी कहा जाता है । जो गुण तुत्थ के बताये गये हैं वही रसक के भी गुण है । रसतरंगिणी में इसे यशद कारणम् अर्थात् जिससे यशद की प्राप्ति हो, कहा गया है । जिससे यह ज्ञात होता है कि यह यशद (Zn) का ही कोई खनिज/यौगिक है/रसार्णव में इसके तीन भेद कहे गये हैं तथा इनके लक्षणों का वर्णन निम्न हैं–

मृत्तिका गुड पाषाण भेदतो रसकस्त्रिधा । पीतस्तु मृत्तिकाकारो मृत्तिकारसको वरः ॥
क्षीयते नापि बह्निस्थः सत्त्वरूपो महाबलः ॥ (रसार्णव 7/28-29)

1. मृत्तिकाभ, 2. गुड़ाभ 3. तथा पाषाण तीन प्रकार का रसक होता है । मृत्तिका पीत वर्ण का होता है तथा इसका अग्नि पर क्षय नहीं होता है सबसे श्रेष्ठ होता है । इस गुण के कारण (ZnO) से इसे तुलना की जाती है । गुड़ाभ को ZnS तथा पाषाणाभ को ($ZnCO_3$)कहा जा सकता है ।

Minerological Identification

Smithsonite

Colour– Yellow, White, Grey etc.
Cleavage– Perfect
Tenacity– Brittle
Lusture– Vitrceous may be pearly
Fracture– Uneven
Streak– White
Sp. gr.– 4.4 to 4.5
Hardness– 4.5

प्राप्ति स्थान– Zin ore दो प्रकार के deposits के रूप में पाये जाते हैं । Primary zinc ore पतले vein के रूप में पाये जाते हैं जिन्हें Rakes कहते हैं । Secondary ore, primary ore के weathering के परिणाम स्वरूप निर्मित होते हैं । इनमें most common $ZnCO_3$ calamine या Smithsonite है । जो कि Zinc ore के प्राप्ति स्थान के Oxidized zone में पाये जाते हैं । भारत में यह झारखंड, पंजाब, राजस्थान आदि प्रदेशों में पाया जाता है ।

भेद–

रसको द्विविधः प्रोक्तो दर्दुरः कारवेल्लकः । सदलो दर्दुरः प्रोक्तो निर्दलः कारवेल्लकः ॥
सत्वपाते शुभः पूर्वो द्वितीयश्चौषधादिषु ॥ (र.र.स. 2/149-150)

रसरत्न समुच्चय में रसक के 2 भेद कहे गये हैं–

1. दर्दुर (Calamine) ⟩
2. कारवेल्लक (Smithsonite) ⟩ $ZnCO_3$

Scanned with OKEN Scanner

ग्राह्य लक्षण

सत्व पातन हेतु मडल रसक (दर्दुर) तथा औषधि कार्य हेतु निर्दल (कारवेल्लक) का ग्रहण करना चाहिए ।

रसक शोधन

1. कटुकालबुनिर्य्यास आलोड्य रसकं पचेत् । शुद्धं दोषविनिर्मुक्तं पीतवर्णं च जायते ॥
(र.र.स. 2/154)

कड़वी कुम्भी के स्वरस में रसक को पकाने से यह शुद्ध हो जाता है तथा इसमें पीले वर्ण की उत्पत्ति हो जाती है ।

2. नृमूत्रे वाऽश्वमूत्रे वा तक्रे वा काञ्जिकेऽथवा । प्रताप्य मज्जितं सम्यक् खर्परं परिशुद्धयति ॥
(र.र.स. 2/156)

खर्पर को तप्त कर नर मूत्र, अश्वमूत्र, तक्र या काञ्जी में बुझाने (सात बार) से यह सम्यक् रूप से शुद्ध हो जाता है ।

रसक मारण

खर्परं पारदेनैव चूर्णयित्वा दिनं पचेत् । बालुका यन्त्र मध्यस्थं शोणं भस्म प्रजायते ॥
(आ.प्र. 2/289)

पारद तथा रसक को समान भाग लेकर बालुका यन्त्र में एक दिन पाक करने से इसकी लाल रंग की भस्म बन जाती है ।

सत्व पातन

साभयाजतुभूनागनिशाधूमजटङ्कणम् । मूकमूषागतं ध्मातं शुद्धं सत्त्वं विमुञ्चति ॥
(र.र.स. 2/163)

हरीतकी, शिलाजतु, केचुआ, हल्दी, टंकण, गृहधूम इसके प्रत्येक के चतुर्थांश के साथ खर्पर को घोटकर अन्ध मूषा में धमन करने सत्व निकल आता है ।

Probable chemical changes– Study done by H.S. Subha et al. shows that the percentage of Zinc in case of $ZnCO_3$ is 48-95%, 47.26% and 53.95% in Ashuddha, Shodhita and Bhasma respectively while in case of ZnO it was 85.38%, 86.10% and 69.5% in Ashuddha, Shodhita and Bhasma respectively.*

रसक के गुण

रसकः सर्वमेहघ्नः कफ पित्त विनाशनः । नेत्ररोगक्षयघ्नश्च लोहपारद रञ्जनः ॥
(र.र.स. 2/151)

* Shubha HS, Hiramath RS. Preparation and physico chemical analysis of Rasaka Bhasma. Ayu. 2010 oct; 31(4):509-10 doi:10.4103/0974-8520.82025.

यह सभी प्रकार के मेह का नाशक, कफ पित्त नाशक, नेत्र रोग नाशक तथा लोह एवं पारद दोनों का रञ्जन करने वाला होता है ।

मात्रा

गुञ्जार्द्धतः समारभ्य गुञ्जाद्वितय संमिता । खर्परस्य मता मात्रा रोगापनयनक्षमा ॥
(र.त. 21/197)

1/2 रत्ती (60 mg) से 2 रत्ती (250 mg) तक इसकी मात्रा प्रयुक्त करते हैं ।

अनुपान– शहद

उपयोग

निशेवितं निहन्त्याशु मधुमेहमपि ध्रुवम् । पित्तं क्षयं च पाण्डुं च श्वयथुं गुल्ममेव च ॥
रक्तगुल्मं च नारीणां प्रदरं सोमरोगकम् । योनिरोगानशेषांश्च विषमांश्च ज्वरानपि ॥
रजःशूलं च नारीणां कासं श्वासञ्च हिध्मिकाम् ॥ (र.र.स. 2/170-72)

रसक के प्रयोग से (खाने से) मधुमेह, निश्चित ही शीघ्र समाप्त हो जाता है । पाण्डु, शोथ, गुल्म, रक्तगुल्म, प्रदर, सोमरोग, योनिरोग, विषमज्वर, रजःशूल, श्वास, कास तथा हिक्का को नाश करता है ।

अशुद्ध खर्पर सेवन जन्य विकार

अशुद्ध खर्परः कुर्याद्वान्तिं भ्रान्तिं विशेषतः । तस्माच्छोध्यः प्रयत्नेन यावद्वान्तिविवर्जितः ॥
(आ.प्र. 2/283)

अशुद्ध खर्पर सेवन से वमन तथा भ्रम रूप से उत्पन्न होते हैं । अतः इसे प्रयत्न पूर्वक शुद्ध करना चाहिए ।

उत्पन्न विकार शान्ति हेतु उपाय

रसक निषेवणतो यदि रोगाः प्रादुर्भवन्ति मनुजानाम् । तेनाशमाप्नुवन्ति पीतं गोमूत्रसप्ताहात् ॥
(वृ.र.रा.सु. रसक प्रक. P 122)

यदि रसक सेवन से विकार उत्पन्न हो जाय तो उसे दूर करने हेतु एक सप्ताह तक गोमूत्र का पान करना चाहिए ।

प्रमुख योग–
1. लक्ष्मी विलास रस
2. प्रदरान्तक रस
3. कस्तूरी भैरव रस
4. बसन्तमालती रस
5. लघु मालनी बसन्त रस

Research update

Rasaka Bhasma prepared with $ZnCO_3$ shows better antimicrobial result than Rasaka bhasma prepared out of ZnO.*

* Shubha HS, Hiramath RS. Preparation and physico chemical analysis of Rasaka bhasma. Ayu. 2010 oct; 31(4):509-10 doi:10.4103/0974-8520.82025.

Scanned with OKEN Scanner

पर्याय

अञ्जनं तु समाख्यातं पेचकं लोचकं तथा। (र.त. 22/35)

पेचक तथा लोचक ये दो अञ्जन के पर्याय है-

सौवीराञ्जन

सौवीराञ्जनकं ख्यातं सौवीरं तु सुवीरजम्। कृष्णाञ्जनं तथा कालाञ्जनञ्चापि प्रकीर्तितम्॥

(र.त. 22/37)

सौवीर, सुवीरज, कृष्णांञ्जन तथा कालाञ्जन, सौवीराञ्जन के पर्याय हैं।

स्रोतोऽञ्जन

स्रोतोऽञ्जनं तु स्रोतोजं यामुनेयञ्च यामुनम्। नीलाञ्जनं तदेवोक्तं कपोतांजनकाह्वयम्॥

(र.त. 22/36)

स्रोतोज, यामुनेय, यामुनम, नीलाञ्जन तथा कपोताञ्जन स्रोतोऽञ्जन के पर्याय है।

रसाञ्जन

तार्क्ष्यजं तार्क्ष्यशैलं च रसगर्भं रसाञ्जनम्॥ (आ.प्र. 2/234)

तार्क्ष्य, तार्क्ष्यशैल, रसगर्भ रसाञ्जन के पर्याय हैं।

नीलाञ्जन

शक्रभूमिज, सुवर्णघ्न, लौहमार्दवकर।

पुष्पाञ्जन

रीतिगर्भ, कुसुमाञ्जन, रीतिपुष्पक।

कुलत्थाञ्जन

कुकुलाली लोकहिता कुम्भकारी मलापहा। (आ.प्र. 2/240)

कुकुलाली, लोकहिता, कुम्भकारी तथा मलापहा इसके पर्याय हैं।

Minerological Identification सौवीराञ्जन

Nature– Usually lumps and heavy cubic crystals
Colour– Grey
Streak– Grey
Cleavage– Cubic
Fracture– Even
Lusture– Metallic
Tenacity– Brittle
Transparency– Opaque
Hardness– 2 to 3
Sp. Gr.– 7 to 8

भेद

रसरत्न समुच्चय में अञ्जन के 5 भेद बताये गये हैं-

सौवीरमञ्जनं प्रोक्तं रसाञ्जनमतः परम्। स्रोतोऽञ्जनं तदन्यच्च पुष्पाञ्जनकमेव च। नीलाञ्जनं च.....॥ (र.र.स. 3/98)

1. सौवीराञ्जन
2. रसाञ्जन
3. स्रोतोञ्जन
4. पुष्पाञ्जन
5. नीलाञ्जन

सुवीरानदीभवं सौवीरम्। (चक्र.)

मतं स्रोतोञ्जनं श्रेष्ठं विशुद्धं सिन्धुसम्भवम्। (हेमाद्रि टीका)

आयुर्वेद प्रकाश में स्रोतोञ्जन के 2 भेद कहे गये हैं- 1. श्वेत तथा 2. कृष्ण। श्वेत को स्रोतोञ्जन तथा कृष्ण को सौवीराञ्जन कहा है। इसके अतिरिक्त अंजन के निम्न 6 भेद कहे हैं-

1. स्रोतोञ्जन
2. सौवीराञ्जन
3. रसाञ्जन
4. नीलाञ्जन
5. पुष्पाञ्जन
6. कुलित्थाञ्जन

उपरोक्त अंजन का आधुनिक मतानुसार साम्यता निम्न है-

1. सौवीराञ्जन- Sb_2S_3 (डी.ए. कुलकर्णी अनुसार), API में PbS कहा है।
2. स्रोतोञ्जन- API के अनुसार Sb_2S_3 हैं। तथा इसी का पर्याय नीलाञ्जन एवं कपोताञ्जन कहा गया है।
3. रसाञ्जन- Extract of Berbaris aristata
4. पुष्पाञ्जन- ZnO

प्राप्ति– भारत में यह राजस्थान, आंध्र प्रदेश, गुजरात, उड़ीसा तथा पश्चिम बंगाल से सौवीराञ्जन प्राप्त किया जाता है। सौवीराञ्जन Metamorphic तथा Sedimentary चट्टानों में मिला हुआ तथा Veins या Lodes के रूप में पाया जाता है।

ग्राह्य लक्षण

1. **सौवीराञ्जन– बाह्यतः खलु धूमाभं भगे त्वतिसमुज्जवलम्। घर्षे खलु मषीवर्णं सौवीराञ्जनमुच्यते॥** (र.त. 22/39)

Scanned with OKEN Scanner

सौवीराञ्जन बाहर से देखने में धूम वर्ण का तथा तोड़ने पर अत्यधिक चमकदार घिसने पर काले वर्ण का होता है ।

2. **स्रोतोञ्जन– बल्मीक शिखराकारं भङ्गे नीलोत्पलद्युति । घृष्टं तु गैरिकच्छायं स्रोतोजं लक्षयेद् ध्रुवम् ॥** (र.र.स. 3/99)

स्रोतोञ्जन दीमक की मिट्टी जैसा शिखरा कार, तोडने पर नीले कमल के जैसा चमकदार घिसने पर लाल रंग की रेखा खींचने वाला होता है ।

3. **रसाञ्जन– पीताभं रसाञ्जन्** (र.र.स. 3/98)

रसाञ्जन पीले रंग का होता है ।

वक्तव्य– रसाञ्जन के सम्बन्ध में मतभिन्नता देखी जाती है । इसके पर्याय रसगर्भ, रसोद्भव, आदि का उल्लेख होने से पारद का कोई खनिज का ग्रहण होता है । रीति (पित्तल धातु) के धमन से प्राप्त किट्ट को भी रसाञ्जन कहा गया है । तथा इसके अभाव में दार्वी क्वाथ का घन लेने का उल्लेख है ।

रीत्या तु ध्मातमानायां तत्किट्टन्तु रसाञ्जनम् । तद्भावे तु कर्त्तव्या दार्वीक्वाथ समुद्भवम् ॥

रसाञ्जन के नाम से वर्तमान समय में दारुहरिद्रा क्वाथ का घन लिया जाता है ।

दार्वीक्वाथसमं क्षीरं पादपक्वं यदा घनम् । तदा रसाञ्जनं ख्यातं तन्नेत्रयोः परमं हितम् ॥ (आ.प्र. 2/234)

दार्वी क्वाथ के समान मात्रा में क्षीर (अजा क्षीर) को लेकर पकाने पर जब यह घन हो जाय या चौथाई बचे तो इसे उतार लेते हैं । यही रसांञ्जन है ।

4. **नीलाञ्जन– नीलाञ्जनं गुरु–** (र.र.स. 3/100)

प्रो. डी. ए. कुलकर्णी जी ने अपनी टीका में इसे लेड तथा सल्फर का यौगिक माना है ।

5. **पुष्पाञ्जन– पुष्पाञ्जनं सितं चैव–** (र.र.स. 3/100)

पुष्पाञ्जन श्वेत होता है ।

वक्तव्य– पुष्पाञ्जन के विषय में मतभेद है । आचार्य डी.ए. कुलकर्णी जी ने इसे निम्न कहा है–

1. पुष्प से प्राप्त अंजन तो विशेष प्रकार के पुष्पों से प्राप्त विशुद्ध काश्मीरी मधु से इसे ग्रहण कर सकते हैं ।
2. पुष्पकासीस से निर्मित अंजन पुष्पाञ्जन हो सकता है । पुष्प कासीस का पर्याय नयनौषध दिया है ।
3. आयुर्वेद प्रकाश के अनुसार रीति किट्ट से निर्मित है ।
4. फुल्ल तुवरी को भी पुष्पाञ्जन से ग्रहण किया जाता है क्योंकि ये श्वेत तथा नेत्र रोग में प्रयुक्त होती है ।
5. रस तरंगिणी ने इसे निम्न कहा है–

रीतिका द्रावण विधौ रीतिस्थं यशदं द्रुतम् । समेत्यम्बर पीयूष योगेन सित चूर्णताम् ॥
तदेवसितचूर्णन्तु पुष्पाञ्जनमुदीरितम् । भस्त्राध्मातं पुष्पितं तु यशद वा तदाह्वयम् ॥
(र.त. 22/49-50)

पीतल को द्रवित करते समय उसमें उपस्थित यशद (Zn) पिघल कर ओषजन (Oxygen) से मिलकर श्वेत चूर्ण का रूप धारण कर लेता है । इसी श्वेतचूर्ण को पुष्पाञ्जन कहा जाता है । या केवल यशद को तेज आँच में धमन करने से इसका पुष्प बन जाता है ।

6. **कुलत्थाञ्जन– कृष्णं कुलत्थकं ।** ये काले रंग का होता है ।

शोधन– अञ्जनानि विशुध्यन्ति भृङ्गराजनिजद्रवैः । सूर्यावर्त्तादियोगेन शुद्धिमेति रसाञ्जनम् ॥ (र.र.स. 3/105)

भृंगराज पत्र स्वरस की भावना देने से अंजन (सभी) शुद्ध हो जाते हैं । सूर्यावर्त्तादि योग से रसाञ्जन का शोधन हो जाता है ।

सत्वपातन– मनोह्वासत्त्ववत्सत्त्वमञ्जनानां समाहरेत् । (र.र.स. 3/106)

मनःशिला के सत्वपातन विधि की तरह अञ्जन का सत्वपातन करना चाहिए ।

Probable chemical change

Study on Shodhan of Srotanjana shows that it is effective to decreases the toxicity of Srotoanjana but there is no considerable change occurs in a chemical constituent of Ashodhita or Shodhita Srotoanjana.*

अञ्जन के गुण

1. **सौवीराञ्जन– सौवीरमञ्जनं धूम्रं रक्तपित्तहरं हिमम् । विषहिध्मादिरोगघ्नं व्रण शोधन रोपणम् ॥** (र.र.स. 3/100)

सौवीरांजन धूम्र वर्ण का, शीत वीर्य, रक्तपित्त, विष दोष, हिक्का को दूर करनेवाला व्रण का शोधक तथा रोपण करने वाला होता है ।

2. **रसाञ्जन– रसाञ्जनञ्च पीताभं विषवक्त्रगदापहम् । श्वासहिध्मापहं वर्ण्यं वातपित्तास्त्रनाशनम् ॥** (र.र.स. 3/101)

रसाञ्जन पीले वर्ण का विष दोष तथा मुखरोग नाशक, हिक्का, श्वास रोग नाशक, वर्ण्य, वात, पित्त, तथा रक्त, रोगनाशक होता है ।

3. **स्रोतोऽञ्जन– स्रोतोऽञ्जनं हिमं स्निग्धं कषायं स्वादु लेखनम् । नेत्र्यं हिध्माविषच्छर्दि कफपित्तास्त्ररोगनुत् ॥** (र.र.स. 3/102)

स्रोतोञ्जन शीत वीर्य, स्निग्ध, कषाय, मधुर तथा लेखन करने वाला होता है । यह नेत्रों के लिए हितकर, हिक्का, विष, छर्दि, कफ, पित्त तथा रक्त रोग नाशक होता है ।

4. **पुष्पाञ्जन– पुष्पाञ्जनं सितं स्निग्धं हिमं सर्वाक्षिरोगनुत् । अतिदुर्धरद्विध्माघ्नं विष ज्वरगदापहम् ॥** (र.र.स. 3/103)

---

* Gautam DNS : Metallurgical and solubility study of Ashodhita and Shodhita Srotoanjana. Int. J. Pharma Sci. Res 2018;9(6):2579-84.doi:10.13040/IJPSR.0975-8232.9(6).2579-84.

Scanned with OKEN Scanner

यह नेत्र वर्ण का स्निग्ध, शीत वीर्य तथा सभी नेत्ररोगों को दूर करने वाला, अति कण्टकारी हिक्का, विष तथा ज्वर का नाश करती है ।

5. नीलाञ्जन– नीलाञ्जनं गुरु स्निग्धं नेत्र्यं दोषत्रयापहम् । रसायनं स्वर्णघ्नं लोहमार्दव कारकम् ॥ (र.र.स. 3/104)

नीलाञ्जन भारी, स्निग्ध, नेत्रों को हितकर, तीनों दोषों का नाशक, रसायन, स्वर्ण का मारण करने वाला तथा धातुओं को मृदु करने वाला होता है ।

मात्रा– गुञ्जार्धतः समारभ्य गुञ्जैकमितमञ्जनम् । दिनद्वयं त्रयं वापि प्रयुञ्जीत भिषग्वरः ॥ (र.त. 22/47)

1/2 रत्ती (60 मिग्रा.) से 1 गुञ्जा (120 मिग्रा) 2 दिन या 3 दिन तक (सौवीराञ्जन तथा स्रोताञ्जन)

6. कुलित्थाञ्जन– कुलित्था दृक्प्रसादा च चक्षुष्या च कुलित्थका । (आ.प्र. 2/240)

यह दृष्टिप्रसादन, चक्षुष्य होती है ।

चिकित्सकीय प्रयोग– नेत्ररोग, रक्त प्रदर, हिक्का, श्वास, विष आदि में

प्रमुख योग

सौवीराञ्जन	स्रोताञ्जन	नीलाञ्जन	रसाञ्जन
1. तिमिरहर अंजन	नवाङ्ग वटिका	वडवानल रस	पुष्यानुग चूर्ण
2. तुहिनाञ्जन	ताम्रादि वर्ति	शुल्वादि वर्ति	पीयूषवल्ली रस
3. अञ्जन त्रितय	अंञ्जन त्रितय	रसेन्द्रादि वर्ति	पत्रांगासव
4. सूर्याञ्जन	भूतभैरव रस	षडंग वर्ति	चन्दनादि चूर्ण
5. सौवीराञ्जन चूर्ण		गरूड़ाञ्जन	प्रमेहमुद्गर रस

Research update

Analytical study on Rasanjana shows that it is having loss on drying 6.0%, ash value 7.2% acid insoluble ash 55.1% alcohol soluble extractive value 15% and water soluble extractive value 18.2%.*

6. कंकुष्ठ

उत्पत्ति– हिमवत्पादशिखरे कङ्कुष्ठमुपजायते । (र.र.स. 3/109)

हिमालय पर्वत के नीचे वाले पर्वत/स्थान पर कङ्कुष्ठ उत्पन्न होता है ।

वक्तव्य– कङ्कुष्ठ के विषय में मतान्तर है जिससे यह एक संदिग्ध द्रव्य है । ये मतान्तर निम्न है–

1. डल्हण के अनुसार कुछ लोग इसे कांचन क्षीरी या स्वर्ण क्षीरी मानते हैं । (डल्हण टीका सु.चि. 38/29-30)
2. आढ़मल्ल की टीका में इसे स्वर्णक्षीरी माना है । रक्तक्षीर सेहुण्ड इति प्रतीते कहा है ।

* Kanchan Bhawarlal Suthar et al : Pharmaceutical and Analytical study of Rasanjana W.S.R. Ayurved Prakash Samhita.International Ayurvedic Medical Journal (Online) 2020 (cited December 2020).

3. आचार्य यादव जी ने इसे रेवन्द या गैम्बोज कहा है ।
4. पं. शालिग्राम जी इसे मुर्दासंग कहा है ।
5. रसरत्न समुच्चय में इसे नये पैदा हुए हाथी के बच्चे की विष्ठा (श्याम पीतवर्ण) तथा किसी के अनुसार घोड़े को बच्चे को नाल (श्वेतपीत वर्ण) है । यथा–

केचिद्वदन्ति कङ्कुष्ठं सद्योजातस्य दन्तिनः । वर्चश्च.....॥
कतिचित्तेजिवाहानां नालं कङ्कुष्ठसंज्ञकम् ॥ (र.र.स. 3/111-12)

वर्तमान समय में कंकुष्ठ तमाल वृक्ष Mysor Gambose tree (Garcinia Morella) का स्राव है । जिसे निकालने के कुछ देर तक रखने से यह जम जाता है तथा चूर्ण रूप हो जाता है । यह विदेशों से भारत में आता है ।

पर्याय– कङ्कुष्ठं काक कुष्ठं वराङ्गं कोलबालुकम् ॥ (आ.प्र. 2/315)

कङ्कुष्ठ, काककुष्ठ, वराङ्ग तथा कोल बालुक इसके पर्याय है ।

भेद– यह 2 प्रकार का होता है–

तत्रैकं नलिकाख्यं हि तदन्यद्रेणुकं मतम् ।

1. नलिकाख्य
2. रेणुक

ग्राह्य लक्षण

पीतप्रभं गुरु स्निग्धं श्रेष्ठं कुङ्कुष्ठमादिमम् । श्यामपीतं लघु व्यक्तसत्त्वं नेष्टं हि रेणुकम् ॥ (र.र.स. 3/110)

श्रेष्ठ ककुंष्ठ पीली प्रभा वाला, भारी तथा स्निग्ध होता है । यह नलिकाख्य होता है । जबकि रेणुकाख्य श्यामपीत्त, हल्का तथा निःसत्व होता है तथा यह उपयुक्त नहीं होता है ।

शोधन– कङ्कुष्ठं शुद्धिमायाति त्रिधा शुण्ठयम्बु भावितम् । (र.र.स. 3/114)

कंकुष्ठ का शोधन हेतु उसे शुण्ठी क्वाथ की तीन भावना देते हैं ।

सत्वपातन– सत्वरूप होने से इसका सत्व पातन नहीं करते हैं ।

सत्त्वाकर्षोऽस्य न प्रोक्तो यस्मात्सत्त्वमयं हि तत् ॥ (र.र.स. 3/114)

कङ्कुष्ठ के गुण–कङ्कुष्ठ तिक्त कटुकं वीर्योष्ण चातिरेचन् । (र.र.स. 3/113)

कङ्कुष्ठ तिक्त, कटु, वीर्य में उष्ण तथा अति विरेचन कराने वाला होता है ।

मात्रा– भजेदेनं विरेकार्थे ग्राहिभिर्यवमात्रया । (र.र.स. 3/115)

विरेचन हेतु 1 यव मात्रा प्रयोग करना चाहिए ।

Scanned with OKEN Scanner

कंकुष्ठ से उत्पन्न विकार शान्ति हेतु उपाय

बबूंरिमूलिकाक्वाथो जीरसौभाग्यकं समम् । कङ्कुष्ठविषनाशाय भूयो भूयः पिबेन्नरः ॥
(र.र.स. 3/117)

बबूल मूल क्वाथ को जीरा तथा टंकण के साथ बार-बार कंकुष्ठ से उत्पन्न विकार से पिलाना चाहिए ।

प्रमुख योग– 1. धन्वन्तरि रस
2. मृत संजीवन रस
3. शोथोदरारि रस
4. उदावर्तहर घृत
5. सर्वेश्वर पर्पटी

Research update

Study on G. Morella show that it is having different secondary metabolites like Xanthones, benzophenones, flavonoids, phenolic acids, organic acids and terpenoids obtained from different part. These are having antioxidant, hepato protective, anti cancer, anti inflammatory, antimicrobial and larvicidal properties.*

7. अग्रिजार

प्राप्ति स्थान– यह उष्ण कटिबन्धीय समुद्री भागों मन्नार, अफ्रीका तथा लक्षद्वीप एवं निकोबार द्वीप समूह से प्राप्त होता है ।

अग्रिजार को निम्न वर्णित किया गया है–

समुद्रेणाग्निनक्रस्य जरायुर्बहिरुज्झितः । संशुष्को भानुतापेन सोऽग्निजार इति स्मृतः ॥
(र.र.स. 3/135)

समुद्र में पाये जाने वाले अग्रिनक्र नाम के जन्तु का जरायु जो सूर्य की किरणों द्वारा सूख जाता है उसे अग्रिजार कहा जाता है ।

वक्तव्य– कुछ लोगों के मत से यह ह्वेल मछली का शुष्क मल है जो इस प्राणी के मर जाने के उपरान्त शरीर से पृथक होकर समुद्र में आ जाता है तथा इसे मछुवारे एकत्र कर लेते हैं । पूर्ण रूप से सूख जाने पर इसमें एक विशेष सुगन्ध आती है ।

ग्राह्य लक्षण

जाराभं दहति स्पर्शात्पिच्छिलं सागरोत्प्लवम् । जरायुस्तच्चतुर्वर्णं श्रेष्ठं तेषु सलोहितम् ॥
(आ.क.क्रि.वि. 1/238)

* Murthy HN, Dalawai D. Dewin YH, Ibrahim A. Phytochemicals and Biological Activities of Garcinia morelle (Gaertn.) Desr : A Review. Molecules 2020. Dec 2; 25(23):5690.

स्पर्श में चिकना, सागर पर तैरने वाला तथा लाल वर्ण का श्रेष्ठ होता है ।

शोधन– रसरत्न समुच्चय में इसका शोधन न करने पर उल्लेख किया है जिनके कारण में कहा है कि क्योंकि यह बहुत दिन तक क्षारीय जल में पडा रहता है अतः इसके शोधन की आवश्यकता नहीं होती है । यथा—

यदब्धिक्षार संशुद्धस्तस्माच्छुद्धिर्न दीष्यते ॥ (र.र.स. 3/135)

गुण–

अग्रिजारास्त्रिदोषघ्नो धनुर्वातादिवातनुत् । वर्धनो रसवीर्यस्य दीपनो जारणस्तथा ॥
(र.र.स. 3/136)

अग्रिजार त्रिदोषनाशक, धनुर्वात नाशक, पारद वीर्य वर्द्धक, दीपन तथा जारण में प्रयुक्त होता है ।

मात्रा– 1/4 से 1/2 रत्ती

प्रमुख योग– 1. वृहतवात चिन्तामणि रस
2. जवाहर मोहरा वटी
3. याकूती
4. चिन्तामणि रस
5. वडवानल रस

Research update

Ambergris occurs one in 100 sperm whales. It occurs in the rectum of whale but neither causes nor betrays diseases. It has been prized for over a thousand years as medicine condiment, aphrodisiac or perfume. Ambergris taken fresh from whale's rectum has a faecal smell but when it is dried out and matured and samples of good quality acquire a delicious and subtle fragance. It contains Ambreine ($C_{10}H_{52}O$) 25-40%, epi-coprosterol, free and esterified 30 to 40%, ketones as 6-8%.

[Robert clarke, the origin of Ambergris, LAJAM 5(1):7-21 June 2006].

8. गिरिसिन्दूर (Red oxide of Mercury, HgO)

पर्याय

सिन्दूरं गिरिसिन्दूरं महिला भाल भूषणम् । गणेश, भूषणञ्चैव तथा श्रङ्गार भूषणम् ॥
(र.त. 21/148)

Minerological Identification— (HgO)

Crystals– Orthorhombic
Colour– Deep red, Brounish red to brown
Diaphaneity– Transparent, Translucent
Cleavage– Perfect

Scanned with OKEN Scanner

Tenacity– Sectile

Streak– Yellow-brown

Lustre– Sub-adamantine, vitreous

Hardness– 1.5 to 2

प्राप्ति– रसरत्न समुच्चय में इसकी प्राप्ति स्थान के बारे में निम्न वर्णन किया है–

महागिरिषु चात्पीत्यः पाषाणान्तः स्थितो रसः । (र.र.स. 3/137)

बड़े पर्वतों के पत्थरों के बीच में कभी-कभी थोड़ी मात्रा में पारद शुष्क तथा लाल रंग की अवस्था में पाया जाता है ।

वक्तव्य– रसतरंगिणी में गिरि सिन्दूर तथा नाग सिन्दूर दोनों को पर्याय लिखा है । आचार्य दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी जी अपनी टीका में गिरि सिन्दूर को नाग सिन्दूर से भिन्न माना है तथा गिरि सिन्दूर को HgO माना है एव मौंट्रोयडाइट खनिज से तुलना की है । इसके पक्ष में इसके स्वरूप अर्थात् लाल रंग एवं सूखा तथा इसके गुण नेत्र का प्रमाण प्रस्तुत किया है । जबकि नाग सिन्दूर के गुणों में उष्ण, विसर्प, कुष्ठ आदि नाशक कहा है ।

भेद– रस जल निधि में इसके-इसके भेद कहे है–

1. गिरि सिन्दूर
2. नाग सिन्दूर

ग्राह्य लक्षण

शुष्कशोणः स निर्दिष्टो गिरि सिन्दूर संज्ञया ॥ (र.र.स. 3/137)

गिरि सिन्दूर लाल रंग का शुष्क होता है ।

विमर्श– आयुर्वेद प्रकाश में सिन्दूर शोधन की निम्न विधि का वर्णन किया है–

दुग्धाम्लयोगतस्तस्य विशुद्धिर्गदिता बुधैः । (आ.प्र. 4/90)

दूध तथा अम्ल द्रव्यों से इसकी शुद्धि हो जाती है ।

Probable chemical changes– HgO decomposes on exposure to light on or heating above 500^0C. Heating produces highly toxic mercury fumes and oxygen.

गुण– त्रिदोषशमनं भेदि रसबन्धनमग्रिमम् । देहलोहकरं नेत्र्यं गिरिसिन्दूरमीरितम् ॥ (र.र.स. 1/138)

गिरिसिन्दूर त्रिदोष शमन करने वाला, भेदन करने वाला, नेत्रों के लिए हितकर रसबन्धन करने वाला, देह तथा लोह कर होता है ।

उपयोग– पामा, विचर्चिका, विसर्प आदि रोग में ।

प्रमुख योग– 1. सिन्दूराद्य मलहर
2. गन्धकाद्य मलहर

3. जीरकाद्य तैल
4. सिन्दूराद्य तैल

Research update

Giri Sindura chemically identified as Mercuric oxide (HgO). It is naturally available in mountains containing mercury ores, whereas lead oxide (PbO) may be considered as Naga Sindura is prepared artificially. Mercuric oxide is a toxic substance, which can be absorbed into the body by inhalation of its aerosol through the skin and by ingestion.*

9. मृद्दारशृंग (Litharge, PbO)

पर्याय

मृद्दारशृङ्गकञ्चैवं मतं बोदारशृङ्गकम् । मुर्दाशङ्खं तथा मुद्रशङ्खकञ्च निगद्यते ॥ (र.त. 21/165)

मृद्दारशृंग, बोदारशृंग, मुर्दाशङ्ख तथा मुद्राशङ्ख इसके पर्याय है ।

Minerological Identification— (PbO)

Luster– Greasy, dull
Clevage– Distinct, Good
Diaphaneity– Transparent
Hardness– 2
SP. Gr.– 9.5 to 9.9

प्राप्ति स्थान– रसरत्न समुच्चय में इसकी प्राप्ति निम्न बतायी गई है–

सदलं पीतवर्णं च भवेद्गुर्जरमण्डले । अर्बुदस्य गिरेः पार्श्वे जातं मृद्दारशृङ्गकम ॥
(र.र.स. 3/145)

यह दलयुक्त पीले वर्ण का होता है तथा गुजरात एवं अर्बुद गिरि या आबू पर्वत के पास पाया जाता है ।

Litharge, Lead के आक्सीकरण के परिणाम स्वरूप निर्मित होता है । यह Lead के deposits के oxidation अवस्था में पाया जाता है । यह अमेरिका आदि स्थानों में पाया जाता है ।

भेद– बोदारशृङ्गकं प्रोक्तं द्विविधं पीतपाण्डुरम् । सदलं निर्दलं.....॥ (आ.प्र. 2/343)

यह 2 प्रकार का होता है–

1. पीत तथा पाण्डुर (रंग भेद से)
2. सदल एवं निर्दल (दल भेद से)

ग्राह्य लक्षण

सदलं पीत वर्ण ग्राह्य होता है ।

* Poorvi Priscilla A., Surekha S. Medikeri. A review study on Giri Sindura. J. Ayurveda Integr Med Sci 2020; 4:373-377.

Scanned with OKEN Scanner

शोधन

मृद्वारशृङ्गमानीय कुट्टयेत् खल्व मध्यगम्। प्रस्तरांशं परित्यज्य पेषयेदतियत्नतः॥
वस्त्रपूतं ततः कृत्वा पुनः सुविमलाम्भसा। पेषयेत्पक्षमेकं तु ततो घर्मे विशोषयेत्॥
मृद्वारशृङ्गकं काममेतद्विधिविशोधितम्। (र.त. 21/167-69)

मृदारशृंग को → खल्व यन्त्र में पीसकर → पत्थर हटा देते हैं → पीसे चूर्ण को → वस्त्रपूत कर → जल से → एक पक्ष (15 दिन) मर्दन → धूप में सुखाते हैं → शुद्ध मृदाशृंग की प्राप्ति।

Chemical changes– When heat is applied over the lead oxide it changes it colour to yellow. This yellow coloured lead oxide is naturally unstable and as the temperature falls down it apain changes into its stable form which is red coloured.

गुण– सीससत्त्वं गुरूश्लेष्मशमनं पुङ्गदापहम्। रसबन्धनमुत्कृष्टं केशरञ्जनमुत्तमम्॥
(र.र.स. 3/146)

यह गुरू, कफ का शामक, उपदंश रोगनाशक, बालों का रंजन करने वाला, तथा पारद का बन्धन करने से में श्रेष्ठ होता है।

उपयोग– फिरंग रोग में पामा, कण्डू आदि में।

योग– 1. मृदार भस्म योग (पकरादि रस, श्लोक 3229, र.यो.स. II भाग)
2. प्रमेहारि रस
3. जौहर आतशक

10. कांस्य (Bronze)

पर्याय

ताम्रत्रपुजमाख्यातं कास्यं घोषं स कंसकम्। (आ.प्र. 4/62)

कांसीयं कांस्यकं कांस्यं घोषपुष्पञ्च घोषकम्। घोषो घोषं वह्निलोहं तदेव परिकीर्तितम्॥
(र.त. 22/21)

ताम्रत्रपुज, घोष, कंस, कासीय, कांस्यक, घोषपुष्प, घोषक, घोषो, घोष अग्निलोह कांस्य के पर्याय है।

प्राप्ति

अष्टभाग ताम्रेण द्विभागखुरकेण च। विद्धतेन भवेत्कांस्यं तत्सौराष्ट्र भवं शुभम्॥
(र.र.स. 5/205)

आठ भाग ताम्र धातु तथा दो भाग खुरक वंग को एक साथ द्रवित करने से कांस्य धातु का निर्माण होता है। कांस्य धातु सौराष्ट्र (जामनगर, राजकोट जूनागढ़ का क्षेत्र) का श्रेष्ठ होता है। कांस्य को Bell metal या White copper या

Bronze भी कहा जाता है।

कांस्य के भेद

कांस्यं च द्विविधं प्रोक्तं पुष्पतैलिकभेदतः। पुष्पश्वेततमं तत्र तैलिकं कपिशप्रभम्॥
(आ.प्र. 4/65)

कांस्य के 2 भेद होते हैं– 1. पुष्प– श्वेत तम
2. तैलिक– कपिश वर्ण

ग्राह्य लक्षण

तीक्ष्ण शब्दं मृदु स्निग्धमीषच्छ्यामलशुभ्रकम्। निर्मलं दाह रक्तं च षोढा कांस्यं प्रशस्यते॥
(र.र.स. 5/206)

निम्न 6 लक्षणों से युक्त कांस्य श्रेष्ठ होता है–

1. तीक्ष्ण शब्द [जिससे तीव्र ध्वनि हो (इसलिए Bell metal)]
2. मृदु
3. स्निग्ध
4. किञ्चित श्वेत श्याम वर्ण
5. मल रहित सुन्दर
6. तपाने पर रक्त वर्ण

अग्राह्य लक्षण

तत्पीतं दहने ताम्रं खरं रूक्षं घनासहम्। मन्दनादं गतज्योतिः सप्तधा कांस्यमुत्सृजेत॥
(र.र.स. 5/207)

जो कांस्य पीले रंग का हो, तपाने से ताम्र वर्ण हो जाय, खर, रूक्ष, भङ्गुर, कम ध्वनि आती हो तथा चमकहीन ऐसे सात लक्षणों वाला कांस्य अग्राह्य होता है।

शोधन

सामान्य शोधन हेतु कांस्य को तप्त कर तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ में सात बार बुझाते है। इससे कांस्य का सामान्य शोधन हो जाता है।

विशेष शोधन

1. तप्तं कांस्यं गवा मूत्रे वापितं परिशुध्यति। (र.र.स. 5/210)
कांस्यं को तप्त कर गाय मूत्र में बुझा लेने से इसका शोधन हो जाता है।

2. सूक्ष्मपत्रीकृतं घोषपुष्पाह्वयं मूत्रपट्वन्वितं स्थालिकायां न्यसेत्।

Scanned with OKEN Scanner

याम मध्यान्वितं तीक्ष्ण तीक्ष्णाग्निना सर्वदोषोज्झितं जायते सत्वरम् ॥ (र.त. 22/27)

कांस्य के सूक्ष्म (पतले) पत्र को एक हांडी में डालकर उसमें गोमूत्र तथा सैन्धव लवण भी डाल देते हैं। तत्पश्चात् इसे एक याम (३) तक तीव्र अग्नि में पाक करते हैं। ऐसा करने से कांस्य शुद्ध हो जाता है।

कांस्य मारण

1. तनुपत्रीकृतं कांस्यं समगन्धसमन्वितम्। अर्कक्षीरेण सम्पेष्य शोषयेदातपे दृढ़म् ॥
   सम्पुटस्थं ततः कृत्वा वारणाख्ये पुटे पुटेत्। एवं पुटत्रयात्कांस्यभस्म स्यात्सुमनोहरम् ॥
   (र.त. 22/28-29)

शुद्ध कांस्य के पतले पत्र लेकर समभाग गन्धक मिलाकर अर्क दुग्ध की भावना देकर मर्दन कर धूप में सुखा लेते हैं। इसे सम्पुट कर गजपुट की अग्नि देते हैं। ऐसे तीन पुट से कांस्य की अच्छी भस्म बन जाती है।

2. कांस्यं तुल्यं शिलागन्धयुतं कन्याम्बुपेषितम्। पुटेत् त्रिधैवं यत्नेन भस्म स्यात् कज्जलप्रभम् ॥
   (र.त. 22/31)

कांस्य को समान भाग मनःशिला तथा गन्धक के साथ मिलाकर उसे घृत कुमारी स्वरस से भावना देते हैं। तत्पश्चात् शराव सम्पुट कर इसे पुट देते हैं। ऐसे तीन पुट से कांस्य की काले रंग की भस्म बन जाती है।

भस्मवर्ण- काला।

Probable chemical changes– Raw Kansya has 78% copper and 22% of Tin while Samanya Shodhita contains 72% copper and 19.58% of Tin. Kansya bhasma contains 62.87% copper and tin as 14.25% (Prepared after 7 Puta).*

गुण–

घोषपुष्पं तु तुवरं तिक्तोष्णं लेखने हितम्। नेत्रप्रसादनं रूक्षं सरं च विशदं परम् ॥
(र.त. 22/32)

कांस्य भस्म कषाय, तिक्त, उष्ण तथा लेखन करने वाली, नेत्र का प्रसादन करने वाली, रूक्ष, सर तथा विशद गुण युक्त होती है।

मात्रा– $^1/_2$ से 1 रत्ती

घृतमेकं विना चान्यत्सर्वं कांस्यगतं नृणाम्। भुक्तमारोग्यसुखदं हितं सात्म्यकरं तथा ॥
(र.र.स. 5/209)

कांस्य से निर्मित पात्र में घृत को छोड़कर अन्य भोजन खाने से आरोग्य तथा सुख की प्राप्ति होती है।

कांस्य के योग– 1. क्षयकेसरी रस
2. लक्ष्मीविलास रस

* Neha J, Pradeep K. Comparative pharmaceutic characterization of Kamsya Bhasma prepared with traditional (Puta) method and electric muffle furnace method. International journal of information Research and Review (i) irr.com).

3. वात विध्वंसन रस
4. चिन्तामणि रस
5. षडानन रस

11. पित्तल (Brass)

पर्याय

पित्तलं त्वारकूटं स्यादारो रीतिश्च कथ्यते। राजरीतिर्ब्रह्मरीतिः कपिला पिङ्गलापि च ॥
रीतिरप्युपधातुः स्यात्ताम्रस्य यशदस्य च ॥ (आ.प्र. 4/66-67)

पित्तल, आरकूट, आरो, रीति, राजरीति, ब्रह्मरीति, कपिला, पिङ्गला, कपिलोह, पीतलोह पीतल के पर्याय हैं। पित्तल ताँबा तथा यशद की उपधातु है।

प्राप्ति—ताम्र धातु को 2 भाग तथा यशद धातु को 1 भाग एकत्र कर पिघलाने से पित्तल धातु का निर्माण होता है। इसका उपयोग पात्र, उपकरण तथा मूर्तियों के निर्माण हेतु बहुतायत से होता है।

भेद–

रीतिका काकतुण्डी च द्विविधं पित्तलं भवेत्। सन्ताप्य काञ्जिके क्षिप्ता ताम्राभा रीतिका मता।
एवं या जायते कृष्णा काकतुण्डीति सा मता ॥ (र.र.स. 54/191-92)

इसके 2 भेद हैं–

1. **रीतिका–** यह तपाकर काञ्जी में डुबोने से ताम्र (रक्त) वर्ण की हो जाती है।
2. **काकतुण्डी–** इसे तप्त कर काञ्जी में डुबोने से यह काले वर्ण की हो जाती है।

ग्राह्य लक्षण

गुर्वीमृद्वी च पीताभा साराङ्गी ताडनक्षमा। सुस्निग्धा मसृणाङ्गी च रीतिरेतादृशी शुभा ॥
(र.र.स. 5/193)

भारी, मुलायम, पीले रंग की, चमकदार तथा मजबूत, पीटने पर जो न टूटे तथा चिकनी हो वह पीतल अच्छी मानी जाती है।

अग्राह्य लक्षण

पाण्डु पीता खरा रूक्षा बर्बरा ताडनाक्षमा। पूतिगन्धा तथा लघ्वी रीतिर्नेष्टा रसादिषु ॥
(र.र.स. 5/194)

पीले श्वेत वर्ण की, खर, रूक्ष, ताडन से टूटने वाली, कलंकित, तथा दुर्गन्धित एवं भार में हल्की पीतल श्रेष्ठ नहीं होती है।

पीतल शोधन

1. पीतल को तप्त कर तैल, तक्र, गोमूत्र, काञ्जी तथा कुलत्थ क्वाथ प्रत्येक में सात बार बुझाने से यह शुद्ध हो जाती है।

Scanned with OKEN Scanner

2 तप्त्वा क्षिप्त्वा च निर्गुण्डी रसे श्यामारजोन्विते। पञ्चवारेण संशुद्धिं रीतिरायातिनिश्चितम्॥
(र.र.स. 5/197)

पीतल को तप्त कर निर्गुण्डी स्वरस + हरिद्रा चूर्ण मिश्रण में बुझाते हैं। ऐसा पाँच बार करने से पीतल निश्चित रूप से शुद्ध हो जाती है।

पीतल मारण

निम्बूरसशिलागन्धवेष्टिता पुटिकाऽष्टधा। रीतिरायाति भस्मत्वं ततो योज्या यथा यथम्॥
ताम्रवन्मारणं तस्याः कृत्वा सर्वत्र योजयेत्। (र.र.स. 5/198-199)

शुद्ध पीतल को समभाग गन्धक तथा मनःशिला के साथ नीबू स्वरस का भावना देते हैं। तत्पश्चात् इसे पुट (गजपुट वारणाक्य पुट) देते हैं। ऐसे आठ पुट से पीतल की भस्म बन जाती है।

ताम्र की मारण विधि के अनुसार भी पीतल की भस्म बनाये जाती हैं। तथा इसे सर्वत्र प्रयोग करते हैं।

भस्म का वर्ण– कज्जलाभ (काले रंग की) (र.त. 22/11)

Probable chemical changes– XRD of Pittala bhasma shows the presence of CuO having granular appearence and poly crystalline nature. SEM of Bhasma shows particles with change in morphology.*

पीतल के गुण– रीतिस्तिक्तरसा रूक्षा जन्तुघ्नी सास्रपित्तनुत्।
कृमिकुष्ठहरा योगात् सोष्णवीर्या च शीतला॥ (र.र.स. 5/195)

रीतिका पित्तल तिक्त रस, रूक्ष, कृमिनाशक, रक्तपित्त, कृमि कुष्ठ रोग नाशक, शीतवीर्य तथा योग (अन्य द्रव्य/औषधि) से उष्णवीर्य हो जाती है।

काकतुण्डी गतस्नेहा तिक्तोष्णा कफपित्तनुत्। यकृतप्लीहाहरा शीतवीर्या च परिकीर्तिता॥
(र.र.स. 5/196)

काकतुण्डी पित्तल, रूक्ष, तिक्त, उष्ण, कफपित्तनाशक, यकृत (प्लीहा) रोगनाशक तथा शीतवीर्य होती है।

मात्रा–

पित्तलस्य योगस्तु रविलोहसमो मतः। गुञ्जार्धंतस्तु गुञ्जैकमिता मात्रा च युज्यते॥ (र.त. 22/18)

पीतल भस्म की प्रयोग विधि ताम्र भस्म जैसी होती है। 1/2 गुञ्जा (60 मिग्रा.) से 1 गुञ्जा (120 मिग्रा.) तक प्रयोग करना चाहिए।

असम्यक् मारित पित्तल दोष

विविधरोगचयं कुरुते भ्रमं गुदरूजह्यतिगेहरूजां गणम्।
विविधतापक्रमा तनुते तानावमृतमारकमाशु हि मृत्युदम्॥
(र.रा.सु. मिश्रधातु प्रकरण)

* Kale B, Rajurkar N. Synthesis and charactrization of Pittal Bhasma. ISAS. 1(3)77-90, 2023

असम्यक् मारित पित्तल भस्म भ्रम, अर्श, भगन्दर, ज्वर तथा मृत्यु को देने वाला होता है।

प्रमुख योग– 1. पित्तल रसायन 2. रत्नप्रभा वटी
3. स्वर्ण सिन्दूर 4. सर्वेश्वर पर्पटी

Research update

Depending upon ratio of Copper and Zinc, Brass can be of Alpha, Alpha-beta, Beta, Gamma and white Brass types. Anti bacterial properties of brass have been observed for centuries particularly in marine environments while it prevents biofouling.*

12. वर्त लोह

वर्तलोह का निर्माण निम्न धातुओं के संयोग से होता है–

कांस्यार्करीतिलोहाऽहिजातं तद्वर्तलोहकम्। (र.र.स. 5/212)

कांस्य, ताम्र, रीति (पित्तल), लोह तथा नाग धातु को मिलाकर द्रवित करने से वर्त लोह का निर्माण होता है। इससे निर्मित पात्र में सूप आदि व्यंजन सेवन हितकर होता है। यथा–

व्यञ्जनं सूदमन्यच्च तद्भाण्डे साधितं शुभम्। (आ.प्र. 4/83)

पर्याय

पञ्चलोहं पञ्चरसं वर्तुलं भर्तमित्यपि। (आ.प्र. 4/83)

पंच लोह, पंचरस, वर्तुल, भर्तम इसके पर्याय है।

शोधन

द्रुतमश्वजले क्षिप्तं वर्तलोहं विशुध्यति॥ (र.र.स. 5/215)

वर्तलोह को द्रवित कर अश्वमूत्र में डालने से इसका शोधन हो जाता है।

वर्तलोह मारण

म्रियते गन्धतालाभ्यां पुटितं वर्तलोहकम्। तेषु तेष्विह योगेषु योजनीयं यथाविधि॥
(र.र.स. 5/216)

वर्तलोह को गन्धक तथा हरताल के साथ पुट देने से इसकी भस्म बन जाती है। जिसे विभिन्न योगों में प्रयोग किया जा सकता है।

गुण–

हिमाम्लं कटुकं रूक्षं कफपित्तविनाशनम्। रुच्यं त्वच्यं कृमिघ्नं च नेत्र्यं मलविशोधनम्॥

* Rolli Ghildiyal et al. Pittala and its formulation. A review. International Ayurvedic Medical Journal (Online) 2023. pp 341-346 doi.10.46607/1 amjo6p7042023 pp 341-346.

Scanned with OKEN Scanner

रक्तदाहे शर्करेक्षुरसाज्यनवनीतकम् । अम्लेन वर्जितं चापि दीपनं पाचनं हितम् ॥
(र.र.स. 5/213-14)

यह शीतवीर्य, अम्ल, कटु, रूक्ष, कफ विनाशक, रुचि करने वाला, त्वचा को सुन्दर करने वाला, कृमिनाशक, पेट्टे को हितकर, रक्त का शोधन करने वाला होता है ।

इससे निर्मित पात्र में अम्ल पदार्थों के अतिरिक्त सभी व्यञ्जन दीपन तथा पाचन करने वाले होते हैं ।

मात्रा– 1/2 से 1 रत्ती (60 से 120 मिग्रा.)

अनुपान– शहद

भर्त लोह– कांस्य, पित्तल, ताम्र, नाग तथा वंग के संयोग से भर्तलोह का निर्माण किया जाता है । इसे पंचरस/पंच लोह भी कहा जाता है । (वृ.र.रा.सु.)

योग– सर्वेश्वर पर्पटी

13. माणिक्य (Ruby)

पर्याय

माणिक्यं रङ्गमाणिक्यं पद्मरागसमाह्वयम् । रविरत्नं शोणरत्नं कुरुविन्दञ्च लोहितम् ॥
(र.त. 23/43)

माणिक्य, रंगमाणिक्य, पद्मराग, रविरत्न, शोणरत्न, कुरुविन्द तथा लोहित इसके पर्याय हैं ।

Minerological Identification

Colour– Red, may be brownish or purplish
Cleavage– No true cleavage
Fracture– Uneven or conchoidal
Luster– Vitreous
Streak– White
Hardness– 9.0
Sp.Gr.– 4.0

प्राप्ति– माणिक्य (Ruby) मुख्य रूप से Igneous या Metamorphic चट्टानों से पाये जाते हैं । इसके अतिरिक्त ये Placer deposits के रूप में नदियों तथा धाराओं में weathering के द्वारा sedimentory rocks में भी पाये जाते हैं । Ruby, mineral corundum (Al_2O_3) का एक भेद है जिसमें अल्प मात्रा में Chromium पाया जाता है जिसके कारण इसका रंग लाल होता है । यह वर्मा तथा श्रीलंका एवं भारत के कर्नाटक तथा उड़ीसा से प्राप्त होता है ।

भेद

माणिक्यं पद्मरागाख्य द्वितीयं नीलगन्धि च । (र.र.स. 4/8)

माणिक्य दो प्रकार का होता है–

1. पद्मराग 2. नीलगन्धि

ग्राह्य लक्षण

पद्मराग–

कुशेशयदलच्छायं स्वच्छं स्निग्धं गुरु स्फुटम् । वृत्तायतं समं गात्रं माणिक्य श्रेष्ठमुच्यते ॥
(र.र.स. 4/9)

लाल कमल के समान कान्तिवाला, स्वच्छ, स्निग्ध, गुरु (भारी), पानीदार, गोल, आयताकार तथा एक समान (जितने Size का हो एक जैसा) ऐसे लक्षणों वाला माणिक्य श्रेष्ठ होता है ।

नीलगन्धि

नीलं गङ्गाम्बुसम्भूतं नीलगर्भारूणच्छवि । पूर्वमाणिक्यवच्छ्रेष्ठं माणिक्यं नीलगन्धि तत् ॥
(र.र.स. 4/10)

गंगा नदी से प्राप्त होने वाला, बाहर से रक्तवर्ण तथा अन्दर से नीले वर्ण का दिखने वाला तथा अन्य लक्षण पद्मराग के सदृश रखने वाला नीलगनिध माणिक्य श्रेष्ठ होता है ।

अग्राह्य लक्षण

रन्ध्रकठोरमालिन्यरौक्ष्यावैराद्यसंयुतम् । चिपिटं लघुवक्त्रं च माणिक्य दुष्टमष्टधा ॥
(र.र.स. 4/11)

छिद्रयुक्त, खुरदरा युक्त, मलिन, रूखा, गन्दा, चपटा, हल्का तथा टेढ़ापन इन आठ गुण युक्त माणिक्य अग्राह्य होता है ।

शोधन– किसी अम्ल द्रव जैसे नींबू स्वरस आदि से 3 घंटे दोला यन्त्र में स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है ।

मारण– लकुच फल स्वरस मनःशिला, गन्धक तथा हरताल के साथ पुट से माणिक्य की भस्म बन जाती है । माणिक्य भस्म हेतु गजपुट देते हैं ।

भस्म वर्ण– श्वेत

Probable chemical changes– XRD study of Ashodhita and Shodhita Manikya showed Al_2O_3 and Rhombhohedral crystal system while Mankya Bhasma as Al_2O_3 and orthorhombic crystal system.*

गुण– माणिक्यं दीपनं वृष्यं कफवातक्षयार्तिनुत् । भूतवेतालपापघ्नं कर्मजव्याधिनाशनम् ॥
(र.र.स. 4/12)

माणिक्य दीपन, वृष्य, कफवात नाशक, क्षयरोग नाशक, भूतप्रेत बाधा नाशक तथा कर्मजन्य व्याधि नाशक होता है ।

* Dr. Sunettha ML et al. Pharmaceutical analytical study of Manikya Bhasma Deptt. of PG Studies in Rasa Shastra, Taranath Govt. Ayu. Med. Coll. Bellary 2010.

Scanned with OKEN Scanner

मात्रा– आरभ्य गुञ्जाषादांशात् गुञ्जार्द्धप्रमितं मृतम्। माणिक्यं योजयेद्धीमान् बलकालाद्यपेक्षया ॥
(र.त. 23/59)

1/4 रत्ती (30 मिग्रा.) से 1/2 रत्ती (60 मिग्रा.) तक ।

अनुपान– शहद

चिकित्सकीय प्रयोग– वाजीकरण, रसायन, ध्वजभंग, क्षय आदि में ।

माणिक्यपिष्टि– गुलाब जल से शुद्धमाणिक्य को मर्दन कर अतिसूक्ष्म चूर्ण रूप बना लेना ही माणिक्य पिष्टी कहा जाता है । यह गुलाबी वर्ण का होता है ।

प्रमुख योग– 1. याकूती
2. नवरत्नराज मृगांक रस
3. जवाहर मोहरा वटी
4. ब्राह्मी वटी
5. रत्नभागोत्तर रस

Research update

Study done on Manikya Bhasma shows that the dual potential of its as a nano carrier to deliver the drugs and exerting cytotocic effects against cencer cells.*

14. तार्क्ष्य (Emerald)

पर्याय

गारूत्मतं मरकतं तार्क्ष्यं गारूडसंज्ञकम्। बुधरत्नं रौहिणेय हरिद्रत्नश्च तन्मतम् ॥
(र.त. 23/104)

गारूत्मत, मरकत, तार्क्ष्य, गारूड, बुधरत्न, रौहिणेय, हरिद्रत्न इसके पर्याय है ।

Minerological Identification

Colour– Green shades to colourless
Cleavage– Imperfect
Fracture– Conchoidal
Diaphancity– Transparent to opaque
Streak– White
Lustre– Viterous
Hardness– 7.5 to 8.0
Sp.Gr.– 2.76

* Jha S, Trivedi V. Manikya Bhasma as a nano medicine to affect cancer cell viability through induction of apooptosis. J. Ayurveda Intergr Med. 2021 Apr-Jun; 12 (2):302-311. doi:10.1016/j.jaim.2020.11.001.

परिचय तथा प्राप्ति

Emerald, Igneous, Metamorphic तथा Sedimentary चट्टानों में पाये जाते हैं । ये हरें रंग के mineral होते है । तथा Beryl के एक तरह से भेद होते हैं जिनका रासायनिक संगठन $Be_3Al_2(SiO_3)_6$ होता है । Emerald के उत्पादक देशों में कोलम्बिया, ब्राजील, जिम्बाब्वे तथा जाम्बिया प्रमुख है । अन्य देशों जैसे– रूस, कनाडा, नाईजीरिया आदि देशों से भी प्राप्त होता है । रासायनिक दृष्टि से इसमें बेरीलियम, एल्युमीन्यिम, आक्सीजन तथा सिलिकान पाये जाते हैं ।

भेद– वर्ण भेद से– 1. हरित, 2. नील, 3. श्वेत

ग्राह्य लक्षण

हरिद्वर्णं गुरू स्निग्धं स्फुद्रश्मिचयं शुभम्। मृदु भासुरं तार्क्ष्यं गात्रं सप्तगुणं स्मृतम् ॥
(र.र.स. 4/20)

हरे वर्ण का, भारी स्निग्ध, रश्मि पुंज विखेरने वाला, शुभ, चिकना तथा बड़े आकार का ऐसे गुण वाला पन्ना श्रेष्ठ होता है ।

अग्राह्य लक्षण

कपिलं कर्कशं नीलं पाण्डु कृष्णं मलान्वितम्। चिपटं विकटं रूक्षं लघु तार्क्ष्यं न शस्यते ॥
(र.र.स. 4/21)

कपिल वर्ण का, खुरदरा, नीला, पाण्डु, कालेरंग का, मलयुक्त, चिपटा टेढ़ा, रूक्ष तथा हल्का मरकत ग्रहण करने योग्य नहीं होता है ।

शोधन–

सुरभी पयसा यामं दोलायन्त्रे विधानतः। विपाचितं मरकतं विशुद्धमति सुनिश्चितम् ॥
(र.त. 23/107)

पन्ना का गोदुग्ध के साथ दोलायन्त्र के माध्यम से 1 याम तक स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है ।

मारण–

1. मरकत को मनःशिला, हरताल तथा गंधक के साथ लकुच स्वरस से भावना देकर पुट देने से इसकी भस्म बन जाती है ।
2. माणिक्य के समान मरकत का भी मारण किया जाता है । ऐसे आठ पुट से इसकी भस्म बन जाती है (भस्म का वर्ण– श्वेत वर्ण) ।

मरकत के गुण

मरकत, रस में मधुर गुण में शीत तथा वीर्य में भी शीत होता है । (आ.प्र. 5/109)

Scanned with OKEN Scanner

मात्रा मात्रा

आमम्ल गुञ्जाद्वयेन गुञ्जैकप्रमितं पत्रम्। मूलं मरकतं युञ्जीत बलकालाद्यपेक्षया ॥

(र.त. 23/111)

1/4 गुञ्जा (30 मिग्रा.) से 1 गुञ्जा (120 मिग्रा.) बल तथा काल विचार कर प्रयोग करते हैं।

मरकत पिष्टि

मरकत को गुलाब जल से मर्दन करते हैं। जब इसका सूक्ष्म, चिकनाचूर्ण बन जाय तो इसे ही पिष्टी कहते हैं।

अनुपान- शहद

मरकत के प्रमुख योग- 1. रत्नभागोत्तर रस
2. चाकृति
3. नवरत्नराजमृगांक रस
4. मणिपर्पटी रस
5. जवाहर मोहरा वटी

Research update

Beryl is a beryllium aluminium silicate ($Be_3Al_2Si_6O_{18}$) formed from aluminium (81%), Silicon (27.7%) and oxygen (46.6%). Beryl becomes an emerald when there is enough chromium or vanadium, and sometimes iron to colour it a specific green colour. Emerald trypically display two main colours, making it specifically dichroic. https://emeralds.com.

15. पुष्पराग (Topaz)

पुष्पराजः पुष्परागः पीतरक्ताह्वयस्तथा। गुरूरत्नं पीतमणिः स एव गुरूवल्लभः ॥

(र.त. 23/87)

पुष्पराज, पुष्पराग, पीतरक्त, गुरुरत्न, पीतमणि तथा गुरूवल्लभ इसके पर्याय है।

Minerological Identification –

Colour– Yellow
Streak– Colourless
Luster– Vitreous
Tenacity– Brittle
Fracture– Irregular
Cleavage– Perfect
Hardness– 8
Sp. Gr.– 3.4 to 3.6

पुखराज (Topaz) Aluminium तथा Fluorine का सिलिकेट खनिज है जिसकी रासायनिक सूत्र $Al_2SiO_4(F.OH)_2$ Aluminum fluosilicate होता है। पुखराज (Topaz), Igneous चट्टानों के Granite तथा Rhyolite भेद

में पाये जाते हैं। यह दक्षिणी अमेरिका, रूस, अफगानिस्तान, श्रीलंका, आस्ट्रेलिया, जर्मनी आदि देशों में पाया जाता है। यह पीत वर्ण का होता है।

भेद– रस ग्रन्थों से इसके भेद का वर्णन उपलब्ध नहीं मिलता है। युक्ति कल्पतरु में 2 भेद मिलते हैं-

1. पद्मराग वत्
2. मरकत वत्

ग्राह्य लक्षण

पुष्परागो गुरूः स्निग्ध स्वच्छः स्थूलः समो मृदुः। कर्णिकार प्रसूनाभ मसृणश्च शुभोऽष्टधा ॥

(र.र.स. 4/23)

जो पुष्पराग गुरू, स्निग्ध, स्वच्छ, मोटा, एक समान, मृदु, कनेर पुष्प की आभा (पीतवर्ण) वाला, तथा मसृण इन आठ लक्षणों से युक्त श्रेष्ठ होता है।

अग्राह्य लक्षण

निष्प्रभं कर्कषं रूक्षं पीतश्यामं नतोन्नतम्। कपिशं कपिलं पाण्डु पुष्परागं परित्यजेत् ॥

(र.र.स. 4/24)

चमक रहित, कर्कश, रूक्ष, पीला काला, ऊँचा नीचा, कपिश, कपिल तथा पाण्डु वर्ण का पुखराज अग्राह्य होता है।

पुखराज शोधन

कुलत्थक्वथितोपेतैः काञ्जिकैः स्वेदितं समम्। दोलायन्त्रे पुष्परागं यामैकेन विशुद्धयति ॥

(र.त. 23/91)

कुलत्थ क्वाथ तथा काञ्जी को मिलाकर दोलायन्त्र विधि से एक याम स्वेदन करने से पुखराज शोधन हो जाता है।

पुखराज मारण

पुखराज को हरताल, मनःशिला तथा गन्धक के साथ लकुच फल स्वरस से पुट देने से इसकी भस्म बन जाती है।

भस्म वर्ण– श्वेत

गुण– पुष्पराजन्तु शिशिरं दीपनं पाचनं लघु। (र.त. 23/93)

पुखराज लघु, शीतवीर्य तथा दीपन पाचन करने वाला होता है।

मात्रा– 1/4 रत्ती (30 मिग्रा.) से 1 रत्ती (120 मिग्रा.)

अनुपान– शहद

चिकित्सकीय प्रयोग

पुष्परागं विषच्छर्दि कफवाताग्निमान्द्यनुत्। दाहकुष्ठास्त्रशमनं दीपनं पाचनं लघु ॥ (र.र.स. 4/25)

Scanned with OKEN Scanner

यह त्रिदोष, कृमि, कफजन्य नाशक, अग्निवर्धक, दाह, कुष्ठ रक्तरोग नाशक दीपन, पाचन तथा लघु होता है।

पुखराज पिष्टी

गुलाब जल में मर्दन कर पुखराज की पिष्टी का निर्माण करते है। यह पाण्डुर वर्ण की होती है।

पुखराज के प्रमुख योग– 1. नवरत्नराज मृगांक रस 2. रत्नभागोत्तर रस
3. मणिपर्पटी 4. रक्त करण्डक रस
5. सर्वेश्वर पर्पटी

Research update

Chemical composition of Topaz contains Al (29.61%), Si (15.41%), Hydrogen (0.50%), Oxygen (43.02%) and fluorine (11.47%). Topaz has orthorhombic Dipyramidal crystal system. (https://webmineral.com).

16. नीलम (Sapphire)

पर्याय

नीलो नीलोपलो नीलं नीलरत्नं सुनीलकम्। महानीलञ्च नीलाश्म शनिरत्नञ्च कीर्तितम्॥
(र.त. 23/96)

नील, नीलोपल, नीलरत्न, सुनीलक, महानील, नीलाश्म तथा शनि रत्न ये नीलम के पर्याय है।

Minerological Identification

Colour – Typically blue
Cleavage – Poor
Lustre – Vitreous
Streak – Colourless
Fracture – Conchoidal
Hardness– 9.0
Sp. Gr.– 3.98-4.06

प्राप्ति

नीलम (Sapphire) mineral corundum जाति का Gemstone है जिसका रासायनिक संगठन (αAl_2O_3) होता है। इसमें aluminium oxide के अतिरिक्त Iron, Titanium, Chromium, Magnesium तथा Vanadium भी अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। नीलम Sand तथा Solid rock में बहुतायत से माणिक्य के साथ प्राप्त होता है। आस्ट्रेलिया, ब्राजील, केन्या, श्रीलंका, जिम्बाम्वे, कम्बोडिया आदि देशों में नीलम पाया जाता है। भारत में जम्मू काश्मीर तथा विजय नगरम् से प्राप्त होता है। इसका नीला रंग टायटेनिक आक्साइड तथा थोड़ी मात्रा में कोबाल्ट के कारण होता है।

भेद– जलनीलेन्द्रनीलञ्च शक्रनीलं तयोर्वरम्। श्वैत्यगर्भितनीलाभं लघु तज्जलनीलकम्॥

काणर्यगर्भितनीलाभं सभारं शक्रनीलकम्। (र.र.स. 4/49-50)

1. इन्द्रनील– कृष्णगर्भित (गाढा) नील वर्ण का तथा भारी। यह श्रेष्ठ होता है।
2. जलनील– श्वेतगर्भित नीला तथा भार में हल्का होता है।

ग्राह्य इन्द्रनील के लक्षण

एकच्छायं गुरु स्निग्धं स्वच्छं पिण्डितविग्रहम। मृदु मध्ये लसज्ज्योतिः सप्तधाः नीलमुत्तमम्॥
(र.र.स. 4/51)

एक समान रंग वाला, भारी, स्निग्ध, साफ, गोल-पिण्ड आकार का, सुखस्पर्श तथा बीच में अत्यन्त उज्जवल इन सात गुण युक्त नीलम ग्राह्य होता है।

अग्राह्य नीलम के लक्षण

रक्तार्द्ध विगच्छायं रूक्षं लघु च कोमलम्। परिहेयं शौरिरत्नं मतं रत्नपरीक्षकैः॥ (र.त. 23/98)

आधा लाल आधा नीला छाया रहित, रूक्ष, लघु, मुलायम इन गुणों से युक्त नीलम अग्राह्य होता है।

उत्तम नीलम परीक्षा

अस्त्यान चन्द्रिकास्यन्द सुन्दरीक्षीर पूरितम्। यत्पात्रं रञ्जयत्याशु स जात्यो नील उच्यते॥
(आ.प्र. 5/125)

पूर्णिमा की चांदनी में सुन्दर स्त्री को दुग्ध से भरे पात्र पर नीलमणि डालने पर यदि वह अपने प्रकाश से इसे रंजित कर दे तो वह श्रेष्ठ नीलम होती है।

नीलम शोधन

नीली स्वरस संयुक्तं दोलायन्त्रे विधानतः। यामैकं परिपक्वन्तु नीलं शुद्धयति निश्चितम्॥
(र.त. 23/98)

नीली स्वरस से 3 घंटे दोला यन्त्र से स्वेदन करने से इसका शोधन हो जाता है।

मारण– नीलम को मनःशिला, हरताल तथा गन्धक के साथ लकुच द्रव की भावना देकर पुट देते है। ऐसे आठ पुट से नीलम की भस्म बन जाती है।

भस्म वर्ण– श्वेत

पिष्टी– गुलाब जल की भावना देकर पिष्टी निर्माण करते हैं।

गुण तथा चिकित्सकीय प्रयोग

श्वासकासहरं वृष्य त्रिदोषघ्नं सुदीपनम्। विषमज्वरदुर्नामपापघ्नं नीलमीरितम्॥
(र.र.स. 4/53)

Scanned with OKEN Scanner

क्षय, कासनाशक, वृष्य, त्रिदोषनाशक, दीपन करने वाला, विषम ज्वरनाशक होता है ।

मात्रा– गुञ्जाष्टभांश प्रमितात् गुञ्जार्द्धप्रमितं परम् । (र.त. 23/103)

1/8 रत्ती (15 मिग्रा.) से 1/2 रत्ती (60 मिग्रा.) तक ।

अनुपान– शहद

नीलम के प्रमुख योग– 1. रत्नभगोत्तर रस 2. राजमृगांक रस
3. मणि पर्पटी रस 4. रक्त करण्डक रस
5. सर्वेश्वर पर्पटी 6. नवरत्नराज भृङ्गाक रस

Research update

Ruby and Sapphire both are gems of the mineral corundum. Both of these have same chemical composition as well as mineral structure. Trace amount of impurity determines its colour. The red colour or ruby is produced by the presence of chromium while trace amount of iron and titanium can produce a blue colour corundum know as Sapphire. (https://gelogy.com)

17. गोमेद (Zircon or Cinnamone stone)

गोमेद को A.P.I. Vol. 5 में Almandite $(Fe_3Al_2(SiO_4)_3$ गारनेट (Garnet) समूह का खनिज माना गया है ।

पर्याय

गोमेदकञ्च गोमेदः पिङ्गस्फटिक इत्यपि । गोमेदो राहुरत्नञ्च कीर्तितश्च तमोमणि ॥
(र.त. 23/120)

गोमेदक, गोमेद, पिंग स्फटिक, गोमेदो राहुरत्न तथा तमोमणि इसके पर्याय हैं ।

निरूक्ति– गोमेदः समरागत्वाद् गोमेदं रत्नमुच्यते । (र.र.स. 4/54)

गाय की चर्बी (मेद) के समान रंग होने के कारण इसे गोमेद कहा जाता है ।

गोमेद मधुसदृश रक्तपिताभ या गाय के मेद के रंग का पत्थर है । इसमें एल्युमीनियम तथा सिलिका प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । इससे निर्मित खल्व अत्यन्त मजबूत मर्दन से घिसते कम हैं ।

Minerological Identification – (Garnet)

Nature– Crystal
Colour– Reddish brown
Streak– white
Cleavage– Not present
Lustre– Vitreous to resinous

Tenacity– Brittle
Hardness - 7.0 to 7.5
Sp. Gr. – 3.5 to 4.0

प्राप्ति– गोमेद्र 2 स्वरूप में पाया जाता है– 1. In Situ deposits तथा 2. Placers.

In situ deposits में Meta marphic Rock (ज्यादातर Schists एवं gneisses में) तथा अन्य igneous rock में पाया जाता है । Placer में भारी detrial residue के sediments में पाया जाता है । भारत में In situ गोमेद आंध्रप्रदेश, झारखण्ड, राजस्थान तथा कर्नाटक में जबकि Placer deposit केरल, तमिलनाडु तथा उड़ीसा में पाये जाते हैं ।

भेद– 1. श्वेताभ पीत
2. रक्ताभ पीत
3. पीत
4. कृष्णाभ पीत

ग्राह्य लक्षण

सुस्वच्छ गोजलच्छायं स्वच्छं स्निग्धं समं गुरू । निर्दलं मसृणं दीप्तं गोमेदं शुभमष्टधा ॥
(र.र.स. 4/54)

साफ गोमूत्र के रंग वाला, निर्मल, स्निग्ध, समान आकार का, भारी, दल, रहित, मसृण तथा चमक युक्त इन आठ गुणों से युक्त गोमेद अच्छा तथा ग्राह्य होता है ।

अग्राह्य लक्षण

विच्छायं लघु रूक्षाङ्गं चिपिटं पटलान्वितम् । निष्प्रभं पीतकाचाभं गोमेदं च शुभावहम् ॥
(र.र.स. 4/55)

छाया रहित, हल्का, रूक्ष, चपटा, पटल युक्त, कान्ति रहित, पीले कांच के जैसा दिखने वाला गोमेद त्याज्य होता है ।

गोमेद शोधन

गोरोचन क्वाथ में स्वेदन करने से इसकी शुद्धि हो जाती है ।

मारण– गोमेद को मनःशिला, हरताल तथा गन्धक के साथ लकुच द्रव से चक्रिका निर्माण कर पुट देने से इसकी भस्म बन जाती है ।

भस्म वर्ण– कत्थे जैसा वर्ण ।

गुण– गोमेदकोऽम्ल उष्णश्च वात प्रकोप विकारजित् । (आ.प्र. 5/116)

गोमेद अम्ल रस, उष्ण तथा वातरोगनाशक होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

मात्रा– आरब्ध गुञ्जाणद्वांशाद् गुञ्जैकप्रमितं मृतम् । गोमेदं तु प्रयुञ्जीत बलकालाद्यपेक्षया ॥

(र.त. 23/127)

1/4 रत्ती (30 मिग्रा.) से 1 रत्ती (120 मिग्रा.) तक बल, काल का विचार कर प्रयोग करना चाहिए ।

अनुपान– शहद

गोमेद पिष्टी

गुलाब जल से मर्दन कर गोमेद पिष्टी का निर्माण करते हैं ।

प्रमुख योग– 1. नवरत्नराजमृगांक रस 2. रत्नभागोत्तर रस
3. सर्वेश्वर पर्पटी

Research update

Zircon is an orthosilicate and its structure consists of isolated SiO_4 tetrahedra and ZnO_8 do decahedra. Zircon has a stoichiometric composition of 67.2 wt%. ZnO_2 and 32.88 wt% SiO_2 and may also contain about 20 to 24 trace elements including Hf and Y as minor elements.*

18. वैडूर्य (Cat's Eye)

पर्याय

विदूररत्नं वैडूर्यं केतुरत्नं विदूरजम् । विडालास्यं विडालाक्षं वायजञ्च प्रकीर्तितम् ॥

(र.त. 23/112)

विदूर रत्न, वैदूर्य, केतुरत्न, विदूरज, विडालास्य, विडालाक्ष तथा वायज इसके पर्याय है ।

परिचय तथा प्राप्ति

वैडूर्य को Cat's Eye या लहसुनिया कहा जाता है क्योंकि यह देखने में मार्जार के आँख की तरह होता है । वैडूर्य के बीच में अभ्रक, सदृश चमकने वाला श्वेत रंग का यज्ञोपवीत सफेद रंग की रेखा के रूप में होता है । गोमेद तथा वैडूर्य में रासायनिक रूप से कोई भिन्नता नहीं होती है । वैडूर्य में विशेष प्रकार की रेखा होती है तथा इसमें सिलिकान एवं आक्सीजन प्रधान रूप से होते हैं । सम्पूर्ण भारत में वैडूर्य पाया जाता है । उड़ीसा, केरल, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु आदि । श्रीलंका, वर्मा, ब्राजील, रूस आदि देशों से इसकी प्राप्ति होती है । इसका रासायनिक सूत्र $BeOAl_2O_3$ होता है । इसकी Hardness 8.5 तथा Sp. Gr. 3.71 होती है ।

भेद– 1. मरकत वर्ग
2. क्वार्ट्ज वर्ग

* Zaman, M. M.; Antao, S.M. Crystal Chemistry and Structural Variations for Zircon Samples from Various Localities. Minerals 2020, 10, 547.

वर्ण भेद से श्वेत, धूम्र, कृष्णाभ तथा मिश्रित रंग का चार प्रकार का होता है ।

आधुनिक दृष्टि से Cat's Eye तथा Alexandride माना जाता है ।

ग्राह्य लक्षण

वैदूर्यं श्यामशुभ्राभं समं स्वच्छं गुरू स्फुटम् । अभ्रशुभ्रोत्तरीयेण गर्भितं शुभमीरितम् ॥

(र.र.स. 4/57)

कालापन लिए सफेद रंग का, एक समान, साफ, वजन में भारी, चमकदार (स्फुटम), श्वेत अभ्रक समान रेखा जिसके गर्भ में हो ऐसे लक्षणों वाला वैडूर्य ग्राह्य (शुभ) होता है ।

अग्राह्य लक्षण

श्यामं तोयसमच्छायं चिपिटं लघुकर्कशम् । रक्तगर्भोत्तरीयं च वैदूर्यं नैव शस्यते ॥

(र.र.स. 4/58)

काले रंग का, जल के जैसी छाया वाला, चपटा, वजन में हल्का, रूक्ष तथा बीच में रक्तवर्ण का ऐसे लक्षणों वाला वैडूर्य अग्राहक होता है ।

वैदूर्य शोधन– वैदूर्य को त्रिफला क्वाथ में दोला यन्त्र विधि से 3 घण्टे स्वेदन करने से यह शुद्ध हो जाता है ।

मारण– मनःशिला, गन्धक तथा हरताल में साथ वैडूर्य को लकुचफल स्वरस से टिकिया बनाकर पुट देते हैं । ऐसे आठ पुट से वैदूर्य की भस्म बन जाती है ।

भस्म वर्ण– श्वेत

गुण– वैडूर्यं रक्तपित्तघ्नं प्रज्ञायुर्बलवर्धनम् । पित्तप्रधान रोगघ्नं दीपनं मलमोचनम् ॥ (र.र.स. 4/59)

वैडूर्य रक्तपित्त नाशक, बुद्धि, आयु, नल को बढ़ाने वाला, पित्त प्रधान रोग नाशक दीपन तथा मल को दूर करता है । यह मधुर रस तथा शीत गुण युक्त होता है ।

मात्रा– वस्वंशतो रक्तिकाया वैदूर्यं गुञ्जसंमितम् । प्राणाचार्यः प्रयुञ्जीत बलकालाद्यपेक्षया ॥

(र.त. 23/119)

बल काल आदि का विचार कर 1/8 रत्ती (15 मिग्रा.) से 1 रत्ती (120 मिग्रा.) तक प्रयोग करना चाहिए ।

वैडूर्य पिष्टि– वैडूर्य को गुलाब जल से भावना देकर इसकी पिष्टी का निर्माण करते हैं .

प्रमुख योग– 1. नवरत्नराज मृगांक रस
2. रत्नभागोत्तर रस
3. इन्द्रोक्त रसायन
4. चूर्णाञ्जन
5. पिण्डाञ्जन

Scanned with OKEN Scanner

Research update

Cat's eye is an optical phenomenon, possessed by certain minerals in reflected light, in which a movable wavy or silky sheen is concentrated in a narrow barad of light that changes its position as a mineral is turned. The word Chatoyance means to shine like a cat's eye in French. The precipitates that cause chatoyance in Chrysoberyl are the mineral rutile composed mostly of Titanium oxide. (https://geology in.com).

19. मृगशृंग (Stag Horn)

यह बारहसिंघा का शृंग (सींग) है ।

पर्याय

मृगशृङ्गं त्वेण शृङ्गं तथा मृग विषाणकम् । हरिणशृङ्गकञ्चैव समाख्यातं भिषग्वरैः ॥

(र.त. 12/103)

मृगशृंग, ऐणशृंग, मृग विषाणक, हरिणशृंग इसके पर्याय है ।

ग्राह्य लक्षण

कीटनुपहतं दीर्घं भाराढ्यं सुदृढं तथा । अनेकशृङ्ग संयुक्तं मृगशृङ्गं वरं मतम् ॥

(र.त. 12/104)

कीट आदि द्वारा न खाया गया, लम्बा, वजन में भारी, कठिन, अनेक शृंगयुत मृगशृंग श्रेष्ठ होता है ।

मारण

मृगशृङ्गं समादाय करपत्रेण कर्तयेत् । खण्डशः कारयित्वाचत्वङ्गारग्नौ दहेत्ततः ॥
सुदग्धञ्चाथ विज्ञाय खल्वे सञ्चूर्णयेद्भिषक् । रविदुग्धेन सम्पेष्य चक्रिकाः कारयेत्ततः ॥
शरावसम्पुटान्तःस्थं पुटेत्तीव्राग्निना भिषक् । त्रिवारं पुटनादेण विषाणं मृतिमाप्नुयात् ॥

(र.त. 12/105-07)

मृगशृंग को करपत्र (आरी) से काटकर छोटे टुकड़े को अग्नि में जला लेते हैं । जब यह अच्छी प्रकार से जल जाय तो इसे निकालकर पीसा कर अर्क दुग्ध से टिकिया बनाकर शराव सम्पुट कर तीव्र अग्नि में पुट देते हैं । ऐसे तीन पुट से इसकी भस्म बन जाती है ।

भस्म वर्ण– कृष्ण वर्ण (इसमें कैल्शियम फास्फेट होता है ।)

गुण– मृगशृङ्गसमुद्भूता विभूतिर्गव्य सर्पिषा । विनाशयेत् क्षणादेव हृच्छूल मति दारुणम् ॥

(र.त. 12/108)

हृच्छूल, कास श्वास एवं प्रतिश्याय नाशक होता है । यह कफ निसारक होता है ।

मात्रा– एक रत्ती (120 मिग्रा.) – (र.त. 12/109)

प्रमुख योग– 1. ज्वरांकुश रस
2. कन्दर्प सुन्दर रस
3. त्रिनेत्र रस
4. ग्रहणीवज्रकपाट रस
5. बालार्क रस

Research update

Shring Bhasma is a odourless, dull white powder with chalk like taste, showing the presence of carbonates, sulphates, chlorides, potassium, calcium and magnesium. Analytical data shows loss on drying at 110^0C 0.44%, pH of 10, acid insoluble ash 12.68%. * EDAX study revealed that it contains calcium 66.13%, phosphorus 32.46% and potassium 1.41% by weights **

20. सिकता (Silice)

आयुर्वेद प्रकाश में इसे उपरस में वर्णित किया गया है ।

पर्याय– बालुका सिकता प्रोक्ता शर्करा रेतिकाऽपिच । (आ.प्र. 2/303)

बालुका, सिकता, शर्करा तथा रेतिका (रेत) इसके पर्याय है ।

गुण–

बालुका मधुरा शीता संतापाश्रमनाशिनी । स्वेदप्रयोगतश्चैव शाखाशैत्यानिहापहा ॥
तद्वश्च लेखनी प्रोक्ता व्रणोरः क्षतनाशिनी ॥ (आ.प्र. 2/304)

सिकता, मधुर रस, शीत, संताप, श्रम का नाश करने वाली, स्वेदन कर्म से शाखाओं का ठंडापन तथा वायु को दूर करती है । यह लेखन करने वाली तथा व्रण एवं उर क्षत को दूर करते हैं ।

Silicon dioxide, (SiO_2) को सिलिका के नाम से जाना जाता है ।

21. व्योमाश्म (संगेयजव Jade)

पर्याय

व्योमाश्म, हरिताश्म, यशवशिला, हरिन्मणि । इसे हौल दिली भी कहा जाता है ।

Identification - (en.m. wikipedia.org)

Clevage - None

* Rajsekhar and et al. Standardisation of Sringa Bhasma. Ancient Science of Life, Vol. XXI (3) January 2002 pp 167-169.

** Jagnnath Haryan et.al Physico chemical analysis of Mrigshring (Deer calyx) Bhasma. An approach to standardization of Calcium products in Ayurvedic health management. WIAS Vol V. Issue I Jan. 2022 pp. 1-7.

Scanned with OKEN Scanner

Tenacity - Brittle

Hardness - 6-7

Specific Gravity - 2.9-3.38

भेद– आधुनिक मत से इसके 2 भेद हैं–

1. नेफ्राइट (Nephrite)
2. जेडाइट (Jadite)

यह पीलापन लिए हरा या हरा तथा सफेद या गाढ़े हरे रंग का अपारदर्शक तथा कठिन पाषाण है । इसके द्वारा खल्व यन्त्र का भी निर्माण किया जाता है । यह तिब्बत, बर्मा, न्यूजीलैण्ड आदि देशों से प्राप्त किया जाता है । इसका रासायनिक सूत्र $NaAlSi_2O_6$ होता है ।

ग्राह्य लक्षण

जैतून के रंग का (पीला हरा), अंगूर के रंग का, अत्यन्त कठिन तथा स्वच्छ व्योमाश्म श्रेष्ठ होता है ।

व्योमाश्म शोधन– इसके छोटे टुकड़ों को तप्त कर अर्जुन क्वाथ या गुलाब जल में 21 बार बुझाने से इसका शोधन हो जाता है ।

मारण– अर्जुनत्वक् क्वाथ या घृतकुमारी स्वरस से भावना देकर गजपुट देते हैं । ऐसे 10-12 पुट से इसकी भस्म बन जाती है ।

भस्म वर्ण– श्वेत ।

व्योमाश्म पिष्टि– गुलाब जल से अच्छी प्रकार मर्दन कर इसकी पिष्टि का निर्माण करते हैं ।

गुणकर्म– हृदय की दुर्बलता, धड़कन, उच्च रक्तचाप आदि में इसका प्रयोग करते हैं ।

मात्रा– पिष्टि- 2-4 रत्ती

भस्म- 2-4 रत्ती

अनुपान– शहद

प्रमुख योग– 1. ब्राह्मी वटी
2. जवाहर मोहरा वटी
3. व्योमाश्म पिष्टि

22. कौशेयाश्म (Asbestos)

Identification

Lustre– Sliky
Cleavage– Prismatic
Fracture– Fibrous

Hardness 2.5-6.0

Specific Gravity 2.4-3.3

इसे कौशेयाश्म या संगेरेशम कहते हैं । यह एक प्रकार का मुलायम पत्थर है जो कौशेय या रेशम के तन्तुओं जैसा लाल पीला लिए श्वेत वर्ण का होता है । यह अग्नि से रक्षा हेतु वस्त्र आदि के निर्माण हेतु प्रयुक्त होता है । इसे Silicate of Magnesium $Mg_3Si_2O_5(OH)_4$ भी कहा जाता है ।

कौशेयाश्म भस्म

इसके चूर्ण को कुमारी स्वरस की भावना देकर शराव सम्पुट कर पुट देते हैं । ऐसे सात आठ गजपुट से इसकी श्वेत वर्ण की भस्म बन जाती है ।

कौशेयाश्म पिष्टि

गुलाब जल से 3-4 दिन अच्छी प्रकार से मर्दन करने से इसकी पिष्टि का निर्माण हो जाता है ।

मात्रा– 2 से 3 रत्ती

अनुपान– शहद

गुणकर्म– यह रक्तपित्तनाशक है । प्रमेह, प्रदर तथा दन्तपूय में प्रयोग करते हैं ।

Research update

Studies have proved that it is variety of asbestos exhibiting the property of silicate of magnesium and calcium. Experimental study done on Koushayashma Bhasma on antiepileptic action shows that it has significant results on reducing the duration of latency of onset, clonic convulsion and duration of depth in animal model of epilepsy induced by PT2 at a therapeutic dose.*

23. बदराश्म (Silicate of Lime)

इसे बेर पत्थर या हजरत बेर या हज्रुल यहूद भी कहते हैं । यह एक प्रकार का जीवाश्म (Fossil) है । बेर के गुठली सदृश इसकी आकृति होने से इसे बदराश्म कहा जाता है । इसके दोनों सिरे नोकदार तथा सतह पर झुर्रियों युक्त बाहर से सफेद भूरे रंग का तथा अन्दर से हरापन लिए सफेद रंग का होता है । इसकी लम्बाई 1-1.5 इंच तथा चौडाई 1/2 सेमी तक होती है । यह अरब, मिस्र, सीरिया आदि देशों से प्राप्त होता है ।

शोधन– इसे तप्त कर मूली या कदली कन्द स्वरस में 7 बार बुझा लेने से यह शुद्ध हो जाती है ।

मारण– मूली स्वरस या कदली कन्द स्वरस से भावना देकर चक्रिका बनाकर गजपुट देते हैं । ऐसे पांच से सात पुट में इसकी भस्म बन जाती है ।

भस्म वर्ण– श्वेत

---

* Nidhin MM, Govinda Sharma K, S Bhatt & GG Chaitra, Antiepileptic action of kousheyashma Bhasma, Indian J Tradit know; Vol 20(2), April 2021, PP 364-369

Scanned with OKEN Scanner

विधि– पुनर्नव क्वाथ से शार्कर कल्पना इसकी विधि का निर्माण करते है ।

मात्रा– 2-4 तोले

अनुपान– शहद, घृत, गर्म जल आदि ।

गुणकर्म– आमवात शूलनाशक, मूत्रल तथा विषघ्नगामक तथा मूत्र अश्मरी नाशक है ।

Research update

Study done by Reddy Seema MB* on the Badarashm Bhasma and Pishti show the following results on various parameters.

Sl.No.	Parameters	Badarashna bhasma	Badarshan Pisti
1.	pH	12.46	8.77
2.	LOD (at 105°)	0.08%	0.32%
3.	Total Ash	83.58%	57.38%
4.	Acid insoluable ash	1.10%	1.13%
5.	Calcium content	52.61%	36.96%

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 'अष्टास्रश्च चतस्रः षट्कोणो मृसणो गुरु' किसका लक्षण है?—
   a. हीरा **b. चैकान्त** c. चन्द्रकान्त d. स्फटिक
2. कंकुष्ठ की प्राप्ति होती है—
   a. हिमालय पर्वत के नीचे b. नीलगिरि पर्वत से c. श्रीशैल पर्वत से d. गुर्जर मण्डल से
3. गिरि सिन्दूर है—
   a. HgO b. PbO c. AS_2O_3 d. Cu_2O
4. Cu+Sn से निर्मित धातु है–
   a. पीतल b. वर्तलौह c. मुण्ड लौह **d. कांस्य**
5. त्रिफला क्वाथ से किस रत्न का शोधन करते है?
   a. वैडूर्य b. गोमेद c. नीलम d. हीरा
6. वृक्कज एवं प्रहरिज किसके भेद है?
   a. तृणकान्त b. नागपाषाण c. दुग्धपाषाण **d. व्योमाश्म**

* Reddy Seema MB, Belapu V, P Radhika R.G., Comparative pharmaceutical and Analytical study of Badarshma Bhasma and Pishti, Jour. of Ayurveda & Holistic medicine vol. IV Issue I pp 12-23.

अध्याय **11**

कल्पना निर्माण–III

1. शार्कर कल्पना

परिभाषा तथा निर्माण विधि

शार्कर कल्पना जल या अन्य कोई द्रव जैसे क्वाथ, हिम आदि में शर्करा डालकर बनायी जाती है । सिद्ध भेषज मणिमाला में शार्कर निर्माण विधि का निम्न वर्णन होता है । यथा—

अम्भस्यष्टगुणे निधाय च निशि द्रव्यं पलं कुट्टितं प्रातर्मन्दकृशानुना परिपचेदष्टांश शेषं नयेत् ।
तत् सङ्गाल्य पटैश्चतुःपलासितां निक्षिप्य भूयः पचेद्यावत्तन्तुभवोऽवतार्य तदिदं प्राहुर्बुधाः शार्करम् ॥

(सिद्ध भेषज मणिमाला चतुर्थगुच्छ/45)

जिस द्रव्य का शार्कर (शर्बत) बनाना हो उसे एक पल यवकुट लेकर उसमें आठगुना जल डालकर रात्रि पर्यन्त रख देते हैं । अगले दिन प्रातः इसे मध्यम अग्नि पर पाक करते हैं । जब अष्मांश शेष रहे तो छानकर इसमें चार पल चीनी डालकर पुनः पाक करते हैं । जब इसमें (चासनी में) तार बनने लगे तो इसे उतार कर किसी पात्र में सुरक्षित रख लेते है । यही शार्कर है ।

आचार्य यादव जी ने हिम, फाण्ट, अर्क आदि में दो गुना चीनी डालकर पुनः पकाकर शार्कर बनाने का उल्लेख किया है ।

हिमे फाण्टे श्रृतेऽर्के वा शर्करां द्विगुणां क्षिपेत् । मन्देऽग्नौ साधितं पूतं पटात्तच्छार्करं स्मृतम् ॥

(द्र.गु.वि. उत्तरार्ध यादव जी)

विमर्श– शार्कर कल्पना बनाते समय जब इसमें 2 तार की चासनी बन जाय तो इसे उतार लेना चाहिए । अधिक पाक कर लेने से इसकी Consistency अधिक गाढ़ी हो जाती है । शार्कर को ज्यादा दिन तक सुरक्षित रखने के लिए इसमें Preservative का प्रयोग कर सकते हैं । सोडियम बेंजोएट या अन्य बेन्जोइक एसिड प्रयोग किये जा सकते हैं । ये सामान्य रूप से 0.1% के Concentration में प्रयोग किये जाते हैं । सिद्ध भेषजमणिमाला में चार गुना तथा तथा यादव जी ने दो गुना चीनी डालने का उल्लेख किया है ।

शार्कर तथा Syrup मे अन्तर

शार्कर कल्पना	Syrup
1. इसका निर्माण हिम, फाण्ट, क्वाथ या अर्क को आधार द्रव लेकर किया जाता है।	ये सामान्य रूप से Sucrose/Dextrose का aquous solution होते हैं।
2. मधुर द्रव्य के रूप में शर्करा प्रयुक्त करते है।	Sucrose/dextose/sorbitol का प्रयुक्त करते हैं।
3. शार्कर कल्पना में colouring, flavouring agent का उल्लेख शास्त्रों में नहीं मिलता है।	इसमें Colouring, flavouring तथा Preservatives का प्रयोग करते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

4. इस कल्पना में Alcohol का प्रयोग नहीं करते हैं। जब Hydro alcoholic solution से Syrup निर्मित करते हैं तो इसे Elixir के नाम से जाना जाता है।

Importance of Temperature– शार्करा कल्पना निर्मित करते समय नियन्त्रित तापमान का प्रयोग करना चाहिए जिससे हिम, फाण्ट, अर्क में उपस्थिति Volatile substances नष्ट होने से बचा रह सके।

सावधानियाँ– 1. पाक सावधानी पूर्वक करना चाहिए।

2. अर्क, हिम, फाण्ट का निर्माण सावधानी पूर्वक करना चाहिए जिससे यह जला हुआ न प्राप्त हो।

परीक्षण– 1. चासनी 1 तार की होनी चाहिए।

2. पानी में चासनी डालने से यह फैले न अपितु नीचे बैठ जाय।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि

इसमें Preservative का प्रयोग कर ज्यादा दिन तक संरक्षित कर सकते है। इसे काँच पात्र या Food Grade Pastic Bottle में रखा जा सकता है। शार्कर कल्पना की सवीर्यता अवधि 3 साल (The Drugs & Cometics Rule) होती है।

तुलसी अर्क शार्कर (अनुभूत)

1. तुलसी अर्क – 1 भाग
2. चीनी – 2 भाग

निर्माण– सर्वप्रथम तुलसी अर्क का निर्माण अर्क निर्माण विधि से करते है। तत्पश्चात् इस अर्क में दो गुनी चीनी मिलाकर 1-2 तार की चासनी बनने तक पाक करते हैं। तत्पश्चात् इसे अग्नि से उतार कर ठंडा होने पर सुरक्षित रख लेते हैं।

मात्रा– 5 से 10 मिलि mL

उपयोग– कास, श्वास, प्रतिश्याय

2. गुड़पाक

निर्माण विधि– गुड़पाक भी अवलेह कल्पना की भांति निर्मित किये जाते हैं। इसमें गुड़ को आवश्यकतानुसार क्वाथ/जल में मिलाकर गुड़पाक लक्षण आने तक पाक करते हैं। सिद्धि लक्षण आने के पश्चात् इसमें प्रक्षेप द्रव्य मिलाते हैं।

तापमान का महत्व—गुड़पाक नियन्त्रित तापमान पर करना चाहिए जिससे कि इसे जलने से बचाया जा सके।

सावधानियाँ– 1. पाक करते समय इसे चलाते रहना चाहिए।

2. पानी को अधिक मात्रा नहीं लेना चाहिए।

सिद्धि लक्षण–

तोयपूर्णे यदा पात्रे क्षिप्तो न प्लवते गुडः। क्षिप्तश्च निश्चलस्तिष्ठेत् पतितस्तु न शीर्य्यते॥
यदा दर्वीप्रलेपः स्याद् यावद्वा तन्तुलो भवेत्। एष पाको गुडादीनां सर्वेषां परिकीर्त्तितः॥
सुखस्पर्दः सुखस्पर्शो गुडः पाकमुपागतः। पीडितो भजते मुद्रां गन्धवर्णरसान्वितः॥

(चक्रदत्त ज्वरातिसार चिकि. 89-91).

गुड़ को जल में डालकर भगौने को अग्नि पर चढ़ाकर पाक करने पर गुड़पाक के निम्न लक्षण होते हैं—

1. जब गुड़ जलपूर्णपात्र में डालते हैं तो वह फैलता नहीं बल्कि पानी में नीचे बैठ जाता है।
2. पाक लक्षण आने पर गुड़ दर्वी पर लिपटने लगता है तथा इसमें तार बनने लगते हैं।
3. अच्छी प्रकार से गुड़पाक हो जाने पर इसे थोड़ा सा लेकर दो अंगुलीयों के बीच मर्दन करने पर सुख प्रतीत होता है अर्थात् चिपकता नहीं है, स्पर्श में भी अच्छा लगता है। दबाने पर इसमें अंगुली के रेखाओं के निशान बन जाते हैं। इसमें अच्छी गन्ध आती है तथा प्रयुक्त औषधियों से मिश्रित वर्ण तथा रस की उत्पत्ति हो जाती है।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– गुड़पाक भी अवलेह जैसे होते हैं अतः इसको डिब्बों में संरक्षित किया जा सकता है। इस कल्पना की सवीर्यता अवधि 3 साल (Drug & Cosmetic Rule) होती है।

मणिभद्र गुड़

विडङ्गसारामलकाभयानां पलत्रयं, त्रीणि पलानि कुम्भात्।
गुडस्य च द्वादश, मासमेष जितात्मनां हन्त्युपयुज्यमानः॥
कुष्ठाश्चित्रश्वासकासोदरार्शो मेहप्लीहग्रन्थिरूग्जन्तुगुल्मान्।
सिद्ध योगं प्राह यक्षो मुमुक्षोर्भिक्षोः प्राणान् माणिभद्रःकिलेप्रम्॥

(अ.हृ.चि. 19/31-32)

घटक द्रव्य–

1.	विडंग सार	–	48 ग्रा.
2.	आमलकी	–	48 ग्रा.
3.	हरीतकी	–	48 ग्रा.
4.	कुम्भ (त्रिवृत)	–	154 ग्रा.
5.	गुड़	–	576 ग्रा.

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी आदि

निर्माण विधि– भगौने में आवश्यकतानुसार पानी लेकर उसमें गुड़ मिला देते है। तत् पश्चात् अवलेह सिद्धि लक्षण/गुड़पाक लक्षण आने तक अग्नि पर पाक करते हैं। जब सिद्धि लक्षण आ जाय तब इसे अग्नि से नीचे उतार लेते हैं तथा क्रम सं. 1 से 4 तक लिखित द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण इसमें मिलाकर सुरक्षित रख लेते हैं।

मात्रा– 6 ग्रा.

Scanned with OKEN Scanner

अनुपान– दूध या उसके साथ

उपयोग– कुष्ठ, क्षित, कृमि, कास, प्लीहा, गुल्म आदि में ।

गुड़ पिप्पली (A.F.I. Part I 3:8)

विडंग त्रुषा कुष्ठं हिंगु लवण पञ्चकम् । त्रिक्षारं फेनकं वह्निः श्रेयसी चोपकुञ्चिका ॥
तालपुष्पोद्भवं क्षारं नाड्याः कूष्माण्डकस्य च । अपामार्गस्य चिञ्चायाश्चूर्णानि चिक्कणानि ॥
सर्वचूर्णसमंदेयं चूर्णमत्र कणोद्भवम् । एतस्याद् द्विगुणच्चूर्णोत्पुराणो द्विगुणों गुड़ः ॥
(भै.र. प्लीहा 44-46)

घटक द्रव्य–

1. विडंग	- 1 भाग	2. शुण्ठी	- 1 भाग
3. मरिच	- 1 भाग	4. पिप्पली	- 1 भाग
5. कुष्ठ	- 1 भाग	6. हींग	- 1 भाग
7. सौवर्चल लवण	- 1 भाग	8. सैन्धव लवण	- 1 भाग
9. विड लवण	- 1 भाग	10. सामुद्र लवण	- 1 भाग
11. औद्भिद लवण	- 1 भाग	12. स्वर्जिक क्षार	- 1 भाग
13. यवक्षार	- 1 भाग	14. टंकण	- 1 भाग
15. समुद्रफेन	- 1 भाग	16. चित्रक	- 1 भाग
17. गजपिप्पली	- 1 भाग	18. उपकुञ्चिका	- 1 भाग
19. तालपुष्पोदभव क्षार	- 1 भाग	20. कूष्णमाण्ड क्षार	- 1 भाग
21. अपामार्ग क्षार	- 1 भाग	22. चिञ्चा क्षार	- 1 भाग
23. पिप्पली	- 22 भाग	24. पुराण गुड़	- 44 भाग

निर्माण विधि– क्रम संख्या 1 से 23 तक के समस्त द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण तथा गुड़ को मोर्टार तथा पेस्टल की मदद से एक समान मिश्रण (Homogenous mixture) बना लेते हैं। यही गुड़ पिप्पली है।

मात्रा– 6 से 12 ग्राम

अनुपान– जल एवं दुग्ध

उपयोग– प्लीहा रोग, गुल्म, कास, जीर्णज्वर, शोथ, यकृत तथा बच्चों के लिए हितकर ।

3. लवण कल्पना

सामान्य निर्माण विधि– जिस द्रव्य की लवण कल्पना बनाना हो उस द्रव्य का विशेष अंग, जैसे अर्क लवण हेतु अर्क पत्र, नारिकेल लवण हेतु नारियल, लेकर उसे सैन्धव लवण के साथ रखकर पुट के माध्यम से अग्नि प्रदान की जाती है। जब स्वांगशीत हो जाय तब इसे (शराव सम्पुट आदि) बाहर निकाल कर सूक्ष्मचूर्ण बना लेते हैं। यही लवण कल्पना निर्माण की विधि है।

तापमान– लवण कल्पना निर्माण हेतु पुट की अग्नि (10-15 उपला) द्वारा पाक किया जाता है।

सावधानियाँ– 1. शराव सम्पुट या कपड़ मिट्टी सम्यक् प्रकार से करना चाहिए।

2. अग्नि की मात्रा प्रयुक्त द्रव्य अनुसार देते है जैसे नारिकेल लवण हेतु 10-15 उपले तथा अर्क लवण में शराव को Red hot होने तक देते हैं। (सन्दर्भ A.F.I भाग I p 164-166)

सिद्धि लवण– कज्जल प्रभम् वर्ण का लवण

पैकिंग, संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– लवण कल्पना को Air tight container में रखकर इसे संरक्षित करते है। इसको सवीर्यता अवधि 5 साल होती है।

नारिकेल लवण

सुपक्वं ससलिलं नारिकेलं समाहरेत् । अपनीयं जटां वृद्धिपत्रेण स्फोटयेद् दृशम् ॥
जातरन्ध्रान्नारिकेलान्नीरं सर्व परित्यजेत् । सुचूर्णितं सैन्धवं तु दशतोलकसम्मितम् ॥
निक्षिप्य रन्ध्रमार्गेण ततो रन्ध्रं निरोधयेत् । वसनेन समाच्छाद्य परितो लेपयेन्मृदा ॥
रोद्रयन्त्रे विशोष्याथ पुटयेत्तु महापुटे । तद्गोलकं स्वाङ्गशीतं प्रयत्नेन समाहरेत् ॥
सैन्धवं कज्जलीवर्णं कपालांशोज्झितं हरेत् । लवणो नारिकेलोख्यः समाख्यातो भिषग्वरैः ॥
लवणो नारिकेलो यः पाचन पित्तनाशनः । अम्लपित्तहरः कामं पित्तशोषशूलनुत् ॥
वातजं पितजं शूलं श्लेष्मजं सन्निपातजम् । शूलञ्च परिमाणोत्थं नाशयेद विकल्पतः ॥
लवणो नारिकेलाख्यो माषकद्वयसम्मितः । नृसारयवजोपेतः पित्तशोषशूलनुत् ॥
(र.त. 14/123-30)

घटक द्रव्य– सुपक्व नारियल– 1
सैन्धव लवण – 10 तोला

यन्त्र उपकरण– चम्मच, चाकू, खल्व यन्त्र, उपले, कपड़ा, मुल्तानी मिट्टी ।

निर्माण विधि– सर्वप्रथण सैन्धवलवण को खल्व यन्त्र में चूर्ण कर उसे अलग रख लेते हैं । तत्पश्चात् नारियल लेकर उसकी जटा को हटा देते हैं । अब इसके नेत्र वाले भाग में चाकू से सावधानी पूर्वक छिद्र कर इसमें सैन्धव लवण भर देते हैं । तत् पश्चात् इस छिद्र को भी बन्द कर देते हैं । तथा इस पर कपड़ मिट्टी का पुनः मिट्टी का लेप लगाकर धूप में सुखा लेते है । तत्पश्चात् इसे अग्नि में पाक करते है । जब यह स्वांगशीत हो जाय तब मिट्टी हटाकर काले रंग की नारियल गिरी तथा काले ही रंग का सैन्धव लवण एकत्र कर दोनों को मिलाकर चूर्ण कर लेते हैं । यही नारिकेल लवण है । इसे किसी काँच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं ।

मात्रा– 2 माष (125-250 मिग्रा.)

अनुपान– जल से

Scanned with OKEN Scanner

उपयोग– अम्लपित्त, उदरशूल, दीपन-पाचन, परिणामशूल ।

विमर्श– मूलपाट में महापुट में पाक करने का उल्लेख है । पर आचार्य श्री भाव मिश्र ने गोमय की अग्नि में पाक करने का निर्देश दिया है । 10-12 उपले जो अर्द्धचन्द्राकार होते हैं । उनको लेकर इतने ही उपलों की अग्नि में पाक करने से अच्छी प्रकार का नारिकेल लवण का निर्माण हो जाता है ।

4. क्षार कल्पना

सामान्य निर्माण विधि

क्षार निर्माण विधि को निम्न Stages में बाँटा जा सकता है—

1. औषधि को एकत्र करना तथा उसे सुखाना ।
2. औषधि को जलाना (भस्म करना) ।
3. औषधि भस्म/राख तथा पानी को मिलाना ।
4. छानना ।
5. पुनः छने द्रव का पाक करना ।
6. क्षार की प्राप्ति ।

आचार्य शार्ङ्गधर ने निम्न वर्णन किया है—

क्षीरवृक्षस्य काष्ठानि शुष्काण्यग्नौ प्रदीपयेत् । नीत्वा तद्भस्म मृत्पात्रे क्षिप्त्वा नीरे चतुर्गुणे ॥
विमर्द्य धारयेद्रात्रौ प्रातस्च्छं जलं नयेत् । तन्नीरं क्वाथयेद्वह्नौ यावत्सर्वं विशुष्यति ॥
ततः पात्रात्समुल्लिख्य क्षारो ग्राह्यः सितप्रभः ॥ (शा. म. 11/101-103)

क्षीर वृक्षों के शुष्क काष्ठ को अग्नि से जला देते हैं । इस प्रकार प्राप्त भस्म को एक मिट्टी के पात्र में लेकर उसमें चार गुना जल डालकर मर्दन करते है तथा इसे रात्रि पर्यन्त रख देते हैं । पुनः अगने दिन ऊपर का स्वच्छ जल धीरे-धीरे ग्रहण करते हैं । तत्पश्चात् इस नीर (जल) को क्वाथ के जैसे अग्नि पर पकाते हैं जब तक कि यह सम्पूर्ण रूप से सूख न जाय । इसके पश्चात् इसे अग्नि से उतारकर पात्र से लगे क्षार को खुरच कर इकट्ठा कर लेते हैं । यह क्षार श्वेत वर्ण का होता है ।

आचार्य सुश्रुत की क्षार निर्माण विधि

1. शरद ऋतु में पूर्ण वीर्य युक्त मध्यम आयु के काले पुष्प वाले मुष्क का ग्रहण कर उसके छोटे-छोटे टुकड़े कर लेते हैं ।
2. वायुरहित स्थान (निर्वात देश अर्थात् जहाँ हवा न चल रही हो) में इस मुष्क में सुध शर्करा डालकर तिलनाल से अग्नि प्रदीप्त करते हैं ।
3. जल जाने के पश्चात् स्वाङ्गशीत होने पर मोखे की भस्म को अलग तथा भस्म शर्करा (सुधा शर्करा जो जल जाती है या भस्म रूप हो जाती है) को अलग ग्रहण कर लेते हैं ।
4. इस भस्म को 1 द्रोण मात्रा लेकर उसे 6 द्रोण जल में घोलते हैं । यदि क्षार तीक्ष्ण बनाना हो तो जल की जगह गोमूत्र का प्रयोग करते हैं ।

5. तत् पश्चात् इसे इक्कीस बार छान लेते हैं । तथा इस छने हुए जल का पाक करते हैं ।
6. जब यह कुछ गाढ़ा हो जाय तो इसे उतार कर छान कर पुनः पाक करना चाहिए । तथा कुछ क्षारोदक (एक कुडव या डेढ़ कुडव) निकालकर अलग रख लेना चाहिए ।
7. तत्पश्चात् कट्शर्करा (जो सुधा शर्करा भस्म रूप में न हो) भस्म शर्करा (जो सुधा शर्करा भस्म रूप हो जाय), क्षीरपाक (जलशुक्ति), शंखनाभि को दो द्रोण क्षारोदक में आठपल शंखनाभि आदि को पीसकर अर्थात् जो क्षारोदक (एक कुड़व/डेढ़ कुड़व) अलग रखा था उससे इनको पीसकर क्षारोदक में मिलाकर अग्नि पर पाक करते हैं ।
8. पाक के पश्चात् इसे उतार कर लोहे के घड़े से सुरक्षित रख लेते हैं । यह मध्यम क्षार है ।
9. यदि इसमें शंखनाभि आदि का प्रतिवाप न डाला जाय तो मृदु क्षार बनता है । इसे संब्यूहिम भी कहते हैं ।
10. यदि इसमें शंखनाभि आदि के साथ दन्ती, द्रवन्ती, विडलवण आदि का सूक्ष्म चूर्ण शुक्ति प्रमाण में डालकर पकाया जाया तो इसे तीक्ष्ण क्षार या पाक्य कहते हैं ।

आचार्य वाग्भट्ट ने बनाने के सात दिन पश्चात् प्रयोग करने का निर्देश दिया है ।

विभिन्न आचार्यों के अनुसार भस्म एवं जल का प्रमाण

क्रम.सं.	आचार्य का नाम	भस्म की मात्रा	जल का प्रमाण
01	आ. सुश्रुत	1 भाग	6 गुना
02	आ. शार्ङ्गधर	1	4 गुना
03	रस तरंगिणीकार	1	8 गुना तथा 4 गुना
04	आ. यादव जी	1	6 गुना

रसतंरगिणी कार ने सात बार छानने का निर्देश दिया है ।

अग्नि का महत्व (Importance of temperature)– क्षार निर्माण हेतु अधिक ताप पर पंचांग/प्रयोज्य अंग को जलाना चाहिए जिससे कि श्वेत वर्ण की राख प्राप्त हो कम ताप पर दहन करने पर काले रंग की राख प्राप्त होती है जिससे कार्बन उपस्थित रहता है।

सावधानी–
1. दहन उच्च ताप पर करना चाहिए ।
2. छानने की प्रक्रिया सावधानी पूर्वक करना चाहिए ।
3. प्राप्त क्षार द्रव को सावधानी पूर्वक अग्नि पर पाक करना चाहिए।

सिद्धि लक्षण– श्वेत वर्ण, चूर्ण रूप Packing संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– क्षार को air tight बोतल में रखना चाहिए। क्षार की सवीर्यता अवधि 5 साल (The drug & cosmetics rule) होती है।

कदली क्षार (A.F.I. Part I 10:5)

घटक द्रव्य–
1. कदली भस्म - 1 भाग
2. जल– 6 भाग

निर्माण विधि– कदली क्षार का निर्माण कदली कन्द को जलाकर प्राप्त राख को 6 गुना जल में घोलकर इसे

Scanned with OKEN Scanner

2. छान छानते हैं। छान इस को अग्नि पर पाक करते हैं जलीयांश सूखने पर श्वेत वर्ण की क्षार प्राप्त होती है।

मात्रा– 125 मिग्रा.

अनुपान– जल

उपयोग– गुल्म, प्लीहोदर, जीर्ण ज्वर, शोफ आदि।

2. चिञ्चा क्षार (र.त. 14/107)

घटक द्रव्य– 1. चिञ्चा भस्म - 1 भाग

2. जल - 4 भाग

निर्माण विधि– चिञ्चा भस्म को जल में घोलकर इसे तीन घंटे तक मर्दन करते हैं। तत्पश्चात् इसे तीन तहवाले वस्त्र से छान लेते हैं। प्राप्त द्रव को अग्नि पर पाक करते हैं। जलीयांश सूखने पर श्वेत वर्ण की क्षार प्राप्त होती है।

मात्रा– 125-250 मिग्रा.

उपयोग– अग्निमांद्य, गुल्म, शूल, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी।

5. अयस्कृति कल्पना

निर्माण विधि– तीक्ष्णलोहपत्राणि तनूनि लवणवर्गप्रदिग्धानि गोमयाग्निप्रतप्तानि त्रिफलाशाल-सारादिकषायेण निर्वापयेत् षोडशवारान्, ततः खदिराङ्गारतप्तान्युपशान्ततापानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेच्छनतान्तवपरिस्रावितानि, ततो यथाबलं मात्रां सर्पिर्मधुभ्यां संसृज्योपयुञ्जीत, जीर्णे यथाव्याध्य-नुरूपलवणमाहारं कुर्वीत, एवं तुलामुपयुज्य कुष्ठमेहमेदःश्वयथुपाण्डुरोगोन्मादापस्मारानपहत्य वर्षशतं जीवति, तुलायां तुलायां वर्षशतमुत्कर्षः, एतेन सर्वलौहेष्वयस्कृतयो व्याख्याताः ॥ (सु.चि. 10/11)

इस प्रक्रिया को निम्न रूप में समझा जा सकता है–

पतले तीक्ष्ण लोह पत्र पर → लवण वर्ग के कल्क का लेप → उपले की अग्नि पर ↓ प्रतप्त करते हैं

प्राप्त चूर्ण को अन्तः प्रयोग करते हैं ← शीतल होने पर घने वस्त्र से छान लेते हैं ← खदिर के लकड़ी के कोयले की अग्नि पर तपाते हैं। ← यह प्रक्रिया 16 वार करते हैं ← बुझाते हैं ← त्रिफला एवं शालसारादि क्वाथ में

उपरोक्त वर्णित प्रक्रिया अनुसार सभी लोहों का अयस्कृति बनाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रमेह चिकित्सा में वर्णित लोहारिष्ट में प्रयुक्त लोह को पहले लोहपत्र को खदिर लकड़ी के अंगार पर उसे बहुत बार तपाकर तत्पश्चात आसव बनाने हेतु इसे यव पल्लव में तीन चार माह तक या जब तक लोहा क्षय न हो तब तक रखते हैं पुनः उसे प्रयोग करते हैं।

अग्नि का महत्व (Importance of temperature)– लोहा आदि धातुओं को तप्त करने हेतु उचित तापमान की आवश्यकता होती है।

सावधानियाँ– 1. धातुओं को सम्यक् रूप में तप्त कर बुझाना चाहिए जिससे कि ये चूर्ण हो जाय।

लक्षण– कपड़े छानने के उपरान्त सूक्ष्म चूर्ण रूप।

Packing संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– इसका संग्रह Air Tight, Glass bottle में करते है। भस्म के समान सवीर्यता अवधि मानी जा सकती है।

6. लेप कल्पना

निर्माण विधि– द्रव्यमार्द्रं शिलापिष्टं शुष्कं वा सद्रवं तनु। देहे प्रलेपनार्थं तल्लेपं इत्युच्यते बुधैः ॥
(द्र.गु.वि. उत्तरार्द्ध यादवजी)

आर्द्र द्रव्य को शिला (पत्थर/सिल बट्टा) पर पीसकर या शुष्क द्रव्य को शिला पर पिष्ट कर लेते हैं। इसे किसी द्रव के साथ शरीर पर लेप करते हैं। यहाँ पर द्रव के रूप में स्वरस, क्वाथ, जल, दुग्ध, गोमूत्र, गुलाबजल आदि का ग्रहण किया जाता है।

लेप प्रयोग में सावधानियाँ

आचार्यों ने लेप का प्रयोग करते समय कुछ विधान का वर्णन किया है। जिसे लेप लगाने के समय अनुपालन करना चाहिये।

1. **रोमाभिमुखमादेयौ प्रलेपाख्यप्रदेहकौ। वीर्यं सम्याग्विशात्याशु रोमकूपैः शिरामुखैः ॥**
(शा.उ. 11/13)

लेप को रोग के विपरीत दिशा में लगाना चाहिए। ऐसे करने से रोम कूपों द्वारा औषधि का वीर्य सम्यक प्रकार से सिरामुख तक पहुँच जाता है।

2. **न च पर्युषितं लेपं कदाचिदवचारयेत्।** (सु.सू. 18/14)

उषित अर्थात् देर से रखा हुआ (वासी) लेप नहीं लगाना चाहिए।

3. **उपर्युपरि लेपं च न कदाचित् प्रदापयेत् ॥** (सु.सू. 18/14)

लेप सूखने के पश्चात या एक बार लेप लगाकर कुछ देर पश्चात पुनः उसी के ऊपर लेप नहीं लगाना चाहिए।

4. रात्रि में लेप नहीं लगाना चाहिए। लेकिन अपक्व शोथ, गम्भीर तथा रक्त कफज शोथ में सम्यक् विचारोपरान्त लेप का प्रयोग किया जा सकता है।

न रात्रौ लेपनं कुर्याच्छुष्यमाणं न धारयेत् ॥
शुष्यमाणमुपेक्षेत प्रदेहं पीड़न प्रति। तमसा पिहितो ह्यूष्मा रोमकूपमुखे स्थितः ॥
बिना लेपेन निर्याति रात्रौ नो लेपयेदतः। रात्रावपि प्रलेपादिविधिः कार्यो विचक्षणैः ॥
अपवन शोथे गम्भीरे रक्त श्लेष्मसमुद्भवै। (शा.उ. 11/74-76)

5. यदि लेप में स्नेह का प्रयोग करना हो तो वातज रोग में कल्क का एक चौथाई, पित्तज रोग में कल्क का छठा भाग तथा कफज रोग में कल्क का आठवाँ भाग स्नेह मिलाना चाहिए।

षडभागं पैत्तिके स्नेहं चतुर्भागं तु वातिके। अष्टभागं तु कफजे स्नेहभागं प्रदापयेत ॥
(सु.सू. 18/10)

Scanned with OKEN Scanner

Confirmatory test– लेप पीसने के पश्चात् या दव मिलाने पर (चूर्ण रूप में होने पर) यह कल्क जैसा हो तथा इसकी Consistency एक समान (Uniform) होनी चाहिए ।

संरक्षण तथा सवीर्यता अवधि– लेप चूर्ण को Air tight containers में इसे रखना चाहिए । लेप चूर्ण की सवीर्यता अवधि 2 साल (As per Drugs & Cosmetics rule) होती है।

1. अवल्गुजादि लेप (A.F.I. Part II:1)

कुडवोऽवल्गुजबाजाद्धरिताल चतुर्थ भागसम्मिश्रः । मूत्रेण गवां पिष्टः सवर्णकरणं परं श्वित्रे ॥

(अ.ह्.चिकि. 20/13)

घटक द्रव्य– 1. अवल्गुज बीज (वाकुची) - 192 ग्रा.
2. हरताल पत्र - 48 ग्रा.
3. गोमूत्र - आवश्यकतानुसार

निर्माण विधि– अवल्गुज बीज तथा हरताल पत्र को गोमूत्र की सहायता से पीसकर लेप लगाते हैं।

उपयोग– श्वित्र, वर्ण विकृति

2. केशवर्धक लेप

गोक्षुरस्तिलपुष्पाणि तुल्ये च मधुसर्पिषी । शिरः प्रलेपनं तेन केशसंवर्धक परम ॥ (शा.उ.)

घटक द्रव्य– 1. गोक्षुर बीज - 1 भाग
2. तिल पुष्प - 1 भाग
3. मधु - 1 भाग
4. घृत - 1 भाग

उपरोक्त समस्त द्रव्यों का लेप करने से केश का सवर्धन होता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. शार्कर कल्पना में प्रयुक्त चीनी की मात्रा है—
a. समभाग **b. दो गुना** c. तीन गुना d. चार गुना
2. गुड़पाक के सिद्धि लक्षण किससे समानता रखते है—
a. वटी कल्पना **b. अवलेह कल्पना** c. पानक d. स्नेह कल्पना
3. लवण कल्पना में पाक पश्चात् प्राप्त लवण का वर्ण होता है—
a. श्वेत b. रक्त **c. कज्जल** d. कपोत
4. अयस्कृति की तुलना की जा सकती है—
a. लेप से **b. भस्म से** c. पिष्टी से d. आसव से
5. लेप कल्पना का प्रयोग किस समय नहीं करते है?
a. प्रातः b. सायं **c. रात्रि** d. उपरोक्त कोई नहीं

अध्याय 12

चतुर्विध रसायन

इसके अन्तर्गत खरलीय रसायन, पर्पटी रसायन, कूपीपक्व रसायन तथा पोट्टली रसायन का वर्णन किया गया है। इसके अन्तर्गत खरलीय रसायन, पर्पटी रसायन, कूपीपक्व रसायन तथा पोट्टली रसायन का वर्णन किया गया है। पारद, गन्धक तथा अन्य रस द्रव्यों का चिकित्सकीय रूप में प्रयोग मुख्यतः चार प्रकार से किया जाता है। इन्हें इनके निर्माण विधि के आधार पर यथा खरलीय, पर्पटी, कूपीपक्व तथा पोट्टली की संज्ञा दी जाती है। इन्हें ही चतुर्विध रसायन कहा जाता है। इनके निर्माण हेतु आग्नि का विशेष महत्व है। खरलीय रसायन निर्माण हेतु कमरे का तापमान, पर्पटी निर्माण हेतु 115-120^{0}C, कूपीपक्व निर्माण हेतु एक विशिष्ट क्रम में अधिकतम 650^{0}C तथा पोट्टली निर्माण हेतु गन्धक को द्रवित करने हेतु आवश्यक तापमान की आवश्यकता होती है। खरलीय रसायन में पारद गन्धक के साथ भस्म तथा काष्ठ औषधियाँ होती हैं जबकि अन्य तीन में पारद, गन्धक के साथ अन्य रस द्रव्यों का संयोग होता है। इन चारों प्रकार के रसायन में मूर्च्छना तथा जारणा प्रक्रिया की विशेष भूमिका होती है।

1. खरलीय रसायन

परिभाषा– खल्व यन्त्र द्वारा निर्मित किये जाने के कारण इसे खल्वीय रस कहा जाता है ।

निर्माण विधि– इस प्रकार के रस औषधियों के निर्माण में प्रयुक्त घटक द्रव्यों यथा भस्म आदि तथा प्रयुक्त काष्ठ औषधियों के सूक्ष्म चूर्ण को वर्णित मात्रा अनुसार लेकर उसे उल्लिखित भावना द्रव के साथ मिलाकर खल्व यन्त्र में मर्दन करते हैं । जब गोली बनने लायक हो जाय तो निर्देशित मात्रानुसार (1 या 2 रत्ती 125 मिग्रा. से 250 मिग्रा) गोली बनाकर छाया शुष्क कर किसी कांच की शीशी में रख कर संरक्षित कर लेते हैं ।

महत्व (Importance)– खरलीय रसायन में विभिन्न प्रकार के रस भस्मों, कज्जली को काष्ठौषधियों में मिश्रित कर प्रयोग किया जाता है। वटी रूप में निर्मित होने के कारण इनका प्रयोग उचित मात्रा में आसानी से किया जा सकता है।

आवश्यक उपकरण– खल्व यन्त्र

सवीर्यता अवधि– 1. रसयोग जिसमें केवल रस/उपरस/भस्म (नाग वंग तथा ताम्र के अतिरिक्त) हो- 10 साल
2. रसयोग जिसमें रस/उपरस/भस्म तथा काष्ठौषधि/गुग्गुलु हो - 5 साल

1. श्वासकुठार रस (A.F.I. Part 20:49)

रसो गन्धो विषं चैव टंकणं च मनःशिला । एतानि टंकमात्राणि मरिचं चाष्टटंकंकम् ॥
एकैकं मरिचं दत्वा खल्वे सूक्ष्मं विमर्दयेत् । त्रिकटुटंकमात्रं च दत्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥
सर्वमेकत्र संयोज्य काच कूप्यां विनिक्षिपेत । (यो.र.श्वास. P 373)

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध पारद - 4 ग्रा.
2. शुद्ध गन्धक - 4 ग्रा.

Scanned with OKEN Scanner

3. शुद्ध वत्सनाभ	-	4 ग्रा.
4. शुद्ध टंकण	-	4 ग्रा.
5. शुद्ध मन:शिला	-	4 ग्रा.
6. मरिच	-	36 ग्रा.
7. शुण्ठी	-	4 ग्रा.
8. पिप्पली	-	4 ग्रा.

उपरोक्त समस्त द्रव्यों को मिलाकर 1 रत्ती की गोली बनाकर संरक्षित कर लेते है।

मात्रा– 1-2 रत्ती

अनुपान– शहद

उपयोग– कास, श्वास, वात कफज रोग आदि।

2. वात-विध्वंस रस (A.F.I. Part 20:45)

रसं गन्धकं नागवंगं च लौहं तथा ताम्रजं व्योम निश्चन्द्रकं च।
कणा टंकणं त्र्यूषणं नागरं वै पृथग्भागमेकं विमर्द्यैकयामम्॥
ततो वत्सनाभं चतुः सार्धं भागं दृढं मर्दयेद् भावना व्योषजात्रिः
वराचित्रकैमार्कवैः कुष्ठजाम्बिदास्त्रिभिर्भावयोन्निर्गुण्डी भानुदुग्धैः
मही धात्रिका चन्द्रिकानिम्बुनीरैः समं भावयेद्वातविध्वंसनोद्रव्यम्॥

घटक द्रव्य–

1. शुद्ध पारद	2. शुद्ध गन्धक
3. नाग भस्म कज्जली	4. वंग भस्म
5. लोह भस्म	6. निश्चन्द्र अभ्रक भस्म
7. ताम्र भस्म	8. पिप्पली
9. शुद्ध टंकण	10. शुण्ठी
11. मरिच	12. पिप्पली
13. शुण्ठी	14. वत्सनाभ

उपरोक्त समस्त द्रव्य समान मात्रा में।

भावना द्रव्य–

1. त्रिकटु	2. त्रिफला
3. चित्रक	4. भृंगराज
5. कुष्ठ	6. निर्गुण्डी
7. अर्कदुग्ध	8. तामलकी
9. चन्द्रशूर जल	10. नीबू स्वरस

प्रत्येक की 3 भावना

निर्माण विधि– सर्वप्रथम कज्जली निर्मित करते हैं तब पश्चात् समस्त द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर प्रत्येक भावना द्रव्य से उत्तम भावना देकर वटी बना लेते हैं।

मात्रा– 250 मिग्रा.

अनुपान– शुद्ध

उपयोग– वातजशूल, वातज ग्रहणी, सन्निपात रोग, कफरोग

2. पर्पटी रसायन

पर्पटी शब्द पर्पट से बना है। पर्पट का अर्थ पापड़ से ग्रहण किया जाता है। पर्पट आकारान्त पुल्लिंग शब्द है तथा इसमें 'ई' प्रत्यय लगाने पर इसका स्त्रीलिङ्ग पर्पटी बना जाता है। पर्पट, पर्पटी तथा पर्पटिका ये तीनों शब्द क्रमशः (उत्तरोत्तर) लघुता के सूचक हैं।* आचार्य नागार्जुन ने पारद, गन्धक, ताम्र तथा विष द्रव्यो से पर्पटी निर्माण का उल्लेख किया है। 11वी शताब्दी में आचार्य चक्रवाणि द्वारा विरचित चक्रदत्त में ग्रहणी चिकित्सा हेतु रस पर्पटी का वर्णन सर्वप्रथम प्राप्त होती है।

परिभाषा–

सन्द्राविता कज्जलिकाग्नि योगात्। रम्भापलाशे चिपटी कृता च।
रसागमज्ञैः खलु पर्पटी सा, प्रकीर्तिता पर्पटिका च सैव॥ (र.त. 2/42)

रसरत्न समुच्चय अनुसार–

द्रुत कज्जलिका मोचापत्रे चिपटीकृता च। स पोटः पर्पटी सैव बालाद्यखिलरोगनुत्॥
(र.र.स. 11/72)

कज्जली को अग्नि संयोग से द्रवित (Melt) कर केला, पलाश आदि के पत्ते पर फैलाकर उसे चिपटा कर पापड़ सदृश बना लेने को रसशास्त्र के आचार्यों ने पर्पटी या पर्पटिका कहा है। यह पारद का पोट बन्ध है। यह बच्चों आदि के समस्त रोगों को नष्ट करती है।

महत्व– पर्पटी पारद का पोट बन्ध है। इस बन्ध में गन्धक का प्रयोग सामान्य रूप से पारद की बराबर मात्रा में किया जाता है। बद्ध होने पर पारद की चंचलता तथा दुर्ग्रहत्व नष्ट हो जाता है तथा यह शरीर में विभिन्न रोगों के नाश हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है। अग्नि संस्कार से पर्पटी में दीपन, पाचन एवं ग्राही गुणों की उत्पत्ति हो जाती है। पर्पटी का प्रयोग पाचन संस्थान के रोग यथा ग्रहणी में विशेष रूप से किया जाता है।

पर्पटी भेद– पर्पटी में गन्धक के घटक द्रव्य के रूप में होने या न होने के आधार पर दो प्रकार का माना जा सकता है, यथा–

1. सगन्ध पर्पटी– इसमें मुख्य रूप से पारद तथा गन्धक होते हैं। पारद गन्धक के अतिरिक्त अन्य द्रव्य यथा स्वर्ण, लौह, ताम्र, वत्सनाभ आदि घटक द्रव्य के रूप में हो सकते हैं। पर्पटी के घटक द्रव्य के आधार पर उन्हें नामकरण करते हैं, यथा–

a) जब केवल पारद + गन्धक हो तो– रस पर्पटी
b) पारद + गन्धक + ताम्र + वत्सनाभ– ताम्र पर्पटी
c) पारद + गन्धक + स्वर्ण– स्वर्ण पर्पटी
d) पारद + गन्धक + लौह– लौह पर्पटी

Scanned with OKEN Scanner

e) पारद + गन्धक + अभ्रक (गगन)- गगन पर्पटी

f) पारद + गन्धक + बोल- बोल पर्पटी

g) पारद + गन्धक + लोह + अभ्रक + ताम्र- पंचामृत पर्पटी

निर्गन्ध पर्पटी– इस पर्पटी में पारद एवं गन्धक नहीं होते हैं । किन्तु इनकी निर्माण प्रक्रिया पर्पटी निर्माण के अनुरूप होता है। यथा-

a) सूर्यक्षार + स्फटिका + नवसादर - श्वेत पर्पटी

b) मल्ल पर्पटी

निर्माण विधि– शुद्ध पारद तथा शुद्ध गन्धक की कज्जली निर्मित करते है। यदि इसमें भस्म डालनी है तो इसे मिलाकर अच्छी प्रकार मर्दन करते है। एक लौह दर्वी में इस कज्जली को द्रवित कर इसे केले के पत्ते पर डालकर उसे चिपटा कर देते हैं। यही पर्पटी निर्माण विधि है।

पर्पटी निर्माण हेतु यन्त्र एवं सामग्री– पर्पटी के निर्माण हेतु निम्न की आवश्यकता होती है-

1. खल्व यन्त्र
2. लौहदर्वी
3. छोटा चम्मच
4. गोमय
5. पत्र (कदली पत्र या अन्य पत्र)
6. समतल पिधानक
7. घृत, तैल
8. अग्नि

1. खल्व यन्त्र– शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक से कज्जली निर्माण हेतु खल्व यन्त्र की आवश्यकता होती है । इस उद्देश्य हेतु लौह या पत्थर निर्मित द्रोणी आकार की खरल का प्रयोग सुविधानुसार किया जा सकता है ।

2. लौह दर्वी– कज्जली को द्रवित करने हेतु लौह दर्वी की आवश्यकता होती है । दर्वी का आकार कज्जली को लिए जाने वाली मात्रा के अनुसार निर्मित कराया जा सकता है । पारद की लोहे से क्रिया न होने के कारण व्यवहार में ऐसी दर्वी का उपयोग या Stainless steel कलछी का उपयोग किया जाता है । यद्यपि शास्त्रों में लौह पात्र तथा ताम्र पात्र का उपयोग इस हेतु किया गया है-

1. लौहपात्रेऽथवा ताम्रे- यकरादि रस, श्लोक 354, भाग-2 र. यो. सा.
2. लोह पात्रे द्रवीकृतम्- चक्र. चि.कि. 87
3. लौहस्थितं यत्नेन – भै.र. ग्रहणी चिकि. 384

3. छोटा चम्मच– द्रवित कज्जली को चलाने हेतु तथा उसे एकत्र कर कदली पत्र डालने हेतु चम्मच का प्रयोग किया जाता है । इसे सुविधानुसार आकार का लिया जा सकता है ।

4. गोमय– पर्पटी निर्माण हेतु द्रवित कज्जली को गोमय पर ही गिराकर उसे दबाने का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है-

1. शीघ्र गोमयसंस्थिते तु कदली पत्रे ततो निक्षिपेत- (र.त. 6/136)
2. गोमयोपरि विन्यस्त कदली पत्र पातनात् – चक्र. ग्रहणी 87
3. सद्यो गोमयनिहिते कदलदले दालयेन्मृदुनि- भै.र. ग्रहणी 385

गोमय के अभाव में पंक (कीचड़) का भी उपयोग किया जा सकता है-

समधिनिहितपङ्कस्थाथिरम्भादलस्थम (पंचामृतपर्पटी, यकरादि रस श्लोक 208, भाग र.यो.सा. II भाग)

5. पत्र– पर्पटी निर्माण में पर्पटी को गोमय से सीधा सम्पर्क से बचाने हेतु विभिन्न प्रकार के वृक्षों के पत्र का उपयोग किया गया है जिसमें सामान्य रूप से कदली पत्र का उपयोग देखने को मिलता है । कदली पत्र, पलाश, कमल, नागवल्ली आदि का उल्लेख है ।

जिसे उपलब्धता के आधार पर प्रयुक्त किया जा सकता है । यथा-

a) **प्रथमं कदली श्रेष्ठा ह्यलाभे पद्मिनी दलम् । तद् लाभे नागवल्ली ॥** (ताम्र पर्पटी, तकरादि रस, श्लोक 57-58, र.यो.सा. II भाग)

अर्थात् पहले कदली का प्रयोग श्रेष्ठ है । इसके अभाव में कमल पत्र तथा यदि ये दोनों न उपलब्ध हो तो नागवल्ली पत्र (पान) का प्रयोग करना चाहिए ।

b) **ढालयेत अर्कपत्रस्था पर्पटी रससिद्धये–** (ताम्र पर्पटी, तकरादि रस, श्लोक 67, र.यो.सा. II भाग)

c) **तत् सर्वं क्षिपेत् कुटज पत्रके–** (सुधासार रस, शकरादि रस, श्लोक 1878, र.यो.सा. II भाग)

d) **पञ्चाङ्गुलदले क्षियेत–** (अभ्रक पर्पटी, अकरादि रस, श्लोक र.यो.स. I भाग)

e) **रम्भापलाशे चिपटी कृता च–** र.त. 2/42

6. समतल पिधानक– द्रवित कज्जली को गोमय पर रखे कदली पत्र पर डालकर इसके ऊपर दूसरा कदली पत्र रखकर दबाने के परिणाम स्वरूप पर्पटी का निर्माण होता है । अतः इस प्रक्रिया के सुविधा हेतु थाली या चपटे प्लेट का प्रयोग किया जा सकता है ।

विमर्श– समतल पिधानक के स्थान पर गोमय निर्मित पीठिका का भी प्रयोग किया जा सकता है ।

7. स्नेह– पर्पटी निर्माण के दौरान कज्जली दर्वी में चिपके नहीं तथा कज्जली को जलने से बचाने हेतु स्नेह (घृत) आदि का प्रयोग किया जाता है । यथा-

किञ्चित् क्षिपेत्तैलमतश्च वह्नौ प्रदाव्य– (रस पर्पटी, यकरादि रस, श्लोक 356, र.यो.स. II भाग)

तथा,

घृताक्तं लौहपात्रेऽग्नौ द्रुतत्वादिकतागतम्– (अभ्रक पर्पटी, अकरादि रस, श्लोक र.यो.स. I भाग)

8. जल– पर्पटी निर्मित हो जाने पर स्नेहांश को पृथक् करके हेतु उष्ण जल से पर्पटी का प्रक्षालन करना व्यवहार में प्रचलित है ।

पर्पटी पाक/निर्माण हेतु अग्नि

शास्त्रों में पर्पटी निर्माण हेतु बदर काष्ठ निर्मित कोयलों का प्रयोग किया गया है, यथा-

निर्धूमबदर काष्ठाङ्गारे न्यस्तं विलाप्य तैलसमम (भै.र. ग्रहणी चिकि. 384)

ततो बादरबह्निस्थं लोहपात्रे द्रवीकृतम्- (चक्र.ग्रहणी 87)

Scanned with OKEN Scanner

प्रस्तावना– कज्जली (1:2:3) का द्रवित हो जाती है अतः पर्पटी निर्माण हेतु मृदु अग्नि 115-120°C की आवश्यकता होती है । यदि अग्नि ज्यादा होगी तथा ज्यादापुट (नीचार) होगी तो कज्जली के जल जाने की सम्भावना रहती है । अतः आजकल में निम्न अग्नि (ऊष्मा) का प्रयोग किया गया है । बहुत कोयले की अग्नि मृदु रहती है इसलिए आजकल ये प्रयोग विशेष है । आजकल LPG के द्वारा कम अग्नि पर कज्जली को द्रवित कर पर्पटी का निर्माण आसानी से किया जा सकता है । पर्पटी निर्माण में धातुओं जैसे स्वर्ण, आदि का प्रयोग किया जाता है । ये धातु भस्म के रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं ।

पर्पटी पाक परीक्षा

पाक की दृष्टि से पर्पटी को तीन प्रकार का बनाया गया है ।

मृदु मध्यः खरश्चेति पाकोऽत्र त्रिविधः स्मृतः । (र.त. 6/138)

1. मृदुपाक
2. मध्य पाक
3. खर पाक

पर्पटी पाक परीक्षा को दो भागों में बाँटा जा सकता है–

1. पाक कालीन परीक्षा
2. पाक पश्चात् परीक्षा

पाक कालीन परीक्षा

पर्पटी निर्माण हेतु जब कज्जली को जब द्रवित किया जाता है तो अग्नि मात्रा तथा पाककाल आदि के प्रभाव से द्रवित हुई कज्जली में कुछ लक्षण दिखाई देते हैं जिसके आधार पर पर्पटी किस प्रकार (मृदु, मध्य या खर) की बनेगी इसका निर्णय किया जा सकता है ।

मृदुपाक

मयूर चन्द्रिकाकारं लिङ्गं यत्र तु दृश्यते । तत्र सिद्धिं विजानीयात मृदुनैवात्र संशयः ॥
(भा.भै.र. IV भाग, रकारादि 6063)

यदि द्रवित कज्जली का वर्ण मयूर चन्द्रिका वर्ण का हो तो पर्पटी मृदुपाक होती है ।

मध्यपाक– तावत् स्थाप्यते यावत्तैलाभो जायते रसः । (ताम्र पर्पटी, तकारादि रस, श्लोक र.यो.स. I भाग)

कज्जली का तैलाभ होने तक पाक करने से उपरान्त मध्यपाक पर्पटी निर्मित होती है ।

खरपाक– रक्तवर्णं भवेद् यावत् तावत्याच्यं प्रचालयेत् – (भा.भै.र. IV भाग, रकारादि 6154)

यदि द्रवित कज्जली का वर्ण रक्तवर्ण की हो जाय तो खरपाक पर्पटी निर्मित होगी।

पाक प्रकार	द्रवित कज्जली स्वरूप/वर्ण
1. मृदु पाक	मयूर चन्द्रिकाकार
2. मध्यपाक	तैलाभ
3. खर पाक	रक्त वर्ण

पाक पश्चात् परीक्षा

पाकोऽस्यास्त्रिविधः प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा । आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥
मृदौ न सम्यग् भङ्गोऽस्ति मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् । खरेऽलघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणाच्छविः ॥
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरसत्याज्यो विषोपम :॥
(पंचामृत पर्पटी (प्रथम) 172-173 रस.यो.सा. II भाग

मृदुपाके न भगः स्यात्तत्सारल्यञ्च मध्यमे । द्वयोः सचन्द्रिकं काष्यं खरे चूर्णञ्च लोहितम् ॥
(र.त. 6/139)

पाक पश्चात् पर्पटी की परीक्षा पर्पटी को तोड़कर की जाती है । मृदुपाक में पर्पटी टूटती नहीं है, जबकि मध्यम पाक पर्पटी सरलता से टूट जाती है । ये दोनों कृष्ण वर्ण की चन्द्रिका युक्त होती है जबकि खर पाक रक्तवर्ण की तथा चूर्ण स्वरूप होती है । मृदु तथा मध्यपाक पर्पटी का उपयोग चिकित्सा में किया जाता है।

सवीर्यता अवधि– 10 साल

1. लोह पर्पटी (A.F.I. Part I 16:4)

रसभागो भवेदेको द्विगुणः शुद्ध गन्धकः । रसतुल्यं तीक्ष्णभस्म कज्जली कारयेच्छुभाग ॥
रसपर्पटिका प्रोक्ता विधानेन प्रयत्नत ।

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध पारद – 4 भाग
2. शुद्ध गन्धक – 2 भाग
3. तीक्ष्ण लोह भस्म – 1 भाग

निर्माण विधि– सर्वप्रथम पारद तथा गन्धक को लेकर कज्जली निर्मित करते है तत् पश्चात् इसमें तीक्ष्ण लोह भस्म मिलाकर पर्पटी निर्माण विधि द्वारा पर्पटी निर्मित करते हैं।

मात्रा– 250 मिग्रा. mg
अनुपान– तक्र, जीरक चूर्ण, दाड़िम स्वरस
उपयोग– अग्निमांद्य, ग्रहणी, अम्लपित्त, पाण्डु आदि ।

2. सुधा पर्पटी

प्रवालं स्फटिकं मुक्ता तथा जहरमोहरा । तेषां पिष्ट्वो रौप्यभस्म ताप्यभस्म पृथक् पृथक् ॥
पंचकर्षो रसः पंचत्रिंशत कर्षमितः स्मृतः । गन्धः सप्ततिकर्षः स्यात् कज्जलीकृत्य मेलयेत् ॥
पर्पटी विधिना कार्या रम्भगोमययोगतः । द्राक्षा कुस्तुम्बरूःकंग्याख्यनिम्ब श्वेत चन्द्रनम् ॥
निम्बो जनच्छली तेषां रसै सम्यग् विभावयेत् । सिद्धा सुधापर्पटीयं रक्तपित्त द्विमार्गगम् ॥
(रसो तन्त्र रक्तपित्त)

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध पारद – 70 ग्रा.
2. शुद्ध गन्धक – 140 ग्रा.

Scanned with OKEN Scanner

3. लौह भस्म – 10 ग्रा.
4. ताम्र भस्म – 10 ग्रा.
5. स्फटिका (पिट्टी) – 10 ग्रा.
6. जहरमोहरा (पिट्टी) – 10 ग्रा.
7. मुक्ता पिट्टी – 10 ग्रा.
8. प्रवाल पिट्टी – 10 ग्रा.

भावना द्रव्य– 1. द्राक्षा क्वाथ
2. कुस्तुम्बरू क्वाथ
3. निम्बत्वक् क्वाथ
4. श्वेत चन्दन क्वाथ
5. निम्ब छाल क्वाथ
6. अंजन क्वाथ

निर्माण विधि– उपरोक्त घटक द्रव्य से पर्पटी निर्मित करते है । तत्पश्चात् इसे प्रत्येक भावना द्रव्य से भावित करते है तथा काँच पात्र में संग्रहित कर लेते है।

मात्रा– 4 रत्ती शहद से

उपयोग– रक्त पित्त, प्रदर, सोमरोग आदि में ।

3. कूपीपक्व रसायन

पारद में गन्धक जारण के क्रम में रस सिन्दूर का विकास हुआ । इस प्रकार की विधि में कूपी/काच घटी तथा बालुका/सिकता यन्त्र के माध्यम से गन्धक के जारण को आचार्यों ने सम्पादित किया । आचार्य श्री यशोधर भट्ट ने 13वीं शती में काचघटी के माध्यम से उदयभास्कर रस निर्माण को उल्लेख किया है, यथा–

रुचिरकाचघटीविनिवेशितौ सिकतायन्त्रवरेण दिनत्रयम् ।
कुरु भिषग्वरबह्निमधस्ततः स च भवेदरुणः कमलच्छविः ।
उदयभास्करनामरसो ह्ययं भवति रोगविघातकरः स्वयम् ॥

(रस.सुधा. 3/10-14)

अर्थात् सिकता यन्त्र में काच घटी (शीशी) के माध्यम से तीन दिन पाक करने पर नीचे कूपी के तल में, कमल के समान दिखने तक पाक करते हैं । इसे उदय भास्कर रस कहते है जो रोग को नष्ट करने वाला होता है ।

परिभाषा– कूपी पक्व रसायन को निम्न परिभाषित किया जा सकता है–

कूपी = काँच कूपी
पक्व = अग्निनां पक्वं
रस = पारद
अयन = स्थान

अर्थात् काँचकूपी के माध्यम से पारद को अग्नि स्थान में रखकर पाक (जारण) करने के उपरान्त निर्मित औषधि को कूपी पक्व रसायन कहा जाता है ।

महत्व– कूपी पक्व रसायन के निर्माण में गन्धक जारणा होने के कारण इस प्रकार की औषधियाँ विशेष रूप से रसायन गुण से सम्पन्न होती है। गन्धक की जीर्ण किये जाने वाली मात्रा, जैसे समगुण, द्विगुण आदि, से जारित पारद एक विशेष कार्य करने वाला होता है।

कूपीपक्व रस के प्रकार– घटक द्रव्यों के आधार पर तथा प्राप्ति स्थान के आधार पर कूपी पक्व रसों में भेद किया जा सकता है ।

1. घटक द्रव्यों के आधार– गन्धक के योग से तथा गन्धक रहित के भेद से मुख्यतः 2 प्रकार के होते हैं–

(क) सगन्ध– इसमें पारद तथा गन्धक के साथ ही कुछ अन्य धातुयें भी होते हैं–

a. पारद + गन्धक – रससिन्दूर
b. पारद + गन्धक + स्वर्ण = मकरध्वज एवं सिद्ध मकरध्वज
पारद + गन्धक + ताम्र = ताम्र सिन्दूर
पारद + गन्धक + वंग + नौसादार = स्वर्ण वंग
c. पारद + गन्धक + उपरस/साधारण रस–
पारद + गन्धक + हरताल = ताल सिन्दूर
पारद + गन्धक + मनःशिला = शिला सिन्दूर
पारद + गन्धक + मल्ल (आर्सेनिक) = मल्ल सिन्दूर
पारद + गन्धक + हरताल + मनःशिला + मल्ल = समीर पन्नग

(ख) निर्गन्ध–
पारद + कासीस + सैन्धव लवण = रस पुष्प
पारद + गन्धकाम्ल + सैन्धव लवण = रस कर्पूर

2. प्राप्ति स्थान के आधार पर– कूपी के विभिन्न भागों यथा गले में या तल भाग में प्राप्त होने के कारण इन्हें क्रमशः गलस्थ एवं तलस्थ की कहा जाता है । दोनों भागों में प्राप्त होने से उभयस्थ कहा जाता है । इनके उदाहरण निम्न है–

a. गलस्थ– रस सिन्दूर, मल्ल सिन्दूर, ताल सिन्दूर, रस पुष्प, रसकर्पूर, आदि ।
b. तलस्थ– स्वर्ण वंग, समीर पन्नग ।
c. उभयस्थ– मकरध्वज, सिद्ध मकर ध्वज ।

कूपी पक्व निर्माण की सामान्य विधि

कूपी पक्व रस के निर्माण में निम्नलिखित प्रक्रियाये (Steps) से शामिल है–

1. कपड़ मिट्टी युक्त काँच कूपी निर्माण
2. कूपी में कज्जली पूरण

Scanned with OKEN Scanner

1. कूपी स्थापन
2. अग्नि व्यापार
3. सिद्धि लक्षण अवलोकन
4. कूपी मुख मुद्रण
5. स्वांगशीतीकरण
6. कूपी भेदन
7. कूपी पक्व रस एकत्रीकरण

1. **कपड़ मिट्टी युक्त काँच कूपी निर्माण–** कूपी पक्व रस निर्माण हेतु सर्वप्रथम काँच कूपी पर मुल्तानी मिट्टी युक्त कपड़ा लेप करते हैं । जब वह सूख जाता है तो पुनः दूसरा कपड़ा इसके ऊपर चढ़ा कर सुखा लेते हैं । इस प्रकार सात कपड़ मिट्टी करते हैं । जिसके उपरान्त कूपीपक्व निर्माण हेतु कूपी तैयार हो जाती है ।

2. **कज्जली पूरण–** कपड़ मिट्टी युक्त कूपी में जिस प्रकार का कूपीपक्व बनाना हो जैसे रससिन्दूर, मल्ल सिन्दर आदि उसकी कज्जली को सावधानी पूर्वक भर देते हैं । सुविधा हेतु प्लास्टिक कीप का उपयोग कर सकते हैं । कज्जली को भरने देने के पश्चात् पूर्ण रूप से सूख जाने के उपरान्त ही भरते हैं ।

3. **कूपी स्थापन–** कूपी को बालुका यन्त्र या Vertical Electric Muffle Furnance में रखने की प्रक्रिया को कूपी स्थापन कहते हैं । कूपी को बालुका यन्त्र या Furnace में इस प्रकार रखना चाहिए की कूपी के गला (Neck) वाला भाग अग्नि के सम्पर्क में न रहे जिससे यहाँ Product Sublime हो कर एकत्र हो सके ।

4. **अग्नि व्यापार–** अग्नि व्यापार (Application of Heat) कूपी पक्व निर्माण में अति महत्वपूर्ण प्रक्रिया है । सामान्य रूप से कूपी पक्व में अग्नि वृद्धि क्रम अर्थात् मृदु अग्नि, मध्यम अग्नि तथा तीव्र अग्नि के क्रम से दी जाती है । इन तीनों अग्नियों का औसत तापक्रम तथा समय निम्न है–

1. मृदु अग्नि– 0-200^{0}C 4 घंटे
2. मध्यम अग्नि– 200-400^{0}C 4 घंटे
3. तीव्र अग्नि– 400-630^{0}C 4 घंटे

मृदु अग्नि पर कज्जली द्रवित होती है तथा गन्धक की Fumes आती हैं । मध्यम अग्नि पर रस सिन्दूर निर्माण तथा गन्धक की ज्वाला (Flame) आती है जबकि तीव्र अग्नि पर Flame खत्म होकर सिद्धि लक्षण अवलोकन, कूपी मुद्रीकरण तथा उत्पाद (Product) का Sublimation होता है । कुछ ऐसे भी कूपी पक्व रसायन है जिनमें उपरोक्त अग्नि व्यापार नहीं करते हैं, यथा–

1. रस पुष्प एवं रस कर्पूर – मृदु अग्नि देते हैं ।
2. स्वर्ण वङ्ग– मध्यम अग्नि (लगभग 400-420^{0}C) देते हैं ।

5. **सिद्धि लक्षण अवलोकन–** जब गन्धक की ज्वाला समाप्त हो जाती है तो कूपी मुद्रण से पूर्व निम्न सिद्धि लक्षणों का अवलोकन करते हैं–

1. Red Bottom– कूपी के तल भाग को देखने पर लाल वर्ण उगते हुए सूर्य समान (बाल अरूण) दिखता है ।
2. शीत शलाका परीक्षण– शीत शलाका को कूपी के अन्दर डालकर निकालने पर वह ग्रे रंग का दिखता है जिसका अर्थ है कि गन्धक जारण अर्थात् Free Sulphur नहीं बचा है ।
3. Coin Test– एक सिक्का कूपी के मुख पर रखकर हटा लेने पर उसमें Free Mercury दिखता है । जिसका अर्थ है कि कूपी को मुद्रित कर दिया जाय ।
4. Honey Comb– तल भाग में देखने पर Honey comb जैसा दिखाई देता है ।

6. **कूपी मुख मुद्रण–** उपरोक्त लक्षण आ जाने के पश्चात् कूपी के मुख को मुद्रित करना ही कूपी मुख मुद्रण कहा जाता है । इसके पश्चात् EMF में 30-40 मिनट अग्नि देकर बन्द कर देते तथा बालुका यन्त्र में और कोयल न डालकर उसे ऐसे ही छोड़ देते हैं ।

7. **स्वांगशीतीकरण–** अग्नि को प्रदान करना बन्द कर देते हैं तथा अगले दिन जब यह ठंडा हो जाय तो कूपी को बाहर निकाल लेते हैं ।

8. **कूपी भेदन–** कूपी पर लगी कपड़ मिट्टी को चाकू की सहायता से निकाल देते है । तत्पश्चात् कूपी के बीच में उत्पाद (Product) से हटकर एक मिट्टी के तेल में डूबी सुतली बांधकर जला देते हैं । जब यह गर्म हो जाय तो पानी से भींगी एक कपड़े को इसी स्थान पर लपेट देते हैं । जिससे कूपी टूट जाती है ।

9. **कूपी पक्व रस एकत्रीकरण–** कूपी के भेदन के उपरान्त सावधानी पूर्वक निर्मित उत्पाद को एकत्र कर लेते हैं ।

कूपी पक्व निर्माण हेतु यन्त्र/साधन– कूपी पक्व निर्माण हेतु निम्न यन्त्र या साधनों की आवश्यकता होती है–

1. कूपी या काँच कूपी– हमारे गुरु परम्परा में Brown colour की bottle प्रयुक्त की जाती थी ।
2. सूती कपड़ा एवं मुल्तानी मिट्टी– थोड़ा मोटा सती कपड़ा तथा मुल्तानी मिट्टी कूपी पर सात कपड़ मिट्टी करने हेतु आवश्यक होती है । इसके हेतु एक बार में एक कपड़ मिट्टी कर पश्चात् सूख जाने पर दूसरी तथा इसी प्रकार सात बार करते हैं । कपड़ मिट्टी से काँच कूपी अधिक ताप पर भी नहीं कूटती है ।
3. अग्नि– इसके हेतु Vertical Electric Muffle Furnance या बालुका यन्त्र का प्रयोग किया जाता है ।
4. शलाका– 2 प्रकार की शलाकाओं का प्रयोग कूपी पक्व निर्माण के दौरान किया जाता है–

   तप्त शलाका– 1/2 सेमी व्यास के लगभग मोटाई लोहे की शलाका का प्रयोग Hot शलाका के रूप में कर सकते हैं । इसका उपयोग Excess Sulphur को जलाने हेतु किया जाता है ।

   शीतशलाका– साइकिल के पहिये की तीली को इस हेतु प्रयुक्त कर सकते हैं । इसका प्रयोग गन्धक जीर्ण के अवस्था को देखने हेतु करते हैं ।
5. सिक्का– तांबे के सिक्के का प्रयोग किया जाता है । इससे Free Mercury देखा जाता है ।
6. मुद्रा– कूपी के मुख के आकार की मुद्रा प्रयोग करते हैं ।

   वक्तव्य—इस हेतु लोहे का बोल्ट भी प्रयुक्त कर सकते हैं ।

सवीर्यता अवधि– 10 साल

Scanned with OKEN Scanner

रस सिन्दूर

तोलकाष्टकमितं रसेश्वरं तन्मितञ्च विमलं बलिं हरेत् ।
खल्वके खलु विमर्द्य कज्जलीं भावयेदथ वटाङ्कुराम्बुभिः ॥
मर्षीमापात्रसमाकारं मुकृष्णां काचकूपिकाम् ।
सतूलकुट्टितमृदा लेपयेत् खलु यत्नतः ॥
स्थापयेत्कज्जलीं काचकुप्यां ततो यत्नतः पाचयेद्वालुकायन्त्रगाम् ।
अग्निवृद्धिक्रमैर्जीर्णगन्धे रसे रोधयेद्युक्तिः काचकूपी मुखम् ॥
बालुकायन्त्रके काचकूपीमुख्यात् रोचनासन्निभो नैति धूमो यदा ।
सूतपाक क्रियाज्ञानदक्षैर्वुधैर्वैदितव्यस्तरा जीर्णगन्धो रसः ॥
निवेश्य कुप्यां खटिकाविधानं जलेन सम्पेषितया प्रकामम् ।
प्रलेपयेद्वै गुणचूर्णपिष्टया ततः पचेद्यामयुगं रसज्ञः ॥
अवबुध्य तदंग शीततां खलु बालारूणसूर्यसन्निभम् ।
गलदेश विलग्नमुज्जवलं रस सिन्दूरमिहाहरेद् बुधः ॥

(र.त. 6/162-167)

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध पारद – 8 तोला
2. शुद्ध गन्धक – 8 तोला
3. वटांकुर स्वरस – भावना हेतु

यन्त्र– बालुका यन्त्र

निर्माण विधि

उपरोक्त मात्रा में पारद तथा गन्धक लेकर खल्व यन्त्र में कज्जली निर्मित कर उसे वटांकुर स्वरस की भावना देते हैं । तत्पश्चात् इसे दवात के आकार की काँच कूपी जिस पर रूई तथा मुल्तानी मिट्टी को कूटकर सात स्तर लगे हों उसमें कज्जली को भरकर बालुका यन्त्र द्वारा मन्द, मध्य तथा तीव्राग्नि क्रम से अग्नि गन्धक के जल जाने तक प्रदान करते हैं । इसके पश्चात्, गन्धक जीर्ण हो जाने, जब शीशी के मुख से पीतरक्त मिश्रित वर्ण का धुँआ निकलना बन्द हो जाय तो शीशी के मुख पर डाट लगा देते हैं । डाट हेतु खड़िया या ईट का बना डाट लगाकर उसे गुड़ तथा चूने के जल से पीसकर लेप लगाकर 4 याम की अग्नि देते हैं । स्वतः शीत हो जाने पर शीशी को निलाकर उसके गले में लगा प्रातः काल के सूर्य सदृश रक्तवर्ण का रससिन्दर प्राप्त करते हैं ।

***E.M.F.* द्वारा रससिन्दर (समगुण कज्जली) निर्माण में प्रयुक्त तापमान तथा समय ।**

समय	तापमान	अवलोकन
6.00 am	50^0C	
7.00 am	100^0C	हल्की पीले रंग की धूम
8.00 am	150^0C	हल्की पीले रंग एवं सल्फर गन्ध
9.00 am	175^0C	धूम + तीक्ष्ण गन्ध

10.00 am	200^0C	धूम + गन्धक की कुछ मात्रा कूपी के चारों तरफ एकत्र
11.00 am	225^0C	" कज्जली पंकवत
11.30 am	250^0C	"
12.00 am	275^0C	"
12.30 pm	300^0C	"
1.00 pm	325^0C	"
1.30 pm	350^0C	धूम कुछ ज्यादा
2.00 pm	375^0C	Demse fumes
2.30 pm	400^0C	Bluish flame
3.00 pm	415^0C	"
3.30 pm	430^0C	"
3.45 pm	450^0C	"
4.00 pm	475^0C	"
4.30 pm	500^0C	"
5.00 pm	550^0C	mild yellowish flame
5.26 pm	600^0C	flame stop corking of mouth
5.30 pm	630^0C	सिद्धि लक्षण अवलोकन
6.15 pm	Power swich off	

विमर्श– Flame गन्धक की अतिरिक्त मात्रा के कारण आती है । उदाहरण यदि 200 ग्रा. पारद तथा 200 ग्रा. गन्धक से समगुण कज्जली निर्मित है तो इसे निम्न समीकरण से समझा जा सकता है–

$Hg + S \rightarrow HgS$

200 g 200 g $\rightarrow$??

1 mole of Hg + 1 mole of S $\rightarrow$ 1 mole of HgS

200 (Hg) + 32 (S) $\rightarrow$ 232 g HgS

शेष गन्धक 200-32 = 168 ग्रा. में अतिरिक्त गन्धक धूम तथा ज्वाला (Flame) के रूप में बाहर आता है । यदि किसी भी प्रकार की हानि न हो तो 400 ग्रा. समगुण कज्जली से 232 ग्रा. रस सिन्दूर निर्मित होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

2. रसकर्पूर

पत्रसंचितं प्रथमाद् विमर्दीकृतं रसेशम्। सपलार्द्धकं पलैकं विमलं च गन्धकाम्लम्॥
चक्रकोपरे विशुद्धं निदधीत कांच पात्रे। विनिधाय काच पात्रं त्वयसस्त्रिपादिकायाम्॥
ज्वलिते मृगाङ्गदीपे संशोषयेज्जलांशम्। अधशोषिते तु चूर्णे त्ववातार्य वै प्रदीयात्॥
समधार्मिकं दद्याल्लवणं तु सैन्धवाख्यम्। परिमैत्य चूर्णमेतन्निदधीत काचदुप्याम्॥
मृण संख्यकैस्तु यामैः सिकताख्ययन्त्रसंस्थम्। विपचेदतिप्रयत्नात् रसतन्त्रकर्मविज्ञः॥
अवबुध्य काच कूपीं स्वत एवं शीतलांजीम्। विपचेदतिप्रयत्नात् रसतन्त्रकर्मविज्ञः॥
अवबुध्य काच कूपीं स्वत एवं शीतलांजीम्। धनसारनामधेयं रसमाहरेद्रसज्ञः॥
जलीय बाष्पे निर्याते विधानेन विधापयेत्। कूपी कण्ठास्थितां स्वल्पां सिकताज्ञापसारयेत॥

(र.त. 6/65-71)

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध पारद – 48 तोला
2. गन्धकाम्ल – 72 ग्राम
3. सैन्धव लवण – गन्धकाम्ल तथा पारद से प्राप्त शुष्क चूर्ण के बराबर मात्रा।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम एक काच पात्र (बीकर) में गन्धकाम्ल तथा पारद लेकर इसे अग्नि पर रखकर गर्म करते हैं। जिससे गन्धकाम्ल तथा पारद आपस में मिल जाते हं तथा द्रवांश समाप्त हो जाता है। तत्पश्चात् इसे अग्नि से उतार कर इस Residue के समान मात्रा में सैन्धव लवण मिलाकर अच्छी प्रकार से मर्दन करते हैं। तत्पश्चात् इसे कपड़मिट्टी युक्त काँच कूपी के रखकर कूपीपक्व निर्माण विधि से पाक करते हैं। रसकर्पूर Needles के राप में कूपी के गले के भाग में एकत्र होता है जिसे श्वांगशीत होने के पश्चात् एकत्र करते हैं।

विमर्श– रस कर्पूर ($HgCl_2$) का dissociation तापमान 138^0C होता है अतः इसका निर्माण अत्यन्त सावधानी पूर्वक करना चाहिए अन्यथा निर्मित होकर भी यह dissociate हो जाता है।

मात्रा– 2 to 4 mg

अनुपान– त्वक् चूर्ण, नवसारादि जल

उपयोग– कृमि, त्वक् रोग, फिरंगज, व्रण, मण्डल कुष्ठ आदि।

4. पोट्टली रसायन

प्राचीन समय में वैद्य को प्रवास के दौरान अपने साथ में चिकित्सा हेतु औषधियों को अपने साथ उपयुक्त पात्र में रखकर यात्रा करना पड़ता था। इस दौरान औषधियों को सुरक्षित रखना एक कठिन काम था जिसका मुख्य कारण पात्रों का टूटना रहा होगा। अतः ऐसी तीव्र कार्य (Quick action) करने में समर्थ औषधि का निर्माण जो कि रखने में कोई समस्या न करें इस निमित्त पोट्टली कल्पना का अविष्कार किया गया होगा। दूसरा कारण पोट्टली में औषधियों को बन्द कर पाक करने के कारण इस कल्पना का नाम पोट्टली रस पड़ा। पोट्टली कल्पना का वर्णन 12वीं शताब्दी के ग्रन्थ रसरत्नाकर से ही उल्लेख मिलता है।

परिभाषा– पोट्टली + कन् + टाप् = ह्रस्व

पोट + ली + ड डीप्, पृषो. = पुलिंदा या गठरी (संस्कृत हिन्दी कोष वा.शि. आप्टे)

पोट्टली निरुक्ति– विस्तारितस्य वस्तुतः अल्पो भवनं पोट्टम्। पोट्टलति गृह्णति इति पोट्टली॥
(पा.वि. p 168)

विस्तारित वस्तुओं को अल्प रूप में लाना पोट्टली कहलाती है।

महत्व– पोट्टली रस का निर्माण गंधक द्रव में पाक विधि द्वारा किया जाता है। जिससे ये कम मात्रा में (घिसकर) अधिक कार्यकारी होते है।

प्रकार– पोट्टली कल्पना के निर्माण की विभिन्न विधियों यथा पुटपाक, भावना, कपर्द पूरण, तथा गन्धक द्रव में पाक (जारण) द्वारा किया जाता है। विभिन्न शास्त्रों में वर्णित कुछ पोट्टली रसों का सन्दर्भ तथा निर्माण विधि का उल्लेख किया जा रहा है–

क्रम सं.	पोट्टली रस नाम	निर्माण विधि	सन्दर्भ ग्रन्थ
1.	रत्नगर्भ पोट्टली	पुटपाक	रस रत्नाकर
2.	शंखगर्भ पोट्टली	पुटपाक	रस रत्नाकर
3.	हेम गर्भ पोट्टली	पुटपाक	रसेन्द्रसार संग्रह
4.	हंस पोट्टली	भावना	रसेन्द्रसार संग्रह
5.	हेमगर्भ पोट्टली II	गजपुट	रस प्रकाश सुधाकर
6.	लोकेश्वर पोट्टली	पुटपाक	रसेन्द्र चिन्तामणि
7.	हेमगर्भ पोट्टली I	कपर्दपूरण पुटपाक	शार्ङ्गधर संहिता
8.	हेमगर्भ पोट्टली II	सिकता यन्त्र	योगरत्नाकर
9.	हेमगर्भ पोट्टली IV	बलिद्रवे आयसे पात्र	योगरत्नाकर
10.	रेतो रोधन पोट्टली	दुग्ध में पाक	सिद्धभेषज मणिमाला

निर्माण विधि

गन्धक द्रव के पाक विधि अनुसार पोट्टली निर्माण विधि निम्न है–

1. वर्णित घटक द्रव्यों को कुमारी स्वरस या अन्य द्रव से मर्दन कर उसे शिखराकार, पुगाकार बनाकर एक रेशमी वस्त्र से लपेट कर सूती धागे से बाँध देते हैं।
2. एक मिट्टी के पात्र या Enamel Bowl या Borosil Glass में गन्धक को लेकर उसमे इस पोट्टली को पाक हेतु लटका देते हैं। अग्नि मृदु (अर्थात् 120^0C से 170^0C तक) रखना चाहिए जिससे गन्धक केवल द्रवित हो जले नहीं।

Scanned with OKEN Scanner

3. पाक तब तक करते हैं जब तक कि गन्धक व्योम वर्ण अर्थात् आकाश के वर्ण का न हो जाय। इसके अतिरिक्त खेलाकन्द में गन्धक द्रव में पकाने के उपरान्त पोट्टली को पात्र से टकराने पर उससे Metalic sound आती है जो कि पोट्टली के पाक का लक्षण है।

4. तत्पश्चात् पोट्टली को बाहर निकालकर कुछ ठंडा होने पर कपड़ा हटा कर ठंडी कर लेते हैं। गन्धक को, यदि लगा है, तो साफ कर देते हैं।

आवश्यक उपकरण– रेशमी वस्त्र, Enamel bowl, Heating device, Iron rod

सवीर्यता अवधि– 10 साल (पर्पटी तथा कूपी पक्व के समान माना जा सकता है)

1. ताम्र गर्भ पोट्टली (पोट्टली रहस्य रसयोग सागर भाग 2 P 581)

घटक द्रव्य–
1. मयूर कण्ठ ताम्र भस्म – 10 कर्ष
2. कज्जली – 1 कर्ष
3. शुद्धगन्धक चूर्ण – 1 टंक
4. शुद्ध वर्ण – 6 रत्ती

उपरोक्त घटक द्रव्यों से पोट्टली निर्माण विधि द्वारा पोट्टली का निर्माण करते हैं।

मात्रा– 1/2 से 1 रत्ती

उपयोग– कफजन्य, त्रिदोष श्वास का आदि।

2. लोह गर्भ पोट्टली (पोट्टली रहस्य, रसयोग सागर भाग 2, P 581)

घटक द्रव्य–
1. लोहभस्म - 10 कर्ष
2. कज्जली - 1 कर्ष
3. शुद्ध गन्धक चूर्ण - 1 टंक
4. सुवर्ण तन्तुखण्ड - 6 रत्ती

उपरोक्त द्रव्यों से पोट्टली निर्माण विधि द्वारा लोह गर्भ पोट्टली, निर्मित करते हैं।

मात्रा– 1-3 रत्ती

उपयोग– संग्रहणी, पाण्डु, कामला आदि।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. कज्जली को द्रवित कर किसका निर्माण किया जाता है—
a. पर्पटी b. पोट्टली c. खरलीय रस d. पिष्टी

2. निम्न में से एक सुधा पर्पटी का घटक द्रव्य नहीं है—
a. स्वर्ण भस्म b. रजत भस्म c. मुक्ता पिष्टी d. प्रवाल पिष्टी

3. रस सिन्दूर कूपी के किस भाग में प्राप्त होता है?
a. तल भाग b. मध्य में **c. गले में** d. उपरोक्त कोई नहीं

4. रस कर्पूर निर्माण हेतु कौन सा लवण प्रयुक्त होता है?
a. सामुद्र लवण b. सौवर्चल लवण **c. सैन्धव लवण** d. विड लवण

5. गन्धक द्रव में पाक से निर्मित रसायन है—
a. पोट्टली b. पर्पटी c. कूपीपक्व d. खरलीय

Scanned with OKEN Scanner

अध्याय

13

Current and Emerging trend in Ayurvedic Pharmaceuticals

Introduction– Generally the cosmetics are external preparations that are applied to external parts of the body for various purposes like colouring, softening, cleansing, nourishing, soften, waving, removal modification, protection and preservation to skin, hair and nails. Cosmetics is defined in the Drugs & Cosmetics Act 1940, Section 3 [(aaa)] as follows :

"Cosmetics" means any article intended to be rubbed, poured, sprinkled or sprayed on, or introduced into, or otherwise applied to, the human body or any part thereof for cleansing, beautifying, promoting attractiveness, or altering the appearance, and includes any articles intended for use as a component of cosmetics. 19(***) 19 'words but does not include soap' omitted by Act 68 of 1982, S. 3 (w.e.f. 1-2-1983).

The cosmetics may be of four groups as follows :

1. For Skin
2. For Hair
3. For Nail
4. For Hygiene

These are formulated as solid, semi solid or liquids. Various types of cosmetics formulations are–

1. Skin– (i) Powder compacts– Face powder, Body powder, Prickly heat powder, Face Pack.

(ii) Lotions– Skin lotions, Astringent lotions

(iii) Creams– Cold cream , Vanishing cream, all purpose creams.

(iv) Colourants– Lipstics, Ranges, Lip Balm

2. Hair– (i) Shampoos, Dyes, Hair lotions, Dandruff lotions.

(ii) Hair remover, Depilatories, Shaving creams, Epilatories.

(iii) Hair wave preparation, Hair conditions, Hair dressing.

(iv) Eye lash preparations, Mascaras, Kohis, Eye brow pencil.

3. Nail– Lacquers, Laquer removes, Nail polishes

4. Hygienic– (i) Bath– Soap, Bath Salts,

(ii) Dental– Powder, Mouth Washes, Lotions, Cream

1. Moisturizer– Moisturizers are one of the most widely used cosmetics preparation that are used for the softening of the skin. Humectants, occlusiver, emollients along with vitamins, antioxidants are used in the preparation of these type of cosmetics. Fragrances and colouring agents are used more for their aesthetic value than for their moisturing properties. Moisturizer can be of oil in water (o/w) or water in oil (w/o) type. The emulsifier and oil-soluble components are combined in a beaker and melted at 75^0C in a water bath. Water, water soluble materials and preservative are melted at 75^0C in another beaker. Oil phase is placed in a mortar and pestle after heating and the water phase in gradually added and triturated until a clicking sound is heard. In w/o water is placed in mortar and pestle and oil soluble components are added gradually and triturated.

Methyl parahydroxy benzoate	q.s.
Propyl parahydroxy benzoate	q.s.

Mix together the ingredients of 'A' and heat at about 70^0C. In a separate vessel dissolve the preservatives in the glycerin with the aid of little heat. Add the remaining ingredients of 'B' and heat it to about 70^0C. Add mixture of 'B' to 'A' slowly with continuous stirring. Stir untill cool, adding the perfume at about 30^0C.

2. Sunscreen lotion– Lotions are generallyu meant for application to the skin and are directly applied on the needed part of body.

Formula of Sunscreen lotion is as follows–

1.	A. Isopropyl myristate	2.0 gm
	Antiviray	10.0 gm
	Toilet spirit	88.0 gm
	Perfume	q.s.
	Colour (alcohol-soluble)	q.s.

Dissolve antiviray in isopropyl myristate. Dissolve perfume and colour in spirit. Mix both.

2.	A. Filtrosol A 1000	5.0 gm
	Mineral oil	10.0 gm
	Stearic acid	2.0 gm
	Paraffin wax	1.0 gm
	Beeswax	2.0 gm
	Petroleum jelly	5.0 gm
	Silicone fluid	8.0 gm
	Polyethylene glycol monostearate	5.0 gm

Scanned with OKEN Scanner

B. Triethanolamine	2.0 gm
Water	60.0 gm
Perfume	q.s.
Preservative	q.s.

Heat ingredients of 'A' to a temperature of about 70^0C. Heat ingredients of 'B' to same temperature and add slowly to the mixture of 'A'. Stir until cool. Add perfume when the temperature comes down to about 35^0C.

Aqueous solution type

Formula 9

Filtrosol B	7.0 gm
Methyl cellulose	0.5 gm

3. **Shampoo**– Shampoo are used for the purpose of cleansing of hair. Along with cleansing these may provide nourishment, glooming property, conditioning etc. Surfactants are the main component of shampoos. Along with it antidandruff agents, conditioning agent, peralscent agents, thickening agents, perfumes, preservatives, colours are also used.

Liquid cream shampoos

Ingredients–	Monoethanolamine lauryl sulphate (27% active)	–	40.0 gm
	Ethylene glycol monostearate	–	5. gm
	Water	–	55.0 gm
	Perfume	–	q.s.
	Preservative	–	q.s.

Method of preparation– Heat and mix the ethylene glycol monostearate with a small quantity of the detergent to form a homogenous mixture. Add more detergent slowly and then water mixing thoroughly before addition of next. Perfume is added last after cooling to 35^0C.

4. **Soap**– Soaps may be locked upon as esters of higher fatty acids or of rosin acids with metallic salts such as Na, K, Ca, Ba, Mg, etc. or with other alkaline materials such as ammonia or organic alkalies. They are formed either by reacting the naturally occurring triglycerides of higher fatty acids (vegetables or animal oils) with alkalies or by reactions between pure fatty acids and alkaline materials. The fatty acids must have a carbon chain of 12 to 18 carbon atoms without which the non-polar part becomes weak. Three important groups of soaps are alkali soaps, metallic soaps and amine soaps.

Na and K soaps are representatives of alkali groups. They are usually highly alkaline

with a pH of about 10 and are very sensitive to hard waters containing bivalent ions such as Ca, Mg, etc.

5. **Perfume**– Perfumes are liquid mixtures that are used to emit a pleasant odour. These can be formed from fragrant essential oils derived from plants and spices or synthetic aromatic compounds. The ingredients of the perfumes may include primary scents, modifiers, blenders and fixatives. Method for the preparation of perfumes include extraction, blending, aging and quailing control.

6. **Face pack**– Face pack are semi solid cosmetics that are spread over face after that it is allow to dry for a short time and then it is removed. These can be used for the fairness as well as smoothness of skin. Face pack may include turmeric, yogurt, Kaolin, skin soothing agent, thickening agents etc.

7. **Talcom powder**– Power are solid dry dosage form in the form of finely divided particle that can be used externally or internally. Talcom powder are body powder that are used externally on the body for a various purposes. The preparation includes dry mixing of finely powdered materials. Ingredients of Talcom powder is as follows–

1. Talc	–	39.7 gm
2. Kaolin	–	39.5 gm
3. Calcium carbonate (Light)	–	5.0 gm
4. Zinc oxide	–	7.0 gm
5. Zinc sterate	–	7.0 gm
6. Magnesium carbonate	–	1.2 gm
7. Colour	–	0.2 gm
8. Perfumes	–	0.6 gm

8. **Lip Balm**– Lip Balms are the preparations that are applied to lips for its soothening and protection from being cracked. Lip balm may contains beewax, camphor, cetyl alcohol, lanolin, paraffin and petroleum. Along with these colourants and fragrants may also be used. For the preparation of lip balm bee wax is melted over water water after that other ingredients are added and allowed to cool.

9. **Lip stick**– Lipsticks are basically dispersions of colouring matter in a base consisting of a suitable blends of oils, fats, and waxes suitably perfumed and flavoured, moulded in the form of a stick and enclosed in a case.

Composition– The stick mainly contains a colour material dispersed and suspended in a suitable base made by blending oils and waxes in various proportions to yield the desired melting point and viscosity. The temperature of human body varies between 36^0C to 38^0C with lips having the higher side. The base of the lipstic must

Scanned with OKEN Scanner

have a melting point appreciably higher than this, between 55^{0}C to 75^{0}C preferably about 62^{0}C, for the product to withstand exposure to hot climates.

The basic raw materials required for formulating lipsticks can be classified as–

1. Wax mixture
2. Oil mixture
3. Bromo mixture
4. Colours
5. Preservatives, fragrances, surfactants and other additives

10. Tooth paste– आधुनिक युग में प्रचलित Tooth paste दाँतों को साफ करने तथा उनकी देखभाल में प्रयोग होने वाले सबसे लोकप्रिय उत्पाद है। यह toth paste ऐसे होने चाहिए कि ये दाँत को बिना कोई नुकसान पहुँचाये उसे साफ कर सके। Tooth paste पर बाहरी तापमान का कोई प्रभाव नहीं पड़ना जिससे कि विभिन्न ऋतुओं जैसे–गर्मी, सर्दी आदि में यह एक ही consistency वाला रहे। इसे tube से निकालने के पश्चात इसे आसानी से brush के ऊपर लगाया जा सके जिससे दाँतों पर इसका प्रयोग हो सके। एक tooth paste के निर्माण में भिन्न-भिन्न घटक द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है। ये घटक द्रव्य निम्न हैं–

1. Abrasives
2. Detergents
3. Binding agents
4. Sweetening agents
5. Humectants
6. Flavouring agents
7. Preservatives

उपरोक्त घटक द्रव्यों का संक्षेप में वर्णन इस प्रकार है—

1. **Abrasives**–मात्रा के अनुसार abrasives लगभग आधी मात्रा में tooth paste में मौजूद होते हैं। इनके द्वारा ही दाँत की सतह पर घर्षण क्रिया होती है परिणामस्वरूप अवशिष्ट खाद्य पदार्थ हटाये जाते हैं। Abrasives इस प्रकार के होने चाहिए कि वे enamel को कई क्षति न पहुँचाये। इस प्रकार के material सामान्य रूप में जल में अघुलनशील होते हैं। Abrasive के रूप में सामान्य तौर पर light grade calcium carbonate (chalk) प्रयुक्त किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य calcium salt जैसे dicalcium phosphate dihydrate आदि प्रयोग किये जाते हैं।

2. **Detergents**–इस प्रकार के द्रव्य tooth paste को दाँतों के बीच में उपस्थित जगह तक पहुँचाने में मदद करते हैं। क्योंकि ऐसे द्रव्यों का surface tension कम होता है अतः ये wetting तथा dispersion में भी मदद करते हैं। ऐसे उद्देश्य की पूर्ति हेतु sodium lauryl sulphate ज्यादातर प्रयोग किये जाते हैं।

3. **Binding agents**–Tooth paste की एक समान consistency को बनाये रखने हेतु binding agents का प्रयोग किया जाता है। Gum tragacanth सामान्य तौर पर इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रयुक्त किया जाता है। Tooth paste की consistency के अनुसार इनकी मात्रा निर्धारित की जाती है।

4. **Sweetening agents**–मुँह में अच्छा स्वाद पैदा करते हेतु इनका प्रयोग किया जाता है। Saccharine sodium 0.05-0.31% तक की मात्रा में इस हेतु प्रयोग किया जाता है।

5. **Humectants**–इसका प्रयोग tooth paste को सूखने से बचाने हेतु किया जाता है। ये सामान्य रूप 5 से 10% की मात्रा में प्रयोग किये जाते हैं लेकिन यह मात्रा अलग भी हो सकती है। Sorbitol, glycerine आदि को humectants के रूप में प्रयोग किया जाता है।

6. **Flavouring agents**–मुख को सुगन्धित करने के उद्देश्य से ऐसे द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए peppermint oil का प्रयोग करते हैं। अन्य प्रकार जैसे menthol, spearmint oil भी प्रयोग किये जाते हैं।

7. **Preservatives**–क्योंकि ये tooth paste semisolid अवस्था में होते हैं अतः इन्हें खराब होने से बचाने के लिए preservatives का प्रयोग किया जाता है। Methy parahydroxy benzoate (0.15%) के साथ में Propyl parahydroxy benzoate (0.02%) मुख्य रूप से प्रयुक्त किये जाते हैं।

Tooth paste में उपरोक्त घटक द्रव्यों के अतिरिक्त उसे रंग प्रदान करने हेतु colouring agents या किसी विशेष कार्य को करने हेतु अन्य घटक द्रव्यों का भी प्रयोग किया जाता है।

Tooth paste निर्माण प्रक्रिया–Tooth paste के निर्माण हेतु mixer का प्रयोग किया जाता है। Planetary mixer या इसके समान mixer का उपयोग tooth paste बनाने हेतु किया जाता है। सर्वप्रथम binding agent को abrasive तथा अन्य powders के साथ मिलाकर mixer में डालते हैं। तत् पश्चात अन्य घटक द्रव्यों जैसे sweeteing agents, preservatives तथा humectants को पानी में घोलकर फिर इसे mixer में डालकर एक समान consistency आने तक mixing प्रक्रिया की जाती है। अन्त में flavouring agents तथा detergent मिलाये जाते हैं।

11. Tooth Powder– ये चूर्ण रूप में होते हैं। इनका भी प्रयोग दाँतों की सफाई तथा उनके देखभाल हेतु किया जाता है। आधुनिक समय में इनका प्रयोग कम देखने को मिलता है। इसके निम्न घटक द्रव्य होते हैं–

1. Abrasive
2. Surfactant या detergent
3. Flavouring agent
4. Sweetening agent

निर्माण विधि

ठोस रूप (solid) में प्रयुक्त घटक द्रव्यों को पीसकर उसे mixer, जैसे Agitator type या Ribbon type की सहायता से अच्छी प्रकार से मिक्स कर दिया जाता है। Flavouring agent (द्रव रूप में होने के कारण) इसे sprey करते हैं या पहले ही इसे abrasives के साथ मिला देते हैं।

12. Mouth wash– Mouth washes सामान्य रूप से antiseptic तथा deodants के रूप में प्रयुक्त होते हैं। तथा सामान्य तौर पर इन्हें प्रयोग से पहले पानी में घोलकर तब प्रयोग करते हैं। ज्यादातर mouth washes alcoholic या hydroalcoholic solution होते हैं। Mouth washes के निर्माण में निम्न घटक द्रव्य (ingredients) प्रयुक्त होते हैं–

Scanned with OKEN Scanner

1. Antiseptic or antibacterial substances
2. Astringents
3. Deodarizing substances
4. Surfactants
5. Sweeteners
6. Colouring agents
7. Flavouring agents
8. Vehicle

1. Antiseptic substances–Phenol तथा इसके derivatives एवं अन्य प्रकार के antiseptic agents, उपयोगिता के आधार पर प्रयुक्त किये जाते हैं। विभिन्न प्रकार antibiotic agents भी उपयोग के आधार पर डाले जाते हैं।

2. Astringents–इनका उपयोग inflammed area को संकुचित करने तथा saliva में उपस्थित protion के प्रक्षेपण में होता है। जिंक क्लोराइड, फिटकरी आदि इस उद्देश्य हेतु प्रयुक्त होते हैं।

3. Deodoring agents–मुख तथा श्वास के बदबू में इसका प्रयोग किया जाता है। Chlorophyllin इसके लिए उपयोग किया जाता है।

4. Surfactants–इस प्रकार के agents का कार्य wetting या solubilizing के उद्देश्य के लिए किया जाता है। या सामान्य भाषा में यह मुख के सतह पर चारों तरफ washes को फैला सके इसके लिए प्रयुक्त होता है।

5. Vehicle–Alcohol या water एवं alcohol का मिश्रण इसके लिए उपयुक्त होता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त sweeteners जैसे saccharine, colouring के उद्देश्य हेतु saffron आदि तथा flavour हेतु विभिन्न प्रकार के तैल जैसे पिपरमिन्ट, यूकेलिप्टस, लौंग आदि का उपयोग किया जाता है।

13. Foot cream– Foot creams are solid dosage form that are specially meant for foot care. It protects foot from dryness, cracking etc. These can be prepared according to cream preparation method.

14. Hand Sanitizer– These are the preparations which are used for the cleaning of hand especially for killing of pathogens present on our hands. According to WHO the hand sanitizer contain the following ingredients.

1. Ethanol - 80% vol/vol
2. Glycerol - 1.45% vol/vol
3. Hydrogen peroxide - 0.125% vol/vol

However sanitizer may contains alcohol, emollient, gelling agent and sterile distilled or cooled boiled water. These can be made by mixing process.

(Taken from– A hand book of cosmetics B M mithal & R N Saha.

The main ingredients mostly present in the cosmetics are water, emulsifiers, thickeners, moisturizer, colourant, flavoring agent and preservatives.

Regulatory provision related to cosmetics

Cosmetics is defined in section 3 [(aaa)] in chapter I of Drugs and Cosmetics Act, 1940.

The Chapter II, deals with The Drug Technical Advisory Boards, The Central Drugs Laboratory and the Drugs Cosmultative committee, The Chapter III deals with Import of Drugs (And Cosmetics), In this chapter, standard of quality, Misbranded cosmetics, Spurious cosmetics, prohibition of import of certain drugs or cosmetics, power of Central Government to prohibit import of drugs and cosmetics in public interest, application of law relating so sea customs and powers of customs officers, power of Central Government to make rules, offences, confiscation and jurisdiction.

The Chapter IV deals with Manufacture and Distribution of Cosmetics under which standard of quality, misbranded, spurious and adulterated cosmetics, prohibition of manufacture and sale of certain drugs and cosmetics, maintenance of records and furnishing of information, pleas, Government Analysit, Inspectiors, powers of inspectors, procedures of inspectors, person bound to disclose place where cosmetics are manufactured or kept, Reports of Analysts, purchaser of cosmetics enabled to obtain test or analysis, power of central Government to (Regulate, restrict or prohibit) manufacture, etc. of cosmetics in public interest, penality, confiscation, cognizance of offences, power of central Government to make rules.

17.C Misbranded cosmetics

For the purpose of this chapter a cosmetic shall be deemed to be misbranded–

(a) if it contains a colour which is not prescribed, or

(b) if it is not labelled in the prescribed manner; or

(c) if the label or container or anything accompanying the cosmetics bears any statement which is false or misleading in any particular.

17-D Spurious cosmetics

For the purpose of this chapter a cosmetic shall be deemed to be spurious–

(a) if it is manufactured under a name which belong to another cosmetics; or

(b) if it is an imitation of, or a substitute for, another cosmetics or resembles another cosmetics in a manner likely to deceive or bears upon it or upon its label or container the name of another cosmetics unless it is plainly and conspicuously marked so as to reveal its true character and its lack of identity with such other cosmetics; or

Scanned with OKEN Scanner

(c) if the label of container bears the name of an individual or a company purporting to be the manufacturer of the cosmetics which individual or company is fictitious or does not exist, or

d) if it purports to be the product of a manufacturer of whom it is not truly a product.

17-E Adulterated cosmetics

For purposes of this chapter a cosmetics shall be deemed to be adulterated.–

a) if it consists in whole or in part, of any filthy, putrid or decomposed substances; or

b) if it has been prepared, packed, stored under insanitary conditions where by it may have been contaminated with film or whereby it may have been rendered injurious to health, or

c) if its container is composed, in whole or in part, of any poisonous or deleterious substance which may render the content injurious to health; or

d) if it bears or contains, for purpose of colouring only, a colour other than one which is prescribed; or

e) if it contains any harmful or toxic substance which may render it injurious to health; or

f) if any substance has been mixed there with so as to reduce its quality or strength.

Penality– Penality for manufacture, sale etc. of cosmetics in contraventions of this chapter.

(i) Spurious under section 17 D Adulterated under section 17 E	– Imprisonment for a term which may extend to three years Fine shall not be less than fifty thousand or 3 times value of cosmetics whichever is more.
Other than clause (i)	– Imprisonment for a term which may extend to one year or fine which may extend to 20,000 rupees or with both.
Penality in contravention of section 26A	– Imprisonment a term which may extend to 3 years and shall also be liable to fine which may extend to 5000 rupees.

The Cosmetics Rules 2020

The Cosmetics Rules 2020 is described in chapters along with

***Chapter I**– is preliminary and in this Chapter (i) short tittle (2) application (3) definitions (Act licence, loan license, state licensing authority etc.) is given.*

***Chapter II**–Authorities, officers and laboratory (From Rule 4 to Rule 11)*

Licensing Authorities including central and state, delegation of power, controlling officer, Government Analyst, and its function, power, duties and functions of inspector and establishment and function of central cosmetics laboratory is described.

Chapter III– Import and registration (From Rule 12 to Rule 22) in this chapter Rules related with import of cosmetics, Grant of import registration certificate (RC) and its validity (A period of five years) is described. Fresh application in case of change in constitution, suspension and cancellation of Registration certificate, import of cosmetics already registered for import prohibition of import of certain cosmetic.

Documents to be supplied to the commissions of customs procedures for import of cosmetics import of cosmetic for personal use import through points of entry are described.

Chapter IV– Manufacture of cosmetics for sale or Distribution (From Rule 23 to Rule 31).

Application for grant of licence or loan license to manufacture cosmetics for sale or for distribution.

Manufacture at more than one premises

Form of license or loan license to manufacture cosmetics for sale or distribution.

Condition of license or loan license for manufacture of cosmetics

Grant or refusal of license

Further application for license or loan license after rejection

Appeal to the state Government

Validity of license

Inspection for verification of compliance

Chapter V– Permission for Import or manufacture of New cosmetics. (Rule 32)

Chapter VI– Labelling, Packing and Standards for sale or Distribution of cosmetics (Form rule 33 to rule 39).

33. Prohibition of sale or distribution

34. Manner of labelling

35. Prohibition against altering inscription on container, labels or wrappers of cosmetics.

36. Prohibition against false or misleading claims.

37. Labelling or hair dyes containing dyes, colours and pigments.

38. Special provisions relating to tooth paste containing fluoride.

39. Standard of cosmetics.

Scanned with OKEN Scanner

Chapter VII-Procedure of Sampling for test or Analysis, Seizure & Report (Rule 40 to Rule 54)

40. Testing of Cosmetics from a purchaser
41. Procedure for sampling
42. Forms of receipts for seized cosmetic, record register, documents any other material object.
43. Manner of certifying copies of seized documents
44. Form of intiniation of purpose of taking samples
45. Procedure for dispatch of sample to Government Analysis.
46. Form of order not to dispose of stock
47. Prohibition of sale
48. Procedure on receipt of sample
49. Dispatch of samples for test or analysis by order of court.
50. Recording of condition of seeds
51. Report of result of test or analysis
52. Insurance of certificates
53. Confiscation of cosmetics, implements, machinery etc.
54. Procedure for disposal of confiscated cosmetics.

Chapter VIII Approval of Laboratory for carrying out Tests on cosmetics and their Raw materials (Rule 55 to Rule 63)

55. Application for Grant of approval for testing cosmetics
56. Approval for carrying out tests on cosmetics on behalf or Cicasees
57. Inspection before grant of approval
58. Procedure of approving authority
59. Further application after rejection
60. Validity of Licence
61. Inspection for verification of compliance
62. General conditions after approval
63. Withdrawal and suspension of approval

Chapter IX Miscellaneous (Rule 64 to Rule)

64. Exemption of cosmetics
65. Voluntary recall of cosmetics

66. Fees for examination of samples
67. Mode of payment of fee
68. Applicability in case of incosistency
69. Debarment of applicant
70. Digitalisation of form
71. Amendment in the Drugs Rules 1945
72. Savings

Plant layout and other factory requirements

(A) Location and Surrounding

General requirements– The factory shall be located in a sanitary place and hygienic condition shall be maintained in the premises. It shall be proper ventilated and clean and shall not be used for residence or be interconnected with residential areas.

(B) Buildings

Building of factory shall be constructed so as to permit production under hygienic condition and not to permit entry of insects, rodent, flies etc. The wall and floor shall be free from cracks and open joints. These shall be smooth, washable, covered so that effective cleaning and disinfection can be done.

Building should be adequately lit and properly ventilated appropriate to the operations.

Testing laboratory should be preferably be physically separated from the production area.

Storage area should be of adequate space provided with suitable lightening arranged and equipped to allow dry clean and orderly placement of stored materials and product. The walls of the room in which manufacturing operation are carried out shall be up to a height of above six feet from the door.

In the plant there should be water supply of potable water, facility for disposal of waste health, clothing and sanitary requirements of the staff and medical service should be provided.

II Requirements of plant and equipment

The following equipment, area and other requirements are recommended for the manufacture of–

Catagory	Equipments	Area
A. Powders	Powder mixer of suitable type with a dust collection. Perfume and colour blender shifter with sieve of suitable mesh size	15 square meter with adequate exhaust fans

Scanned with OKEN Scanner

Other requiredments

(d) Ball mill of suitable grinder

(e) Trays and scoops (stainless steel)

(f) Filling and sealing equipment provided with dust extractor

(g) For compacts–

(i) a separate mixer

(ii) Compact pressing machine

(h) Weighing and measuring devices.

(i) Storage tanks.

An area of 15 square metres is reommended. The section is to be provided with adequate exhaust fans.

(B) Skin powder for infants–

Equipments :

(a) A suitable mixer

(b) Storage tanks

(c) Filling machine-hand operated or power driven.

(d) Weighing and measuring devices.

An area of 15 square metres is recommended. The section shall be provided with flame proof exhaust system.

2. Premises– The following are the special requirements related to Nail Polishes and Nail Lacquers :

(a) It shall be situated in an industrial area.

(b) It shall be separate from other cosmetic-manufacturing area by metal/brick partition up to ceiling.

(c) Floors, walls, ceilings and doors shall be fire proof.

(d) Smoking, cooking and dwelling shall not be premitted and no naked flame shall be brought in the premises.

(e) All electrical wiring and connections shall be concealed and main electric switch shall be outside the manufacturing area.

(f) All equipment, furniture and light fittings in the section shall be flame proof.

(g) Fire extinguisher like foam and dry powder and sufficient number of buckets containing sand shall be provided.

(h) All doors of the section shall open outwards.

3. Storage– All explosive solvents and ingredients shall be stored in metal cupboards or in a separate enclosed area.

4. Manufacture–

(a) Manufacture of lacquer shall not be undertaken unless the above conditions are complied with.

(b) Workers shall be asked to wear shoes with rubber soles in the section.

5. Other requirements– No objection certificate from local Fire Brigade Authorities shall be furnished.

(E) Lipsticks and Lipgloss–

Equipments :

(a) Vertical mixer

(b) Jacketted kettle–steam, gas or electrically heated

(c) Mixing vessels (stainless steel)

(d) Triple roller mill/Ball mill.

(e) Moulds with refrigeration facility.

(f) Weighing and measuring devices.

An area of 15 square meters is recommended

(F) Depilatories–

Equipments :

(a) Mixing tanks

(b) Mixer

(c) Triple roller mill or homogeniser (where necessary)

(d) Filling and sealing equipments

(e) Weighing and measuring devices

(f) Moulds (where necessary)

An areas of 10 squares meters in recommended.

(G) Preparations used for Eyes– Such preparations shall be manufactured under strict hygienic conditions to ensure that these are safe for use.

1. Eyebrows, Eyelashes, Eyeliners–

Equipments

(a) Mixing tanks

(b) A suitable mixer

Scanned with OKEN Scanner

(c) Homogeniser (where necessary)

(d) Filling and sealing equipment

(e) Weighing and measuring devices

An area of 10 square meters is recommended

2. Kajal and Surma–

Equipments :

(a) Base steriliser

(b) Powder steriliser (dry heat oven)

(c) Stainless steel tanks

(d) A suitable Mixer

(e) Stainless steel sieves

(f) Filling and sealing arrangements

(g) Weighing and measuring devices

(h) Homogeniser (where necessary)

(i) Pestle and Mortar (for Surma)

An area of 10 square meters with a separate area of 5 square meters for base sterilisation is recommended. Other requirements for 1 and 2.

(a) False ceiling shall be provided wherever required.

(b) Manufacturing area shall be made fly proof. An airlock or an air curtain shall be provided.

(c) Base used for Kajal shall be sterilised by heating the base at 150^0C for required time in a separate enclosed area.

(d) The vegetable carbon black powder shall be sterilised in a drying oven at 120^0C for required time.

(e) All utensils used for manufacture shall be of stainless steel and shall be washed with detergent water, antiseptic liquid and again with distilled water.

(f) Containers employed for 'Kajal' shall be cleaned properly with bactericidal solution and dried.

(g) Workers shall put on clean overalls and use hand gloves wherever necessary.

(H) Aerosol :

Equipments :

(a) Air-compressor (wherever necessary)

(b) Mixing tanks.

(c) Suitable propellant filling and crimping equipments.

(d) Liquid filling unit

(e) Leak testing equipment

(f) Fire extinguisher (wherever necessary)

(g) Suitable filtration equipment

(h) Weighing and measuring devices.

An area of 15 square meters is recommended

Other requirements–No objection certificate from the Local Fire Brigade Authorities shall be furnished.

(I) Alcoholic Fragrance solutions–

Equipments :

(a) Mixing tanks with stirrer

(b) Filtering equipment

(c) Filling and sealing equipments

(d) Weighing and measuring devices. An area of 15 square meters is recommended.

(J) Hair Dyes–

Equipments :

(a) Stainless steel tanks

(b) Mixer

(c) Filling unit

(d) Weighing and measuring devices

(e) Masks, gloves and goggles

An area of 15 square meters with proper exhaust is recommended.

(K) Tooth-powder and toothpastes, etc.–

1. Tooth-powder in General.

Equipments :

(a) Weighing and measuring devices

(b) Dry mixer (powder blender)

(c) Stainless steel sieves

(d) Powder filling and sealing equipments.

Scanned with OKEN Scanner

An area of 15 square meters with proper exhaust is recommended

2. Tooth pastes

Equipments :

(a) Weighing and measuring devices.

(b) Kettle–steam, gas or electrically heated (where necessary)

(c) Planetary mixer with de-aerator system.

(d) Stainless steel tanks

(e) Tube filling equipment

(f) Crimping machine.

An additional area of 15 square meters with proper exhaust is recommended.

3. Tooth–Powder (Black)

Equipments :

(a) Weighing and measuring devices

(b) Dry mixer powder blender.

(c) Stainless steel sieves

(d) Powder filling arrangements

An area of 15 square meters with proper exhaust is recommended. Areas for manufacturing "Black" and "White" tooth-powders should be separate.

(L) Toilet Soaps–

Equipments :

(a) Kettles or pans for saponification

(b) Boiler or any other suitable heating arrangement

(c) Suitable stirring arrangement

(d) Storage tanks or trays.

(e) Driers.

(f) Amalgamator or chipping machine

(g) Mixer

(h) Triple roller mill

(i) Granulator

(j) Plodder

(k) Cutter

(l) Pressing stamping and embossing machine

(m) Weighing and measuring devices.

A minimum area of 100 square meters is recommended for the small-scale manufacture of toilet soaps.

The areas recommended above are for basic manufacturing of different categories of cosmetics. In addition to that separate adequate space for storage of raw materials, finished products, packing materials shall be provided in factory premises.

Process used in the manufacture of Cosmteics– Mixing is the process that is used in the manufacture of cosmetics. The other processes that are used for manufacture may include dissolution, heating and stirring , Homogenization, cooling, adjustment of pH, filteration and storage (Science direct. com).

Most commonly used cosmetic Raw materials

A variety of ran materials according to their need in the cosmetic formulation are used to formulate the cosmetic product. These are catagorised as follows–

1. Absorbents– e.g. Potato starch, Calcium carbonate, Magnesium carbonate etc.
2. Adhesives– Calcium myristate, Magnesium myristate, Calcium stearate etc.
3. Antioxidants– Ascorbic acid, Gallic acid, Citric acid, Lecithin etc.
4. Antiseptic– Bethional, Boric acid, Campher, Methonal, Phonet etc.
5. Binders– Carboxy methyl Cellulose, Starch, Tragacanth, Mineral oil etc.
6. Colours– Alizarin, Carmine, Saffron etc. and other permitted in Cosmetic rule 2022.
7. Detergents– Acyl peptids, Acyl sarcocine Isopropanal amide etc.
8. Emollients– Coca butter, Ground nut oil, Isopropyl myristate etc.
9. Film formers-Acacia, Agar, agar, Beeswax, Stearic acid etc.
10. Hair colorants– Bismith citrate, Henna etc.
11. Hair removers– Arsenic trisulphide, Zinc sulphide etc.
12. Hair conditioning agent-Amino acids, eggs etc.
13. Humectants–Fructose, Glucose, Mannitol etc.
14. Oils– Arachis oil, Castor oil, Mustard seed oil etc.
15. Perfumes– Ambugris, Eugenol, Civet etc.
16. Preservatives – Benzoic acid, Salicyelic acid etc.
17. Waxes– White bee wax, Cocoa butter, Paraffin wax etc.

Hair colourants, Opacifiers, Pearlscent agents, Plaasticisers, Skin nourshing agents,

Scanned with OKEN Scanner

solvent vehicles, sun screen agent, staining agent, suspending agent are also used in preparation of cosmetics.

Control of microbial contamination in manufacture of cosmetics–Cosmetics require very hygenic conditions during the manufacturing because these contain water and organic inorganic compound that makes it most suspteble for growth of pathogenic organisms. Microbial contamination may occur during the manufacturing or during the use. The causes of microbial contamination during the manufacture may be as follows–

1. Contamination of Raw material
2. Contamination during manufacture and packaging
3. Poor product preservation

All these causes lead to risk of product deterioration. Most frequently micro organisms like Pseudomonas acruginosa, Klebsiella, oxytoca, Staphylococcus aureus etc. are found in the cosmetics.

Controll– Good manufacturing practices, must be strictly followed during the manufacturing of cosmetics. Water treatment, microbial control of raw materisls, equipments disinfession, qualification of personal, use of presevative and antioxidant can reduce the risk of contamination.

[Hall N, Fernandes IP, Heleno SA, Costa P, Boucherit-Otmaniz, Boucherit K, Rodrigues AE, Ferreica ICFR, Borreiro MF. Cosmetics Preservation : A Review on present strategies. Molecules. 2018 June 28; 23(7):1571].

Quality control of cosmetics

The quality of any product or cosmetic is initially defined by the compendium or by the manufacturer that chooses the features that a product should have while the quality control aims to verify if all the defined features are in accordance with the standard definition and if it will be maintained during the shelf life of the product. The quality control of cosmetics is important to ensure the safety of finished product as well as its raw materials.

Quality control of cosmetics may be done on–

1. Raw material specification
2. Operating standards
3. Finished product standard

4. Packaging material standard– These should not react with cosmetics packaged into it . Quality control of raw material and finished product is described further in this chapter.

The evaluation of cosmetics quality control can be done in and efficient manner by applying the techniques like rheology, sensory analysis and small angle x-ray scattering (SAXS) Sensory analysis is a powerful hot tool and it is based on vital senses like vision,

touch, smell and taste. It gives information about a product in relation to what people feel when use or consume a product. The application of sensory analysis could be related to the product control, refering to the storage, packaging and maintenance of sensory quality in relation to time and temperature.

Rheology is helpful for determination of physicochemical properties of a product especially viscosity.

SAXS techniques have been used for the analysis of cosmetics to evaluate the presence of liquid crystalline structures which are known to increase the stability of formulation becoming therefore desirable in cosmetics.

(Cosmetics Quality control, Bruna Galdorfini Chiari http://dx.doi.org/10.5772/51846)

All the substances, weather drug or cosmetics which are used topically must be tested for skin sensitization/skin irritation, so that it should be assured that after their us to skin these do not produce any harmfull chemical reaction. To evaluate such type of effect skin sensitizatrion sensitibity testing, in vitro test for skin irritation studies are performed. The short description based on OECD guidelines is as follows–

Skin Sensitization Sensitivity Testing

Skin sensitisation (Allergic contact dermatitis) is an immunologically mediated cutaneous reaction to a substance. In human the responses may be characterised by pruritus, erythema, oedema, papules, vesicles, bullae or a combination of these. In other species the reaction may differ and only erythema and oedema may be seen. (OECD Guidelines) Skin sensitization testing identifies the potential for a substance to cause allergic contact dermatitis (ACD). Skin sensitization testing is performed as follows.

1. Animal tests– The guinea pig maximization test
   The Buchelar test
   The Murine local lymph node assay (LLNA)
2. Human tests– Human repeat insult patch test
   Human maximization test

Skin sensitization can be broadly divided into sensitization and elecitation phase. In the sensitization phase, the chemical agent reacts with skin proteins leading to expansion of antigen-specific T-Cell clones. Due to subsequent expoure of some sensitizer a specific T-cell mediated immune respons can be elicted which is known as elecitation phase. Guinea maximization test and Buchelor test evalute the elicitation phase and LLNA evaluate the sensitization phase at the draining lymph nodes.

However due to ethical concern about animal testing, legal restriction on the use of animal data and scientific concern about the relevances of animal test results to human outcomes alternative approachs are increasing.

Scanned with OKEN Scanner

General principle of sensitization tests in Guinea Pigs– The test animals are initially exposed to the test chemical by intradermal injection and/or epidermal application (induction exposure) following a rest period of 10 to 14 days (induction periods) during which an immune response may develop, the animals are exposed to a challenge dose. The extent and degres of sking reaction to the challenge exposure in the test animals is compared with that demonstrated by control animals which undergo same treatment during induction and receive the challage exposure. (OECD Guidelines).

In Vitro-Tests for Skin Irritation

Acute skin irritation is a local reversible inflammatory response or damage to skin that occurs after exposure to a substance or mixture. OECD test guideline addresses the human health end point skin irritation. It is based on the in vitro test system of reconstructed human epidermis (RhE), which closely mimics the bio-chemical and physiological properties of the upper parts of the human skin i.e the epidermis.

The test chemicals applied topically to a three dimentional RhE model. Chemical-induced skin irritation, manifested mainly by erythema and oedema. The RhE-based test methods in the absence if any vascularisation in the vitro test system, measure the initiating events in the cascade, e.g. cell/tissue damage using cell viability as read out. Cell viability in the RhE model is measured by enzymatic conversion of the vital dye MTT into a blue formazan salt that is quantitatively measured after extraction from tissue.

Depending on the RhE test methods used, the exposure period ranges between 15 and 60 minutes, and the incubation temperature between 20-37^{0}C. Viability measurement is performed after 42 hours post treatment incubation period. HPLC/UPLC spectrophotometry may be used also with all types of test chemicals (Coloured, non coloured, MTT reducers and non-MTT reducess) for measurement of MTT formazan. The OD values obtained with each test chemical can be used to calculate the % of viability nomalised the negative control which is set to 100%. In case HDLC/UPLC spectrophotometry is used the % tissue viability is calculated as percent MTT formazan peak area obtained with the living tissues exposed to the test chemical relative to the MTTformazan peak obtained with the concurent negative control. (Based on OECD Guidelines).*

Quality control of Raw materials

A large variety of raw materials are used in the manufacturing of cosmetics Bureaue

MTT– C3- (4, 5-dimethyl thiazol-2-yl)-2, 5-diphenyl
HPLC– High performance liquid chromatography
UPLC– Ultra performance liquid
. Further reading OECD guidelines

of Indian standards has fix specification for many raw materials. The raw materials which do not have IS standards are generally analysed as per I.P., B.P., U.S.P or CTFA* specification. Tests for raw materials involve the following parameters.

(i) Physical– Colour, odour, viscosity, refractive index etc.

(ii) Chemical– Active ingredients, impurities etc. limit of impurities in cosmetics is specified in Drug and Cosmetic Act.

Quality control of finished product

Finished product quality control is done on physical and chemical parameter. Physical tests involve, colour, density, viscosity, melting and boiling point, hardness and softness, foam tests etc. Chemical test are carried out to find out acidity, alkalinity and assay of particular active ingredients etc. Besides these cosmetics should not have any type of microbial contamination.

Stability of cosmetics

The purpose of stability testing of cosmetic product is necessary to ensure that its physical, chemical and microbiological quality standards are appropriate when stored under sepcified condition. Because of wide variety of cosmetic product and their inherant complexing standard stability tests can not be prescribed.

General stability of a cosmetic product

Weather conducted in real time or under accelerated conditions test should be done in order to assure–

(a) Physical stability

(b) Chemical stability

(c) Microbiological stability

(d) The compatibility between the contents and the contain.

Assessment of cosmetics can be done on following parameters however it should be determined according to catagory of cosmetics.

(i) Colour, odour, appearance

(ii) pH

(iii) Viscosity

(iv) Presence of specific active ingredients in the product

(v) Microbial tests demonstrating the abiling of produces to prohibit microbial growth during normal use.

*. Cosmetic Toiletry and Fragrance Association

Scanned with OKEN Scanner

Real time monitoring are done to gain additional assurance that the accelerated testing in truly predictive of market stability. Such monitoring should be carried out on the actual production product in the final package.

Introduction to Dosage form

Introduction– Drugs are rarely administered in their pure form. Before administration or into its final apperance drugs are mixed with different types of adjuncts, resulting into their transformation which is called as dosage form. The different dosage forms are also needed according to chemical entity of drug or the action which is desired at particular route. The doage form of a drug should be designed in such a manner so that it can fulfill the expectation of the physician, pharmaceutical sceintists and patients who are intimately associated with creation, prescription and cosumption of the dosage forms.

Classification of Dosage forms

Doage forms can be of 3 types

1. Solid dosage forms
2. Liquid dosage forms
3. Semisolid dosage forms

1. Solid dosage forms

These are of following types.

(a) **Tablet**– Oral, lozenge, Buccal, Sublingual, Chewable, Soluble, Hypodermic

(b) Pills

(c) Capsules – Soft, Hard

(d) Cachets – Dry seal, Wet seal

(e) Powders – Internal use; External use– Ear powder, Snuffs powder, Dusting powder tooth powder, Opthalmic powder.

2. Liquid dosage forms

(i) Monophasic – Internal– Drops, Elixers; External–Lotions, liniments, Gargles, Mouth washs eye drops, Ear drops, Ear drops, Nose drops, inhalations

(ii) Biphasic – Emulsion– Oral, External, Parentral, Opthalmic; Suspensions– Oral, External, Parentral, Opthalmic

(c) Semisolid dosage forms

(a) For external use

(i) Ointments– Oleaginous, water washable, Absorption, Emulsion (Creams)

(ii) Plasters

(iii) Suppositories– Rectal, Vaginal, Urethal, Nasal, Ear cones, Eye dises

(b) For internal use– Electuaries

1. Granules

Granules are the solid dosage form that are intake through oral routes either alone or with any vehicle like water or milk etc. Granules can be made wither by breaking big pieces of drug into small pieces i.e. in granules form or can be made from powder by adding any suitable binding agent. For the preparation of granules from the powder these are mixed with binding agent then granules are made by pressing it over suitable size of sieve.

2. Lozenges

These are solid dosage forms that are indended to be dissolved slowly in the mouth. These may consists of one or more active ingredients alongwith colouring, flavouring and sweetening agent.

3. Syrup

Syrup is viscous, concentrated solution of sucrose and other sugars. They are either flavouring syrups or medicated syrups. Generally syrups are aqueous solution of sucrose or dextrose but these can be prepared by using artificial sweetening agents and viscosity builders. When syrup contains some medicament then it is known as medicated syrup. If it contain flavouring agents but not medicament then its is known as flavouring syrup. Besides using sucrose and other sweetening agent sorbitol is used to prepare syrup now-a-day. Sorbitol syrup is considered better to simple syrup. It does not produce any irritation in mouth and throat. A simple syrup is that which contains only sucrose and purified water.

Components of syrup

Most syrups contains sugar, preservatives, colorants, flavourants with or without medicaments. Syrups can be prepared by :

1. Solution of the ingredients with the aid of heat.
2. Solution of the ingredients by agitation and without use of heat.

Scanned with OKEN Scanner

3. By addition of sucrose to already prepared medicated liquid/ flavored liquid
4. By percolation method. The preservative like sodium benzoate, benzoic acid, methyl paraben etc. can be used. Now-a days a combination of two or more preservatives is used because such combination give a broader spectrum of antimicrobial qualities.

Elixirs

Elixirs are defined as clear, sweetened, flavoured hydro-alcoholic solutions intended for oral use and are generally flavoured to enhance their palatability. But now a days several elixirs do not contain sugar or any other sweetening agent and many other may not contain alcohol. Elixirs are relatively more stable and can be easily prepared.

4. Suspension

Definition– It is generally consist of a finely divided solid (Ranging in size from 0.5 to 5.0 μ) suspended in a liquid or semi solid vehicle which constitutes the continuous phase. Following additives generally feature in suspension systems :

(a) Flocculating agents

(b) Suspending agents

(c) Wetting agents

(d) Dispersants

(e) Preservatives and organoleptic additives

(a) Flocculating agents– The flocculating agents may be electrolytes, polymers or surfactants. Electrolytes are employed when a product having a large sedimentation volume is envisaged.

Various hydrocolloids (used as polymer) which not only assist in flocculation but are helpful in increasing the viscosity of continuous phase as well.

Ionic as well as non-ionic surfactants may also bring about flocculation of particles. Ionic surfactants may act by neutralizing the surface charges while non-ionic surfactants may be get adsorbed and help in formation of bridge.

(b) Suspending agents– The agent which increase the viscosity of the continuous phase are known as suspending agents. For aqueous systems various hydro colloids are used while waxs are suitable for oily suspensions.

(c) Wetting agents– The surfactants, are employed as wetting agents.

(d) Dispersants– Some materials where the quantum of surface charge is not sufficient the particles may exhibit tendency of coming together and forming larger particles. To overcome this tendency some materials, which carry good charge and can get easily adsorbed on to the disperse phase particles can be added organic salts of alkyaryl type fall in this category.

(e) Preservatives and organoleptic additives– Normally a combination of two or more esters of the ρ-hydroxy benzoic acids is used.

For oral suspensions sweetening and flavoring agents may have to be used. Suspensions for topical application are generally perfumed.

5. Emulsion

Before description of emulsion it is necessary to describe the colloid. A colloid is a homogenous noncrystalline substance consisting of large molecules or ultra microscopic particles of one substance dispersed through a second substance or dispersing medium. Colloids includes gel, sols and emulsions. The particles of this system do not settle and can not be separated out by ordinary filtering or centrifuging like those of suspension.

Colloids can be classified as follows–

		Dispersed Phase		
		Solid	Liquid	Gas
Dispersion Medium	Solid	Colloidal Gold in glass	Gel	Solid Foam
	Liquid	Colloidal Gold in water	Emulsion	Foam
	Gas	Smoke	Aerosol	–

Definition of Emulsion

An emulsion is a type of colloid in which both medium i.e. dispersion medium and dispersed phase is liquid and both the liquids are immiscible with each other. There are two basic types of emulsions–

1. Water-in-oil (w/o)
2. Oil-in-water (o/w)

Besides these multiple emulsion (o/w/o or w/o/w) and micro emulsions are also types of emulsions.

Emulsifying agent

These are the substances that are soluble in both water and fat and enable fat to be uniformly dispersed in water as an emulsion. Here are some agents which used as emulsifying agent–

1. Gums–e.g. Acacia, tragacanth
2. Carbohydrates–e.g. Starch
3. Aluminium hydroxide
4. Soap etc. are used as emulsifying agent

Scanned with OKEN Scanner

Emulsion Components

It includes the following three:

1. Emulsifier such as gum, starch etc.
2. Vehicle–It contains oil phase and aqueous phase
3. Additives–It includes preservative, antioxidants, humectants, flavouring agents, sweetening agents

Preparation of Emulsions

Various types of machine are used for the preparation of emulsion. These are as follows–

1. **Mixers**–These involves agitating of ingredients with the help of beaters. It should be designed (beaters and containing vessel) so that continuous movement is provided in all parts of the liquid.
2. **Colloid Mills**–Then machine are suitable for preparing emulsion.
3. **Homogenisers**–These machines breaks large globules in a coarse emulsion and then into smaller globules.
4. **Ultrasonic Emulsifier**–In this ultrasonic vibration are produced due to which alternate region of compression and rarefaction are produced. Cavities are formed in the region of rarefaction and later these collapse with great force which produce emulsification.

Pharmaceutical Application of Emulsion

1. It covers the unpleasant taste.
2. Topical emulsions are washable.
3. It increase the absorption rate.
4. It is less greasy.
5. Emulsions are having acceptable viscosity.
6. It increase bioavailibility.
7. Emulsions of both types are used extensively in the preparation for external and in cosmetic preparations O/W type of emulsions are used as a dosage form for the intravenous administration of oils and fats.

6. Liniment

Liniments may be liquids are semisolids that are rubbed on the affected area. These are ment for external application and are alcoholic or oil based solutions or emulsions containing therapeutic agents. Alcoholic liniments are used for its rubefacient, mildly

astringent, counterirritant and penetrating effect while oily liniment are milder in action but are more useful in massage.

7. Cream

Definition–The creams can be defined as viscous liquid or semi solid emulsions of either o/w or w/o type. Creams may be used as medicinal purpose and cosmetic purpose. Creams like shaving cream, hand cream and foundation cream are o/w type where as cold creams are w/o type emulsion. The classification of creams which is widely accepted is based on function. According to its function the creams can be classified as below–

1. Foundation and vanishing creams
2. Cleansing and cold creams
3. Night and massage creams
4. Hand and body creams
5. All purpose and general creams

Of these types of creams mostly creams are of emulsion type except cleansing cream which may be of either type emulsion or mixture of hydrocarbon oils and waxes.

General procedure for manufacturing–As these preparations are emulsion type the ingredients are classified into aqueous phase and oil phase. Ingredients of oil phase having least melting point should be melt first and then remaining ingredient should be melt in increasing order of melting point. The continuous stirring should be done during this process. Ingredients of aquous phase should be mixed separately. Then both of these phases are mixed with continuous stirring till a smooth cream is formed. Perfume should be added when it is cooled.

The ingredients of cream include bees wax, oil like almond oil, mineral oil, spermaceti, water, perfume and preservative.

8. Gel

Gels are semi solid masses that are formed by dispersion of lyophilic colloids at certain concentration specially when the solubility of the colloidal material is reduced by charge in temperature.

The USP has defined the gel as "Semi solid systems consisting of either suspensions made up of small inorganic particles or large organic molecules interpenetrated by a liquid. Where the gel mass consists of a network of small discrete particles, the gel is classified as a two-phase system. In two phase system, if the particle size of the dispersed phase is relatively large, the gel mass is sometimes referred to as a magma.

Gel preparation method–The gel can be prepared by following methods–

1. Chemical reaction that lead to the change in shape of lyophilic molecules.

Scanned with OKEN Scanner

2. Flocculation of lyophilic colloids by salt or precipitating liquids.
3. By evaporation–This is done in certain colloidal solution.
4. Swelling of dry colloid when placed in contact with soluble liquid.

Gelling agents–Acacia, alginic acid, starch, tragacanth, gelatin, carbomer, sodium starch glycolate etc. works as gelling agents.

Uses of gel–Gels are used in several formulations. Topic preparations for musculoskeletal systems for relief in pain or other anti-inflammatory activity, treatment of peptic ulcer with sucralfate gel, ophthalmic preparation of pilocarpine. For cosmetic purpose hair gels are very much used.

9. Pain Balm

Balm are semi solid dosage form that are gentelly rubbed over affected area. Balms may contain medicament along with bee wax oil like coconut oil, Sesame oil, linseed oil etc. colour and preservatives. For the preparation bee wax is heated so that it melts and then oils are added. Preservation are added while it cool to some extent. If camphor is used then it should be mixed in melted bee wax and oil base that it can be dissolve completely.

Need of dosage forms

Drug is administered to win back an individual from the state of disease to the normal health. These drugs after entering into human body from various route are absorbed through specific mechanism. It is the dosage form which plays an important role so that the drug molecule should reach to their specific absorption site. The dosage form are also responsible for their action in the body like injectable drugs are designed to introduce in blood or body fluid and works very quickly. The factors for the need of different dosage forms are as follows–

1. **Dose accuracy**– Dosage forms should be of such type so that its proper dose must be intake.
2. **Palatibility of dosage form**– It should have good taste, colour smell etc. so take it can be taken easily. It is an important factor for oral drug.
3. **Absorption, distribution and biotranformulation of drug in the body**– It is the dosage form which play an important role in the absorption of drug in the body.
4. **Stability against microbial action**– It should be stable against a wide class of microorganism so that these can be stored for a definite time period.
5. **Administration according to different route**– Administration of drug is needed in different system of body and in emergency so that different dosage form is needed.

अध्याय 14

The Drugs and Cosmetic Act, 1940

The Drugs and Cosmetics Act, 1940 भारत के संसद द्वारा पारित एक Act है जिसके द्वारा भारत में औषधियों के आयात, निर्माण तथा वितरण (Import, Manufacture and Distribution of Drugs) को नियन्त्रित किया जाता है। यद्यपि प्राचीन भारत में भी औषधि के स्थान पर अन्य द्रव्यों के बेचने पर आर्थिक दण्ड का विधान था। इसका उल्लेख कौटिल्य अर्थशास्त्र में मिलता है।

धान्य स्नेह क्षार लवण गन्ध भैषज्य द्रव्याणां समवर्णोपधाने द्वादश पणो दण्डः ।

(कौटिल्य अर्थशास्त्र 4/2)

अर्थात धान्य, स्नेह, क्षार, लवण, गन्ध तथा भैषज्य द्रव्यों के स्थान पर उनके समान व्यवहार करने पर बारह पण का दण्ड है।

1920 के दशक में ब्रिटिश भारत में विभिन्न प्रकार की औषधियों के स्थान पर खराब गुणवत्ता की या मिलावट वाली औषधियों का प्रचलन बहुत ज्यादा हो गया था। इस बात को सर हारून जाफर द्वारा 1927 में काउन्सिल आफ स्टेट में उठाया गया। ऐसी ही बात सर हेनरी गिडने द्वारा लेजिस्लेटिव असेम्बली में कही गयी। इनके बातों को संज्ञान में लेते हुए तत्कालीन भारत सरकार ने कार्नल सर रामनाथ चोपड़ा की अध्यक्षता में 1930 में Drug Enquiry Committee का गठन किया। इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट 1931 में तत्कालीन भारत सरकार को सौंप दिया जिसमें यह कहा गया कि इस समय मौजूद कानून के प्रावधान ऐसे नहीं है जिससे मिलावट वाली या गुणवत्ताहीन औषधियों पर नियन्त्रण किया जा सके। अतः इस बात की आवश्यकता है कि एक Drug Act, Pharmacy Act या दोनों को मिलाकर एक एक्ट बनाने की आवश्यकता है। इस रिपोर्ट के 9 साल बाद 1940 में Drug Act को बनाया गया।[1] बाद में इसमें संशोधन कर इसमें Cosmetics शब्द जोड़ दिया गया जिससे इसे Drugs and Cosmetics Act, 1940 के नाम से जाना जाने लगा। प्रारम्भ में यह केवल Allopathic drug तक ही सीमित था बाद में सन् 1963 में इसमें आयुर्वेदिक औषधियों पर भी प्रभावी कर दिया गया।

The Drugs and Cosmetics Act, 1940 जिसे हिन्दी में औषधि एवं सौन्दर्य प्रसादन अधिनियम, 1940 के नाम से भी जाना जाता है, में Chapters की व्याख्या निम्न रूप में है–

- Chapter I - Introductory
- Chapter II - The Drugs Technical Advisory Board, The Central Drugs Laboratory and The Drugs Consultative Committee
- Chapter III - Import of Drugs and Cosmetics
- Chapter IV - Manufacture, Sale and Distribution of Drugs and Cosmetics
- Chapter IVA- Provisions Relating to Ayurvedic, Siddha and Unani Drugs
- Chapter V - Miscellaneous

The First Schedule

Scanned with OKEN Scanner

The Second Schedule

विशेष– यहाँ Drugs and Cosmetics Act 1940 मे वर्णित केवल उन्हीं प्रावधानों का वर्णन किया जायेगा जो कि आयुर्वेदिक औषधि से सम्बन्धित है। यह वर्णन NCISM syllabus को ध्यान में रखकर किया जा रहा जिससे आयुर्वेदाचार्य (BAMS) में अध्ययनरत छात्रों को परीक्षा की दृष्टि से उपयोगी हो सके। जहाँ पर आवश्यक है वहाँ पर मूल रूप में वर्णित का वर्णन किया गया है अन्यथा उसे समझाने की कोशिश की गई है।

Standard of Quality– Standard of identify, purity and strength shall be according to pharmacopoeia.

आयुर्वेदिक औषधि की परिभाषा

Section 3(a) में आयुर्वेदिक औषधि की परिभाषा निम्न दी गई है–

"Ayurvedic, Siddha or Unani Drugs" includes all medicines intended for internal or external use for or in the diagnosis, treatment, mitigation or prevention of (disease or disorder in human beings or animals and manufactured) exclusively in accordance with the formulae described in the authoritative books of (Ayurvedic, Siddha and Unani Tibb systems of medicine) specified in the first schedule.

Patent or proprietary medicine की परिभाषा

सेक्शन 3h(i) में वर्णित की गई है, जो इस प्रकार है–

In relation to Ayurvedic, Siddha or Unani Tibb systems of medicine all formulations containing only such ingredients mentioned in the formulae described in the authoritative books of Ayurveda, Siddha or Unani Tibb systems of medicine specified in the First Schedule, but does not include a medicine which is administered by parenteral route and also a formulation included in the authoritative books as specified in clause (a).

वक्तव्य– पेटेन्ट या प्रोप्रटेरी औषधि ऐसी औषधि है जो कि First Schedule में अधिकृत आयुर्वेदिक ग्रन्थों में वर्णित योगों के घटक द्रव्यों को लेकर निर्मित की जाती है। बशर्ते ऐसे कोई भी योग जैसे सितोपलादि चूर्ण आदि जो इन ग्रन्थों में वर्णित है, वे इसकी श्रेणी में नहीं आते है या ये योग patent या proprietary औषधि नहीं हो सकते। तथा ऐसी औषधियाँ जो parenteral route से प्रयुक्त दी जाती है वे भी इसके अन्तर्गत नहीं आते हैं।

Definition of Device– [(b) "Drug" includes

(iv) Such devices intended for internal or external use in the diagnosis, treatment, mitigation of prevention of disease or disorder in human beings or animals, as may be specified from to time by the Central Government by notification in the official Gazette, after the consultation with the Board;]

इस प्रकार device को drug के अन्तर्गत परिभाषित किया गया है।

Chapter IV A

PROVISIONS RELATING TO [AYURVEIDC, SIDDHA AND UNANI] DRUGS

Chapter IV A में Section 33-B, 33-C, 33-D, 33-E, 33-EE, 33EEA, 33-EEB, 33-EEC, 33EED, 33F, 33F, 33G, 33H, 33I, 33J, 33K, 33KA, 33KB, 33L, 33M, 33N तथा 33-O के तहत विभिन्न प्रकार के प्रावधानों का उल्लेख किया गया है।

सेक्शन 33-C के तहत Ayurvedic, Siddha and Unani Drugs Technical Advisory Board का गठन करने का प्रावधान है जो कि केन्द्र सरकार के द्वारा गजट नोटिफिकेशन के माध्यम द्वारा किया जायेगा। यह बोर्ड भारत सरकार तथा राज्य सरकारों को Chapter IV-A से सम्बन्धित तकनीकी मामलों तथा अन्य मामलों में, सलाह देगी। इस बोर्ड में निम्न सदस्य होते हैं–

(i) The Director General of Health Services, ex officio (पदेन)

(ii) The Drugs Controller, India (पदेन)

(iii) The Principal officer dealing with Indian Systems of Medicine in the Ministry of Health (पदेन)

(iv) The Director of the Central Drugs Laboratory, Kolkata (पदेन)

इसके अतिरिक्त निम्न सदस्य भारत सरकार द्वारा नामित किये जाते हैं–

(v) Government Analyst–एक

(vi) Pharmacognosist–एक

(vii) Phytochemist–एक

(viii) चार सदस्य जिसमें 2 आयुर्वेदिक फार्माकोपिया कमेटी से एक सदस्य यूनानी तथा एक सिद्धा फार्माकोपिया कमेटी से होगे।

(ix) एक टीचर द्रव्य गुण एवं भैषज्य कल्पना से

(x) एक टीचर इलम-उल-अदविया तथा तकलिस-वादवासाजी से

(xi) एक टीचर गुणपादम से

(xii) तीन सदस्य (एक-एक आयुर्वेद, सिद्धा तथा यूनानी ड्रग इंडस्ट्रीज से)

(xiii) तीन सदस्य, एक-एक आयुर्वेदिक सिद्धा तथा यूनानी प्रैक्टिशनर

उपरोक्त सदस्यों में एक सदस्य इसका अध्यक्ष होगा, जो कि केन्द्र सरकार द्वारा नामित होगा। इस बोर्ड का कार्यकाल तीन साल का होगा।

सेक्शन 33-D के तहत The Ayurvedic, Siddha and Unani Drugs Consultative Committee के गठन का प्रावधान है। इस कमेटी का कार्य भारत सरकार, राज्य सरकारों तथा ASU Drug Technical Advisory Board को सलाह देना है जिससे इस चैप्टर के प्रावधानों को सम्पूर्ण भारत में एक समान रूप से प्रभावी बनाया जा सके। इसके सदस्यों में केन्द्र सरकार द्वारा नामित दो सदस्य तथा सभी राज्यों से एक सदस्य होते हैं। जो कि उस राज्य द्वारा नामित किये जाते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

33-EE. Misbranded drugs–For the purposes of this chapter, an Ayurvedic, Siddha or Unani drug shall be deemed to be misbranded

a) If it is so coloured, coated, powdered or polished that damage is concealed, or it is made to appear of better or greater therapeutic value than it really if; or

b) If it is not labelled in the prescribed manner; or

c) If its label or container or anything accompanying the drug bears any statement, design or device which makes any false claim for the drug or which is false or misleading in any particular.

33-EE. Adulterated drugs–For the purposes of this chapter, an Ayurvedic, Siddha or Unani drug shall be deemed to be adulterated–

a) If it consists, in whole, or in part, of any filthy, putrid or decomposed substance; or

b) If is has been prepared, packed or stored under insanitary conditions where by it may have been contaminated with filth or whereby it may have been rendered injurious to health; or

c) If its container is composed, in whole or in part, of any poisonous or deleterious substance which may render the contents injurious to health; or

d) If it bears or contains, for purpose if colouring only, a colour other than one which is prescribed; or

e) If it contains any harmful or toxic substance which may render it injurious to health; or

f) If any substance has been mixed there with so as to reduce its quality or strength.

33-EEA. Spurious drugs–For the purpose of this chapter, an Ayurvedic, Siddha or Unani drug shall be deemed to be spurious–

a) If it is sold, or offered or exhibited for sale, under a name which belongs to another drug; or

b) If it is an imitation of, or is a substitute for, another drug or resembles another drug in a manner likely to deceive, or bears upon it or upon its level or container the name of another drug, unless it is plainly and conspicuously marked so as to reveal its true character and its lack of identity with such other drug; or

c) If the label or container bears the name of an individual or company purporting to be the manufacturer of the drug, which individual or company is fictitious or does not exist; or

d) If it has been substituted wholly or in part by any other drug or substance; or

e) If it purports to be the product of a manufacturer of who it is not truly a product.

33-EEB.–Regulation of manufacture for sale of Ayurvedic, Siddha and Unani drugs.

(इसके तहत कोई भी व्यक्ति standard औषधि (API तथा AFI में वर्णित) में अतिरिक्त आयुर्वेदिक सिद्ध या यूनानी औषधि का निर्माण बेचने या वितरण के लिए नहीं कर सकता है।)

33-EEC.–Prohibition of manufacture and sale of certain Ayurvedic, Siddha and Unani drugs.

(इस सेक्शन misbranded, adulterated तथा spurious ASU drug तथा कोई भी patent या proprietary medicine जिसके घटक द्रव्यों को नियमानुसार उसके lebel या container पर प्रदर्शित न किया गया हो या बिना लाइसेंस के ऐसी सभी ASU drugs के निर्माण (बेचने तथा वितरण के लिए) पर रोक लगाने का प्रावधान है। लेकिन वैद्य या हकीम जो केवल अपने मरीज को देने के लिए प्रयोग करते हैं उन्हें इससे छूट दी गई है।)

33-EED–Power of Central Government to prohibit manufacture etc. of Ayurvedic, Siddha or Unani drugs in public interest.

(यदि भारत सरकार को यह लगता है कि किसी औषधि विशेष से (किसी साक्ष्य के आधार पर) मनुष्य/जानवर को नुकसान है तो वह public interest में गजट नोटिफिकेशन के द्वारा उस औषधि के निर्माण, बेचने तथा वितरण पर रोक लगा सकती है।)

33-F. Government Analysts

केन्द्र सरकार या राज्य सरकारें ऐसे व्यक्ति को जो इसकी योग्यता रखता है तथा जिसे सरकार उचित मानती है उसे गजट नोटिफिकेशन के द्वारा Government Analysis नियुक्त कर सकती है।

33-G. Inspectors

केन्द्र सरकार या राज्य सरकारें ऐसे व्यक्ति को, जो इसकी योग्यता रखता है तथा जिसे सरकार इसके लिए उपयुक्त मानती है, उसे गजट नोटिफिकेशन द्वारा inspector नियुक्त कर सकती है।

33-H. Application of provisions of sections 22, 23, 24 and 25

22–Powers of Inspectors

23–Procedure of Inspectors

24–Persons bound to disclose place where durgs or cosmetics are manufactured or kept

25–Reports of Government Analysis

इसके द्वारा उपरोक्त sections के प्रावधानों को लागू करने का विधान है।

33-I. Penalty for manufactors, sale etc of Ayurvedic Siddha or Unani drug in contravention of this chapter.

इसके अन्तर्गत निम्न रूप से जेल तथा जुर्माने का प्रावधान है–

1. बिक्री या वितरण के लिए निर्माण पर

(a) कोई भी आयुर्वेदिक, सिद्धा या यूनानी औषधि

Scanned with OKEN Scanner

(i) 33E के अनुसार misbranded हो।

(ii) जो 33EE के अनुसार adulterated हो

(iii) जो 33EEC के clause (c) के अनुसार बिना वैध लाइसेन्स का हो

इन तीनों स्थितियों में जेल जो कि एक साल तक हो सकता है तथा जुर्माना जो कि पचीस हजार या जब्त की दवा के मूल्य का तीन गुना इनमें से जो ज्यादा हो, उससे कम नहीं होगा।

(b) कोई भी आयुर्वेदिक, सिद्धा या यूनानी औषधि जो 33EEA के अन्तर्गत spurious drug हो ऐसी स्थिति जेल जो एक साल से कम नहीं होगा तथा तीन साल तक के लिए बढ़ाया जा सकता है। जुर्माना पचास हजार या जब्त की गई औषधि के मूल्य का तीन गुना जो भी ज्यादा हो, इससे कम नहीं होगा। कोर्ट को यदि उपयुक्त कारण लगता है तो वह इसे कम कर सकती है।

(c) 33EED के अन्तर्गत होने पर सजा जो तीन साल तक जेल तथा जुर्माना पचास हजार या जब्त औषधि के मूल्य का तीन गुना जो भी ज्यादा हो।

(2) अन्य स्थितियों में छः महीने का जेल या कम से कम दस हजार जुर्माने का विधान है।

33-J. *Penalty for subsequent offences.*

यदि ऐसे अपराध फिर से या बार-बार किये जाय तो

(a) 33I के sub section I के clause (a) का उल्लंघन पर कम से कम 2 साल की जेल जो कि छः साल तक बढ़ाया जा सकेगा तथा जुर्माना कम से कम पचास हजार या जब्त किये गये औषधि के मूल्य का तीन गुना जो ज्यादा हो।

(b) सेक्शन 33I के sub section 1 के clause (b) के उल्लंघन पर कम से कम दो साल की सजा जो छः साल तक बढ़ाया जा सकेगा तथा जुर्माना कम से कम एक लाख या जब्त औषधि के मूल्य का तीन गुना जो ज्यादा हो।

कोर्ट, यदि विशेष कारण हो, तो इसे कम कर सकती है।

33-K. *Confisation*

(इसके अन्तर्गत जप्त करने का प्रावधान है)

33-KA. *Disclosure of name of manufacture etc.*

कोई व्यक्ति, जो किसी आयुर्वेदिक औषधि का निर्माता न हो, वह ऐसे निर्माता का नाम disclose कर सकता है।

33-KB. *Maintenance of records and furnishing of information.*

33-L. *Application of provisions to Government departments.*

यदि कोई सरकारी विभाग ASU drug का निर्माण बिक्री या वितरण के लिए करता है तो इस chapter के प्रावधान उस पर भी लागू होंगे।

33-M. Cognizance of offences.

इस Chapter से सम्बन्धित अभियोजन Inspector द्वारा किया जायेगा तथा Metropolitan Magistrate या First Class Judicial Magistrate से कम के Court में ऐसे मामलों की सुनवाई नहीं होगी।

33-N. Power of Central Government to make rules

इस section के तहत केन्द्र सरकार को अधिकार दिये गये हैं कि वह ASU Drug Technical Advisory Board की मदद से नियम बना सकती है।

33-O. Power to amend First Schedule

Section 3a में वर्णित आयुर्वेदिक औषधि की परिभाषा में Authoritative Book को First Schedule में specify किया गया है। इसमें निम्न ग्रन्थ शामिल है–

1. आरोग्य कल्प द्रुम
2. अर्क प्रकाश
3. आर्यभिषक
4. अष्टांग हृदय
5. अष्टांग संग्रह
6. आयुर्वेद कल्प द्रुम
7. आयुर्वेद प्रकाश
8. आयुर्वेद संग्रह
9. भैषज्य रत्नावली
10. भारत भैषज्य रत्नाकर
11. भावप्रकाश
12. बृहत् निघण्टु रत्नाकर
13. चरक संहिता
14. चक्रदत्त
15. गद निग्रह
16. कूपी पक्व रसायन
17. निघण्टु रत्नाकर
18. रस चण्डाशु
19. रस राज सुन्दर
20. रस रत्न समुच्चय
21. रस तन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह–I
30. सर्वयोग चिकित्सा रत्न
31. शार्ङ्गधर संहिता
32. सिद्ध भेषज मणिमाला
33. सिद्ध योग संग्रह
34. सुश्रुत संहिता
35. वैद्य चिन्तामणि
36. वैद्यक शब्द सिन्धु
37. वैद्यक चिकित्सा सार
38. वैद्य जीवन
39. वसवराजीयम्
40. योग रत्नाकर
41. योग तरंगिणी
42. योग चिन्तामणि
43. भेल संहिता
44. काश्यप संहिता
45. विश्वनाथ चिकित्सा
46. वृन्द चिकित्सा
47. आयुर्वेद चिन्तामणि
48. अभिनव चिन्तामणि
49. आयुर्वेद रत्नाकर
50. योग रत्न संग्रह

Scanned with OKEN Scanner

22. रस तरंगिणी
23. रस योग सागर
24. रस योग रत्नाकर
25. रस योग संग्रह
26. रसेन्द्र सार संग्रह
27. रस प्रदीपिका
28. सहस्र योग
29. सर्व रोग चिकित्सा रत्न
51. रसामृत
52. द्रव्य गुण निघण्टु
53. रस मंजरी
54. वंगसेन
54A. Ayurvedic Formulary of India
54B. आयुर्वेद सार संग्रह
54C. Ayurvedic Pharmacopoeia of India

The Drugs and Cosmetics Rules, 1945

आयुर्वेदिक औषधियों से सम्बन्धित Rules का वर्णन निम्न Part में में किया गया है-

Part XVI– Manufacture for sale of Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs

Part XVI(A)–Approval of institutions for carrying out tests on ASU drugs and raw materials used in their manufacture on behalf of licensees for manufacture for sale of ASU drugs

Part XVII–Labelling, packing and limit of alcohol in Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs

Part XVIII–Government Analysts and Inspectors for Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs

Part XIX–Standards of Ayurvedic, Siddha and Unani Drugs

वक्तव्य–यहाँ पर आयुर्वेदाचार्य द्वितीय व्यवसायिक के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर उपरोक्त नियमों को संक्षेप में वर्णन करने का प्रयास किया जा रहा है। जिनको उपरोक्त विषय की ज्यादा जानकारी करनी हो वे The Drugs and Cosmetic Rule 1945 का अवलोकन कर सकते हैं। और भी इसका उपयोग किसी कानूनी प्रक्रिया के लिए नहीं किया जायेगा।

Part XVI

इसमें आयुर्वेदिक औषधि के निर्माण सम्बन्धी नियमों का वर्णन किया गया है। जो कि Rule 151 से Rule 160 तक में पूर्ण है। इन नियमों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है-

Rule 151. Manufacture on more than one set of premices

यदि एक ही निर्माता एक से अधिक जगह पर औषधि निर्माण करता है तो प्रत्येक के लिए अलग लाइसेंस होना चाहिए।

152. Licensing authorities

राज्य सरकार licensing authority नियुक्त करती है।

153. Application for licence to manufacture Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs

Form 24 D को भरकर उपयुक्त फीस (शास्त्रोक औषधि के लिए Rs.2000 तथा प्रोप्राइरेटरी प्रथम 10 के लिए Rs. 3000 इसके बाद Rs. 2000 प्रत्येक औषधि उत्पाद) के साथ लाइसेंस के grant हेतु Licencing Authorities को e-AUSAHDI portal (www.eaushadhi.gov.in) के माध्यम से दी जायेगी ।

153 A. Loan licence से सम्बन्धित है।

153 B–Application for certificate of Good Manufacturing Practices for Ayurvedic Siddha or Unani Drugs manufacturing unit– ये Application form 26E-1 में e-AUSHADHI portal के माध्यम से दी जायेगी ।

154. Form of licence to manufacture Ayurvedic (including Siddha) or Unani durgs

आगे वर्णित Rule 157 के condition को पूरा करने के पश्चात Form 25-D में आयुर्वेदिक, सिद्धा तथा यूनानी औषधि निर्माण हेतु लाइसेंस दिया जा सकता है। इसके हेतु राज्य सरकार पहले आयुर्वेद, सिद्धा या यूनानी औषधि के विशेषज्ञ की सलाह भी लेगी। लाइसेंस e-AUSHADHI portal के माध्यम से online दिया जायेगा ।

154 A. Form of loan licence to manufacture for sale of Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs. It shall be issued in Form 25E and application shall be processed through e-AUSHADHI portal.

155. Omitted

155 A. Omitted

155 B. Certificate fo award of G.M.P. of Ayurveda, Siddha and Unani drugs

(i) The Certificate of Good Manufacturing Practices to manufacturers of Ayurveda, Siddha or Unani drugs shall be issued to licensces who comply with the requirements of Good Manufacturing Practices (GMP) of Ayurveda, Siddha and Unani as laid down in schedule T.

156. Duration fo licence - Form 25 D में जारी liecence अविरत विधिमान्य बनी रहेगी परन्तु अनुज्ञप्ति धारी (Licensee) को अनुज्ञप्ति की शर्तो और औषधि एवं प्रसाधन सामाग्री अधिनियम के उपबन्धों और उसके तहत बनाए गये नियमों के अनुपालन की स्वतः घोषणा अनुज्ञप्ति जारी होने की तारीख से या पिछली स्वतः घोषणा (Self Declaration) की प्रस्तुति की तारीख से, जो भी यथास्थिति हो, प्रत्येक वर्ष में प्रस्तुत करेगा। यदि उक्त अवधि (एक वर्ष पूरा होने के तीन महीने के भीतर) के भीतर स्वतः घोषणा प्रस्तुत करने में विफल रहता है जो उक्त उत्पाद की अनुज्ञप्ति रद्द समझी जायेगी।

Scanned with OKEN Scanner

156 A. Duration of loan licence [25 E में होगा शर्ते 156 के अनुरूप ही होता है]

156 B. Duration of Certificate of Good Manufacturing Practices for Ayurvedic, Siddha or Unani drugs manufacturing units– Form 26E-1 में जारी प्रमाण पत्र तब तक विधिमान्य बना रहेगा जब तक कि Licensing Authority द्वारा इसे रद्द नहीं कर दिया जाता है किन्तु licensee द्वारा इसके जारी होने की तारीख से हर पांच वर्ष की अवधि के समाप्त होने से पहले एक हजार रुपये का प्रमाण पत्र प्रतिधारण फीस जमा की जाती हो।

यदि नियत तारीख पर फीस नहीं जमा हो पाता है तो प्रतिधारण फीस के साथ हर महीने या उसके 6 महीने तक के हिस्से के लिए प्रतिधारण फीस का 2 प्रतिशत विलम्ब फीस देना होगा ऐसा न करने पर प्रमाण पत्र को रद्द समझा जायेगा।

156 C. Inspection for Grant of Licence and Verification of compliance - इसके तहत राज्य सरकार द्वारा नियुक्त एक या अधिक निरीक्षण या सम्बन्धित क्षेत्र के विशेषज्ञ के साथ या उसके बिना औषधि निर्माण प्रतिष्ठान की जाँच की जायेगी।

(2) निरीक्षक Condition of licence का सत्यापन पाँच साल में कम से कम एक बार या जोखिम आधारित दृष्टिकोण के अनुसार जैसा जरूरी हो सत्यापन करेगा।

156 D. Report by Inspector– [निरीक्षक Schedule T में वर्णित प्रत्येक बिन्दुओं पर निरीक्षण कर अपने Report को जमा करेगा]

156 E. Procedure of Licensing Authority– यदि लाइसेन्सिंग अधिकारी उपरोक्त Report से सन्तुष्ट है या उसे लगता है कि कोई और enquiry करनी है उसके बाद सन्तुष्ट होने पर इस भाग में लाइसेंस निर्गत करेगा।

यदि वह सन्तुष्ट नहीं है तो इंगित कमियो का ज्ञापन जारी करेगा तथा licence देनें से पूर्व उन शर्तो को 2 माह में पूरा करना आवश्यक होगा। यदि अनुज्ञप्तिधारी ऐसा नहीं करता है तो application रद्द समझा जायेगा। ये प्रक्रियायें e-AUSHADI Portal के माध्यम से की जायेगी।

156 F. Further application after rejection– यदि Applicant 6 माह के अन्दर Licensing Authority को सूचित करता है कि आवश्यक शर्ते पूरी कर ली गई है तथा निरीक्षण शुल्क जमा कर दिया है तो Licensing Authority संतुष्ट होने के पश्चात् (पुनः निरीक्षण के) लाइसेंस या Certificate जारी करेगा।

157. Conditions for the Grant of a licence in form 25-D

इसके पहले जब आयुर्वेदिक, सिद्धा या यूनानी औषधि के निर्माण हेतु लाइसेंस की अनुमति दी जाय निम्न परिस्थितियाँ/शर्ते (conditions) पूरी होनी चाहिए–

1. Schedule T में वर्णित मानक अनुरूप औषधि का निर्माण होना चाहिए।

2. आयुर्वेदिक सिद्धा या यूनानी औषधि का निर्माण, जो कि उस विधा का विशेषज्ञ होगा तथा पूर्णकालिक होगा (whole time employee), उसके देखरेख (direction and supervision) में किया जायेगा।

निम्न मान्य डिग्री/डिप्लोमा वाला रखा जा सकता है—

a. A Degree in Ayurveda or Ayurvedic Pharmacy.

b. A Diploma in ASU System of Medicine.

c. A Graduate in Pharmacy/Pharmaceutical Chemistry/Chemistry or Botany with experience of at least two year in manufacturing in ASU system of Medicine.

d. Registered Vaid or Hakim having at least four year experience in manufacture of ASU drugs.

e. A qualification as pharmacist in ASU medicine with experience not less than eight years in manufacturing of ASU drugs.

157 A. Maintaining of records or raw material used by licensed manufacturing unit of Ayurveda, Siddha and Unani drugs in the preceding financial year.

प्रत्येक औषधि निर्माण इकाई को उस वित्त वर्ष के अन्त तक समस्त कच्ची औषधि को प्रयोग कर लिए जाने का रिकार्ड Schedule TA में वर्णित Proforma के अनुसार स्टेट ड्रग लाइसेन्सिंग अथारिटी को तथा नेशनल मेडिशनल प्लाट बोर्ड को अगली वित्त वर्ष के 30 जून तक जमा करना होगा तथा एक रिकार्ड अपने पास भी रखेगा।

ये Record online e-AUSHADHI portal (www.e-aushadhi.gov.in) के माध्यम से Submit किये जायेंगे।

158. Conditions of licence

उपरोक्त के अतिरिक्त निर्माता औषधि निर्माण तथा इसकी परीक्षा का रिकार्ड रखेगा, ड्रग इन्सपेक्टर को निर्माण इकाई में आने हेतु मना नहीं करेगा तथा inspection book form 35 को maintain करेगा।

आवेदक तथा निरीक्षक दोनों e-AUSHADHI portal के माध्यम से रिकार्ड जमा करेंगे।

158 A. Conditions of loan licence

158 B. Guidelines for issue of license with respect to Ayurveda, Siddha or Unani drugs

विमर्श–इस नियम अर्थात Rule 158 B का Insertion G.S.R. 663(E) date 10.10.2010 के द्वारा किया गया था। इस नियम के द्वारा विभिन्न श्रेणी की आयुर्वेदिक औषधियों यथा–

1 * 3(a) के अन्तर्गत वर्णित आयुर्वेदिक, सिद्धा तथा यूनानी औषधियाँ

* 3(h) के अन्तर्गत वर्णित Patent या Proprietary medicine

* बल्य/पोषक या Positive health promoter formulations (इनके घटक I schedule में वर्णित Book में होने चाहिए तथा उनका प्रयोग बल्य/पोषक के रूप में किया गया हो)

* सौन्दर्य प्रसादक (for oral, skin, hair and body care) (इनके घटक I schedule में वर्णित Book में होने चाहिए तथा उनका प्रयोग सौन्दर्य प्रसादक के रूप में किया गया हो)

* औषध घन (aqueour or hydro-alcohol) (I schedule में वर्णित Book में होने चाहिए)

के Safety study तथा Experience or Evidence of effectiveness जो कि निम्न रूप में specified किया गया है इसे लाइसेंस हेतु प्रस्तुत करना आवश्यक होगा ।

Scanned with OKEN Scanner

For safety of ASU drugs

Sl. no. 1	Catagory 2	Ingredient (S) 3	Indication (S) 4	Safety study 5	Experience/Evidence of Effectiveness 6	
					Published literature	Proof of ef-fectiveness
1.	Ayurveda, Siddha and Unani drugs given in 158B as referred in 3(a)	As per text	As per text	Not Required	Required	Not Required
2.	Any change in dosage form of ASU drugs as described in 3(a) of Drugs and Cosmetics Act, 1940	As per text	As per text	Not Required	Required	Not Required
3.	Ayurveda, Siddha and Unani drugs referred in 3(a) to be used for new indication	As per text	New	Not Required	If Required	Required
1.	Patent or proprietary medicine	As per text	Textual rationale	Not required	Of ingredients	Pilot study as per relevant protocol for ASU drugs
2.	ASU drugs with any of the ingred-ients of schedule E(1) of the Drugs and Cosmetics Act 1940	As per text	Existing	Required	Required	Required

For issue of license of balya and poshak medicine

(i) Photo-copy of the textual reference of ingredients used in the formulation as mentioned in the book of 1st schedule.

(ii) Conduct safety studies if the product contains any of the ingredients as specified in Schedule E(1).

(iii) For textual indications the safety and effectiveness study is not required.

For issue of license with respect to Saundarya Prasadak

(i) Submit photo-copy of the textual reference of ingredients used in the formulation as mentioned in the book of 1st schedule.

(ii) Conduct safety studies, in the case the formulation contains of any of the ingredients as specified in the schedule E (1).

(iii) For textual indications the safety and effectiveness study is required.

Scanned with OKEN Scanner

For issue of license with respect to medicine Aushadh Ghana extract of medicinal plant (dry or wet)

Serial no. 1	Catagory 2	Ingredient (S) 3	Indication (S) 4	Safety study 5	Experience/Evidence of Effectiveness 6	
					Published literature	Proof of effectiveness
1.	(A) Aqueous	As per text	As per text	Not Required	Not Required	Not Required
2.	(A1) Aqueous	As per text	New** indication	Not Required	Not Required	Required
3.	(B) Hydro Alcohol	As per text	As per text	Not Required	If Required	Not Required
4.	(B1) Hydro Alcohol	As specified	New** indication	Required	If Required	Required
5.	Other than Hydro/ Hydro Alcohol	As specified	As specified	Required acute, chronic mutagenicity and tertatogenicity	If Required	Required

158 C. Form of free sale certificate and non-conviction certificate

ये Online e-AUSHADHI portal के द्वारा किया जायेगा।

159. Cancellation and suspension of licences

160. Identification of raw materials

कच्ची औषधियों के genuineness के लिए इनकी परीक्षण कराना आवश्यक है जिसका record भी रखा जायेगा।

Part XVI (A)

Approval of Institutions for carrying out tests on ASU Drugs and Raw Materials used in their manufacture on behalf of licenses for manufacture for sale of Ayurvedic, Siddha and Unani drugs.

इसमें ऐसे संस्थाओं को लाइसेंस देने हेतु जो विभिन्न प्रकार के परीक्षण, कच्ची औषधि तथा इनसे बने उत्पाद पर करेंगे उनके हेतु पर्याप्त दिशा निर्देश तथा इसमें प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के उपकरण तथा रसायन (chemicals) का वर्णन किया गया है। इनका वर्णन संक्षेप में किया जा रहा है।

160 A. Application for grant of approval for testing Ayurvedic, Siddha and Unani drugs. ये Form 47 में दिया जायेगा।

160 B. Form in which approval to be granted for carrying out tests on ASU drugs on behalf of licenses for manufacture of ASU and conditions for grant or renewal of such approval. ये Form 48 में दिया जायेगा।

(1 A) लाइसेंस Application प्राप्त होने के या short coming के पूरा करने की तिथि से 2 माह के अन्दर निर्गत किया जायेगा।

160 C. Duration of approval

एक बार वशर्ते अन्य कोई शर्त न हो तो तीन साल तक मान्य होगा

160 D. Condition of approval

160 E. Inspection before grant of approval

160 F. Report of inspection

160 G. Procedure of approving authority

160 H. Application after rejection

160 I. Renewal

160 J. Withdrawal and suspension of approvals

160 K. Information to be uploaded by the Licencee on online portal- [e-AUSHADHI portal के माध्यम से समस्त Information [प्रार्थना पत्र, test आदि] समय समय पर upload करना आवश्यक है तथा यह सम्बन्धित लाइसेन्सिंग अधिकारी द्वारा सत्यापित किया जायेगा।]

Part XVII

(Labelling, Packing and Limit of Alcohol in Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs.

161. Labelling, packing and limit of alcohol

इस नियम के अनुसार आयुर्वेदिक औषधि के container या package पर स्पष्ट रूप से निम्न का प्रदर्शन होगा–

इसमें प्रयुक्त घटक द्रव्य का नाम (botanical name सहित), प्रयोज्य अंग, उनकी मात्रा तथा सन्दर्भ ग्रन्थ (यदि घटक द्रव्य ज्यादा है तो उन्हें अलग से package के साथ रखा जायेगा)। यदि इसमें Schedule E(1) की औषधि पड़ी है तो **Caution: to be taken under medical supervision** हिन्दी तथा अंग्रेजी में लिखा जायेगा उपरोक्त के अतिरिक्त निम्न भी स्पष्ट रूप से print कर या लिखकर प्रदर्शित की जायेगी या package के साथ रखी जायेगी

Scanned with OKEN Scanner

1. औषधि का नाम
2. घटक द्रव्यों का सही विवरण (weight, measure या number सहित)
3. निर्माण का ढंग
4. लाइसेन्स नम्बर
5. बैच नम्बर या लाट नम्बर
6. निर्माण की तिथि (Date of manufacture)
7. आयुर्वेदिक, यूनानी सिद्ध औषधि शब्द लिखा होना चाहिए
8. For external use only यदि external use के लिए है तो
9. यदि डाक्टर को sample दी है तो physician sample not for sale लिखा होना चाहिए।

X(a) Preparation (Asavas) with high content of alcohol as base

Name of drug	Maximum size of packing
(i) कर्पूरासव	15 ml
(ii) अहिफेनासव	15 ml
(iii) मृगमदासव	15 ml

IX(b) Preparation containing self generated alcohol

Name of the drug	Max. content of alcohol (ethylalcohol v/v)	Max. size of packing
(i) मृतसंजीवनी	16%	30 ml.
(ii) महाद्राक्षासव	16%	120 ml.

161 A. Exemption in labelling and packing,provisions for export of Ayurvedic (including Siddha) and Unani drugs

161 B. The date of expiry of ASU drugs

इसका वर्णन सर्वोर्यता अवधि प्रकरण में किया जा चुका है।

Part XVIII

Government Analyst and Inspectors for Ayurvedic (including Siddha) or Unani Drugs

इस part में वर्णित नियमों में Inspector के qualification तथा उनकी duties, Analyst के qualification तथा उनके कार्य एवं PLIM के कार्यों का वर्णन किया गया है।

162. Duties fo Inspectors specially authorised to inspect the manufacture of Ayurvedic (including Siddha) or Unani drugs

162 A. Qualifications of the State Drug Licensing Authority for Licensing of ASU drugs

163. Procedure for dispatch of sample to Government analyst and its receipt by the Government Analyst

(Pharmacopacial laboratory for Indian Medicines to Function as Central Drugs Laboratry for the purpose of testing or analysis of ASU drugs)

163 A. Functions

1. *To develop pharmacopoeial standards and draft monograph and amendments alongwith standardized methods for the ASU drugs*
2. *To act as Central Appellate Drug Laboratory for testing of ASU drugs*
3. *To analyse or test such samples of ASU drugs as may be sent to it under sub-section (2) of section 11 or under sub-section (4) or section 25 of the Act*
4. *To maintain reference museum and herbarium for the drugs used in ASU system*
5. *To run a training centre for quality control methods in the ASU systems of medicine*

163 C. Despatch of samples for test or analysis

163 D. Recording of condition of seals

163 E. Report of result of test or analysis

163 F. Fees

163 G. Signature on certificates

164. Method of test or analysis to be employed in relation to ASU drugs

165. Qualification of Government Analyst

166. Duties of Government Analyst

167. Qualifications of Inspector

Part XIX

Standards of Ayurvedic, Siddha and Unani drugs

168. Standards to be complied with in manufacture for sale or for distribution of ASU drugs

(आयुर्वेदिक फार्माकोपिया आफ इंडिया में वर्णित मानक अनुसार होना चाहिए तथा आसव/अरिष्ट में उपस्थित एल्कोहल की upper limit 12% v/v से ज्यादा नहीं होना चाहिए या केन्द्र सरकार के नोटीफिकेशन के अनुसार होना चाहिए।

Scanned with OKEN Scanner

169. Permitted excipients - Permitted Excipients जैसे additives, preservatives, antioxidants flavouring agents, chelating agent etc. Indian Pharmacopoeia (IP), Prevention of Food Adulteration Act, 1940 तथा Bureau of Indian Standard Act, 1986 Permit standard के अनुरूप कुछ condition के साथ प्रयोग किये जा सकते है।

इसके अतिरिक्त निम्न schedule आयुर्वेदिक औषधियों से सम्बन्धित है।

Schedule E(1)–List of poisonous substance कुल 21 का वर्णन है–

1. अहिफेन
2. अर्क
3. भल्लातक
4. भाँग
5. दन्ती
6. धतूरा
7. गुञ्जा बीज
8. जयपाल बीज
9. करवीर
10. लाङ्गली
11. पारसीक यवानी
12. वत्सनाभ विष्मुष्टि
13. शृंगी विष
14. सर्प विष
15. गौरीपाषाण
16. हरताल
17. मनःशिला
18. पारद
19. रस कर्पूर
20. तुत्थ
21. हिंगुल

Schedule T. GMP of ASU drugs वर्णित है

Schedule Y. Clinical trial का वर्णन है।

विमर्श– The Drugs and Cosmetic Act 1940 तथा The Drugs and Cosmetics Rules का विस्तृत अध्ययन करने हेतु https:// india code.nic.in को देखना चाहिए ।

New act related to Drug and Device– At present in the Drugs and cosmetics Act 1940. Definition of drug, device as well cosmetics is given. At present the Drug Rule 1945, Medical Devices Rule, 2017 and Cosmetics Rule 2020 has been implemented. Related part of Drug Rule 1945 and Cosmetic Rule 2020 has been described in earlier chapter and in this chapter. Medical Device Rule 2017 is completed in twelve chapters and eight schedule. In which definition of device Licensing Authority, Central Medical Devices testing laboratory, Regulation of Medical Device, Authorities officers and Bodies, Import of medical devices and its labelling, evaluation of new in Vitro diagnostic medical device etc. are described. However draft of New Drugs, Medical Devices and Cosmetics Bill, 2022 has been brought before the Parliament. After that it will replace the existing Drug Act. This bill comprises of seven chapters and nine schedule. ASU drugs are described in Chapter V namely provisions relating to Ayurveda, Siddha, Sowa Rigpa Unani and Homeopathic Drugs and in Schedule V the list of books is given.

औषधि निर्माणशाला (Schedule T के अनुसार)

भारत सरकार के G.S.R. 198(E) दिनांक 7 मार्च 2003 के द्वारा The Drugs and Cosmetics Rule 1945 में एक संशोधन किया गया। इस संशोधन के द्वारा Rule 155 B को Rule 155 A के पश्चात जोड़ा गया तथा इस नियम, Rule 155 B, के तहत आयुर्वेद, सिद्धा और यूनानी औषधियों में अच्छी निर्माण पद्धति का अवार्ड प्रमाण पत्र (Award of Certification of G.M.P.) का प्रावधान किया गया है। इस G.M.P. Certificate को आवेदक के आवेदन के पश्चात, 3 माह के अन्दर Form 26E-I में निर्गत किया जाता है। विदित हो कि यह G.M.P. Certificate इसलिए महत्वपूर्ण है कि आयुर्वेदिक, सिद्धा या यूनानी औषधियों के Sale, Distribution आदि हेतु जो निर्माण लाइसेंस दिये जाते हैं उसके लिए औषधि निर्माणशाला का G.M.P. प्रमाणित होना आवश्यक है।

आयुर्वेदिक, सिद्धा तथा यूनानी औषधियों के लिए अच्छी विनिर्माण पद्धति (G.M.P.) का वर्णन schedule T के अन्तर्गत 2 Part में निम्न उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया गया है–

(i) औषधियों के विनिर्माण में प्रयुक्त कच्ची सामग्री प्रमाणिक है, विहित क्वालिटी की है तथा संदूषण से मुक्त है;

(ii) विनिर्माण (manufacturing) की प्रक्रिया ऐसी है, जो मानकों को बनाए रखने के लिए विहित की गई है;

(iii) पर्याप्त क्वालिटी नियन्त्रण उपाय किये जाते हैं;

(iv) ऐसी विनिर्मित औषधि जो विक्रय के लिए निकाली जाती है, ग्राह्य गुणवत्ता की है;

(v) उपरोक्त उद्देश्यों को पूरा करने के लिए प्रत्येक licenses औषधियों के विनिर्माण के लिए ऐसी Methodology और Procedure विकसित करेगा जिसका निर्देशिका के रूप में दस्तावेजीकरण होगा और निर्देशार्थ तथा निरीक्षण के लिए रखा जायेगा। तथापि भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद (C.C.I.M.) अधिनियम, 1970 के अधीन रजिस्टर्ड वैद्य, सिद्ध और हकीम तथा जो स्वयं तैयार करके अपने मरीजों को औषधियाँ बाँटते हैं और ऐसी औषधियों का बाजार में विक्रम नहीं करते हैं, वे इसके क्षेत्र (G.M.P.) से छूट प्राप्त है।

Schedule T दो भाग में पूर्ण है। भाग–1 में अच्छी विनिर्माण पद्धतियाँ (G.M.P.) का वर्णन किया गया है जबकि भाग–2 में यन्त्र/उपकरण की सूची (कल्पना अनुसार) तथा अपेक्षित न्यूनतम विनिर्माण स्थान (minimum space required for manufacturing) का वर्णन किया गया है।

भाग-1

अच्छी विनिर्माण पद्धतियाँ (Good Manufacturing Practices)

औषधि निर्माणशाला में निम्न हेतु पर्याप्त स्थान होना चाहिए–

(i) कच्ची सामग्री को प्राप्त करना और इसका भंडारण

(ii) विनिर्माण प्रक्रिया क्षेत्र

(iii) क्वालिटी नियन्त्रण अनुभाग

(iv) तैयार माल भण्डार

(v) कार्यालय

(vi) अस्वीकृत माल/औषधि भंडार

Scanned with OKEN Scanner

(2) Raw material of mineral origin e.g. गोदन्ती, टंकण आदि

(3) Raw material from animal source e.g. मृगशृंग आदि

(4) Fresh herbs जैसे फूल, फल, पत्ती आदि

(5) Dry herbs or plants part जैसे दन्तीमूल, जीरा, अश्वगन्धा आदि

(6) Excipients etc. जैसे starch आदि

(7) Volatile oil/perfumes/flavours e.g. पिपरमिन्ट तैल, यूकेलिप्टस तैल आदि

(8) Plant concentration/extracts and exudates/resins जैसे गुग्गुल हींग आदि

औषधियों के container पर उनका नाम लिखकर रखना चाहिए। कच्ची औषधियों के सन्दर्भ में **"first come first go"** की प्रक्रिया का पालन करना चाहिए अर्थात जो पहले आवे उसे निर्माण में पहले प्रयोग करना चाहिए।

विशेष–The Drugs and Cosmetics Rule 1945 के नियम के अनुसार जिस वर्ष कच्ची औषधि खरीदी जायेगी उसको उसी वित्त वर्ष के अन्त में खत्म कर उसके utilization का प्रमाणपत्र इसी के अगले वित्त वर्ष में 30 जून तक National Medicinal Plant Board या इसके द्वारा अधिकृत एजेंसी को जमा करना अनिवार्य होगा।

पैकेजिंग सामग्री हेतु भण्डार–इसमें packaging material जैसे काँच की शीशी, बोतल, capsule आदि का भण्डारण समुचित रूप से किया जायेगा।

तैयार माल भण्डार–निर्मित औषधियों के पैक कर गुणवत्ता नियन्त्रण से पूर्व उन्हें "Quarantine" area में रखा जायेगा। गुणवत्ता नियन्त्रण पश्चात उन्हें अनुमोदित स्टाक क्षेत्र में रखा जायेगा जहाँ से इनकी वितरण सुनिश्चित की जायेगी।

कार्यकरण स्थान–कार्यकरण स्थान में यन्त्र/उपकरण को लगाने के लिए पर्याप्त स्थान होना चाहिए तथा इस प्रकार जगह की व्यवस्था होनी चाहिए कि जिससे कार्य के दौरान औषधियों के आपस में मिल जाने की संभावना न हो। इस प्रकार की संभावनाओं से बचने के लिए यह उपयुक्त होगा कि विभिन्न श्रेणी की औषधियों का निर्माण अलग-अलग किया जाय।

कर्मचारियों का स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सुविधायें–औषधिशाला में कार्यरत सभी कर्मचारियों का स्वस्थ होना आवश्यक है तथा ये सांसर्जिक रोग (contagious diseases) से मुक्त होने चाहिए। इन कर्मचारियों का नियमित अन्तराल पर स्वास्थ्य परीक्षण करना चाहिए। निर्माण के दौरान ये वर्दी में कार्य करेंगे जिसके लिए एक changing room महिला तथा पुरूष के लिए अलग-अलग होंगे। अलग-अलग शौचालय की भी व्यवस्था होगी। First aid का उचित इंतजाम होना चाहिए।

यन्त्र एवं उपकरण (मशीनरी और उपस्कर)–विनिर्माण हेतु प्रयुक्त यन्त्र एवं उपकरण, निर्माण के प्रकार तथा उत्पाद की प्रकृति के अनुसार, निम्न प्रकार के उपलब्ध होंगे–

1. हस्त प्रचालित (Manually operated)
2. अर्द्ध स्वचालित (Semi automatic)
3. पूर्ण रूप से स्वचालित (Fully automatic)

ये यन्त्र विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाओं जैसे crushing, grinding, boiling, mashing, roasting, filling,

labelling, packing आदि हेतु प्रयोग किये जायेंगे। प्रत्येक मशीन की सफाई, अनुरक्षण (maintaining) आदि की कार्यचालन प्रक्रिया (SOP) लिखी रहनी चाहिए।

इसके पश्चात निर्मित औषधियों के निर्माण का, उनके विवरण तथा उसके बाजार शिकायतों (market complaint) का अभिलेख का वर्णन किया गया है। बैच विनिर्माण अभिलेख (Batch Manufacturing Records) शास्त्रोक्त (Classical) या पेटेंट और सांपत्तिक औषधि (Patent Proprietary Medicine) का ध्यान न करते हुए अर्थात् प्रत्येक प्रकार की निर्मित औषधि का रिकार्ड रखना होगा। ये रिकार्ड निम्न होंगे–

(a) कच्ची औषधि की सूची तथा भंडार से प्राप्त मात्रा

(b) निर्माण के दौरान किये गये परीक्षण जैसे Organoleptic (यथा रूप, रस, गन्ध, वर्ण) Physico chemical test. ये in house या API के अनुसार किये जायेंगे।

पूर्ण रूप से Quality Control परीक्षण होने के पश्चात इन्हें Market Distribution के लिए भेजा जायेगा। इसका record औषधियों के catagory यथा चूर्ण, अवलेह, वटी आदि के अनुसार अलग-अलग होगा। इनके रिकार्ड रखने का समय उस बैच में निर्मित औषधियों के date of expiry तक होगा।

बाजार में विक्रय किये गये उत्पादों से यदि कोई शिकायत आती है, तो निर्माता इसके लिए एक रजिस्टर रखेगा जिसमें इसे लिखा जायेगा। तथा इसके समाधान हेतु की गई कार्यवाही का विवरण भी रखना होगा। प्रत्येक विनिर्माता द्वारा औषधियों के उपयोग के फलस्वरूप किसी प्रतिकूल प्रतिक्रिया (Adverse Reaction) की रिपोर्ट हेतु एक अलग रजिस्टर रखेगा। विनिर्माता द्वारा किसी Adverse Reaction का अन्वेषण (Research) यह निष्कर्ष निकालने के लिए करेगा कि वह उत्पाद में किसी कमी के कारण है तथा क्या ये शास्त्रोक्त वर्णित है या किसी नये प्रकार की है।

1.1 N क्वालिटी नियन्त्रण–प्रत्येक अनुज्ञप्तिधारी (licenses), अपने औषधिशाला के परिसर में या सरकार द्वारा अनुमोदित परीक्षण प्रयोगशाला के माध्यम से सभी कच्ची औषधियों, अंतः प्रक्रिया (in process quality control) तथा निर्मित औषधियों (final product) की जाँच करायेगा। जाँच करने हेतु Parameter API के अनुसार Standard का होगा।

क्वालिटी नियन्त्रण अनुभाग में निम्न सुविधायें होगी–

1. यह 150 वर्ग फुट में स्थापित होगा।
2. कच्ची औषधि के पहचान हेतु Reference books तथा Reference sample रखे जाने चाहिए।
3. विभिन्न प्रक्रियाओं के रिकार्ड रखे जाने चाहिए।
4. तैयार उत्पादों, प्रत्येक बैच, के नमूने Date of expiry तक रखे जायेंगे।
5. जिस स्थिति में औषधियाँ रखी जायेगी उनकी Monitaring की जायेगी।
6. सवीर्यता अवधि (निधानी आयु/Self life) का रिकार्ड रखा जायेगा।
7. यदि पेटेन्ट या प्रापरइटरी औषधि निर्मित किये जा रहे हैं तो उनका निजी विनिर्देश और नियन्त्रण निर्देश प्रदान करेंगे।
8. विशिष्ट प्रक्रियाओं जैसे भावना, पुट आदि के प्रत्येक प्रक्रिया का रिकार्ड रखा जायेगा।
9. फार्माकोपिया (A.F.I.) में वर्णित identity, purity तथा strength हेतु मानकों का पालन किया जायेगा।

10. सभी कच्ची सामग्रियों का संदूषण कम करने की दृष्टि से fungal bacteria संदूषण के लिए मानीटर किया जायेगा।
11. इस सेक्शन में कम से कम निम्न व्यक्ति होंगे–
    (i) एक व्यक्ति CCIM (1970 का 48) की अनुसूची 2 के अधीन मान्यता प्राप्त आयुर्वेद अर्हता।
    (ii) एक Chemist तथा Botamist जिसके पास मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक (विज्ञान), फार्मेसी या फार्मेसी (आयुर्वेद) का डिग्री हो।
    (iii) Part C में वर्णित यन्त्र/उपकरण उपलब्ध होने चाहिए ।
    (iv) औषधि निर्माण शाला के परिसर गुणवत्ता नियन्त्रण यूनिट होगी । विकल्प के रूप में Rule 160-A के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त लैब से भी कराये जा सकते हैं तथा इनका रिकार्ड रखना होगा।

भाग-2*

(अ) आयुर्वेदिक, सिद्ध पद्धति की औषधियों के विभिन्न प्रवर्गों के विनिर्माण के लिए सिफारिश की गई अपेक्षित मशीनरी, उपस्कर और न्यूनतम विनिर्माण परिसरों की सूची।

औषधि के एक प्रवर्ग के लिए उपदर्शित एक मशीन औषधि के अन्य प्रवर्ग के विनिर्माण के लिए भी उपयोग की जा सकेगी। उसी प्रकार कुछ विनिर्माणकारी क्षेत्र अर्थात् चूर्णन, भट्टी और द्रव अवलेह पाक की पैकिंग इन मदों के लिए भी हो सकेंगे।

क्रम सं.	औषधि का प्रवर्ग	अपेक्षित न्यूनतम विनिर्माण स्थान	वह मशीनरी/उपस्कर जिसकी सिफारिश की गई है
1	2	3	4
		प्रत्येक क्रियाकलाप के लिए 1200 वर्ग फिट का पृथक केबिन विभाजन सहित, आच्छादित क्षेत्र। यदि यूनानी औषधियाँ उसी परिसर में विनिर्मित की जाती है तो 400 वर्ग फिट का अतिरिक्त क्षेत्र अपेक्षित होगा।	
1.	अंजन/पिष्टी	100 वर्ग फुट	खरल/यंत्रीकृत/मोटरीकृत खरल एण्ड रनर/ बाल मिल चालनी/छलनी।
2.	चूर्ण/नस्य/मंजन/लेप क्वाथ चूर्ण	200 वर्ग फुट	पेषक/वियोजन/संपेषक/पाउडर मिश्रण यंत्र/ चालनी/शिफ्टर।
3.	गोली/वटी/गुटिका	100 वर्ग फुट	बाल मिल, द्रव्य मिश्रण यंत्र/पाउडर मिश्रण

Scanned with OKEN Scanner

	सर्पियां और टिंक्चर		पेंच/क्रणिकायन, शुष्कक, गोली संपीडन मशीन, गोली चटी कटिंग मशीन, स्टेनलेस स्टील, टिंक्चरों की दशा में भंडारण के लिए आधान और विलेपित की चीनी विलेपित पालिशपैन यंत्रीकृत चाटी (गुग्गुल के मिश्रण के लिए) जहाँ अपेक्षित हो।
4.	क्षार/पक्व क्षार/पर्पटी/लवण, भस्म/सत्व/सिंदूर कर्पूर/दग्धपुट भस्म	150 वर्ग फुट	भट्टी, कढ़ाई/स्टेनलेस स्टील बर्तन/पतीला फ्लास्क, मुलतानी मिट्टी/पेरिस प्लास्टर, ताम्र छड़, मिट्टी (विद्युत परिचालित) एण्ड/धार रनर, निष्कासक पंखा, लकड़ी/स्टेनलेस स्टील, स्पेचूला।
5.	काजल	100 वर्ग फीट	काजल के संग्रहण के लिए मिट्टी के दीप, त्रिरोलर मिल, एण्ड रनर, चालनी, स्टेनलेस स्टील पतीला, भरण/पैकिंग और विनिर्माण कक्ष में निष्कासक पंखा और पराबैंगनी दीपों की व्यवस्था होगी।
6.	कैप्सूल	100 वर्ग फुट	वातानुकूलक, निरार्द्रीकारक, आद्रता मापी, तापमापी, कैप्सूल भरण मशीन और रासायनिक तुला।
7.	ऑइंटमेंट/मरहम पसाई	100 वर्ग फुट	ट्यूब भरण मशीन, क्रिम्पिंग औषधि/ऑइंटमेंट मिश्रण यंत्र, एण्ड रनर/मिल (जहाँ अपेक्षित हो) स्टेनलेस स्टील भंडारन आधान, स्टेनलेस स्टील पतीला।
8.	पाक/अवलेह/खांड मोदक/लवायम	100 वर्ग फुट	भट्टी अनुभाग जिसमें निष्कासक पंखा लगा होगा और जो फ्लाई प्रूफ होना चाहिए, लोहे की कढ़ाई/स्टेनलेस स्टील पतीला और स्टेनलेस स्टील भंडारन आधान।
9.	पानक शर्बत/प्रवाही क्वाथ/मानमात्रु	150 वर्ग फुट	टिक्टम प्रेस, निष्कासक पंखा लगा और फ्लाई प्रूफ, भट्टी अनुभाग, बोतल धोवल मशीन, फिल्टर प्रेस/गुरूत्वीय फिल्टर, द्रव भरण टंकी जिसमें टोंटी लगी हो/द्रव भरण मशीन, पी.पी. कार्पिंग मशीन।
10.	आसव/अरिष्ट	200 वर्ग फुट	वहीं जो ऊपर वर्णित है किण्वन टंकी आधान

			और आसवन संयंत्र जहाँ आवश्यक हो। फिल्टर प्रेस।
11.	सुरा	100 वर्ग फुट	वहीं जो ऊपर वर्णित है और साथ ही आसवन संयंत्र और अंतरण यंत्र।
12.	आर्क/तिनिर	100 वर्ग फुट	द्रव संमर्दन टंकी, आसवन संयंत्र, द्रव भरण टंकी जिसमें टोंटी लगी हो/गुरुत्वीय फिल्टर/फिल्टर प्रेस, दृश्य निरीक्षक बॉक्स।
13.	तैल/घृत/नेय	100 वर्ग फुट	भट्टी, कढ़ाई/स्टेनलेस स्टील पतीला, स्टेनलेस स्टील, भंडारन आधान, छानन उपस्कर, भरण टंकी (जिसमें टोंटी लगी हो)/द्रव भरण मशीन।
14.	आश्च्योतन/नेत्र मलहम/पनीर, गर्म कर्ण बिंदु, नासा बिंदु	100 वर्ग फुट	गर्म वायु चुल्हा, जो ताप अनुचालित नियंत्रण से विद्युत द्वारा ऊष्मायित होगा, केतली, उपयुक्त मिश्रण व्यवस्था, सहित जो ग्यास या विद्युत द्वारा ऊष्मायित होगी। कोलेसन मिल या मरहम मिल, ट्यूब भरण उपस्कर, स्टेनलेस स्टील या अन्य उपयुक्त पदार्थ की मिश्रण और भंडारन टंकियाँ, निष्पादित काँच की फत्रल सेट्ज फिल्टर या फिल्टर केंडल, द्रव भरण उपस्कर, आटोक्लेव।
15.	प्रत्येक विनिर्माण एकक में भट्टी, फर्नेस ब्वयॉलर, पुट इत्यादि के लिए पृथक क्षेत्र होगा। इसमें समुचित संवातन, धुँए का निकास, मक्खी-मच्छर, कीड़ों, धूल का निवारण होगा। भट्टी अनुभाग में टिन की छत हो सकेगी।	200 वर्ग फुट	

Food safety and Standards Authority of India (FSSAI)

FSSAI was established on 5 September 2008 under food Safety and Standards Act 2006 which consolidates various acts and order that have hitherto handled food related issues in various Ministries and Department. FSSAI has been created for laying down science based standard for articles of food and to regulate their manufacture, storage,

Scanned with OKEN Scanner

distribution, sale and import to ensure availability of safe and wholesome food for human consumption. FSSAI has its head quarters at New Delhi.

Structure of FSSAI

Food authority it consists of a chair person and twenty two members. The Central Government constitute a selection committee for the selection of chair person and members. There shall be a chief executive officer of the food authority which is to be appointed by Central Government.

- Scientific Panels

(Consists of independent scientific experts)

Scientific committee - consists of the chair persons of scientific panels

- Central Advisory committee– It advise the food Authority on

(a) The performance of its duties under this section and in particular in drawing up of a proposal for the food Authority's work programme.

(b) On the prioritisation of work

(c) Identifying potential risks

(d) Pooling of knowledge, and

(e) Such other functions as may be specified by regulation

Functions of FSSAI

1. Framing of regulation to lay down the standard and guidelines related to food article and specifying appropriate system of enforcing various standards that notified.
2. Laying down mechanisms and guidelines for acereditation of certification bodies engaged in certification of food safety management system for food business.
3. Laying down procedure and guidelines for acereditation notification of the accredited laboratories.
4. Area which are involved in the direct and indirect bearing of food safety and nutrition FSSAI has to provide scientific advice and technical support to Government (both Central and State) in the matters of framing the policy and rules, for this area.
5. Data collection regarding food consumption, incidence and prevalence of biological risk, contaminants, residue of various contaminants, in food product and identification of emerging risk.
6. Disseminating information and promoting awareness about food safety and nutrition. Publications on safe food for different purposes have been published by FSSAI. Here a short description of three books is given–

The pin book– It has been developed especially for kitchens in Indian homes so that the food prepared is safe, hygienic and nutritious. It deals different aspects of food in nine sections describing buying of food, food storage, preparation and cooking of food, serving food, packaging food, maintenances of hygiene and sanitation in the kitchen along with management of waste.

The orange book– The orange book guides, about safe and nutritions food at the work place, which is a nation wide campaign to help people to eat safe and eat right while at work. This book is completed into 3 parts. The first parts covers HR/Administration in order to create a system and an enabling environment to ensure food safety and nutrition for all employee at the work place. The second part cover canteen or cafeteria for servicing safe and whole some food. Third part is concerned about employee telling dos and don'ts useful tips along with suggestions to eat and stay healthy at work place.

The purple book– This book provide general recommendation of food in disease condition like diabetes, hypertension etc.

(Source-https://www.fssai.gov.in)

FDA Approval Drugs

FDA (Food and Drug Administration) approval of a drugs means that data on the drugs effect have been reviewed by CDER (Centre for Drug Evaluation and Research) and the drug is determined to provide benefits that out weigh its known and potential risks for the indended population. The following steps are followed for approval of drugs–

1. Testing of during by company
2. Evidence for safety efficacy of drug send to CDER
3. Review by CDER
4. Establishing of drug's health benefits outweigh its know risk.
5. Drug is approved for sale

Its is summerised as follows :

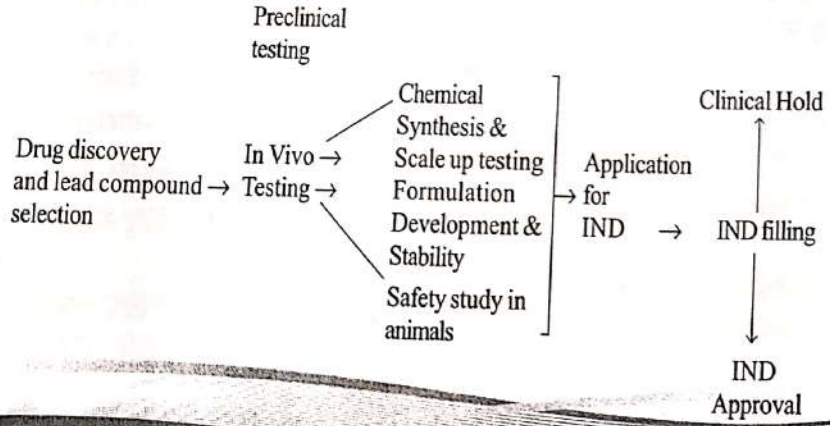

Scanned with OKEN Scanner

After IND Approval clinical trial data are obtained as follows.

Phase I Study	→	Phase II Study	→	Phase III study

Filing of NDA

FDA Approval	FDA Conditional Approval	FDA Dis approval
Market →	Post-Approval Safety reports to FDA	

(Courtesy–Remington : Essentials of Pharmaceutics, Edited by Linda Felton)

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. GMP का वर्णन किस में Schedule है—
   a. Schedule T b. Schedule Y c. Schedule P d. Schedule A
2. 33 EEA सम्बन्धित है—
   a. Misbranded drug b. Adulterated drug **c. Spurious drug** d. कोई नहीं
3. आयुर्वेदिक औषधियों की सवीर्यता अवधि किस Rule से सम्बन्धित है?
   a. 160 b. 159 c. 152 **d. 161**
4. चूर्ण कल्पना निर्माण हेतु आवश्यक स्थान का क्षेत्रफल है?
   a. 100 वर्ग फुट b. 150 वर्ग फुट **c. 200 वर्ग फुट** d. 250 वर्ग फुट
5. FSSAI का गठन कब हुआ था?
   a. 5 Sep. 2008 b. 5 Sep. 2007 c. 5 Sep 2009 d. 5 Sep 2010

अध्याय 15

वटी कल्पना

आचार्य शार्ङ्गधर के द्वारा वर्णित शार्ङ्गधर संहिता के मध्यम खण्ड के अध्याय सात में वटी कल्पना का वर्णन किया गया है। जहाँ पर इस कल्पना के अन्तर्गत वटक, गुटिका, वटी, मोदक, वटिका, पिण्डी, गुड़ तथा वर्ति शब्द का उल्लेख किया गया है तथा इन्हें पर्याय भी कहा गया है। ये सभी (Solid dosage form) है जिनके आकार (Size & shape) तथा भार (Weight) में भिन्नता होती है। चरक संहिता के चिकित्सास्थान में विभिन्न गुटिकाओं तथा वटक का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे वृष्य गुटिका (चि. 2/4/32), हिङ्वादि गुटिका (चि. 5/84), क्षार गुटिका (12/45) तालीशादिगुटिका, चित्रकादि गुटिका (15/97) आदि तथा वटक जैसे मण्डूर वटक (16/75 तथा 16/104) यहाँ पर आचार्य ने गुटिका को कोलवत, बदर तुल्य, स्थूल उदुम्बर समान बनाने का उल्लेख किया है तथा वटक को उदुम्बर समान या गुड़ के समान निर्माण का वर्णन किया है। पिण्डी, पिण्ड समान आकृति तथा गुड़ विशेष रूप से गुड़ द्वारा निर्मित होने के कारण तथा आकार में बड़े होने के कारण इनकी संज्ञा गुड़ की होती है।

वर्ति किनारों पतली तथा बीच में मोटी (स्थूल) होती है तथा देखने में यवाकर होती है। आयुर्वेद में प्रचलित वटियाँ घटक द्रव्य के अनुसार दो वर्गों में विभाजित की जा सकती है—

1. रस औषधियों तथा काष्ठ औषधियों से युक्त यथा संजीवनी वटी आदि।
2. केवल काष्ठ औषधियों से युक्त यथा एलादि वटी, लवंगादि वटी आदि।

ऐसी वटियाँ जिनमें रस औषधियाँ घटक द्रव्य में होती है उनकी वटियाँ सामान्य रूप से छोटी साइज/भार (Weight) जैसे संजीवनी वटी गुञ्जाभा अर्थात 125 मिग्रा. की बनाई जाती है।

ऐसी वटियाँ जिनके घटक द्रव्यों में केवल काष्ठ औषधियाँ होती है उनक वटी/गुटी बड़े आकार/भार की बनाई जाती है यथा मरिचादि गुटिका-शाण प्रमाण (3 ग्रा.) की बनाने का उल्लेख मिलता है।

संहिताओं में वर्णित वटी, वटिका, वटक आदि के उदाहरण निम्न है—

क्रम सं.	नाम	उदाहरण
01.	वटी	संजीवनी वटी
02.	वटिका	गुड़वटिका, आरोग्यवर्द्धनी वटी (र.र.स. कुष्ठ)
03.	वटक	मण्डूर वटक, सूरण वटक
04.	गुटिका	चित्रकादि गुटिका, मरिचादि गुटिका
05.	मोदक	वृद्धदारु मोदक, मदनान्द मोदक
06.	गुड़	कल्याणक गुड़, श्रीमानबाहुशाल गुड़
07.	पिण्डी	सूरण पिण्डी
08.	वर्ति	चन्द्रोदय वर्ति

Scanned with OKEN Scanner

वटी निर्माण विधि

चरक संहिता में वटी निर्माण से सम्बन्धित निम्न सन्दर्भ का उल्लेख प्राप्त होता है—

1. **भावितं मातुलुङ्गस्य चूर्णमेतद्रसेन वा ।** (च.चि. 5/83-84)

2. **भावितं गुटिका कृत्वा सुपिष्टां कोलसंमिताम् ।** (च.चि. 5/88)

उपरोक्त दोनों सन्दर्भ में भावना देकर गुटिका निर्माण का उल्लेख किया गया है । इसके अतिरिक्त अग्नि संयोग से भी गुटिका निर्माण का सन्दर्भ मिलता है । यथा—

कल्पयेद्वटिका चैतच्चूर्णं पक्त्वा सितोपलाम् । गुटिका ह्याग्नि संयोगाच्चूर्णाल्लघुतराः स्मृताः ॥
(च.चि. 9/148)

इस प्रकार वटियाँ/गुटिका भावना देकर तथा अग्नि संयोग इन दो विधियों से बनाई जाती है ।

आ. शार्ङ्गधर के अनुसार वटी निर्माण विधि निम्न है—

लेहवत्साध्यते बह्वौ गुडो व शर्करा तथा । गुग्गुलुर्वा क्षिपेत्तत्र चूर्णं तन्निर्मिता वटी ॥
(शा.मा. 7/2)

अग्नि पर गुड, शर्करा या गुग्गुलु को लेहवत् होने तक पाक करते हैं । तथा जब यह लेहवत हो जाय तो इसमें औषधियों के सूक्ष्म चूर्ण डालकर अच्छी प्रकार मिलाकर वटी का निर्माण कर लेते हैं ।

कुर्यादवह्निसिद्धेन क्वचित गुग्गुलुना वतीम् । द्रवेण मधुना वापि गुटिकां कारयेत् बुधः ॥
(शा.म. 7/3)

बिना अग्नि संयोग के गुग्गुल, द्रव (स्वरस, गोमूत्र आदि) तथा शहद के संयोग से भी वटियाँ बनाई जा सकती है ।

विमर्श– वटी निर्माण में प्रयुक्त घटक द्रव्यों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—

1. औषधियों का सूक्ष्म चूर्ण ।

2. गुड़, गुग्गुल, चीनी, शहद या कोई द्रव जैसे स्वरस, क्वाथ आदि ।

अग्नि संयोग विधि से गुड़, गुग्गुलु या चीनी का प्रयोग किया जाता है जो कि Binding Agents के रूप में कार्य करते हैं । एवं इनके अपने गुण कर्म भी होते हैं । तथा इस विधि में गुड़, गुग्गुलु या चीनी को लेहवत पाक कर सूक्ष्म औषधियों का चूर्ण मिलाकर वटी का निर्माण किया जाता है । बिना अग्नि संयोग में भावना देकर वटी का निर्माण करते हैं । इस विधि में खल्व यन्त्र (आधुनिक End Runner or Edge Runner प्रयोग कर सकते हैं) में औषधियों का सूक्ष्म चूर्ण लेकर उसे द्रव की सहायता से मर्दन करते हैं । मर्दन करने से ये आपस में चिपकने लगते हैं तथा वटी का निर्माण कर लेते हैं । बिना अग्नि संयोग के गुग्गुलु की वटी कुट्टन विधि से करते हैं । इसमें गुग्गुलु को एक इमामदस्ते में थोड़ा सा घृत की सहायता से कूटते है तथा पुनः इसमें चूर्ण मिलाकर अच्छी प्रकार से कूटते है और वटी का निर्माण करते है । आधुनिक समय में वर्ति मशीन (Stick making तथा stick cutter machine) तथा Tablet machine से विभिन्न प्रकार की वटियों का निर्माण किया जाता है ।

चूर्ण कल्पना (कल्क कल्पना का भेद) से ही वटी कल्पना का निर्माण किया जाता है। अग्नि संयोग करने पर ये उसी चूर्ण से लघु हो जाती है । यथा—

कल्पयेद्वटिकां चैतच्चूर्णं पक्त्वा सितोपलाम् । गुटिका ह्याग्नि संयोगाच्चूर्णाल्लघुतराः स्मृताः ॥
(च.चि 9/148)

तथा जहाँ भावना देकर बनाई जाती है तो ये वटियाँ उस चूर्ण से अधिक कार्य करने वाली हो जाती है, यथा—

भावितं मातुलुङ्गस्य चूर्णमेतद्रसेन वा । बहुशो गुटिकाः कार्याः कार्मुकाः स्युस्ततोऽधिकम् ॥
(च.चि. 5/84)

सिता, गुड़ आदि का अनुक्त मान

वटी में गुड़, चीनी आदि अनुक्त होने पर निम्नलिखित मान लेना चाहिए—

सिता चतुर्गुणा देया वटीषु द्विगुणे गुडः । चूर्णाच्चूर्णसमः कार्यो गुग्गुलुर्मधु तत्समम् ॥
द्रवं च द्विगुणं देयं मोदकेषु भिषग्वरैः । (शा.म. 7/4)

अनुक्त मान होने पर वटी निर्माण हेतु औषधियों के चूर्ण से चीनी 4 गुना, गुड़ लेना है तो 2 गुना तथा यदि गुग्गुलु या शहद से वटी बनाना हो तो इसे चूर्ण की मात्रा के बराबर लेते हैं । मोदक में द्रव दुगुनी मात्रा में लेना चाहिए ।

वटी की मात्रा

कर्ष प्रमाणं तन्मानं बलं दृष्ट्वा प्रयुज्यते । (शा.म. 7/5)

वटी की मध्यम मात्रा 1 कर्ष बल का विचार कर प्रयुक्त करना चाहिए ।

गुग्गुलु कल्पना

गुग्गुल के योग से बनने के कारण इन योगों को गुग्गुलु कहा जाता है, यथा योगराज गुग्गुलु, त्रिफला गुग्गुलु आदि । गुग्गुलु एक प्रकार का तैलीय रालदार गोंद (Oleo gum-resin) हैं जो कि Indian Bdellium (Balsamaodendron mukul) नामक वृक्ष से प्राप्त होता है । आचार्य भाव मिश्र ने गुग्गुलु के पाँच भेदों का वर्णन किया है । (1) महिषाक्ष (2) महानील, (3) कुमुद, (4) पद्म तथा (5) हिरण्याख्य । इनमें से हिरण्याख्य नामक गुग्गुलु मनुष्यों के लिए विशेष हितकारी होता है । गुग्गुलु भग्न सन्धान करने वाला, रसायन, दीपन, कफ वात नाशक, आमवात, अर्श आदि को दूर करने वाला होता है । गुग्गुलु को प्रयोग से पहले इसका शोधन करना आवश्यक होता है ।

निर्माण विधि– आचार्य शार्ङ्गधर के अनुसार–

लेहवत् साध्यते बह्वौ गुडो वा शर्करा तथा । गुग्गुलुर्वा क्षिपेत्तत्र चूर्णं तन्निर्मिता वटी ॥

अर्थात् शुद्ध गुग्गुलु को अग्नि पर थोड़ा सा पानी लेकर लेहवत् पाक करते है तत्पश्चात् इसमें चूर्ण मिलाकर वटी बनाते हैं ।

विमर्श– गुग्गुलु को लेहवत् पाक करने के पश्चात् उसमें चूर्ण मिलाकर तत्पश्चात् उसको कूटने पर वटी का निर्माण होता है । इसमें थोड़ा सा घृत डालकर कुट्टन क्रिया करने से यह पिण्ड रूप में परिवर्तित हो जाता है । आचार्य आढमल्ल

Scanned with OKEN Scanner

के अनुसार-

कुडुच क्वाथ मोदकानिधानैरविलम्बेदं कार्यमिति सम्प्रदायः। यावत् गिलोय तुल्यमायति तावद्गुडूचीघनीभवति केचित्। पूतं कुडुचस्यैव एव वारंवारं दातव्यम्।

अर्थात कुडुच की क्रिया एक साथ कर देनी चाहिए। जब तक यह मोम सदृश मुलायम न हो जाय या आठ प्रहर तक करनी चाहिए। कुडुच करते समय पूत बार-बार या थोड़ी-थोड़ी देर बाद मिलानी चाहिए।

गुडुच सेवन काल में अपथ्य

अन्नं नीक्षाम्लजीर्णं च व्यायामं श्रममातपम्। मद्यं रोषं त्यजेत्सम्यग्गुणार्थी पुर सेवकः॥

(शा.म. 7/81)

गुडुच सेवन काल में अन्न, राजिकादि, अजीर्ण अन्न, व्यायाम, श्रम, आतपसेवन, मद्य, क्रोध करना त्याग देना चाहिए।

Tablet

According to Indian Pharmacopoeia the tablet is defined as "Pharmaceutical tablets are solid, flat or biconvex discs prepared by compressing a drug or a mixture of drugs with or without suitable diluents. They vary in shape and differ greatly in size and weight, depending on the amount of medicinal substances and the intended mode of administration.

Types of Tablet

Tablets may be classified as follows–

(A) Tablet ingested orally– These are further classified
1. Compressed tablet
2. Multiple compressed tablet
3. Delayed action and enteric coated tablet
4. Film coated tablet
5. Sugar coated tablet
6. Chewable tablet

(B) Tablets used in oral cavity
1. Buccal and sublingual tablet
2. Dental cones
3. Lozenges

(C) Tablets administered by other route
1. Implantation
2. Vaginal tablet

(D) Tablet used to prepare solution
1. Effervescent tablet
2. Dispersing tablet
3. Hypodermic tablet
4. Tablet triturates

A. Oral tablets

1. **Compressed tablets**– Standard uncoated tablets are manufactured by compression. The general method involves wet granulation, dry granulation or direct compression. used for rapid disintegration and drug release. In addition to medicament these tablet usually contain diluents, binders, disintegrates, glidants etc. These tablets are used for both type of action i.e. systemic and local action.

2. **Multiple compressed tablets**– Multiple compressed tablets are prepared by subjecting the fill material to more than a single compression. The outcome may be a multi-layers tablet or tablet within a tablet. The inner tablet being the core and the outer portion being the shell.

   Multiple layers tablets are prepared by initial compaction of a portion of fill material in a die followed by additional fill material and compression to form two layered or three layered tablets depending on the number of separate fills and each layer may contain a different medicaments.

3. **Delayed action and enteric coated tablets**– This kind of tablet is evolved to release the drug after some time delay or after it has been passed one part of GIT. All enteric coated tablets are type of delayed action tablet but all delayed action tablets are not enteric coated. Enteric-coated tablets are designed to pass unchanged through the stomach to the intestine, where the tablet disintegrates and allow drug dissolution and absorption. Material used for enteric coating includes Cellulose acetate phthalate (CAP), Cellulose acetate trimellitate (CAT), Fatty acid, waxes, shellac, plant fibers etc.

4. **Film coated tablets**– Film coated tablets are surrounded by a thin layer of polymeric material. Film coating process can be done in two ways–

   First is aqueous film coating where generally water is used as a solvent and the second is non aqueous film coating in this generally organic solvent are used. Polymers like hydroxyl propyl cellulose, hydroxyl propyl methyl cellulose and colloidal dispersion of ethyl cellulose are commonly used in forming a skin like film.

5. **Sugar coated tablets**– This type of tablets are coated with a coloured or an

Scanned with OKEN Scanner

uncoloured sugar layer. The coating is water soluble and quickly dissolves after swallowing. The sugar coat protects the enclosed drug from the environment and provides a barrier to unbearable taste or odor.

6. **Chewable tablet**– This kind of tablets are evolved to be chewed in the mouth before swallowing. Chewable tablets have a rapid and smooth disintegration. These have a creamy base, flavored and cololured mannitol. These tablets are especially useful for administration of large tablets to children and people who have difficulty in swallowing solid dosage form.

(B) Tablet used in oral cavity

1. **Buccal and sublingual tablet**– When the tablet is meant for keeping it in the cheek then it is called buccal tablet and those meant for keeping under the tongue are referred as sublingual tablets. Both of these tablets are designed for retention into buccal cavity for a period. The drug is absorbed directly through the oral mucosa and reaches into gastro intestinal fluids and enzymes. These types of tablet afford rapid onset of action as compared to swallowable tablets.
2. **Dental cones**– As the name emplies these specific type of compressed tablets that are meant for placement inth empty sockets after tooth extraction. These tablets normally carry antimicobial drugs with fillers like lactose, sodium chloride, sodium bicarbonate etc.
3. **Lozenges**– These tablets are meant for producing local action on throat tissues and made by compression mathod. Lozenges are desinged to dissolve slowly in the oral cavity providing a prolonged local action of the drug.

(C) Tablets administered by other route

1. **Implant**– These tablets are designed for to provide prolonged drug effect from month to a year. These tablets are small, cylindrical and require special surgical method for implantation and discontinuation of therapy.
2. **Vaginal tablets**– This type of tablet is meant to dissolve slowly in the vaginal cavity releasing the drug over an appreciable period of time. These tablets are having ovoid or pear shaped for ease of insertion.

(D) Tablet used to prepare solution

1. **Effervescent tablets**– These tablets are uncoated tablets and generally contain acid substances and carbonates which react rapidly in presence of water and release carbon dioxide. These tablets are intended to be dissolved in water before use.
2. **Dispersing tablets**– These are no longer in use. Tablets are intended to be added to a given volume of water to produce a solution of a given drug concentration.

3. **Hypodermic tablets**– This type of tablet is added to sterile water to prepare sterile solution which is injectable.
4. **Tablet triturates**– A tablet made by moistening the medication mixed with a powdered lactose or sucrose and then given shape and allowing liquid to evaporate. It usually disintegrates readily.

Tablet ingredients– In addition to drug, tablet contains a number additives for its formulation. These are also known as excipients. The various excipients are–

a. Adsorbents

b. Binders

c. Colouring agents

d. Diluents

e. Disintegrating agents

f. Flavoring agents

g. Glidants, anti-adhesives, lubricants.

(a) Adsorbents– These are the substance that can adsorb fluids like essential oil etc. and remain dry are sometimes used in tablets where good amounts of fluids present. The adsorbents provide free flowing. Magnesium aluminium silicate, Kaolin etc. are used as adsorbents.

(b) Binders– Binding agents are used to form granules or to form cohesive compacts for directly compressed tablet. For granulation solution of adhesive materials like acacia, liquid glucose, gelatin, sucrose syrup etc. are added to appropriate ratio. Binding agents such as amylose, microcrystalline cellulose, spray dried acacia etc. are used in dry granulation. In cases where tablet structures are needed to break up readily the binding agents have to be used at low levels.

(c) Colouring agents– Colour are used to make tablets good looking and these colouring agent should be of permitted list. The colours are added either to the mixture of powder before granulation or to the vehicle used for granulation.

(d) Diluents– Diluents are added as excipients when the proportion of drug is small and it is necessary to increase the bulk to a certain amount so that tablet can prepared. Tablets less than 250 mgm are difficult to handle and intake and therefore addition of a diluent is necessary. Lactose is used most commonly as diluents. Besides this mannitol and sorbitol are also used.

(e) Disintegrating agents– After ingestion of tablet it is necessary that it easily break down in the gastro intestinal track. For this purpose disintegrating agents are added

Scanned with OKEN Scanner

in tablet formulation. For this purpose corn starch is not popular. Microcrystalline cellulose, mineral clay, psyllium seed husk powder etc are used as disintegrating agents.

(f) **Flavouring agents**– These are added to tablets to increase its palatability. Now-a days flavours are available as spray dried.

(g) **Glidants, anti-adhesives, lubricants**– Free flow of granules during the manufacturing process is very much needed from hopper into die cavity. Sticking of tablet ingredients to die walls and punches creates problem during operation. To overcome there difficulties these substances (Glidants, anti adhesives or lubricants) are used. However out of these there a single substance may be able to act in all the three capacities. Talcum is most popular and is used for the above purpose. Besides this stearic acid, boric acid etc. are used. Usually for this purpose a combination of two or more substances is used.

Manufacture of tablet

Tablet manufacturing includes the following operations–

1. Size reduction and mixing
2. Granulation
3. Compression
4. Coating

1. Size reduction and mixing– The various ingredients should be reduced to same particle size and then uniform mixing is assured.

2. Granulation– This process can be done by two method viz dry granulation and wet granulation. In wet granulation the powder is moistened with a suitable liquid binding mixture and lump is made then this is passed through sieve resulting into granules formation. Now these granules are dried before compression. Dry granulation is done by first compressing the dry powder in slug or large tablet. The slugs are then broken up into required granule size by granulator. Dry granulation is also termed as double compression slugging or precompression.

3. Compression– The compression of materials into tablets is generally carried out by a machine that stamps out the tablets in a die between punches. Initially hand operated tablet machines were used but now-a-day Rotary type tablet machine are generally used for large scale production. The basic phenomenon involved in tablet compression is–

a) First filling of medicinal material into die with the help of shoe from hooper.

b) The next step is punching of medicinal material within die by means of punch resulting into formation of tablet.

c) In the next process tablet comes out of die by the pushing of lower punch and it came down from the tablet machine by means of shoe and the same time die is filled with medicinal material.

This process in repeated and tablet manufacturing is done. In rotary type tablet machine all are arranged around the circumference of the rotating head. So that it is known as rotary type tablet machine.

4. Coating– Two types of coating methods are in common use

a) Pan coating,

b) Press coating

In the pan coating usually the coating is carried out in a rotating tilted, copper pan in which the cascading tablets can be treated with the coating materials.

In press coating a layer of dry coating material is pressed on to a preferred tablet. This process is done by placing the tablet to be coated in the die of tablet machine, in which there is a layer of coating material in granular form, covering the tablet with another layer of coating granules and comparing to form a layer around the tablet.

Standardization of tablets– The various standards which are considered for this purpose are as follows–

1. Shape
2. Weight of tablet
3. Diameter
4. Mechanical strength
5. Percentage of medicament
6. Rate of disintegration
7. Rate of dissolution

1. Shape– The shape of tablet is defined in Pharmacopoeia as circular with either flat or biconvex faces.

2. Weight of tablet– The permitted deviation in the weight of tablet is described in the Pharmacopoeia which depends on the size of tablet and the number taken for the test. The percentage deviation in the weight is as follows–

Average weight	Percentage deviation
1. 80 mg or less	10%
2. More than 80 mg and less than 250 mg	7.5%
3. More than 250 mg	5.0%

3. Diameter– The pharmacopoeia does not insist on a standard weight, it nevertheless

Scanned with OKEN Scanner

specifies their diameter. The pharmacopoeia permits some slight deviation normally +5% from the nominal diameter.

4. Mechanical strength– No official standards for mechanical strength of tablets have been adopted by pharmacopoeia. Tablet manufactures employ tests to ensure that tablets can withstand the normal risks of transporting and handling. Tests on breaking strength, abrasion tests and penetration tests are done for this purpose.

5. Percentage of medicaments– There are many factors mixing of powders, granule preparation etc. variation of dosage between tablet to tablet must occurs no matter how carefully they are prepared. Usually the percentage of medicament on a bulk sample of 20 tablets is required to lie between 90 and 100 percent of the stated value.

6. Rate of disintegration– Tablets may remain in the stomach for four hours or more, but the pharmacopoeia normally requires to disintegrate within 15 minutes.

7. Rate of dissolution– Since a drug must pass into solution before it can be absorbed, the rate of dissolution is therapeutically more important than its rate of disintegration. Continuous methods have been devised in which water is passed round the tablet in a special cell and solution analysed continuously, usually by spectrographic means.

Pills

Pills are small round shaped dosage form containing medicament and meant to be swallowed. These can be prepared by Pill making machine. These can be compared with the Vati of Ayurved. Pills generally includes a filler and a plastic substance such as lactose that helps the pills to be rolled by machine or hand into desire form.

Capsule

Capsule can be defined as solid dosage form in which medicine is enclosed in a shell made up of gelatin. This shell is water soluble and biodegradable capsules provide a odorless, tasteless enclosure that is convenient for administration which are otherwise difficult to administer. The capsule consists of two part viz cap and body. Capsules can be of two types–

1. Hard shelled capsules
2. Soft shelled capsules

Hard gelatin capsules

It is basically consists of gelatin, plasticizers and water in addition they may contain preservatives, opacifying agents, flavours, colours, sugar etc. Gelatin has solubility characteristic in the stomach fluid and absorbs cold water. So this is used frequently. The plasticizers used includes glycerin, sorbitol etc. The proportion of gelation and plasticizers can be determined according to use of capsules and their storage. Although only powders

are filled and fixed oils and other liquids that do not permeate thought the wall of gelation can also be filled in the hard capsules. Granules can also be filled easily in the capsules.

Soft gelation capsules

Soft gelatin capsules are primarily used for oils and active ingredients that are dissolved or suspended in oil. However it is possible to fill solid, semisolid as well as liquid into soft gelatin capsules. The composition of soft gelatin capsule shells is that of hard gelation but in soft gelatin a larger proportion of plasticizer is added to make them soft and elastic this type of capsules are available in a variety of shapes the common one is being spherical elliptical and oblong.

Evaluation of capsule is done on the parameters like weight variation, disintegration and dissolution time as well as drug content uniformity.

वर्ति कल्पना

आचार्य शार्ङ्गधर ने वटी के पर्याय में वर्ति का भी उल्लेख किया है । अर्थात् जो वटियाँ बत्ती की तरह लम्बी तथा किनारों पतली, यवाकार बनाई जाय उनको वर्ति से सम्बोधित किया जाता है । वर्ति के निर्माण में औषधियों के सूक्ष्म चूर्ण के साथ साथ कोई Binding agent जैसे गुड़ या शहद आदि का प्रयोग किया जाता है । गुड़ तथा शहद के अतिरिक्त दूध, जल या गोमूत्र आदि के प्रयोग से भी वर्ति का निर्माण किया जाता है जैसे चन्द्रोदय वर्ति बकरी के दूध की सहायता से बनाई जाती है । इस स्थिति में औषधि के सूक्ष्म चूर्ण को प्रयुक्त द्रव से अच्छी प्रकार से मर्दन कर वर्ति का निर्माण करते है । इस प्रकार वर्ति की निर्माण विधि वटी कल्पना के समान होती है तथा इसका स्वरूप वर्ति के आकार का होने के कारण इसे वर्ति कल्पना का नाम दिया गया है । ये वर्तियाँ स्थान प्रयोग भेद से निम्न प्रकार की होती है—

1. गुदवर्ति या फलवर्ति (Rectal suppository)
2. योनिवर्ति (Vaginal suppository)
3. नेत्रवर्ति
4. धूम्रवर्ति
5. व्रणवर्ति
6. नासावर्ति

1. गुदवर्ति– उदावर्त, आनाह तथा अर्श आदि रोगों में या जब पुरीष शुष्क हो जाय तथा वात का अनुलोमन न हो तो ऐसी स्थिति में मलशोधन एवं वातानुलोमन हेतु गुदवर्ति का प्रयोग किया जाता है । गुदा, योनि या मूत्रमार्ग में प्रवेशार्थ जिस वर्ति का प्रयुक्त होने वाले अवयवानुसार पृथक-पृथक किया जाता है इन वर्ति समूह को फलवर्ति से भी सम्बोधित किया जाता है । गुदवर्ति का आकार कैसा होना चाहिए इस सम्बन्ध में चरक संहिता में निम्न सन्दर्भ का उल्लेख उदावर्त चिकित्सा में उपलब्ध होता है—

श्यामात्रिवृन्मागधिकां सदन्ती गोमूत्रपिष्टां दशभागमाषाम् ।
सनीलिकां द्विर्लवणां गुडेन वर्तिं कराङ्गुष्ठानिभां विद्धयात ॥ (च.चि. 26/12)

Scanned with OKEN Scanner

अर्थात् वर्ती का आकार लगभग 2 वर्ती को हाथ के अंगूठे जैसा मोटा तथा वर्ती के आकार का निर्माण करने के लिए कहा है ।

चक्रदत्त में ऐसा ही सन्दर्भ का उल्लेख मिलता है । यथा—

गजपृथक्विडलवणगुडमृत्तिकाचिता । गुदेऽङ्गुष्ठसमावर्तिर्विधेयाऽऽनाहशूलनुत ॥ (आनाह चिकि. 07)

उपरोक्त द्रव्यों के साथ गुड़ में पकाकर अंगूठे के आकार की वर्ती का निर्माण करते हैं । उपरोक्त वर्णन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अंगूठे की मोटाई के बराबर गुदवर्ती का निर्माण व्यस्क मनुष्यों हेतु किया जा सकता है ।

प्रयोग विधि–

हिङ्गुसौवर्चलक्षिप्तैः पक्त्वा वर्त्तिं सुनिर्मिताम् । घृताभ्यक्तां गुदे दद्यादुदावर्त्ते विनाशिनीम् ॥
(चक. उदावर्त 12)

अर्थात् उक्त वर्ती को गुदा में प्रवेश कराना हो वर्ती तथा गुदा दोनों में घी लगाकर धीरे-धीरे प्रवेश कराना चाहिए । गुदा का स्वेदन कर भी वर्ती को प्रवेश कराने का उल्लेख मिलता है । यथा—

क्षुण्णं निर्गुण्डी पत्रं वा स्विन्नेषाद्यौक्षियेत् बुधः । (चक्र. उदावर्त 14)

2. योनिवर्ती– इस प्रकार की वर्तियों का प्रयोग गर्भाशय सम्बन्धी विकारों में किया जाता है । योनि वर्ती की लम्बाई प्रदेशिनी अंगुली के समान होती है । यथा—

पिप्पल्या मरिचैर्माषैः शताह्वाकुष्ठसैन्धवैः । वर्तिस्तुल्या प्रदेशिन्या धार्या योनि विशोधनी ॥
(च.चि. 30/72)

अर्थात् पिप्पली, मरिच, उड़द, शताह्वा, कुष्ठ तथा सैन्धव से प्रदेशिनी अंगुली के समान वर्ति निर्मित कर योनि में धारण कराने से योनि का शोधन होता है ।

3. व्रणवर्ती– व्रणवर्ती का उल्लेख नाड़ी व्रण की चिकित्सा, तथा ऐसे व्रण जो पूय से भरे होने के कारण वेदना, शोथ आदि उत्पन्न करते हैं ऐसे व्रणों के शोधन तथा रोपण हेतु किया जाता है । यथा निम्बादि वर्ति–

निम्बपत्र घृत क्षौद्रदार्वीमधुक संयुक्ता । वर्तिस्तिलनां कल्को वा शोधयेद्रोपयेद् व्रणम् ॥
(चक्र. वणशोथ 35)

निम्ब पत्र, घृत, मधु, दारुहरिद्रा तथा मधुयष्टी की वर्ति या तिल का कल्क व्रणों का शोधन तथा रोपण करता है ।

4. नेत्रवर्ति– नेत्र रोगों को दूर करने हेतु नेत्रवर्ति का प्रयोग करते हैं । नेत्र वर्ति सामान्य रूप से घिसकर ही नेत्र में प्रयोग की जाती है । अर्थात् जितनी मात्रा में प्रयोग करना हो उतना घिसकर पुनः इस घिसे हुई औषधि को प्रयुक्त करते है । नेत्र वर्ति का परिमाण आचार्य शार्ङ्गधर ने निम्न बताया है— यथा—

छागी क्षीरेण संपिष्य वर्तिं कृत्वा यवोन्मिताम् । हरेणु मात्रां संघृष्य जलैः कुर्यादथाञ्जनम् ॥
(शा.उ. 13/76)

अर्थात् यवाकार वर्ति बनाकर उसे हरेणु मात्रा में जल के साथ घिसकर नेत्र में प्रयुक्त करते हैं ।

5. धूमवर्ति– ऊर्ध्वजत्रुगत विकारों यथा पीनस, मन्यास्तम्भ, शिरःशूल तथा मुखरोग आदि एवं वात तथा कफजन्य विकारों में धूमवर्ति का प्रयोग किया जाता है । ये वर्ति स्नेह युक्त कर एक विशेष प्रकार के धूम नेत्र, जो कि धातु आदि के बने होते हैं, में रखकर मुख से या नासा से पान किया जाता है ।

6. नासावर्ति– नासा वर्तियों में तीक्ष्ण द्रव्यों जैसे विड़ङ्ग, मरिच, अपामार्ग बीज आदि का प्रयोग किया जाता है तथा इनके प्रयोग से छींक आती है तथा रोग के उपचार में सहायता मिलती है ।

चन्द्रोदय वर्ति

शङ्खनाभिर्विभीतस्य मज्जा पथ्या मनः शिला । पिप्पली मरिचं कुष्ठं वचा चेति समांशकम् ॥
छागी क्षीरेण संपिष्य वर्तिं कृत्वा यवोन्मिताम् । हरेणुमात्रां संघृष्य जलैः कुर्यादथाञ्जनम् ॥
तिमिरं मांसवृद्धिं च काचं पटलमर्बुदम् । रात्र्यान्ध्यं वार्षिकं पुष्पं वर्तिश्चन्द्रोदया जयेत् ॥
(शा.उ. 13/75-77)

घटक द्रव्य– 1. शंखनाभि, 2. विभीतक मज्जा, 3. हरीतकी, 4. शु. मनःशिला, 5. पिप्पली, 6. मरिच, 7. कुष्ठ, 8. वचा सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण समान मात्रा में ।

यन्त्र– खल्व यन्त्र

निर्माण विधि– क्रम. संख्या 1 से आठ तक के द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण लेकर उसे खल्व यन्त्र में बकरी के दूध की सहायता से अच्छी प्रकार मर्दन कर वर्ति बना लेते हैं । यह वर्ति यवाकार बनाते हैं । तथा इसकी प्रयोग की जाने वाली मात्रा एक हरेणु है जो कि जल में घिसकर प्रयोग करते हैं ।

उपयोग– तिमिर, काँच, अर्बुद, नक्तान्धता तथा पुष्प (फुल्ली) रोग दो वर्ष पुराना नष्ट करता है ।

Suppositories

Suppositories are used from very ancient times. Suppositories can be defined as medicated solids of various shapes and size suitable for insertion into one of the body orifies like rectum, vagina etc. other than oral cavity. The dosage form that are prepared for insertion into rectum are referred as suppositories while others that are meant for introduction into urethra, vagina and nasal caving known as urethral bougies, pessaries and nasal bougies respectively. Suppositories normally carry the medicine falling under category of emollients, antiseptics, astringents and local anesthetics designed to exercise local action at the site of placement. The advantage of using suppositories is that in this form portal circulation is by passed and biotransformation of drug in liver is restarted. Some documents also indicates that absorption of some drug through the rectal mucosa could be faster than oral rout while for some drug it is slower.

Scanned with OKEN Scanner

In the formulation of suppositories besides the medicament the base is very important. The base used in the preparation can be of following types–

1. Oleaginous
2. Water soluble

Oleaginous base

Cocoa butter is used as a suppository base as it remains solid at room temperature and melts readily at body temperature. However it has some draw backs like rancidity, leakage from body cavity, melting in very warm weather etc. Different suggestion for base using in the preparation of suppositories includes hydrogenated palm oil, hydrogenated cotton seed oil such as 'Cotoflakes', mango fat and edible hydrogenated fat (Dalda).

Water soluble base included gelato-glycerin mixtures, soap glycerin, polyethylene glycols and water dispersible bases.

Preparation method

The suppositories can be manufactured by hand moulding, machine moulding, pour moulding or by compression. In all manufacturing procedure the objective is production of uniform weight and amount of medicament in each suppositories.

Size and shape of suppositories– The suppositories are in different size and shapes according to use in the different body cavities. The common types are–

(a) Rectal suppositories– These are meant for placing into rectum and normally weigh 1 to 2 grams, these are either torpedo or cone shaped.

(b) Vaginal suppositories–These are also known as pessaries and are meant for inseration into vagina. They are generally wedge or cone shaped and weigh either 4 gram or 8 gram.

(c) Urethral bougies– These are intended for introduction into urethra. They are thin and cylindrical in shape having weight usually 1 gram and length is about 8 cm.

(d) Nasal bougies– There are meant for insertion into nasal cavity and having length of 9 to 10 cms and weight about one gram. These bougies are always made with gelato-glycerin base.

The rate of release of drugs from suppositories is depend on the following factors–

1. pH of rectal mucosa.
2. State of anorectal membrane
3. Physico-chemical characters of the drug.
4. Rate of diffusion of drug to the mucosa from where it is absorbed.

The evaluation of suppositories is done on the following parameters

i) Determination of the melting range
ii) Fragility assessment
iii) Determination of the dissolution and disintegration times.
iv) Drug uptake rates.

फलवर्ति

घृताभ्यक्ता गुदेक्षेप्या श्लक्ष्णा स्वाङ्गुष्ठसन्निभा। मलप्रवर्तिनी वर्तिः फलवर्तिस्तु सा स्मृता॥
(शा.स.उ. 7/15)

अंगुठे के आकार की चिकनी वर्ति मल प्रवर्तन हेतु घृत लगाकर गुदा में प्रवेश करने हेतु निर्मित वर्ति को फलवर्ति कहते हैं।

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्षपाः। गुडक्षारसमायुक्ताः फलवितरिहोच्यते॥
(भै.र. उदावर्त 10)

घटक द्रव्य– 1. मदनफल, 2. पिप्पली, 3. कूठ, 4. वचा, 5. गौर सर्षप, 6. गुड़, 7. यवक्षार

निर्माण विधि– गुड़ी की चासनी बनाकर उसे शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाकर वर्ति का निर्माण कर लेते हैं।

उपयोग– उदावर्त रोग में।

मसी कल्पना

मसी का अर्थ काला होता है अर्थात् काले रंग का बनने के कारण इस कल्पना को मसी कल्पना कहा जाता है। आचार्य आढमल्ल ने शा.उ. 11/23 की टीका में कहा है कि "मषी कज्जल विशेष" अर्थात् मषी विशेष रूप से काजल या काली होती है। आचार्य डल्हण ने सुश्रुत संहिता चि. 19/17 की टीका में मसी कल्पना को निम्न रूप में परिभाषित किया है—

"यदा दह्यमानोऽति कृष्णात्वं गच्छति तदा तत् चूर्ण मसी इति उच्यते" दहन के परिणामस्वरूप अतिकृष्णात्व रूप को प्राप्त हुए चूर्ण को मसी कहा जाता है। आयुर्वेद संहिताओं में विभिन्न वर्गों यथा जाङ्गम तथा औद्भिद के अन्तर्गत आने वाले द्रव्यों से मसी कल्पना बनाने का उल्लेख प्राप्त होता है। जाङ्गम द्रव्यों जैसे हस्तिदन्त, तथा चौपायो के विभिन्न भाग जैसे त्वक्, रोम, शृंग तथा अस्थि आदि से एवं जाङ्गम द्रव्यों जैसे त्रिफला आदि की मसी बनाने का उल्लेख प्राप्त होता है।

मसी कल्पना करने के लिए द्रव्य (दन्त, रोम, शृंग आदि) को चूर्ण कर एक शराब में रखकर फिर उसे सम्पुट कर लघुपुट या पाक कर मसी का निर्माण कर लेते हैं।

विशेष– मसी कल्पना को एक शराव में रखकर पुनः दूसरे शराव से ढककर इसे गैस वर्नर (LPG) पर तेज आँच से बना सकते है। इस दौरान इससे एक गन्ध विशेष आती रहती है। तथा जब यह गन्ध आना बन्द हो जाय तो थोड़ी देर अग्नि और देकर गैस बन्द कर देना चाहिए। इस प्रकार मसी आसानी से बन जाती है। इसे शराव से निकाल अच्छी प्रकार से मर्दन कर सूक्ष्म चूर्ण बनाकर सुरक्षित रख लेना चाहिए।

Scanned with OKEN Scanner

अध्याय 16

प्रायोगिक परिशिष्ट

सत्व

रसशास्त्र तथा भैषज्य कल्पना में दो प्रकार के सत्वों का उल्लेख मिलता है—

1. धातु सत्व
2. वनौषधि सत्व या काष्ठौषधि सत्व

धातु सत्व जैसे अभ्रक सत्व, माक्षिक सत्व आदि का अध्ययन रसशास्त्र में विशेष रूप से किया जाता है। जबकि गुडुची सत्व, आर्द्रक सत्व, रामसेन सत्व आदि जो काष्ठ औषधियों से प्राप्त किये जाते है उनका अध्ययन भैषज्य कल्पना के अन्तर्गत किया जाता है।

रस तरङ्गिणी में वनौषधि सत्व की परिभाषा निम्न दी है—

वाष्पस्वेदनयन्त्रेण वनौषधि समुद्भवः। सारः सत्त्वमिति प्रोक्तं रसतन्त्रविचक्षणैः॥
र.त. 2/33)

वाष्प स्वेदन यन्त्र द्वारा वनौषधियों का जो सार भाग प्राप्त होता है उसे विद्वान सत्व कहते हैं।

आयुर्वेदिक फार्मुलरी आफ इंडिया (A.F.I.) के अनुसार सत्व water extractable substance है जो कि औषधि से एकत्र किये जाते हैं।

वस्तुतः सत्व स्टार्च, कार्बोहाइड्रेट प्रधान द्रव्य है जो कि पानी में घुलनशील होते हैं तथा औषधियों जैसे गुडुची, आर्द्रक आदि से प्राप्त किये जाते हैं। यहाँ पर रसतरंगिणी में वर्णित वाष्प स्वेदन यन्त्र जो कि वनौषधि सत्व प्राप्त करने में सहायक होता है उसका वर्णन किया जा रहा है।

अमृता सत्व

सन्दर्भ ग्रन्थ– सिद्धयोग संग्रह

घटक द्रव्य– ताजी गुडुची, जल

यन्त्र/उपकरण– भगौना, सूती वस्त्र, गडांसा।

निर्माण विधि– अंगूठे जितनी मोटी ताजी हरी गुडुची लेकर उसे जल से साफ कर छोटे-छोटे कर लकड़ी के ऊखल में डालकर खूब कूट लेते हैं। पुनः इसे एक भगौने में चार गुना पानी लेकर हाथ से अच्छी प्रकार से मर्दन करते हैं। तत्पश्चात् इसे एक स्वच्छ वस्त्र से दूसरे कलईदार बर्तन में छान लेते है और रातभर रख देते हैं। सुबह ऊपर का सब जल धीरे-धीरे एक बर्तन में निथार लेते हैं। और नीचे बचे सत्व को बर्तन में रका रहने देते हैं। तत्पश्चात् इस बर्तन पर पतला कपड़ा बाँधकर खुले स्थान में रखकर सत्व को सुखाकर रख लेते हैं।

मात्रा– 4 रत्ती से 1 माशा तक।

उपयोग– जीर्णज्वर, रक्तपित्त, पाण्डु, कामला आदि में।

अपामार्ग क्षार

घटक द्रव्य– 1. अपामार्ग पंचांग

यन्त्र/उपकरण– लोहे की कड़ाही, स्टील का बड़ा भगौना, कलछी, सूती वस्त्र

निर्माण विधि– अपामार्ग क्षार का वर्णन रसतरंगिणीकार ने क्षार विशेष अध्याय नामक तरंग में (14वाँ तरंग) किया है। जहाँ पर भस्म (राख) से 4 गुना जल लेने का निर्देश है। इस प्रकरण में अपामार्ग क्षार, सूर्यक्षार, अर्क क्षार, तिलक्षार, चिञ्चाक्षार आदि का वर्णन है। जबकि क्षार त्रिक अध्याय (13वाँ तरंग) में यवक्षार, स्वर्जिकाक्षार तथा टकंण का वर्णन है। यहाँ पर यवक्षार तथा स्वर्जिका क्षार निर्माण हेतु भस्म (राख) से 8 गुना जल लेने का उल्लेख है। अतः अपामार्ग क्षार निर्माण हेतु सर्वप्रथम अपामार्ग को जलाकार राख को इकट्ठा कर उससे 4 गुना जल लेकर उसमें मिला देते हैं। तत्पश्चात् इसे रात्रि पर्यन्त रख देते है। अगले दिन इसे छान लेते हैं तथा इस छने जल का सावधानीपूर्वक पाक करते हैं। जब जल पूरी तरह से सूख जाय तो क्षार को खुरच कर किसी कांच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं।

गुण–

खरमञ्जरिकाक्षारस्तीक्ष्णः श्वास निवर्हणः। गुल्मशूलादि रोगघ्नः कामं वाधिर्यनाशनः॥
(र.त. 14/66)

अपामार्गक्षार तीक्ष्ण गुण का होता है। यह श्वास रोग, गुल्म, शूल को नष्ट करता है। यह वाधिर्य नाशक भी होता है।

क्षार सूत्र

आचार्य सुश्रुत ने नाड़ी व्रण चिकित्सा में, चिकित्सा स्थान 17/29, क्षार सूत्र का उपयोग करने का स्पष्ट निर्देश दिया है। यथा—

कृशदुर्बल भीरूणां नाड़ी मर्माश्रिता च या। क्षारसूत्रेण तां च्छिनाद्यत्र तु शस्त्रेण बुद्धिमान॥
(सु.चि. 17/29)

अर्थात् बुद्धिमान वैद्य कृश, दुर्बल, डरपोक व्यक्तियों के तथा मर्म स्थान में स्थित नाड़ी व्रण को शस्त्र से न काटकर क्षारसूत्र से छेदन करना चाहिए। इस प्रकार क्षार सूत्र का स्पष्ट प्रयोग सुश्रुत संहिता में उपलब्ध होता है। इसी प्रकार आचार्य सुश्रुत ने भगन्दर तथा अर्बुद में भी क्षार सूत्र प्रयोग करने का उल्लेख मिलता है। आचार्य चक्रपाणि ने क्षार सूत्र निर्माण को अधिक स्पष्ट रूप में वर्णन किया है—

भावितं रजनीचूर्णः स्नुहीक्षीरे पुनः पुनः। वन्धनात् सुदृढं सूत्र भिनत्यर्शो भगन्दरम्॥
(चक. अर्श 147)

क्षार सूत्र निर्माण विधि

पतले धागे (कपास आदि के) लेकर इसे वर्तित कर मजबूत बना लेते हैं या प्रयोग अनुसार उसकी मोटाई तय करते

Scanned with OKEN Scanner

है। तत्पश्चात् इसे दो हुक के बीच स्थिर कर देते हैं। आजकल इसके लिए Sterlized chamber आते हैं। फिर इस धागे पर स्नुहीक्षीर लगाते है तत्पश्चात् इस पर हरिद्रा चूर्ण लगाकर सूखने के लिए रख देते है। इस प्रकार इस प्रक्रिया को सात बार दोहराते है। तथा इसे सुखा लेते हैं। इस प्रकार निर्मित क्षार सूत्र को किसी Sterlized vessel में सुरक्षित रख लेते हैं।

क्षार सूत्र का प्रयोग अर्श, भगन्दर तथा अर्बुद रोग में प्रयोग करते है।

उपनाह

उपनाह शब्द पर आचार्यों ने निम्न टीका किया है, यथा—

- **उपनह्यते बध्यते चर्मपट्टादिनेत्यन्वर्थनामास्योपनाहः**–अरूणदत्त
- **उपनहनमुनाहो बन्धनमित्यर्थः**–चन्द्रनन्दन
- **उपनाह उष्णपिण्ड बन्धः**–इन्दु

इस प्रकार उपनाह शब्द से यह अर्थ लिया जाता है कि चर्मपट्ट आदि या उष्ण पिण्ड के द्वारा शरीर के किसी स्थान पर जो बन्धन विशेष किया जाता है, उसे उपनाह कहते हैं।

आचार्य वृद्ध वाग्भट्ट ने उपनाह का वर्णन निम्न किया है—

उपनाहस्तु सर्वगन्ध धान्य सर्षपकिण्ववचादेवदारूरास्नैरण्ड मूलमधुक शताह्वा सुरा किट्टादि वातहर द्रव्य चूर्णै यवगोधूमशकलैरनूपासृक्पित्तशिरः पादामिषवेसवारैश्च। तथा श्लेष्म संसृष्टे वायौसुरसादिभिः। पित्तसंसृष्टै च पद्मकादिभिः। पृथक् सहितैर्वा। क्षीर शुक्त धान्याम्ल लवणमस्तुप्रगाढैः सुस्निग्धैः सुखोष्णैः साल्वणभिधानेः बहुशः प्रदिह्योष्णवीर्यापूति मृदुरोम चर्मभिस्तदभावे घन वातहर पत्राविककौशेयै-रूपनद्धमङ्गमहःस्थितं विदाह परिहारार्थं निशि मुञ्चेत। दिवा वा निशि बद्धम्। दोषदेशकालवशेन वा॥

(अ.सं.सू. 26/5)

उपनाह विधि

उपरोक्त वर्णन से यह अर्थ निकाला जा सकता है कि उपनाह वातहर द्रव्यों जैसे वचा, देवदारू, रास्ना, एरण्डमूल आदि, कफ से युक्त होने पर वातहर द्रव्यों तथा सुरसा आदि द्रव्यों तथा पित्त से अनुबन्ध होने पर पद्मक आदि द्रव्यों के योग से क्षीर, शुक्त, धान्याम्ल आदि द्रवों की सहायता से पीसकर ऐसे चमड़ा जिस पर मृदु रोम हो या यह उपलब्ध न हो तो वातनाशक पत्ते, कम्बल या रेशमी वस्त्र की मदद से उपरोक्त औषधियो के कल्क को बाँध देते हैं।

उपनाह का समय

यदि उपनाह सुबह प्रयुक्त किया गया है तो उसे रात में खोल देते है जिससे कि उस स्थान पर दाह न उत्पन्न हो। तथा यदि रात में लगाया है तो उसे दिन में खोल देते हैं। उपनाह को गाढ़ा (मोटा) ही लगाते हैं।

अतस्यादि उपनाह

अतसी-यव-गोधूमचूर्णमालोडितं द्रवैः। सम्यक्वं सौषधस्नेहं वस्त्रेणान्तरितं तथा॥

बध्यते व्रण शोथादावुपनाहः स उच्यते॥ (द्र.गु.वि. आचार्य यादव जी)

घटक द्रव्य– 1. अतसी बीज – 20 ग्रा.

2. गेहूँ या यव का चूर्ण – 20 ग्रा.
3. गोमूत्र–आवश्यकतानुसार
4. घृत या तिल तैल–10 ग्रा.

यन्त्र/उपकरण–कटोरी, चम्मच, रेशमी वस्त्र, सूत्र

निर्माण विधि–सर्वप्रथम स्टेनलेस स्टील की कटोरी में अतसी तथा गेहूँ या यव के चूर्ण को लेकर उसमें गोमूत्र तथा तिल तैल, घृत मिला देते हैं। इसके पश्चात इसे चम्मच की मदद से अच्छी प्रकार चलाकर मिला लेते हैं। अब इसे प्रयोग से पूर्व रेशमी वस्त्र पर अच्छी प्रकार से फैला देते हैं। तथा जिस स्थान पर प्रयुक्त करना हो वहाँ पर सूत्र की मदद से बाँध देते हैं।

उपयोग–व्रण शोथ में।

सिक्थ तैल

परिभाषा

सिक्थकं तिलतैलश्च युक्तमानविमिश्रितम्। विपक्वं नवनीताभं सिक्थ तैलं प्रकीर्तितम्॥

(र.त. 2/34)

सिक्थ अर्थात् मोम और तिल तैल को आवश्यकतानुसार उचित मान में पकाकर जब यह मक्खन सदश हो जाय तो इसे सिक्थ तैल कहते हैं।

रस तरंगिणी कार ने सिक्थ तैल के दो प्रकार का उल्लेख किया है। ये दोनों ऋतु के अनुसार कही गयी है।

प्रथम प्रकार–

भागैकं विमलं सिक्थं तैलन्तु रसभागिकम्। आदाय वङ्गलिप्तायां स्थालिकायां निधापयेत्॥
पचेत्तावन्मन्दवह्नौ यावत्सिक्थं द्रवीभवेत्। स्थालिकामथ यत्नेन धरण्यामवतारयेत्॥
तावत्प्रचालयेद्दर्त्या याववेति प्रगाढताम्। सिक्थ तैलसमायोगात्सिक्थ तैलमिदं स्मृतम्॥

(र.त. 4/59-61)

एक कलईदार कड़ाही में 1 भाग तथा 6 भाग तिल तैल लेकर इसे मन्द-मन्द अग्नि पर पाक करते हैं। जब मोम पिघलकर तैल में मिल जाय तब इस कड़ाही को नीचे उतार लेते हैं और चम्मच से इसे गाढ़ा होने तक चलाते हैं। इसमें सिक्थ (मोम) तथा तैल दोनों का मिश्रण होने के कारण इसे सिक्थ तैल कहा जाता है।

द्वितीय प्रकार–

भागैकं विमलं सिक्थं तैलन्तु शरभागिकम्। पूर्वोद्दिष्ट विधानेन पचेद्रसविशारदः॥

Scanned with OKEN Scanner

जाताने मलयीताधं खाधं दत्त्वा प्रचालितम्। रसज्ञैः कीर्तितमिदं सिक्थतैलं द्वितीयकम्॥

(र.त. 4/62-63)

एक भाग स्वच्छ सिक्थ तथा पाँच भाग तिल तैल लेकर उसे एक कलईदार भगौने में डालकर मंदाग्नि पर पाक करते हैं। जब मोम पिघलकर तैल में मिल जाय तो इसे उतारकर एक कलछी द्वारा एक याम तक चलाते हैं जिससे यह मक्खन सदृश हो जाय। रसशास्त्र के जानकार इसे सिक्थ तैल कहते हैं।

सिक्थ तिल प्रयोग

आद्यं तु शीत समये ग्रीष्मर्तौ तु द्वितीयकम्। सिक्थ तैलं मलहरप्रयोगेषु नियोजयेत्॥

(र.त. 4/64)

पहले वर्णित 6 भाग तिल तैल वाले सिक्थ तैल को शीत ऋतु में तथा 5 भाग तिल तैल द्वारा निर्मित सिक्थ तेल को ग्रीष्म ऋतु में प्रयोग करते हैं। सिक्थ तैल का प्रयोग मलहर निर्माण में किया जाता है।

मलहर

मलहर शब्द यूनानी के मलहम से लिया गया है। इसका उल्लेख सर्वप्रथम योग रत्नाकर द्वारा किया गया है। मलहर कल्पना का वर्णन योगरत्नाकर, रसतरङ्गिणी, रसतन्त्रसार एवं सिद्ध प्रयोग संग्रह, आयुर्वेद सार संग्रह आदि ग्रन्थों में मिलता है। रस तरङ्गिणीकार ने मलहर निर्माण हेतु सिक्थ तैल का वर्णन किया है, यथा–

सिक्थतैलं मलहर योगेषु नियोजयेत्॥ (र.त. 4/64)

अर्थात् सिक्थ तैल मलहर योग के लिए आवश्यक होता है या प्रयुक्त होता है। इस प्रकार सिक्थ तैल को मलहर कल्पना का उपादान द्रव्य माना जा सकता है। अन्य द्रव्यों में गन्धक, टंकण, कासीस आदि का प्रयोग किया जाता है। यह लेप कल्पना से भिन्न ऐसे है क्योंकि जहाँ लेप कल्पना में औषध द्रव्यों के चूर्ण को किसी द्रव से पीसकर इसका प्रयोग करते हैं। वहीं मलहम कल्पना में औषधि द्रव्यों के चूर्ण को सिक्थ तैल (base) में मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है।

शतधौत एवं सहस्रधौत घृत

यावति मज्जति तावत् शीतोदके घृतं प्रक्षिप्य हस्तेन मर्दयेत तदुदकं स्रावयेत, इत्येको वारः एवं सहस्रम्। (डल्हण)

अर्थात् जल की जितनी मात्रा में घृत पानी में पूरी तरह से डूब जाय उतनी मात्रा में ठंडा जल लेकर घृत तथा पानी को हाथ से मर्दन करते हैं। तथा जब यह पानी सोखना बन्द कर दे तो पानी को गिरा देते हैं। इस प्रकार यह धोने की एक प्रक्रिया है। जब इस प्रक्रिया को सौ बार दोहराते हैं तो उसे शतधौत तथा जब इसे एक हजार बार दोहराते हैं तो इसे सहस्र धौत घृत कहते हैं। इसका उपयोग दाह, अग्नि दग्ध आदि में किया जाता है।

विशेष–इस घृत निर्माण हेतु घृत तथा जल की मात्रा को एक थाली में लेकर मर्दन करना उचित रहता है। शुरू के कुछ बार पानी को घृत absorb करता है बाद में जल की मात्रा absorb नहीं होती है। यह एक तरह से emulsion बन जाता है।

जात्यादि घृतम्

जातीनिम्ब पटोलं च द्वे निशे कटुरोहिणी। मंजिष्ठा मधुकं सिक्थं करञ्जोशीरसारिवाः॥
तुत्थं च विपचेत्सम्यक्कल्कैरेभिर्घृतं बुधः। अस्य लेपाद्विरोहन्ति सूक्ष्मनाडीव्रणाऽपि॥
मर्माश्रिताः क्लेदिनश्च गम्भीराः सरूजो व्रणाः। (शा.म. 9/58-59)

घटक द्रव्य– गोघृत – 1 किलो
जल – 4 लीटर

कल्क द्रव्य– 1. जातीपत्र, 2. निम्ब पत्र, 3. पटोलपत्र, 4. हरिद्रा, 5. दारुहरिद्रा, 6. कटुरोहिणी, 7. मंजिष्ठा, 8. मुलेठी, 9. सिक्थ, 10. करंजबीज, 11. उशीर, 12. सारिवा, 13. तुत्थ। ये प्रत्येक द्रव्य समान मात्रा में तथा कुल 250 ग्रा. अर्थात् प्रत्येक द्रव्य 19 या 20 ग्रा. लेना चाहिए।

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी, सूतीवस्त्र, Heating device

निर्माण विधि– सर्वप्रथम घृत को भगौने में लेकर मन्दाग्नि पर गर्म करते हैं। तत्पश्चात् इसमें कल्क सावधानी पूर्वक डालते है तथा पुनः इसमें जल डालकर घृत पाक करते है। जब घृत सिद्ध हो जाय तो इसे उतार कर छान लेते हैं तथा सुरक्षित रख लेते हैं। सिक्थ तथा तुत्थ को प्रक्षेप रूप में घृत सिद्ध करने के पश्चात् भी मिला सकते है।

प्रयोग– व्रणों पर इसके प्रयोग से सूक्ष्म मुख वाले नाड़ी व्रण भी भर जाते हैं। मर्मस्थलों पर होने वाले व्रण, गम्भीर व्रण, क्लेद वाले तथा पीड़ा वाले व्रण इसके घृत के लेप करने से रोपण (भर) हो जाते हैं।

त्रिफला घृत

त्रिफलाया रस प्रस्थं प्रस्थं वासा रसोद्भवम्। भृङ्गराजरसप्रस्थं प्रस्थमाजं पयः स्मृतम्॥
दत्त्वा तत्र घृतप्रस्थं कल्कैः कर्षमितैः पृथक्। त्रिफला पिप्पली द्राक्षा चन्दनं सैन्धवं बला॥
काकोली क्षीरकाकोली मेदा मरिचनागरम्। शर्करा पुण्डरीकं च कमलं च पुनर्नवा॥
निशायुग्मं च मधुकं सर्वैरेभिर्विपाचयेत्। नक्तान्ध्यं नकुलान्ध्यं च कण्डू पिल्लं तथैव च॥
नेत्रस्रावं च पटलं तिमिरं काचकं जयेत्। अन्येऽपि प्रशमं यान्ति नेत्ररोगाः सुदारुणाः॥
त्रैफलं घृतमेताद्धि पाने नस्यादि षूचितम्॥ (शा.म. 9/66-71)

घटक द्रव्य– गोघृत – 1 प्रस्थ (768 ग्रा)
त्रिफला क्वाथ – 1 प्रस्थ (768 ग्रा)
वासा स्वरस – 1 प्रस्थ (768 ग्रा)
भृङ्गराज स्वरस – 1 प्रस्थ (768 ग्रा)
बकरी का दूध – 1 प्रस्थ (768 ग्रा)

कल्क– 1 आमलकी, 2. हरीतकी, 3. विभीतकी 4. बड़ी पिप्पली, 5. द्राक्षा, 6. रक्तचन्दन, 7. सैन्धव लवण, 8. बलामूल, 9. काकोली, 10. क्षीर काकोली, 11. मेदा, 12. मरिच, 13. शुण्ठी, 14. चीनी, 15. श्वेत कमल, 16. नील कमल, 17. पुनर्नवामूल, 18. हरिद्रा, 19. दारुहरिद्रा, 20. मुलेठी। प्रत्येक द्रव्य एक कर्ष (12 ग्रा.) मात्रा में।

Scanned with OKEN Scanner

यन्त्र/उपकरण– स्टील भगौना, कलछी, सूती वस्त्र, इमामदस्ता, भट्ठी ।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम स्टील के भगोने में घृत/मूर्च्छित घृत लेकर उसे मन्दाग्नि पर गर्म करते है । पुनः इसे अग्नि से उतार कर कल्क द्रव्यों को सावधानी पूर्वक डालकर चलाते हैं । तत्पश्चात् इसमें त्रिफला क्वाथ, वासा स्वरस, भृंगराज स्वरस तथा अजादुग्ध डालकर चलाते है । इसमें चार गुना जल भी डालना चाहिए । पुनः उसे सम्यक् रूप से पाक करते है । जब घृत सिद्धि लक्षण आ जाय तब इसे उतार कर छान लेते है तथा किसी पात्र (कांच पात्र) में सुरक्षित रख लेते है ।

मात्रा एवं अनुपान– 6-12 ग्रा. गोदुग्ध के साथ

उपयोग– रतौंधी (Night blindness), नकुलान्ध, कण्डू, पिप्ल, नेत्रस्राव, तिमिर तथा आँख के अन्य रोगों में इसका प्रयोग करते हैं ।

विमर्श– इस घृत के निर्माणार्थ प्रयुक्त त्रिफला की मात्रा में आचार्यों में मतभिन्नता है । कुछ आचार्य त्रिफला एक प्रस्थ तथा कुछ आचार्य त्रिफला से आमलकी स्वरस एक प्रस्थ, हरीतकी, स्वरस एक प्रस्थ तथा विभीतकी स्वरस एक प्रस्थ ग्रहण करने का निर्देश किया है ।

क्षीरषटपल घृत

पिप्पली पिप्पलीमूल चव्य चित्रकनागरैः । ससैन्धवैश्च पलिकैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा तद्धृत प्लीहनाशनम् । विषमज्वरमन्दाग्निहरं रुचिकरं परम् ॥

(शा.म. 9/19-20)

घटक द्रव्य–

कल्क द्रव्य– 1. पिप्पली, 2. पिप्पलीमूल, 3. चव्य, 4. चित्रक, 5. शुण्ठी, 6. सैन्धव लवण । उपरोक्त समस्त द्रव्य 288 ग्रा. अर्थात् प्रत्येक द्रव्य 48 ग्रा.

घृत– 1 प्रस्थ

गोदुग्ध– 4 प्रस्थ (आचार्य आढमल्ल ने इसमें चार गुना जल भी देकर पाक का उल्लेख किया है)

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी, सूत्रीवस्त्र, चूल्हा ।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम घृत को मन्दाग्नि पर गर्म करके इसमें कल्क द्रव्य डालते हैं । पुनः इसमें क्षीर तथा जल डालकर सिद्धि लक्षण आने तक पाक करते हैं । तत्पश्चात् इसे छानकर कांच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं ।

उपयोग– प्लीहा रोग, विषमज्वर तथा मन्दाग्नि में इसका प्रयोग करते हैं ।

कासीसादि तैल

कासीसं सैन्धवं कृष्णा शुण्ठी कुण्ठञ्च लांगली । शिलाभिदश्चमारश्च दन्ती जन्तुघ्न चित्रकम् ॥
तालकं कुनटी स्वर्णक्षीरी चैतैः पचेद्विषक् । तैलं स्नुह्यर्कपयसा गवां मूत्रं चतुर्गुणम् ॥

(भै.र.अर्श. 111-112)

घटक द्रव्य–

1. कासीस	- 12 ग्रा	2. सैन्धव लवण	- 12 ग्रा.
3. पिप्पली	- 12 ग्रा.	4. शुण्ठी	- 12 ग्रा.
5. कुष्ठ	- 12 ग्रा.	6. लांगली	- 12 ग्रा.
7. पाषाण भेद	- 12 ग्रा.	8. करवीर	- 12 ग्रा.
9. दन्ती	- 12 ग्रा.	10. विडंग	- 12 ग्रा.
11. चित्रक	- 12 ग्रा.	12. हरताल	- 12 ग्रा.
13. मनःशिला	- 12 ग्रा.	14. स्वर्णक्षीर	- 12 ग्रा.
15. स्नुहीक्षीर	- 12 ग्रा.	16. अर्कक्षीर	- 12 ग्रा.
17. तिल तैल	- 768 ग्रा.	18. गोमूत्र	- 3.072 ली.

तैल पाक विधि से इसे सिद्ध करते है ।

उपयोग– वाह्य/स्थानीय प्रयोग, अर्श रोग में ।

पंचगुण तैलम्

सन्दर्भ ग्रन्थ– सिद्धयोग संग्रह-वेदनाहर, आचार्य यादव जी ।

घटक द्रव्य–

1. तिल तैल	– 1 लीटर
2. आमलकी	
3. हरीतकी	
4. विभीतकी प्रत्येक	– 60 ग्रा.
5. निम्ब पत्र	– 180 ग्रा.
6. निर्गुण्डी पत्र	– 180 ग्रा.
7. क्वाथ हेतु जल	– 4.320 लीटर
अवशेष	– 1.100 लीटर
8. मोम	– 50 ग्रा.
9. गन्धविरोजा	– 50 ग्रा.
10. शिलारस	– 50 ग्रा.
11. राल	– 50 ग्रा.
12. गुग्गुलु	– 50 ग्रा.
13. कर्पूर	– 50 ग्रा.
14. तारपीन का तेल	– 30 मिली.
15. यूकेलिप्टस का तेल	– 30 मिली.
16. केजोपुटी तेल	– 30 मिली.

Scanned with OKEN Scanner

...ल्क, कलश, इमामदस्ता, सूतीवस्त्र, चूल्हा (Heating device)

निर्माण विधि– सर्वप्रथम निर्गुण्डी तथा नीम एवं निर्गुण्डी की पत्तियों को चौथाई शेष रहने पर छान लेते हैं । अब इसके पश्चात् एक स्टेनलेस स्टील के भगौने में तिल तैल लेकर उसे मन्दाग्नि पर पाक करते हैं । जब यह निष्केन हो जाय तो इसे अग्नि से उतारकर सोंठ, मरिचिरोला, शिलारस, साल तथा गुग्गुलु डालकर मन्दाग्नि पर पाक करते हैं । जब स्नेह पाक हो जाय तथा जलीयांश सूख जाय तो इसे अग्नि से उतारकर सूती वस्त्र से छान लेते हैं । पश्चात् इसमें कपूर तथा तीनों अम्ल तैल डालकर अच्छी प्रकार से मिला लेते हैं । अब इसे किसी काँच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं ।

उपयोग– वेदनाशामक है । चोट लगे स्थान पर लगाने से सद्यः लाभ होता है । कर्णशूलनाशक है । कटे एवं जले हुए स्थानों पर, व्रणों पर लगाने से बड़ा ही लाभ होता है । यह सन्धिवात एवं आमवात नाशक है ।

अर्कतैल

अर्कपत्र रसे पक्वं हरिद्राकल्कसंयुतम् । नाशयेत्सार्षपे तैलं पामा कच्छूं विचर्चिकाम् ॥

(शा.म. 9/147)

घटक द्रव्य– सर्षप तैल – 1 लीटर
हरिद्रा कल्क – 25 ग्रा.
पक्व अर्कपत्र स्वरस – 4 लीटर

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कच्छी, सूतीवस्त्र, चम्मच, चूल्हा आदि ।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम पक्व अर्कपत्र एकत्र कर उन्हें साफ कर लेते हैं तथा इसका स्वरस निकाल कर अलग रख लेते हैं । अब एक भगौने में सरसों का तेल लेकर इसे गर्म करते हैं पुनः इसमें हरिद्रा कल्क डालकर चलाते हैं तथा इसके पश्चात् इसमें अर्कपत्र स्वरस मिलाते हैं तथा स्नेह पाक करते हैं । जब यह सिद्ध हो जाय तो इसे उतार कर छान लेते हैं तथा काँच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं ।

उपयोग– पामा, कच्छू तथा विचर्चिका में इसे प्रयोग करते हैं ।

कुटज सूर्यपाकी तैल

घटक द्रव्य–
1. नारिकेल तैल – 100 मिली
2. कुटज पत्र (स्त्री) – 50 ग्राम

उपरोक्त दोनों द्रव्यों को स्टेनलेस स्टील पात्र में रखकर तीव्र सूर्य के प्रकाश में सात दिन रखते हैं । तत्पश्चात् इसे छान लेते है । इसमें उपस्थित पत्र गहरे भूरे रंग के हो जाते है । जबकि तैल गाढ़ा बैंगनी रंग का प्राप्त होता है ।

उपयोग– त्वक् विकार

भल्लातक तैल पातन

भल्लातकान् वासयेत्तु क्षीरे प्राङ्सूत्र भावितान् । ततो द्विधा च्छेदयित्वा लौहे कुम्भे निधापयेत् ॥
कुम्भेऽन्यस्मिन्नखाते तु तं कुम्भमथ योजयेत् । मुखं मुखेन सन्धाय गोमयैर्दाहयेत्ततः ॥
यः स्नेहश्चयवते तस्माद् ग्राहयेत्तं शनैर्भिषक् । (सु.चि. 1/90-92)

घटक द्रव्य– सुपक्व भल्लातक

यन्त्र/उपकरण– पाताल यन्त्र, (घड़ा, एक भगौना ऐसा जो घड़े के मुख पर ठीक से बैठ सके, लोहे की जाली, तार लोहे का, चाकू, उपले, माचिश)

निर्माण विधि– सर्वप्रथम भल्लातक को मिट्टी के घड़े में रखकर, घड़े के मुख पर लोहे की जाली लगाकर उसे घड़े के गर्दन में तार की सहायता से अच्छी प्रकार बांध देते हैं । अब इसे उलटकर देख लेते हैं कि यह जाली भल्लातक के भार से घड़े से अलग तो नहीं हो जाती है । यह सुनिश्चित करना चाहिए कि यह जाली घड़े से अलग न हो । अब एक भगौना जो इस घड़े पर फिट बैठ सके, घड़े के मुख से तथा भगौने के मुख को अच्छी प्रकार से सन्धि बन्धन कर देते हैं । अब एक गड्ढा इस प्रकार खोद कर बनाते हैं कि इसमें घड़ा भली प्रकार से बैठ जाय । गड्ढे में घड़ा रखने से पहले इस गड्ढे में थोड़ा सा पानी डाल देते हैं । अब इसमें घडे को इस प्रकार रखते हैं कि भगौना नीचे तथा घड़े का तली वाला भाग ऊपर हो । इस प्रकार घड़े को रखकर इसके ऊपर उपले रखकर इसे जला देते हैं । ऐसा करने से भल्लातक तैल नीचे भगौने में एकत्र होता है । जब उपले जलकर स्वांगशीत हो जाय तो घड़े को सावधानी पूर्वक निकाल कर उसमें भगौने को अलग कर लेते हैं । इस प्रकार उपरोक्त विधि से भल्लातक तैल प्राप्त हो जाता है ।

उपयोग– यह भल्लातक तैल, घृत एवं तैल के साथ मिलाकर कुष्ठ आदि त्वक् विकारों में प्रयुक्त करते हैं । आचार्य सुश्रुत ने इसका प्रयोग कृष्ण कर्म (व्रण के साठ उपक्रम में से एक उपक्रम) में किया है ।

जयपाल तैल पातन

जयपाल तैल पातन की विधि भी भल्लातक तैल पातन के समान है । इसमें जयपाल बीज का सर्वप्रथम ऊपरी आवरण हटा देते है । जयपाल बीज को बीच से काटा भी जा सकता है । तत्पश्चात् इसे पाताल यन्त्र की मदद से तैल प्राप्त करते है । इस प्रक्रिया में अग्नि का विशेष ध्यान रखते हैं अन्यथा तैल के जल जाने का भय रहता है । इस प्रक्रिया में तैल की मात्रा कम ही प्राप्त होती है । आधुनिक विधि में Croton oil cold compression method से प्राप्त किया जाता है ।

विश्वामित्र कपाल स्नेह

ताजे नारियल (विश्वामित्र) को तोड़कर उसके कपाल (Outer hard shell) को अच्छी प्रकार से धूप में सुखा लेते है तथा इसे छोटे-छोटे टुकड़े में करके पाताल यन्त्र द्वारा (भल्लातक तैल पातनविधि) स्नेह प्राप्त करते हैं ।

च्यवनप्राश

बिल्वोऽग्निमन्थः श्योनाकः काश्मर्यः पाटलिर्बला । पर्ण्यश्चतस्त्रः पिप्पल्यः श्वदंष्ट्रा बृहतीद्वयम् ॥
शृङ्गी तामलकी द्राक्षा जीवन्ती पुष्करागुरु । अभया चामृता ऋद्धिर्जीवकर्षभकौ शटी ॥
मुस्तं पुनर्नवा मेदा सैला चन्दनमुत्पलम् । विदारी वृषमूलानि काकोली काकनासिका ॥

Scanned with OKEN Scanner

एषां पलोन्मितान् भागाञ्जलान्यामलकस्य च । पञ्च दद्यात्तदैकध्यं जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
ज्ञात्वा गतरसान्येतान्यौषधान्यथ तं रसम् । तच्चामलकमुद्धृत्य निष्कुलं तैलसर्पिषोः ॥
पलद्वादशके भृष्ट्वा दत्त्वा चार्धतुलां भिषक् । मत्स्यण्डिकायाः पूतायाः लेहवत्साधु साधयेत् ॥
षट्पलं मधुनश्चात्र सिद्धशीते प्रदापयेत् । चतुष्पलं तुगाक्षीर्याः पिप्पलीद्विपलं तथा ॥
पलमेकं निदध्याच्च त्वगेलापत्रकेशरात् । इत्येतं च्यवनप्राशः परमुक्तो रसायनः ॥
कासश्वासहरश्चैव विशेषेणोपदिश्यते । क्षीणक्षतानां वृद्धानां बालानां चाङ्गवर्धनः ॥
स्वरक्षयमुरोरोगं हृद्रोगं वातशोणितम् । पिपासां मूत्रशुक्रस्थान् दोषांश्चाप्यपकर्षति ॥
अस्य मात्रां प्रयुञ्जीत चोपरुन्ध्यान्न भोजनम् । अस्य प्रयोगाच्च्यवनः सुवृद्धोऽभूत् पुनर्युवा ॥
मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्वमायुःप्रकर्षं बलमिन्द्रियाणाम् । स्त्रीषु प्रहर्षं परमग्निवृद्धिं वर्णप्रसादं पवनानुलोम्यम् ॥
रसायनस्यास्य नरः प्रयोगात्तमेत जीर्णोऽपि कुटीप्रवेशात् । जराकृतं रूपमपास्य सर्वं बिभर्ति रूपं नवयौवनस्य ॥
(च.चि. 1/1/62-74)

क्वाथ द्रव्य

01. बिल्व	02. अग्निमन्थ	03. श्योनाक
04. काश्मर्य	05. पाटला	06. बला
07. शालपर्णी	08. पृश्निपर्णी	09. मुद्गपर्णी
10. माषपर्णी	11. पिप्पली	12. गोक्षुर
13. छोटी कटेरी	14. बडी कटेरी	15. कर्कट शृंगी
16. भूआमलकी	17. द्राक्षा	18. जीवन्ती
19. पुष्करमूल	20. अगरू	21. हरीतकी
22. अमृता (गिलोय)	23. ऋद्धि	24. जीवक
25. ऋषभक	26. शटी	27. मुस्ता
28. पुनर्नवा	29. मेदा	30. छोटी इलायची
31. चन्दन	32. उत्पल	33. विदारीकन्द
34. वासामूल	35. काकोली	36. काकनासा

ये समस्त द्रव्य पृथक-पृथक 1 पल अर्थात् 48 ग्राम लेना चाहिए तथा इनको यवकुट कर लेना चाहिए । (कुल मात्रा 36x48=1.728 किलो ग्रा)

आँवला– 500 नग

तैल तथा घृत– प्रत्येक 6 पल अर्थात् प्रत्येक 288 ग्रा.

शहद– 6 पल अर्थात् 288 ग्रा.

प्रक्षेप द्रव्य–

वंशलोचन- 4 पल (172 ग्रा.)

पिप्पली- 2 पल (96 ग्रा.)

नागकेशर, पत्र, त्वक्, एला- 1 पल मिश्रित रूप में (48 ग्रा) इन द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण लेना चाहिए ।

क्वाथ के लिये जल = 1 द्रोण (13 लीटर)

शेष जल – 1/4

मत्स्यण्डिका– 1/2 तुला (2.400 किलोग्राम)

च्यवनप्राश अवलेह निर्माण विधि

सर्वप्रथम एक कलईदार भगौने में समस्त क्वाथ द्रव्य को लेकर उसमें 13 लीटर पानी डालकर रात्रि पर्यन्त रख देते हैं । अगले दिन प्रातः इसे अग्नि पर चढ़ाकर क्वाथ सिद्ध करते हैं ।

आंवले की 2-3 पोटली बनाकर इसी क्वाथ में डाल देते हैं । थोड़ी देर पश्चात् जब यह देख ले कि आंवले उबल गये है तो इन पोट्टली को एक-एक करके बाहर निकालते हैं । पोटली से आंवलो को निकालकर एक ट्रे में रख लेते हैं तथा इनका बीज निकाल देते हैं । तत्पश्चात् एक स्टील की टंकी या कोई और पात्र उसके मुख पर पतला कपड़ा या महीन मच्छरदानी बाँध देते है तथा इसी पर आँवलों को घिसकर उसका कल्क निकाल लेते हैं । ऐसा करने से आँवले का कल्क नीचे टंकी में एकत्रित होता रहता है तथा रेशे ऊपर मच्छरदानी के रह जाते हैं । इस प्रकार यह प्रक्रिया सम्पूर्ण आंवलों के कल्क निकाल जाने तक करते हैं ।

जब क्वाथ एक चौथाई शेष रहता है तब इसे कपड़े से अच्छी प्रकार छान लेते हैं तथा इसे एक भगौने में रख लेते हैं ।

अब एक कलईदार पात्र या कड़ाही में जिसमें स्नेह द्रव्य डालकर उसे गर्म करते हैं तत्पश्चात् इसमें सावधानीपूर्वक आँवले का कल्क डालकर चलाते हैं । धीरे-धीरे कल्क का रंग बदलने लगता है तथा स्नेह जो शुरु में कल्क में मिला हुआ रहता है पुनः ऊपर आ जाता है । अब इसे अग्नि से उतार लेते हैं ।

तत्पश्चात् जो क्वाथ पहले से बना है उसमें मत्स्यण्डिका डालकर चासनी का निर्माण करते है । जब इसमें गन्दगी दिखे तो इसे एक छन्नी से निकालते रहते हैं । थोड़ी देर पश्चात् जब इसमें तार बनने लगे तो इसमें कल्क डालकर अच्छी प्रकार लकड़ी के घोटने से मिलाकर इसको एक कटोरी जिसमें पानी भरा हो उसमें गिराकर देखते हैं । यदि यह फैलता नहीं है तो इसे उतार लेते हैं ।

जब यह कुछ ठंडा हो जाय तब इसमें प्रक्षेप द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिला देते हैं । एकदम पूरी तरह से ठंडा होने पर इसमें शहद मिलाकर सुरक्षित रख लेते हैं ।

मात्रा– आचार्य चरक के अनुसार इसकी इतनी मात्रा प्रयोग की जानी चाहिए जितना खाने से भोजन करने की इच्छा बनी रहे ।

आजकल 1 तोल मात्रा सामान्य रूप से प्रयुक्त की जाती है ।

Scanned with OKEN Scanner

है । 500 आँवलों हेतु 5 किग्रा. चीनी का प्रयोग करना ठीक रहता है । इस प्रकार यदि 25 किलो आँवले से च्यवनप्राश का निर्माण किया जाय तो यह 38 किलो के आसपास बनता है । तथा इसको बिना Preservative के भी रखा जा सकता है तथा यह खराब नहीं होता है । आचार्य चरक के अनुसार च्यवनप्राश बनाने पर यह कसैला तथा कम मीठा बनता है । लेकिन यदि इसके विशेष गुण को ग्रहण करना हो तो इसे शास्त्रोक्त विधि से अर्थात् शास्त्रोक्त वर्णित घटक द्रव्यों की मात्रा अनुसार बनाना उचित प्रतीत होता है ।

आजकल च्यवनप्राश का निर्माण सम्पूर्ण रूप से मशीनो द्वारा किया जाता है । इसमें निम्न मशीनों का प्रयोग किया जाता है—

1. Fruit pulp extraction– आँवले का कल्क निकालने हेतु
2. Steam jacket क्वाथ निर्माण हेतु
3. Frying pan कल्क पाक (Frying) हेतु
4. Reactor – इसमें क्वाथ तथा चीनी को मिलाते हैं। इसी में Sugar solution (चासनी) की निर्माण करते हैं तथा अवलेह की पिष्टी भी इसी मशीन में मिलाते हैं। प्रक्षेप भी यहीं पर डालते हैं।
5. Packaging machine– पैकिंग हेतु

इसके अतिरिक्त आजकल Sugar free च्यवनप्राश की भी बाजार में उपलब्धता है । जिसमें Alcohol sugar जैसे Sorbital का प्रयोग Sugar के स्थान पर किया जाता है । परन्तु Sorbital का absorption कम होने के कारण यह Diarrhoea करता है । जिससे अब इसके स्थान पर Sucralose (Chlorinated version of sucrose) या Sodium Saccharine का प्रयोग किया जाता है ।

निम्बू शार्कर

सन्दर्भ– रस तन्त्र सार सिद्ध प्रयोग संग्रह भाग 1

घटक द्रव्य–
1. निम्बू स्वरस - 1 भाग
2. शर्करा - 2 भाग

शार्कर निर्माण विधि से निर्मित करते हैं ।

दार्वी रसक्रिया

रसाञ्जन को रसक्रिया कल्पना के अन्तर्गत रखा गया है । आचार्य भावमिश्र ने इसका वर्णन निम्न किया है

दार्वी क्वाथ समं क्षीरं पादं पक्त्वा यदा घनम् । तदा रसाञ्जनं ज्ञेयं तन्नेत्रयोः परमं हितम् ॥
(भा.प्र. हरी 203)

आचार्य भावमिश्र ने रसाञ्जन निर्माण का वर्णन इस प्रकार किया है । रसाञ्जन निर्माण हेतु दारूहरिद्रा काष्ठ को यवकुट कर लेते हैं ।तत्पश्चात् इसको 16 गुना जल में भिगोकर रात्रि पर्यन्त रख देते है । अगले दिन इसको मध्यम अग्नि पर क्वाथ करते हैं । जब यह गत रसत्व हो जाय तब इसे छान लेते हैं । अब इस क्वाथ से चतुर्थांश बकरी का दूध मिलाकर मध्याग्नि पर सावधानीपूर्वक पाक करते हैं । जब यह लेहवत् हो जाय तब इसे अग्नि पर से उतारकर किसी ट्रे में फैलाकर तीव्र धूप में सुखाते हैं । यही रसाञ्जन है ।

Scanned with OKEN Scanner

उपयोग– रसाञ्जन का उपयोग नेत्र रोग में किया जाता है ।

आचार्य सुश्रुत ने रसाञ्जन का प्रयोग हरिद्रा चूर्ण के साथ रोमजनन में प्रयुक्त किया है । यथा—

हरिद्रादन्तधर्मी कृत्वा मुख्यं चैव रसाञ्जनम् । रोमाण्येतेन जायन्ते लेपात्पाणितलेष्वपि ॥

(सु.चि. 1/101)

हरिद्रा खण्ड

हरिद्राया पलान्यष्टौ षट्पलं हविषस्तथा । क्षीरार्द्धकेन संयुक्तं खण्डस्यार्द्धशतं तथा ॥
पचेन्मृद्वग्निना वैद्यो भाजने मृन्मये दृढे । कटुत्रिकं त्रिजातञ्च क्रिमिघ्नं त्रिवृता तथा ॥
त्रिफला केशरं मुस्तं लौहं प्रति पलं पलम् । सञ्चूर्ण्य प्रक्षिपेत्तत्र तोलकार्द्धन्तु भक्षयेत् ॥
कण्डू विस्फोटदद्रुणां नाशनं परमौषधम् । प्रतप्तकाञ्चनाभासो देहो भवति नान्यथा ॥
शीतपित्तोदर्दकोठान् सप्ताहादेव नाशयेत् । हरिद्रा नामतः खण्डः कण्डूनां परमौषधम् ॥

(भैषज्यरत्नावली उदर्दशीतपित्ते 13-17)

घटक द्रव्य–

1. हल्दी	–	384 ग्रा. (या दूनी मात्रा आर्द्र हल्दी)	
2. घृत	–	288 ग्रा. (हरिद्रा भर्जन हेतु)	
3. गोदुग्ध	–	3.072 लीटर	
4. खण्ड	–	2.400 किलो (अभाव में चीनी का ग्रहण करते हैं)	

प्रक्षेप द्रव्य–

5. शुण्ठी	6. मरिच	7. पिप्पली	8. छोटी एला
9. दालचीनी	10. तेजपत्र	11. विडगं	12. त्रिवृत
13. आमलकी	14. विभीतकी	15. हरीतकी	16. नागकेशर
17. मुस्त	18. लोहभस्म		

क्रम सं. 5 से 17 तक के प्रत्येक द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण 6 ग्रा. ।

यन्त्र/उपकरण– भगौना, दर्वी, आदि

निर्माण विधि– सर्वप्रथम हरिद्रा को घृत में अच्छी प्रकार से भर्जन कर लेते हैं। तत्पश्चात् एक भगौने में पानी तथा खण्ड लेकर पाक करते हैं । जब इसमें 3-4 तार बनने लगे तो इसे उतार लेते है तथा हल्दी का कल्क एवं प्रक्षेप द्रव्य अच्छी तरह से मिला देते हैं ।

विमर्श– हरिद्रा खण्ड को चूर्ण रूप में बना लेना ज्यादा अच्छा रहता है जिससे इसकी ज्यादा रहती है । तथा यह खराब भी नहीं होता है । उपर्युक्त योग में दूध का वर्णन है । दूध में शर्करा डालकर पाक करने से थोड़ा मुश्किल होती है क्योंकि दूध में उपस्थित मावा इसमें बाधा करता है । अतः पानी के साथ चासनी निर्माण करना ज्यादा ठीक रहता है । तथा दूध को अनुपान के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं ।

मात्रा– 6 ग्रा.

उपयोग– कण्डू, विस्फोट, शीतपित्त, उदर्द, कोठ आदि रोगों में । इसके एक सप्ताह प्रयोग से शरीर प्रतप्त काञ्चन जैसी आभा वाला हो जाता है ।

नारिकेल खण्ड

कुडवमितामिह स्यान्नारिकेलं सुपिष्टम् पलपरिमितसर्पिः पाचितं खण्डतुल्यम् ।
निजपयसि तदेतत् प्रस्थमात्रे विपक्वं गुडवदथ सुशीते शाणभागान् क्षिपेच्च ॥
धान्यकपिप्पलिपयोदतुगाद्विर्जीराच्छाणं त्रिजामिभकेशवद्विचूर्ण्य ।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं क्षयमस्रपित्तं शूलं वमिं सकलपौरूष कारि हारि ॥

(चक्रदत्त परिणामशूल 78-79)

घटक द्रव्य–

1. नारिकेलगिरि	–	192 ग्रा.
2. घृत	–	48 ग्रा.
3. खण्ड	–	192 ग्रा. (अभाव में शर्करा ग्रहण कर सकते हैं)
4. नारियल जल	–	768 मिली

प्रक्षेप द्रव्य–

5. धनियां	6. पिप्पली	7. नागरमोथा	8. वंशलोचन
9. श्वेतजीरा	10. कृष्णजीरा	11. दालचीनी	12. छोटी एला
13. तेजपत्र	14. नागकेशर		

उपरोक्त द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण प्रत्येक 3 ग्रा.

यन्त्र/उपकरण– भगौना, कलछी, इमामदस्ता आदि

निर्माण विधि– सर्वप्रथम नारियल गिरि को पीसकर अच्छी प्रकार से कल्क बना लेतें हैं तत्पश्चात् इसे घृतभर्जन कर रख लेते हैं । अब एक दूसरे भगौने में नारियल जल तथा खण्ड लेकर चासनी बनाते हैं । जब 2-3 तार की चासनी बन जाय तब इसमें नारियल कल्क डालकर गुडपाक लक्षण आने तक पाक करते हैं । तत्पश्चात् इसे उतारकर इसमें चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रख लेते हैं ।

मात्रा– 6 से 12 ग्रा.

अनुपान– जल

उपयोग– अम्लपित्त, अरुचि, रक्तपित्त, शूल आदि में ।

कुमार्यासव

सुपक्वरस संशुद्धं कुमार्याः पत्रमाहरेत् । यत्रेन रसमादाय पात्रे पाषाणमृन्मये ॥
द्रोणे गुडतुला दत्त्वा घृतभाण्डे निधापयेत् । माक्षिकं पक्वलोहं च तस्मिन्नर्धतुलां क्षिपेत् ॥
कटुत्रिकं लवङ्गं च चातुर्जातकमेव च । चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं गजपिप्पली ॥
चविकं हपुषां धान्यं क्रमुकं कटुरोहिणी । मुस्ता फलत्रिकं रास्ना देवदारु निशाद्वयम् ॥
मूर्वा मधुरसा दन्ती मूलं पुष्करसंभवम् । बला चातिबला चैव कपिकच्छूस्त्रिकण्टकम् ॥
शतपुष्पा हिङ्गुपत्री आकल्लकमुटिङ्गणम् । पुनर्नवाद्वयं लोध्रं धातुर्माक्षिकमेव च ॥
एषां चार्धपलं दत्त्वा धातक्यास्तु पलाष्टकम् । पलं चार्धपलं चैव पलद्वयमुदाहृतम् ॥

Scanned with OKEN Scanner

कुमारी स्वरसेन कल्कार्धाक्षितोयतः। पूतेन शीतलं पेयं वृष्यं पञ्चाग्निशूलनिवारणम्॥
अतिवृद्धं ज्वरोन्मादकामलापुरं च नाशयेत्। त्रिदोषजं घोरं आशोगानुद्धाघर्तमग्र स्मृतिम्॥
पुराकृच्छ्रप्रदं शुक्रदोषं नष्टार्त्तवीम्। कृमिजं रक्तपित्तं च नाशयेत्तु न संशयः॥

(शा.म. 10/18-27)

घटक द्रव्य–

1. कुमारी पत्र स्वरस	– 13 लीटर	2. गुड़	– 5 किलो
3. घृत	– 2.5 किलो	4. तीक्ष्ण लोह भस्म	– 2.5 किलो
5. शुण्ठी	– 25 ग्रा.	6. पिप्पली चूर्ण	– 25 ग्रा.
7. मरिच	– 25 ग्रा.	8. लवङ्ग	– 25 ग्रा.
9. दालचीनी	– 25 ग्रा.	10. छोटी एला	– 25 ग्रा.
11. तेजपत्र	– 25 ग्रा.	12. नागकेशर	– 25 ग्रा.
13. चित्रकमूल	– 25 ग्रा.	14. पिप्पलीमूल	– 25 ग्रा.
15. विडङ्ग	– 25 ग्रा.	16. गजपिप्पली	– 25 ग्रा.
17. चव्य	– 25 ग्रा.	18. हाऊबेर	– 25 ग्रा.
19. अजमोद	– 25 ग्रा.	20. सुपारीफल	– 25 ग्रा.
21. कुटकी	– 25 ग्रा.	22. नागरमोथा	– 25 ग्रा.
23. अजवायन	– 25 ग्रा.	24. हरीतकी	– 25 ग्रा.
25. बहेड़ा	– 25 ग्रा.	26. रास्ना	– 25 ग्रा.
27. देवदारु	– 25 ग्रा.	28. हरिद्रा	– 25 ग्रा.
29. दारुहरिद्रा	– 25 ग्रा.	30. मूर्वा	– 25 ग्रा.
31. मुलेठी	– 25 ग्रा.	32. दन्तीमूल	– 25 ग्रा.
33. पुष्करमूल	– 25 ग्रा.	34. बलामूल	– 25 ग्रा.
35. अतिबला	– 25 ग्रा.	36. केवाँच बीज	– 25 ग्रा.
37. गोखरु	– 25 ग्रा.	38. सौंफ	– 25 ग्रा.
39. त्रिफला	– 25 ग्रा.	40. अकरकरा	– 25 ग्रा.
41. टंकण बीज	– 25 ग्रा.	42. श्वेतपुनर्नवा	– 25 ग्रा.
43. रक्त पुनर्नवा	– 25 ग्रा.	44. लोध्र	– 25 ग्रा.
45. स्वर्णमाक्षिक भस्म	– 25 ग्रा.	46. धायपुष्प	– 400 ग्रा.

निर्माण विधि

सावधानी पूर्वक कुमारी पत्र से कुमारी स्वरस निकालते हैं। इसके लिए कुमारी पत्र को बीच से काटकर उसका पल्प निकाल कर एकत्र कर लेते हैं। पुनः इसको Mixer में घुमाकर फिर कपड़े से छानकर स्वरस तैयार कर लेते हैं। अब इस स्वरस में गुड़ तथा समस्त प्रक्षेप द्रव्यों का चूर्ण डालकर संधान हेतु रख देते हैं। जब संधान सिद्धि लक्षण आ जाय तब इसे छानकर बोतलों में एकत्र कर सुरक्षित रख लेते है।

गुण– यह समस्त उदररोगों की महौषधि है। परिणामशूल, अग्निवर्द्धक, दीपन, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, अपस्मार, कृमि, रक्तपित्त, पाण्डु, कामला, उदावर्त, क्षय और शुक्रदोष नाशक है। वृष्य एवं बृंहण है। यह स्त्रियों के नष्टार्तव, कष्टार्तव, आदि रजोरोध को दूर करती है।

मात्रा– 10 से 20 मिली बराबर मात्रा में जल मिलाकर या अग्नि बल के अनुसार।

कुटजारिष्ट

तुलां कुटजमूलस्य मृद्वीकार्धतुलां तथा। मधूक पुष्प काश्मर्य भागान्दशपलोन्मितान्॥
चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा क्वाथे द्रोणावशेषिते। धातक्याः विंशतिपलं गुडस्य च तुलां क्षिपेत्॥
मासमात्रं स्थितो भाण्डे कुटजारिष्टसंज्ञितः। ज्वरान्प्रशमयेत्सर्वान्कुर्यात्तीक्ष्णं धनञ्जयम्॥

(शा.म. 10/44-47)

घटक द्रव्य– क्वाथ द्रव्य–

1. कुटज मूल	–	4.8 किलो
2. मुनक्का	–	2.4 किलो
3. मधुक पुष्प (महुआ फूल)	–	480 ग्रा.
4. काश्मर्य	–	480 ग्रा.

क्वाथार्थ जल – 52 लीटर

अवशेष – 13 लीटर

प्रक्षेप द्रव्य – धाय पुष्प – 960 ग्रा.

गुड़ – 4.8 किग्रा.

निर्माण

सर्वप्रथम क्वाथ द्रव्यों को एक भगोने में लेकर क्वाथ निर्माण करते हैं। तत्पश्चात् इसे छान लेते हैं। पुनः इसमें धायपुष्प तथा गुड़ मिलाकर एक मास तक संधान हेतु रख देते हैं। संधान पश्चात् इसे छानकर बोतलों में सुरक्षित रख लेते हैं तथा एक वर्ष पश्चात् प्रयोग करते हैं।

मात्रा– 10 से 20 मिली बराबर जल से।

उपयोग– सभी प्रकार के ज्वर तथा अतिसार में।

अशोकारिष्ट

अशोकस्य तुलामेकां चतुर्द्रोणे जले पचेत्। पादशेषे रसे पूते शीते पलशतद्वयम्॥
दद्याद् गुडस्य धातक्याः पलषोडशिकं मतम्। अजाजी मुस्तकं शुण्ठी दार्व्युत्पल फलत्रिकम्॥
आम्रास्थि जीरकं वासां चन्दनञ्च विनिक्षिपेत्। चूर्णयित्वा पलांशेन ततो भाण्डे निधापयेत्॥

Scanned with OKEN Scanner

मासादूर्ध्वं च पीत्वैनमसृग्दररूजां जयेत्। ज्वरं च रक्तपित्तार्शो मन्दाग्नित्वमरोचकम्॥
मेहशोथादिकहरस्त्व शोकारिष्ट संज्ञितः॥ (भै.र. स्त्रीरोग 114-118)

क्वाथ द्रव्य– 1. अशोक छाल – 1 तुला (4.8 किग्रा)
2. क्वाथार्थ जल – 52 लीटर
3. अवशेष जल – 12.2 लीटर

मधुर द्रव्य– गुड़ – 10 किलो

प्रक्षेप द्रव्य–

1. धातकी पुष्प	–	800 ग्रा.
2. काला जीरा	–	50 ग्रा.
3. नागरमोथा	–	50 ग्रा.
4. सोंठ	–	50 ग्रा.
5. दारुहरिद्रा	–	50 ग्रा.
6. नीलकमल पुष्प	–	50 ग्रा.
7. आमलकी	–	50 ग्रा.
8. हरीतकी	–	50 ग्रा.
9. विभीतक	–	50 ग्रा.
10. आमगुठली	–	50 ग्रा.
11. जीरा	–	50 ग्रा.
12. वासा	–	50 ग्रा.
13. लालचन्दन	–	50 ग्रा.

निर्माण विधि

सर्वप्रथम एक भगोने में अशोक छाल यवकुट तथा जल लेकर क्वाथ निर्माण करते हैं। क्वाथ निर्माण के पश्चात् इसे छान लेते हैं तथा इसमें गुड़ डालकर रख देते हैं। जब यह ठंडा हो जाय तो इसे सावधानीपूर्वक संधान पात्र में रख देते हैं। पुनः इसमें प्रक्षेप द्रव्यों का मोटा दरदरा चूर्ण इसमे डालकर पात्र का मुख बन्द कर संधान हेतु रखे देते हैं। दो-तीन दिन पश्चात् इसमें संधान प्रारम्भ होने की प्रक्रिया की परीक्षा करते हैं। तत्पश्चात् 15-20 दिन पश्चात् संधान सिद्धि लक्षण की परीक्षा करते हैं। जब संधान समाप्त हो जाय तो इसे छानकर बोतलों में भरकर रख देते है। तथा एक वर्ष बाद इसे प्रयोग करते हैं।

उपयोग– यह स्त्रियों के गर्भाशय सम्बन्धी सभी रोगों की औषधि है। इसके सेवन से स्त्रियों के कष्टार्तव, नष्टार्तव, रक्तप्रदर, श्वेत प्रदर योनिरोग नष्ट हो जाते है तथा सुन्दर पुत्रों को उत्पन्न करती है।

मात्रा– 10 से 20 मिली बराबर जल के साथ।

काल– भोजन पश्चात्।

तक्रारिष्ट

हपुषां कुञ्जिकां धान्यमजाजी कारवीं शटीम्। पिप्पलीं पिप्पलीमूलं चित्रकं हस्तिपिप्पलीम्॥
यवानीं चाजमोदां च चूर्णितं तक्रसंयुक्तम्। मन्दाम्ल कटुकं विद्वान् स्थापयेद्धृत भाजने॥
व्यक्ताम्ल कटुकं जातं तक्रारिष्टं मुखप्रियम्। प्रविवेन्मात्रया कालेष्वन्नस्य तृषितस्त्रिषु॥
दीपनं रोचनं वर्ण्यं कफवातानुलोमनम्। गुदश्वयथुकण्ड्वर्तिनाशनं बलवर्धनम्॥
(च.चि. 14/72-76)

घटक द्रव्य– 1. हपुषा, 2. कालाजीरा, 3. धनियाँ, 4. श्वेत जीरा, 5. कलौंजी, 6. शटी, 7. पिप्पली, 8. पिप्पलीमूल, 9. चित्रकमूल, 10. गजपिप्पली, 11. यवानी, 12. अजमोदा प्रत्येक चार तोला चूर्ण रूप में।

तक्र– 5.500 लीटर

निर्माण विधि– एक संधान पात्र में सर्वप्रथम तक्र को रखते है। तत्पश्चात् इसमें क्रम संख्या एक से बारह तक के द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर इसे संधान हेतु रखते हैं।

सिद्धि लक्षण– इसके निर्माण हेतु मन्द अम्ल कटु रसवाला ही तक्र लेते हैं तथा जब संधान पश्चात् यह व्यक्त अम्ल कटु रस वाला हो जाय तब इसे छानकर सुरक्षित रख लेते हैं। पश्चात् इसे प्रयुक्त करते हैं।

प्रयोगकाल

तक्रारिष्ट का प्रयोग तीन अन्नकाल अर्थात् भोजन के आदि में, भोजन के मध्य में तथा भोजन के अन्त में करते हैं।

गुण– तक्रारिष्ट दीपन, रोचन, वर्ण्य तथा कफ एवं वात का अनुलोमन करने वाला होता है। इसका विशेष प्रयोग अर्श रोग तथा ग्रहणी रोग में किया जाता है।

वक्तव्य– तक्रारिष्ट का वर्णन घटक द्रव्यों में अन्तर के साथ आचार्य चरक ने अर्श रोग तथा ग्रहणी रोग में किया है।

काञ्जी

कुल्माष धान्यमण्डादि संधितं काञ्जिकं विदुः। (शा.म. 10/12)

कुल्माष (क्षुद्रमाष/उड़द), धान्यमण्ड आदि के संधान पश्चात् प्राप्त द्रव को काञ्जिक या काञ्जी कहा जाता है।

विमर्श– चावल को पकाकर उसका मण्ड प्राप्त कर उसमें सेन्धा नमक, राई, मूली तथा सरसों का तैल मिलाकर उसे एक पात्र में रखकर सन्धान करते हैं। इस प्रक्रिया के पश्चात् प्राप्त द्रव को काञ्जी कहा जाता है।

आचार्य यादव जी के अनुसार—

अन्नं शाल्यादि संसिद्ध प्रक्षिप्तं त्रिगुणे जले। धान्यम्लं संधितं प्रोक्तंमारनालं च काञ्जिकम्॥
शालिकोद्रवमण्डैर्वा सन्धितं काञ्जिकं भवेत्।

शालि आदि अन्न को सिद्ध करने के उपरान्त उसे तीन गुने जले में रखकर सिद्ध करने से निर्मित धान्यम्ल को आरनाल तथा काञ्जि कहा जाता है। शालि, कोद्रव के मांड से भी काञ्जी का निर्माण किया जा सकता है।

विमर्श– काञ्जी, आरनाल तथा धान्याम्ल इस प्रकार पर्याय है।

Scanned with OKEN Scanner

धान्याम्ल के गुण

धान्याम्लं धान्यजोनित्याज्जीवनं दाहनाशनम् । स्पर्शात्पानात्तु पवनकफतृष्णाहरं लघु ॥
तैक्ष्ण्याच्च निहरेदाशु कफं गण्डूष धारणात् । मुखवैरस्यदौर्गन्ध्यमलशोषक्लमापहम् ॥
(सु.सू. 45/214-15)

धान्याम्ल धान्य से बनी होने के कारण जीवन के लिये हितकर है । स्पर्श करने से दाहनाशक तथा पान करने से कफ, वात एवं तृष्णानाशक और लघु है । तीक्ष्ण होने से शीघ्र ही कफ को निकालती है । गण्डूष धारण करने से मुख विरसता एवं दौर्गन्ध नाशक है । यह मलशुष्कता एवं क्लमहर है ।

मधुशुक्त

मधुप्रधानं शुक्तन्तु मधुयुक्तं तथा परम् । जम्बीरस्य फल रसं पिप्पली मूल संयुक्तं
(भै.र.कर्ण 23-24)

मधु प्रधान शुक्त को मधुशुक्त कहते हैं—

घटक द्रव्य– 1. जम्बीरीनीबू स्वरस – 1.5 ली.
2. पिप्पली मूल – 187 ग्राम.
3. मधु – 375 ग्राम.

उपरोक्त समस्त द्रव्यों को एक संधान पात्र में रखकर 1 मास पर्यन्त धान्य राशि में संधान हेतु रखते है । तत्पश्चात् इसे छानकर संग्रहित करते हैं।

गुग्गुलु शोधन

सन्दर्भ–आयुर्वेदिक फार्मुलरी आफ इंडिया, भाग 1

अपेन्डिक्स II पेज नं. 363

शोधन विधि–

1. सर्व प्रथम अशुद्ध गुग्गुलु में उपस्थित कंकड, पत्थर आदि हटाते हैं।
2. इसके बाद इसे छोटे-छोटे टुकड़ों मे कर लेते हैं।
3. ततपश्चात इसे एक सूती वस्त्र के पोट्टली में रखकर दोलायन्त्र द्वारा स्वेदन करते हैं। स्वेदन हेतु निम्न में किसी एक द्रव का प्रयोग किया जा सकता है–
   (a) गोमूत्र
   (b) त्रिफला क्वाथ
   (c) वासापत्र स्वरस
   (d) वासापत्र क्वाथ
   (e) निर्गुण्डी पत्र स्वरस + हरिद्रा चूर्ण
   (f) गोदुग्ध

इसे तब तक boil करते हैं जब तक कि यह मुलायम होकर द्रव में न चली जाय। पोट्टली
फेंक देते हैं। तत् पश्चात द्रव में एकत्र हुए शुद्ध गुग्गुलु को मंदाग्नि पर पाक करते हैं। पुनः इसे धूप में सुखाकर एक पत्थर के mortar में घृत के साथ कुट्टन करते हैं जिसमें यह मुलायम (waxy) हो जाता है।

हींग शोधन

सन्दर्भ–आयुर्वेदिक फार्मुलरी आफ इंडिया, भाग I

अपेन्डिक्स II पेज नं. 372

रामठं समशुद्धज्यसंयुतं दर्विकागतम् । विपक्वमग्नि तापेन शुद्धिमायात्यनुत्तम् ॥
(र.त. 24/578)

घटक द्रव्य–

1. अशुद्ध हींग–1 भाग
2. घृत–आवश्यकतानुसार

विधि–अशुद्ध हींग को मंदाग्नि पर भूरा होने तक तथा कुछ crisp होने तक घृत में भर्जन करते हैं।

मुग्ध रस

युगतोलक प्रमाणं विमलीकृतं रसेशम् । द्विगुणां खटीञ्च शुद्धां निदधोत खल्वमध्ये ॥
परिपेषयेत्तु तावत् विधिनेतदीय चूर्णम् । अवलोक्यते न यावत्खलु चन्द्रिकाविहीनम् ॥
हत चन्द्रिकं तु चूर्ण ह्यवबुध्यः योजयेद्वै । विबुधैः स्मृतो रसोऽयं खलु मुग्धनामधेयः ॥
(र.त. 6/9-11)

प्रकार– खल्वीय रस

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध पारद – 4 तोला
2. शुद्ध खड़िया – 8 तोला

यन्त्र– खल्व यन्त्र, चमम्च

निर्माण विधि– उपरोक्त दोनों घटक द्रव्यों को खल्व यन्त्र में लेकर चन्द्रिका रहित होने तक मर्दन करते हैं । जब यह चन्द्रिका रहित हो जाय तो इसे सुरक्षित रख लेते हैं ।

सिद्धि लक्षण– चन्द्रिका रहित भूरे रंग का ।

गुण–

उदरामयनुत् वमिहन्नियतं सहजोत्थफिरंगकुरंगहरिः ।
शिशुरोगहरस्तु विशेषतया विबुधैरुदित, खलु मुग्ध रसः ॥
(र.त. 6/12)

उदर विकार, वमन, सहज फिरंग विशेषकर बच्चों के उदररोग में प्रयुक्त होता है ।

Scanned with OKEN Scanner

मात्रा–

गुञ्जार्धंतः समारभ्य सार्धगुञ्जद्वयोन्मिता। पूर्णमात्रा मता मुग्धरसस्य तरुणोचिता॥
गुञ्जाष्टमांशमारभ्य गुञ्जापादांशसंमिता। पूर्णमात्रा मता विज्ञैर्वार्षिकस्यार्धकस्य तु॥
(र.त. 6/13-14)

तरुण मनुष्य– 1/2 से 2 1/2 रत्ती
वृद्ध बालक– 1 चावल – 1/4 रत्ती

गन्धक द्रुति

कलांश व्योष संयुक्तं गन्धक श्लक्ष्ण चूर्णितम्। अरत्निमात्रे वस्त्रे तद्विप्रकीर्य विवेष्टय तत्॥
सूत्रेण वेष्टयित्वाऽथ यामं तैले निमज्जयेत्। धृत्वा संदंशतो वर्तिमध्यं प्रज्जावालयेच्चतम्॥
द्रुतो निपतितो गन्धो बिन्दुशः काच भाजने। तां द्रुतिं प्रक्षिपेत्पत्रे नाग वल्लयास्त्रिविन्दुकाम्॥
वल्लेन प्रमितं स्वच्छं सूतेन्द्रं च निमर्दयेत्। अङ्गुल्याऽथ सपत्रां ता द्रुतिं सूतं च भक्षयेत्॥
करोति दीपनं तीव्रं क्षयं पाण्डुं च नाशयेत्। कासं श्वासं च शूलार्तिं ग्रहणीमति दुर्धराम्॥
आमं विनाशयत्याशु लघुत्वं प्रकरोति च॥ (र.र.स. 3/27-31)

घटक द्रव्य– 1. गन्धक – 1 भाग
2. त्रिकटु – 1/16 भाग
3. – तिल तैल आवश्यकतानुसार

यन्त्र/उपकरण– भर्गौना, सूतीवस्त्र (अरन्ति लम्बाई तथा चौड़ाई वाला), अग्नि, सदंश यन्त्र, सूत्र/धागा।

निर्माण विधि– गन्धक मिश्रित व्योष चूर्ण को कपड़े पर एक समान फैलाकर उसे लपेट कर सूत्र से बांध देते हैं। तत्पश्चात् इसे एक प्रहर तिलतैल से डुबाकर रखते हैं। पुनः निकाल कर इसे जला देते हैं तथा जो बूँद गिरती है उसे एक पात्र में एकत्र कर लेते हैं यही गन्धक द्रुति है।

प्रयोग विधि– 3 बूँद गन्धक द्रुति पान के स्वरस के साथ पारद में मिश्रित कर प्रयोग करते हैं।

उपयोग– कास, श्वास, शूल, असाध्य ग्रहणी, आमरोग।

आनन्द भैरव रस

हिंगुलश्च विषं व्योषं मरिचं टंकणं कणा। जातीकोषसमं चूर्णं जम्बीरद्रव मर्दितम्॥
रक्तिमानां वटीं कुर्यात् खादेदार्द्रांकसंयुताम्॥ (र.सा.सं.ज्वर. 103)

प्रकार– खल्वीय रस

घटक द्रव्य– 1. शुद्ध हिंगुल – 1 भाग
2. शुद्ध वत्सनाभ – 1 भाग
3. शुण्ठी – 1 भाग
4. मरिच – 2 भाग

5. पिप्पली – 2 भाग
6. शुद्ध टंकण – 1 भाग
7. जायफल – 1 भाग

भावना द्रव– जम्बीरी नींबू स्वरस

निर्माण– उपरोक्त समस्त द्रव्यों को आपस में अच्छी तरह मिश्रित कर जम्बीरी नींबू स्वरस की भावना देकर एक रत्ती की वटी निर्मित कर छाया शुष्क कर सुरक्षित रख लेते हैं।

मात्रा– 250 मिग्रा.

अनुपान– आर्द्रक स्वरस, शहद

उपयोग– ज्वर, ज्वरातिसार, आमवात, सन्निपात ज्वर, अश्मरी, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र।

त्रिभुवनकीर्ति रस

हिङ्गुलं च विषं व्योषं टङ्कणं मागधीशिफाम्। संचूर्ण्य भावयेत् त्रेधा सुरसार्द्रकहेमभिः॥
रसस्त्रिभुवनकीर्तिर्गुञ्जैकार्द्ररसेन वै। विनाशये ज्वरान्सर्वान्सन्निपातांस्त्रयोदश॥
(यो.र. सन्निपात ज्वर चिकित्सा)

घटक द्रव्य–
1. शुद्ध हिंगुल
2. शुद्ध वत्सनाभ
3. सोंठ
4. मरिच
5. पिप्पली
6. शुद्ध टंकण
7. पिप्पलीमूल

समस्त द्रव्य समान मात्रा में।

भावना द्रव्य–
1. तुलसी (सुरसा) स्वरस
2. आर्द्रक स्वरस
3. धतूरा स्वरस

यन्त्र– खल्व यन्त्र,

निर्माण विधि– प्रत्येक द्रव्य के सूक्ष्म चूर्ण को समान मात्रा में लेकर उसे तुलसी स्वरस, आर्द्रक स्वरस तथा धतूरा स्वरस प्रत्येक की तीन-तीन भावना देते हैं। तत्पश्चात् एक रत्ती की गोली बनाकर छाया शुष्क कर काँच की शीशी में संग्रह करते हैं।

मात्रा– 1 रत्ती आर्द्रक स्वरस से

उपयोग– सभी प्रकार के ज्वर तथा 13 प्रकार के सन्निपातज ज्वर में।

रस पर्पटी

सूतं हिङ्गुलसम्भवं हतमलं मोटोरूबूकार्द्रकैः
दैत्येन्द्रं कचरञ्जनोद्भवजलैः प्राक् सप्तधा भावितम्।

Scanned with OKEN Scanner

अङ्गौकोत्त कोकिलोज्जवलशिखे सम्यग्विलाप्य द्रुतं
धृङ्गोत्थे सलिले निषिच्य विमलं तुल्यं ततः पेषयेत् ॥
भुक्त्वा कज्जलिकां विधाय विबुधस्तां लोहदर्व्यां क्षिपेत् ।
निर्दिष्टैः खलु कोकिलैश्च दहने प्रज्वाल्य दर्वीं न्यसेत् ।
सूतं षड्गुसमं विलाप्य रुचिरं पाक क्रिया कोविदः
शीघ्रं गोमयसंस्थिते तु कदलीपत्रे ततो निक्षिपेत् ॥
निक्षिप्तमात्रं कदलीपलाशैराच्छादयेद्वै सुचिरं रसज्ञः ।
यस्मादिदं पर्पटतुल्यारूपा तस्मान्मता पर्पटिकाभिधेया ॥

(र.त. 6/135-137)

घटक द्रव्य–

1. हिंगुलोत्थ पारद– 1 भाग
2. गन्धक– 1 भाग

निर्माण विधि–

- सर्वप्रथम हिंगुलोत्थ पारद को
  1. अरणी
  2. एरण्ड मूल
  3. आर्द्रक स्वरस के साथ 3 दिन मर्दन कर पुनः धोकर साफ कर लेते हैं ।
- गन्धक को भृंगराज स्वरस की सात भावना देकर फिर गन्धक को बेर के कोयले के ऊपर द्रवित कर उसे भृंगराज स्वरस में बुझा लेते हैं । उपरोक्त विधियों से प्राप्त शुद्ध पारद एवं शुद्ध गन्धक को समभाग में लेकर खल्व यन्त्र की सहायता से कज्जली बना लेते हैं। इस कज्जली को एक लौहदर्वी में लेकर कोयले (बेर) की अग्नि पर द्रवित कर लेते हैं । जब यह कज्जली कीचड़ सदृश गीली हो जाय तो गोबर के ऊपर बिछे कदली पात्र पर इसे गिराकर दूसरे कदली पत्र से ढककर दबा देते हैं । इस प्रकार दबाने से यह पापड़ जैसी बन जाती है । अतः इसे पर्पटी (रस पर्पटी) कहा जाता है ।

विमर्श– लौह दर्वी में कज्जली डालने से पूर्व थोड़ा सा घृत लगा लेना चाहिए । दबाने हेतु किसी समतल थाली का प्रयोग करना अच्छा रहता है ।

रसगर्भ पोट्टली

घटक द्रव्य–

1.	पारद भस्म	–	1 कर्ष
2.	कज्जली	–	4 पल
3.	शुद्ध गन्धक	–	1 टंक
4.	स्वर्ण पत्र	–	6 रत्ती

उपरोक्त घटक द्रव्यों द्वारा पोट्टली निर्माण विधि से पोट्टली निर्मित करते हैं ।

अनुपान– आर्द्रक स्वरस

मात्रा– 1 रत्ती

लघुसूतशेखर रस

सन्दर्भ– रस तन्त्र सार एवं सिद्ध प्रयोग संग्रह, खरलीय रसायन : 330

घटक द्रव्य–

1.	शु. स्वर्ण गैरिक	–	240 ग्रा.
2.	शुण्ठी चूर्ण	–	120 ग्रा.
3.	नागवल्ली स्वरस	–	भावना हेतु (3 दिन तक)

निर्माण विधि– एक खल्व यन्त्र में स्वर्ण गैरिक तथा शुण्ठी को लेकर इसमें तीन दिन तक नागवल्ली स्वरस की भावना देते हैं ।

मात्रा– 250 मिग्रा. से 500 मिग्रा.

अनुपान– सितायुक्त दुग्ध

उपयोग– पित्तज शिरःशूल, अर्धाव भेदक, सूर्यावर्त, पित्तज उन्माद, दाह ऊर्ध्वांग रक्तपित्त, मुखपाक ।

नवायास लौह

त्र्यूषण त्रिफला मुस्त विडङ्गचित्रकाः समाः । नवायोरजसो भागास्तच्चूर्ण क्षौद्र सर्पिषा ॥
भक्षयेत् पाण्डुहृद्रोग कुष्ठार्शः कामलापहम् । नवायसमिदं चूर्ण कृष्णात्रेयेण भाषितम् ॥

(च.चि. 16/70-71)

प्रकार– चूर्ण निर्माण विधि/खल्वीय

घटक द्रव्य–

1.	शुण्ठी	–	1 भाग
2.	मरिच	–	1 भाग
3.	पिप्पली	–	1 भाग
4.	मुस्ता	–	1 भाग
5.	विडंग	–	1 भाग
6.	चित्रक	–	1 भाग
7.	हरीतकी	–	1 भाग
8.	विभीतकी	–	1 भाग
9.	आमलकी	–	1 भाग
10.	अयोरज (लौह भस्म)	–	9 भाग

निर्माण विधि– उपरोक्त समस्त द्रव्यों का सूक्ष्मचूर्ण खल्व यन्त्र में अच्छी प्रकार से मिश्रित कर सुरक्षित रख लेते हैं ।

मात्रा– 250 मिग्रा.

Scanned with OKEN Scanner

अनुपान– शहद, घृत
उपयोग– पाण्डु, हृदरोग, कुष्ठ, अर्श, कामला ।

सप्तामृत लौह

मधुकं त्रिफला चूर्णमयोरजः समं लिहन्। मधुसर्पिर्युतं सम्यक् गव्यक्षीरं पिबेदनु ॥
(भै.र.शूल 83)

प्रकार– खल्वीय

घटक द्रव्य– 1. मधुयष्टी – 1 भाग
2. हरीतकी – 1/3 भाग
3. विभीतकी – 1/3 भाग
4. आमलकी – 1/3 भाग
5. अयोरज (लोह भस्म) – 1 भाग
6. शहद
7. घृत

निर्माण विधि– क्रम संख्या एक से पांच तक समस्त द्रव्यों को सूक्ष्म चूर्ण मिश्रित कर रख लेते हैं तथा शहद एवं घृत के साथ प्रयुक्त करते हैं ।

मात्रा– 250 मिग्रा.

अनुपान/सहपान– शहद, घृत तथा गोदुग्ध ।

उपयोग– छर्दि, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, मूत्रसंग, तिमिर, क्लम, आनाह शोथ ।

अग्नितुण्डी वटी

शुद्धं सूतं विषं गन्धमजमोदा फलत्रयम्। स्वर्जिक्षारं यवक्षारं वह्निसैन्धवजीरकम् ॥
सौवर्चलं विडंगानि सामुद्रं टंकणं समम्। विषमुष्टिः सर्वतुल्यं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥
मरिचाभां वटी खादेदाग्निमान्द्य प्रशान्तये ॥ (भै.र.अग्नि. 117-18))

प्रकार—वटी निर्माण विधि

घटक द्रव्य–

1. शुद्ध पारद	– 1 भाग	10. चित्रक	– 1 भाग
2. शुद्ध गन्धक	– 1 भाग	11. सैन्धव लवण	– 1 भाग
3. शुद्ध वत्सनाभ	– 1 भाग	12. श्वेत जीरक	– 1 भाग
4. अजमोदा	– 1 भाग	13. सौवर्चल लवण	– 1 भाग
5. हरीतकी	– 1 भाग	14. विडंग	– 1 भाग
6. विभीतकी	– 1 भाग	15. सामुद्र लवण	– 1 भाग
7. आमलकी	– 1 भाग	16. शुटंकण	– 1 भाग
8. स्वर्जिक क्षार	– 1 भाग	17. शुद्ध कुचला	– 16 भाग

9. यवक्षार – 1 भाग

भावना द्रव– जम्बीरी नींबू स्वरस

निर्माण विधि– सर्वप्रथम पारद तथा गन्धक की कज्जली निर्मित करते है । तत्पश्चात् समस्त द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर जम्बीरी नींबू स्वरस से मर्दन कर मरिच समान वटी निर्मित कर छाया शुष्क कर सुरक्षित रख लेते हैं ।

मात्रा– 125-250 मिग्रा.

अनुपान– नींबू स्वरस, गर्म जल

उपयोग– अग्निमांद्य, आम ज्वर

चित्रकादि वटी

चित्रकं पिप्पलीमूलं द्वौ क्षारौ लवणानि च । व्योषहिंग्वजमोदाच्च चव्यं चैकत्र चूर्णयेत् ॥
गुटिका मातुलुङ्गस्य दाडिमस्य रसेन वा। कृता विपाचयत्यामं दीपयत्याशु चानलम् ॥
(चक्र.ग्रहणी)

घटक द्रव्य–

1. चित्रकमूल	9. औदभिद् लवण
2. पिप्पली मूल	10. शुण्ठी
3. यवक्षार	11. मरिच
4. सज्जीक्षार	12. पिप्पली
5. सैन्धव लवण	13. शु. हींग
6. सौवर्चल लवण	14. अजमोदा
7. सामुद्र लवण	15. चव्य
8. विडलवण	सभी का सूक्ष्म चूर्ण समान मात्रा में ।

भाना हेतु– दाड़िमफल (अनार) स्वरस या मातुलुंग नीबू स्वरस ।

यन्त्र– खल्व यन्त्र, इमामदस्ता

निर्माण विधि– क्रम संख्या 1 से 15 तक की औषधियों का सूक्ष्म चूर्ण समान मात्रा में लेकर उसे खल्व यन्त्र की सहायता से दाड़िमफल स्वरस या मातुलुङ्ग नीबू स्वरस की अच्छी प्रकार से भावना देते हैं ।

उपयोग– आम पाचन, ग्रहणी रोग में ।

लवंगादि वटी

तुल्या लवंगमरिचाक्षफलत्वचः स्युः। सर्वैः समो निगदितः खदिरस्य सारः ॥
बब्बूल वृक्षजकषाययुतश्च चूर्णं। कासन्निहन्ति गुटिका घटिकाऽष्टकान्ते ॥
(वैद्यजीवन, कासश्वास 7)

Scanned with OKEN Scanner

घटक द्रव्य– 1. लवंग – 1 भाग
2. मरिच – 1 भाग
3. विभीतक फलत्वक – 1 भाग
4. खदिर सार – 3 भाग
5. बबूलत्वक क्वाथ – आवश्यकतानुसार भावना हेतु

निर्माण विधि– चारों द्रव्यों के सूक्ष्म चूर्ण को मिलाकर बबूल त्वक् क्वाथ की भावना देना वटी निर्मित करते है ।

मात्रा– 1 ग्रा.

अनुपान– गर्म जल

उपयोग– कास, श्वास

त्रिफला गुग्गुलु

त्रिपल त्रिफलाचूर्ण कृष्णा चूर्ण पलोन्मितम् । गुग्गुलुं पाञ्चपालिकं क्षोदयेत्सर्वमेकतः ॥
ततस्तु गुटिकां कृत्वा प्रयुञ्ज्याद्वह्व्यपेक्षया । भगन्दरं गुल्म शोथवर्शांसि च विनाशयेत्॥
(शा.म. 7/82-83)

घटक द्रव्य– 1. त्रिफला चूर्ण – 144 ग्रा.
2. पिप्पली चूर्ण – 48 ग्रा.
3. शु. गुग्गुलु – 240 ग्रा.

यन्त्र/उपकरण– इमामदस्ता, चम्मच ।

निर्माण विधि– एक इमामदस्ते में शु. गुग्गुलु तथा थोड़ा सा घृत लेकर उसको कूटते है । तत्पश्चात् इसमें त्रिफला तथा पिप्पली का सूक्ष्म चूर्ण डालकर खूब कूटते हैं । जब चूर्ण इसमें मिल जाय तथा यह मुलायम गोली बनाने लायक हो जाय तब इसे इमामदस्ते से बाहर निकाल कर गोली बनाकर सुखा लेते हैं तथा काँच की शीशी में सुरक्षित रख लेते हैं ।

मात्रा– 1-2 गोली ।

उपयोग– भगन्दर, गुल्म, शोथ तथा अर्श में ।

कैशोर गुग्गुलु

त्रिफलायास्त्रयः प्रस्थाः प्रस्थैका चामृता भवेत् । संकुट्य लोह पात्रेण सार्धद्रोणाम्बुना पचेत् ॥
जलमर्धशृतं ज्ञात्वा गृह्णीयावस्त्रगालितम् । ततः क्वाथे क्षिपेच्छुद्धं गुग्गुलुं प्रस्थसंमितम् ॥
पुनः पचेदयःपात्रे दर्व्या संघर्षयेन्मुहुः । सान्द्रीभूतं ततो ज्ञात्वा गुडपाकसमाकृतिम् ॥

चूर्णीकृत्य ततस्तत्र द्रव्याणीमानि निक्षिपेत् । त्रिफला द्विपला ज्ञेया गुडुची पलिकामता ॥
षडक्षं त्र्यूषणं प्रोक्तं विडङ्गानां पलर्धिकम् । दन्ती कर्षमिता कार्या त्रिवृत्कर्षमिता स्मृता ॥
ततः पिण्डीकृतं सर्वं घृतपात्रे विनिक्षिपेत् । गुटिकाः शाणमात्रेण युञ्जयाद्वोषाद्यपेक्षया ॥
अनुपाने भिषग्दद्यात्कोष्णं नीरं पयोऽथवा । मञ्जिष्ठादिशृतं वापि युक्तियुक्तमुतापरम् ॥
जयेत्सर्वाणि कुष्ठानि वातरक्तं त्रिदोषजम् । सर्वव्रणानि गुल्मानि प्रमेहपिडिकास्तथा ॥
प्रमेहोदरमन्दाग्निकासश्वयथुपाण्डुजान् । हन्ति सर्वामयान्नित्यमुपयुक्तो रसायनः ॥
कैशोरकभिधानोऽयं गुग्गुलुः कान्तिकारकः । वासादि नेत्ररोगान्गुल्मादीन्वरूणादिना ॥
क्वाथेन खदिरस्यापि व्रणकुष्ठानि नाशयेत् ॥ (शा.म. 7/70-80)

घटक द्रव्य–	1. आमलकी	– 746 ग्रा.	10. सोठ	– 25 ग्रा.
	2. हरीतकी	– 746 ग्रा.	11. पिप्पली	– 25 ग्रा.
	3. विभीतकी	– 746 ग्रा.	12. मरिचकाली	– 25 ग्रा.
	4. गुडुची	– 746 ग्रा.	13. गुडुची	– 25 ग्रा.
	5. जल	– 18 लीटर	14. त्रिवृतमूल	– 12 ग्रा.
	शेष	– 9 लीटर	15. विडंग	– 25 ग्रा.
	6. शु. गुग्गुलु	– 746 ग्रा.	16. दन्तीमूल	– 12 ग्रा.
	7. आमलकी	– 70 ग्रा.	17. घृत	– आवश्यकतानुसार
	8. हरीतकी	– 70 ग्रा.		
	9. विभीतकी	– 70 ग्रा.		

यन्त्र/उपकरण– भगौना, इमामदस्ता, कलछी, सूती वस्त्र ।

निर्माण विधि– सर्वप्रथम त्रिफला (क्रम सं. 1 से 3) तथा गुडुची (क्रम सं. 4) को यवकुट कर उसका 18 लीटर जल में क्वाथ कर लेते हैं ।

जब यह आधा शेष रहे तो इसे छान लेते हैं । तथा इसमें गुग्गुलु मिलाकर लेहवत पाक करते है । जब यह लेहवत हो जाय तो इसे उतारकर इसमें क्रम संख्या 7 से 16 तक के द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर इसे अच्छी प्रकार से कूटते हैं । तथा 3-3 ग्रा. की गोली बनाकर छाया शुष्क कर सुरक्षित रख लेते हैं ।

उपयोग– सभी प्रकार के कुष्ठ, वातरक्त, व्रण, गुल्म, प्रमेह पीडिका, प्रमेह, उदर रोग, मन्दाग्नि, कास, शोथ, पाण्डु में ।

अनुपान– उष्ण जल, गोदुग्ध, मंजिष्ठा क्वाथ । इसके अतिरिक्त वासादि क्वाथ से नेत्ररोग में, वरुणादि क्वाथ से गुल्मरोग, वातरक्त तथा कुष्ठ में मंजिष्ठादि या खदिरादि क्वाथ से देना चाहिए ।

Scanned with OKEN Scanner

फलवर्ति

घृताभ्यक्ता गुदेक्षेप्या श्लक्ष्णा स्वाङ्गुष्ठसन्निभा। मलप्रवर्तिनी वर्तिः फलवर्तिस्तु सा स्मृता ॥
(शा.स.उ. 7/15)

अंगुठे के आकार की चिकनी वर्ति मल प्रवर्तन हेतु घृत लगाकर गुदा में प्रवेश करने हेतु निर्मित वर्ति को फलवर्ति कहते है।

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्षपः। गुडक्षारसमायुक्ताः फलवर्तिरिहोच्यते ॥
(भै.र. उदावर्त 10)

घटक द्रव्य– 1. मदनफल, 2. पिप्पली, 3. कूठ, 4. वचा, 5. गौर सर्षप, 6. गुड़, 7. यवक्षार

निर्माण विधि– गुड़ी की चासनी बनाकर उसे शेष द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण बनाकर वर्ति का निर्माण कर लेते हैं।

उपयोग– उदावर्त रोग में।

चन्द्रोदय वर्ति

शङ्खनाभिर्विभीतस्य मज्जा पथ्या मनः शिला। पिप्पली मरिचं कुष्ठं वचा चेति समांशकम् ॥
छागी क्षीरेण संपिष्य वर्तिं कृत्वा यवोन्मिताम्। हरेणुमात्रां संघृष्य जलैः कुर्यादथाञ्जनम् ॥
तिमिरं मांसवृद्धिं च काचं पटलमर्बुदम्। रात्र्यान्ध्यं वार्षिकं पुष्पं वर्तिश्चन्द्रोदया जयेत् ॥
(शा.उ. 13/75-77)

घटक द्रव्य–
1. शंखनाभि
2. विभीतक मज्जा
3. हरीतकी
4. शु. मनःशिला
5. पिप्पली
6. मरिच
7. कुष्ठ
8. वचा सभी द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण समान मात्रा में।

यन्त्र– खल्व यन्त्र

निर्माण विधि– क्रम. संख्या 1 से आठ तक के द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण लेकर उसे खल्व यन्त्र में बकरी के दूध की सहायता से अच्छी प्रकार मर्दन कर वर्ति बना लेते हैं। यह वर्ति यवाकार बनाते हैं। तथा इसकी प्रयोग की जाने वाली मात्रा एक हरेणु है जो कि जल में घिसकर प्रयोग करते हैं।

उपयोग– तिमिर, काँच, अर्बुद, नक्तान्धता तथा पुष्प (फुल्ली) रोग दो वर्ष पुराना नष्ट करता है।

अर्कलवण

सुचूर्णितं सैन्धवन्तु समार्कदल संयुतम्। अन्तर्धूमं पचेद्धीमान् स्वाङ्गशीतमथोद्धरेत् ॥
जायते खल्वसम्पिष्टं लवणं कज्जलप्रभम्। आयुर्वेदाचार्य वर्य्यैर्नाम्नार्कलवणं मतम् ॥
यकृत्प्लीहोदरहरं रुचिरं मलभेदनम्। विशेषतः समाख्यातं तन्त्रेऽर्कलवणं बुधैः ॥
माषाकार्धमितं त्वर्कलवणं कोष्णवारिणा। पथ्याशिभिस्तु पुरुषैः सततं परिशीलनम् ॥

वातिकं श्लेष्मिक वापि सज्वरं वाऽपि विज्वरम्। सकोष्ठबद्धं व्यथया चीत्कारयुतयापि वा ॥
संयुक्तं कठिनस्पर्श ह्यतीसारादिवर्जितम्। यकृद्दल्युदरं नूत्नं प्लीहोदरमलं हरेत् ॥
(र.त. 14/131-136)

घटक द्रव्य– सुपक्व अर्कपत्र (पीले रंग का)
सैन्धव लवण चूर्ण दोनों बराबर मात्रा में

यन्त्र/उपकरण– शराव, कण्डे, चाकू, खल्व यन्त्र, कपड़ा, मुल्तानी मिट्टी।

निर्माण विधि– शराव में सर्वप्रथम एक स्तर अर्कपत्र फैलाते है तत्पश्चात् इसमें सैन्धव लवण चूर्ण फैला देते हैं। फिर अर्कपत्र तथा सैन्धव लवण इस प्रकार जिनती मात्रा शराव में आ सके उतने अर्कपत्र का स्तर तथा सैन्धव लवण का स्तर बनाते हैं। तत्पश्चात् इसे शराव सम्पुट कर (कपड़मिट्टी की सहायता से) अग्नि में पाक करते हैं। स्वांगशीत होने के पश्चात् इसे बाहर निकालकर खल्व यन्त्र में चूर्ण कर लेते हैं। यही अर्क लवण है। इसे किसी काँच पात्र में सुरक्षित रख लेते हैं।

मात्रा– $^1/_2$ माषा (4 रत्ती तक)

अनुपान– उष्णोदक

उपयोग– यकृत् प्लीहारोग, उदररोग तथा कोष्ठ बद्धता आदि में।

त्रिफला मसी

घटक द्रव्य– 1. आमलकी, 2. हरीतकी, 3. विभीतकी समान मात्रा में।

यन्त्र/उपकरण– शराव तथा L P G तथा गैस चूल्हा, चम्मच, खल्व यन्त्र।

निर्माण विधि– उपरोक्त तीनों द्रव्यों के फल त्वक् बराबर मात्रा में लेकर उसे शराव में रखकर सम्पुट कर अग्नि प्रदान करते है। अग्नि गैस चूल्हा या लघुपुट के माध्यम से दी जा सकती हैऊ। स्वांगशीत होने के पश्चात इसे खल्व यन्त्र की सहायता से सूक्ष्म चूर्ण कर लेते हैं।

उपयोग– मञ्जन के रूप में।

मयूर पिच्छ मसी

घटक द्रव्य– मयूर पिच्छ

यन्त्र/उपकरण– शराव, खल्व, यन्त्र, चम्मच।

निर्माण विधि– मयूर पिच्छ को शराव सम्पुट कर उसे गैस चूल्हा की सहायता या लघुपुट की अग्नि प्रदान करते है। जब यह स्वांगशीत से जाय तो इसे खल्व यन्त्र की सहायता से चूर्ण कर उपयोग करते हैं।

दशनसंस्कार चूर्ण (मंजन)

शुण्ठी हरीतकी मुस्ता खदिरं घनसारकम्। गुवाकभस्म मरिचं देवपुष्पं तथा त्वचम् ॥
एतेषां समभागेन चूर्णमेवं विनिर्दिशेत। तत् समं प्रक्षिपेत्तत्र चूर्णं कठिनिसम्भवम् ॥
एतद् दशनसंस्कार चूर्णं दन्तास्यरोगजित् ॥ (भै.र. 61/91-92)

Scanned with OKEN Scanner

घटक द्रव्य– 1. सुण्ठी चूर्ण – 1 भाग
2. हरीतकी चूर्ण – 1 भाग
3. नागरमोथा चूर्ण – 1 भाग
4. खदिर सार चूर्ण – 1 भाग
5. कर्पूर चूर्ण – 1 भाग
6. सुपारी मसी चूर्ण – 1 भाग
7. मरिच चूर्ण – 1 भाग
8. लवङ्ग चूर्ण – 1 भाग
9. दालचीनी चूर्ण – 1 भाग
10. खटिका चूर्ण – 9 भाग

उपरोक्त समस्त द्रव्यों को अच्छी प्रकार से मिला लेते हैं । यही दशन संस्कार चूर्ण है।

उपयोग– दन्त रोग में

मात्रा– आवश्यकानुसार मंजनार्थ

सर्जरस मलहर

सन्दर्भ ग्रन्थ—रस तन्त्र सार एवं सिद्ध प्रयोग संग्रह

घटक द्रव्य— तिल तैल – 16 भाग
सर्जरस – 4 भाग
अशुद्ध तुत्थ – 1 भाग
फिटकरी – 1 भाग
पानी – आवश्यकतानुसार

यन्त्र/उपकरण—भगौना, अँगीठी, बड़ी थाल, चम्मच

निर्माण विधि—सर्वप्रथम भगौने में तिल तैल लेकर उसे गर्म करते हैं। जब इसमें से फेन निकलने लगे तो इसे उतार लेते हैं तथा इसमें सर्जरस, तुत्थ तथा फिटकरी का सूक्ष्म चूर्ण डालकर चम्मच में अच्छी प्रकार से चलाते हैं। पुनः बड़ी थाल (गहराई वाली) में इसे गिरा देते हैं। तथा इसमें पानी डाल देते हैं तथा मर्दन करते हैं। ऐसा करने से तैल फूलने लगता है तथा पानी का रंग हल्का हरा हो जाता है। इस प्रक्रिया को लगातार करते हैं तथा पानी भी बदलते रहते हैं। इस प्रक्रिया के उपरान्त राल तथा तैल का मिश्रण फूलकर फैलता है और सफेद या श्वेत वर्ण का मलहम तैयार हो जाता है। इसे ही श्वेत मलहम या सर्जरस मलहम कहते हैं। पानी बदलते समय जब हरा रंग होना बन्द हो जाय तो मलहम निर्माण हो गया है ऐसा समझना चाहिए।

इस मलहम का संरक्षण पानी में ही किया जाता है। अर्थात् जिस पात्र में इसे रखते हैं उसमें पानी डाल देते हैं। तथा प्रत्येक दिन इस पानी को बदलते रहते हैं।

उपयोग—अग्निदग्ध व्रण, दाह तथा सामान्य व्रण में इस मलहम का प्रयोग करते हैं।

विशेष—अधिक दिनों तक रखने से या पानी नहीं बदलने के कारण यह मलहम खराब हो जाता है।

गन्धक मलहर

हमारे गुरु परम्परा में निम्न घटक द्रव्यों से गन्धक मलहर का निर्माण किया जाता था।

घटक द्रव्य— 1. गन्धक – 1 भाग
2. सिक्थ (मोम) – 4 भाग
3. तिल तैल – 20 भाग

यन्त्र उपकरण—चूल्हा, भगौना, कलछी

निर्माण विधि—सर्वप्रथम भगौने में तिल तैल लेकर उसे मंदाग्नि पर गर्म करते हैं। जब इसमें से फेन निकलने लगे तो इसे उसे उतार लेते हैं। अब इसमें मोम डालकर कलछी की मदद से तब तक चलाते हैं जब तक कि सम्पूर्ण मोम पिघल कर इसमें न मिल जाय। अब इस सिक्थ तैल में गन्धक का बारीक सूक्ष्म चूर्ण मिलाते हैं तब इसे अच्छी प्रकार से चलाते रहते हैं जिससे गन्धक इसमें एक समान रूप से मिल जाय।

उपयोग—कण्डू, द्रदू आदि त्वक् विकारों में।

विमर्श—तिल तैल तथा सिक्थ की मात्रा को ऋतु अनुसार समन्वित (adjust) किया जा सकता है।

दशांग लेप

शिरिषयष्टीनत चन्दनैलामांसी हरिद्राद्वय कुष्ठवालैः।
लेपो दशांगः सघृतः प्रयोज्यो विसर्प कुष्ठ ज्वर शोथहारी॥ (भै.र. विसर्प/16)

घटक द्रव्य— 1. गन्धक – 1 भाग
2. मधुयष्टी – 1 भाग
3. तगर – 1 भाग
4. श्वेत चन्दन – 1 भाग
5. छोटी एला – 1 भाग
6. जटामांसी – 1 भाग
7. हरिद्रा – 1 भाग
8. दारुहरिद्रा – 1 भाग
9. कुष्ठ – 1 भाग
10. ह्रीवेर – 1 भाग
11. गोघृत – आवश्यकतानुसार

Scanned with OKEN Scanner

क्रम सं. 1 से 10 तक के द्रव्यों का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर रख लेते हैं। इसे आवश्यकतानुसार गोघृत में लेप बनाकर प्रयोग करते हैं।

विशेष– ज्वर में इसे माथे पर लेप करते हैं।

अमृता घृत

अमृतायाः क्वाथेन कल्केन च महौषधात्। मृद्वग्निना घृतं प्रस्थं वातरक्तहरं परम्॥

(चक्र. आमवातच; 58)

घटक द्रव्य–

1. गुडुची (अमृता)	–	1.536 किग्रा.
जल	–	12.288 ली.
अवशेष	–	3.072 ली.
2. शुण्ठी	–	192 ग्रा.
3. गोघृत	–	768 ग्रा.

निर्माण विधि– अमृता क्वाथ, शुण्ठी कल्क तथा गोघृत लेकर घृत सिद्ध करते हैं।

मात्रा– 12 ग्रा.

अनुपान– गर्म जल या दुग्ध

उपयोग– आमवात, वातरक्त, कृमि आदि में।

कुटजघन

सन्दर्भ– सिद्ध योग संग्रह

द्रव्य– कुटज के मूल या वृक्ष की ताजी हरी छाल, अतीस चूर्ण।

निर्माण विधि– कुटज के मूल या वृक्ष की ताजी हरी छाल लेकर उसको जल से अच्छी प्रकार से साफ कर लेते हैं। तत्पश्चात् इसका यवकुट कर उसे सोलह गुना जल में क्वाथ करते हैं। जब आठवां हिस्सा जल शेष रहे तब इसे उतार कर छान लेते हैं। पुनः इसे किसी भगौने में रखकर मन्द अग्नि पर पाक करते है तथा इसे चलाते रहते है। जब क्वाथ गाढ़ा होने लगे तथा दार्वी में लगने लगे तब इसे उतार कर धूप में गाढ़ा कर लेते हैं। बाद में इसमें अतीस का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर 3-3 रत्ती की गोली बना लेते हैं।

मात्रा– 2 से 4 गोली दिन में 3-4 बार।

अनुपान– ठंडा जल

उपयोग– अतिसार तथा ग्रहणी में।

गुडुची घन (संशमनी वटी)

सन्दर्भ—सिद्ध योग संग्रह

ताजी हरी अंगूठे जितनी मोटी गुडुची एकत्र कर उसे अच्छी प्रकार से जल से साफ कर लेते हैं। तत्पश्चात् इसे छोटे-छोटे टुकड़े कर लेते हैं, पुनः इसके इमाम दस्ते में अच्छी प्रकार से कूट लेते हैं। इसके बाद इसको एक स्वच्छ लोहे की कड़ाही या पीतल के कलईदार बर्तन में डालकर इसमें चार गुना पानी डालकर चतुर्थांश शेष रहने तक क्वाथ करते हैं। क्वाथ ठंडा होने पर इसे एक स्वच्छ सूती वस्त्र से छान लेते हैं। पुनः इसे एक कलईदार बर्तन या स्टेनलेस स्टील के भगौने ने डाल कर इसे मन्दाग्नि पर पाक करते हैं। पाक करते समय जब यह गाढ़ा होने लगे तो इसे सावधानीपूर्वक चलाते रहते हैं। जब यह हलवा जैसा हो जाय तब इसे अग्नि से उतार लेते हैं। पुनः इसे धूप में सुखाकर 2-2 रत्ती की गोलियाँ बना लेते हैं।

मात्रा तथा अनुपान– 5 से 10 गोलियाँ

उपयोग– किसी भी प्रकार के ज्वर में, जीर्णज्वर तथा राजयक्ष्मा आदि में।

लोहासव

लोहचूर्ण त्रिकटुकं त्रिफलां च यवानिकाम्। विडंग मुस्तकं चित्रं चतुः संख्यापलं पृथक्॥
धातकी कुसुमानां तु प्रक्षिपेत पलविंशतिम्। चूर्णीकृत्य ततः क्षौद्रं चतुःषष्टिपलं क्षिपेत्॥
दद्याद्गुडतुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा। घृतभाण्डे विनिक्षिप्य निदध्यान्मासमात्रकम्॥

(शा.न. 10/34-36)

घटक द्रव्य–

1. लोह चूर्ण (भस्म)	– 192 ग्रा.	2. शुण्ठी	– 192 ग्रा.
3. मरिच	– 192 ग्रा.	4. पिप्पली	– 192 ग्रा.
5. हरीतकी	– 192 ग्रा.	6. विभीतकी	– 192 ग्रा.
7. आमलकी	– 192 ग्रा.	8. यवानी	– 192 ग्रा.
9. विडगं	– 192 ग्रा.	10. मुस्त	– 192 ग्रा.
11. धातकी पुष्प	– 192 ग्रा.	12. शहद	– 3.072 किग्रा.
13. गुड़	– 4.8 किग्रा.	14. जल	– 24.576 ली.

निर्माण विधि– एक घृत लिप्त सधान पात्र में जल लेकर उसमें क्रम संख्या 2-10 तक के द्रव्यों का मोटा दरदरा चूर्ण, लोह भस्म, धातकी पुष्प, शहद तथा गुड़ मिलाकर एक मास तक रखकर संधान करते हैं। तत्पश्चात् इसे छानकर सुरक्षित रख लेते हैं। यही लोहासव है।

मात्रा– 12-24 मिली

उपयोग– पाण्डु, शोथ, गुल्म आदि

द्राक्षासव

द्राक्षापलशतं दत्त्वा चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत्। द्रोणशेषे रसे तस्मिन् पूते शीते प्रदापयेत्॥
शर्कशयास्तुलां दत्त्वा तत्तुल्यं मधुनस्तथा। पलानि सप्त धातक्याः स्थापयेदाज्यभाजने॥
जातीलवङ्ग कंकोल लवलीफल चन्दनैः। कृष्णात्रिगन्धसंयुक्तैर्भागैरर्द्धपलांशकैः॥

Scanned with OKEN Scanner

त्रिभागाद्धक्षेत् पेयं तस्य मात्रा यथाबलम्। नाम्ना द्राक्षासवो ह्येष नाशयेद गुदकोलकान्॥
(A.F.I. Part II 1:1)

घटक द्रव्य– 1. द्राक्षा – 4.8 किग्रा.
2. जल क्वाथार्थ – 49.152 ली.
3. शेष – 12.288 ली.
4. शक्कर – 4.8 किग्रा.
5. धाय पुष्प – 336 ग्रा.
6. जाती – 24 ग्रा.
7. लवंग – 24 ग्रा.
8. केसर – 24 ग्रा.
9. तवक्षीर – 24 ग्रा.
10. श्वेत चन्दन – 24 ग्रा.
11. नागकेसर – 24 ग्रा.
12. त्वक् – 24 ग्रा.
13. एला – 24 ग्रा.
14. तेजपत्र – 24 ग्रा.

निर्माण विधि– एक संधान पात्र में द्राक्षा क्वाथ को रखकर इसमें शर्करा तथा शहद मिला देते है। तत्पश्चात् क्रम संख्या 6-14 तक के द्रव्यों का चूर्ण मिलाते है। इसके बाद इसमें धाय पुष्प मिलाकर संधान हेतु रख देते हैं। संधान पश्चात् इसे छानकर सुरक्षित रख लेते हैं।

मात्रा– 12-24 मिली.

उपयोग– अर्श रोग आदि में

अर्जुनारिष्ट (पार्थाद्यारिष्ट)

पार्थत्वचस्तुलायेकां मृद्वीकार्द्धतुलां तथा। भागं मधुपुष्पस्य पलविंशतिसम्मितम्।
चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा द्रोणमेवावशेषयेत्। धातक्या विंशतिपलंगुडस्य च तुलां क्षिपेत्॥
मास मात्रं स्थितो भाण्डे भवेत्पार्थाद्यारिष्टकः। (A.F.I. Part I 1:21)

घटक द्रव्य– 1. अर्जुनत्वक् – 4.8 किग्रा.
2. द्राक्षा – 2.4 किग्रा.
3. मधुक (महुआ) पुष्प – 960 ग्रा.
4. जल क्वाथार्थ – 49.152 ली.
अवशेष – 12.288 ली.
5. धाय पुष्प – 960 ग्रा.
6. गुड़ – 4.8 क्रिग्रा

निर्माण विधि– अर्जुन त्वक्, द्राक्षा तथा महुआ पुष्प से क्वाथ निर्मित करते है। तत्पश्चात् इस क्वाथ को संधान पात्र में रखकर इसमें गुड़ मिलाते है। तत्पश्चात् इसमें धायपुष्प मिलाकर इसे एक मास तक संधान हेतु रखते हैं। संधान पश्चात् इसे छानकर सुरक्षित रख लेते हैं।

मात्रा– 12-24 मिली

उपयोग– हृदरोग, फुफ्फुसरोग, बलक्षय आदि में।

Quality Control Parameter (Included in Syllabus out come)

1. **Churna**
   (i) Bulk Density
   (ii) Loss on Drying*
   (iii) Total ash*
   (iv) pH*
   (v) Water soluble extractives*
2. **Table/Vati/Gutika**
   (i) Uniformity of weight
   (ii) Hardness
   (iii) Friability
3. **Asava and Arishta**
   (i) Specific Gravity*
   (ii) Alochol content*
   (iii) Total solid content*
4. **Ghee/Oil (Taila)**
   (i) Iodine value*
   (ii) Acid value*
   (iii) Saponification value*

The above parameters for different dosage form are included in the syllabus. These are described as follows.

Bulk density

The bulk density of a powder is the ratio of the mass of an untapped powder sample and its volume including the contribution of the interparticulate void volume. The bulk density is expressed in grams per milliter (g/mL).

* Ayurvedic Pharmacopoeia of India

Scanned with OKEN Scanner

The bulk density of a powder is determined by measuring the volume of a known mass of powder sample, that may have been passed through a sieve into a graduated cylinder or by measuring the mass of a known volume of powder that has been passed through a volumeter into a cup.

Measurement in a Graduated Cylinder

Procedure– Pass a quantity of powder sufficient to complete the test through a sieve with apertures greater than or equal to 1.0 mm, if necessary, to break up agglomerates that may have formed during storage, this must be done gently to avoid changing the nature of the material. Into a dry graduated cylinder of 250 mL (readable to 2 mL), gently introduce, without compacting, approximately 100 g of the test sample (m) weighed with 0.1 percent accuracy. Carefully level the powder without compacting, if necessary, and read the unsettled apparent volume (V_0) to the nearest graduated unit. Calculate the bulk density in g per mL by the formula m/V_0.

Determination of Moisture Content (Loss on Drying)

Procedure set forth here determines the amount of volatile matter (i.e. water drying off from the drug). For substances appearing to contain water as the only volatile constituent, the procedure given below, is appropriately used.

Place about 10 g of drug (without preliminary drying) after accurately weighing (accurately weighed to within 0.01 g) it in a tared evaporating dish. For example, for unground or unpowdered drug, prepare about 10 g of the sample by cutting shredding so that the parts are about 3 mm in thickness.

Seeds and fruits, smaller than 3 mm should be cracked. Avoid the use of high speed mills in preparing the samples, and exercise care that no appreciable amount of moisture is lost during preparation and that the portion taken is representative of the official sample. After placing the above said amount of the drug in the tared evaporating dish, dry at 105^0 for 5 hours, and weigh. Continue the drying and weighing at one hour interval until difference between two successive weighing corresponds to not more than 0.25 percent. Constant weight is reached when two consecutive weighing after drying for 30 minutes and cooling for 30 minutes in a desiccator, show not more than 0.01 g difference.

Determination of Total Ash

Incinerate about 2 to 3g accurately weighed, of the ground drug in a tared platinum or silica dish at a temperature not exceeding 450^0 until free from carbon, cool and weigh. If a carbon free ash cannot be obtained in this way, exhaust the charred mass with hot water, collect the residue on an ashless filter paper, incinerated the residue and filter paper, add the filtrate, evaporate to dryness, and ignite at a temperature not exceeding 450^0. Calculate the percentage of ash with reference to the air-dried drug.

Determination of pH values

The pH value of an aqueous liquid may be defined as the common logarithum of the reciprocal of the hydrogen ion concentration expressed in g per litre. Although this definition provides a useful practical means for the quantitative indication of the acidity or alkalinity of a solution, it is less satisfactory from a strictly theoretical point of view. No definition of pH as a measurable quantity can have a simple meaning, which is also fundamental and exact.

The pH value of a liquid can be determined potentiometrically by means of the glass electrode, a reference electrode and a pH meter either of the digital or analogue type.

Determination of water soluble extractive

Macerate 5 g of the air dried drug, coarsely powdered, with 100 ml of Chloroform-water the specified strength in a closed flask for twenty-four hours, shaking frequently during six hours and allowing to stand for eighteen hours. Filter rapidly, taking precautions against loss of solvent, evaporate 25 ml of the filtrate to dryness in a tared fat bottomed shallow dish, and dry at 105^0, to constant weight and weigh. Calculate the percentage of water soluble extractive with reference to the air-dried drug.

Weight uniformity

It is desirable that every individual tablet in a batch is uniform in weight, and the weight variation, if any, is within the permissible limits (generally + 10% for tablets weighing 80 mgm or less, + 7.5% for tablets weighing between 80 and 250 mgm and + 5% for tablets weighing 250 mgm or more. Non-uniformity in weights can lead to variation in dosaging. Hence, all finished batches of tablets are weighed collectively and individually. From the collective weight average weight per tablet is calculated. The weights of individual tablets are then compared to ascertain whether they are within permissible limits or not. Some of the basic causes of weight variation of tablets are faulty incorporation of glidants and resultant poor flow of granules, wide variations in granule sizes, difference in lower punch length, improper lubricants etc.

Hardness

The hardness of a tablet is indicate of its tensile strength and is measured in terms of load/pressure required to crush it when placed on its edge. A number of handy hardness testers such as Mosanto type of Pfizer type are currently in use. Hardness of about 5 Kg is considered to be minimum for uncoated tablets for mechanical stability. The hardness is a function of physical properties of granules like their hardness and deformation under load, binders and above all the compressional force. The hardness has influence on disintegration and dissolution ties and is as such a factor that may affect bio-availabilities.

Friability– Friability generally refers to loss in weight of tablets in the containers

Scanned with OKEN Scanner

due to removal of fine particle from their surfaces. However, in wider sense chipping and fragmentations can also be included in friability. Friability generally reflects poor cohesion of tablets ingredients. Standard devices have been fabricated to measure friabilities.. Generally such instruments, marketed as 'Friability Test Apparatus' or 'Friabilators', consists of a circular plastic chamber, divided into 2-3 compartments. The chamber rotates at a speed of 25 r.p.m and drops the tablets by a distance of 15 cms. Preweighed tablets are placed in the apparatus which is given 100 revolutions after which the tablets are wighed once again. The difference in the two weights represents friability. The weight loss should not be more than one percent.

Specific gravity– The specific gravity of a liquid is the weight of a given volume of the liquid at 25^0C (unless otherwise specified) compared with the weight of an equal volume of water at the same temperature, all weighing being taken in air.

Determination of Alcohol Content– The ethanol content of a liquid is expressed as the number of volumes of ethanol contained in 100 volumes of the liquid, the volumes being measured at 24.9^0 to 25.1^0. This is known as the "percentage of ethanol by volume". The content may also be expressed in g of ethanol per 100 g of the liquid. This is known as the 'percentage of ethanol by weight".

Carry out the method for gas chromatography, using the following solutions. Solution (1) contains 5.0 percent v/v of ethanol and 5.0 percent v/v of l-propanol (internal standard). For solution (2) dilute a volume of the preparation being examined with water to contain between 4.0 and 6.0 percent v/v of ethanol. Prepare solution (3) in the same manner as solution (2) but adding sufficient of the internal standard to produce a final concentration of 5.0 percent v/v.

The chromatographic procedure may be carried out using a column (1.5 mx4 mm) packed with porous polymer beads (100 to 120 mesh) and maintained at 150^0, with both the inlet port and the detector at 170^0, and nitrogen as the carrier gas.

Calculate the percentage content of ethanol from the areas of the peaks due to ethanol in the chromatogram obtained with solutions (I) and (3).

Determination of Total Solids

Determination of total solids in Asava/Aristha is generally required. Asava/Arishtha containing sugar or honey should be examined by method 1, sugar or honey free Asava/ Aristha and other material should be examined by method 2.

Method 1– Transfer accurately 50 ml of the clear Asava/Aristha an evaporable dish and evaporate to a thick extract on a water bath. Unless specified otherwise, extract the residue with 4 quantities, each of 10 ml, of dehydrated ethanol with stirring and filter. Combine the filtrated to another evaporating dish which have been dried to a constant

weight and evaporate nearly to dryness on a water bath, add accurately 1 g of diatomite (dry at 105^0 for 3 hours and cooled in a desiccator for 30 min), stir thoroughly, dry at 105^0 for 3 hours, cool the dish in a desiccator for 30 min, and weigh immediately. Deduct the weight of diatomite added, the weight of residue should comply with the requirements stated under the individual monograph.

Method 2– Transfer accurately 50 ml of the clear Asava/Aristha to an evaporable dish, which has been dried to a constant weight and evaporate to dryness on a water bath, then dry at 105^0 for 3 hours. After cooling the dish containing the residue in a desiccator for 30 min, weigh it immediately. The weight of residue should comply with the requirements stated under the individual monograph.

Determination of Saponification Value

The saponification value is the number of mg of potassium hydroxide required to neutralize the fatty acids, resulting from the complete hydrolysis of 1 g of the oil or fat, when determined by the following method :

Dissolve 35 to 40 g of potassium hydroxide in 20 ml water, and add sufficient alcohol to make 1,000 ml. Allow it to stand overnight, and pour off the clear liquor.

Weigh accurately about 2 g of the substance in a tared 250 ml flask, add 25 ml of the alcoholic solution of potassium hydroxide, attach a reflux condenser and boil on a water-bath for one hour, frequently rotating the contents of the flask cool and add 1 ml of solution of phenolphthalein and titrate the excess of alkali with 0.5 N hydrochloric acid. Note the number of ml required (a). Repeat the experiment with the same quantities of the same reagents in the manner omitting the substance. Note the number of ml required (b) Calculate the saponification value from the following formula:–

$$\text{Saponification value} = \frac{(b-a)\times 0.02505\times 1.000}{W}$$

Where 'W' is the weight in g of the substance taken.

Determination of Iodine Value

The iodine value of a substance is the weight of iodine absorbed by 100 part by weight of the substance, when determined by one of the following methods–

Iodine Flasks– The Iodine flasks have a nominal capacity of 250 ml.

A. Iodine Monochloride Method

Place the substance accurately weighed, in dry iodine flask, add 10 ml of *Carbon tetrachloride*, and dissolve. Add 20 ml of iodine monochloride solution, insert the stopper, previously moistened with solution of potassium iodine and allow to stand in a dark pace at a temperature of about 17^0 or thirty minutes. Add 15 ml of solution of potassium iodine

Scanned with OKEN Scanner

and 100 ml water; shake, and titrate with 0.1 N sodium thiosulphate, using solution of starch as indicator. Note the number of ml required (a). At the same time carry out the operation in exactly the same manner, but without the substance being tested, and note the number of ml of 0.1 N sodium thiosulphate required (b).

Calculate the iodine value from the formula–

$$\text{Iodine value} = \frac{(b-a)x0.01269x100}{W}$$

Where 'W' is the weight in g of the substance taken.

The approximate weight, in g, of the substance to be taken may be calculated by dividing 20 by the highest expected iodine value. If more than half the available halogen in absorbed the test must be repeated, a smaller quantity of the substance being used.

Iodine Monochloride Solution : The solution may be prepared by either of the two following methods :

(1) Dissolve 13 g of iodine in mixture of 300 ml of carbon tetrachloride and 700 ml of glacial acetic acid. To 20 ml of this solution, add 15 ml of solution of potassium iodide and 100 ml of water, and titrate the solution with 0.1 N Sodium thiosulphate. Pass chlorine, washed and dried, through the remainder of the iodine solution until the amount of 0.1 N sodium thiosulphate required for the titration is approximately, but more than, doubled./

(2) Iodine trichloride	8g
Iodine	9g
Carbon tetrachloride	300 ml
Glacial acetic acid, sufficient to produce	100 ml

Dissolve the iodine trichloride in about 200 ml of glacial acetic acid, dissolve the iodine in the carbon tetrachloride, mix the two solutions, and add sufficient glacial acetic acid to produce 1000 ml. Iodine Monochloride Solution should be kept in a stoppered bottle, protected from light and stored in a cool place.

B. Pyridine Bromide Method

Place the substance, accurately weighed, in a dry iodine flask, add 10 ml of carbon tetrachloride and dissolve. Add 25 ml of pyridine bromide solution, allow to stained for ten minutes in a dark place and complete the determination described under iodine monochloride method, beginning with the words. Add 15 ml.

The approximate weight in gram, of the substance to be taken may be calculated by dividing 12.5 by the highest expected iodine value. If more than half the available halogen is absorbed the test must be repeated, a small quantity of the substance being used.

Pyridine bromide solution : Dissolve 8 g pyridine and 10 g of sulphuric acid in 20 ml of glacial acetic acid, keeping the mixture cool. Add 8 g of bromine dissolved in 20 ml of glacial acetic acid and dilute to 100 ml with glacial acetic acid.

Pyridine bromide Solution should be freshly prepared.

Determination of Acid Value

The acid value is the number of mg of *Potassium hydroxide* required to neutralize the free acids in 1 g of the substance, when determined by the following method :

Weigh accurately about 10 g of the substance (1 to 5) in the case of a resin into a 250 ml flask and add 50 ml of a mixture of equal volumes of alcohol and solvent ether, which has been neutralized after the addition of 1 ml of solutio of phenolphthalein. Heat gently on a water bath, if necessary until the substance has completely melted, titrate with 0.1 N potassium hydroxide, shaking constantly until a pink colour which persists for fifteen seconds is obtained. Note the number of ml required. Calculate the acid value from the following formula :

$$\text{Acid Value} = \frac{a \times 0.00561 \times 1000}{W}$$

Where 'a' is the number of ml of 0.1 N potassium hydroxide required and 'W' is the weight in g of the substance taken.

National Acredition Board for Testing and Calibration Laboratories [NABL]

Specific Guidelines for Chemical Testing Laboratories

These guidelines has been produced by a Technical committee constituted by NABL and supplements ISO/IEC 17025:2005 standard and provides specific guidelines on the accreditation. It gives detailed guidance for those undertaking quantitative and qualitative examination of the composition, nature and properties of materials, products and sustenances.

The scope of accrediation of a laboratory is the formed statement of the range of activities for which the laboratory has been accredited. The schedule format should typically define the laboratory's accreditation in terms of–

(i) The range of products materials or sample types tested or analysed.

(ii) Types of tests or analysis carried out

(iii) The specification or method/technique used

(iv) The concentration range and accuracy/precision

Scanned with OKEN Scanner

Where non-routine testing is carried out, it is recognised that a more flexible approach to scope may be necessary. The scope should be specific and ensuring the quality of results

Where mass spectrometry, NMR or FIIR is carried out it may be appropriate to use the terms qualitative and/or quantitative analysis under the type of test heading.

The laboratory must have its own method or procedure in case when it is not practicable for labs to use a standard method in the conventional sense. Which specifies each sample type and determinant the protocol must define the approach to adopted when different sample types are analysed. The laboratory should have proper qualified persons with experience deputed in different sections.

Samples, reagents and standards should be stored so as to ensure their integrity. The laboratory should guard against deterioration, contamination and loss of identity.

The laboratory shall meet the safety requirements applicable to test procedure along with appropriate environmental conditions and controls necessary for particular tests, including temperature, humidity, special lighting, radiation screening, freedom from airborne and dust borne microbiological contamination.

Laboratory should have adequate and safe working environment with proper lifting. Health and safety aspects are to taken seriously. Whenever using non-standard methods or a standard method beyond the stated limits validation of Test methods NABL-212 may be referred. Computer controlled antomated system and laboratory information management systems (LIMS) software should be used.

Reference materials and chemical standards should be clearlyu labelled indicating its shelf life, storage condition, applicability etc. Samples should be stored so that there is no hozard to lab staff and the integrity of samples is preserved. Concern staff should be properly trained.

The grade of reagents used should be stated with any specific precaution like toxicity, flammability etc. Labelling of reagent should be properly done. Groupwise codification (like cosmetics, drug, disinfectants etc.) for chemical tests should be done.

NPST (Namburi phased spot test)*

NPST is the only Qualitative analytical test which identifies the product as per the name of Rasa Shastra such as Kajjali marita bhasma, Sindura etc. It was developed by Dr. Namburi Hanumantha Rao in 1970 and recognized by CCRAS, New Delhi. The Namburi Phased Spot Test (NPST) is a new technique for assessing the quality of a Herbo-mineral compound and is based on the principles of Chromatography that is identification based on the colour and pattern produced as a result of chemical reaction between trial drug, reagent and reacting paper.

Materials– 1. Whatman paper No. 1
2. Test tubes

Observations– When the drop encounters the paper a characteristic spot begins to develop and changes with times. The change of colour and pattern of the spot taken at 3 different phases at 3 different time intervals.

1. **1st Phase**– The first phase of reaction extends from the very moment of formulation of the spot till the end of 5th minutes. The reaction is also called as **Immediate Reaction**.
2. **2nd Phase**– The second phase of reaction extends thereafter upto 20th minute. This method of reaction may be termed as **Delayed Reaction**.
3. **3rd Phase**– The third phase of reaction also known as Late Reaction extends from the end of 20th minute to some hours or days

Procedure

1. Whatman paper No. 1 is impregnated with a suitable reagent and thoroughly dried on a clean sheet of glass.
2. Next, 0.25 gms. of the substance (Bhasma or Sindura) is placed in a micro test tube and a suitable reagent is added. The solution is slightly heated before being allowed to settle for 24 hours, shaking vigorously every now and then.
3. Using a dropper, carefully place a drop of this supernatant solution on the above impregnated Whatman paper (chemical reacting paper).
4. Must be a alert and record the colour change and pattern of the spot at three different or time intervals.

Condition required

1. Paper– Whatman No. 1 paper required
2. Temperature– 25 to 28^0C
3. Volume– 2 to 3 drops/0.05 ml
4. Light– Natural Light or Ultra-violet light
5. Photography– Camera with colour film

•

* Sharma Jyoti, Rathore S, H. Anitha. A critical review on Namburi phase spot test. 2022. IJRTI. vol 7(12):2456-3315.

* Dr. Rao Namburi H : Application of standardized Namburi phased spot test. Project work submitted to CCRAS, New Delhi.

Scanned with OKEN Scanner